अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06/07

03. निर्णायक मण्डल 08

04. प्रवक्ता साथी 10

(Science / विज्ञान)

05. Common Fixed Point Of Multivalued Generalized -Weak Contractive Mappings On 12
Complete Metric Space (Girish Pandya, M.M. Sharma)

06. Common Fixed Points of Two Commuting Self Mappings in Banach Spaces (Dr. D. K. Sagar) 15

07. Fixed Points of Composite Non-Expansive Mappings in Banach Spaces (Dr. D. K. Sagar) 17

08. Chemical Analysis Of Fly Ash And It's Effects On Vegetation In Umaria District (M.P.) 19
(Nand Kishor Bhagat)

09. A Comparative Study of Pollution (Noise) in Festival at Neemuch (M.P.) 22
(Dr. Bhupendra Kumar Amb)

10. Seasonal Variations In Physio-Chemical Parameters Of River Kshipra At 25
Ram-Ghat, Ujjain (M.P.) (Kunjan Singh Songara)

11. Giant, Exotic,Endangered Plant *Adansonia Digitata* (Mandu Imli) Is Found In Mandu, ... 27
Dhar (M.P.) India (Nirbhay Singh Solanki, S.C. Mehta)

(Home Science / गृह विज्ञान)

12. A Comparative Study Of Mother- Care Practices During Pregnancy Period Of Tribal 30
And Non- TribalFarm- Women In Chhattisgarh (Jyoti Bhatt, Dr. Sandhya Verma, Dr. J. C. Ajawani)

13. Family Resource : Concept & Management (Dr. Rashmi Verma) 32

14. छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (ग्वालियर शहर के संदर्भ में) 34
(डॉ. पूनम तिवारी, डॉ. मंजू दुबे)

15. कानपुर शहर के मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों के कुपोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन 38
(पूनम रानी, डॉ. मंजू दुबे)

16. बालक – बालिकाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का फास्ट फूड के उपभोग के मध्य सम्बन्ध –सागर शहर के संदर्भ में 41
(डॉ. आराधना श्रीवास)

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

17. Inventory Management Analysis Of Bajaj Auto Ltd 44
(Aasif Khaliq Shaksaz,Dr. Mohd Mubeen Khan)

18. A Study of Customer Satisfaction towards Retail Services in Indore Region, ... 49
with special reference to Easy Day (Rajesh Jain)

19. Service Sector : Opportunities And Issues (Dr. Ajay Mishra) 53
20. A Comparative Study Of Non-Fund Based Income And Fund Based Income 57
(Dr. L.N.Sharma, Priyanka Bharti)
21. Women's Empowerment through the Entrepreneurship (Dr. Ashish Pathak, Dr. Reeta Chawla) 61
22. Changing Dimension in Human Resource Management (Namrata Ganguly, Priyanka Kurup) 64
23. Role And Contribution Of Cottage Industries In The Economic Development Of India 67
(Dr. Vijay Grewal)
24. Corporate Vision of Indian SMEs: A Review of the Literature (Dr. D.L. Ahir) 70
25. Role Of Media In The Politics (Dr. Vimmi Behal, Dr. O.P. Sharma) 73
26. Future Challenges Of Business Process Outsourcing (Dr. Abhay Kumar Mungee) 74
27. मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 का क्रियान्वयन 75
(नीमच जिले के विशेष संदर्भ में – एक तुलनात्मक अध्ययन)(डॉ. एल.एन. शर्मा, डॉ. समता मेहता, आशीष शर्मा)
28. प्रधानमंत्री जन–धन योजना से भारत की बदलती तस्वीर (डॉ. विजय ग्रेवाल) 80
29. आटा मिलों का लागत–लाभ विश्लेषण (उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. ऋतु पोरवाल) 84
30. सहकारी बैंकिंग – उपलब्धियाँ और चुनौतियाँ (डॉ. सोनी व्यास) 87
31. ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का मूल्यांकन एवं प्रभाव(अर्थव्यवस्था एवं बारहवीं योजना के संदर्भ में)(डॉ. प्रीति शाह) 90
32. औद्योगिक विकास केन्द्र पीथमपुर – एक अध्ययन(वर्ष 2012 तक की स्थिति के संबंध में)(डॉ. प्रीति शाह) 92
33. व्यापक भ्रष्टाचार का लोकपाल से निदान – एक मूल्यांकन (डॉ. वी. के. जैन) 94
34. वैदिक शिक्षा के सामाजिक सांस्कृतिक आदर्श एवं मूल्य(भारतीय संदर्भ में) (डॉ. विम्मी बहल, डॉ. अनिल शिवानी) 96
35. मानव पूंजी प्रबंधन का संगठनात्मक कार्य निष्पादन पर प्रभाव– एक अध्ययन (उज्जैन संभाग के विशेष संदर्भ में) 98
(डॉ. एस. सी. मूणत् , सविता वर्मा)
36. मानव संसाधनों का प्रबंध (गणेश लाल राठौर) 99
37. निवेश के क्षेत्र में ज्यादा लाभ कमाने के लिए दीर्घकालिन विनियोग की आवश्यकता (डॉ. रमेश कुमार रावत) 100

(Economics / अर्थशास्त्र)

38. Balance Of Payments & Foreign Exchange Reserves : A Review of Literature (Dr. R P Saharia) 101
39. भारत का विदेशी व्यापार (डॉ. लीला डावर) 104
40. कृषि व्यावसायीकरण का कृषकों पर प्रभाव (धार जिले के संदर्भ में) (डॉ. आर.एस. मण्डलोई) 107
41. कामकाजी महिलाओं द्वारा समय प्रबंध (कार्तिका गुप्ता मेहता, डॉ. शैलेन्द्र मिश्रा) 110
42. मध्यप्रदेश में ग्रामीण विकास योजनाओं में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन का योगदान 114
(खरगोन–बड़वानी जिलों के संदर्भ में)(डॉ. टी.एम. खान)
43. बालिकाओं का घटता अनुपात – एक चिंतनीय विषय (डॉ. सुरेखा जैन) 116
44. सामाजिक अंकेक्षण का ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में योगदान(डॉ. आर.एस. मण्डलोई) 118
45. भारत में बैंकिंग – एक अध्ययन (प्रो. सीमा नागर) 121
46. मध्यप्रदेश में श्रमिकों से सम्बन्धित कानूनों का विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ.दीपाली बेहेरे) 123
47. गाँधीजी का आर्थिक चिन्तन (ग्रामीण विकास के विशेष संदर्भ में) (डॉ. निशा मिश्रा) 125

48. कृषि विकास द्वारा आर्थिक परिवर्तन के आयाम (राकेश कुमार गुप्ता) 128

49. आर्थिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षण (डॉ. टी.एम. खान) 130

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

50. Concept Of E-Governance In India- An Evaluation 132
(Dr. Shrikant Dubey, Dr. Ramswaroop Mehra)

51. गांधी और नेहरू एक वैचारिक विश्लेषण (प्रो. प्रतीक्षा पाठक) 134

52. पंचायती राज : सत्ता के विकेन्द्रीकरण के रुप में सार्थकता (डॉ. अनिल दीक्षित) 138

53. भारत में लोकतंत्र के विविध आयाम : एक अध्ययन (प्रो. भावना कुशवाह) 140

54. भारतीय संघ की एकता के शिल्पकार– सरदार वल्लभ भाई पटेल (डॉ. श्रीकांत दुबे, डॉ. रामस्वरूप मेहरा) 142

55. हिन्दू जाति व्यवस्था और आरक्षण नीति एक राजनैतिक विश्लेषण (डॉ. अलका भार्गव) 144

56. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत अमेरिका सम्बन्ध – एक अध्ययन (अंजना सेठिया) 146

57. भारतीय संविधान एवं मानव अधिकार (प्रो. वीणा बरडे) 148

(Sociology / समाजशास्त्र)

58. एड्स के प्रति जनजागरूकता का समाज कार्य संबंधी अध्ययन(इन्दौर नगर के विशेष सदंर्भ में) (डॉ. अंतिम कुमार कलवार) 149

59. जनजातिय महिलाओं में अनुवांशिक रोग एवं रक्तअल्पता के सामाजिक – सांस्कृतिक कारक 152
(डॉ. राजेश कुमार सक्सेना, डॉ. विमलेन्द्र राठौर)

60. कामकाजी महिलाओं में भूमिका–संघर्ष : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण (राकेश शिंदे) 155

61. समाज और कानून (प्रो. ऋचा एस. मेहता) 157

62. वैश्वीकरण के दौर में महिलायें (डॉ. कविता जैन) 159

63. जनजाति संस्कृति में शराब का प्रचलन : एक अभिशाप (डॉ. आर. सी. पान्टेल) 161

64. समाज के उच्च शिक्षित युवा वर्ग में सूचना के अधिकार के संदर्भ में जागरुकता: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (डॉ. संजय जोशी) . 163

65. प्राचीन समाज में भ्रष्टाचार निवारण एवं कानून की व्यवस्था : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण (डॉ. संजय जोशी) 165

(History / इतिहास)

66. मुगलकालीन सरकारी पत्र और मोहरें (प्रो. आकाश ताहिर) 166

(Geography / भूगोल)

67. सार्वजनिक ऊष्णता एवं जलवायु परिवर्तन (सुनीता मेश्राम) 168

68. भारत में आर्थिक विकास – कृषि व पशुपालन (कृषि में सब्जी उत्पादन एवं पशुपालन)(डॉ. सुभानसिंह बघेल) 171

69. जनजाति उपयोजना में ग्रामीण विकास एवं गरीबी निवारण एक भौगोलिक विश्लेषण (अम्बालाल कटारा, प्रो. एल.सी. खत्री) .. 173

(Psychology / मनोविज्ञान)

70. The Effect Of Contingent,Non-Contingent Feedback And Task Difficulty On Intrinsic 176
Motivation (Dr. Asha Ojha)

(Sanskrit / संस्कृत)

71. वर्तमान में संस्कृत की उपयोगिता एवं चुनौतियाँ (डॉ. बी.एस.बामनिया) 181
72. उपनिषद् और वैदिक दर्शन (डॉ. यशवन्त सिंह निंगवाल) 183
73. श्रीमद्भागवत में 'माया' की अवधारणा (डॉ. यशवन्त सिंह निंगवाल) 185
74. चम्पू काव्य का उद्भव और विकास (डॉ. मुकाम सिंह भंवर) 187

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

75. हिन्दी – उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचन्द का योगदान (डॉ. शाजिया खान) 188
76. स्त्री आत्मकथाओं का अंतर्द्वन्द (नंदिनी जोशी) 191
77. फिरदौसी का शहनामा – मानवीय पहलू (डॉ. प्रतिभा जोशी) 193
78. मालवी कहावतों में लोक संस्कृति (डॉ. वन्दना जैन, रचना जैन) 195
79. समकालीन परिप्रेक्ष्य और कला संदर्भों में लोकसाहित्य की उपादेयता (डॉ. अशोक कुमार) 197
80. समकालीन कविता में विश्व संस्कृति (डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला) 199
81. छायावादी काव्य में वेदना (डॉ. गुलाब सोलंकी) 201
82. पुरूष सत्तात्मक समाज में शोषित नारी : माधवी के संदर्भ में (डॉ. भारती एक. चौधरी) 203

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

83. **William Dalrymple as a Travel Writer (Dr. Ajay Bhargava, Manju Sharma) 205**
84. **Caste Prejudices In R.K.Narayan's Novels (Dr. Kiran Sitole) 208**
85. **Female Subjugation To The Male (Dr. Vandana Bakshi) 211**
86. **Conjugal Relationships in Merchant of Venice and Abhijanashakuntalam : 213**
A Comparative Study (Dr. Laxman Singh Gorasya)
87. **Vocationalisation of Higher Education in India Current Scenario, Key Challenges 215**
and New directions (Aparna Ray)

(Law/ विधि)

88. भारत में शिक्षा का अधिकार और कठिन चुनौतियाँ (डॉ. अर्चना रांका) 217
89. धारा 125 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन न्यायिक कार्यवाहियों का प्रायोजन एवं विश्लेषण (डॉ. आरिफ खान पटेल) .. 221
90. भ्रष्टाचार नियंत्रण में कानून की भूमिका (डॉ. देवी लाल अहीर, डॉ. आर.पी. सहारिया) 224

(Education / शिक्षा)

91. **Analysis Of Researchers Based On Advanced Organizer Model 226**
(Dr. Archana Shrivastava, Sonali Surye)

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

92. **A Co-Relational Study Of Positive Mental Health Between National Level Male And 230**
Female Basketball Players Of Chhattisgarh State (Sudhir Rajpal, Dilip Singh, B. John)

(Others / अन्य)

93. पर्यावरण संरक्षण में आम आदमी की भूमिका (डॉ. राजीव शर्मा, डॉ. आर.पी.सहारिया) 231
94. भारत सरकार की महिला सशक्तिकरण नीति में परिवर्तन – आवश्यकता, कठिनाइयाँ एवं सुझाव (डॉ. एम. चन्द्रशेखर) .. 236
95. लोकसभा 2014 (गठन) में भारत निर्वाचन आयोग की भूमिका व चुनौतियां तथा भारतीय महिलाओं की बढ़ती भागीदारी 238
(कु. सुरेखा यादव)
96. जलवायु परिवर्तन– बढ़ते तापमान की समस्या एवं निदान (डॉ. अनिल कुमार) 240
97. पर्यावरण संरक्षण में विद्यार्थियों की सहभागिता (डॉ. दिलीप सिंह मण्डलोई) 242
98. महिला सशक्तिकरण एवं मानव अधिकार (डॉ. अभय मुंगी) 244

99. Water Management in GhateraBabaji Minor Irrigation Project 245
(Rakeshkumar Turkar, R.K. Nema, R.N. Shrivastava, Y.K. Tiwari)

100. भारत में म्यूचुअल फंड में विनियोग के अवसर और उपयोगिता (डॉ. बालमुकुन्द बघेल) 249

101. Analysis of Mental Toughness (Fortitude) of International Badminton Players from Different Countries (Dr. D.C. Maurya) 252

102. Influence on Consumer Behaviour by Properly Match Between Attributes of Product and Celebrity Endorsement (Sharad Maheshwari) 254

103. मनोरक्षात्मक युक्तियों समायोजन में कितनी सहायक (डॉ. सरिता माथुर) 257

104. राजस्थान की हिन्दी–कहानी : विकास यात्रा भाग – 1 (डॉ. राजकुमार चौधरी) 259

105. मातृका पूजा का इतिहास (डॉ. अमित मेहता) 262

106. Analysis Radio and Television as Mass Media in Knowledge Gain by Rural Women (Dr. Govind Prakash Acharya) 264

107. Urdu Words Often Used in Urdu Poetry: A Comprehensive Study (Dr. Arshad Siraj) 266

108. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक–बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों का अध्ययन (डॉ. ओमपाल) 270

109. प्राचीन भारत का विस्मृत गणराज्य: रामग्राम का कोलिय (डॉ. सोमेश कुमार सिंह) 272

110. Review of MRDM (Rajesh Soni) 274

111. विद्यार्थी जीवन में योग का महत्व एवं लाभ (गणेश कुमार शर्मा) 276

112. भारतीय प्रागैतिहासिक शैल चित्रों में मानवाकृतियों का महत्व (डॉ. रेखा पंचोली) 278

113. MyGov: From Citizen Grievance to Citizen Contribution (Dr. Hiren Joshi) 281

म. प्र. उच्च शिक्षा में नवाचार – "अपना पैसा अपना विकास"

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा में गुणवत्ता एवं सामाजिक परिवर्तन प्रबंध कार्यशाला – राजमाता सिंधिया शासकीय कन्या महाविद्यालय छिन्दवाड़ा (म.प्र.) दिनांक 05.12.2014 – 11.12.2014
कार्यशाला के समन्वयक – डॉ. दिनेश कुमार चौधरी एवं सह समन्वयक – श्री अजय सिंह ठाकुर, डॉ. अर्चना गौर, कार्यशाला संरक्षक एवं प्राचार्य – डॉ. कामना वर्मा

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(04) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(10) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(13) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय .... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(17) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(19) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(23) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(24) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(25) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(26) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. पी.के. मिश्रा ..... प्राध्यापक ,प्राणी शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(29) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(30) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(31) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(32) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(33) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार .... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

****

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टा महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अशोका श्रीवास्तव .... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(18) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. नटवर लाल गुप्ता ..... प्राचार्य, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

नवीन शोध संसार के बढ़ते कदम

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम–विशेषांक का विमोचन करते हुए
माननीय श्री दीपक जोशी (उच्च शिक्षा राज्य मंत्री) म.प्र. शासन, माननीय श्री ओमप्रकाश सकलेचा (विधायक) जावद, (म.प्र.) आशीष शर्मा (सम्पादक) नवीन शोध संसार, नीमच (म.प्र.)

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

✲✲✲ विज्ञान संकाय ✲✲✲

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

✲✲✲ वाणिज्य संकाय ✲✲✲

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

✲✲✲ प्रबंध संकाय ✲✲✲

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ व्यवसाय प्रशासन संकाय ✲✲✲

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

✲✲✲ विधि संकाय ✲✲✲

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✲✲✲ कला संकाय ✲✲✲

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन, शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अजय भार्गव, शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डी.एस. फिरोजिया ..... शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) डॉ. भारती जोशी ..... अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. श्रीमती भारती खरे ..... एस.एस.एल. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. रामचन्द्र चौहान ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल ..... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Common Fixed Point Of Multivalued Generalized -Weak Contractive Mappings On Complete Metric Space

Girish Pandya * **M.M. Sharma** **

Abstract - In this papr we have given fixed point result extending Nadler and Daffer-Kaneko's theorems to a coincidence theorem without assuming the lower semicontinuity .
Keywords - Generalized weak contractions, multi-valued contraction mappings, common fixed point.

Introduction - The study of fixed points for multi-valued contraction mappings was initiated by Nadler [3] . He generalized the Banach fixed point theorem. Then after, many authors studied many fixed point results for multi-valued contraction mappings. Mustafa and Sims [10] introduced the *G*-metric spaces as a generalization of the notion of metric spaces. Mustafa obtained some fixed point theorems for mappings satisfying different contractive conditions. Abbas and Rhoades [5] initiated the study of common fixed point in *G*-metric spaces. While Saadati studied some fixed point theorems in generalized partially ordered *G*-metric spaces. Gajić and Crvenković proved some fixed point results for mappings with contractive iterate at a point in *G*-metric spaces. Here Fixed point and coincidence result is presented for multivalued generalized weak contractive mappings on complete metric space.

Preliminaries - *In this paper,(X,d) denotes a complete metric space and H denotes the Hausdorff metric on CB (X).*

Definition 1 - Two mappings T1 S : X → CB (X) are called generalized weak contractions if there exists $0 \le a < 1$ such that $H(Tx, Sy) \le aM(x,y)$, for all x, y∈X.

Definition 2 - Two mappings T, S : X → CB(X) are called generalized φ- weak contractive if there exists a map $\varphi : [0, +\infty) \to [0, +\infty)$ with $\varphi(0) = 0$ and $\varphi(t) > 0$ for all $t > 0$ such that

$H(Tx, Sy) \le M(x,y) - \varphi(M(x,y))$

for all x, y∈X.

In the proof of our main results, we will use the following well-known lemma, and refer to Nadler [3] or Assad and Kirk [9] for its proof.

Lemma 1

If A, B ∈ CB (X) and a ∈ A, then for each ε > 0, there exists b ∈ B such that

$d(a,b) \le H(A,B) + \varepsilon$.

Theorem A

Let (X,d) be a complete metric space. Suppose T:X → CB(X) is a contraction mapping in the sense that for some $0 \le a < 1$,

$H(Tx, Ty) \le ad(x,y)$,

for all x, y∈X. Then there exists a point x∈X such that x∈Tx.

Daffer and Kaneko [1] proved the existence of a fixed point for a multivalued weak contraction mapping of a complete metric space x into CB (X).

Theorem B

Let (X,d) be a complete metric space and T:X → CB(X) be such that

$H(Tx, Ty) \le aN(x,y)z$

for some $0 \le a < 1$ and for all x, y∈X. (i.e., weak contraction). If x→d (x,Tx) is lower semicontinuous (l.s.c.), then there exists $x_0 \in X$ such that $x_0 \in Tx_0$.

we extend Nadler and Daffer-Kaneko's theorems to multivalued generalized weak contraction mappings .

Rhoades [5] proved the following fixed point theorem for φ-weak contractive single valued mappings, giving another generalization of the Banach Contraction Principle.

Theorem C.

Let xbe a complete space and let T:X → Cl(X) *be a generalized w-contractive map. Assume that*

inf {ω (x,v)+ ω (x, T(x)) : x∈X} > 0,

for every v∈X with v.∈ T(v). Then Fix (T) # ϕ

Proof.

By lemma there exists an orbit $\{x_n\}$ of T, which is a Cauchy sequence in x. Due to the completeness of x, there exists $v_0 \in X$ such that $\lim_{n\to\infty} x_n = v_0$. Since $\omega(x_n,)$ is lower semicontinuous and $x_m \to v_0 \in X$, it follows that for all $n > n_0$.

$$\omega(x_n, v_0) \le \liminf_{m\to\infty} \omega(x_n, x_m) \le \frac{v^n}{1-v}\,\omega(x_0, x_1),$$

where $y = b_0/b < 1$. Also, we get

$$\omega(x_n, T(x_n)) \le \omega(x_n, x_{n+1}) \le y^n \omega(x_0, x_1).$$

Assume that $v_0 \notin T(v_0)$. Then, we have

$$0 < \inf\{\omega(x, v_0) + \omega(x, T(x)) : x \in X\}$$

$$\le \inf\{\omega(x_n, v_0) + \omega(x_n, T(x_n)) : n > n_0\}.$$

* Assistant Professor, Bhartiya College, Ujjain (M.P.) INDIA
** Retd. Professor, Govt. Madhav Science College,Ujjain (M.P.) INDIA

$$\leq \inf \left\{ \frac{v^n}{1-v}\omega(x_0,x_1)+y^n\,\omega(x_0,x_1): n>n_0 \right\}$$

$$= \left\{ \frac{2-v}{1-v}\omega(x_0,x_1) \right\} \inf \left\{ y^n : n>n_0 \right\} = 0.$$

which is impossible and hence $v_0 \in Fix(T)$. (7)

Theorem D

Let (X,d) be a complete metric space, and let $T: X \to X$ be a mapping such that

$d(Tx, Ty) \leq d(x,y) - \varphi(d(x,y))$,

for every $x,y \in X$ (i.e., φ-weak contractive), where $\varphi : [0,+\infty) \to [0,+\infty)$ is a continuous and nondecreasing function with $\varphi(0)=0$ and $\varphi(t)>0$ for all $t>0$. Then T has a unique fixed point.

By choosing $\psi(t) = t-\varphi(t)$, φ-weak contractions become mappings of Boyd and Wong type [6], and by defining $k(t)=(1-\varphi(t))/t$ for $t>0$ and $k(0)=0$, then φ-weak contractions become mappings of Reich type [7].

Main Result - The following theorem extends Nadler and Daffer-Kaneko's Theorems to a coincidence theorem.

Theorem 1

Let (X,d) be a complete metric space, and let $T,S: X \to CB(X)$ be two multivalued mappings such that for all $x,y \in X$,

$H(Tx, Sy) \leq aM(x,y)$,

where $0 \leq a < 1$ (i.e., multivalued generalized weak contractions). Then there exists a point $x \in X$ such that $x \in Tx$ and $x \in Sx$ (i.e., T and S have a common fixed point). Moreover, if either T or S is single valued, then this common fixed point is unique.

Proof.

Obviously $M(x,y) = 0$ if and only if $x=y$ is a common fixed point of T and S.

Let $\varepsilon>0$ be such that $\beta = a+\varepsilon<1$. Let $x_0 \in X$ and $x_1 \in Sx_0$. By Lemma, there exists $x_2 \in Tx_1$ such that $d(x_2, x_1) \leq H(Tx_1, Sx_0) + \varepsilon M(x_1, x_0)$. Again there exists $x_3 \in Sx_2$ such that $d(x_3, x_2) \leq H(Sx_2, Tx_1) + \varepsilon M(x_2, x_1)$. By induction, we can find in this way a sequence $\{x_n\}$ in x such that $x_{2k+1} \in Sx_{2k}$ and

$d(x_{2k+1}, x_{2k}) \leq H(Sx_{2k}, Tx_{2k-1}) + \varepsilon M(x_{2k}, x_{2k-1})$

and $x_{2k+2} \in Tx_{2k+1}$ and

$d(x_{2k+2}, x_{2k+1}) \leq H(Tx_{2k+1}, Sx_{2k}) + \varepsilon M(x_{2k+1}, x_{2k})$

It follows that

$d(x_{2n+1}, x_{2n})$

$\leq H(Tx_{2n-1}, Sx_{2n}) + \varepsilon M(x_{2n-1}, x_{2n})$

$\leq \beta M(x_{2n-1}, x_{2n})$

$$= \beta \max \left\{ d(x_{2n-1}, x_{2n}),\ d(x_{2n-1}, Tx_{2n-1}),\ d(x_{2n}, Sx_{2n}),\ \frac{d(x_{2n-1}, Sx_{2n}) + d(x_{2n}, Tx_{2n-1})}{2} \right\}$$

$$= \beta \max \left\{ d(x_{2n-1}, x_{2n}),\ d(x_{2n-1}, x_{2n}),\ d(x_{2n}, x_{2n+1}),\ \frac{d(x_{2n-1}, x_{2n+1}) + 0}{2} \right\}$$

$$- \beta \max \left\{ d(x_{2n-1}, x_{2n}),\ d(x_{2n}, x_{2n+1}) \right\}$$

$$= \beta d(x_{2n-1}, x_{2n})$$

since if otherwise $d(x_{2n}, x_{2n+1}) > d(x_{2n}, x_{2n-1})$, then $d(x_{2n}, x_{2n+1}) \leq \beta\, d(x_{2n}, x_{2n+1})$ and so $d(x_{2n}, x_{2n+1}) = 0$.

Hence $0 = d(x_{2n}, x_{2n+1}) > d(x_{2n}, x_{2n-1})$ and this is a contradiction. Similarly,

$d(x_{2n+2}, x_{2n+1}) \leq \beta\, d(x_{2n+1}, x_{2n})$.

hence

$d(x_{k+1}, x_k) \leq \beta\, d(x_k, x_{k-1})$.

for all $k \in \square$. Since $\beta<1$, $\{x_n\}$ is a Cauchy sequence. Since (X,d) is complete, there exists $x \in X$ such that $\lim_{n\to\infty} x_n = x$. We have

$d(x_{2n+2}, Sx) \leq H(Tx_{2n+1}, Sx)$

$\leq aM(x_{2n+1}, x)$

$$= a \max \left\{ d(x_{2n+1}, x)\, d(x_{2n+1}, Tx_{2n+1}),\ d(x, Sx),\ \frac{d(x_{2n-1}, Sx) + d(x, Tx_{2n+1})}{2} \right\}$$

$$\leq a \max \left\{ d(x_{2n+1}, x)\, d(x_{2n+1}, x_{2n+2}),\ d(x, Sx),\ \frac{d(x_{2n+1}, Sx) + d(x, x_{2n+2})}{2} \right\}$$

Letting $n \to \infty$ in the above inequality, we conclude that $d(x,Sx) \leq ad(x,Sx)$. So $d(x, Sx) = 0$. Since $Sx \in CB(X)$, we have $x \in Sx$.

Similarly, $x \in Tx$. Therefore, T and S have a common fixed point.

Furthermore, if T is single valued, then this common fixed point is unique. In fact, if x and y are two common fixed points for T and S, then

$d(x,y) \leq H(\{x\}, Sy)$

$= H(\{Tx\}, Sy)$

$\leq aM(x,y)$

$$= a \max \left\{ d(x,y), d(x,Tx), d(y,Sy), \frac{d(x,Sy) + d(y,Tx)}{2} \right\}$$

$$\leq a \max \left\{ d(x,y), 0, 0, \frac{d(x,y) + d(y,x)}{2} \right\}$$

$= ad(x,y)$.

Since $0 \leq a < 1$, $d(x,y) = 0$, and so $x=y$.

It shows that if S,T:X → CB(X) are multivalued and x_0 is a common fixed point, and Tx_0 or Sx_0 is a singleton, then the common fixed point of T and S is unique.

By taking T = S and let T:X → CB(X) be such that

H (Tx, Ty) ≤ aN (x,y),

for some 0≤a<1 and for all x,y∈X (i.e., weak contraction). Then there exists x_0∈X such that x_0∈Tx_0.

Example 1

Let X=[0, 1] be endowed with the Euclidean metric. Let S, T:X → CB(X) be defined by Tx = [0, x/4] and Sy = {y/4}. Obviously,

$$H(Tx, Sy) = \max\left\{\left|\frac{y}{4}-\frac{x}{4}\right|, \frac{y}{4}\right\}$$

$$\leq \frac{1}{2}\max\left\{|y-x|, \left|y-\frac{y}{4}\right|\right\}$$

$$= \frac{1}{2}\max\{d(x,y), d(y,Sy)\}$$

$$\leq \frac{1}{2}M(x,y).$$

So T and S have a common fixed point (x=0), and since S is single valued, this fixed point is unique.

References :-

1. Daffer, PZ, Kaneko, H: Fixed points of generalized contractive multi-valued mappings. Journal of Mathematical Analysis and Applications. **192**(2), 655–666 (1995). Publisher Full Text
2. Chifu, C, Petrusel, G: Existence and data dependence of fixed points and strict fixed points for contractive-type multivalued operators. Fixed Point Theory and Applications. **2007**, (2007)
3. Nadler, SB: Multi-valued contraction mappings. Pacific Journal of Mathematics. **30**, 475–488 (1969)
4. Shahzad, N, Lone, A: Fixed points of multimaps which are not necessarily nonexpansive. Fixed Point Theory and Applications.(2), 169–176 (2005)
5. Rhoades, BE: Some theorems on weakly contractive maps. Nonlinear Analysis: Theory, Methods & Applications.**47**(4),2683–2693 (2001). PubMed Abstract | Publisher Full Text
6. Boyd, DW, Wong, JSW: On nonlinear contractions. Proceedings of the American Mathematical Society. **20**, 458–464 (1969). Publisher Full Text
7. Reich, S: Some fixed point problems. Atti della Accademia Nazionale dei Lincei. Rendiconti. Classe di Scienze Fisiche, Matematiche e Naturali. **57**(3-4), 194–198 (1974)
8. Zhang, Q, Song, Y: Fixed point theory for generalized -weak contractions. Applied Mathematics Letters. **22**(1), 75–78 (2009). Publisher Full Text
9. Assad, NA, Kirk, WA: Fixed point theorems for set-valued mappings of contractive type. Pacific Journal of Mathematics. **43**, 553–562 (1972)
10. Mustafa, Z, Sims, B: Fixed point theorems for contractive mappings in complete G-metric spaces. Fixed Point Theory Appl.**2009**

****

Common Fixed Points of Two Commuting Self Mappings in Banach Spaces

Dr. D. K. Sagar*

Abstract - The aim of this paper is to find the Common Fixed Point for two commuting self mappings in banach space using non-expansive mapping.
Keywords: Common Fixed points, self mapping, non-expansive mapping.

Introduction - It is well known that the Banach [1] contraction principle is a fundamental result in fixed point theory, which has been used and extended in many different directions. However, it has been observed [2, 3, 4] that some of the defining properties of the Fixed Point theorem for non-expansive mapping. in Banach spaces. .

Wong [12, 13] established some common fixed points for two mappings in Banach space.

Preliminaries and Definitions – Let C be a non empty, closed and convex subset of a Banach space B and T: C $\rightarrow$ C be a mapping such that

$\| T(x) - T(y) \| \leq K \| x - y \|$ **(2.1)**

For K > O and $\forall$ x, y $\in$ C.

The mapping T is continuous and is said to be Lipschitz type. The mapping is called contraction if K < I and non-expansive if K=1.

If T has a Fixed Point Such that T(p)=p

Then setting y=p in (1), we get

$\| T(x) - p \| \leq K \| x - p \|$, $x \in C$. **(2.2)**

In such case we called the mapping T quasi – Lipschitz

If K=I in (2), T is called quasi non-expansive mapping.

In this paper, we consider only non-expansive mapping and also the commuting property of two self Mappings.

Definition - Let B be a Banach space and let C be a convex set in B. The Mapping T: C $\rightarrow$ C is called an affine map if for all x, y in c and t $\in$ (0,1)

T(t(x) +(1-t)y) = t T (x) + (1-t) T (y)

Theorem 2.1 - (Brouwer): let T: Bn $\rightarrow$ Bn be a continuous mapping then T has a Fixed point in Bn,

where Bn = {x, x $\in$ R^n, $\| x \| \leq 1$}

Theorem 2.2 - (Schauder): if C is a compact convex set in Banach space B and T : C $\rightarrow$ C is a continuous mappings then there exists $x_0 \rightarrow c$ such that $T(x_0) = x_0$

Theorem 2.3 - (Dotson and Mann): let C be a non-empty compact and convex subset of a Banach space B and T: C $\rightarrow$ C be a non-expansive mapping, then T has a Fixed point.

Main Result - Theorem - let T and S be two commuting self maps of a non-empty compact and convex subset of C of a Banach space B such that S is affine and continuous. If T(c) C S(c) and $\| T(x) - T(y) \| \leq \| s(x) - s(y) \|$ $\forall$ x, y $\in$ C, then T and S have a common Fixed Point in C

Proof since C is a compact and convex subset of a Banach space B and s: C $\rightarrow$ C is continuous then, by schauder Fixed point theorem, S has a fixed point t, say in C. Now, define a function ϕ such that

$$\phi(x) = \frac{n}{n+1} T(x) + \frac{1}{n+1} t, \quad \forall \ x, \in C, \qquad (3.1)$$

And for a fixed positive integer n. since, C is convex and T (x), t $\in$ C, then ϕ (x), being their convex combination, also belongs to C. this implies ϕ(c) c C. Further, since T (c) C S(c),

For a x $\in$ C there is a point y $\in$ C such that T (x) = S (y) there we have from (3.1)

$$\phi(x) = \frac{n}{(n+1)} S(y) \frac{+1}{n+1} S(t)$$

$$\phi(x) = s\left[\frac{n}{n+1} y + \frac{1}{n+1} t\right] \qquad (3.2)$$

This is because S is affine and t is a fixed point of S. From (3.2) we observe that

ϕ(c) C S(c).next, we observe that

$$\phi[s(x)] = \frac{n}{n+1)} T[s(x)] + \frac{1}{n+1} t \qquad (3.3)$$

And that

$$S[\phi(x) = S\left[\frac{n}{n+1} T(x) + \frac{1}{n+1} t\right]$$

$$= \frac{n}{n+1} S[T(x)] + \frac{1}{n+1} t$$

* Asst. Prof. (Mathematics) Shri Sitaram Jaju Govt. Girl's College, Neemuch (M.P.) INDIA

$$= \frac{n}{n+1} T[s(x)] + \frac{1}{n+1} t \qquad (3.4)$$

Since T and S Commute.

Thus (3.3) and (3.4) imply that

ϕ and S commute. Also, $\forall$ x, y $\in$ C,

$$\| \phi(x) - \phi(y) \| = \frac{n}{n+1} \| T(x) - T(y) \|$$

$$\leq \frac{n}{n+1} \| S(x) - S(y) \| \qquad (3.5)$$

Then, by Jungck's [10], ϕ and S have a unique common fixed point for each

n = 1, 2, 3 .....

Let $x_1, x_2, \ldots\ldots\ldots x_n, \ldots\ldots$ be the common fixed points of f and S.

Since C is compact, then there is a subsequence

$\{X_{nk}\}_{K=1}^{\infty}$ of $\{X_n\}_{n=1}^{\infty}$

Such that $x_{nk} \to x \in C$ as $k \to \infty$

Since S is continuous, T is also continuous. Then

$$x_{nk} = \phi(x_{nk}) = \frac{n_k}{n_k+1} T(x_{nk}) + \frac{1}{n_k+1} t \qquad (3.6)$$

Implying

$$x_{nk} - T(x_{nk}) = \frac{1}{n_k+1} [t - T(x_{nk})] \qquad (3.7)$$

Whence, letting $k \to \infty$, we obtain x = T (x)

Thus x is a fixed point of T and also x is a fixed point of S.

Remark - The Fixed Point is not necessarily unique as in the case of theorem (2.3)

References :-

1. Banach,S.,sure les operations,dans les ensembles abstr -aites at leurs.Applications, Fund.Math.3(1922)133-18
2. Bose R.K. and Mukherjee, R.N., Approximating fixed points of some mappings, Proc. Amer-Math. Soc. 82 (1981), 603-606.
3. Browder, FE., Non-expansive Non- linear operators in a Banach space, Proc.Nat. Acad, Sci. U.S.A.. 54 (1965), 1041-1044.
4. De.Marr,R.Common Fixed Points for Commuting Cont-raction Mappings, Pacific J.Math 13 (1963), 1139-1141.
5. Dotson. W.G., Fixed Point Theorems for non-expansive mappings on star-shaped subsets of a Banach space, J. London Math. Soc. 4 (1972a), 408-410.
6. Dotson. W.G., Fixed Points of quasi non-expansive mappings J.Austral. Math. Soc.13 (1972b), 167-170
7. Dotson. W.G. and Mann, W.R., The Schauder Fixed Points theorems for non-expansive mappings Amar Math. Monthly. 84 (1977), 363-364.
8. Ishikawa, S, Fixed Points and iteration of a non-expansive mapping in a Banach space, Proc. Amer. Math. Soc. 59 (1976), 65-71.
9. Istratescuvasile, I., Fixed Point theory Mathematics and its application (D Reidal Publishing Company,) V.-7
10. Jungck, G., Commuting Mappings and Fixed Points, Amer. Math.Monthly. 83, (1976), 261-263.
11. Kirk, W.A., on successive approximation for non-expansive Mappings in Banach spaces, Glasgow Math. J. 12 (1971), 6-9.
12. Wong, C.S., Common Fixed Points for two Mapping Pacific, J. Math. 48 (1973), 299-312.
13. Wong, C.S., Approximation to Fixed Points of generalized non-expansive Mappings, Proc.Amar. Math. Soc. 54 (1976), 93-97

****

Fixed Points of Composite Non-Expansive Mappings in Banach Spaces

Dr. D.K. Sagar *

Abstract - The aim of this paper is to find out the composite non-expansive mappings in Banach space.
Keywords - Fixed point, Composite non-expansive mappings, Compact star-Shaped Banach Space.

Introduction - It is well known that the Banach [1] contraction principle is a fundamental result in fixed point theory, which has been used and extended in many different directions. However, it has been observed [2, 3, 4] that some of the defining properties of the Fixed Point theorem for non-expansive mapping. in Banach spaces.

Wong [14, 15] established some common fixed points for two mappings in Banach space.

Preliminaries and Definitions - Let C be a compact and convex subset of a Banah space B and T: C → C be a non-expansive mapping. Then, by

$\| T(x) - T(y) \| \leq K \| x - y \|$ **(2.1)**

For $K > 0$ and $\forall\ x, y \in C$.

The mapping T is continuous and is said to be Lipschitz type. The mapping is called contraction if $K < 1$ and non-expansive if K=1.

If T has a Fixed Point Such that T(p)=p

Then setting y=p in (2.1), we get

$\| T(x) - p \| \leq K \| x - p \|, \ \forall x \in C.$ **(2.2)**

In such case we called the mapping T quasi – Lipschitz

If K=l in (2.2), T is called quasi non-expansive mapping.

In this paper, we consider only non-expansive mappings.

Definition - Let B be a Banach space and let C be a convex set in B. The Mapping T: C → C is called an affine map if for all x, y in C and $t \in (0,1)$

$T(t x + (1-t)y) = t T(x) + (1-t) T(y)$

Theorem 2.1 - (Brouwer): let T: Bn → Bn be a continuous mapping then T has a Fixed point in Bn, where

$Bn = \{x, x \in R^n, \| x \| \leq 1\}$

Theorem 2.2 - (Schauder): if C is a compact convex set in Banach space B and T : C → C is a continuous mappings then there exists

$x_0 \rightarrow C$ such that $T(x_0) = x_0$

Theorem 2.3 - (Dotson and Mann): let C be a non-empty compact and convex subset of a Banach space B and T: C → C be a non-expansive mapping, and then T has a fixed point.

Theorem 2.4 - let T and S be two commuting self maps of a non-empty compact and convex subset of C of a Banach space B such that S is affine and continuous. If $T(c) \subset S(c)$ and $\| T(x) - T(y) \| \leq \| s(x) - s(y) \| \ \forall\ x, y \in C$, then T and S have a common Fixed Point in C

If the mapping T : C → C is not non-expansive, then we can not apply this theorem to establish the Fixed Point.

Now, let us define mapping, T_λ on C such that T_λ is given by

$T_\lambda (x) = \lambda T(x) + (1-\lambda) Z, \ 0 < \lambda < 1, \ldots..$ **(1)**

And alternatively, by

$T_\lambda (x) = \lambda T(x) + (1-\lambda) Z, \ 0 < \lambda < 1, \ldots.$ **(2)**

Where Z is some Fixed Point of C. obviously, T_λ maps C into it self also, T_λ is non-expansive if T is so. Further, if T is non-expansive, then $T T_\lambda$ is non-expansive but not conversely.

Thus the condition that $T T_\lambda$ is non-expansive is a weaker condition.

Main Results - Theorem: let T be a self-mapping of non-empty, compact and convex subset of a Banach space B and $T_\lambda (x) = \lambda T(x) + (1-\lambda) Z$, where $0 < \lambda < 1$ and Z is some fixed element of C. if T and T_λ Commute and satisfy

$\| T T_\lambda (x) - T T_\lambda (y) \| \leq \| x - y \|, \ldots..$ **(3)**

For all $x, y \in C$, then T, T_λ and TT_λ have a common Fixed Point in C.

Proof - Since TT_λ is a non-expansive and maps C into it self, then by theorem 2.3, TT_λ has a Fixed Point p, say, In C. Now

$$\begin{aligned} \| T(p) - p \| &= \| T(TT_\lambda (p) - TT_\lambda (p) \| \\ &= \| T_\lambda T^2 (p) - T_\lambda T (p) \| \\ &= \lambda \| T^3 (p) - T^2 (p) \|, \ldots. \text{(4)} \end{aligned}$$

*Asst. Prof. (Mathematics) Shri Sitaram jaju Govt.Girl's College, Neemuch (M.P.) INDIA

Similarly, it is possible to derive

$\| T^3(p) - T^2(p) \| = \lambda \| T^5(p) - T^4(p) \|$ Where We can rewrite (4) as

$\| T(p) - p \| = \lambda^2 \| T^5(p) - T^4(p) \|$ Thus, in general, we have $\| T(p) - p \| = \lambda^r \| T^{2r+1}(p) - T^{2r}(p) \|$, r=1, 2, 3, ...**(5)**

Since C is Compact, We can find a Positive numbers K such that $\| T(p) - p \| \leq K \lambda^r$ .....**(6)**

Since λ<1, letting $r \to \infty$ we get T (p) = p

Now,

$T_\lambda(p) = T_\lambda T(p) = T T_\lambda(p) = p$

This implies p is common fixed point of T, T_λ and $T T_\lambda$

Corollary - if in the above theorem the condition (3) is satisfied.

By some iterate of T, i.e.

$\| T^m T_\lambda(x) - T^m T_\lambda(y) \| \leq \| x - y \|$, ...**(7)**

For some positive integer m and for all x, y $\in$ C, then also the conclusion of the theorem holds good.

Proof suppose that p is a Fixed Point of $T^m T_\lambda$. then as in (5), we can derive

$\| T(p) - p \| = \lambda^r \| T^{r(m+1)+1}(p) - T^{r(m+1)}(p) \|$, ...**(8)**

Where, letting $r \to \infty$, We obtain T (p) = p. Further

$T_\lambda(p) = T_\lambda T^m(p) = T^m T_\lambda(p) = p$.

Thus the result.

We now show that the same result holds if we assume T_λ as in(2)

References :-

1. Banach, S., sure les operations, dans les ensembles abstraites at leurs. Applications, Fund. Math. 3 (1922) 133-181.
2. Bose R.K. and Mukherjee, R.N., Approximating fixed points of some mappings, Proc. Amer-Math. Soc. 82 (1981), 603-606.
3. Browder, FE.: Non-expansive Non- linear operators in a Banach space, Proc.Nat. Acad, Sci. U.S.A.. 54 (1965), 1041-1044.
4. De. Marr, R.: Common Fixed Points for Commuting Contraction Mappings, Pacific J.Math 13 (1963), 1139-1141.
5. Dotson. W.G.: Fixed Point Theorems for non-expansive mappings on star-shaped subsets of a Banach space, J. London Math. Soc. 4 (1972a), 408-410.
6. Dotson. W.G.: Fixed Points of quasi non-expansive mappings J.Austral. Math. Soc.13 (1972b), 167-170
7. Dotson. W.G. and Mann, W.R.: The Schauder Fixed Points theorems for non-expansive mappings Amar Math. Monthly. 84 (1977), 363-364.
8. Ishikawa, S: Fixed Point and iteration of a non-expansive mapping in a Banach space, Proc. Amer. Math. Soc. 59 (1976), 65-71.
9. Istratescuvasile, I.: Fixed Point theory Mathematics and its application (D, Reidal Publishing Company,) V-7 (1981)
10. Jungck, G.: Commuting Mapping and Fixed Points, Amer. Math.Monthly. 83, (1976), 261-263.
11. Kirk, W.A.: on successive approximation for non-expansive Mappings in Banach spaces, Glasgow Math. J. 12 (1971), 6-9.
12. Singh, Sankatha, Watson, Bruce and shrivastava and best approximation: the KKM-Map principle, (Kluwer Acadamic Publishers) 1997.
13. Singh, S.P. and Singh M.R.: Fixed Points theorems and applications, the Mathemetics Student, 71 (1-4), (2002) 73-81.
14. Wong, C.S.: Common Fixed Points for two Mapping, Pacific, J. Math. 48 (1973), 299-312.
15. Wong, C.S. Wong: Approximation to Fixed Points of generalized non-expansive Mappings, Proc.Amar. Math. Soc. 54 (1976), 93-97

****

Chemical Analysis Of Fly Ash And Its Effects On Vegetation In Umaria District (M.P.)

Nand Kishor Bhagat *

Introduction - The major environment pollution due to power generation are fly ash production, which leads to pollution of air, water and soil quality and that mineral generation have complex composition and are associated forms, the mineral materials remain isolated in the form of the outer vegetation.

The alkaline nature of fly ash has led to an examination of its use as a liming agent to replace reagent grade $CaCO_3$ on acidic agricultural soils and coal mine spoils (Martens, 1971; Moliner and Street, 1982; Wong and Wong, 1989). Furthermore, the enriched macro- and micronutrients which fly ash contains enhanced plant growth in nutrient-deficient soils (Plank and Martens, 1974; Martens and Beahm, 1978; Wong and Wong, 1989).

However, large-scale application of coal ash to agricultural land is uncommon in most countries (Hodgson and Holliday, 1966; Adriano et al., 1980; Wong and Wong, 1989). The reason being that the economics of waste disposal are usually associated with adverse effects to soils and growing plants. Detrimental on plants are usually caused by excessive B, increasing salinity and alkalinity from high application rates, especially the unweathered ashes (Adriano et al., 1980).

The toxic effect of applying fly ash on soil has also been demonstrated by the decrease in microbial activity. Application of fly ash about 30% of the soil volume, seriously inhibited soil microbial respiration in the soil under investigation (Wong and Wong, 1986; Wong and Wong, 1989).

Material And Methodology - The fly ash collected from Sanjay Gandhi Thermal Power Station Pali which is situated in Umaria district. Healthy seeds of each vegetable crop namely Soybean, Onion, Mustard, Maize, Barbati and Tomato were obtained from an authorized supplier of seed from Shahdol (MP). All the seed was sterilized with 0.1% mercury chloride for five minutes to avoid fungal contamination and washed with distilled water for three times and soaked in water for five hours. The soaked seeds were evenly sown in a pot, filled with the concentration of fly ash in soil as 10%, 30%, 50%, 70%, and 100%. 15 different seeds and 15 saplings (control) were planted in each pot of different concentration.

The plants were irrigated with tap water at regular routine avoiding over saturation of soil and subsequent seepage of water from the pots. Pots were lined with polythene sheet to avoid leaching.

The 3rd, 4th, and 5th day of germination were studied. The average percentage of five day germination and average percentage germination of seedlings are given in table.

The estimation of organic and inorganic components will be conducted by Atomic Absorption Spectroscopy, Spectrophotometer and amount of fibers will be determined by gravimetric estimation.

Result And Discussion

a. Seed Germination - The effect of fly ash was studied on seed germination of *Glycine Max* (Soybean), *Allium cepa* (Onion), *Brassica Nigra* (Mustard), *Zea mays* (Maize), *Vigna sinensis* (Barbati) and *Lycopersicum esculentum* (Tomato). It was found that lower doses of fly ash (10%) very effective for the germination as compared to control germination.

The higher percentage of fly ash showed some adverse effect on soil so germination was affected due to increase in alkalinity and toxicity of heavy metal according to table No. 1.

b. Root and Shoot Length of Seedlings - According to table from 2 to 5, at 10% fly ash, the mean length of the seedlings of *Glycine max* (GM), *Allium cepa* (AC), *Brassica nigra* (BN), *Zea mays* (ZM), *Vigna sinensis* (VS) and *Lycopersicum esculentum* (LE) were increased when compared with control one. At 30% of fly ash concentration, the mean length of seedlings of GM, AC, BN, and VS were decreased when compared with the control condition, but in case of ZM and LE, they showed increasing order when compared with their control condition of seedlings. At 50% to 100% concentration of fly ash, the mean length of the seedling of all the species were inhibitory when compared with control condition of seedling.

c. Plant Growth Studies and Estimation of Moisture, Carbohydrate, Chlorophyll, Calcium, Phosphorus, and Iron at Different Stages - The results of analysis for moisture, chlorophyll, carbohydrate, calcium, phosphorus and iron contents of plants of *Glycine max* (According to table No. 6, 7, and 8), *Allium cepa*, *Brassica nigra*, *Zea mays*, *Vigna sinensis*, and *Lycopersicum esculentum* when treated with different percentage concentrations of Fly ash.

Analysis of 15, 30 and 45 days old pants of all the species treated with lower percentage of Fly ash (either 10% or up to 30%) the percentage of moisture, chlorophyll,

* Asst. Professor (Chemistry) Govt P.G. College,Satna (M.P.) INDIA

carbohydrate, calcium, phosphorus and iron showed promotary character, when compared with control. Where as, in the case of plants treated with higher concentration of Fly ash (From 50% to 100%) shows the decreasing order. From 10% to 100% fly ash, the concentration of fiber shows increasing order when compared with control.

Conclusion - Lower dose of fly ash don't affect the treated plants but indirectly affect the performance of plants by altering the growth and macro-micronutrients, abundance of soil bacteria, which maintain the soil fertility. With different doses of fly ash as soil modifier is a source of economical plant nutrient with and without organic manure, bio-fertilizer, and chemical-fertilizers in respect to crop yield, soil health, quality crop produce, uptake of nutrients and toxic heavy metals, ground water quality etc. Thus, the use of above 50% fly ash no doubt results in the imbalance of natural biological system, pollutes the environment, and retards the growth parameters of plants.

References :-

1. Adriano, D.C., Page, A.L., Elseewi, A.A., Chang, A.C., Straugham, I., 1980. Utilization and disposal of fly-ash and coal residues in terrestrial ecosystem: a review Journal of Environmental Quality 9, 333–344.
2. Hodgson. D.R., Holliday, R., 1966. The agronomic properties of pulverized fuel ash. Chem. Ind. 20, 785-790.
3. Martens, D.C., 1971. Availability of plant nutrients in fly ash. Compost Sci 12, 15- 19.
4. Martens, D.C., Beahm, B.R., 1976. Growth of plants in fly ash amended soils. pp 657-664. In J.H. Laber et al., (Ed.). Proc. Int. Ash Utilization Symposium. St. Louis MO, March 24-25, 1976 MERC SP 76/4 FRDA Morgantown Energy ResCentre. Morgantown. WV.
5. Molliner, A.M., Street. J.J., 1982. Effect of fly ash and lime on growth and composition of corn (*Zea mays L*.) on acid sandy soils. Proc. Soil Crop Sci. Soc., Florida, 41, 217-220.
6. Plank, C.O., Martens, D.C., 1974. Boron availability as influenced by application of fly ash to soil. Soil Science Society of America Proceedings 39, 974–977
7. Wong M.H. and Wong J.W.C. (1986). Effect of fly ash and soil microbial activity. Envi. Pollut 40; 127-144.
8. Wong M.H. and Wong J.W.C. (1986). Germination and seedling growth of vegetables, crops in fly ash amended soils .Agric. Ecosyt. Envi. 26;23-25.

Table 1
Average Percentage Germination of Seedlings

S.No.	Sets	G.M.(Soybean)	A.C.(Onion)	B.N.(Mustard)	Z.M.(Maize)	V.S.(Barbati)	L.E.(Tomato)
1	Cont	75	56.33	65	62.67	63.33	73.33
2	10%	84	57	66.33	65	65.33	76.67
3	30%	81.33	52	62.33	60	59.67	73.33
4	50%	71	50.33	55.33	57.33	47.33	62
5	70%	69	47	48.67	49	44.67	56.67
6	100%	60	36.33	42	40.67	41.33	51.32

Table 2
Mean Length of Seedlings (Cm)

S. No.	Sets	*G. Max*	*A. Cepa*	*B. Nigra*	*Z. Mays*	*V. Sinensis*	*L .Esculentum*
1	Control	15.76	7.66	9.11	14.38	12.68	12.43
2	10%	16.11	7.75	9.58	15.15	13.09	13.41
3	30%	15.63	7.6	9.03	14.65	11.31	13.33
4	50%	12.14	6.69	8.09	12.96	10.37	11.59
5	70%	10.58	6.15	6.86	10.73	9.1	9.84
6	100%	8.1	5.81	6.1	9.84	8.3	7.75

Table 3
Mean Length Of 15 Days Old Plants (cm)

S. No.	Sets	*Glycine max*	*Allium cepa*	*Brassica nigra*	*Zea mays*	*Vigna sinensis*	*Lycopersicum esculentum*
1	Control	15.98	7.85	11.05	14.78	13.76	12.75
2	10%	16.42	8.17	12.33	15.56	14.66	13.86
3	30%	16.22	7.77	11.37	15.45	13.98	13.67
4	50%	14.22	6.96	10.02	13.67	13.7	12.02
5	70%	13.76	6.76	9.8	13.34	12.45	10.43
6	100%	12.14	6.37	9.2	12.78	11.78	8.76

Table 4
Mean Length of 30 Days Old Plants (cm)

S. No.	Sets	*Glycine max*	*Allium cepa*	*Brassica nigra*	*Zea mays*	*Vigna sinensis*	*Lycopersicum esculentum*
1	Control	21.18	12.65	15.45	19.42	19.96	14.75
2	10%	22.02	13.27	16.83	20.16	20.26	15.52
3	30%	21.2	12.47	16.6	19.85	19.38	15.09
4	50%	18.52	11.86	15.32	18.97	19	14.08
5	70%	18.16	11.77	15.2	18.74	18.85	12.83
6	100%	17.34	10.96	14.4	17.98	17.68	10.96

Table 5
Mean Length Of 45 Days Old Plants (cm)

S. No.	Sets	*Glycine max*	*Allium cepa*	*Brassica nigra*	*Zea mays*	*Vigna sinensis*	*Lycopersicum esculentum*
1	Control	24.48	15.95	18.75	22.72	22.26	18.05
2	10%	25.42	16.67	20.23	23.56	23.68	18.92
3	30%	24.5	16.17	19.9	23.15	22.46	18.39
4	50%	21.72	15.06	18.52	22.17	22.2	17.28
5	70%	21.06	14.67	18.1	21.64	21.75	15.73
6	100%	20.04	13.66	17.1	20.68	20.78	13.66

Table 6
Analysis of 15 Days Old *Glycine Max* Plant in Different Percentage of Fly Ash

S.No.	Conc. Of Fly Ash	Moisture In %	Chlorophyll mg/g	Carbohydrate gm	Fiber gm	Calcium gm	Phosphorus gm	Iron mg
1	Control	70	2.2	30.16	9.05	0.4	0.26	3.43
2	10%	76	2.23	31.19	9.11	0.43	0.29	3.48
3	30%	74	2.21	30.88	9.19	0.41	0.28	3.46
4	50%	68	2.01	29.14	9.22	0.38	0.24	3.43
5	70%	65	1.96	28	9.29	0.36	0.22	3.41
6	100%	59	1.91	27.87	9.32	0.35	0.2	2.9

Table 7
Analysis of 30 Days Old *Glycine Max* Plant in Different Percentage of Fly Ash

S.No.	Conc. Of Fly Ash	Moisture In %	Chlorophyll mg/g	Carbohydrate gm	Fiber gm	Calcium gm	Phosphorus gm	Iron mg
1	CONT.	78	2.28	31.45	9.1	0.42	0.38	3.48
2	10%	80	2. 31	31.78	9.17	0.45	0.4	3.52
3	30%	79	2. 29	31.49	9.24	0.43	0.39	3.5
4	50%	76	2.26	30.12	9.29	0.41	0.33	3.47
5	70%	75	2.23	29.78	9.38	0.38	0.31	3.46
6	100%	73	2.14	28.55	9.42	0.37	0.29	3.44

Table 8
Analysis of 45 Days Old *Glycine Max* Plant in Different Percentage of Fly Ash

S.No.	Conc. Of Fly Ash	Moisture In %	Chlorophyll mg/g	Carbohydrate gm	Fiber gm	Calcium gm	Phosphorus gm	Iron mg
1	CONT.	78.45	2.34	32.23	9.19	0.43	0.36	3.48
2	10%	79.34	2.42	33.04	9.21	0.46	0.4	3.49
3	30%	78.45	2.36	32.44	9.3	0.44	0.39	3.48
4	50%	76.44	2.31	31.89	9.37	0.42	0.34	3.47
5	70%	75.43	2.29	31.07	9.43	0.4	0.32	2.99
6	100%	73.38	2.21	29.3	9.5	0.38	0.3	2.94

A Comparative Study of Pollution (Noise) in Festival at Neemuch (M.P.)

Dr. Bhupendra Kumar Amb *

Abstract - Environmental pollution is the unfavorable alteration of surrounding wholly or largely as a byproduct of man's action through direct or indirect effect of changes in energy patterns, radiations levels, chemical and physical constitution and abundance of organism. "Noise Pollution" is a serious problem in India so the effective ways have to be chalked out according to the needs of different places using different methods. The present paper deals with monitoring & comparison of Noise Pollution in 'Garva Utsav' Festival at Neemuch (M.P.), India on the different moment with the standards prescribed in Environmental Protection Rules 2000 and standards of CPCB. During the present study the noise levels were measured with the help of sound level meter. In the present work two different time intervals and locations were selected for the study. The measurements of noise levels at the locations were carried out in different time intervals of the specific time slot (8-12) of night. The instrument was set to record noise samples at 5 minutes intervals during the given exposer time. The present study reveals that the noise levels exceed the prescribed noise standard set by the Central Pollution Control Board, India (CPCB, 2002). Major effects of noise pollution include interference with communication, sleeplessness, and reduced efficiency. Some remedies have been proposed to prevent noise.
Keywords - Noise pollution, Garva Utsav, festival, Neemuch, Noise level, Remedies.

Introduction - Noise can be define as an unwanted or undesired sound whereas environmental noise is any unwanted or harmful outdoor sound created by human activities that is detrimental to the quality of life of individuals. Sound is a form of energy that is transmitted by pressure variations which the human ear can detect. Noise is unwanted sound. Noise pollution is now one of the most significant environmental issues in many large cities. Noise pollution adversely effects on human health, degradation of environment and quality of life. Noise is an unwanted sound that may cause some psychological and physical stress to the living as well as non-living objects exposed to it. Celebration of Garva utsav, Dipawali party, weeding ceremonies or other religious festivals & traffic with a minimum Noise level which gives happiness and avoid adverse effects on human health. The increasing musical instruments, drums D.J. crackers are the main source of noise pollution now a day's use is increasing day by day. This causes a lot of noise and air pollution. The crackers contain dangerous chemicals. The focus is to reduce noise and sound pollution that is intense during the following study points.

In the present work Gandhi Vatika & Girls school ground palace of Neemuch (M.P.), India, A middle part of town during Garva Utsav festival were choose for the study of the sound levels.

Sound V/S Noise - Sound is the quickly varying pressure wave traveling through a medium. When sound travels through air, the atmospheric pressure varies periodically. The number of pressure variations per second is called the frequency of sound, and is measured in Hertz (Hz) which is defined as cycles per second Noise intensity is measured in decibel units. The decibel scale is logarithmic; each 10-decibel increase represents a tenfold increase in noise intensity. A decibel is the standard for the measurement of noise. The zero on a decibel scale is at the threshold of hearing, the lowest sound pressure that can be heard, on the scale acc. 20 db is the noise of smith's whisper, 40 db has the noise in a quiet office. 60 db is normal conversation, 80 db is the level at which sound becomes physically painful. The Noise quantum of some of the cities in our country indicate their pitch in decibel in the nosiest areas of corresponding cities, e.g. Delhi- 80 db, Kolkata - 87,Bombay-85, Chennai-89 db etc.

Table-1

Area	Day time dB	Night time dB
Industrial	75	70
Commercial	65	55
Residential	55	45
Silence Zone	50	40

The permissible limits of noise levels for different urban areas prescribed by the Noise Pollution (Regulation and control) Rules, 2000 are given in the Table-1 Permissible limits of Noise levels. Here Day time treated as 6am to10pm & Night Time means 10pm to 6am.

Study Area & Measurement Technique - In the present paper an attempt has been made to study the sound levels during 'Garva Utsav' at 'Gandhi Vatika' & 'Girls school ground' of Neemuch (M.P.), India on the different moment. The noise levels were monitored with the help of sound meter.

The measurements of noise levels at the locations were

* Asst. Professor (Chemistry) Govt. P.G.College, Neemuch (M.P.) INDIA

carried out in three different time intervals of the nine nights. The measurements of noise levels at the locations were carried out in different time intervals of the specific time slot (8-12) of night. The instrument was set to record noise samples at 5 minutes intervals during the given exposer time. The time slot have divided in three parts, 1st is 8 to 9pm, 2nd is 9.0 to 10pm & 3rd is 10.0 to 12.0pm. That time intervals were choose in nine days of Navratri festival. 1st & 2nd time interval falls in day time & 3rd time interval comes in night time according to CPCB Rules. We have noted the minimum & maximum sound levels in all time slots during 'GarvaUtsav' at near 'Gandhi Vatika' & 'Girls school ground' of Neemuch. The noise levels were compared with that of the standards prescribed in Environmental Protection Rules, 2000 and standards of CPCB.

Table-2

Noise pollution during 'GarvaUtsav' at 'Gandhi Vatika' of Neemuch (M.P.)

Sr. No. Of days	Noise intensity dB(A) 8.00 p.m. to 9.00p.m.		Average intensity	Noise intensity dB(A) 9.00 p.m. to 10.00 p.m.		Average Intensity	Noise intensity dB(A) 10.00 p.m. to 12.p.m.		Average Intensity
	Min	Max		Min	Max		Min	Max	
1	99	101	100	102	104	103	101	103	102
2	100	102	101	103	104	103.5	102	103	102.5
3	99	101	100	102	105	103.5	100	104	102
4	98	101	99.5	101	104	102.5	101	103	102
5	99	100	99.5	102	104	103	101	103	102
6	100	101	100.5	103	105	104	102	105	103.5
7	100	102	101	103	104	103.5	101	104	102.5
8	98	101	99.5	102	105	103.5	102	105	103.5
9	99	101	100.5	103	105	104	102	104	103

Results & Discussion - It was observed that the level of Noise Pollution during all study is much higher when compared with the standard limits. The sound levels recorded during 'Garva Utsav' at 'Gandhi Vatika' of Neemuch (M.P.), located in middle part of the city Neemuch. In the monitoring 1st & 2nd time interval, maximum sound level of 102 decibel & 105 decibel respectively are observed during overall days of festival (Table-2, Figure-1). In the 3rd monitoring time interval night hours 10.0 to 12.0pm (Table-2, Figure-1) maximum sound level 105 decibel is observed during last three days of Garba Utsav at 1st location 'Gandhi Vatika' of Neemuch. Similarly at the 2nd location 'Girls school ground' of Neemuch in the monitoring 1st & 2nd time interval, maximum sound level of 103 decibel & 106 decibel respectively are observed during overall days of festival (Table-3, Figure-2). In the 3rd monitoring time interval night hours 10.0 to 12.0pm (Table-3, Figure-2) maximum sound level 106 decibel is observed during last three days of Garba Utsav festival. Here max drums, D.J., loud speakers are used that creates maximum sound level of 106 decibel. Here maximum sound level of 106 decibel has been found during over all time & days in the study area.

Table-3

Noise pollution during 'Garva Utsav' at 'Girls school ground' of Neemuch (M.P.)

Sr. No. Of days	Noise intensity dB(A) 8.00 p.m. to 9.00p.m.		Average intensity	Noise intensity dB(A) 9.00 p.m. to 10.00 p.m.		Average Intensity	Noise intensity dB(A) 10.00 p.m. to 12.p.m.		Average Intensity
	Min	Max		Min	Max		Min	Max	
1	99	102	100.5	102	105	103.5	101	105	103
2	100	103	101.5	102	105	103.5	102	105	103.5
3	99	102	100.5	102	105	103.5	100	105	103
4	99	101	100	101	104	102.5	101	106	103.5
5	98	102	100	102	104	103	101	104	102.5
6	100	103	101.5	103	106	104.5	102	105	103.5
7	100	103	101.5	103	104	103.5	101	106	103.5
8	98	103	100.5	102	106	104	102	105	103.5
9	99	103	101	103	106	104.5	102	106	104

In general it was found that during the all time slots, observed sound level is much greater than that of the permissible limit throughout the study. The figure -1 & 2 based on table 2 & 3 are display in the last.

Effects Of Noise On Health - Noise pollution can cause, Annoyance and Aggression, Hypertension, High Stress Levels, Tinnitus, Hearing loss, Sleep disturbances, Forgetfulness, Severe Depression Panic Attacks.

Chronic exposure to noise may cause noise-induced hearing loss. Older males exposed to significant occupational noise demonstrate significantly reduced hearing sensitivity than their non-exposed peers, though differences in hearing sensitivity decrease with time and the two groups are indistinguishable by age 79.

High noise levels can contribute to Cardiovascular effects Exposure to moderately high levels during a single eight hour period causes a statistical rise in Blood Pressure of five to ten points and an increase in and vasoconstriction leading to the increased blood pressure noted above as well as to increased incidence of Coronary Artery Disease.

It has been reported that exposure to excessive noise may leads to prematurity of new-born babies, disruption to the normal growth and development of premature infants, affecting the physical and psychological behavior of the individuals, permanent hearing loss; cause nausea, vomiting, pain, hypertension, high blood pressure, cardiovascular problems, deterioration of sleep quality, restlessness, depression, fatigue, allergy, mental stress and annoyance

Conclusion -Noise pollution is emerging as an environmental problem in Neemuch M.P. and also other parts of India. This can cause negative impact on public health and welfare. Considering the above aspects, we can conclude that noise dominates the spectrum of environmental noise.

Recommendations -There are no doubts that Garba Utsav is a festival of worship & joy. It attracts crowd due to light & musical sound. (Goddess Durga Maa also listen light musical sound & gives blessing to us).The problem arises when sound level of festival at the location increases day by day innocently. There are different remedies to check noise at boththe locations. In case of all time slots sound proof roof & side cover would be used to reduce sound level (noise). We should also be used ear protective apparatus at the location without hesitations. This ear protective apparatus is different from use of cotton and covering of ear with cloth & others. These major should be implemented by local administration for a healthy & noise free atmosphere of our locality.

References :-

1. Vidyasagar and Nageswara Rao, (2006), Noise Pollution Levels in Visakhapatnam City (India), Journal of Environmental Science and Engineering, 48(2), pp 139-142.
2. S. Rosen and P. Olin, Hearing Loss and Coronary Heart Disease, Archives of Otolaryngology, 82:236 (1965).
3. McClain, Craig. "Loud Noise Makes Crabs Even More Crabby". Deep Sea News. Retrieved 2013-04-04. V.P. Kudesia and T.N. Tiwari:Noise Pollution and Its Control.PragatiPrakashan, Meerut India,1994.
4. WHO., Environmental health criteria of noise. 12 World Health Organization (1980).
5. RituKudesia: Environmental Health & Technology. Pragati Publishers, Meerut India, 2007.
6. D.B. Tripathy: Noise pollution. A.P.H. Publishing Corporation, New Delhi, India, 1999.
7. T. VidyaSagar et.al.2006, Oyedepo and Saadu 2009.

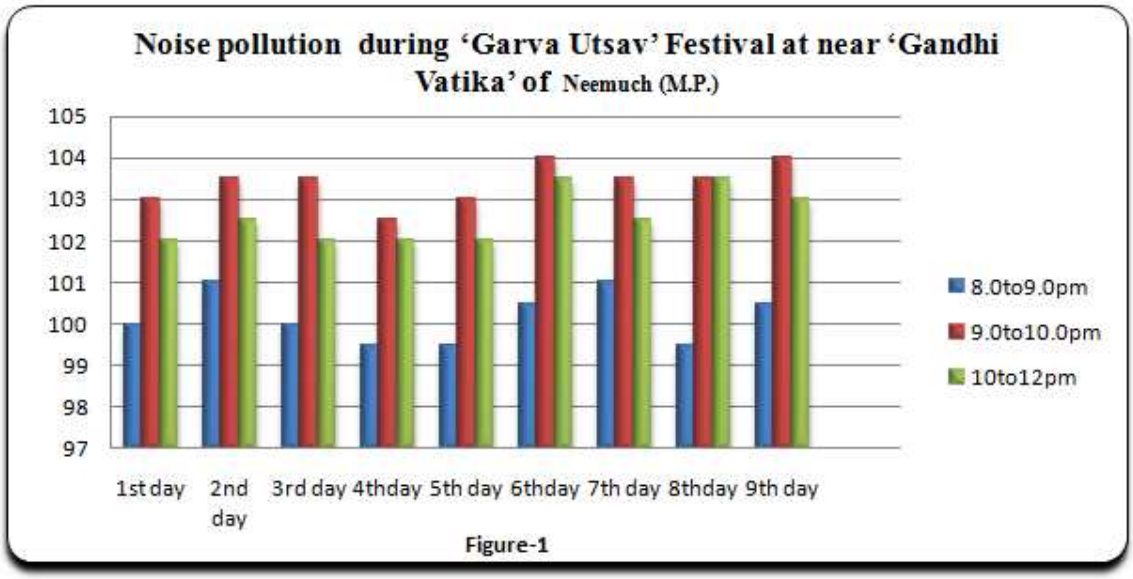

Figure-1

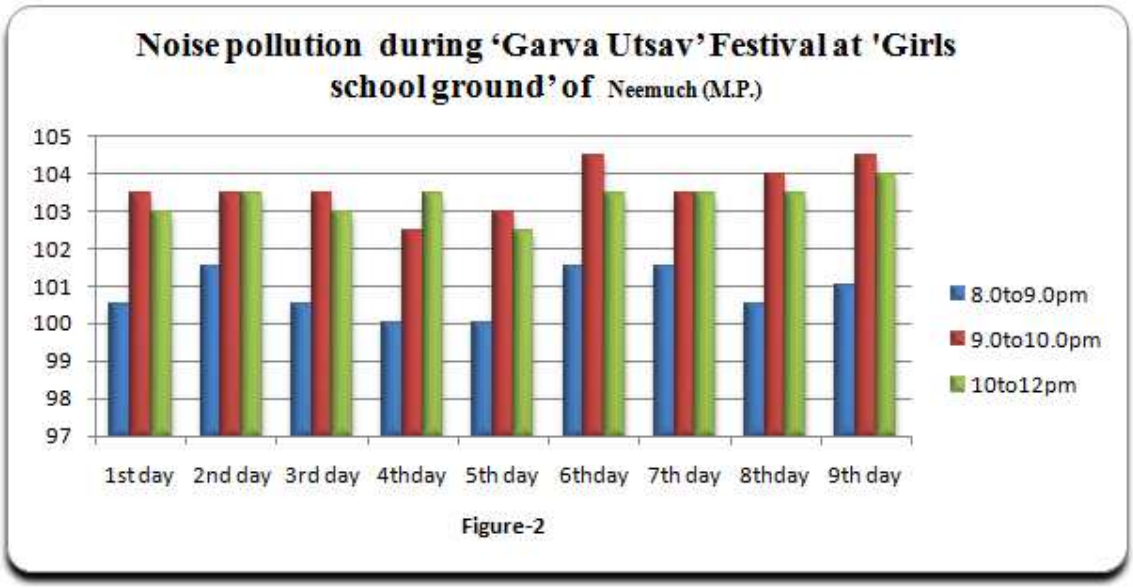

Figure-2

Seasonal Variations In Physio-Chemical Parameters Of River Kshipra At Ram-Ghat, Ujjain (M.P.)

Kunjan Singh Songara *

Abstract - Water sample collected from Kshipra River during pre-winter to post winter seasons 2013. This study indicates the direct relationship among various physico-chemical parameters like water temperature, free carbon-di-oxide, Transparency DO, Biochemical oxygen demand (BOD) and chemical oxygen demand (COD), hardness and phosphate, an inverse relationship was found between DO and BOD and COD during course of the study.
Key words - alkalinity, physic chemical, samples, oxygen, winter**.**

Introduction - In the lotic system, the significance of physical and chemical data for the assessment of water quality has been recognized. The studies consider water quality usually involve physical, chemical and biological variables.

The Shipra also known as the Kshipra is a river in Madhya Pradesh state of Central India. The river rises in the Vindhya Range north of Dhar, and flows south across the Malwa Plateau to join the Chambal river. It is one of sacred rivers in Hinduism. The holy city of Ujjain is situated on its right bank. Every 12 years, the Kumbh Mela festival takes place on the city's elaborate river side ghats, as do yearly celebrations of the river goddess Kshipra. There are hundreds of Hindu shrines along the banks of the river Shipra. Shipra is a peremial river.

Earlier there used to be plenty of water in the river. Now the river stops flowing after a couple of months after the monsoon.

Number of workers has carried out their work on water quality of different river. Khanna (1993), Khanna (2003) of river Ganga and Mahajan (2005) and Verma (2008) studied about the physico-chemical and biological parameters of river Narmada, where as the study about the Shipra River at Ram Ghat is scanty therefore the study will be helpful for other workers.

Methodology - The water samples were collected in a neat clean two liter capacity white plastic jericanes for general parameters and samples for Do were taken in 300 ml capacity borosil glass bottles and Do was fixed by using $MnSO_4$ and alkaline azide reagents. Methods of analysis, sampling and preservation of samples were adopted as per standard methods of APHA-AWWA (1998), Trivedi and Goel (1984), Kotiah and Kumaraswamy (1994), WHO (1984).

Table –1 (See in next page)

Results and Discussion -The physico-chemical parameter fluctuation obtained during the study period is tabulated in table-1. The temperature showed a negative relationship with the dissolved oxygen. Water is often attributed to the fact that the oxygen is dissolved more during the period of active photosynthesis. Hutchinson (1957) concluded that cold water has greater capacity for holding dissolved gases. The maximum dissolved oxygen was recorded (9.13 ml// ± 0.10) in pre-winter and minimum (8.68 ml// ± 0.28) in post-winter. It was also reported by Badola and Singh (1982). The maximum total solids was observed 220 mg// in post-winter and minimum (160 mg// ± 5.2) in pre-winter. The value of the total solids is increased from pre-winter to post-winter as also reported by David (1956) in Bhadra River (Mysore).

The maximum value of pH was observed (8.33 mg// ± 0.15) in pre-winter and minimum (7.90 mg// ± 0.02) in post-winter. Maximum value of pH in winter might be due to increase in algal population in the river, pH and DO showed a positive relationship to one another as also found by Ali et.al. (1988) in a atrophic lake.

The minimum value of free carbon dioxide was found 1.30 mg// ± 0.16 in pre-winter and maximum (1.55 mg// ± 0.14) in post-winter. Free carbon dioxide and DO showed a negative relationship to one another.

The maximum value of alkalinity was (142 mg// ± 8.05) in winter and minimum (168.33 mg// ± 0.66) in pre winter. It was also observed by Venkateswarlu and Jayanti (1968) in the river Sabarmati.

The lowest chloride value was observed (16.80 mg// ± 0.14) in pre-winter and highest in post winter (17.88 mg// ± 1.42). It showed the positive relationship with temperature also studied by Mohanty 1981 in Bhubaneswar.

The sulphate value was minimum (1.05 mg// ± 0.02) in pre-winter and maximum (1.28 mg// ± 0.02) in post-winter are also observed by Singh (1988).

The maximum value of biochemical oxygen demand was recorded (3.33 mg// ± 0.37) in post-winter and minimum (2.15 mg// ± 0.25) in winter season. Biochemical oxygen demand and dissolved oxygen showed a negative relationship which is in agreement to Verma et. al.(1984) as reported in eastern Kalinadi.

The COD was highest (3.45 mg// ± 0.05) in post winter and lowest (2.15 mg// ± 0.15) in pre-winter. Biochemical oxygen demand and chemical oxygen demand showed a

* Asst. Professor (Chemistry) Maharaja Bhoj Govt. P. G. College, Dhar (M.P.) INDIA

positive relationship with one another also observed by Chopra and Patrick (1994) in the river Ganga at Rishikesh. COD showed a negative relationship with DO as reported by Verma et.al. (1984) in eastern Kalinadi.

References :-

1. Ali, A., Reddy, K.R. and Debusk, w.f. 1988. Seasonal changes in sediment and water chemistry of a subtropical shallow Eutrophic lake–Hydrobiologia, 159: 159-167.
2. A.P.H.A.,1998: Standard Methods for the examination of water and waste water, 20th Eds. American Public Health Association; 1015, 15th street, New Washington; 15:1-1134.
3. Badola, S.P. and Singh H.R.,1982 : Hydrobiology of river Alaknanda of the Garhwal Himalayas, Indian Eco. 8 : 269-276.
4. Chopra, A.K. and Patric, Nirmal, J., 1994 : Effect of domestic sewage on self-purification of Ganga water at Rishikesh I. Physico-chemical parameters, Ad. Bios. Vol. 13 (II) : 75-82
5. David, A., 1956: Studies on the pollution of the Bhara river at Badrawati fisheries effluents. Pro. Nat. Inst. Set. Indian, 93 (3) : 132 – 160.
6. Hutchinson, G.C.,1957:A treatise on limnology, geography, physics and chemistry, Vol. 1, New York, John Willey and Sons, Inc., 1-1015
7. Khanna, D.R.,1993 : Ecology and Pollution of Ganga River. Ashish Publication House, Delhi : 1- 241.
8. Kotaiah, B,and Kumaraswami, N.,1994 : Environmental Engineering Laboratory manual, Charaotar Publishing House opposite Amul dairy, Anand India, p : 115.
9. Mahajan, S.K.2005. Algal flora of a recently constructed dam on river Balki in West Nimar district of M.P. Indian Hydrobiology, 8 (2): 113-116.
10. Mohanty, R.C.,1981: Water quality studies of some water bodies of Bhubaneswer, Ph. D. Thesis, Utkal University, p : 1-240
11. Singh, H.R.,1988: Pollution studies on upper Ganga and its tributaries at upper Himlaya Project Report.
12. Trivedi R.K. and Goel, P.K., 1984 : "Chemical and Biological methods for water pollution studies." Karad (India).
13. Venkateswarlu, T. and Jayanti, T.V.C., 1968 : Hydrobiological studies of the river Sabarmati to evaluate water quality : Hydrobiologia, 31 : 442-448.
14. Verma, S.R., Sharma, P. Tyagi, A, Rani, S. Gutpa, A.K. and Dalela, R.G., 1984: Pollution and saprobic status of eastern Kalinadi; Limnoogica (Berlin) 15 (1) : 69-133.
15. Verma, P.K. 2008: "Studies on seasonal variations in physico-Chemical and Biological parameters in river Narmada at Maheshwar (M.P.)" Ph.D. Thesis of B.U.U. Bhopal. p – 159.
16. WHO, 1984: "Guide lines for Drinking water quality." World Health Organization, Geneva, Vol. 2: 264.

Table –1:Seasonal variation in physico-chemical parameters of Shipra River at Ram Ghat Ujjain (M.P.)

S.No.	Parameters	Seasons		
		Pre-winter	Winter	Post winter
1	Temperature (^{0}C)	19.1 ± 0.56	20.0 ± 0.16	22.2 ± 0.50
2	pH	8.33 ± 0.15	8.15 ± 0.10	7.90 ± 0.02
3	Alkalinity (mg/*l*)	168.33 ± 0.66	142.00 ± 8.05	140.08 ± 9.15
4	Free CO_2	1.30 ± 0.16	1.38 ± 0.07	1.55 ± 0.14
5	Total Solid (mg/*l*)	160. ± 5.2	185.0 ± 15.0	220.0 ± 10.0
6	Dissolved oxygen (mg/*l*)	91.3 ± 0.10	8.78 ± 0.20	8.68 ± 0.28
7	BOD	2.16 ± 0.35	2.15 ± 0.25	3.33 ± 0.37
8	COD	2.15 ± 0.15	2.55 ± 0.25	3.45 ± 0.05
9	Chloride (ppm)	16.80 ± 0.14	17.30 ± 1.40	17.88 ± 1.42
10	Sulphate (mg/*l*)	1.05 ± 0.02	1.26 ± 0.02	1.28 ± 0.02

****

Giant, Exotic,Endangered Plant *Adansonia Digitata* (Mandu Imli) Is Found In Mandu,Dhar (M.P.) India

Nirbhay Singh Solanki * S.C. Mehta **

Abstract - *Adansonia digitata* is an exotic plant. This is the biggest plant in the study area of Mandu and Dhar. The baobab used to belong to the family, Bombacaceae, but this is now generally regarded as a family of Malvaceae. This plant had grown in the time period of Muhammad khilji (1436-69).
A.digitata is resistant to fire ,termite and drought , and prefers a high waterable. It occurs as isolated individuals or grouped in clumps irrespective of soil type. This plant is used to cure many diseases. The life Span of this tree is almost 5150 years.
Keywords - Giant, *Adansonia digitata* ,Endangered, Exotic.

Introduction - *Adansonia digitata L.* belongs to the Bombacaceae family and is generally known as the African Baobab. It is called Kalpvriksha in India and has mythological significance in India and elsewhere.

Trees as part of vegetation resources play an integral part in human and economic development of any nation, for the simple reason that they (trees) provide many basic needs for life such as medicine, food, fodder, timber, environmental protection and sustainability etc, based on this therefore, it could be concluded that trees touches almost all aspect of life. Trees of northern Nigeria, specifically, the semi-arid regions of the country were of great use especially to rural or peasants whose life solely depends on agricultural productions. This is because most of the rural economy in the region is agricultural; this has contributed a lot in the discovery of so many potential uses of the trees and their products.

Distribution - The baobab tree is found in areas of South Africa, Botswana, Namibia, Mozambique and other tropical African countries where suitable habitat occurs. It is restricted to hot, dry woodland on stony, well drained soils, in frost-free areas that receive low rainfall. In South Africa it is found only in the warm parts of the Limpopo Province.
Native - Angola, Botswana, Burkina Faso, Cameroon, Chad, Congo, Eritrea, Ethiopia, Gambia, Ghana, Kenya , Mali, Mozambique, Namibia, Niger, Nigeria, Senegal, Somalia, South Africa, Sudan, Tanzania, Togo, Zambia, Zimbabwe.
Exotic - Antigua and Barbuda, Bahamas, Barbados, Central African Republic, Cuba, Democratic Republic of Congo, Dominica, Dominican Republic, Egypt, Gabon, Grenada, Guadeloupe, Guyana, Haiti, India, Indonesia, Jamaica, Malaysia, Martinique, Mauritius, Montserrat, Netherlands Antilles, New Caledonia , Philippines, Puerto Rico, Sao Tome et Principe, St Kitts and Nevis, St Lucia, St Vincent and the Grenadines, Trinidad and Tobago, US, Virgin Islands (US).
Study Area - Dhar District - Dhar district is located at 22degree to 22degree 49 minute north latitude and 75degree 6 minute to75degree 42 minute east longitude, average altitude of Dhar district is 588 meters above the sea level.
Dhar city -The city lies between latitude 22degree 35 minute N & longitude 75degree 20 minute E with an average elevation of 559 meter an area of 8,153km square. It is located 53km west of Mahow 908 ft above the sea level.
Mandu - (Historical palace –City of joy) The hill fort of Mandu 22degree 2 minute N &75degree 26 minute E is situated about 35km south of Dhar .
Methodology - I took some photographs by Digital camera.

* Asst.Prof. (Botany) Govt. P.G. College, Dhar (M.P.) INDIA
** Prof. (Botany) Govt. P.G. College, Jaora (M.P.) INDIA

Plant Name - The name *Adansonia* was given to this tree to commemorate the French surgeon *Michel Adanson* (1727-1806); the species name *digitata* meaning hand-like, is in reference to the shape of the leaves.Baobab •Hindi: Gorakh imli •marathi:Gorakh chinch •Gujrati:Bukha •Telugu: Brahmaaamlika •Bengali :Gadhagachh •Tamil: Papparappuli •sanskrit:Sarpadandi**.**Cream of Tartar tree, monkey-bread tree, lemonade tree (Eng.); kremetartboom(Afr.); isimuku, umShimulu, isiMuhu (Zulu); ximuwu (Tsonga); mowana (Tswana); muvhuyu (Venda).

Local name in study area as mandu imli or khurasani imli.

Scientific name- *Adansonia digitata L*.

Classification -

Kingdom	:	Plantae-Plants
Subkingdom	:	Tracheobionta-Vascular plants
Superdivision	:	Spermatophyta-Seed plants
Division	:	Magnoliophyta-Flowering plants
Class	:	Magnoliopsida-Dicotyledons
Subclass	:	Dilleniidae
Order	:	Malvales
Family	:	Bombacaceae- Kapok-tree family
Genus	:	*Adansonia L. - Adansonia*
Species	:	*Adansonia digitata L.* - Baobab

(National Plant Database. 2004.)

plant description - Leaves on petioles as long as leaflets; leaflets generally 5or 7,lanceolate or obovate, acuminate, long attenuate at base ,smooth above and downy beneath. Peduncle axillary, tomentose, often very long, more than 12 inch. The structure of the fruit –bearing peduncle is curious, it has 5 distinct masses of ligneous tissue, each enclosing pith. Flowers pendulous . Calyx thick coriaceous, outside tomentose inside thickly covered with long silky hairs. Petals white ,obovate ,broadly unguiculate . Staminal tube thick ,longer than the free portion of filaments ;anthers long, linerar ,contorted. Ovary ovoid ,silky-tomentose , tapering into a long filiform style, which is bent downwards after flowering, The fruit is a large, egg-shaped capsule , covered with a yellowish brown hairs. The fruit consists of a hard, woody outer shell with a dry, powdery substance inside that covers the hard, black, kidney-shaped seeds. The off-white, powdery substance is apparently rich in ascorbic acid. It is white powdery substance which is soaked in water to provide a refreshing drink somewhat reminiscent of lemonade. The life Span of this tree is almost 5150 years.

Uses - The fruit, leaves, and flowers are very important in terms of their nutritional value. Both the fruit and leaves are high in vitamin C. The seeds and flowers are high in protein, and the kernel contains an edible oil. Fruits are commonly seen in markets throughout Mandu. Young sprouts are consumed as a vegetable but are considered to be a famine food.

Fruits - The pale powder that covers the black seeds inside the fruits tastes sharp and tangy, and is added to many sauces and drinks. This fruit powder is rich in Vitamin C and B2, and therefore offers health benefits, especially for pregnant women, children and the elderly, and is said to help fight fevers and settle the stomach.

Leaves - An excellent source of protein, minerals and vitamins A and C. They are eaten fresh and also dried, milled and sieved to make a green powder that is used to flavour drinks and sauces.

Seeds - Used to thicken soups, or fermented to use as a flavouring , or roasted to be eaten as snacks.

Anti-viral activity - *Adensonia digitata* ,leaves , fruitpulp and seeds have shown antiviral activity against influenza virus ,herpes simplex virus and respiratory syncytial virus (vimalnathan and Hudson,2009) and polio (anan et. al.- 2000). Chemical analyses have reported the presence of various potentially bioactive ingradients including triterpanoids, flavonoids and phenolic compounds(chadare.et.al.2009).

Apiculture - The baobab tree is a source of fine quality honey. Wild bees manage to perforate the soft wood and lodge their honey in the holes. In many parts of Africa, the hollow trunks are used for beekeeping (orwa ,et al,2009).The leaves and the seeds are used in the preparation of soup and stew respectively. The fruit pulp is use in the preparation of gruel, soft drinks and local brew.

Fibre - Bark fibres are used for making ropes, baskets, snares, cloth, strings for musical instruments, mats, and hats. The root bark also makes good rope. When the sap flows a section of bark can be unrolled, usually without hurting the tree**.**

Asthematic problem - The pulp powder of this plant is taken with dry *ficus carica* in relief of Asthama disease.

The pulp of this powder is used in cure the skin and skin diseases.

Discussion - This plant is very beautiful. It is also known as Glory of mandu. It has economical ,social and nutritional value. The tree already faces a crisis of survival and is listed as an endangered species in the Red Data Book . Day by day, the interference by the Human beings as the formation of new crop field , grazing of cattles in the natural areas, this plant has to bear many natural problem. Due to this reason it is losing its value. So we need to conserve it.

References :-

1. RoyG.P.,Sukla B.K. and Datt Bhasker(1992) Flora of Madhya Pradesh -Ashish publishing house New Delhi
2. Brandis ,D first published(1874), reprinted B.S.M.P.S. (1972) the forest flora of North West And Central India Dehradun
3. Panda H.hand book uses.books.google.co.in/books?id= VRKmAwAAQBAJ&pg= PT24&lpg= PT24&dq=adansonia+uses&s
4. Patil D.R.(2004)mandu published by archiological survey of India new Delhi
5. dhanvantari krit bhartiya jari butia D.P.B.publication Delhi
6. http://www.fao.org/docrep/x5327e/x5327e0g.htm
7. http://www.ntbg.org/plants/plant_details.php?plantid =131
8. http://www.feedipedia.org/node/525
9. http://www.theplantlist.org/browse/A/Malvaceae/Adansonia/

10. http://cdn2.hubspot.net/hub/129891/file-17172711- pdf/docs/kabore_et_al,_medicine_and_nutrition.pdf
11. http://indiasendangered.com/adansonia-digitata-a-heritage-tree/
12. http://www.tm.ukzn.ac.za/content/medicinal-uses-adansonia-digitata-l-endangered-tree-species
13. http://www.prota4u.info/protav8. asp?g =pe&p= Adansonia+digitata+L.
14. http://www.savap.org.pk/journals/ARInt./Vol.4% 281 % 29/2013%284.1-52%29.pdf
15. http://www.flowersofindia.net/catalog/slides/Bao bab. html
16. http://www.edenproject.com/visit-us/whats-here/plant-a-z/baobab
17. www.google.in
18. http://en.wikipedia.org/wiki/Adansonia_digitata
19. Parihar P.(translator)Mandu the city of joy B.R. Publishing corporation new Delhi
20. http://www.mapsofindia.com/maps/madhyapradesh/districts/dhar.htm

flowering plant *Adansonia digitata*

flower *Adansonia digitata*

fruit *Adansonia digitata*

fruit *Adansonia digitata*

fruit *Adansonia digitata*

Shell fruit *Adansonia digitata*

Seed *Adansonia digitata*

A Comparative Study Of Mother- Care Practices During Pregnancy Period Of Tribal And Non- Tribal Farm-Women In Chhattisgarh

Jyoti Bhatt * Dr. Sandhya Verma ** Dr. J. C. Ajawani ***

Abstract - The author intended to study difference between tribal and non-tribal farm-women with special reference to mother-care practices during pregnancy period. It was hypothesized that there would be genuine difference in this regard.

The sample was comprised of 150 tribal and 150 non-tribal farm- women of Chhattisgarh. CRPQ was administered to seek information in respect of mother-care practices during pregnancy period.

The findings confirmed that non- tribal farm-women were better at mother-care practices during pregnancy period as compared to tribal farm- women. It is also suggested that there is need to improve mother-care practice among tribal women.

Key Words - Tribal and Non- Tribal Farm- Women, Pregnancy Period, Mother-Care Practice.

Introduction - Care of a child starts when the child is conceived. It is obvious that care of child during pregnancy is solely depended on how the mother is nourished. Therefore, care of a mother during pregnancy is of utmost importance than the care of a child after birth. Baby's growth and development in the womb depends upon some factors like nourishment, immunization during pregnancy, institutional delivery, eating practices during pregnancy, self-care, cleanliness and hygiene, regular health checkup of mother as well as child. Literature reveals that over 75 percent of pregnant women in India are anaemic and anaemia remains to be a major causal factor for maternal morbidity and low birth weight of child.

Several studies about the mother-care during pregnancy have been done by different researchers. Kalaivani (2009) studied "Prevalence and consequences of anaemia in pregnancy" and found that prevalence of anemia in India is among the highest in the world. Even in higher income educated mass of population about 50 percent of the children, adolescent girl and pregnant women were found to be anemic. Anemia in pregnancy was associated with adverse consequences both for the mother and fetus. Similarly, Tinker (1997) concluded that making motherhood safer was critical to saving new born. Research findings revealed that a significant number of still births and neonatal deaths could be prevented if all women were adequately nourished and received good quality care during pregnancy. Thaker et al. (2013) compared registered and unregistered pregnant women at Tertiary Care Hospital. Severe anaemia was found to be significantly higher in unregistered women as compared to registered women. This was further confirmed and supported by Li et al. (1996) and Allen (2000). Chauhan et al. (2012) in his study observed that among 120 deceased tribal women of Bastar (chhattisgarh) highest maternal mortality was 54.166 percent noted in Primigravida and the lowest was 0.833 percent in Greatgrand Multigravida.

Statement Of Problem - The only problem of the research was whether tribal and non- tribal farm-women differed in respect of mother care practices during pregnancy.

It was hypothesized that there would exist true difference between tribal and non-tribal farm women in regard to mother-care practice during pregnancy.

Methodology - Sample- The final sample was comprised of incidentally selected 150 tribal and 150 non-tribal farm women having child up to age of 9 years.

Tools- The Child Rearing Practices Questionnaire (CRPQ) developed and standardized by Verma *et al.* (2012) was used for the purpose.

Procedure- Initially two districts i.e., Bastar (Tribal) and Raipur (Non- tribal) were selected randomly from Chhattisgarh state. Secondly, two blocks i.e., Bastanar and Bakaband from tribal area and two blocks i. e., Arang and Dharsiwa from non-tribal were selected on random basis. Thirdly, 5 villages were selected randomly from each block from which total 15 women per village were selected incidentally. In this way 150 tribal and 150 non- tribal women were selected and administered CRPQ.

Results And Discussion - The author intended to study difference between tribal and non-tribal farm women in respect of mother-care practices during pregnancy period. It was hypothesized that there would be genuine difference in this regard. On the basis of scores on CRPQ, a median (mdn=13)

* Technical Assistant, Directorate of Extension Services, IGKV, Raipur (C.G.) INDIA
** HOD (Home Science) Govt. Arts and commerce Girl's College, Devendra Nagar, Raipur (C.G.) INDIA
*** HOD (Psychology) Govt. Arts and commerce Girl's College, Devendra Nagar, Raipur (C.G.) INDIA

was computed to classify farm-women into two mother-care practice group i.e., good and poor.

Table # 1: No. of Tribal and Non-tribal Farm-Women Adopting Good and Poor Mother-care Practices during Pregnancy

Group	Non- tribal		Tribal		Total	X^2
	No.	Percent	No.	Percent		
Good	115	76.66	85	56.66	200	13.50
Poor	35	23.34	65	43.34	100	
Total	150	100	150	100	300	P< .01

A perusal of Table 1 clarifies that 76.66 % of non- tribal farm- women adopted good mother- care practices which was quite higher than tribal farm- women (56.66%). It too has been observed that more (43.34 %) tribal farm- women belonged to poor mother-care practice group as compared to non-tribal farm-women (23.34 %). The obtained (X^2 = 13.50) is significant at .01 level of significance for 1 df providing empirical ground to conclude that there was genuinely better mother-care during pregnancy among non-tribal farm-women than tribal farm- women.

The non-tribal farm-women are more exposed to knowledge resources for their care during pregnancy. These resources include health centers, Anganbadi Kendra and media. These rich exposures prone these non-tribal farm-women to adopt good mother-care practices during pregnancy. Their informal education due to availability of NGOs and Govt. structures helps non-tribal farm-women to be sensitive towards there care during pregnancy by seeking more help of from health professionals.

In contrast, though tribal farm-women may have access for these facilities but it seems that their traditional practices may be restricting them to avail these facilities, and thus they are unable to adopt good mother-care practices during pregnancy.

The finding of the present research strongly suggest that there is need to carry out intervention programmes to sensitize tribal farm-women towards healthy mother-care practices during pregnancy, so that they shall be able to adopt good mother-care practices during pregnancy leading to better health of the child and the mother too.

References :-

1. Kalaivani, K. (2009). Prevalence and consequences of anemia in pregnancy. **Indian Journal of Medical Researches, 130**, 627-633.
2. Tinker, A. (1997). Safe motherhood is a vital social and economic investment. **Paper presentation at Safe Motherhood Technical Consultation in Sri Lanka,** Oct. 18-23.
3. Thaker, R., Deliwala K., Jadhav, M. M. (2013). Retrospective comparative study of obstetric complications and maternal mortality in registered and unregistered women at Tertiary Care Hospital. **NHL Journal of Medical Science**, **2 (1)**, 28-35.
4. Allen L. H., (2000). Anemia and iron deficiency: Effect on pregnancy outcomes. **American Journal of Clinical Nutrition, 71**(**5 Suppl.**), 1280-84.
5. Li, X. F., Fortney, J. A., Kotelchuck, M., & Glover, L.H. (1996). The postpartum period: The key to maternal mortality**. International Journal of Gynaecol & Obstet , 54(1),** 1-10.
6. Chauhan, P., Lagoo J. and Chauhan V.K.S. (2012). Maternal mortality among tribal women as per gravidity at a tertiary level of care in Baster, Chhattisgarh, India. **International Journal of Biological and Medical Research, 3 (1),** 1377-1384.

****

Family Resource : Concept & Management

Dr. Rashmi Verma *

Introduction – Resource are an important part of our management. Everyone use their resource. The manner in which resource are allocated and used means the differences between "Coping" and Managing. The management of resource involves knowing the quantitative and qualitative aspects the classification of resource. The possible uses and the aspects of allocation. Management is an open, dynamic subsystem of the family,good management encourages the effective use of the individuals or family resource to meet the systems goals, although specific situations are often the focus of management. The interrelationship of situation are recognized and considered in deciding on courses of action.

Definition – Resource is a widely used term which is seldom defined precisely. Maloch&Decon (1966) define "Resource as means which are available and recognized for their potential in meeting demands". They further define means as those things which have "want-satisfying power" and which are instrumental in the reaching of desired ends.

Classification of resource –why are resource classified? what function does .classification serve in management? Resource can be classified according to their source of origin or their use within the spheres of interaction. Through the examination theseclassification you are better able to identify your resource, the availability of each, and probable ways each could be allocated. The study of resource classification in reality, is an enabler for management. According to Deacon & Firebaugh there are two types of resources human and nonhuman (material),Gross, Crandall & Knoll use two classifications human and nonhuman and Economic and noneconomic.

Human / Non-human Resources –this classification stressed the nature of the resource themselves, human resource include the abilities and characteristics of individual along with other resources (such as time)which cannot be utilized independently of individual. Non-human family resources are those which are enteral to individuals but which are possessed, utilized or controlled by the family.

Economic / Non-economic Resources – in the classification proposed by Gross , Crandall & Knoll resource are separated according to their utilization , economic resources having the characteristics of being scarce transferable measurable and usable for production purposes. Noneconomic resources are defined as those which are involved in services, production, human capital, tangible or material goods.

Use of Resources – Throughout the management process resources are used as enables. In the planning component you allocated resources as you established the sequencing. You also allocated resources for various action during implementation resource are used. Still other resources are called upon for evaluative feedback. In each instance the resource are human or material (nonhuman), economic or noneconomic. The success of the management process depends upon your recognition allocation and use of resource. Resource allocation depends upon determining how resource are used and existing limitation of each. There are times when either substituting one to serve another or using one to serve a specific purpose can enhance another one.

Management of Resources – As an individual you make decisions concerning your resources if you make the decision to continuously consume them they are used as the need arises. If this occurs undoubtedly you may encounter a situation where a resource in needed but not available. In this case your management has not been adequate. Managing your resources means more than just using them, it means you take time to assess the qualitative and quantitative aspects of each. It also means you analyze the best use to which each should be put to bring about the highest degree of satisfaction be achieved by transferring, consuming, producing, protecting, saving-investing or enhancing the resource. As you begin to allocated resources possible uses of each are determined managing resources encompasses both their allocation and use. It means taking the time to look ahead to future demands as well as the present ones. It means making sure that if and when resources are needed they are available and in the quantity and quality which will bring satisfaction.

Management of resource involves ascertaining the best possible use of each resource and then allocating the necessary quantities to accomplish the task. Resolve the situation or to meet the demands being placed upon you. In order to do this you need to aware of your resource possible uses and existing as well as future demands.Everyone has

* Asst. Professor (Home Science) Govt. Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA

a unlimited wants and limited means to achieve them. Resource allocation and use involve setting priorities for your wants, then allocating and using resources to attain those having high priority. Management of your resource will help you to achieve a grater number of these want. As you attain more your wants you also achieve a higher degree of satisfaction.

Guidelines for the use of Resource – An overall objective in the use of resource is to obtain the greatest satisfaction from their use, this is complicated by the fact that they must be used to achieve many different goals. The following guidelines for action all of which require conscious decision making, may be of help they draw on but are not identical with Hoyt's (1938) well – known ways of maximizing satisfaction some of the guides are based on concepts from economics , other are from physics, while still other are more philosophical in nature.

1. Increases total supply of resource.
2. Convert or create resource.
3. Investigate alternate uses.
4. Consider amount of resource to invest.
5. Balance choices among resource.

References :-

1. Irma H. Gross, Elizabeth W. Crandall & Marjorie M.Knoll (1980) Management For Modern Living .
2. Ruth E. Decon & Francille M. Firebaugh (1985) Home Management.
3. Bettye B. Swanson (1986) Introduction To Home Management.

****

छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर का तुलनात्मक अध्ययन (ग्वालियर शहर के संदर्भ में)

डॉ. पूनम तिवारी* डॉ. मंजू दुबे **

प्रस्तावना – समाज के अधिकांश लोग निरोगी काया को ही स्वस्थ्य काया मानते हैं किंतु किसी व्यक्ति को स्वस्थ्य तभी माना जा सकता है जो निरोग होने के साथ-साथ प्रसन्न एवं स्फूर्तिवान मिलनसार एवं सामाजिक क्रिया कलापों में तल्लीन रहता हो, प्रत्येक कार्य को करने में उसकी रूचि हो। अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य संघ के अनुसार 'स्वास्थ्य रोगों तथा शारीरिक निर्बलताओं की अनुपस्थिति मात्र नहीं बल्कि शारीरिक मानसिक तथा सामाजिक हित की सम्पूर्ण अवस्था है'

इस प्रकार 'स्वास्थ्य मानव जीवन का शारीरिक मनोवैज्ञानिक सामाजिक व मानसिक निरोगता व सामान्यता की स्थिति है'। स्वस्थ्य किशोरियाँ स्वस्थ्य परिवार की आधार शिला हैं। किशोरियाँ उच्च शिक्षा ग्रहण करने हेतु दूर दराज के इलाकों से ग्वालियर शहर के छात्रावासों में आकार निवास करती हैं। किशोरियों के प्रवासी होने पर उनका खानपान क्रियाकलाप, स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतें आदि प्रभावित होती हैं जो उनके स्वास्थ्य को भी प्रभावित करती हैं। किशोरियों का प्रवासी होना उनके स्वास्थ्य स्तर को किस प्रकार प्रभावित करता है। जानना जरूरी है अत: शोधार्थी ने अपने शोध का विषय 'छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर का तुलानत्मक अध्ययन' चुना है।

उद्देश्य –

1 ग्वालियर शहर की छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों का स्वास्थ्य स्तर ज्ञात करना।

2 छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पना – शोध अध्ययन हेतु निम्नानुसार शून्य परिकल्पना का निर्माण किया 'छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर में कोई अंतर नहीं पाया जायेगा'

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन हेतु 13 से 19 वर्ष की 150 छात्रावासी एवं 150 गैर छात्रावासी कुल 300 किशोरियों का चयन दैव निदर्शन विधि से किया गया। किशोरियों का स्वास्थ्य स्तर ज्ञात करने हेतु साक्षात्कार, अनुसूची एवं लक्षण परीक्षण विधियों का प्रयोग किया गया।

किशोरियों का स्वास्थ्य स्तर ज्ञात करने हेतु उनके मुख, पाचन, निद्रा, मासपेशियों का स्तर उनकी शारीरिक आकृति उनमें पोषक तत्वों की कमी एवं अधिकता से उत्पन्न रोग एवं अन्य स्वास्थ्य समस्याओं का अध्ययन किया। प्राप्त तथ्यों को वर्गीकृत एवं विश्लेषित किया गया। परिकल्पना की सार्थकता हेतु मध्यमान मानक विचलन एवं टी परीक्षण का उपयोग किया गया (तालिका क्रमांक 1 से 8 तक)

तालिका क्रमांक 1
किशोरियों के भूख की स्थिति

भूख	किशोरियाँ				कुल योग	
	छात्रावासी		गैर छात्रावासी			
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
सामान्य	109	36.33	118	39.33	227	75.66
भूख कम लगना	30	10.0	20	6.67	50	16.67
भूख अधिक लगना	10	3.33	8	2.67	18	6.0
भूख नहीं लगना	1	0.34	4	1.33	5	1.67
योग	**150**	**50**	**150**	**50**	**300**	**100**

तालिका क्रमांक 1 दर्शाती है कि 109(36.33:) छात्रावासी एवं 118(39.33:) गैर छात्रावासी कुल 227(75.66:) किशोरियों की भूख सामान्य है। 30(10:) छात्रावासी एवं 20(6.67:) गैर छात्रावासी कुल 50(16.67:) किशोरियों को भूख कम लगती है। 10(3.33:) छात्रावासी 8(2.67:) गैर छात्रावासी कुल 18(6:) किशोरियों को भूख सामान्य से अधिक लगती है। 1(0.34:) छात्रावासी एवं 4(1.33:) गैर छात्रावासी कुल 5(1.67:) किशोरियों को भूख नहीं लगने की शिकायत है। (ग्राफ क्रमांक 1)

ग्राफ क्रमांक 1 – किशोरियों के भूख की स्थिति

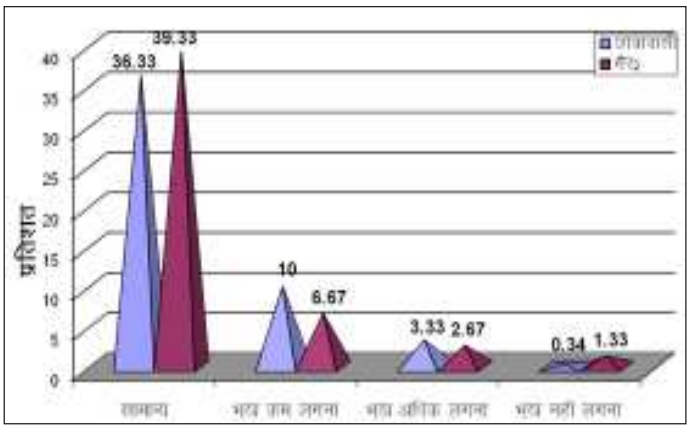

* अतिथि विद्वान, शासकीय कन्या महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र) भारत
* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृहविज्ञान), शासकीय क. रा. कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र) भारत

तालिका क्रमांक 2
किशोरियों के पाचन की स्थिति

पाचन	किशोरियाँ				कुल योग	
	छात्रावासी		गैर छात्रावासी			
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
सामान्य	132	44.0	140	46.67	272	90.67
कब्ज	14	4.67	8	2.66	22	7.33
दस्त	4	1.33	2	0.67	6	2.0
योग	**150**	**50**	**150**	**50**	**300**	**100**

तालिका क्रमांक 2 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 132(44:) छात्रावासी एवं 140(46.67:) गैर छात्रावासी कुल 272(90.67:) किशोरियों के पाचन की स्थिति सामान्य है। 14(4.67:) छात्रावासी 8(2.66:) गैर छात्रावासी कुल 22(7.33:) किशोरियाँ कब्ज से पीड़ित हैं। 4(1.33:) छात्रावासी 2(0.67:) गैर छात्रावासी कुल 6(2:) किशोरियों में दस्त की शिकायत पाई गई। (ग्राफ क्रमांक 2)

ग्राफ क्रमांक 2 – किशोरियों के पाचन की स्थिति

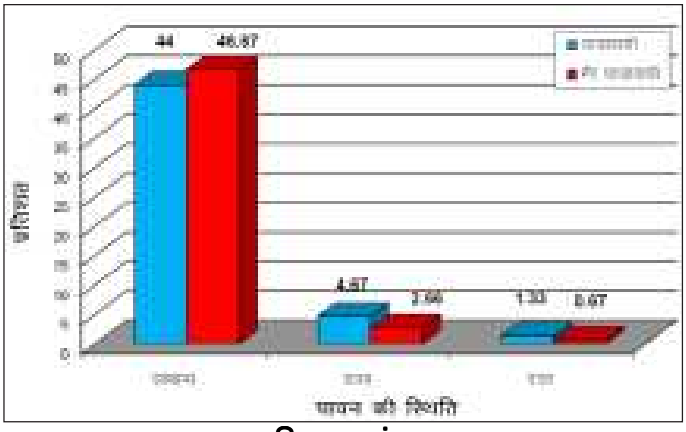

तालिका क्रमांक 3
किशोरियों के निद्रा की स्थिति

निद्रा	किशोरियाँ				कुल योग	
	छात्रावासी		गैर छात्रावासी			
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
अच्छी व गहरी	141	47.0	149	49.67	290	96.67
नहीं आना	2	0.66	0	0	2	0.66
कम आना	7	2.33	01	0.33	8	2.67
योग	**150**	**50**	**150**	**50**	**300**	**100**

तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि 141(47:) छात्रावासी एवं 149(49.67:) गैर छात्रावासी कुल 290(96.67:) किशोरियों को नींद की समस्या नहीं है वे गहरी नींद में सोती हैं। शेष किशोरियों को नींद संबंधी समस्या है जिसमें 2(0.66:) छात्रावासी किशोरियों को नींद नहीं आती है जबकि गैर छात्रावासी किशोरियों में नींद की समस्या नहीं है। 7(2.33:) छात्रावासी तथा 01(0.33:) गैर छात्रावासी कुल 8(2.67:) किशोरियों को नींद कम आने की शिकायत है। (ग्राफ क्रमांक 3)

ग्राफ क्रमांक 3 – किशोरियों के निद्रा की स्थिति

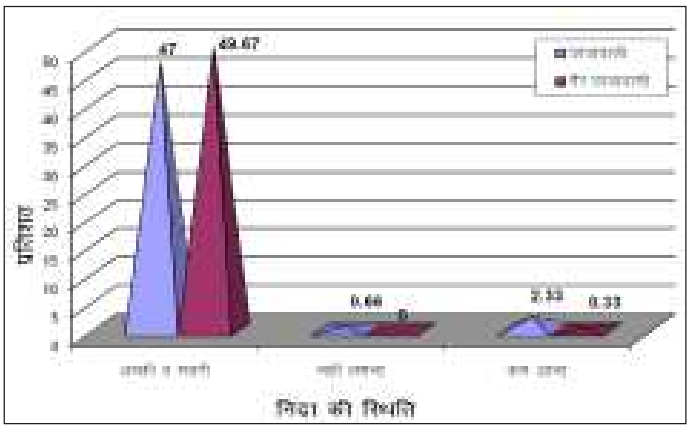

तालिका क्रमांक 4
किशोरियों की मांसपेशियों का स्तर

मांसपेशियों स्तर	किशोरियाँ				कुल योग	
	छात्रावासी		गैर छात्रावासी			
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
क्षति ग्रस्त	3	1.0	1	0.33	4	1.33
सामान्य	147	49	149	49.67	296	98.67
योग	**150**	**50**	**150**	**50**	**300**	**100**

तालिका क्रमांक 4 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 3(1.0:) छात्रावासी तथा 1(0.33:) गैर छात्रावासी कुल 4(1.33:) किशोरियों की मांसपेशियाँ क्षयग्रस्त हैं तथा 147(49:) छात्रावासी तथा 149(49.67:) गैर छात्रावासी कुल 296(98.67:) किशोरियों की मांसपेशियों का स्तर सामान्य पाया गया। (ग्राफ क्रमांक 4)

ग्राफ क्रमांक 4 – किशोरियों की मांसपेशियों का स्तर

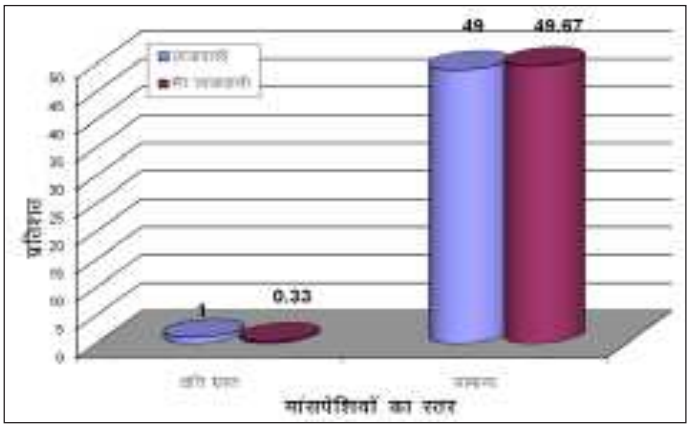

तालिका क्रमांक 5
किशोरियों की आकृति का स्तर (खड़ी स्थिति में)

आकृति	किशोरियाँ				कुल योग	
	छात्रावासी		गैर छात्रावासी			
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
हाथ पैर सीधे पेट अंदर	112	37.33	125	41.67	237	79
छाती बाहर	–	–	–	–	–	–
कंधे झुके हुए	38	12.67	25	8.33	63	21
योग	**150**	**50**	**150**	**50**	**300**	**100**

तालिका क्रमांक 5 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 112(37.33:) छात्रावासी एवं 125(41.67:) गैर छात्रावासी कुल 237(79:) किशोरियों के खड़ी स्थिति में हाथ पैर सीधे व पेट अंदर पाया गया जो कि सुडौल आकृति का परिचायक है। 38(12.67:) छात्रावासी एवं 25(8.33:) गैर छात्रावासी कुल 63(21:) किशोरियों के कंधे झुके हुए पाये गये जो कि विकृत आकृति का परिचायक है। किशोरियों की छाती की स्थिति समस्त किशेरियों में सामान्य पाई गई। छाती संबंधी विकृति का अभाव पाया गया। (ग्राफ क्रमांक 5)

ग्राफ क्रमांक 5 – किशोरियों की आकृति का स्तर (खड़ी स्थिति में)

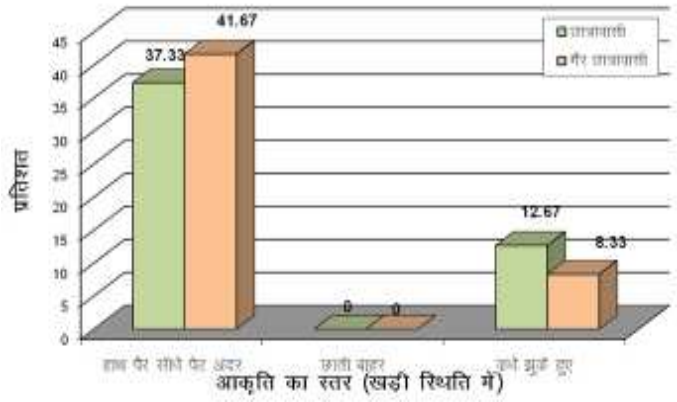

तालिका क्रमांक 6
पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न रोग

रोग	किशोरियाँ				कुल योग	
	छात्रावासी		गैर छात्रावासी			
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
जिरोसिस कंजक्टिवा	20	6.67	15	5.00	35	11.67
विटॉट स्पॉट	10	3.33	9	3.00	19	6.33
जिरोसिस कार्निया	47	15.67	17	5.67	64	21.34
किरेटोगले-शिया	–	–	–	–	–	–
बेरी-बेरी	–	–	–	–	–	–
पेलाग्रा	–	–	–	–	–	–
चिलोसिस	28	9.33	24	8.00	52	17.33
एंग्यूलर स्टोमेटा	38	12.67	28	9.33	66	22.00
स्कर्वी	–	–	–	–	–	–
आस्टियो-मलेशिया	–	–	–	–	–	–
आस्टियो पोरोसिस	–	–	–	–	–	–
दंत क्षय	28	9.33	13	4.33	41	13.66
डर्मेटाइटिस	2	0.67	5	1.66	7	2.33
घेंघा	–	–	–	–	–	–
एनीमिया	141	47.0	52	17.33	193	64.33
कम भारिता	8	2.67	5	1.66	13	4.33

तालिका क्रमांक 6 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 20(6.67:) छात्रावासी 15(5:) गैर छात्रावासी कुल 35(11.67:) किशोरियों की आँखों में में जिरोसिस कंजक्टाइवा पाया गया। 10(3.33:) छात्रावासी 9(3.00:) गैर छात्रावासी कुल 19(6.33:) किशोरियों की आँखों में बिटॉट स्पॉट पाए गए। 47(15.67:) छात्रावासी 17(5.67:) गैर छात्रावासी कुल 64(21.34:) किशोरियों की आंखों में जिरोसिस कार्निया पाया गया। 28(9.33:) छात्रावासी 24(8.00:) गैर छात्रावासी कुल 52(17.33:) किशोरियों में चिलोसिस (छिले हुए होंठ) पाया गया। 38(12.67:) छात्रावासी 28(9.33:) गैर छात्रावासी कुल 66(22:) किशोरियों में एंग्यूलर स्टोमेटा (होंठों के किनारों में दरारें) पाई गईं। 28(9.33:) छात्रावासी 13(4.33:) गैर छात्रावासी कुल 41(13.66:) किशोरियों के दाँतों में दंत क्षय पाया गया। 2(0.67:) छात्रावासी 5(1.66:) गैर छात्रावासी कुल 7(2.33:) किशोरियों की त्वचा में डर्मेटाइटिस पाया गया। 141(47:) छात्रावासी 52(17.33:) गैर छात्रावासी कुल 193(64.33:) किशोरियों में रक्तहीनता (एनीमिया) पायी गयी। किरेटोमलेरिया, बेरी-बेरी पेलाग्रा, स्कर्वी, आस्टियोमलेशिया, आस्टियोपोरोसिस, घेंघा आदि रोग से पीड़ित किशोरियों की संख्या निरंक रही। (ग्राफ क्रमांक 6)

ग्राफ क्रमांक 6 – पोषक तत्वों की कमी से उत्पन्न रोग

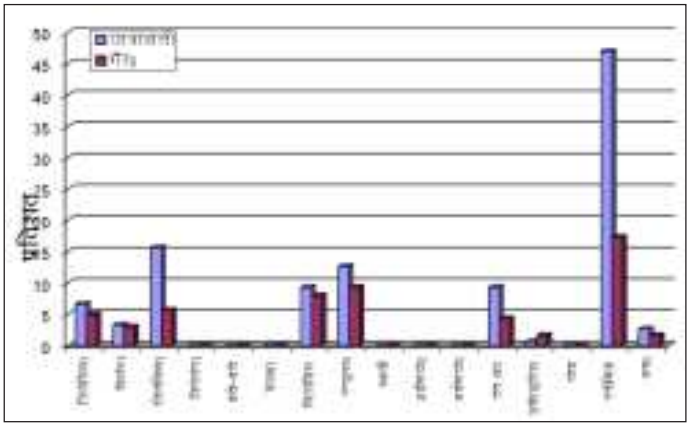

तालिका क्रमांक 7
किशोरियों में पोषक तत्वों की अधिकता से उत्पन्न रोग

रोग	किशोरियाँ				कुल योग	
	छात्रावासी		गैर छात्रावासी			
	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
अधिक भारिता	20	6.67	10	3.33	30	10.0

मोटापा	10	3.33	8	2.66	18	6.0
एथरोस्क-लोरोसिस	-	-	-	-	-	-

तालिका क्रमांक 7 से स्पष्ट होता है कि 20(6.67:) छात्रावासी एवं 10(3.33:) गैर छात्रावासी कुल 30(10:) किशोरियों में अधिकभारिता पाई गई। 10(3.33:) छात्रावासी 8(2.66:) गैर छात्रावासी कुल 18(6:) किशोरियाँ मोटापे से पीड़ित पाई गईं। एथरोस्कलोरोसिस किसी छात्रा में नहीं पाई गई। (ग्राफ क्रमांक 28)

ग्राफ क्रमांक 7 – किशोरियों में पोषक तत्वों की अधिकता से उत्पन्न रोग

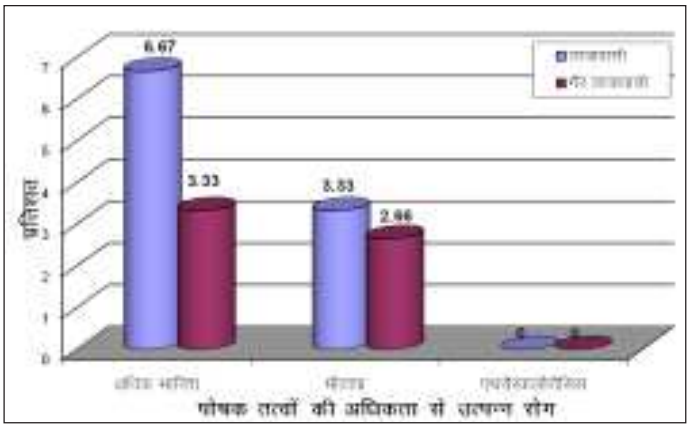

तालिका क्रमांक 8 (देखे)

तालिका क्रमांक 8 से स्पष्ट है कि किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर का टी-परीक्षण का परिगणित मूल्य 298 स्वतंत्र्यांश पर 22.821 है जो 0.05 स्तर पर सार्थक है अत: सप्तम शून्य परिकल्पना 'छात्रावासी व गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा, अस्वीकृत होती है।

इस प्रकार छात्रावासी व गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर में सार्थक अंतर पाया गया।

ग्राफ क्रमांक 8 –किशोरियों का आवास के आधार पर स्वास्थ्य स्तर का माध्य, मानक विचलन एवं टी. परीक्षण (देखे)

निष्कर्ष – छात्रावासी एवं गैर छात्रावासी किशोरियों के स्वास्थ्य स्तर में सार्थक अंतर पाया गया। गैर छात्रावासी किशोरियों का स्वास्थ्य स्तर छात्रावासी किशोरियों की तुलना में उच्च पाया गया।

सुझाव –

1 किशोरियों को नियमित पोष्टिक एवं संतुलित आहार लेना चाहिये।
2 उन्हें थकान की स्थिति में विश्राम एवं रात्रि में 7 से 8 घंटे की नींद लेना चाहिये।
3 प्रतिदिन व्यायाम अथवा सैर करना चाहिये।
4 रोग ग्रसित किशोरियों को तुरन्त चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. शर्मा, सुमन, 'स्वास्थ्य समस्या और समाधान प्रथम संस्करण 2007, विश्वभारती पब्लिकेशन नई दिल्ली।
2. त्रिवेदी आर.एन., शुल्क डी.पी., रिचर्स मेथालॉजी कॉलेज बुक डिपो, 2008।
3. नारायण सुधा आहार विज्ञान, 1982।
4. मुकर्जी रविन्द्र नाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन दिल्ली 2010।
5. श्रीवास्तव डी.एन., वर्मा प्रीति, मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
6. कुलकर्णी ज्योति सामान्य एवं उपचरात्मक पोषण।
7. सिंह, डॉ. अनीता, 'उपचारात्मक पोषण, स्टार पब्लिकेशन, आगरा।
8. मिश्रा उषा एवं अग्रवाल अल्का, आहार एवं पोषण विज्ञान, नवीन संस्करण साहित्य प्रकाशन।

तालिका क्रमांक 8 किशोरियों का आवास के आधार पर स्वास्थ्य स्तर का माध्य, मानक विचलन एवं टी. परीक्षण

आवासीय स्तर	माध्य	मानक विचलन	स्वातंत्र्यांश	किशोरियों की संख्या	टी.-परीक्षण का मूल्य	रिमार्क
छात्रावासी किशोरियाँ	28.12	2.114	298	150	22.821	P<0.05
गैर छात्रावासी किशोरियाँ	34.35	2.588	298	150	22.821	P<0.05

ग्राफ क्रमांक 8 –किशोरियों का आवास के आधार पर स्वास्थ्य स्तर का माध्य, मानक विचलन एवं टी. परीक्षण

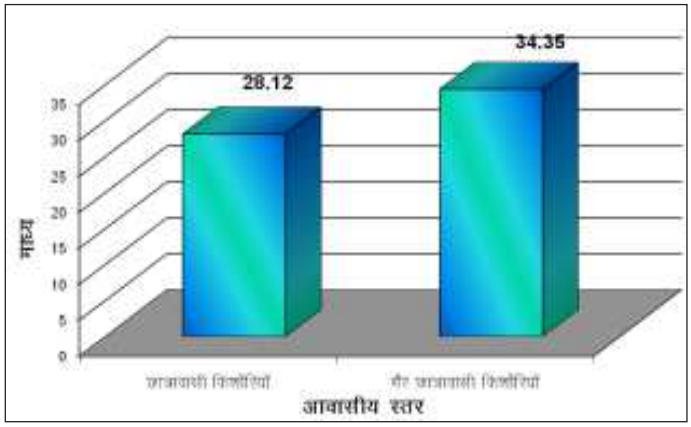

****

कानपुर शहर के मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों के कुपोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन

पूनम रानी * डॉ. मंजू दुबे **

प्रस्तावना – जनसंख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश भारत वर्ष का सबसे बड़ा प्रदेश है जिसकी आबादी 2001 की जनगणना के अनुसार 16.62 करोड़ है। विश्व का हर छठवां व्यक्ति भारत में निवास करता है तथा भारत में निवास करने वाला हर छठवां व्यक्ति उत्तर प्रदेश का निवासी है। प्रदेश में विकास के संकेतकों के अनुसार 40 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी की रेखा से नीचे है तथा कुपोषण का शिकार है। विशेषकर 6–11 आयु वर्ग के बच्चों पर कुपोषण का गंभीर प्रभाव पड़ता है।1 कुपोषण का अर्थ अव्यवस्थित भोजन से है, जो आवश्यकता से अधिक या कम पोषक तत्व लेने के कारण होता है।2 कुपोषण के अंतर्गत अपर्याप्त पोषण और अत्यधिक पोषण की स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं।

अपर्याप्त पोषण (Undernutrition) – यह एक प्रकार का कुपोषण है। अपोषण का अर्थ है अपर्याप्त पोषण अर्थात जो पोषण शरीर की आयु, आवश्यकता के अनुरूप न हो उसमें किसी एक अथवा अधिक तत्वों की कमी पायी जावे परिणाम स्वरूप पोषण हीनता जनित रोग देखे जाते हैं।

अत्यधिक पोषण (Overnutrition) – यह भी एक प्रकार का कुपोषण है जिसमें शरीर की आवश्यकता से अधिक मात्रा में भोजन ग्रहण किया जाता है और परिणामस्वरूप मोटापा व उससे संबंधित अन्य बीमारियाँ देखी जाती है।[3]

कुपोषण के कारणों में अपर्याप्त भोजन, असंतुलित भोजन, आयु, शारीरिक लिंग, जलवायु, शारीरिक क्रियाशीलता आदि के अनुरूप भोजन ग्रहण न करना, खानपान की अनुचित आदतें, गरीबी, अज्ञानता, अस्वास्थ्यकर वातावरण, नींद की कमी, गंभीर बीमारी से ग्रसित होना आदि कारण हो सकते हैं। बच्चों के स्वास्थ्य स्तर को उन्नत बनाने के लिये उनमें कुपोषण स्तर ज्ञात करना आवश्यक है। प्रस्तुत शोध अध्ययन में कानपुर शहर के विद्यार्थियों में कुपोषण स्तर ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। अत: शोध का विषय कानपुर शहर के मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों के कुपोषण स्तर का तुलनात्मक अध्ययन चुना गया।

उद्देश्य – कानपुर शहर के मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों में कुपोषण का स्तर का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन हेतु कानपुर शहर के मध्यान्ह भोजन व्यवस्था संचालित एवं असंचालित विद्यालयों से क्रमश: 150, 150 कुल 300 विद्यार्थियों का दैव निदर्शन विधि से चयन किया गया। विद्यार्थियों में कुपोषण स्तर ज्ञात करने हेतु मानवमिति परीक्षण (Antropometric measurement) का उपयोग किया गया। (तालिका क्रमांक 1–3)

तालिका क्र. – 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 1 में विद्यालयों के मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों का ऊँचाई के अनुसार वर्गीकरण किया गया है। तालिका दर्शाती है कि विद्यार्थियों की न्यूनतम ऊँचाई लाभान्वित विद्यार्थयों की 111–114 सेमी के मध्य तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों की 99–102 सेमी के मध्य है तथा लाभान्वित विद्यार्थियों एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों की अधिकतम ऊँचाई 139–142 सेमी है। सर्वाधिक विद्यार्थी लाभान्वित श्रेणी के 43(14.33%) तथा अलाभान्वित श्रेणी के 51(17.00%) कुल 94(31.33%) की ऊँचाई 127–130 के मध्य है। (ग्राफ क्र.1)

ग्राफ क्र. 1 – (अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्र. – 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 2 में मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों का उनके वजन के अनुसार वर्गीकरण किया गया है। तालिका दर्शाती है कि विद्यार्थियों का न्यूनतम वजन 16–19 किलो. है जिसमें लाभान्वित विद्यार्थी की संख्या 21(7.0%) तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों की संख्या 49(16.3%) है। विद्यार्थियों का अधिकतम वजन 36–39 किलो. है जिसके अन्तर्गत लाभान्वित विद्यार्थियों की संख्या 3(0.99%) तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों की संख्या 5(1.66%) है। सर्वाधिक विद्यार्थी 87(28.99%) 20–23 किलो वजन के पाये गये। (ग्राफ क्र. 2)

ग्राफ क्र. 2 – (अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक – 3 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 3 के अवलोकन से ज्ञात होता है कि अधिकांष विद्यार्थी 63.66% सामान्य अवस्था के पाये गये। 23.32% विद्यार्थी प्रथम डिग्री कुपोषण ग्रस्त तथा 11.98% द्वितीय डिग्री कुपोषण ग्रस्त पाये गये। तृतीय डिग्री कुपोषण ग्रस्त विद्यार्थियों का प्रतिशत बहुत कम अर्थात 0.99% पाया गया। चतुर्थ डिग्री के कुपोषण का कोई भी विद्यार्थी नहीं पाया गया। सामान्य अवस्था के विद्यार्थियों में मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित विद्यार्थियों का प्रतिशत 29.66% तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों का प्रतिशत 34% पाया गया अर्थात अलाभान्वित विद्यार्थियों का प्रतिशत लाभान्वित विद्यार्थियों की तुलना में अधिक पाया गया। सामान्य अवस्था के लड़के एवं लड़कियों की तुलना करने पर लाभान्वित एवं अलाभान्वित दोनों श्रेणी में लड़कों का प्रतिशत लड़कियों की तुलना में अधिक पाया गया। लाभान्वित लड़के 15.6% व लड़कियाँ 14%, अलाभान्वित लड़के 18% व लड़कियाँ 16% पाई गईं।

प्रथम डिग्री कुपोषण ग्रस्त विद्यार्थियों में लाभान्वित विद्यार्थियों का प्रतिशत अलाभान्वित विद्यार्थियों की तुलना में अधिक पाया गया। (13.66% लाभान्वित तथा 9.66% अलाभान्वित)। प्रथम डिग्री कुपोषण ग्रस्त लड़के एवं लड़कियों की तुलना करने पर लाभान्वित एवं अलाभान्वित दोनों ही श्रेणियों में लड़कियों का प्रतिशत लड़कों की तुलना में अधिक (लाभान्वित लड़के 6.33% लड़कियों 7.33% तथा अलाभान्वित लड़के 4.33% लड़कियों

* शोधार्थी,शासकीय क. रा. कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र) भारत
* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृहविज्ञान), शासकीय क. रा. कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र) भारत

5.33%) पाई गई।

द्वितीय डिग्री कुपोषण ग्रस्त विद्यार्थियों में लाभान्वित विद्यार्थियों का प्रतिशत अलाभान्वित विद्यार्थियों की तुलना में अधिक (6.32% लाभान्वित तथा 5.66% अलाभान्वित) पाया गया। लड़के एवं लड़कियों की तुलना करने पर लाभान्वित एवं अलाभान्वित दोनों ही श्रेणियों की लड़कियों में कुपोषण का प्रतिशत लड़कों की तुलना में अधिक (लाभान्वित 2.66% लड़के व 3.66% लड़कियाँ तथा अलाभान्वित 2.66% लड़के व 3% लड़कियाँ) पायी गई।

निष्कर्ष –

1. अधिकांश विद्यार्थी सामान्य स्वस्थ्य अवस्था में पाये गये जिनमें मध्यान्ह भोजन व्यवस्था रहित विद्यालयों के विद्यार्थियों का प्रतिशत अधिक पाया गया। मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित दोनों ही श्रेणियों में सामान्य स्वस्थ्य लड़कियों का प्रतिशत लड़कों की तुलना में कम पाया गया।
2. मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से अलाभान्वित विद्यार्थियों में प्रथम एवं द्वितीय डिग्री कुपोषण का स्तर कम पाया गया तथा लाभान्वित एंव अलाभान्वित दोनों श्रेणियों में प्रथम डिग्री कुपोषण ग्रस्त लड़कियों का प्रतिशत लड़कों की तुलना में अधिक पाया गया। कानपुर शहर के विद्यालयों में चतुर्थ श्रेणी स्तर का कुपोषण ग्रस्त कोई विद्यार्थी नहीं पाया।

सुझाव – मध्यान्ह भोजन व्यवस्था युक्त विद्यालयों में विद्यार्थियों को विद्यालय से प्राप्त भोजन पर ही निर्भर नहीं रहना चाहिये उन्हें स्वयं का टिफिन भी लाना चाहिये तथा प्रात: काल नाश्ता अवश्य करना चाहिये। घर पर भी भोजन में दाल, चावल, सब्जी रोटी, फल एवं दूध लेना चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कांनगो, प्रो. मंगला, 'पोषण एवं पोषण स्तर', पुर्नमुद्रण 2008, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृष्ठ क्रमांक 213,214।
2. सिंह, डॉ. अनिता, 'उपचारात्मक पोषण' नवीन परिवर्द्धित संस्करण, स्टार पब्लिकेशन्स, पृष्ठ क्रमांक 6,7।
3. पल्टा, डॉ. अरूणा 'आहार एवं पोषण', प्रथम संस्करण 2004, शिवा प्रकाशन इन्दौर, पृष्ठ क्रमांक 15।
4. यूनिसेफ: मध्यान्ह भोजन योजना संदार्शिका, मध्यान्ह भोजन प्राधिकरण, उत्तर प्रदेश पृष्ठ क्र.1।
5. श्रीवास्तव डी.एन., वर्मा प्रीति, मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
6. सिंह, डॉ. अनीता, 'उपचारात्मक पोषण', स्टार पब्लिकेशन, आगरा।
7. मिश्रा उषा एवं अग्रवाल अल्का, आहार एवं पोषण विज्ञान, नवीन संस्करण साहित्य प्रकाशन।
8. शर्मा, सुमन, 'स्वास्थ्य समस्या और समाधान' प्रथम संस्करण 2007, विश्वभारती पब्लिकेशन नई दिल्ली।
9. कुलकर्णी ज्योति सामान्य एवं उपचरात्मक पोषण।

ग्राफ क्र. 1 – मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों का ऊँचाई के अनुसार तुलनात्मक विवरण

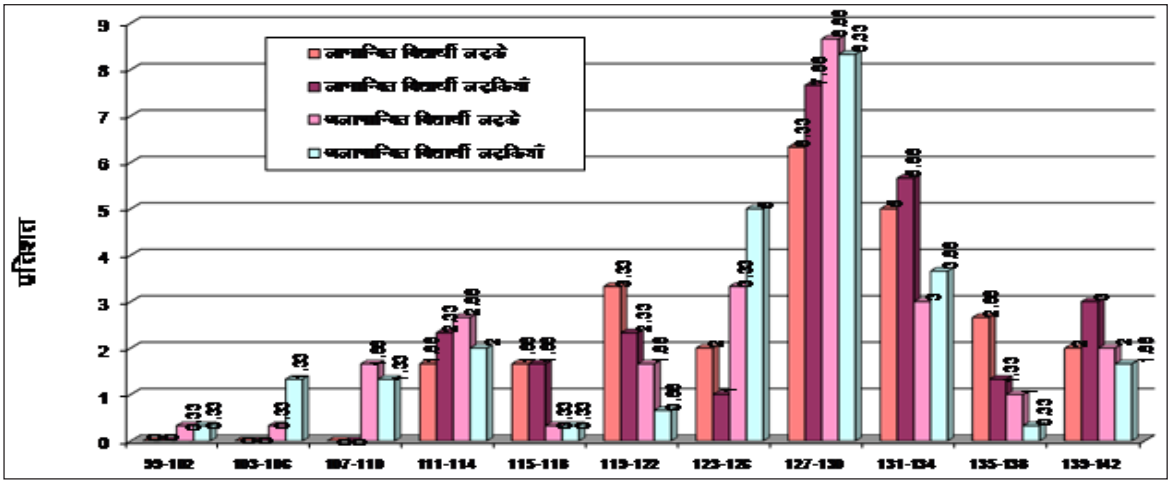

ग्राफ क्र. 2 – मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों का वजन के अनुसार तुलनात्मक विवरण

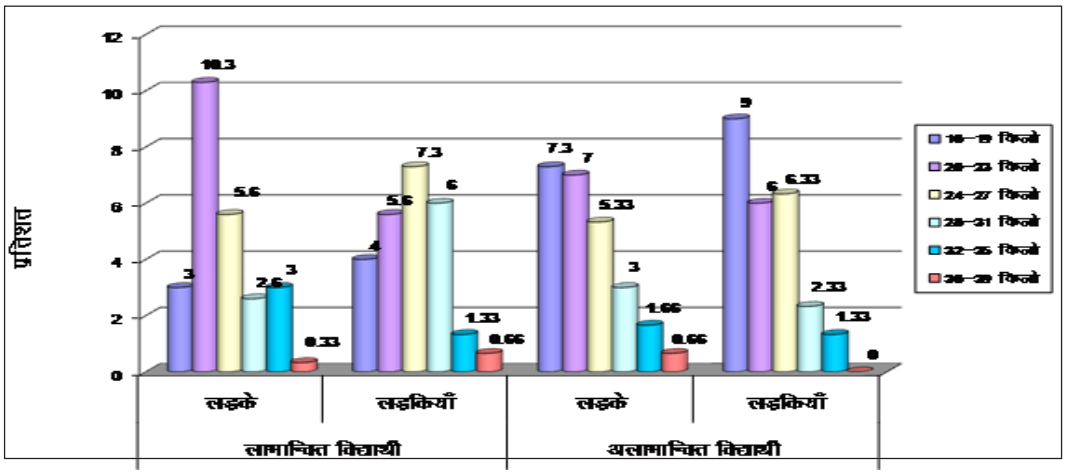

तालिका क्र. – 1 : मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों का ऊँचाई के अनुसार तुलनात्मक विवरण

ऊँचाई (सेमी)	लाभान्वित विद्यार्थी						अलाभान्वित विद्यार्थी						कुल योग	
	लड़के		लड़कियाँ		योग		लड़के		लड़कियाँ		योग			
	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%
99–102	00	00	00	00	00	00	1	0.33	1	0.33	2	0.66	2	0.66
103–106	00	00	00	00	00	00	1	0.33	4	1.33	5	1.66	5	1.66
107–110	00	00	00	00	00	00	5	1.66	4	1.33	9	3.00	9	3.00
111–114	5	1.66	7	2.33	12	3.99	8	2.66	6	2.00	14	4.66	26	8.66
115–118	5	1.66	5	1.66	10	3.33	1	0.33	1	0.33	2	0.66	12	4.00
119–122	10	3.33	7	2.33	17	5.66	5	1.66	2	0.66	7	2.33	24	8.00
123–126	6.	2.00	3	1.00	9	3.00	10	3.33	15	5.00	25	8.33	34	11.33
127–130	20	6.33	23	7.66	43	14.33	26	8.66	25	8.33	51	17.00	94	31.33
131–134	15	5.00	17	5.66	32	10.66	9	3.00	11	3.66	20	6.66	52	17.33
135–138	8	2.66	4	1.33	12	4.00	3	1.00	1	0.33	4	1.33	16	5.33
139–142	6	2.00	9	3.00	15	5.00	6	2.00	5	1.66	11	3.66	26	8.66
योग	**75**	**25**	**75**	**25**	**150**	**50**	**75**	**25**	**75**	**25**	**150**	**50**	**300**	**100**

तालिका क्र. – 2 : मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित तथा अलाभान्वित विद्यार्थियों का वजन के अनुसार तुलनात्मक विवरण

वजन (किलो में)	लाभान्वित विद्यार्थी						अलाभान्वित विद्यार्थी						कुल योग	
	लड़के		लड़कियाँ		योग		लड़के		लड़कियाँ		योग			
	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%
16–19	9	3	12	4	21	7	22	7.3	27	9.0	49	16.3	70	3.33
20–23	31	10.3	17	5.6	48	15.9	21	7	18	6.0	39	13	87	8.99
24–27	17	5.6	22	7.3	39	12.9	16	5.33	19	6.33	35	11.66	74	4.66
28–31	8	2.6	18	6.0	26	8.6	9	3.00	7	2.33	16	5.33	42	3.99
32–35	9	3.0	4	1.33	13	4.33	5	1.66	4	1.33	9	2.99	22	7.32
36–39	1	0.33	2	0.66	3	0.99	2	0.66	0	0	2	0.66	5	1.66
योग	**75**	**25**	**75**	**25**	**150**	**50**	**75**	**25**	**75**	**25**	**150**	**50**	**300**	**100**

तालिका क्रमांक – 3 : मध्यान्ह भोजन व्यवस्था से लाभान्वित एवं अलाभान्वित विद्यार्थियों के कुपोषण स्तर का तुलनात्मक विवरण

कुपोषण की श्रेणी	लाभान्वित विद्यार्थी						अलाभान्वित विद्यार्थी						कुल योग	
	लड़के		लड़कियाँ		योग		लड़के		लड़कियाँ		योग			
	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%	सं.	%
80 व अधिक %(सामान्य)	47	15.6	42	14	89	29.66	54	18	48	16	102	34	191	63.66
70 से 80 % (प्रथम डिग्री कुपोषण)	19	6.33	22	7.33	41	13.66	13	4.33	16	5.33	29	9.66	70	23.32
60 से 70 % (द्वितीय डिग्री कुपोषण)	08	2.66	11	3.66	19	6.32	08	2.66	09	03	17	5.66	36	11.98
50 से 60 % (तृतीय डिग्री कुपोषण)	01	0.33	00	00	01	0.33	00	00	02	0.66	02	0.66	03	0.99
50% से कम	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00	00
योग	**75**	**25**	**75**	**25**	**150**	**50**	**75**	**25**	**75**	**25**	**150**	**50**	**300**	**100**

बालक - बालिकाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का फास्ट फूड के उपभोग के मध्य सम्बन्ध -सागर शहर के संदर्भ में

डॉ. आराधना श्रीवास *

शोध सारांश – शिशु हमारे राष्ट्र के भविष्य है उनके उत्तम स्वास्थ्य और संस्कारों पर ध्यान देना माता-पिता का कर्त्तव्य है। बालक की भोजन संबंधी आदतों व खान-पान का ध्यान अभिभावकों को रखना चाहिये। एक स्वस्थ तथा सामान्य शिशु में हमारे सब दुखों को भुला देने की शक्ति होती है। बच्चों का उचित पालन पोषण करके उसे सम्पूर्ण व्यक्ति के रूप में एक चुनौतिपूर्ण कार्य है। अनेक माता-पिता अपने इस दायित्व का निर्वाह सफलता पूर्वक कर लेते है किन्तु कुछ माता-पिता एवं अभिभावक चाहते हुये भी इस दायित्व का निर्वाह सफलता पूर्वक नहीं कर पाते है।

प्रस्तावना – स्वस्थ शिशु में स्वस्थ मस्तिष्क का विकास होता है। आजकल की भाग दौड़ भरी जिन्दगी में माता-पिता को अपनी सन्तान के खान-पान की ओर ध्यान देने का समय नहीं होता है। इसका कारण है उनके पास समय का अभाव होना। आज संयुक्त परिवार कम और एकांकी परिवार अधिक देखने को मिलते है। आर्थिक समस्याओं के निदान करने हेतु माता-पिता बच्चों के खान-पान की ओर ध्यान न देते हुये अर्थोपार्जन की दुनिया में दौड़ लगा रहे है। बच्चे का विकास हो तो कैसे हो। बच्चे को खाना कुछ है परन्तु माता पिता अपने कार्य को महत्व देते हुए समय की बचत हेतु फास्ट-फूड की ओर प्रेरित करते हैं। जहाँ बच्चों को संतुलित भोजन की आवश्यकता होती है वहाँ उसकी पूर्ति नहीं हो पाती।

- **स्ट्रेग एवं बोगार्ड (1990)** ने स्वीकार किया है कि जो व्यक्ति विभिन्न प्रकार के सामाजिक स्तर में रहने वाला होता है। उसका समायोजन उतना ही अधिक अच्छा होगा।
- **बहुलर (1994)** ने अपने अध्ययनों में देखा कि कुछ समस्यायें परिवारों में उत्पन्न होती हैं और वर्तमान में विद्यालय, परिवार की आर्थिक स्थिति, व्यवसायिक चुनाव तथा पारिवारिक समायोजन की समस्यायें अधिक होती हैं।
- **स्ट्रंग (1990)** द्वारा किये गये अध्ययनों से ज्ञात हुआ कि समाज का स्थानीय प्रभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व पर पड़ता है। सामाजिक वातावरण का प्रभाव भी बालक के समायोजन पर पड़ता है।
- **गुप्ता रजनी (1984)** ने मध्यप्रदेश में महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति एवं उसके सामाजिक आर्थिक प्रभावों का अध्ययन किया है। उनके अध्ययन से यह पता लगता है कि क्या महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति में सुधार से उनके सामाजिक आर्थिक विकास के स्तर में कोई सकारात्मक परिवर्तन हुआ है। अपने अध्ययन के निष्कर्ष में उनका कहना है कि पाँच उद्देश्यों में से दो उद्देश्य ही सफल रहे हैं। इसमें प्रथम उद्देश्य है शिक्षा का स्तर बढ़ाने से महिलाओं का आर्थिक-सामाजिक स्तर बढ़ा है। दूसरा उद्देश्य महिलाओं का शैक्षणिक स्तर वर्तमान में निरन्तर परिवर्तित रहा है और सफल रहा है जबकि तीसरा, चौथा, पाँचवा उद्देश्य क्रमश: महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को बढ़ाने से पुरूषों पर निर्भरता कम होती है, सिद्ध नहीं हुआ है।
- **फार्बर (1959)** ने ज्ञात किया कि निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के परिवारों में मानसिक मंद बालक के कारण मानसिक मंद बालिका की अपेक्षा अधिक नकारात्मक प्रभाव पड़ा।
- **हेश एवं शिपमेन (1965)** ने अध्ययन कर पाया कि परिवार के सामाजिक-आर्थिक स्तर के बच्चों को विकास के निम्न अवसर मिलते हैं।

शोध अध्ययन के उद्देश्य- इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य बालक-बालिकाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का फास्ट फूड के उपभोग के मध्य सम्बन्ध ज्ञात करना है।

शोध अध्ययन की प्राक्कल्पना- बालक-बालिकाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति का फास्ट फूड के उपभोग के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया जाता है।

शोध प्रविधि – शोध अध्ययन हेतु सागर शहर के विभिन्न विद्यालयों में से 8 से 13 वर्ष के 300 बालक-बालिकाओं का दैव निर्दशन विधि से चयन किया गया। इसमें बालक-बालिकाओं के द्वारा फास्ट फूड का उपभोग व उनकी सामाजिक आर्थिक स्तर संबंधी ज्ञात करने के लिये प्रश्नावली का उपयोग किया गया है। सांख्यिकी विश्लेषण हेतु मध्यमान, मानक विचलन विधियों का उपयोग किया गया।(तालिका क्रमांक 1,2,3 ग्राफ क्रमांक 1,2,3) परिणामों की सार्थकता ज्ञात करने हेतु टी टेस्ट का उपयोग किया गया।

तालिका क्र. 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 1 में बालक व बालिकाओं के द्वारा फास्ट-फूड के उपभोग को दर्शाया गया है। 300 उत्तरदाताओं में से 150 बालक व 150 बालिकाएँ है। 150 बालकों में से 112(74.66 प्रतिशत) बालक प्रतिदिन व सप्ताह में 2-3 बार फास्ट-फूड का उपभोग करते पाये गये तथा 38(25.33 प्रतिशत) बालक सप्ताह में एक बार व 15 दिन में एक बार फास्ट-फूड का उपभोग करते पाये गये। इसी प्रकार 150 बालिकाओं में से 53(35.33प्रतिशत) बालिकाएँ प्रतिदिन और सप्ताह में 2-3 बार फास्ट-फूड का उपभोग करती पायी गयी तथा 97(64.66 प्रतिशत) बालिकाएँ सप्ताह में एक बार व 15 दिन में एक बार फास्ट-फूड का उपभोग करती पायी गयी।

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि बालिकाओं की अपेक्षा बालक फास्ट-फूड के अधिक उपभोगी हैं।

ग्राफ क्र.1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

ग्राफ क्र. 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 2 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्र. 2 में परिवार की सामाजिक आर्थिक स्तर को दर्शाया गया है जिसके अवलोकन से स्पष्ट होता है कि कुल 300 परिवारों में से 46 (15.33 प्रतिशत) परिवार उच्च वर्ग, 57 (19 प्रतिशत) परिवार उच्च मध्यम वर्ग, 89 (29.66 प्रतिशत) परिवार मध्यम वर्ग, 65 (21.66

* अनुसंधानकर्ता, शासकीय स्वशासी कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

प्रतिशत) परिवार निम्न मध्यम वर्ग व 43 (14.33 प्रतिशत) परिवार निम्न वर्ग के पाए गये।

ग्राफ क्र. 3 : (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

आर्थिक पृष्ठभूमि एवं फास्ट-फूड उपभोग में सम्बन्ध

क्र.	माध्य	प्रमाप विचलन	
बालक	93	29.36	सहसम्बन्धी r
बलिकाएँ	99	22.85	0.76

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि बालक-बालिकाओं में आर्थिक पृष्ठभूमि और फास्ट-फूड उपभोग में धनात्मक सहसम्बन्ध होता है। तालिका से ज्ञात होता है कि बालकों का माध्य 93 तथा बालिकाओं का 99 प्राप्त हुआ। प्रमाप विचलन बालकों का 29.36 तथा बालिकाओं में 22.85 प्राप्त हुआ। आर्थिक स्थिति एवं फास्ट-फूड उपभोग में सहसम्बन्ध का परीक्षण करने पर ी (0.76) प्राप्त हुआ जो औसत से उच्च श्रेणी का सहसम्बन्ध दर्शाता है।

निष्कर्ष- निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक आर्थिक स्थिति एवं फास्ट फूड के उपभोग के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया। r = 1 **अत:** उपकल्पना पूर्णत: सत्य प्रमाणित हुई।

सुझाव-

1. अपने बच्चे के सामने एक आदर्श बनें। कभी भी खाने पीने के मामले में ज्यादा जोर जर्बदस्ती न करें, क्योंकि आपका बच्चा भी वही खाएगा, जो वह आपको खाता हुआ देखेगा। अगर आप भरपूर फल और सब्जियाँ खाएंगें, तो आपका बच्चा भी वही खाने लगेगा।
2. छोटी उम्र में ही बच्चों में स्वस्थ खाने-पीने की आदतें डलवाएँ। जब आपके बच्चे साबुत आहार लेना शुरू कर दें, तब उन्हें तली हुई चीजें और फास्ट फूड बिल्कुल न दें, तब उन्हें सिर्फ सब्जियाँ और प्रोटीन से भरपूर आहार दें, ताकि उनमें फास्ट फूड लेने की बुरी आदत न पड़े।
3. अपने घर में हमेशा पौष्टिक आहार रखें जैसे कि फल , हरी सब्जियाँ और लो कैलोरी डेयरी उत्पाद। फ्रिज में मिठाई, चॉकलेट के बजाए ताजे फल और सब्जियाँ रखें।
4. पौष्टिक भोजन हमेशा स्वादिष्ट होता है। लोगों में पल रही गलत धारणा कि पौष्टिक भोजन खाने लायक नहीं होता, अपने बच्चों के दिमाग में न डालें।
5. अगर बच्चों को कोई व्यंजन पसन्द न आए, तो उसकी जगह कोई दूसरी पसन्दीदा चीज खिलाएँ। कभी भी गलत चीजें खाने में उनकी जिद पूरी न करें। शुरूआत में बच्चे थोड़ी आनाकानी करेंगें, मगर बाद में धीरे-धीरे उन्हें पौष्टिक चीजें खाने की आदत पड़ जाएगी।
6. अगर ब्रेक फास्ट करने से बच्चे कतराते हों, तो उनके लंच बॉक्स में ऐसी चीजें रख दें, जो पौष्टिक हों।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मुखर्जी रवीन्द्रनाथ, सामाजिक शोध व सांख्यिकी विवके प्रकाशन दिल्ली 2010।
2. त्रिवेदी आर. एन. शुल्क डी. पी. रिसर्च मैथडोलॉजी कॉलेज बुक डिपो 2008।
3. कपिल एच.के. (2010), सांख्यिकीय के मूल तत्व, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
4. त्रिवेदी आर.एन., शुक्ला डी.पी. (2008), रिसर्च मैथडोलॉजी, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर।
5. चांदेकर रमेश (2009), सामाजिक अनुसंधान, सत्य प्रकाशन, संचार केन्द्र, इन्दौर, पृ. 21-22।
6. एल. एन. दुबे एवं बी. निगम मापनी परिक्षण।
7. Bultrus P.T., Lynch J.W., Everson-Rose S., Raghunathan T.E., Kaplan G.A. (2005). "Race ethnicity, life-course socioeconomic position, and body weight trajectories over 34 years, The Alameda county study", Am J Public health 95 (9) : 1595-601.
8. Levin Stein, Harvey (2003) : "Paradox of Plenty : A social history of eating in modern", America Berkeley : University of California P, 228 - 229.
9. Dutta D.K. (2001) : ``Food Consumption Pattern in Day to Day life of Gailengs of Tegogamlion Village'', Man and life, 17(182); 113-116.
10. Mukherjee M.R., Chaturvedi V.T., Cols B., Col R. (2007) : "Determinates of Nutritional status of school children", MJ ATI: 64:227-213.

तालिका क्र. 1

फास्ट-फूड का उपभोग

क्र.	फास्ट-फूड के प्रकार	बालक				बालिकाएँ			
		प्रतिदिन	सप्ताह में 2-3 बार	सप्ताह में 1 बार	15 दिन में 1 बार	प्रतिदिन	सप्ताह में 2-3 बार	सप्ताह में 1 बार	15 दिन में 1 बार
1.	मैगी	19	08	02	02	20	09	02	02
2.	पिज्जा	04	03	02	02	01	02	04	04
3.	बर्गर	09	06	06	06	01	03	01	03
4.	चाऊमीन	07	16	02	04	02	04	18	08
5.	हॉटडॉग	01	02	03	03	03	05	27	15
6.	चॉकलेट	21	16	04	02	01	02	06	07
कुल		**61**	**51**	**19**	**19**	**28**	**25**	**28**	**39**

तालिका क्र. 2

सामाजिक आर्थिक स्तर (L.N. Dubey & B. Nigam Scale)

क्र.	सामाजिक आर्थिकस्तर	सामाजिक	प्राप्तांक वर्ग	परिवार	प्रतिशत संख्या
1.	उच्च वर्ग	I	100 एवं अधिक	46	15.33
2.	उच्च मध्यम वर्ग	II	80 से 99	57	19
3.	मध्यम वर्ग	III	60 से 79	89	29.66
4.	निम्न मध्यम वर्ग	IV	40 से 59	65	21.66
5.	निम्न वर्ग	V	39 एवं कम	43	14.33
	कुल			**300**	**100**

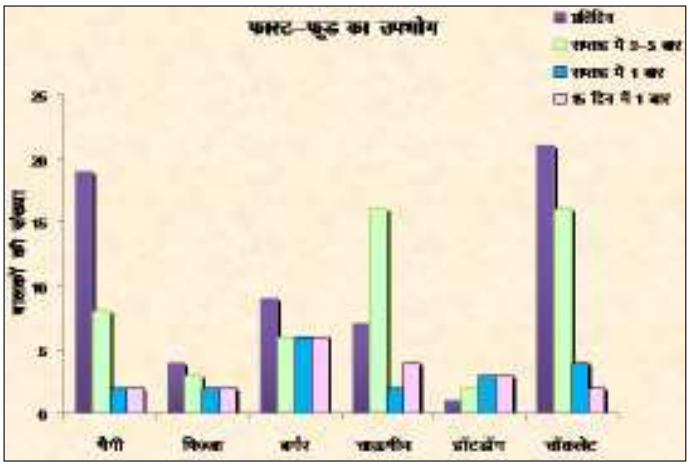

ग्राफ क्र.1 बालको द्वारा फास्ट – फूड का उपयोग

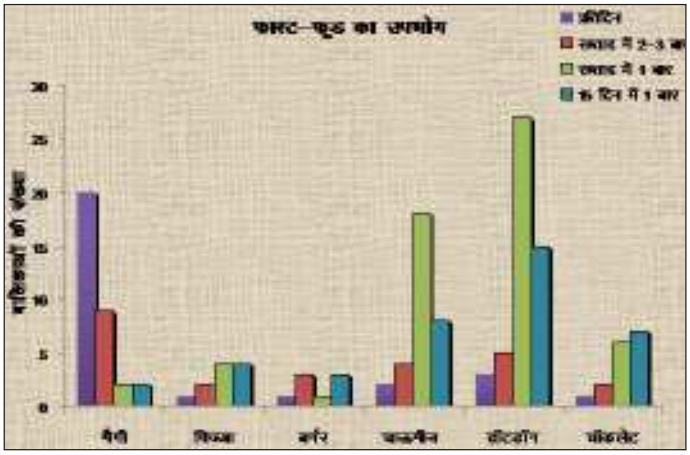

ग्राफ क्र.2 बालिकाओ द्वारा फास्ट – फूड का उपयोग

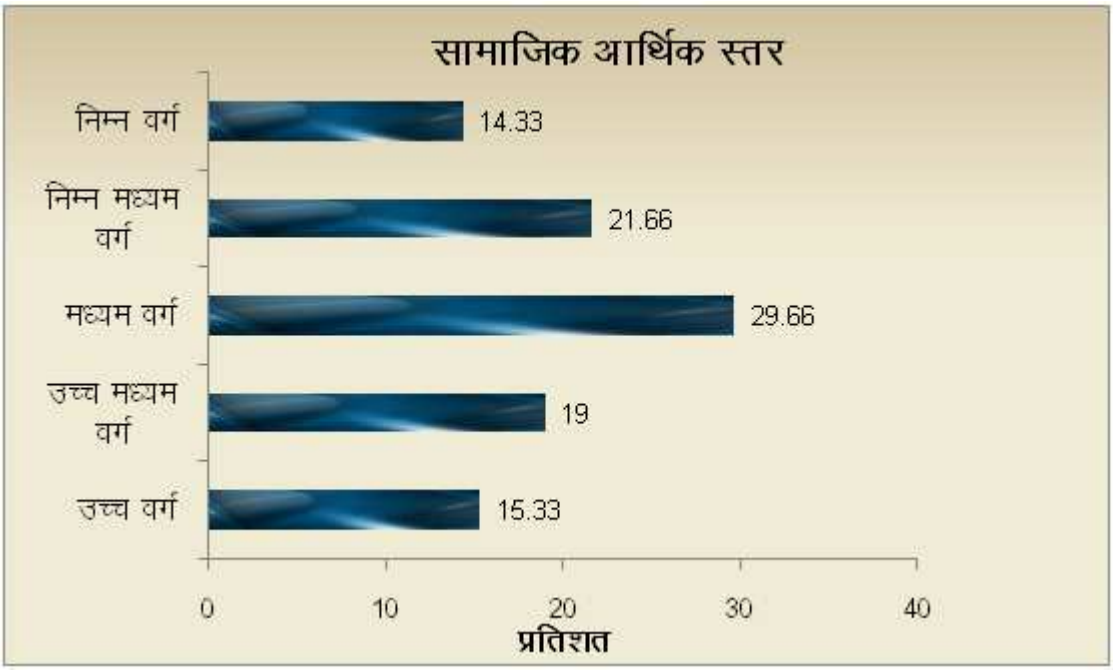

ग्राफ क्र. 3 सामाजिक आर्थिक स्तर

****

Inventory Management Analysis Of Bajaj Auto Ltd

Aasif Khaliq Shaksaz * **Dr. Mohd Mubeen Khan** **

Abstract - On an average, inventories are approximately 60 percent of current assets in public ltd companies in India. It is possible for a company to reduce its levels of inventories to a considerable degree, e.g., 10 to 20 percent, without any adverse effect on production and sales, by using simple inventory planning and control techniques. The reduction in 'excessive' inventories carries a favorable impact on company's profitability.

The study starts with an introduction to inventory management review of literature and objectives are set out for the study. Research design, Data analysis and Interpretation, Findings and Suggestions of the study follow. One of the main areas of this paper is the Analysis part where the data are analyzed and interpreted, to find out how the inventories were managed. In this paper, Researchers revealed the basic information about the "Inventory Management Analysis of Bajaj Auto Ltd."

Key words - current assets – inventory, inventory management, working capital.

Introduction - Every enterprise needs inventory for smooth running of its activities. It serves as a link between production & distribution process. There is, generally a time lag between the recognition of a need and its fulfillment.The greater the time lag, the higher the requirements for inventory. The unforeseen fluctuations in demand & supply of goods also necessitate the need for inventory. It also provides a cushion for future price fluctuations. The investment in inventories constitutes the most significant part of current assets or working capital in most of the undertakings. Thus, it is very essential to have proper control and management of inventories. The purpose of inventory management is to ensure availability of materials in sufficient quantity as and when required and also to minimize investment in inventories. The investment in inventory is very high in most of the undertakings engaged in the manufacturing, whole-sale & retail trade. The amount of investment is some times more in inventory than in other assets. In India, a study of 29 major industries has revealed that the average cost of materials is 64 paisa & the cost of labor & overhead is 36 paisa in a rupee. In industries like sugar, the raw material cost is as high as 68.75% of the total cost. About 90 % part of working capital is invested in inventories. It is necessary for every management to give proper attention to inventory management. A proper planning of purchasing, handling, storing & accounting should form a part of inventory management. An efficient system of inventory management will determine (a) what to purchase (b) how much to purchase (c) From where to purchase (d) where to store, etc.

There are conflicting interests of different departmental heads over the issue of inventory. The finance manager will try to invest less in inventory because for him it is an idle investment, whereas production manager will emphasis to acquire more & more inventory or he does not want any interruption in production due to shortage of inventory. The purpose of inventory management is to keep the stock in such a way that neither there is over stocking nor under stocking, the over stocking will mean a reduction of liquidity & starving of other production processes; under stocking on the other hand, will result in stoppage of work. The investment in inventory should be kept in reasonable limits.

Justification Of Research Study - As inventory is one of the important portions of the current assets; the inventory sent portion in investment constitutes the most significant part of working capital/current assets in most of the undertakings. The inventory is justified by this that the every entrepreneur and businessman have to maintain an adequate of innovatory in their business for running its activities smoothly and effectively. Also the business man should well aware of that the inventory should not be taken in more bulk quantities or beyond the requirements or outside the normal level, if this happens sometimes the business/company may suffer from the wastages or pilferages of inventory and incurred in losses. Thus, it is very essential to have proper control and management of inventories the purpose of inventory management is to ensure availability of materials in sufficient quantity as and when required and also to minimize investment in inventories. A proper inventory control management not only helps in solving the actual problems of liquidity, but also increase in profits and causes substantial reduction in the working capital of the concern. In this regard; I have taken this topic for the research study- "Inventory Management Analysis of Bajaj Auto Ltd."

Review Of Literature - Once the problem is formulated next step is to undertake extensive literature survive, connected with the problem for this purpose, the abstracting and indexing journals and published or unpublished bibliographies are the first place to go to. Academic journals, conferences proceedings, government reports, books etc, must be tapped depending on the nature of the problem. In this process, it should be remembered that one source will lead to another, the earlier studies, if any, which are similar to the study in hand should be carefully studied.

A number of studies have been done in the field of inventory management by various researchers,some of them are given

* **Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA**
** **Prof. & Head, Government Geetanjali P.G College, Bhopal (M.P.) INDIA**

below:-

Author-Bern at de William year (2008) - This study tells that the main focus of inventory management is on transportation and ware housing.The decision taken by management depends on the traditional method of inventory control models.The tradional method of inventory management is how much useful in these days the author tell about it.He is also saying that the traditional method is not a cost reducing,it is so much expensive.But the managing the inventory is most important work for manufacturing unit.

Author-Jon Schreibfeder (1992) - He said that it is easy to turn cash into inventory, the challenge is to turn inventory back into cash.In early 1990's many distributor recognise that they needed help controlling and managing their largest asset inventory. In response to this need several companies developed comphrensive inventory management modules and systems. These new package include many new features designed to help distributors effectively managed warehouse stock, But after implementing this many distributors do not feel that they have gained control of their inventory.

Author-D.Hoopman (April 7, 2003) - In this article he said that inventory optimization recognize that different industry have different inventory profiles and requirements. Research has indicated that solutions are priced in a large range from tens of thousands of dollars to millions of dollars. In this niche market sector price is difinitely not an indicator of the quality of solution. ROI and usability are paramount.

Author-Asfaque Ahmed (October 12, 2004) - He said that the most of the manufacturing company vendors have planning and sheduling products which assume either infinite production capacity for calculating quantities of raw-material and work-in-progress requirements or infinite quantities of raw-materials and work-in-progress materials for calculating producation capacity. There are many problems with this approach and how to avoid these by making sure that the product you are buying indeed takes into account finite quantities of required material as well as finite capacities of work centres in your manufacturing facilities.

Author-Charles Atkinson (2006) - In the study by Mr.Charles explained the inventory management and assessment of inventory levels. As this study, inventory management need to address two issue :-

Part 1. How to optimize avarage inventory levels.

Part 2. How to evaluate inventory levels.

This study tells about what the manager should do and not to do, and how much amount should be order in one placed orders, Average inventory can be calculated by simplistic method.

Average inventory = beginning inventory + end inventory /2.

Author-Delaunay C, Sahin E (2007) - A lots of work has been done but now if we want to go ahead we much have good visibility up on this field of research. That is why, we are focused on face work for an exhaustive review on the problem of supply chain management with inventory inaccuaracies. The author said that their aim in this work is also to present the most important criterion that allow a distinction between the different types of managing the inventory.

Author-Wolfy Bagby (2010) - In this study He explains that by managing the inventory it becomes easier for the organisation to meet the profit goals, shorter the cash cycles, avoide inventory shortage avoide excessive carrying costs for unused inventory, and improve profitability, by decreasing cash conversion and adopt JIT system. According to this study companies need to get smart about inventory.

Boosting financial performance is author benefit that comes from better inventory management. In fact, large number of manufactuers enjoy savings and better performance by choosing the approach of inventory reduction.

For this company need to maximize the cash flow and profitability and this include keeping a watch ful discerning eye on charge in supply and Demand.

Author- Silver, Edward A (Dec 22, 2002) - This article considers the context of a population of items for which the assumptions underlying the E0Q, derivation holds reasonably well. However as is frequently the cash in practices there is an aggregate constraints that applies to the population as a whole. Two common forms of constraints are :-

a). The existence of budget to be allocated amoung the stocks of the items and

b). A purchasing producation of facial facilities having the capability to process at most a certain number of replenishment per year. Because of the constraints the individual repleinshement quantities cannot be selected independently.

Objectives Of The Study - An objective is compulsory for the study of research because problem of research study is based on objectives:-

- To study the inventory position of Bajaj Auto Ltd.
- To study of inventory to working capital position of Bajaj Auto Ltd.
- To analyze the inventory turnover of Bajaj Auto Ltd.

Research Design - Every research have required data, either may be primary or may be secondary data. In this research study we have been using the secondary data; the sources of these data are annual reports, budgets, and statistical reports and published documents. In this study the major sources of data have been collected from annual reports and internet which has been directly related to our topic i.e. "Inventory Management Analysis of Bajaj Auto Ltd." The data will also be collected through a comprehensive interviews, schedules and discussions with the top manager of the company. The published research reports and market studies will helped the researchers to gauge into the problem. This study we have been completed in several steps which are related to introduction, research methodology, analysis of inventory management and findings and suggestions. The objective of the study is also analyzed through various dates which are related to the topic of the study. On the basis of analysis of the study, objective of the study, observation of the study; we have been given suggestions for the betterment of the company or were made for company's welfare.

Limitations Of The Study - Every research has their own constraint pain & limitations, in this light this study has also been some limitations which are given as below:-

- The study is based on five years annual report from 2009 to 2013, so the validity of data collection, observation, and suggestions have limited.
- The study is based on secondary data. The reliability of secondary data is dependent on the audit in the Indian

scenarios.

- The data has been grouped and sub-grouped as per requirement of the analysis.

TABLE 4.1 : Statement of inventory to current Assets Ratio

This ratio shows the relationship between inventories to current Assets, this ratio show that what the proportion of inventory in the current Assets is. The formula for calculating the inventory to current Assets Ratio = (Inventory / Current Assets)

(Rs in crores)

Year	Inventory	Current Assets	Ratio
2009	7605.78	2401.45	3.16:1
2010	9309.96	3111.75	2.99:1
2011	13197.15	5358.19	2.46:1
2012	15780.74	4501.40	3.50:1

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.1 shows the inventory has been increasing during the year 2009, but it has been decreasing since 2010 to 2011 and while it has been also increasing in the year 2012 respectively.

TABLE 4.2 : Statement of inventory to working capital ratio

This ratio shows the relationship between the inventories and the working capital. This ratio also shows that how much the proportion of inventory as compared to the working capital, formula for calculating the inventory to working capital Ratio = (Inventory **/** working capital)

(Rs in crores)

Year	Inventory	Working capital	Ratio
2009	7605.78	(200.90)	(37.85:1)
2010	9309.96	(1355.03)	(6.87:1)
2011	13197.15	(1191.88)	(11.07:1)
2012	15780.74	(599.02)	(26.34)
2013	16362.00	(555.24)	(29.46:1)

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.2 shows that the inventories have been falling in the years 2009 to 2013, and have been shown negatively in the years 2009 to 2013 respectively.

TABLE 4.3 : Statement of inventory to current liabilities Ratio

This Ratio reveals the relationship between the inventories of current Liabilities; this ratio also indicates that how much proportion of inventory as compared to the current liabilities. Formula for calculating the inventory to current liabilities Ratio = (Inventory / current liabilities)

(Rs in crores)

Year	inventory	Current liabilities	Ratio
2009	7605.78	2602.35	2.92:1
2010	9309.96	4466.78	2.08:1
2011	13197.15	6550.07	2.01:1
2012	15780.74	5100.42	3.09:1
2013	16362.00	4505.40	3.63:1

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.3 shows that the inventories have been decreasing in the year 2009 to 2011 but after that, it has been increasing continuously during the year 2012 to 2013 which are (3.09) of (3.63) respectively.

TABLE 4.4 : Statement of inventory to Fixed Assets Ratio

This Ratio reveals the relationship between the inventory and Fixed Assets. It also indicates that how much contribution of inventory as compared to the Fixed Assets. Formula for calculating the inventory to fixed assets Ratio = (Inventory / Fixed Assets)

(Rs in crores)

Year	inventory	Fixed Assets	Ratio
2009	7605.78	3457.29	2.19:1
2010	9309.96	5621.95	1.65:1
2011	13197.15	6427.25	2.05:1
2012	15780.74	6737.57	2.34:1

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.4 shows that there are some ups and downs in the years from 2009 to 2013 respectively.

TABLE 4.5 : Statement of inventory to Total Assets Ratio

This Ratio reveals the relationship between the inventories of Total Assets. This ratio also indicates that how much proportion of inventory as compared to the Total Assets. Formula for calculating the inventory to total assets Ratio = (Inventory / Total Assets)

(Rs in crores)

Year	inventory	Total Assets	Ratio
2009	7605.78	6042.04	1.25:1
2010	9309.96	8733.70	1.06:1
2011	13197.15	11785.44	1.11:1
2012	15780.74	11238.97	1.40:1
2013	16362.00	12478.62	1.31:1

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.5 shows that the inventory has been decreasing up to 2009 to 2011, but it has been interruptedly increasing in the rest of years which is (1.40) (1.31) respectively.

Table 4.6 : Statement of inventory to Debt Capital Ratio

This Ratio reveals the relationship between the inventory and Debt capital. This ratio is calculated by use of the particular and accepted formulas are as = (Inventory / Debt Capital)

(Rs in crores)

Year	inventory	Debt Capital	Ratio
2009	7605.78	1570.00	4.84:1
2010	9309.96	1338.58	6.95:1
2011	13197.15	325.15	40.58:1
2012	15780.74	97.48	161.88:1
2013	16362.00	71.27	229.57:1

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.6 shows that the inventories have been falling down in the years 2009 and 2010 but it has been uninterruptedly raising in the years 2011 to 2013 respectively.

Table 4.7 : Statement of inventory to Shareholder's fund Ratio

This Ratio reveals the relationship between the inventory and the shareholder's fund i.e. (owner's fund). This ratio again shows that how much the commitment of inventory is present as compared to shareholders fund.

Formula for obtaining the inventory to shareholder's fund Ratio= (Inventory / Share Holder's fund)

(Rs in crores)

Year	Inventory	Share holder's fund	Ratio
2009	7605.78	1869.69	4.06:1
2010	9309.96	2928.34	3.17:1
2011	13197.15	4910.22	2.68:1
2012	15780.74	6041.07	2.61:1
2013	16362.00	7901.95	2.07:1

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.7 shows that the inventory has been increasing in the year 2009, but it has continuously decreasing in the rest of years.

Table 4.8 : Statement of inventory Turnover Ratio

This Ratio reveals the relationship between the inventory and net sales. This ratio also indicates that how much proportion of the inventory is present as compared to the proportion of the net sales. (Net sales / Average inventory)

(Rs in crores)

Year	Net sales	Average inventory	Ratio
2009	8700.17	8457.87	1.02:1
2010	11813.25	11253.55	1.04:1
2011	16451.80	14488.94	1.13:1
2012	19516.65	16071.37	1.21:1
2013	19997.25	8181.00	2.44:1

Source: - Annual reports of Bajaj Auto Ltd from 2009-2013.

Interpretation - Table 4.8, shows that the inventory has been falling down in the first consecutive year 2009 but this ratio reveals that the inventory has been increasing in the years 2010 to 2013 respectively.

Conclusion / Findings - The findings data are extracted from the annual reports of Bajaj Auto Ltd. The Inventory Management Analysis of Bajaj Auto Ltd for five years is studied through, which we have concluded that:-

- The sales of the company are continuously increasing in the years 2009 to 2013 and also the net profit of the company has showing tremendous increase in the same years, which shows the net profit of the company and sales are quite satisfactory.
- The reserves of the company are continuously increasing. It has reached up to (7612.58) crores which is very good for the industry. But the inventory of the company has some fluctuations from the years 2009 to 2013; this indicates that the industry is using lesser amount of the inventories.
- The inventory of the company against the current asset is raises at higher level, which shows that the position of company in terms of inventory against the current asset is satisfactory.
- The inventories against the working capital of the company have been gone down negatively; this indicates that the position of the inventory is dissatisfied.
- There is continuously a fluctuation in the level of inventory against the total assets of the company from 2009 to 2013, which shows that the position of inventory against total assets is not satisfactory for the company.
- We find that the quantity of inventory is normally in a fluctuating manner against the cash, this indicates that the position of inventory is quite improved as compared to the cash balance of the company.
- We predict that there is continuous increasing in the level of inventory in apposition of debt capital of the company it goes up at a very higher level. Thus it indicates the quantity of inventory of the company is satisfactory.
- The inventory against the shareholder's fund of the company is on decreasing trend from the years 2009 to 2013. The situation is satisfactory, because it must on increasing trend continuously which will be favorable for the company.
- We find that the inventory turnovers are continuously increasing from years 2009 to 2013. This indicates that the position of inventory in the company is quite satisfactory.

Suggestions -

- The sales of the company are continuously increasing in the year 2009 to 2013. Also the net profit of the company has enormous increase in the same years, now it is suggested that company should make some more improvements in the future in case of sales and profits.
- The reserves and surpluses of the company are continuous by going upward from 2009 to 2013, But in the case of inventory it has so many ups and downs and they are using minimum amount of inventory, so it is suggested that company should increase and maintain properly their level of inventory.
- The inventory of the company is showing so many fluctuations. Thus it is suggested that the company should properly utilize quantity of inventory for the betterment of the company.
- The company should proper utilize its current assets for the well-being of their business.
- The inventory has not been using properly and it goes down towards negative direction against the working capital, so it is suggested that the company should decrease or reduce in the amount of working capital , and maintain and manage the inventory of the company properly.
- The utilization of the inventory against the fixed assets by the company are very badly, so it is suggested that in order to maintain the satisfactory level of the company, thus the inventory should be use properly, sufficiently and adequately.
- The position of inventory against the cash is may be going well, so it is suggested that the company should also try to maintain improve their level of inventory for the beneficial of the organization.
- As against the fund of shareholder's (owners fund) of the company therefore the inventory is not using sufficiently because it has so many fluctuations (ups downs) thus it is suggested that the company should utilize their inventory properly and fully.
- Here the company is disposing the inventory into sales quite properly, thus it is advised that the company should maintain the level of inventory more and more in case of inventory turnover ratio so that the company can achieve its objectives effectively and efficiently in terms

of inventory.

References :-

1. Williams Brent D, 2008 “A review of inventory management research in major logistics journals: Themes and Future directions,” International Journal of logistics Management, the, Vol.19 Iss: 2, p.p. 212- 232.
2. Schreibfeder Jon, 1992 “Article from TRIM Inventory …the effective way”.www.effective inventory.co m
3. Ahmad Asfaque 2004 “Article from master requirement planning and master production scheduling”. www.technology evaluation.com
4. Hoopman D, 2003" Article from inventory planning and optimization”.www.scribd.com/doc /.m / Ranjana – proj ect – on inventory management
5. Atkinson Charles, 2006" A study on inventory management”. www.inventory management review / org / about html.
6. Bag by wolfy, 2010" Managing Inventory”.www.mind ser pent.com / American / 1901- minor- conflict-of-laws .pdf
7. Silver Edward, 2002" Article from Production and Inventory Management International Journal”.p 22(1), 31-39
8. C Delaunay , E Sahin , 2007" Managing Inventory” A review on investigation dealing with inventory management with data in-accuracies : International Journal of RFID Eurasia,p.1-7".
9. PANDAY, I.M, Financial Management, Vikas Publication House Pvt.Ltd. New Dehli, 1999.
10. Jain, S.P and NARANG, K.L (2004), Cost and Management Accounting, Material Control, Chapter- 3.
11. Sharma and Gupta, Management Accounting Eleventh Revised Edition, Kalyani Publication, New Delhi.

****

A Study of Customer Satisfaction towards Retail Services in Indore Region, with special reference to Easy Day

Rajesh Jain *

Abstract - Easyday India is the retail chain operated by Bharti Retail a subsidiary of Bharti Enterprises. These stores provide consumers a wide assortment of quality products at everyday low prices. The present study is to analyse the satisfaction level of those customers who visit Easyday. The objectives of this study were to know the overall satisfaction of the consumer towards Easyday. Here primary data that are collected in the course of research consist of original information that comes from people and includes information gathered from surveys and questionnaires. Most of the customers are satisfied (50%) with the variety of products available at the store while some of the customers found it not good (26%). The study based on level of "Customer Satisfaction towards Easyday" reveals that the customers are overall satisfied with the store. Easyday can make use of SMS and E-Mails as an additional promotional tool to inform customers about the latest offers going on.

Keywords - assortment, consist, questionnaires, reveals, promotional, analyse.

Introduction - The word Retail is extracted from the French word retailer which means 'to cut a piece of break bulk '. In simple terms it involves activities whereby products or services are sold to consumers in smaller quantities. A retail mix is the package of goods and services that store offers to the customer for sale. Maximum satisfaction to the customer reaction to the retail mix which influence the profits of the store, its volume of turnover, its share of market , its image and status and finally its survival. Customer satisfaction, a term frequently used in marketing, is a measure of how products and services supplied by a company meet or surpass customer expectation. Customer satisfaction plays a major role in determining the likelihood of an organization's success and profitability over the long term.

Details of the Company - Bharti Retail, wholly-owned subsidiary of Bharti Enterprises, one of India's leading business groups, believes organized retail has the potential to greatly contribute to India's economic growth. It operates neighborhood stores called Easyday Market and hyper market called Easyday Hyper.These stores provide consumers a wide assortment of quality products at everyday low prices.Easyday India is the retail chain operated by Bharti Retail a subsidiary of Bharti Enterprises. It opened its first retail outlet in the city of Ludhiana in 2008.With over 186 stores successfully operating across 12 states, Easyday, the retail brand of Bharti Retail Ltd., is all set to become one of India's leading retailers.

Review of Literature - Lovelock (1996) Topic – Effectiveness of Telecommunication in customer satisfaction study found that the customer service function is changing dramatically in many service business and it involved task-oriented activities.Sathye (1998) Topic – Effectiveness of customer education in attaining customer satisfaction study found that internet banking is providing service like account balance, transaction history, order statement, taxes, fund transfer etc. but main hurdle in the growth of internet banking is security and reliability. Zhu (2002) Topic- Old customers are satisfied by traditional services study used the seroquel instrument to measure this service quality and identified several attributes associated with IT based services and proposed a service quality model to investigate the casual relationship between customer evaluation of It based services and overall service quality.

Rationale of Study - The present study is to analyse the satisfaction level of those customers who visit Easyday. Easyday is a prominent retail store of India. There are so many variables who decided the satisfaction level of a customer like availability of goods, offers and discount provided by store, billing time, staff behaviour etc.The significance of the study was to get the detailed overview of customer satisfaction of those consumers who visits Easyday.Here conducted this research to check the variance in the level of customer satisfaction towards Easyday.

Objectives of Study

The objectives of this study were :

1. To know the factors which influence the consumer buying behaviour of Easyday.
2. To know the overall satisfaction of the consumer towards Easyday.
3. To know about consumer acceptance of the Easyday & to understand why customer prefer Easyday.
4. To find out the most prominent area of dissatisfaction.

* **Asst. Professor, IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA**

Research Methodology -

Research Design - Study the customer satisfaction towards retail services in Indore region with special reference to Easyday.

Sample Design - Sampling method here used is 'Random Sampling Method.' Random Sampling Method was used because it was not known previously as to whether a particular person will be asked to fill the questionnaire.

Tools for Data Collection - The new gathered data which help to solve the problem in hand which is specially collected for the particular research, is known as primary data. Here primary data that are collected in the course of research consist of original information that comes from people and includes information gathered from surveys and questionnaires. Information that are already exists somewhere, having been collected for another purpose, is known as secondary data. Here in the research the secondary data was collected through various books, magazines and websites. The geographical area covered for the sampling of the study is related to Indore region.

1.7 Data Analysis & Interpretation

1. In a month how often do you visit Easyday?

a) Ones b) Twice c) Thrice
d) More than thrice e) Occasionally

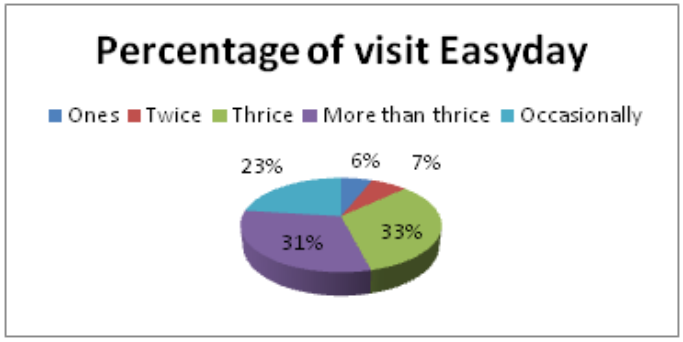

Interpretation - Most of the people visit Easyday thrice or more than thrice a month, only 6% and 7% people go ones or twice a month it means it has a good repo in market.

2. Your shopping experience in Easyday is always?

a) Very bad b) Bad c) Not good
d) Good e) Excellent

Interpretation - Shopping experience of 54% people is good on the other hand 0% people felt very bad after visiting Easyday, it means their serivices are up to the mark.

3. Brand and product availability in Easyday is ?

a) Very bad b) Bad c) Not good
d) Good e) Excellent

Interpretation - As we can see most of the people conceder the product availability is good, where very few people found problem in finding their brand.

4. Discounts and offers served by Easyday are ?

a) Very bad b) Bad c) Not good
d) Good e) Excellent

Interpretation - 50% of the people felt excellent about the discounts and offers Easyday provide, only 2% people felt bad about them. It means the discounts and offers they provide are really good.

5. It is easy to move in the store with trolley?

a) Very bad b) Bad c) Not good
d) Good e) Excellent

Interpretation - From the above data it is clear that most of the people found problem in moving with trolley inside the store.

6. The cleanliness and hygiene maintained in the store?

a) Very bad b) Bad c) Not good
d) Good e) Excellent

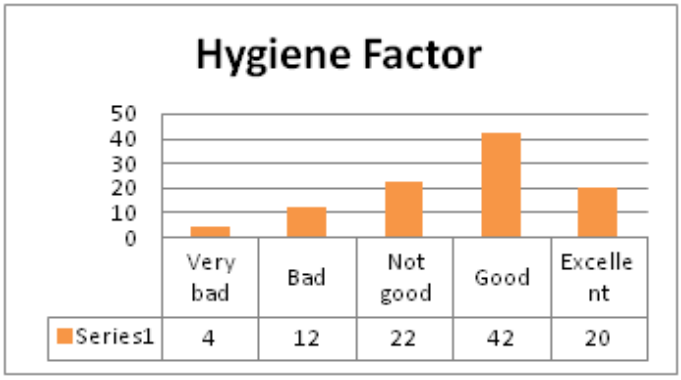

Interpretation - 42% people felt good about the cleanliness and hygiene maintained in the store but there are some people who felt there are some probabilities of improvement.

7. Why do you find Easyday more convenient for shopping than other stores?

a) Proper management b) More space to shop freely
c) Credit card facility
d) Everything available under single roof e) Others

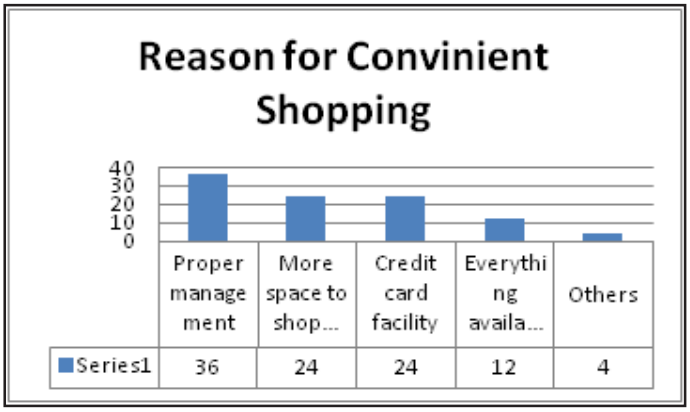

Interpretation- From the above table it is clear that 36% of people prefer to shop here because of proper management, 24% of people prefer to shop here because of free space available here, 24% of the people like the credit facility provided by Easyday, 12% of the people prefer shopping here because of availability of all required products under one roof and only 4% prefer Easyday because of other reasons.

8. How would you rate your level of satisfaction with Easyday in regards to price ?

a) Highly satisfied b) Satisfied
c) Somewhat satisfied d) Somewhat dissatisfied
e) Dissatisfied

Interpretation - From the above data it is clear that 42% of people are satisfied in regards to price but there are some people who are not satisfied with price, so there are probabilities of improvement.

9. Are you satisfied with the parking facility of your vehicle at Easyday?

a) Highly satisfied b) Satisfied c) Somewhat satisfied
d) Somewhat dissatisfied e) Dissatisfied

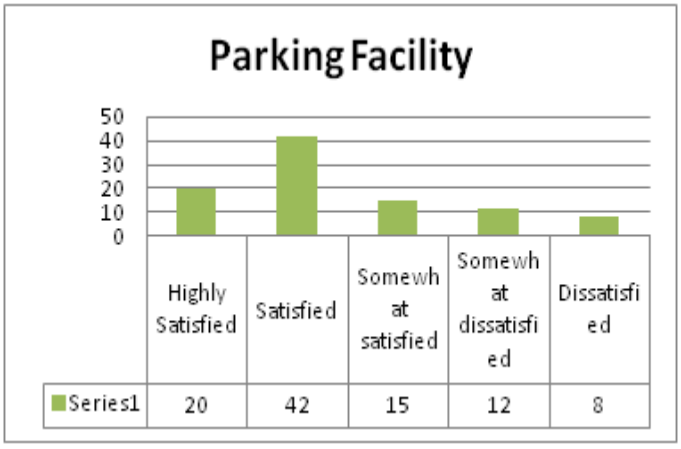

Interpretation - From the above data it is clear that 42% of the people are satisfied with the parking facility provided by Easyday, so it can be said that the parking facility provided by Easyday is good.

10. Which of the following problems you come across Easyday?

a) Too crowded b) Under staff c) Size of building
d) Limited range of products e) Others

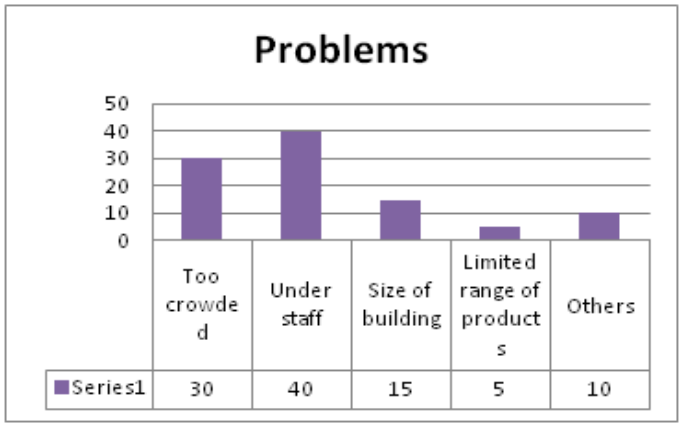

Interpretation - From the above table it is clear that 30% of people faced problem due to crowded area, 40% of people think that store is under staff, 15% of the people faced problem of size, 5% of the people think that there is a limited range of products available and only 4% faced problem due to other reasons.

Findings -

1. Store is performing well; the shopping experience of customer is good.
2. Majority of the customers visit the store thrice or more than thrice in a month.
3. Most of the customers are satisfied (50%) with the variety of products available at the store while some of the customers found it not good (26%).
4. Air conditioning and music system in the store is good.
5. Discounts and offers served by Easyday are good.
6. Sanitation services are not up to the mark but there are probabilities of improvement.
7. Product display and arrangement is up to the standard.
8. Most of the people are satisfied with the billing facility but at the same time they also want to increase no. of billing counters.
9. Customers found enough space to shop freely & preferred Easyday because of the proper management.
10. Most of customers are satisfied with the support of the staff at the time of purchase.

Suggestions -

- Easyday can make use of SMS and E-Mails as an additional promotional tool to inform customers about the latest offers going on.
- Sponsorship should be given for the prime events in the city there by creating a goodwill and attracting more and customers.
- The salseman should be properly motivated and trained so that they may cover maximum no. of customers.
- Increase in no. of billing counters & proper space should be created for moving the store with trolley.

Conclusion - The study based on level of "Customer Satisfaction towards Easyday" reveals that the customers are overall satisfied with the store. Most of the people have excellent shopping experience while shopping at the store. In the study we also found that the customers are also happy with the other facilities like air conditioning, music system, toilet and drinking facility at the store. People faced problem in offer days but at the same time they are also satisfied with their proper management. The store provides a healthy and clean atmosphere to their customers and is striving at its best to enhance quality products. As a conclusion we can say that the overall "Customer satisfaction towards retail services of Easyday" is very high.

References :-

1. Kotler, Philip: Marketing Management, 13th edition, Keller, Lane Kevin, 2013.
2. Research Methodology (C R Kothari, C B Gupta)
3. Lovelock, C.H. (2009), " Developing and Managing the customer service function ",Service Marketing, PHI : New Delhi.
4. www.findarticles.com
5. www.Easydayindia.com
6. http://en.wikipedia.org/wiki/Customer_satisfaction

****

Service Sector : Opportunities And Issues

Dr. Ajay Mishra *

Abstract - Among the fast growing developing countries, India is distinctive for the role of the service sector. The Indian Economy has shown considerable resilience to the global economic crisis by maintaining one of the highest growth rates in the world. Given the magnitude of services growth and its inter linkages with the other sectors of the economy, it is important to understand the impact of services sector on other macro – economic variables. This paper provides an overview of the Indian Service sector. As India is travelling a noval path in Economic growth by making services as the engine of growth, and by-passing industry, careful strategy are needed for consolidating, strengthening and furthering the growth process. The present paper attempts to identify some of the critical issues and analyze the performance of this key sector of Indian Economy.

Key Words – Service Sector, Economic Growth, GDP, PPP, FDI, VAT, CAGR, PMI.

Introduction - The Indian Economy has grown at a robust rate during the last few years and a striking feature of this growth performance has been the strength of services sector. The dominance of services in the growth process is associated with the third stage of development. However, in India, the acceleration in growth in recent years has been due the dynamism of service sector. While the contribution of industry tended to stagnate over the last three decades. Services now contribute almost 57 percent to India's GDP. Besides being the dominant sector in India's Economic growth, it has laso contributed significantly to foreign investment flows, exports and employment. India's services sector covers a wide variety of activities that have different features and dimensions. Some services like information technology and telecommunications are very sophisticated, involving high technology and expertise. While some are simple. Some services like tourism have high employment linkages. Some service like railways and port fall under the definition of infrastructure, while some like construction fall under the definition of industry. Thus, there are many borderline inclusions and exclusions. This paper makes an attempt to analyze the performance, problems and prospects of service sector.

Research Objectives -

The following objectives were formed -

i) To study and analyze the performance of service sector.

ii) To list out some important policy issues for the speedy development of service sector.

Research Methodology - The descriptive research design was selected for this paper. The proposed study is based on secondary data which were collected from various government publications, annual reports, news articles and officials websites.

Literature Review - Various studies have been conducted in the field service sector covering various dimensions. **Suresh R. Tendulkar** in his studies predicted that India would chart out a unique growth path in which the country would leapfrog from a predominantly agricultural to a directly service dominated economy by skipping the intermediate stage of rising share of industrial sector that was experienced by all existing industrialized countries. **Gordon and Gupta** argued that growth in the service sector was also less cyclical and more stable than the growth of industry and agriculture (in the sense of having the smallest co-efficient of variation)[2]. **Sunil Jain and T.N. Ninan** have estimated that the contribution of communication services to GDP growth which was just under 1 percent in 1990-91 rose to more than 14 percent in 2006-07[3]. **Mr. Arun Jaitley**, Union Finance Minister while delivering the Inaugural Session at Second Addition of Services Conclave, 2014 empathically said "Research & Development, Tourism, Education and health care Service has the potential to lead exports growth in the service sector, more jobs should be created in the service sector, in addition to those in the manufacturing sector. So that the large section of the under employed population in the agriculture sector could get meaningful employment"[4]. The literature supports the services have the potential to promote economic growth, employment generation and foreign investment for the speedy development of the Indian economy.

India's Service Sector - Services in India are emerging as a prominent sector in terms of contributions to national and states' incomes, trade flows, FDI inflows, and employment[5].

Services GDP : An Analysis - Services constitute a major portion of India's GDP with a 57 percent share in GDP at factor cost (as current prices) in 2013-14 – an increase of 6 percentage points over 2000-01. Including construction, the share is 64.8 percent, The CAGR of services sector

* **Professor, Institute for Excellence in Higher Education, Bhopal (M.P.) INDIA**

GDP at 8.5 percent for the period 2000-01 to 2013-14 during the same period.

In 2013-14 the growth rate of the services sector at 6.8 percent is marginally lower than in 2012-13. This is due to deceleration in the growth rate of the combined category of trade, hotels, and restaurants and transport, storage and communications to 3.0 percent from 5.4 percent in 2012-13, despite robust growth of financing, insurance, real estate business services at 12.9 percent. Construction, a borderline services inclusion which has not been performing well since 2012-13, grew by only 1.6 percent in 2013-14.

Sub sector-wise, banking and insurance (11.8 percent) and real estate, ownership of dwelling, and business services (10.0 percent) were the best performers in terms of growth rate in 2012-13 and the performance of railways (03 percent) followed by hotels and restaurants (0.5 percent) was the lowest (Table 1.01).

Table : 1.01 (see in last page)

Major Services : Overall Performance - Some available indicators of the different services in India for 2013-14 show reasonable good performance of tourism; a pickup in telecom and aviation after the fall in 2012-13; and poor performance of shipping and railways due to the slowdown in trade and industrial activity. Estimates of the Centre for Monitoring Indian Economy (CMIE), derived from limited firm level data, show subdued performance of sectors such as transport logistics, aviation, hotels and telecom in 2012-13. Some sectors like transport logistics and retail trading are estimated to have performed well in 2013-14. As per Markit – HSBC's Services PMI (Purchasing Managers Index), India's services sector expanded for the first time in nearly a year during May on a rebound in new business orders, with the index rising to 50.2 in May from 48.5 in April and pointing to the first expansion of output in 11 months. A reading above 50 shows that the sector is expanding while a reading below 50 shows that output in the sector is contracting

Issues & Suggestions - Many issues both general and sector specific including domestic regulations hinder the growth prospects of the services sector, which if addressed deftly could help the sector and lead to exponential gains for the economy(6).

General Issues -

Nodal agency and marketing - Despite having strong growth potential in various services sub sectors, there is a single nodal department or agency for services. An inter-ministerial committee for services has been set up under the Department of Commerce. But services activities cover issues beyond trade and a more proactive approach and proper institutional mechanism is needed to weed out unwanted regulations and tap the opportunities in the services sector in a coordinated way. There is also need for promotional activities for service exports like setting up a portal for services, showcasing India's competence also in non-software services in trade exhibitions, and engaging dedicated brand ambassadors and experts.

Disinvestments - There is plenty of scope for disinvestment in services PSUs under both central and state governments, Speeding up disinvestment in some services-sector PSUs could not only provide revenue for the government but also speed up the growth of these services.

Credit related - The issues here include 'collateral free' soft loans to support the sector's cash needs and possibility of considering even export or business orders as collateral for credit worthy service firms.

Tax and Trade Policy related - These include use of 'net' instead of 'gross' foreign exchange criteria for export benefit schemes, the issue of retrospective amendments of tax laws like amendment to the definition of royalty to include payment of any rights via any medium for use of computer software, tax administrative measures to tackle delay in refunds, introducting VAT (value added tax) refund for foreign tourists and addressing the issue of bank guarantees based on past performance to avail of export promotion benefits in services.

Sector wise issues - **Tourism and hospitality sector -** India's share in world tourist inflows was only 0.64 percent in 2012 (rank 41), while that of the USA was 6.47 percent (rank 2) and China 5.57 percent (rank 3). India's share in world tourism expenditure is relatively higher at 1.65 percent (rank 16) implying that foreign tourist spend relatively more in India. Singapore, a small country, attracted 11.10 million tourist in 2012, while a large country like India attracted only 6.97 million foreign tourists during 2013. Some suggested measures include creating world class tourism infrastructure even by PPP; addressing multiple taxation issues; skill and etiquettes training to cater to the need to tourists; special focus on cleanliness at tourist sites and safety of tourists; using the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MNGREGA) for creating permanent assets like tourism infrastructure and facilities; organizing mini India cultural shows on a daily basis at important tourist sites that will not only attract tourists but also generate employment for Indian artists; and implementing urgently visa on arrival and E-visa facilities at 9 airports to 180 countries barring '8 prior reference' countries, a decision on which has already been taken.

Port Services - India does not have world class ports with the necessary draft. As a result, third-generation ships are not able to enter the harbour and goods have to be offloaded outside in similar ships, adding to costs. India has made great strides in developing airport infrastructure and laying metro lines. Its immediate focus should be on building world class ports providing world class services that will also help the trade sector by reducing costs and turnaround time in ports. There are also issues like the many port charges in India and the port charges in India being considerably higher than in many developed countries.

Shipping, shipbuilding and ship repairs - Given that the share of Indian ships in the carriage of India's overseas cargo has fallen sharply and Indian ships are ageing, there is urgent need to replace our ageing ships with no ones. While the time is opportune for increasing or shipping fleet, with prices falling on account of global slowdown, a special

financing mechanism needs to be developed. This also brings to focus the importance of India's shipbuilding industry which has the capacity and expertise but is functioning below capacity. Government owned shipyards like Visakhapatnam are facing problems like declining orders. With the need to replace many of our old ships and a growing ship repairs business, special attention can be given be utilizing India's shipbuilding and repairs yards and further enhancing their capacity.

Railways - India's FDI policy restricts FDI in rail transport, except in mass rapid transit systems. FDI and privatization in the railways could be the next big ticket reforms. A proposal has been initiated by Indian Railways, for making suitable changes in the existing FDI policy in order to allow FDI in railways, to foster creation of world class rail infrastructure. The proposal envisages allowing FDI in all areas of the rail sector except railway operations. Even in railway operations, FDI is proposed in PPP projects, for suburban corridors, high speed train systems, and dedicated freight lines. While privatization of railways has been successful in some countries like Japan, it has failed in some others like the UK. So this proposal needs to be examined carefully and quickly to allow privatization/FDI in area where it is feasible.

Challenges - India's growth story with a services led growth has been unique for a developing country. The immediate challenge in this sector is revival of growth. While this could be achieved through reforms and speeding up of the policy decision making, a targeted approach with focus on big ticket service could lead to a rebounding of services sector growth for India. Some services like software and telecom were big ticket items that gave India a brand image in services. While further focus on these services needed to retain and further our lead, the time has come to focus on some other high potential big ticket items that have high manufacturing sector and employment linkages.

Outlook - India's services sector which was growing at a steady rate of over 10 percent since since 2005-06 has shown subdued performance in the last three years. The resilience of services growth witnessed even during and in the aftermath of the 2008 global recession has started waning though services sector growth is still higher than that of other sectors directly affected some service like railways, shipping, ports and other related services on account of the strong linkage effect, other services were affected by the income effect with slowdown in growth of both global and domestic incomes.

There was also lackluster performance of community and social services, which had shown robust growth in 2008-09 and 2009-10 owing to the payment of arrears to government employees as per the sixth pay commission recommendations resulting in high growth in the public administration and defense category. However, the good performance by some important sectors like financing, insurance, real estate and other business services, and community social and personal services other than public administration and defense helped pull up services growth rate to modest levels of 7 or near 7 percent in the last three years.

Going forward, the year 2014-15 seems to augur well for the services sector with expansion in business activity in India as also indicated by some indices. There are also signs of revival in growth of the aviation sector with the announcement of new players, like Air Asia and TATA-SIA Airline after a turbulent period of withdrawals and losses by some airlines. Indications of revival in world GDP and trade growth in general and of developed countries in particular, could help in revival of the tourism and shipping sectors. With a stable government in place and growing optimism which could translate into investment and growth, some quick reforms and removal of some barriers and obsolete regulations in the services sector could help. The downside risk however is the fragile global situation.

Conclusion - The services sector is, at present, the larget contributor to India's Gross Domestic Product (GDP). The growth of services sector GDP has been higher than that of overall GDP during 2000-01 to 2013-14. Despite deceleration, services GDP growth at 6.8 percent was above the 4.7 percent overall GDP growth in 2013-14

India's capacity for innovation has been lower that that of other BRICS Countries except Russia. India has not tapped the full potential of its Tourism Sector and has not been able to comparative advantage. The share of ships in India's overseas trade has declined sharply from 40 percent in the late 1980s to 9.1 percent in 2012-13 and the existing fleet is also ageing, there is urgent need to increase India's shipping fleet. Some services like software and telecom were big ticket items that gave India a brand image in services. The time has come to focus on some other high potential big ticket items that have high manufacturing sector and employment linkages. There are signs of services sector revival in 2014-15. Some quick reforms and removal of barriers and obsolete regulations could further help this revival.

References :-

1. Suresh D. Tendulkar, "India's Growing Services Sector : Database problems and issues" EPW, September 15, 2007, P-3721
2. Jim Gordon and Poonam Gupta, "Understanding India's Services revolution", paper prepared for the IMF – NCAER Conference, November 12, 2013, P-2
3. Sunil Jain and T.N. Ninan, "Servicing India's GDP Growth". In Shankar Acharya and Rakesh Mohan, (ed), India's Economy : Performance and Challenges, (Delhi 2010), P-120
4. The Hindi, Thursday, November 13, 2014, P-9
5. Economic Survey 2013-14, Oxford University, press page No. 173-174
6. Dr. Prasad HAC, Sathish R. Singh, "Emerging Global Economic Situation : Opportunities and Policy issues for Service Sector, working paper, ministry of finance, January 2014."

Table : 1.01 Share and Growth of India's Service Sector (at factor cost)

	2001-01	2011-12	2012-13	2013-14
Trade, Hotels, & Restaurants	14.5 (5.2)	17.4 (1.2)	17.2 (4.5)	24.0 (3.0)
Trade	13.2 (5.0)	15.9 (1.0)	15.8 (4.8)	-
Hotels & Restaurants	1.3 (7.0)	1.5 (3.8)	1.4 (0.5)	-
Transport, Storage & Communication	7.6 (9.2)	7.3 (9.4)	7.5 (6.0)	-
Railways	1.1 (4.1)	0.7 (7.5)	0.8 (0.3)	-
Transport by other means	5.0 (7.7)	5.4 (8.6)	5.6 (6.6)	-
Storage	0.1 (6.1)	0.1 (2.9)	0.1 (8.6)	-
Communication	1.5 (25.0)	1.1 (11.2)	1.1 (6.5)	-
Financing, insurance, real estate & business services	14.1 (3.5)	16.5 (11.3)	17.2 (10.9)	18.5 (12.9)
Banking & Insurance	5.4 (-2.4)	5.7 (12.9)	5.9 (11.8)	-
Real Estate,ownership of dwellings& business services	8.7 (7.5)	10.7 (9.9)	11.4 (10.0)	-
Community, social & personal services	14.7 (4.6)	13.8 (4.9)	14.3 (5.3)	14.5 (5.6)
Public administration & defense	6.5 (1.9)	5.9 (4.2)	6.0 (3.4)	-
Other services	8.2 (7.0)	7.8 (5.4)	8.2 (6.8)	-
Construction	6.0 (6.1)	8.2 (10.8)	8.1 (1.1)	7.5 (1.6)
Total Services	51.0 (5.1)	54.9 (6.6)	56.3 (7.0)	57.0 (6.8)
Total Services (including Construction)	57.0 (5.2)	63.1 (7.1)	64.4 (6.2)	64.8 (6.2)
Total GDP	**100.0 (4.1)**	**100.0 (6.7)**	**100.0 (4.5)**	**100.0 (4.7)**

Source : Central Statistics Office (CSO).
Notes : Share are in current prices and growth in constant prices. Figures in parentheses indicate growth rate; * first revised estimates, @ second revised estimates, ** provisional estimate; # includes the combined share and growth of trade, hotels, & restaurants and transport, storage & communication for 2013-14.

****

A Comparative Study Of Non-Fund Based Income And Fund Based Income

Dr. L.N.Sharma * Priyanka Bharti **

Abstract - India moved towards liberalization after 1991 , banking sector in India is becoming increasingly more competitive. Liberalization policy introduced in the banking sector in India led to consolidated competition, efficient allocation of resources and introducing innovative methods for mobilizing of saving. After nationalization and prior to liberalization bank business was mainly focused towards interest earning activity by way of loans and advances which was guided by the administered rates. Banks have now become provider of a wide range of solution.

As a result, banks have increasingly turned to new non-traditional financial activities as a way of maintaining their position as financial intermediaries. The objective of this research study was to compare and analyze the Non- fund based income of Indian banking industry.

The Variable used as an inputs and outputs give us some insight about the non-fund based activities of banks in India. Although these study shows that banks in India have expanded into fee based income activities present higher risks and higher insolvency risks than bank which mainly supply loans.

Introduction - "With the monetary system we have now, the careful saving a lifetime can be wiped out in an eye blink" (Larry Parks, Executive Director, FAME)

Could you imagine a world without banks? At first, this might sound like a great thought but "banks and financial institutions" have become cornerstones of our economy for several reasons. They transfer risk, provide liquidity, facilitate both major and minor transaction and provide financial information for both individuals and business.

The financial sector reforms in India are an integral part of the overall. Program of economy reforms aimed at in proving productivity and efficiency. Moreover having initiated fundamental changes, the financial sector, particularly the banking sector is now under an obligation to demonstrate the efficiency of the reforms undertaken so far. Banking Industry is a part of the changing business paradigms, across the globe. Especially banking sector is one of the largest contributing forces to the growth of Indian economy.

In a market driven banking sector, competition is the most dynamic element. Due to market competition in Indian Banking industry, the pattern of banking business is changing phenomenally continuous exploration of scope in market would demand a brilliant focus on emerging opportunities and convert that opportunities into competitive strength that call for the competitive strategy and facilities.

The major income of the bank is interest income. But now a days bank are also offering wide range services like shopping, ticket booking, fund transfer and also entered into mutual fund, insurance, financing export service. In present age banking sector provide a world class non-fund base facilities to the customer.

A number of studies have been conducted in India and abroad on banking sector. Especially non-fund based income an attempt is made here to brief review on non-fund based income.

All banks are eager to go for fee based activities to a large extent with various sources of income. At Present, the banking sector income is divided into two major parts i.e. interest income and non- interest income. The structure of income is given below :

1. Interest Income -
a) Interest / Discount
b) Income on Investment
c) Balance with RBI
2. Non- Interest Income -

Four Component Of Non-Fund Based Income

Name of non-fund based income	Example
Fiduciary income	• Administrating investment for others. • Gross income from services rendered by the bank's trust.
Service charges in deposit account	• Maintenance of deposit account. • Failure to meet minimum balance excess check writing. • Withdrawals from non-transaction account. • Early withdraw or closure fee. • Dormant account. • Extensive activity. • ATM usage. • Bound check charges and other fee.

* Professor (Commerce) Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA
** Research Scholar (Commerce) Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

Trading Revenue	• Net gain or loss from trading cash each instrument. • Off balance sheet derivatives contracts. • Sales of assets and other financial instruments. • Revaluation to carrying value of assets and reliabilities due to marking to market. • Revaluation of interest rate. • Foreign exchange. • Equity Derivatives. • Commodity and other contract due to marketing to market. • Incidental income related to purchase and sale of assets and liabilities.
Fee and other Income	• Service charges. • Commission. • Safe Deposit Boxes. • Insurance sales. • Bank Draft. • Money order. • Bill collection. • Saving of acceptances and letters of credit. • Mortgage servicing fees. • Notary. • Consulting and Advisory Services. • Credit card fees. • Merchant credit and charges. • Rental fees • Loan Commitment fees • Net gain on sale of real estate • Foreign Transaction.

It is therefore, important to examine to what fee-based income contributes to total income. These days, banks are competing on the basis of fee-based activities by launching innovative products/services. Non-interest income is a vital part of total income of the banks and it may create stability in bank income .

Objective Of The Study -

- To study and analyze the trends in interest income and non-interest income in the era of deregulation.
- To find out various ways and means to entrance the non-interest income.
- To examine the contribution of non-fund based income in the financial efficiency an pattern of services of the selected banks.
- To make a relative comparison of the non-fund based income of the selected banks.

Methodolgy - This is the conceptual one with detailed review of literature for the purpose of study. The data shall be collected from the records, documents, related subject matter and related websites. besides, the researcher shall collect and analyze published data as per requirement. The data regarding selected banks have been obtained and collected from the annual report of the banks and related websites.

Literature Review - Prof. Singh, Y.P. Prof. Seth . A.K. & Prof. Rajput, Bhavana tried to examine the link between the revenue portfolio and risk in the adjusted performance of banks in Indian context. “Indian Journal of Finance and Research (2006-07)”.

Traditionally it is believed that earning from non-interest income generating revenue are more stable them loan based earning and the increases focus on these activities, overall revenue and profitability volatility via diverfication effects.

Zhou Haowen & Wong Ting(2008) find that there was a strong fluctuation exists in non-interest income. Once diversified benefits decreases or disappears, Strong fluctuation of non-interest is sure to intensity the fluctuation of the strong fluctuation of non interest income is sure to intensity the fluctuation of the whole income, which is not helpful for the healthy operation of commercial banks.

Mahadevan (2002) describes some major changes in the bank business occurring during the financial reforms, period, affection the profitability. He has given wide variety of strategies to increase non-interest income. Nash (1993) found that credit card specialization gives higher and more voliate returns than the conventional product mixes. Rosie & Wood (2002) studied in their working paper the income structure of European banking sector with the help of time series and cross sectional analysis. They concluded that non-interest income has increased but does not fully offset the reduction in the interest margin are non-interest income is much more volatile than interest income.

Non Fund Based Income Of Public Sector Banks
State Bank Of India

Year	Non Fund based income (crore)	Fund based Income (crore)	Total Income (crore)
2009	12691.35	63188.43	76479.78
2010	14968.15	70993.92	85962.07
2011	14930.42	81394.36	96324.78
2012	14351.45	106521.45	120812.90
2013	16034.84	119657.10	135691.94
Average	14595.242	88474.652	120761.224

The above table shows the Non-fund bases income of state bank of India from the year 2008 to 2013 non-fund based income was highest Rs. 16034.84 crore in year 2013 and it was lowest Rs. 17691.35 crore in the year 2009. After year 2009 non-fund based income representing continuous increasing trend in the year to year. The average non fund based INCOME is Rs. Crore only 2008 income was higher than average non-fund based income

Non Fund Based Income Of Public Sector Banks Icici Bank

Year	Non Fund based income (crore)	Fund based Income (crore)	Total Income (crore)
2009	8117.76	31092.55	39210.31
2010	7292.43	25706.93	32999.36
2011	6647.89	25974.05	32621.94
2012	7502.76	33542.65	41045.41
2013	8345.70	40075.60	48421.30
Average	7581.308	31278.356	38859.664

The above table shows the Non-fund bases income of ICICI Bank from the year 2009 to 2013 non-fund based income was highest Rs. 8345.70 Crore in year 2013 and it was lowest Rs. 6647.89 Crore in the year 2011.. The average non fund based income is Rs.7581.308 Crore. Non fund based income of the year 2009, 2013 was higher than average non-fund based income.

Suggestions - " Banks in the Businesses of maintaining risk not avoiding it "

We deem it desirable to review the various aspect of over study and sum up the important observations. As such, this chapter epitomizes the major findings and offer new suggestion for the increasing non-fund based. Income of banking industry in India.

1. The banks in India need to focus at ensuring greater financial stability to tackle lots of challenges successfully to keep growing and strengthen of banking sector.
2. For the financial repression construct Indian banking industry have to focusing and concerning the challenges, strategy pre-emption and directed credit.
3. Banking sector in India need to move towards a more market based system for to create the sound and condition for well functioning of a market based banking system .
4. Public sector banks required to set up modem IT infrastructure in place within a short time of period.
5. Both of banks need to expand branches in rural area.
6. required to launch innovative products and services as per the customer's expectation.
7. Banking sector in India need to start moving into areas that yield non-fund based income activities that earn more income than interest income.
8. Banking sector extend the technology which is used in internal order to remove the difficulties.
9. Banks should in India need to require risk management in order to remove the difficulties.
10. Bank should prove the services in different language.

Conclusion -

For every beginning, there is an end ;
For every ending, there is a beginning

All those developments in Indian banking are says that the Indian banks are moving towards modern banking changing a face of traditional banking of Indian economy . It is grate change of banking industry. They having a installing an information technology for banking business and they trying to provide technology based banking products and services to their customers, Indian banks also trying to universilization of banking products and services to one top banking shop for customer delight, but comparatively private and foreign banks existing in Indian economy are having a higher level of modernization and those providing numbers of modern services to their customers. For a long term success of banking institution to require effective management of credit risk and diversified into fee based activities. Non-traditional activities of banks are more sophisticated and versatile instrument for risk assessment.

It is tempting to conclude that interest based, intermediation activities have been become less central to financial health and business strategy of the typical commercial banks andthat fee based non-intermediation financial services have been more important.

References : -

1. RBI report on term progress of banking in India.
2. Consolidated report of condition and income, call report
3. Coulthelen, V."Management in banking" Sultan chand 2 sons
4. Desai, C.I. "Analyzing Productivity in Banking Concepts and Methodology", Prajanan Publications.
5. Rao Ramchandra, "Present Day Banking in India" 1st Edition.

Websites/Portals -

1. www.moneycontrol.com 2. www.sbi.com
3. www.icicibank.com 4. www.expressindia.com

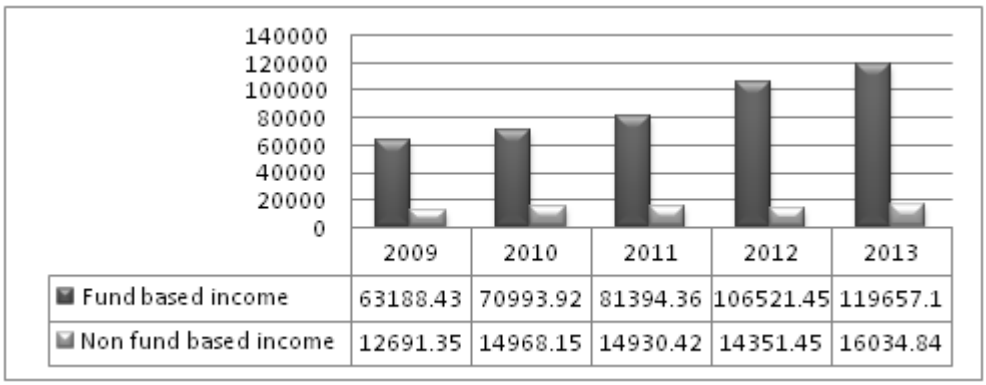

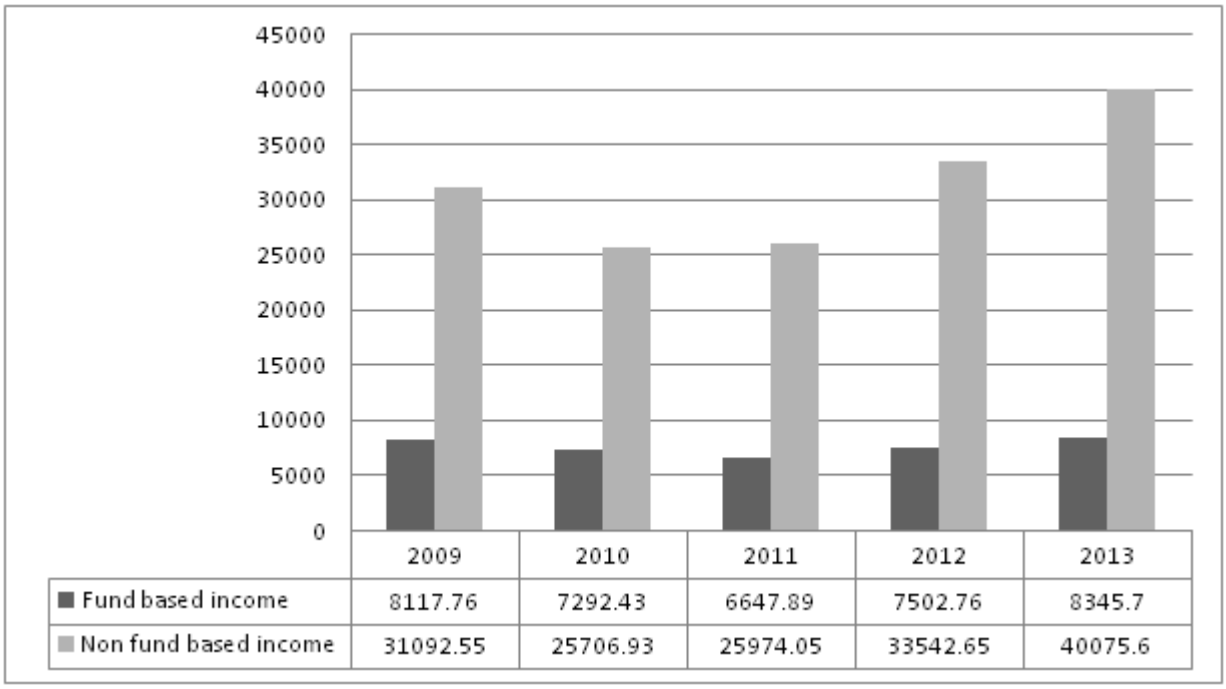

	2009	2010	2011	2012	2013
Fund based income	8117.76	7292.43	6647.89	7502.76	8345.7
Non fund based income	31092.55	25706.93	25974.05	33542.65	40075.6

****

Women's Empowerment through the Entrepreneurship

Dr. Ashish Pathak * Dr. Reeta Chawla **

Abstract - Empowerment refers to increasing the spiritual, political, social and economic strength of individuals and communities. Entrepreneurship is a way to empower women by which she is able to stand in front of the society. It actually gives capacity to women to cope up with the obstacles in their life. Entrepreneurs are the backbones of any economy. Therefore it is necessary to nurture the quality of entrepreneurship among the people and to avoid entrepreneurial failures. Women entrepreneur are the women who think of a business enterprise initiate it, organize and combine the factors of production, operate the enterprise and undertake risks and handle economic uncertainty involved in running a business enterprise by nut shell. The women should be provided with adequate training in development of entrepreneurial skills covering management of enterprises, maintaining account, enhancing productivity, marketing, selling etc, So that they can undertake income generating activities. The international agencies and the national government should adopt appropriate measures to encourage women for their development through the entrepreneurship.

Keywords: Empowerment, Women entrepreneur, adequate training, development, skills.

Introduction - Entrepreneurship is a way to empower women by which she is able to stand in front of the society. It actually gives capacity to women to cope up with the obstacles in their life. Women entrepreneurs can more easily undertake three types of industrial enterprises:

- Operate purely as a sub-contractor on raw materials provided by the customer;
- Manufacture an item to the long or short term order of another enterprise usually a large scale unit; and
- Manufacture the item for direct scale in the market; generally, the first two types of enterprises are known as ancillaries. Women entrepreneurs produce both consumer goods and intermediate goods which are used in the production of other articles.

Objectives of the Study -

- To find the Role of entrepreneurship for the Empowerment of women.

Methodology - This Paper' is based on Secondary data which are published in the Books, journals, University News, websites, newspaper, articles and summary of different souvenirs on this particular topic.

Opportunities for Women Entrepreneur - The entry of women entrepreneurs in the conventional product is justified on the grounds that they have acquired the required skills to produce and introduce products traditionally. If they could excel in these product lines, let them excel. But at many all-India level surveys have proved that in recent years, women entrepreneurs have entered all fields of "business and industry." In the last decade, there has been a remarkable shift in from the manufacturing industry to the service industry. considering this, some important opportunities are identified for the women in urban areas:

- Computer services and information dissemination.
- Trading in computer stationary.
- Computer maintenance.
- Travel and tourism.
- Quality testing, quality control laboratories.
- Sub-assemblies of electronic products.
- Nutrition clubs in schools and offices.
- Poster and indoor plant library.
- Recreation centers for old people.
- Culture centers.
- Screen printing, photography, and video shooting.
- Stuffed soft toys, wooden toys.
- Mini laundry, community eating centers.
- Community kitchens.
- Distributing and trading of house hold provision as well as saris, dress materials, etc.
- Job contracts for packaging of goods.
- Photocopying, typing centers.
- Beauty parlors.
- Communications centers like STD booths, cyber cafes, etc.
- Crèches
- Catering services
- Health clubs, etc

Opportunities for women in semi-urban areas - Considering the socio-economic, cultural and educational status and the motivation of women in semi-urban, particularly projects with low investments, low technical

* **Professor (Commerce)Shri Atal Bihari Vajpayee Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.) INDIA**
** **Asst. Professor (Commerce) M.K.H.S. Gujarati Girls College, Indore (M.P.) INDIA**

know-how and assured market are suggested for the Improvement opportunities identified for semi-urban women are enlisted below:

- Production of liquid soap, soap power, detergents, deodorants etc.
- Office stationary like cushion pads, gum, ink pads etc.
- Convenience, readymade, instant food products including pickles, spices, papads etc.
- Community kitchens.
- Communication services.
- Different types of training and coaching classes.
- Child care centers and cultural centers for children.
- Nursery classes.
- Manufacturing of leather goods.
- Garments.

Opportunities for women in rural areas - In the recent industrial policy, the government has given tremendous importance for the agro- based products and allied products; only one to two percent of the total production of fruits and vegetables is processed every year in India. This reveals a huge scope for the food, fruit and vegetables processing industry. Women have a natural flair and instinct for food preparation and processing. A new market is developed for the processed fruits and vegetables in form of baby foods, ice cream, convenience food, cold drinks, canned products, traditional medicine preparations etc. Thus, there are plenty of opportunities available for women entrepreneurs.

- **Problems of women entrepreneurs -** Women entrepreneurs encounter two sets of problem, i.e., general problems of entrepreneurs and problems specific to women entrepreneurs. These are discussed as follows:

1. Problem of Finance - Finance is regarded as "life-blood" for any enterprise, be it big or small. However, women entrepreneurs suffer from shortage of finance on two counts: Firstly, women do not generally have property on their names access to the external sources of funds is limited. Secondly, the banks also consider women less credit-worthy and discourage women borrowers on the belief that they can at any time level their business. Given such situation, women entrepreneurs are bound to rely on their own savings, if any and loans from friends and relatives who are expectedly meager and negligible. Thus, women entrepreneurs fail due to the shortage of finance.

2. Scarcity of Raw Material - Most of the women enterprises are plagued by scarcity of raw material and necessary inputs. Added to this, the high price of raw material, on the one hand, and getting raw material at the minimum of discount, on the other. The failure of many women co-operatives in 1971 engaged in basket-marking is an example how the scarcity of raw material sound the death-knell of enterprises run by women.

3. Limited Mobility - Unlike men, women mobility in India is highly limited due to various reasons. A single women asking for room is still looked upon suspicion. Cimber some exercise involved in starting an enterprise coupled with the official's humiliating attitude towards women compels them to give up idea of starting an enterprise.

4. Family Ties - In India, it is mainly a women's duty to look after the children and other members of the family. Man plays a secondary role. In case of married women, she has to strike a fine balance between her business and family. Her total involvement in family leaves little or no energy and time to devote for business. Support and approval of husbands seem necessary condition for women's entry into business. Accordingly, the educational level and family background of husbands positively influence women's entry into business activities.

5. Lack of Education - In India, around three-fifths (60%) of women are still illiterate illiteracy is the root cause of socio-economic problems. Due to the lack of education and that too qualitative education, women are not aware of business, technology and market knowledge. Also, lack of education causes low achievement motivation among women. Thus, lack of education creates problems for women's for the setting up and running of business enterprises.

6. Male-Dominated Society - The Constitution of India speaks of equality between sexes. But, in practice, women are looked as unable, i.e. weak in all respects. Women suffer from male reservation about a woman's role, ability, capacity and are traded accordingly.

7. Low Literacy - Low literacy level hinders women in carrying out their activity as entrepreneur. Lack of education handicaps their grasps of technological and marketing knowledge.

In addition to above problems, low risk bearing, inadequate infrastructural facilities, social attitude, low need for achievement etc also hold the women back from entering in to business.

Suggestions -

1. Provide education or vocational education and technical education to girls and women. The contents of their education include accountancy, management, computers, entrepreneurship development etc.
2. To motivate the women, a coordinated effort should be made among the Educational Institutions, Government departments and the business world.
3. Setting up of special Institutions would help to upgrade their skill and acquire new techno- managerial knowledge so that they could go in for innovative technologies of production and financial institution for the financial support.
4. The crimes against women fly directly against orchestrating women empowerment in India. Preventing crime against women and fostering a safe environment for women through the Indian Law Act.
5. Arrangements of "Awareness and motivational programmes" for spreading awareness in the society.
6. The international agencies and the national government should adopt appropriate measures to encourage

women for their development through the entrepreneurship.

7. Training and capacity building on various issues like Leadership, Legal rights etc.

Conclusion - Empowerment encourages people to gain the skills and knowledge that will allow them to overcome obstacles in life or work environment and ultimately, help them develop within themselves or in the society. To empower a female "...sounds as though we are dismissing or ignoring males, but the truth is, both genders desperately need to be equally empowered."Empowerment occurs through improvement of conditions, standards, events, and a global perspective of life.

References -

1. Gordon, E. & Natarajan, K, Entrepreneurship Development, Himalayas Publication House, 2013.
2. Khanka. S.S, Entrepreneurial Development, S.Chand & company Ltd, 2005.
3. Sharma Dr. Sudhir, Singh Balraj, Singhal Sandeep, Entrepreneurial Development, Wisdom Publications , 2005.
4. Taneja Satish and Gupta Dr. S.L, Entrepreneur Development, Galgotia Publishing Company, 2001.
5. Soundarapandian, M, Women Entrepreneurship: Issues and Strategies, Kanishka publishers, Distributors, 1999.

Journals & Reports -

1. Mission poorna sakti ... hum sunege naari ki bat Brochure of National Mission for Empowerment of women Ministry of Women and child development, Govt. of India.
2. Title: WOMEN ENTREPRENEURSHIP IN INDIA-PROBLEMS AND PROSPECTS Authors: Meenu Goyal; Jai Parkash (www.zenithresearch.org.in) Publish- -ed in International journal of multidisciplinary research vol.1 issue 5,Sept 2011)
3. Title: Women Entrepreneurship in India: Opportunities and Challenges Author : Gurendra Nath Bhardwaj, Swati Parashar, Dr. Babita Pandey, Puspamita Sahu (www.chimc.in)
4. Title: Women entrepreneurs in India - Emerging issues and challenges Author Dr. Vijayakumar, A. and Jayachitra, S (www.chimc.in)
5. Title: Women's Empowerment and Economic development Author Duflor Esther (www.nber.org./papre/w17702)

Web References -

1. http://www. Google.co.in
2. http://www.women empowerment.com
3. http://www.zenithresearch.org.in
4. http://www.nber.org
5. http://www.chimc.in

****

Changing Dimension in Human Resource Management

Namrata Ganguly * **Priyanka Kurup** **

Abstract - The present research paper is an attempt to analyze the changing dimensions of human resource management in the present era right from its evolution. There has been drastic change in the dimensions of Human Resource Management from the development of personnel management to Human resource management, strategic human resource management and e-Human resource management. The research has tried to find out different dimensions in the human resource management function and its changing role, emerging issues and ways to overcome them.
Keywords - Change, dimension, Human Resource Management

Introduction - Human resource management (HRM or simply HR) is the term commonly used to describe all those organisational activities concerned with recruiting and selecting, designing work for, training and developing, appraising and rewarding, directing, motivating and controlling workers. In other words, HRM refers to the framework of philosophies, policies, procedures and practices for the management of the relationship that exists between an employer and worker.

Following are the five broad functions of HRM, central to managing the workforce:

- **People resourcing** – Ensuring adequate staffing for current and future business needs through activities that include human resource planning, recruitment, selection induction, talent management, succession planning and the termination of the employment relationship (including managing retirement and redundancy).
- **Managing performance** – Managing individual and team performance and the contribution of workers to the achievement of organisational goals, for example, through goal-setting and performance appraisals.
- **Managing reward** – Designing and implementing reward and pay systems covering individual and collective, financial and non-financial reward, including employee benefits, perks and pensions.
- **Human resource development** – Identifying individual, team and organisational development requirements and designing, implementing and evaluating learning and development interventions.
- **Employment relations** – Managing employee 'voice', communication and employee involvement in organisational decision-making, handling union management relations (including industrial action and collective bargaining over terms and conditions of employment), managing employee welfare and handling employee grievance and discipline.

The Emergence of HRM - The significance of HRM in contemporary firms is to discuss in greater depth the more specific meaning attached to HRM, as it helps to explain why and how the term 'human resource management' came to be so widely used. The term 'personnel management' has traditionally been used in British companies (and more widely) to denote the area of managerial activity, most usually a distinct department, that is principally concerned with administering the workforce (for example, in respect of payroll and contractual issues), providing training, ensuring legal compliance (for example in the area of health and safety) and managing collective industrial relations between the firm and trade unions.

In many firms, personnel management has traditionally been constituted as a support function, existing on the periphery of organizational and strategic decision-making, which held a relatively low operational status Redman and Wilkinson, (2006). In the mid-1980s, however, patterns of innovative forms of people management began to emerge that held more strategic ambitions Storey,(2007). Subsequently, over the course of the past three decades, people management has gradually developed and, whilst acknowledging that in many firms HRM remains marginalized and primarily an administrative function, for many firms its scope is rather wider today than in the past. Torrington et al. (2008) suggest that rather than representing a revolution in people management practices, the emergence of HRM represents an evolution towards more effective practice. HRM is taken up by people in charge of any human enterprise in which work tasks are undertaken and where there is a concern for that enterprise to continue into the future as a viable social and economic unit.

I is the latest incarnation of historical attempts to allocate work tasks within a social group and to compel each member of that group to make best use of their individual knowledge, behaviours and capabilities for the greater organisational success.

Changing dimension in HRM – The **HR Management** has several dimensions in the organization as it supports the

* **Asst.Prof. (Commerce & Management) Career College, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA**
** **Asst.Prof. (Commerce & Management) Career College, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA**

organization in its growth and competitiveness. **HR Management dimensions** need to be identified by organisation. The HR Function has to design processes, policies and procedures in all dimensions. The non-presence of HR dimensions will make the organization weak. With the changing scenario HR management dimension also changed. Some of them are as follows -

- **Development of Personnel Management to Human Resource Management -** PM is basically an administrative record-keeping function, at operational level. PM tries to keep fair terms and conditions of employment, although at same time, efficiently managing personnel activities for individual departments etc. It is expected that results from providing justice and achieving efficacy in management of personnel activities will outcome ultimately in attaining organizational success. Broadly, 'personnel management' may be described as: All management decisions and actions that directly affect people as members of the organization rather than as job-holders. The origins of traditional concept of PM can be drawn to the post World War One 'welfare tradition' of concern for the basic needs of employees. The developing and mature phases of PM from the 1940s to the 1970s saw an rise in the status and professionalization of the personnel function, particularly in relation to industrial relations matters.
- **Strategic Human Resource Management as a response to challenges of globalisation -** The world has undergone a dramatic change over the last few decades, the forces of globalization; technological changes have greatly changed the business environment. Organisations were required to respond in a strategic manner to the changes taking place in order to survive and progress. Strategic Human Resource Management involves a set of internally consistent policies and practices designed and implemented to ensure that a firm's human capital contribute to the achievement of its business objectives. It provides basis for strategic analyses which examines organisational context and current HR practices focusing on strategic policies for improvement of HR strategies.
- **e- Human Resource Management -** e-HRM method do not simply apply technology in care of HR but in its place see technology as permitting the HR function to be done contrarily by changing "flows of information, social interaction patterns, and communication procedures". We can define e-HRM which emphasizes the Internet-supported way of performing HR activities 'e-HRM uses IT in a dual manner: First, technology assists as a medium with goal of linking and incorporation in a office or on different countries. Second, technology assists actors by partly or completely – replacing for them in performing HR activities. Hence, IT serves furthermore as a tool for job fulfilment. The common execution of tasks through at least two performers' points out that sharing of HR tasks is an added feature of interaction and networking. e-HRM is multilevel phenomenon; there are collective performers i.e. groups, organizational units and whole organizations. e-HRM ,is particularly web-orientated also contains additional technologies like networked ERP-Systems.

The changing HR function - As the high-commitment perspective on HRM has developed since the 1980s so has the role of HR managers and specialists. The HR profession has undergone a significant transformation reflecting the increased responsibility placed upon it to deliver improvements in workspace performance; a 'mission' at odds with the traditional outsider status of the personnel functions. In line with the movement of HRM to centre stage in its perceived ability to contribute to the sustained competitive advantage of the firm, the HR function in some organisations has shifted from a predominant emphasis on operational issues to a more strategic focus Francis and Keegan, (2006). Stanton and Coovert (2004) suggest that the HR function can be divided into three broad, interlocking functional areas:

- **Administrative –** HR professionals ensure the organisation's compliance with regulatory structures (including organisational policy and employment law) as they relate to personnel activities such as recruitment and dismissal
- **Financial –** HR professionals research, recommend, and manage the organization's use of monetary rewards and perquisites.
- **Performance –** HR professionals develop, deploy and maintain organisational policies and practices that allow workers to create the greatest possible value with the available 'human capital' (for example, training, performance management, talent management)

Issues in changing HRM dimension -

- **Increasing cut-throat competition -** Currently, organizations are facing increasing internal and external competitions.The size and complexity of organizations are increasing day by day. To face these growing challenges of competition, innovative human resource management and practices are needed.
- **Globalization -** Globalization of markets and manufacturing has vastly increased international competition. Those firms who have been successful have highly focused on their human resources activities in selection, training and compensation policy. Due to this fact many firms are paying their interest in human resource management.
- **Technological changes** - Technology is changing rapidly. Organizations must keep up pace with technological changes and implement them in the workplace. Technology is only the mean to increase productivity. To utilize this mean needs the skilled man power, who can handle it easily and efficiently. Due to this fact, there is the need of human resource management
- **Work-force diversity** - It is human resource management which brings all the people of different nature under the same umbrella of organization. It is the most significant task done by human resource management, which other management cannot perform. This has played a vital role in rising interest in human resource management.
- **Nature of work** - Technological and globalization trend

has changed the nature of jobs and works. Development on information technology has completely changed the formulation of

working style. 1 person with the help of computer can do a work, which needs 10 people to complete before. To work with computers, trained human resources are needed. This is also a reason, which has caused rising interest in human resource management.

Suggestions -

- Cross cultural training of HR personnel so that they understand other cultural people.
- Motivate professional personnel more and more so that do not change organisation more frequently. Non financial motivation like encouragement, training employee, job satisfaction can be done.
- HR should adopt the change at the internet speed.
- Shifting HR strategy with the changing economy – strategy of HR should be agile, capable of flexing and adaptive to changes in the economy.
- Technical changes in the workplace often require the implementation of additional training for workers. Human resource managers must also determine when it may train existing employees, and when it must search for new workers to fill technical positions within the organisation.
- Training of HRIS – Human resource information system should be given to the HR managers or HR professional so that they can overcome information technology challenges.
- Proper performance evaluation system evaluation system and proper career development plans should be used in the organisation to reduce professional mobility.

Conclusion - HR practice is becoming more and more challenging day by day; they have to face lot of problems like retention, attraction of employee, dealing with different cultural people, managing workforce diversity, technological and informational changes. To overcome with these challenges training (cross cultural training and technological and informational training) is necessary of HR people. To reduce mobility of professional personnel, HR people have to motivate them by monetary and non-monetary techniques. Proper performance evaluation system and proper career development plans should be used in the organisation to reduce professional mobility. More importantly the internal and external environment of business is changing at a faster rate. Therefore, HR personnel need to flexible in their approach to deal with the growing complexities of the business.

References :-

1. Agarwal, Tanuja 2007.Strategic Human Resource Management Oxford Publication
2. Challenges for HRM http://risings.150m.com/project/marketing/hrm.
3. Francis, H., & Keegan, A. (2006). The changing face of HRM: in search of balance. Human Resource Management Journal, 16(3), 231-249.
4. http://www.sagepub.com/wilton2/Wilton%20Chapter%201.pdf
5. J. Storey (ed.) (2007) Human Resource Management: A Critical Text (3rd edn)
6. Redman,&Wilkinson, (2006). Contemporary human resource management: text and cases.Pearson Education.
7. Stantan & Coovert, (2004) Human Resource Management: The Intersection of Information Technology and Human Resource 43(2 3), 121-125
8. Torrington et al (2008). Fundamentals of human resource management: managing people at work. Pearson Education.

****

Role And Contribution Of Cottage Industries In The Economic Development Of India

Dr. Vijay Grewal *

Introduction - A cottage industry is one which is carried on wholly or primarily with the help of the members of the family either as a whole time or as a part-time occupation. There are various types of cottage industries. The first category consists of those cottage industries which provide supplementary occupation to the cultivator, e.g., handloom weaving, basket making, rope-making etc.

The second category consists mostly of village crafts like blacksmithy, carpentry, oil-pressing by ghanis, pottery, village tanning industry, handloom weaving by professional village weavers.

The third category covers those cottage industries which in urban areas provide whole time occupation to the workers engaged in them, e.g., wood and ivory carving, toy making, gold and silver thread making, brass utensils, shoe making and carpet weaving etc.

In the modern technological age when most of the old cottage industries have become out-dated or have lost their economic viability, new ones have emerged to give even full time employment to those who go in for them. Electronics has revolutionized the very concept of cottage industry. A large number of jobs are carried out by the computers. The makers in cities are dotted with small shops and establishments which are carrying on a good business in electronic typing, printing, cyclostyling, photostating, scanning etc. Thus these small occupation have come to have good employment potential.

The causes for establishment of cottage industries -

Firstly, cottage industries are labour intensive. A given amount of investment in a cottage industry may provide employment to more people than the same amount of investment in a large scale undertaking. This is of great importance for a country like India where the number of the underemployed and unemployed is very large. Japan is a singular example of a country which has scared the spectre of unemployment far away from its territory by establishing cottage or small scale industries to their optimum level.

Secondly, cottage industries require a meagre amount of investment for turning out manufacture goods. They are what is called Capital light. They thus make possible economies in the use of capital. As capital is very scarce in a developing country like India, it will cut much ice in the direction of industrialization if small scale or cottage industries are established in as large a number as possible.

Thirdly, apart from making economies in the use of capital, cottage industries may call into being capital that would not otherwise have come into existence. The spread of industries over the country-side would encourage the habits of thrift and investment in the rural areas. Moreover, the small entrepreneur would try to arrange for a capital with the help of his relative and friends. There are examples galore of great enterpreneurs who started as managers of a cottage industry and by ploghing their earnings back in the industry systematically succeeded in rising to the present status. The great American industrial tycoon Ford started as a Simple ordinary blacksmith.

Fourthly, cottage industries are skill-light. A large scale industry requires a host of paraphernalia and a large spectrum of skilled-foremen, engineers, accountants, and so on. Like capital these skills in a very short supply in our country and it is important to economize as much as possible in their use.

Fifthly, cottage industries depend far less on imported equipment and material than large-scale industries. Large-scale industries require huge imports in the form of equipment and material, thereby upsetting the country's balance of payments. Further, investment in cottage industries has quicker return than in the large-scale ones. Japan owes its present prosperity to the large number of the pulsating cottage industrial complexes in every town and village.

Sixthly, cottage industries preclude the chances of concentration of economic power in the hands of a few people. They make for a more and fairer distribution of income and wealth. Large-scale industries, on the other hand, tend to concentrate large incomes and wealth in a few hands. This state is repugnant to the very idea of establishing an egalitarian society in India. Gandhiji had focused on this virtue of cottage industries.

Seventhly, cottage industries help in the spiritual upliftment of people engaged in them. Heavy industry has dehumanized humanity and filled man with gross materialism. Prolonged engagement in a fruitful occupation yielding sufficient income keeps the devil in man away. Gandhiji had faith in the

* Asst. Professor (Commerce) Shri Vaishnav College of Commerce, Indore (M.P.) INDIA

spiritualizing qualities of cottage industries and hence advocated their promotion. The personnel engaged in turning out handlooms goods, or working in the sale of finished goods in Gandhi Khadi Ashrams invariably succeed in impressing the customer with their simplicity, courtesy and whatever little manner one can except. On the other hand the so-called big people flushed with enormous amount of capital and black money earned through large scale industries flaunt snobbery, superiority complex and sophistication of a repulsive variety.

Seen from an environmental angle, the cottage industries are largely free from pollution problems. Large scale industries have already contributed to environmental degradation beyond repair and further additions to them in advanced countries are bound to spell disaster. The further of mankind now lies with cottage industries and only least with large scale ones.

Thus we have seen from various angles that cottage industries can play a very important role in India's economy but they can do so if the difficulties they are faced with are removed.

Cottage industries and their importance -Cottage industries occupy an important place in the economy of India. India is a predominantly agricultural country. About seventy percent of our country's population depends on agriculture. In India agriculture can be termed the largest and the most important industry. Agriculture is a seasonal industry which does not provide any work to the agriculturists for about three to four months in a year. The women and the old are without any useful employment almost throughout the year. Cottage indutries can provide them some gainful employment and add to their income. They can increase the total production in the country as well.

This is the age of machines. Mechanisation is the order of the day all over the world. But in' an underdeveloped and agricultural country like India, the importance of cottage industries cannot be over-emphasised. Even Mahatma Gandhi strongly recommended the development and expansion of cottage industries in India. He said, "I can have no consideration for machinery which is meant to enrich the few at the expenses of many." According to him, "Mechanisation is good when the hands are too few for the work intended to be accomplished. It is an evil when there are more hands that required for work as is the case in India. The problem is how to utilise the idle hours of teeming million inhabitants of our villages which are equal to the working days of six months in a year".

Cottage industries are of special importance because they can be carried on with the help of the members of the family. They do not require large premises, huge machines and great investment. They are labour intensive. The greatest advantage of such industries is that even the women and the old in the family can usefully utilise their leisure. They not only increase the income of the family but also reduce unemployment and thus raise the standard of living of the members of the family. In olden times, India had fairly developed cottage industries. The commodities produced in these industries were famous for their beauty, art and delicacy. Every village in India was a centre of these industries. But during the British rule these industries received no protection, what to talk of encouragement, and so they were ousted by large industries. After the attainment of independence our national government has paid sufficient attention to the development of these industries.

Cottage industries have I great potential to solve the problem of unemployment and also to blip in the equitable distribution of wealth. There is not denying the fact that big industries increase the level of production but a Riejor part of the profit goes into the pockets of big industrialists, Wiulting in wide disparity in the distribution of wealth of nation. The cottage industries prevent the evils of concentration of industries. Big industries can be located only in certain parts of the country where the necessary infrastructure already exits, whereas cottage industries can be carried on in every village. Big industries, tend to create regional imbalance : on the other hand cottage industries reduce regional imbalance in the field of economic activities.

Opportunities for cottage industries in India - Cottage industry is often characterized by its enormous potential for employment generation and the person getting employed is basically regarded as a self-employed one. It has been empirically found out that cottage industry has given economic independence to the women in the developing as well as developed countries. Cottage industries involve all the family members contribution for the development of the family. The most common form of support extended by the governments towards this industry is through forwarding of capital subsidies. Another form through self-help groups. They are very much helpful for the cottage industries. As the women employed in the cottage industries are the members of the self-help group and they can get financial assistance at low interest rate which is a great boon for them.

Organization working for the benefit of cottage industry in India - The well-known organization like Khadi and Village Industries Commission (KVIC) is working towards the development and endorsement of cottage industries in India. Other premier organizations are Central Silk Board, Coir Board, All India Handloom Board and All India Handicrafts Board, and organizations like Forest Corporation and National Small Industries Corporation are also playing an active role in the meaningful expansion of cottage industries in India. The Department of Industries and Commerce also implements a variety of programmes to provide financial assistance, technical support and guidance service to the existing as well as new industries. These programmes are implemented with an accent on the development and modernization of industries, up-gradation of technology and quality control. It operates through a network of District Industries Centres (DICs), one in each district, headed by a General Manager.

Difficulties - Here are some of the main difficulties. The first is the inefficient human factor owing to illiteracy, ignorance,

and the out-of-date methods of the cottage workers. Secondly, people in India are generally very poor, and cheap credit is a far cry for them. Thirdly, there is conspicuous absence of oraganized marketing. On account of this the helpless artisans are completely at the mercy of middle men. Fourthly, there is an inadequate supply of machinery and equipment to cottage industries. Lastly, cottage industries have not yet succeeded in producing goods of a better quality than those produced by large scale industries.

Suggestions - In view of the every important place that they occupy in the industrial structure of the country, it is very essential that suitable steps are taken to remedy existing defects and remove the main difficulties of such industries. First, the artisans should be familiarised with new and more economical methods of production. Modern tools should be popularised on the hire-purchase system. Secondly, supply of good raw-materials may be ensured by suitable measures. Thirdly, supply of credit should be made available on easy terms. Fourthly, efforts should be made for the marketing of goods manufactured by cottage industries. Fifthly, co-ordination of cottage industries with large-scale industries with large-scale industries is very essential. Cottage industries should be complementary to large-scale ones. Sixthly, suitable measure of protection may be afforded to cottage industries by reservation of spheres and in other ways.

Five things are very essential for making the above suggestions practicable and of some substance ;

1. adoption of the principle of co-operation in the field of small-scale and cottage industries ;
2. an active policy of State assistance ;
3. encouraging the Swadeshi spirit among the people ;
4. improvement in the quality of products of cottage industries ; and
5. banning the field of cottage industry for entry by multinationals, which unfortunately seem, of late, to be lobbying to enter the field of consumer goods in India.

It is, however, gratifying that Government is wide awake to the need of promoting cottage industries in India. Certain measure of state encouragement has already been given in various plans. This needs to be made more meaningful. Let us remember our deliverance from poverty rests squarely on making cottage industry a hundred percent successful movement. Great caution needs to be exercised by our rulers and politicians in determining the point beyond which the multinationals should out expand their activities in India, otherwise the cause of cottage industry will suffer beyond redemption and repair.

Conclusion - Cottage industries are of cultural and economic importance to India. They keep the age old traditions alive and also provide employment to a number of people. Support should be provided by the community to prevent exploitation and further develop these industries as they face stiff competition from other economies. In the over-populated countries like ours, the only way to fight the monster of unemployment is the development of cottage industries. They will bring about a more equitable distribution of wealth. In the words of Dr. V.K.R.V. Rao, “Cottage industries have a special claim for consideration in that they are the local investments through which the decentralization of industrial production can be achieved.”

Finally this research shows the clear picture of the causes for establishment, status, importance, opportunities, difficulties and suggestions of cottage industries.

References :-

1. R. Datt and K.P.M. Sundaram, (2007) - Indian Economy, S. Chand & Company New Delhi
2. T.N. Dhar and H. Lydall, (1961) - The Role of Small Enterprises in India’s Economic Development, Asia Publishing House, Mumbai
3. Aditi Swami, (2003) - Cottage Industries in India
4. Durgesh Shanker, (2004) - Crafts of India and Cottage Industries, Indusvista Editions
5. Shah, (1947) - Rural and Cottage Industries.
6. National Planning Committee Series, Mumbai, Vora & Co.
7. The Views paper, 5 March 2010
8. www.economywatch.com
9. www.mapsofindia.com
10. www.youthkiawaaz.com

****

Corporate Vision of Indian SMEs: A Review of the Literature

Dr. D.L. Ahir *

Abstract - In order to survive in the modern business environment, all the commercial organizations should have their own strategies. This strategic development process is derived from corporate vision of the organization. Therefore, before deciding strategies, each and every organization should have their own vision regarding the future status. Organizational mission, Objectives, goals and values are also to follow this vision. Small and Medium Enterprises (SMEs) play a critical role in Indian economy. Due to their inherent problems, SMEs could not show much concern about development and implementation process of the corporate vision . Researchers as well as Government Institutions of India have also not taken considerable attempts to make a proper investment about this field .

Key words - vision, corporate visioning, mission, objectives, corporate values, strategies.

Introduction - The corporate vision is a very important strategic management tool. It has been discussed and developed throughout centuries since the initial stages of the civilizations. However, many of those early cases were based on impact of vision to the personal success rather than applications on business. charisma is an early concept of vision, which is discussed about the ability to make miracles or predict future events. Both concepts were highly influenced by religious and political leadership **(krantabutra, 2008)**

Before the 1980s, vision was highly recognized as a social concept and widely used with political and religious leadership. As a result of development in the leadership theories,vision has been recognized as a business concept during last two decades of the 20th century. Modern business concept such as "visionarY leadership" and "visionary companies" were taken into account and new paradigms have been practiced in the business field during that period. **(Bratianu and Balanescu, 2008)**

As the word "vision" suggested, it is an image of how the organization sees it self in future. It is a dream and aspirating of the organization which holds for its future. It might therefore be difficult for the organization to actually achieve its vision even in the long term, but it provides the direction to work towards it. When people talk about shared vision in organizations, it is expected that members of the organization share a conmon mental image of the future, which integrates their efforts towards that future state. **(krantabutra, 2008)**

Vision needs to be appropriate according to the nature of the organization. On the other hand it should reflect the future demand. If vision becomes obsolete, it could lead to disasters **(Eriksson, 2008).** Each and every organization should have a vision in order to have survival and growth in the market. However development and implementation process to the vision might differ, according to the investment level and structure of the organization.

The purpose of this research paper is to identify the current knowledge about corporate vision of Indian SMEs through a review of the theoretical and empirical literature. As per the general view, SMEs do not take considerable attempts to follow well developed and standardized business procedures like large companies. However SMEs should have a vision for either maximizing their revenues or maximizing their profits. If not so then there will be a problem towards survivals in the market.

Small and Medium Enterprises SMEs play a critical role in economic development as they provide a considerable number of employment opportunities and generate a large proportion of technical innovations. In developing economy like India, this sector is considered to be a source of innovation , flexibility and economic development .

SMEs are defined in different ways in different parts of the world. Some definitions are based on the term assets, while others use employment, shareholders funds, sales and the revenue as the hybrid criterion. According to the Ministry of Micro, small and Medium Enterprises (2013), Small and medium business entities are classified on the basis of their investment size. The classification of manufacturing enterprises is based on their investment in plant and machineries while service enterprises are classified with respect to their investment in equipment .

In accordance with annual reports (2012-13) of Ministry of Micro Small and Medium Enterprises, total number of enterprises in MSME sector was estimated to be 361.76 lakh with total employment of 805.24 lakh. However majority of them are recorded as unregistered organizations and their contribution to the economy has not been properly valued . SMEs include organizations such as proprietorships, hindu undivided families, association of persons, co-operatives societies, partnerships, corporations and other legal entities.

Development and Implementation of Corporate Vision - Effective strategic management begins with the organization clearly articulating its vision for the future. The vision of the organization refers to the broad category of long term intention that the organization wishes to pursue. It is broad, all inclusive and futuristic **(Ireland et al -2009)**

* **Asst. Prof. (Commerce) Govt. college, jawad (M.P.) INDIA**

Table 1.1 – Classification of Micro, Small and medium Enterprises

Description	Manufacturing Enterprises	Services Enterprises
Micro Enterprises	Does not exceed twenty five lakh rupees	Does not exceed twenty five lakh rupees
Small Enterprises	More than twenty five lakh rupees does not exceed five crore rupees	Ten lakh rupees but does not but exceed two crore rupees
Medium Enterprises	More than five crore rupees but does not exceed ten crore rupees	More than two crore rupees but does not exceed five crore rupees

Kantabutra and Avery (2005) found that visions characterized by the attributes such as brevity , clarity, stability, abstractness, future orientation , challenge , desirability and ability to inspire, and containing customer and staff satisfaction imagery. However there is no proper, generally accepted definition over the corporate vision. According to **kantabutra (2008),** vision is still not defined in a generally agreed upon manner, because various researchers have defined it differently based on the nature of their studies. He also noted that vision was about the future , encouraged people to act toward a common goal , provided a better direction and became very useful for strategic planning . **Illesanmi (2011)** emphasized that vision is a difficult thing to describe and no wonder most executives find it difficult to formulate a clear vision for their organizations. A strong correlation can be identified between organizational performances and customer and staff satisfaction , when sharing vision among leader and followers. Shared visions directly create a positive impact on overall organizational performance through staff and customer satisfaction .

The vision should be external and market oriented and should express preferably in aspirational terms. Corporate vision of an organization must be operationalized through the vision statement which must also be measurable. A quantified vision statement provides clear focus for the strategic management. However many organizationsvisions are too vague. **(Kaplan et al.,2008).** In addition to that some of them are not forward looking ,too broad , uninspiring , not distinctive and too reliant on superlative. An effectives worded strategic vision might be graphic, directional, focused , flexible , feasible , desirable , and easy to communicate . **(Thompson et al . , 2010)**

Corporate Vision Of Indian SMEs - The success or failure of small and medium enterprises is highly influenced by the personality and leadership characteristics of owner or board of directors. These companies basically target to enter to a single market or a small number of markets with a limited range or products or services because virtually they are unable to compete with existing companies. Practicing of strategic management tools on these businesses are considerably at low level when comparing with larger organizations **(Adriana, 2011).**In many cases, experiences of the owners are very influential to make direct contact with the market place. Similarly values, expectations and leadership characteristics of the owner or board of directors are also critical to success or failure of the business. Many researchers argued that strategic management methods and techniques applied in large companies will not work in small firms. Strategies of many small and medium size enterprises are intuitive or empirical and not Kept as written documents and are subject to change in accordance with attitudes and knowledge of the owner **(Adrina,2011).** Strategic planning is not widely practiced among SMEs , because they do not have the time or staff to invest on the same. However it is further noted that SMEs were increasingly turning their attention towards strategic planning practices (**Neneh and vanzyl , 2012).**

Indian SMEs, are suffering from inherent bottlenecks such as traditional technologies, financial problems , low scale of economies, mostly family-owned enterprises and insufficient division of labour. As a result of this, there is a lethargic growth in the SME sector **(Prajapati, 2008)**. These organizations don't follow porper strategies like large firms. However, in order to survive in the market, they have to adopt new marketing strategies as well as new innovative techniques for the product development. As they don't have layers between the decisions makers and the people who implement these decisions, new strategies can be easily practiced **(Trivedi, 2013).** Gautam and Singh stated that Indian small firms are now coming forward to accepting professional managerial techniques. They are becoming out- ward looking from inward looking and competition is greatly acknowledged. Therefore it is needed to practice proper strategies to satisfy the customers, to capture the market and meeting challenges in the business environment.

Knight (2008) States, the success of SMEs which have already entered to the international market depend in large part on the formulation and implementation of strategy . Strategy reflects the way of accepting challenges and opportunities posed by the competitive business environment. However evidence of planning strategies of SMEs show that they prefer to focus on short term goals rather then long term goals . **(Avram and kuhne , 2008)** Normally small firms will have to find opportunities and strategies that are mostly appropriate to the particular resources and competencies of the organization . Their visioning process is also influenced by experiences , knowledge, attitudes and expectations of the owner or senior management **(Johnson et al. 2009).** According to the federation of Indian chambers of commerce and industry (2012), Indian SMEs are usually single or multi promoter or a partner venture. Decision making process of these organizations is dependent on their experience and education. Similarly human resource practices of these organizations are in a very low level. There is no clear process for segregation of duties and delegation of authorities. In many cases business plans of these organizations are superficial and not widely covered in all essential areas. However, business practices of medium typed private limited companies are somewhat different. According to the companies act 1956 , before a company is registered , it is essential to submit Memorandum of Association and Articles of Association. Memorandum of Association defines the company's relationship with outside worlds and Articles disclose the regulations for the internal management of the company. The objects clause is the most important clause in the memorandum of Association .It is disclose how company's

money is going to be invested under the permitted range of activities. **(Bulchndani, 2010)**. There fore they have to be clear in their future targets well the corporate vision.

Charantimath (2009) Identified some common reasons with SMEs to avoid strategic planning :-

1. As small business , they believe they don't need strategic planning .
2. They do not have time for strategic planning.
3. They believe strategic planning might limit their choices.
4. They believe strategic planning may be wrong for their business .Some instances, non-practicing of strategic management tools will lead to sickness of SMEs. On other hand**, Pasanen (2005**) stated that lack of marketing skills and lack of prior managerial experiences of entrepreneurs are highly responsible for the failures of Indian SMEs. Therefore strategic management practices are very vital for survival of SMEs also.However there are a very few number of researches done in the field of corporate vision of SMEs in India . As per general belief, most of the SMEs don't have proper vision and strategy development process due to their inherent issues such as low investment , improper decision making and lack of knowledge about markets. Due to feasibility problems with investigations, research institutions as well as individual researchers have ignored this critical area form studies. Government institution are also not much concerned about this area when formulating development plans. Even though, all the SMEs as well as regulatory bodies should accept the importance of corporate vision because it will play a critical role in improving and sustaining organizational performance.

Conclusion - The literature review suggest that vision has been critical to organizations when formulating strategies to achieve their goals. In addition to that it will make a positive impact on performance outcomes. However vision has not been properly defined in the literature. When coming to all of these definitions, it can be concluded that, vision is a corporate strategic tool which relates with future status of an organization.

Small and Medium Enterprises (SMEs) are backbone of the Indian Economy. Therefore these organizations should have a corporate vision for their growth and survival. However we know very little about corporate vision of Indian SMEs as it has not been properly investigated. There as a huge research gap in this area which has to be fulfilled immediately, because it will critically affect development plans of the country. It is recommended to design and undertake exploratory as well as descriptive researches in this area, to identify barriers and possibilities within the SMEs to develop and implement their corporate vision.

References :-

1. Avram, D.O. and kuhne ,S. (2008) Implementing responsible business behaviour form a strategic management perspective developing a framework for austrain SMEs, Journal of Business Ethics No. 02, pp. 463-475.
2. Brtianu, C. and Balanescu, G.V. (2008) 'vision Mission and corporate values, A comparative Analysis of the top 50 U.S. companies' Journal of Management & Marketing , vol. 3, No.2, pp-19-38
3. Bulchandani,K R. (2010) 'Business law for management', 6th edition. Himalaya Publishing House ,pp.325-450.
4. Charantimath , P.M. (2009) 'Entrapper neurosis Development : small Business Enterprises', 4th edition. Pearson Education ,pp. 330-370.
5. Eriksson , T. (2008) 'Corporate visioning : A cross comparison between SMEs in Scotland and Sweden' , M.Phil Thesis, University of St. Andrews ,pp.03-101.
6. Kantabura, S.& Avery, G.C. (2005) 'Essence of shared vision :Empirical investigation', New Zealand Journal of Human Resources Management, volume, 05,p.p.01-28.
7. Kantabura, S.(2008) What do we know about Vision, The Journal of Applied Business Research . volume. 24 , Number 2, pp.03-11
8. Kaplan , R.S. Norton, D.P. and Barrows , E.A. (2008) 'Developing the strategic: vision, Value gaps and Analysis',Harvard Business school publishing ,pp.01-07.
9. Khan, N.K. Awing, M and Zulkifili , C.M. (2013) 'small and Medium Enterprises and Human Resource practice in Pakistan' , International Journal of Asian Social Science ,pp.03-12.
10. Knight, G. 2000. 'Entrepreneurship and Marketing Strategic. The SMEs under globalization', Journal of International Marketing vol. 08, Issue. 2, pp.14-20.
11. Krishnaswamy , K.N, Sivakumar , A.L, and Maharajah, M.(2012) 'Management Research Methodology' , Dorling Kindersley (India) pvt. Ltd, Eight Edition , pp.06-24.
12. Malhotra, N.k. and Dash, A. (2011) 'Marketing Research: An Applied Orientation,' Tata McGraw Hill Education private Limited, pp.42-55 .
13. Mantere, S and Sillince, J.A.A. (2007) 'Strategic Intent as a Rhetorical Device', Scandinavian Journal of Management, pp. 01-36.
14. Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises, (2013) Annual Report 2012-13. [Online] Available at: www. Scmsme.gov.in@ANNUALREPORT –MSME-2012-13P.pdf.
15. O'Brien F., Meadows M. (2000) Corporate visioning a survey of UK Practice, Journal of the operational research society , vol-51 , pp.36-44.
16. Pasanen , M. (2005). 'Tracking small Business Failure Factors and Trajectories', 2nd inter – RENT Online Publication.
17. Pearce II , J.A. Robinson , R.B. and Mittal ,A. (2008) ' Strategic Management Formulation , Implementation and Control', Tata McGraw Hill Education Private Limited , pp 24-53.
18. Prajapati, K. (2008) 'strategic Issue in SMEs 11th Annual convention of the strategic management Forum 2008, pp. 01- 14.
19. Suresh Mohideen , P and Akbar ,M (2012) ' Small medium Enterprises in India. Issues and Prospectus, International Journal of Management Research and Reviews ,vol.,02,pp.03-09.
20. Thompson ,A.A , Strickland , A.J. Gamble J.E. and Jain A.K. (2010) 'Crafting and Executing strategy : A Quest for Competitive Advantage Concepts and cases'. Tata McGraw Hill Education Private Limited , pp. 20-48.
21. Trivedi, J.Y (2013) 'A study on Marketing Strategies of small and Medium Sized Enterprises'. Research Journal of management Science , vol-2, Issue. 8 , pp.20-22
22. Vanzyl , J.H and Neneh, N.B. (2012) Achieving optimal performance through business practices: Evidence from SMEs in selected areas in South Africa , South African Business Review , vol.-16 , Issue.03, p.p 118-135.
23. Wilson I. (1992) 'Realizing the Power of strategic vision'. Long range planning. Vol-.25.pp.18-28.

Role Of Media In The Politics

Dr. Vimmi Behal * **Dr. O.P. Sharma** **

Abstract - The media plays a very important role in everyday life Public meetings, Newspaper Radio, Television are the major tools. The only form of education a very powerful influence over peoples beliefs and opinions. The utilization of new media communication tools and strategies gave a new fact that was highly beneficial to the indianpolictics.The political parties have reached a large number of voters the new media like mobile phone and internet. It made their election campaign easy, fast and successful.

Key words :- Media, political, communication election, campaign etc.

Introduction - The End of the second world war, it has become clear that the media can often have a hidden agenda when reporting politics. The most contentious issues over the last few years, at least since 1 have been consuming media products has been the debate over media ownership. In the begining they used oral comminication like public speech, radio and textual communication via news papers, pamphlets, posters, etc and then they used television and other tools. They are changing thrie comminication vehicles from time to time on the basis of the availability, convenience and reach.

The media has remarkable impact on politics. However the impact may not always be good. If used against politicans it can easily but not always , destroy his or her carrer, but if the media likes that one politicians it can take his or her carrer to new heights. The media can also exploit politician scandals, ruining their political carrer. The new media technologies have given a new dimension to the political campaign. Many political parties have created their own websites, blogs and facebook/twitter acconts. They are regularly watching and reading their content. The content is also updated regularly. This paradign shift has significantly helped them in reaching the voters. Political parties and leaders are enjoying the communication development and travel in the cyber world.

The message of the campaign is the ideas that the party/ candidate wants to share with the voters. The message often consists of several talking points about policy issues. Most of the campaigns prefer to keep the message broad to attract the potential voters. "**Barack obama"** ran on a consistent simple message of ''**change**'' throughout his campaign. If the message is disigned and crafted carefully, it will assure the candidate a victory at the polls. A major part of an election campaign is done through electronic media such as sms, blogs, e-mails, banner advertisements, phone calls, brochures and different websites. With the out break of new technologies, election candidates are looking for new ways.

SMS used for political campaigns especially for party list groups. The idea of one vote for one person may require people to register their names and their phone numbers. During the first decade of the 21st Century, Indian elections faced Vibrant new media Campaigns in different levels. Compared to the previous the last 2009 parliamentary and assembly elections have experienced extraordinary campaigns through the new Media. During the recent elections they used Interactive Voice Response systems (IVRS), Short Messsage Services (SMSs), E-Mails Internet Banners, Websites, Online Advertising, Blogs, Mobile Phone Services, etc. According to Gaurav Mishra, (2009) mobile technology is playing a small but important role in the Indian parliament election.

Conclusion - Every major political Parties have used to Various tools to propagate their messages, policies Manifesto, plans. Almost all parties today are using new media. India is today india in the stage of Early Majority adopters. Over all there is a need to achieve a good fit between the adopting individual or organization and the environment where the process takes place. Mobile phone played a cost effective and highly reachable role than the other media during the campaigns.

On the whole the study reveals that, though new media technologies. especially internet and mobile are good means of election campaigns. Political parties feel the use of mobile phones is cheap and effective way to reach the people. Therefore say that Technology acting as a determinant is playing a crucial role in the society and individuals.

References :-

1. Gaurav Mishra (2009) The role of Mobile technology in the India loksabha.
2. Stein (2009) -- Mobile Phone in the election and voter regisration.
3. http://en.wikipedia.org/wiki/India - Shining.
4. http://www.thehindu.com/news
5. http://www.topnews.in/young - vorts.

* **Asst. Prof. (Commerce) Atal Bihari Vajpayee Hindi Vishvavidyalaya, Bhopal (M.P) INDIA**
** **H.O.D (Commerce) Govt. College Kalapipal (M.P) INDIA**

Future Challenges Of Business Process Outsourcing

Dr. Abhay Kumar Mungee *

Introduction - As the growth of the internet and e-business drives more and more power into the hands of consumers. Companies have to compete on the basis of customer service more than ever before. BPO allows you to save on time and resources that can perform if faster and cheaper.

Defination - Business process outstanding (BPO) is the contracting of a specific business task, such as payroll. To a third-party service provider.

Description - Usually BPO is implemented as a cost-saving measure for tasks that a company requires but does not depend upon to maintain their position in the marketplace. BPO is often decided into two categories back office outsourcing, which includes internal business function such as billing or purchasing and marketing or tech support. Outstanding is an arrangement in which one company provides services for another company that could also be or usually have been provided in-house. Outstanding is a trend that is become in information technology and other industries for services that have usually been regarded as intrinsic to managing a business. In some cases , the entire information management of a installation, management, and servicing of the network and workstations. Outsourcing can range from the large contract on which a company like IBM manages IT service for a company like Xerox to the practice of hiring contractors and temporary officer workers on an individual basis.

Type of BPO -

1. Offshore: BPO that is contracted outside a company's own country is sometime called offshore outsourcing.
2. Nearshore: BPO that is contracted with the company's own country is some time called near shore outsourcing.
3. Onshore: BPO that is contracted with the companies' own country is some time called onshore outsourcing.

Application of in india -

1. Call centers
2. Medical transcription
3. Back Office Operation Revenue Accounting Other Ancillary Operations
4. Insurance Claims Processing
5. Legal Databases
6. Digital Content Development/Anima nation

Companies, which are engaged in BPO, services in India -

1. progeon Ltd. (infosys's sister concern)
   plot No. 26/3. 26/4. & 26/6.
   3th cross 1st Main Road,
   Electronic city, Banglore 561229
   Email; info@progeon.com
2. Infocon Internation Ltd
   166'9th cross 1 st phase
   JP Nagar Bangluru 560078
   Email: bms95@yahoo.com

Conlusion - To sum up any activity carried out dezed on the application of Information technology could be termed as termed as it enabled service (its) in other words It enabled services cover entire range of services, which exploit information

Technology for empowering an organization with improved which exploit information technology for empowering An organization with improved which exploit information technology for empowering an organization with improved efficiency or a type of service which may not to be rendered cost effectively without it the activity could mean to increase the operational efficiency through work force residing within the organization or could be outsourced the outsourced or cross bored it enabled services is nor receiving greater attention as this category of ITES

Has a great potential for growth and contribution towards employment opportunities in india.

References :-

1. Indian statically abstract 2013
2. India 2013
3. Economic surver of india 11th And 12th five year plan
4. Many other websites.

****

* Asst. Prof. (Commerce) Govt. College Barwaha (M.P.) INDIA

मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 का क्रियान्वयन (नीमच जिले के विशेष संदर्भ में - एक तुलनात्मक अध्ययन)

डॉ. एल.एन. शर्मा * डॉ. समता मेहता ** आशीष शर्मा ***

शोध सारांश – प्रदेश के लोकप्रिय एवं यशस्वी मुख्यमंत्री माननीय श्री शिवराजसिंह जी चौहान द्वारा लोक सेवाओं के गारंटी अधिनियम 2010 पारित कर नागरिकों के अधिकारों को सशक्त बनाकर अभिनव कार्य किया हैं। आमजन को याचनाभाव से मुक्त कर सशक्त बना दिया हैं एवं लोक सेवा में कोताही बरतने वाले अधिकारियों को दण्डित करने तथा आवेदकों को मुआवजा मिलने का प्रावधान भी रखा गया हैं। वर्तमान में यह अधिनियम प्रदेश के 21 विभागों में 104 सेवाओं पर ही लागू हुआ हैं। भविष्य में प्रदेश के शेष विभागों एवं शेष सेवाओं को भी इस अधिनियम के अंतर्गत लाना चाहिये तथा जो लोग इस अधिनियम का दुरुपयोग कर रहे है उन पर रोक लगाना चाहिये तथा लोक सेवा विभाग को स्वायत्ता प्रदान की जाना चाहिये ताकि प्रदेश में भ्रष्टाचार समूल नष्ट किया जा सके। लोक सेवा केन्द्रों की संख्या में वृद्धि करके एवं जिला स्तर के साथ साथ संभाग व प्रदेश स्तर की सेवाओं को भी इस अधिनियम में शामिल किया जाना चाहिये। पारदर्शिता लाने हेतु समस्त लोक सेवा के कार्यो को ऑनलाईन की अनिवार्यता करना चाहिये। जनता को न्याय मिलना तो शुरु हुआ चाहे छोटे स्तर पर ही सही अत: लोक सेवा गांरटी अधिनियम का अभिनंदन एवं वंदन।

शब्द कुंजी – लोक सेवा, अधिसूचित, हितग्राहियों, पदाभिहित, शास्ति ।

प्रस्तावना – म.प्र. में लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 नागरिक अधिकारों को सशक्त बनाने का अभिनव प्रयास है। तथा यह कानून प्रदेश के यशस्वी मुख्यमंत्री शिवराजसिंह चौहान द्वारा प्रदेश में किये जा रहे सुशासन के प्रयासों में महत्वपूर्ण कड़ी है अब चिन्हित सेवाओं को प्राप्त करने के लिये आमजन को किसी अधिकारी की इच्छा पर निर्भर नहीं रहना होगा बल्कि उनको सेवाओं के प्रदान करने की गारंटी दी गई है। लोक सेवाऐं प्राप्त करना अब उनका अधिकार होगा।

लोक सेवा प्रदान करने में कोताही बरतने वाले अधिकारियों पर अर्थदण्ड आरोपित करने का प्रावधान भी इस अधिनियम में किया गया है। साथ ही लोक सेवाओं को एकल खिड़की प्रणाली से प्रदान करने के लिये लोक सेवा केंद्रों की स्थापना भी की गई है। जिनके माध्यम से आवेदक लोक सेवाओं के संबंध में जानकारी प्राप्त कर आवेदन पत्र दे सकता है। यह कानून बनाकर म.प्र. सरकार ने आमजन की याचनाभाव को शक्ति में बदल दिया है अब लोक सेवाओं को प्राप्त करने के लिये किसी अधिकारी से अनुनय-विनय नहीं करना होगा।

शोध का उद्देश्य – प्रदेश के आमजन को प्रशासन से कई दैनंदिन कार्य होते है उन कार्यो को पूरा करवाने के लिये अधिकारियों के चक्कर लगाने पड़ते है कार्य समय पर पूरे नहीं होते है और समय पर पूरे करवाने के लिये अधिकारियों को रिश्वत देनी पड़ती है अत: प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यह ज्ञात करना है कि लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 अपने उद्देश्यों में कहाँ तक सफल हुआ है ? क्या लोक सेवा प्रदान करने के लिये अपने उत्तरदायित्व का प्रभावी ढंग से निर्वहन कर रहा है ?

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 के अंतर्गत नीमच जिले एवं प्रदेश के प्रकाशित द्वितीयक समंकों को, अध्ययन का आधार बनाया गया है एवं प्रकाशित (पुस्तिका) जानकारी एवं म.प्र. राजपत्र में प्रकाशित जानकारी को भी आधार बनाया गया है तथा प्रस्तुत शोध पत्र में नीमच जिले की लोक सेवाओं का प्रदेश की लोक सेवाओं से तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

व्याख्या – म.प्र. लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 को दिनांक 17 अगस्त 2010 को महामहिम राज्यपाल द्वारा स्वीकृती प्रदान की गई जिसे म.प्र. राजपत्र (असाधारण) दिनांक 18 अगस्त 2010 में प्रकाशित किया गया। इस अधिनियम में कुल 11 धाराऐं है आवश्यकतानुसार मई 2011 में इस अधिनियम में संशोधन किया गया विशेषकर धारा 5, 6, 7 एवं 8 में संशोधन कर म.प्र. राजपत्र (असाधारण) में प्रकाशित किया गया। वर्तमान में म.प्र. लोक सेवा के प्रदान की गांरटी अधिनियम 2010 के अंतर्गत 21 विभागों की 104 सेवाओं को अधिसूचित किया गया है जो समय सीमा सहित इस प्रकार है :-

क्रं. अधिसूचित लोक सेवाओं का विवरण

सामान्य प्रशासन विभाग –

1. स्थानीय निवासी प्रमाण पत्र जारी करना।
2. आय प्रमाण पत्र ।
3. जाति प्रमाण पत्र प्रदाय करना ।
4. राज्य निर्वाचन के अंतर्गत नगरीय निकाय व ग्रामीण निकाय मतदाता सूची की सत्य प्रतिलिपि का प्रदाय।

गृह विभाग –

5. मृतक के परिवार के सदस्य के आवेदन पर पोस्टमार्टम रिपोर्ट की प्रति का प्रदाय करना।
6. एफ.आई.आर. की प्रतिलिपि शिकायतकर्ता को प्रदाय करना।
7. लायसेंस अवधि समाप्त होने के पूर्व अवर्जित बोर के शस्त्र लायसेंस का नवीनीकरण।
8. लायसेंस अवधि समाप्त होने के पश्चात् अवर्जित बोर के शस्त्र लायसेंस का नवीनीकरण।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
*** 795, विकास नगर विस्तार 14/2, नीमच (म.प्र.) भारत

वित विभाग –

9. पेंशनर द्वारा निर्धारित पेंशन आवेदन प्रपत्र भरकर प्रस्तुत करने की स्थिति में पेंशन/परिवार पेंशन प्रकरण संभागीय पेंशन/जिला पेंशन कार्यालय भेजना।
10. पेंशन/परिवार पेंशन प्रकरण में विभाग द्वारा आपत्तियों के निराकरण करने पर पेंशन/परिवार पेंशन भुगतान आदेश जारी करना।
11. पेंशन/परिवार पेंशन भुगतान आदेश कोषालय अधिकारी को प्राप्त होने की स्थिति में पेंशन/परिवार पेंशन का प्रथम भुगतान।

राजस्व विभाग –

12. राजस्व पुस्तक परिपत्र खण्ड छ: क्रंमाक 4 के अनुसार प्राकृतिक प्रकोप से शारीरिक अंगहानि अथवा मृत्यु होने पर आर्थिक सहायता दी जाना।
13. चालू खसरा/खतौनी की प्रतिलिपियों का प्रदाय।
14. चालू नक्शा कर प्रतिलिपियों का प्रदाय।
15. भू-अधिकार एवं ऋण पुस्तिका का प्रथम बार प्रदाय।
16. भू-अधिकार एवं ऋण पुस्तिका की द्वितीय प्रति (डुप्लीकेट कॉपी) का प्रदाय।
17. वन्य प्राणियों से फसल हानि का भुगतान (राजस्व एवं वन ग्रामों में)।
18. नजूल अनापत्ति प्रमाण पत्र।
19. शोध्य क्षमता प्रमाण पत्र।
20. राजस्व न्यायालय (राजस्व मण्डल को छोडकर) में प्रचलित प्रकरणों में पारित आदेश/अंतरिम आदेश या अन्य दस्तावेज की सत्य प्रतिलिपि पक्षकार को प्रदाय करना।
21. अभिलेख प्रकोष्ठ में जमा भू-अभिलेखों/राजस्व प्रकरणों/नक्शों एवं अन्य अभिलखों की सत्य प्रतिलिपि प्रदाय करना।
22. राजस्व पुस्तक परिपत्र 6-4 के अंतर्गत आपदाओं के प्रभावितों के आवेदन दिये जाने पर आर्थिक सहायता दी जाना।
23. बंटवारा के आदेश के पश्चात् नक्शों में बंटाकन/तरमीम तथा तरमीम पश्चात् अक्स नक्शा ए-4।
24. भूमि का सीमांकन करना।
25. अविवादित नामांतरण करना।
26. अविवादित बँटवारा करना।

परिवहन विभाग –

27. लर्निंग ड्रायविंग लायसेंस जारी करना।
28. वाहन फिटनेस प्रमाण पत्र जारी करना।
29. वाहन का पंजीयन।

वन विभाग –

30. वन्यप्राणियों से जनहानि हेतु राहत राशि का भुगतान।
31. वन्यप्राणियों से जनघायल हेतु राहत राशि का भुगतान।
32. वन्यप्राणियों से पशुहानि हेतु राहत राशि का भुगतान।
33. मालिक मकबूजा प्रकरण में भुगतान – 1. डिपों में 2. प्रथक नोट में।
34. काष्ठ के परिवहन का अनुज्ञा पत्र प्रदान करना 1. शासकीय काष्ठगर 2. पंजीकृत व्यापारी 3. भूमि स्वामी

वाणिज्य उद्योग और रोजगार विभाग –

35. गुणवत्ता प्रमाणीकरण पर हुए व्यय की प्रतिपूर्ति।
36. परियोजना प्रतिवेदन व्यय प्रतिपूर्ति।
37. टर्मलोन पर ब्याज अनुदान स्वीकृति एवं वितरण (सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम विनिर्माण उद्यमों हेतु)।
38. रोजगार कार्यालय में पंजीयन।
39. रोजगार कार्यालय में पंजीयन का नवीनीकरण।
40. माइक्रो, स्माल एंड मीडियम इंटरप्राइजेज डवलपमेंट एक्ट 2006 के तहत मेमोरेण्डम जमा करने पर अभिस्वीकृति प्रदान करना।
41. चिन्हित गैर प्रदूषणकारी उद्योगों के लिये अनापत्ति प्रमाण पत्र जारी करना।

ऊर्जा विभाग –

42. निम्नदाब के व्यक्तिगत नवीन कनेक्शन के लिये मांग पत्र प्रदान करना जहां ऐसा कनेक्शन वर्तमान नेटवर्क से संभव हैं।
43. मांग-पत्र अनुसार राशि जमा करने के बाद वर्तमान नेटवर्क से निम्नदाब नवीन कनेक्शन प्रदान करना।
44. जहां वर्तमान अधोसरंचना में विस्तार की आवश्यकता न हो वहां 10 किलो वाट तक के लिये राशि जमा करने के उपरांत अस्थाई कनेक्शन प्रदान करना।
45. जहां वर्तमान अधोसरंचना में विस्तार की आवश्यकता न हो वहां उपभोक्ता द्वारा सम्पूर्ण दस्तावेज प्रस्तुत करने के उपरांत भारवृद्धि के प्रकरणों में मांग पत्र जारी करना।
46. जहां वर्तमान अधोसरंचना में विस्तार की आवश्यकता न हो वहां मांग पत्र अनुसार राशि जमा करने तथा अनुपूरक अनुबंध किये जाने के उपरांत भारवृद्धि करना।
47. निम्नदाब उपभोक्ताओं के मीटर बंद होने या तेज चलने की शिकायत पर जांच कराना एवं मीटर खराब पाये जाने पर सुधारना/बदलना।
48. निम्न दाब संयोजन के स्थायी विच्छेदन का निराकरण।

किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग –

49. रासायनिक उर्वरक/कीटनाशक/बीज का विक्रय लायसेंस जारी करना।
50. रासायनिक उर्वरक/कीटनाशक/बीज का विक्रय लायसेंस नवीनीकरण करना।

श्रम विभाग –

51. प्रसूति सहायता योजना का लाभ प्रदान करना।
52. विवाह सहायता योजना का लाभ प्रदान करना।
53. मृत्यु की दशा में अनुग्रह सहायता योजना का लाभ प्रदान करना।
54. निर्माण श्रमिकों का पंजीयन।
55. निर्माण कार्य के दौरान दुर्घटना की स्थिति स्थाई अपंगता होने पर सहायता प्रदान करना।
56. दुकान संस्थान की स्थापना का पंजीयन।
57. दुकान संस्थान की स्थापना के पंजीयन का नवीनीकरण।

लोक स्वास्थ्य और परिवार कल्याण विभाग –

58. राज्य बीमारी सहायता निधि के अधीन रु. 1.00 लाख के प्रकरण का स्वीकृत किया जाना। (जिला स्तरीय)।
59. विकलांगता प्रमाण पत्र दिया जाना।
60. दीनदयाल अंत्योदय उपचार कार्ड जारी करना।
61. राष्ट्रीय टीकाकरण कार्यक्रम के अंतर्गत निर्धारित अवधि में गर्भवती महिलाओं एवं शिशुओं का एमसीटीएस में पंजीयन की टीकाकरण करना।

नगरीय प्रशासन एवं विकास विभाग –

62. जहां तकनीकी रुप से साध्य हो वहां नवीन नल कनेक्शन प्रदाय किया जाना।

63. गरीबी रेखा के नीचे परिवारों की सूची में नाम जोड़ना (नगरीय क्षेत्र)।
64. नगरीय क्षेत्रों के हैण्डपंप एवं ट्यूबवेल का सुधार।
65. पानी पीने योग्य है या नहीं संबंधी जांच कर रिपोर्ट देना।

पंचायत और ग्रामीण विकास विभाग –

66. गरीबी रेखा के नीचे परिवारों की सूची में नाम जोड़ना (ग्रामीण क्षेत्र)।

योजना, आर्थिक और सांख्यिकी विभाग –

67. जन्म का अप्राप्यता प्रमाण पत्र।
68. मृत्यु का अप्राप्यता प्रमाण पत्र।
69. जन्म के 1 वर्ष के पश्चात् पंजीयन के लिये अनुमति।
70. मृत्यु के 1 वर्ष के पश्चात् पंजीयन के लिये अनुमति।
71. जन्म प्रमाण पत्र।
72. मृत्यु प्रमाण पत्र।
73. विवाह पंजीयन।

आदिम जाति कल्याण विभाग –

74. म.प्र. अनुसूचित जाति/जनजाति आकस्मिकता योजना नियम 1995 के अंतर्गत राहत प्राप्त न होने संबंधी आवेदन का समाधान करना।

सामाजिक न्याय विभाग –

75. सामाजिक सुरक्षा पेंशन प्रथम बार स्वीकृत एंव प्रदाय करना।
76. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन प्रथम बार स्वीकृत एवं प्रदाय करना।
77. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन प्रथम बार स्वीकृत एवं प्रदाय करना।
78. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय नि:शक्त पेंशन प्रथम बार स्वीकृत एवं प्रदाय करना।
79. राष्ट्रीय परिवार सहायता प्रदान करना।

खाद्य, नागरिक एवं उपभोक्ता संरक्षण विभाग –

80. नवीन बीपीएल राशनकार्ड जारी करना।
81. नवीन एपीएल राशनकार्ड जारी करना।
82. डुप्लीकेट बीपीएल राशनकार्ड जारी करना।
83. डुप्लीकेट एपीएल राशनकार्ड जारी करना।
84. सार्वजनिक वितरण प्रणाली दुकान से खाद्यान्न, शक्कर एवं कैरोसिन प्राप्त नहीं होने पर उसे पात्रतानुसार दिलवाया जाना।

आवास एवं पर्यावरण विभाग –

85. अंगीकृत विकास योजनाओं में भूमि उपयोग की जानकारी।
86. अंगीकृत विकास योजनाओं में रोड की प्रस्तावित चौड़ाई की जानकारी।
87. जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम 1974 की धारा 25/26 एवं वायु (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम 1981 की धारा 21 के तहत लघु श्रेणी के उद्योगों को सम्मति।
88. जल (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम 1974 की धारा 25/26 एवं वायु (प्रदूषण निवारण तथा नियंत्रण) अधिनियम 1981 की धारा 21 के तहत वृहद/मध्यम श्रेणी के उद्योगों को सम्मति।
89. प्राधिकरण के बोर्ड द्वारा संकल्पित अथवा धारा 50 के अंतर्गत अधिसूचित स्कीम में किसी निजी भूमि के सम्मिलित होने की जानकारी।
90. प्राधिकरण के बोर्ड द्वारा संकल्पित अथवा धारा 50 के अंतर्गत अधिसूचित स्कीम में सम्मिलित भूमि पर भूमि स्वामी द्वारा विकास करने के संबंध में प्राधिकरण द्वारा अनापत्ति/आपत्ति प्रदाय करना।

लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग –

91. विभागीय हैण्डपंप के जमीन के ऊपरी भाग की साधारण खराबी का सुधार।
92. विभागीय हैण्डपंप के जमीन के निचले भाग में हैण्डपंप की लाइनअसेम्बली व सिलेण्डर की गंभीर खराबी का सुधार।
93. पानी पीने योग्य है या नहीं संबंधी जाँचकर रिपोर्ट देना।

उच्च शिक्षा विभाग –

94. नामांकन/माइग्रेशन प्रमाण पत्र प्रदान करना।
95. प्रोवीजनल उपाधि/डुप्लीकेट अंकसूची प्रदान करना।
96. अंकसूची में सुधार/नाम/उपनाम (सरनेम) सुधार करना।
97. शोध उपाधि समिति (आरडीसी) की बैठक में लिए गए समस्त आक्षेपों के निराकरण होने के बाद शोध पंजीयन पत्र प्रदान करना।
98. शोध प्रबंध (Thesis) प्रस्तुति के पश्चात् पीएचडी अवार्ड करने के संबंध में अंतिम निर्णय लेना।

महिला एवं बाल विकास विभाग –

99. लाड़ली लक्ष्मी योजना के अंतर्गत स्वीकृति जारी करना।
100. पंजीकृत हितग्राहियों को आंगनवाड़ी में पोषण आहार प्राप्त नहीं होने पर उसे पात्रतानुसार दिलवाया जाना।

लोक सेवा प्राप्त करने की समय सीमा – अधिनियम के अंतर्गत अधिसूचित विभिन्न सेवाओं को प्राप्त करने की अलग-अलग समय सीमा तय की गई है। यह समय सीमा आवेदक द्वारा आवेदन प्रस्तुत करने के दिनांक से प्रांरभ होगी जिसमें शासकीय अवकाश सम्मिलित नहीं होगें।

आवेदन-पत्र प्रस्तुत करने की प्रक्रिया – इस अधिनियम के अंतर्गत अधिसूचित सेवाओं को प्राप्त करने के लिये पात्र आवेदकों को सादे कागज पर या विभाग द्वारा निर्धारित प्रारुप में पदाभिहित अधिकारी को आवश्यक दस्तावेज सलंग्न कर आवेदन पत्र प्रस्तुत करना होगा। यदि आवश्यक दस्तावेज सलंग्न नहीं किये जाते है तो सेवा प्रदान करने के लिये निश्चित समय सीमा की आखिरी तारीख पावती में दर्ज नहीं की जाएगी। साथ ही आवेदन निरस्त भी किया जा सकता है। सलंग्न किये जाने वाले दस्तावेजों की जानकारी विभाग के सूचना पटल से प्राप्त की जा सकती है।

आवेदन पत्र की पावती – पदाभिहित अधिकारी आवेदक को प्रारुप-1 में आवेदन की पावती देगा। आवेदन पत्र की पावती में ही सेवा प्रदान करने के समय सीमा की जानकारी मिलेगी। साथ ही अपील करने के लिये पावती आवश्यक है।

सेवा प्राप्त नहीं होने पर अपील एवं पुनरीक्षण की प्रक्रिया – यदि पदाभिहित अधिकारी द्वारा निर्धारित समय सीमा में सेवा प्रदाय नहीं की जाती है या आवेदन पत्र नामंजूर कर दिया जाता है तो समय सीमा के भीतर शासन द्वारा निर्धारित प्रथम अपील अधिकारी को अपील की जा सकती है। यदि आवश्यक प्रथम अपीलीय अधिकारी के निर्णय से संतुष्ट नहीं हो या आवेदन निरस्त कर दिया जाता है तो निर्धारित समय सीमा में द्वितीय अपीलीय अधिकारी के यहां अपील की जा सकती है। यदि आवेदक द्वितीय अपील अधिकारी के निर्णय से भी सन्तुष्ट न हो तो वह पुनरीक्षण के लिए आवेदन दे सकता है। अपील एवं पुनरीक्षण के लिए कोई शुल्क नहीं लगता है।

शास्ति सम्बन्धी प्रावधान – अधिनियम को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से इसमें शास्ति अधिरोपित किए जाने का प्रावधान है। पदाभिहित अधिकारी एवं प्रथम अपील अधिकारी पर शास्ति आरोपित करने का अधिकार द्वितीय अपील अधिकारी को और द्वितीय अपील अधिकारी के ऊपर शास्ति आरोपित करने का अधिकार पुनरीक्षण अधिकारी को है। शास्ति आरोपित करने के पूर्व सम्बन्धित अधिकारी को अपना पक्ष रखने का अवसर भी प्रदान किया जाता है। शास्ति की राशि सेवा प्रदाय में असफल होने पर न्यूनतम

500 रूपये और अधिकतम 5000 रूपये तक हो सकती है एवं सेवाओं में विलम्ब करने पर न्यूनतम 250 रूपये प्रतिदिन एवं अधिकतम 5000 रूपये तक हो सकती है। साथ ही अनुशासनात्मक कार्यवाही भी की जा सकती है।

आवेदक को प्रतिकर (मुआवजा) का भुगतान– अधिनियम के अन्तर्गत आवेदक को प्रतिकर के भुगतान का भी प्रावधान है। द्वितीय अपील अधिकारी द्वारा पदाभिहित अधिकारी या प्रथम अपीलीय अधिकारी या दोनों पर अधिरोपित शास्ति के बराबर राशि तक प्रतिकर के रूप में आवेदक को भुगतान किए जाने का आदेश दिया जा सकेगा। प्रतिकर का भुगतान जिला कलेक्टर कार्यालय द्वारा आदेश दिनांक से 30 दिन के भीतर किया जाएगा। जो नीमच जिले में शास्ति आरोपित शुल्क एवं प्रतिकर (मुआवजा) की राशि तालिका 01 से स्पष्ट है।

तालिका क्रंमाक 01 (अगले पृष्ठ पर देखें)

लोक सेवा केन्द्रों की स्थापना– अधिनियम के अन्तर्गत लोक सेवाओं के लिए आवेदन पत्र प्राप्त करने एवं आवेदन पर लिए गए निर्णय आदि की जानकारी उपलब्ध कराने की दृष्टि से विकासखण्ड स्तर एवं शहरी क्षैत्र में लोक सेवा केन्द्र स्थापित किए गए है। जिससे कि नागरिको को लोक सेवा प्राप्त करने केन्द्र और नीमच जिलें में कुल 03 लोक सेवा केन्द्र स्थापित किए गए है जो इस प्रकार है –

तालिका क्रंमाक 02

नीमच जिले एवं म.प्र. में लोक सेवा अधिनियम 2010 के अंतर्गत लोक सेवाऐं प्रदान करने की स्थिति का अध्ययन (प्रारंभ से अब तक)

विवरण	नीमच जिला	म.प्र.
प्राप्त आवेदन	489208	1,50,81,184
निराकृत आवेदन	459793	1,38,53,516
लम्बित आवेदन	29415	12,27,668

स्त्रोत– लोक सेवा प्रबंध कार्यालय नीमच (म.प्र.) एवं संदर्भ क्रं. 9 एवं 10

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि नीमच जिले में लोक सेवा गारंटी अधिनियम 2010 के अंतर्गत प्राप्त आवेदनों में से 94 प्रतिशतों को निराकृत किया गया हैं एवं 6 प्रतिशत ही आवेदन लम्बित है जबकि प्रदेश में 92 प्रतिशत प्राप्त आवेदनों को निराकृत किया गया हैं एवं 8 प्रतिशत आवेदन निराकरण हेतु लंबित हैं। प्रदेश की तुलना में जिले की स्थिति ठीक है एवं निराकृत आवेदनों में 2 प्रतिशत अधिक है। अत: जिले की स्थिति बेहतर है।

मध्यप्रदेश लोक सेवाओं के प्रदान की गारंटी अधिनियम 2010 की प्रमुख समस्याएँ –

1. आवेदकों को अधिनियम के बारे में सही एवं पूर्ण जानकारी न होने के कारण अपूर्ण आवेदन पत्र प्रस्तुत किए जाते है साथ ही आवश्यक दस्तावेज संलग्न नही किए जाते है।
2. जिले में लोक सेवा केन्द्र विकासखण्ड स्तर पर ही स्थापित किए गए है जिससे इन केन्द्रों पर आवेदकों की भीड़ अधिक एकत्रित हो जाती है।
3. स्टॉफ की कमी से विभागीय अधिकारियों/कर्मचारियों पर काम का दबाव रहता है, इस कारण से सेवाओं को उपलब्ध कराने में कठिनाई आती है।
4. अधिनियम के अंतर्गत प्रदेश के सभी विभागों की समस्त सेवाओं को सम्मिलित नहीं किया गया है केवल प्राथमिक स्तर की सेवाओं को ही सम्मिलित करने से अधिनियम का क्षेत्र सीमित हो गया हैं।
5. प्रदेश के जिन विभागों में भ्रष्टाचार चरम सीमा पर है उन सेवाओं को अधिनियम में सम्मिलित नहीं किया गया है।
6. लोक सेवा प्रक्रिया शुल्क 30/– सभी सेवाओं के लिये समान रखा गया हैं जो नीतिगत रुप से सही नहीं हैं।
7. वर्तमान में लोक सेवा गारंटी अधिनियम में जिला स्तर के अधिकारियों द्वारा प्रदान की जा रही सेवाओं को ही अधिनियम के दायरे में रखा गया हैं। अत: संभाग व प्रदेश स्तर की सेवाऐं सम्मिलित न होने के कारण जानकारी प्राप्तकर्ता को विशेष कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है।
8. अधिसूचित सेवाओं में जिनमें कोई पुस्तक जैसे पावती अथवा नक्शा, निर्माण श्रमिक कार्ड आदि समय सीमा में निराकरण होना साफ्टवेयर पर दिखाये तो जाते है किंतु वास्तविकता में आम नागरिकों को उन्हें प्राप्त करने में अतिरिक्त प्रयास करना पड़ते है।
9. जिला लोक सेवा केन्द्रों को अधिकार एवं स्वतंत्रता से वंचित रखा गया है अत: कहीं न कहीं लोक सेवा केन्द्रों की सेवाऐं प्रभावित हो रही है।
10. लोक सेवा गारंटी अधिनियम में अधिकतम समय सीमा का अधिकारी दुरुपयोग कर रहे है एवं भेंट पूजा वाले आवेदनों पर जानकारी शीघ्रतिशीघ्र दी जाती है तथा बिना भेंट पूजा वाले आवेदनों को अंतिम दिवस पर जानकारी दी जाती है।
11. आवेदन पत्र में आवेदक की फोटो एवं बायोमेट्रिक का प्रयोग न होने के कारण लोक सेवा में जानकारी लेने का दुरुपयोग भी हो रहा है।

मध्यप्रदेश में लोक सेवा गारंटी अधिनियम 2010 को प्रभावी बनाने के सुझाव –

1. लोक सेवा केन्द्रो की संख्या बढ़ाई जाए।
2. जागरूकता के लिए प्रचार–प्रसार के साथ–साथ लोक सेवा दिवस मनाया जाए।
3. प्रदेश के शेष विभागो को भी इस अधिनियम के दायरे में लाया जाए।
4. आमजन के साथ ही सरकार को अपने अधिकारियों/कर्मचारियों संबंधी विभिन्न सेवा संबंधी आवश्यक सेवाओं को भी अधिसूचित किया जाए विशेषकर संचालनालय संबंधी सेवाओं के लिए।
5. कार्यालय प्रमुखों एवं विभाग प्रमुखों की बैठक लेकर यह जानकारी एकत्र की जाये कि विभाग की और कौन–कौन सी सेवाऐं लोक सेवा अधिनियम 2010 में सम्मिलित की जा सकती है।
6. प्रदेश के विभिन्न विभागों की शिकायत एवं निवारण को भी लोक सेवा अधिनियम में सम्मिलित किया जाना चाहिये।
7. प्रदेश के जो कार्यालय एवं विभाग भ्रष्टाचार के कारण बदनाम है जिनमें विशेषकर परिवहन, गृह, राजस्व आदि सम्मिलित हैं, उनकी समस्त सेवाओं को इस अधिनियम की परिधि में लाना चाहिये एवं इनकी सेवाऐं ऑन लाईन की जाना चाहिये।
8. लोक सेवा प्रक्रिया शुल्क (स्थायी 30/–) को कार्य के अनुसार निर्धारित करना चाहिये।
9. लोक सेवा गारंटी अधिनियम में जिला स्तर की सेवाओं के साथ साथ संभाग एवं प्रदेश की सेवाओं को सम्मिलित कर अधिनियम का क्षेत्र बढाया जाना चाहिये जिससे संभाग स्तर व प्रदेश स्तर पर हो रहे भ्रष्टाचार पर लगाम लगाई जा सके।
10. राज्य, संभाग, जिला, विकासखण्ड स्तर के समस्त लोक सेवा केन्द्रों का एक अलग से विभाग का निर्माण कर निर्वाचन आयोग की तरह स्वायत्ता प्रदान की जाना चाहिये तभी प्रदेश से भ्रष्टाचार समूल नष्ट होगा।

11. कुछ प्रकरणों में समय सीमा बहुत अधिक रखी गई है। अत: उनकी समय सीमा कम की जाना चाहिये तथा प्रकरणों के निपटारों में जानकारी प्रदान करने में प्रथम आवेदनों को प्रथम जानकारी देने के क्रम को निश्चित करना अनिवार्य होना चाहिये।
12. लोक सेवा अधिनियम में जानकारी प्राप्त करने में दलालों का प्रवेश हो गया हैं एवं इससे भी भ्रष्टाचार की बू आने लगी है अत: आवेदक की पहचान सुनिश्चित होना चाहिये और आवेदन पर आवेदक का फोटो एवं बायोमेट्रिक का प्रयोग होना चाहिये ताकि फर्जी आवेदनों पर रोक लग सके। तभी इस अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन के साथ-साथ प्रदेश में सुशासन की कल्पना को साकार किया जा सकेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 162 भोपाल, दिनांक 10 अप्रैल, 2010, पृ.क्र. 856
2. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 259 भोपाल, दिनांक 12 मई, 2010, पृ.क्र. 518
3. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 428 भोपाल, दिनांक 18 अगस्त, 2010, पृ.क्र.8 56
4. मध्यप्रदेश राजपत्र (असाधारण) क्रमांक 26 भोपाल, दिनांक 17 जनवरी, 2012, पृ.क्र. 52
5. मध्यप्रदेश जनसम्पर्क विभाग, भोपाल द्वारा प्रकाशित सुशासन की नई पहल-2011
6. मध्यप्रदेश जनसम्पर्क विभाग, भोपाल द्वारा प्रकाशित लोकसेवा अधिकार के दो वर्ष-2012
7. सुशासन एवं नीति विश्लेषण स्कूल, नर्मदा भवन, 59 अरेरा हिल्स, भोपाल द्वारा वर्ष 2012 में प्रकाशित 'सेवा का अधिकार' लोक सेवाओं के प्रदान की गारण्टी अधिनियम -2010
8. नई दुनिया 25 सितम्बर 2014 इन्दौर संस्करण पृष्ठ 17
9. शर्मा, डॉ. केशवमणि, शोध पत्र प्रकाशित नवीन शोध संसार ISSN 2320-8767 जुलाई से सितंबर 2014 पृष्ठ 68-70
10. वेबसाईट -
    (अ) www.lokseva.gov.in
    (इ) www.midmp.nic.in
    (उ) www.mpedistrict.gov.in
11. आवेदकों से व्यक्तिगत भेंट प्राप्त जानकारी के आधार पर।

तालिका क्रंमाक 01

नीमच जिले में लोक सेवा गारंटी अधिनियम अंतर्गत जुर्माना एवं शास्ति अधिरोपित करने एवं प्रतिकर (मुआवजा) की जानकारी

स.क्रं.	पदाभिहित अधिकारी का नाम एवं पदनाम	विभाग का नाम	प्रकरण क्रंमाक	आरोपित शुल्क	मुआवजा की राशि	मुआवजा पाने वाले का नाम
1	श्री व्ही.एस. ठकराव	सामाजिक न्याय विभाग	04/04.09.12	5000/- रु.	5000/- रु.	श्री कन्हैयालाल पिता खाकरमल बारेठ निवासी धामनिया तहसील जावद
2	श्री व्ही.एस. ठकराव	सामाजिक न्याय विभाग	06/04.09.12	3250/- रु.	3250/- रु.	श्री चतरा सिंह पिता पीथा चारण निवासी आलोरी गरवाड़ा तहसील सिंगोली
3	श्री जयशंकर तिवारी तहसीलदार जावद	सामाजिक न्याय विभाग	05/04.09.12	5000/- रु.	5000/- रु.	श्री बगदीराम पिता प्रभुलाल निवासी निलियां
4	श्री शाश्वत शर्मा, तहसीलदार	राजस्व विभाग	03/द्वितीय अपील /लोसेगा/13-14 दिनांक 28.02.2014	1000/- रु.	निरंक	निरंक
5	श्री शाश्वत शर्मा, तहसीलदार	राजस्व विभाग	03/द्वितीय अपील /लोसेगा/12-13 दिनांक 28.02.2014	1000/- रु.	निरंक	निरंक
6	श्री अनिल पटवा, अनुविभागीय अधिकारी (प्रथम अपील अधिकारी)	राजस्व विभाग	03/द्वितीय अपील /लोसेगा/12-13 दिनांक 28.02.2014	1000/- रु.	निरंक	निरंक

स्त्रोत: लोक सेवा प्रबंध कार्यालय नीमच (म.प्र.)

****

प्रधानमंत्री जन-धन योजना से भारत की बदलती तस्वीर

डॉ. विजय ग्रेवाल *

प्रस्तावना – वित्तीय समावेशन सरकार की एक राष्ट्रीय प्राथमिकता है, क्योंकि यह समावेशी विकास को सुगम बनाती है। बड़ी संख्या में लोगों के वित्तीय सेवाओं से वंचित होने के कारण देश का विकास बाधित होता है। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 15 अगस्त, 2014 को स्वतंत्रता दिवस के शुभ अवसर पर **'प्रधानमंत्री जन-धन योजना (पीएमजेडीवाई)''** की घोषणा की थी जो वित्तीय समावेशन के सम्बंध में एक राष्ट्रीय मिशन है, जो वहनीय तरीके से वित्तीय सेवाओं नामत: बैंकिंग/बचत तथा जमा खाते, विप्रेषण, ऋण, बीमा, पेंशन तक पहुँच सुनिश्चित करता है।

प्रधानमंत्री जन-धन योजना पूरे देश में एक साथ 28 अगस्त, 2014 को प्रारम्भ की गयी। उद्घाटन दिवस पर देश के हर नागरिक को बैंक से जोडने वाली प्रधानमंत्री जन-धन योजना के माध्यम से पूरे देश में 79 मेगा शिविर, 70,000 शिविर लगाये गये और इन शिविरों में 1,84,68,000 करोड़ बैंक खाते खोले गये और इतने ही लोगों को बीमा सुरक्षा उपलब्ध कराई गयी। इस योजना का सबसे बडा लक्ष्य है सबको अर्थव्यवस्था से जोडकर आर्थिक छुआछुत को खत्म करना। जनगणना 2011 के अनुसार देश में 24.67 करोड़ परिवारों में से 14.48 करोड (58.7 प्रतिशत) परिवारों की पहुँच बैंकिंग सेवाओं तक है।

योजना का परिचय एवं लाभ – प्रधानमंत्री जन-धन योजना राष्ट्रीय वित्तीय समावेशन मिशन है। इस योजना में खाता किसी भी बैंक शाखा अथवा व्यवसाय प्रतिनिधि (बैंक मित्र) आउटलेट में खोला जा सकता है। खाता जीरो बैलेन्स के साथ खोला जा रहा है।

प्रधानमंत्री जन-धन योजना के करोड़ो खाते खुल चुके है तथा करोड़ो खाते जो कि खुलने वाले है, उन्हें कई प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभ होंगे।

इस योजना से जुडे विशेष लाभ निम्नानुसार है :-

1. जमा राशि पर ब्याज दिया जायेगा।
2. प्रत्येक खाताधारी को एक लाख रूपये का दुर्घटना बीमा मुफ्त दिया जावेगा।
3. कोई न्यूनतम शेष रखना आवश्यक नहीं है।
4. 30,000 रू. का जीवन बीमा कवर मुफ्त मिलेगा।
5. भारत भर में धन का आसानी से अंतरण किया जा सकता है।
6. सरकारी योजनाओं के लाभार्थियों को इन खातों से लाभ अंतरण प्राप्त होगा।
7. छह माह तक इन खातों के संतोषजनक परिचालन के पश्चात् ओवरड्राफ्ट सुविधा दी जायेगी।
8. पेंशन तथा बीमा उत्पादों तक पहुँच संभव।
9. रूपे डेबिट कार्ड दिया जायेगा जिसका 45 दिनों में कम से कम एक बार इस्तेमाल किया जाना आवश्यक होगा।
10. प्रति परिवार मुख्यत: परिवार की स्त्री के लिए एक खाते में 5,000 रू. तक की ओवर ड्राफ्ट की सुविधा उपलब्ध है।
11. इस योजना के अंतर्गत किसान क्रेडिट कार्ड को भी रूपे किसान कार्ड के रूप में जारी किए जाने का प्रस्ताव शामिल है।
12. इस योजना में लोगों को सूक्ष्म बीमा भी उपलब्ध कराया जायेगा।

गाँव में 28 रूपए रोज और शहर में 32 रूपए रोज पर गुजर करने वाले किसी भारतीय को अगर इतनी सुविधा मिल जाए तो क्या हम यह नहीं कह सकते कि उसकी लॉटरी खुल गई ?यह योजना यदि 'मनरेगा'' की तरह प्रवाह-प्रतित न हुई तो मान लीजिए कि यह करोड़ो लोगो की जिंदगी में नई रोशनी भर देगी।

योजना की प्रगति – प्रधानमंत्री जन-धन योजना की प्रारम्भ तिथि से 28 अगस्त, 2014 से दिनांक 22 नवम्बर, 2014 तक प्रगति इस प्रकार है :-

तालिका क्रमांक 01 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 01 के विवेचन से स्पष्ट है कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा दिनांक 22 नवम्बर, 2014 तक ग्रामीण क्षेत्रों में **345.74 लाख** तथा शहरी क्षेत्रों में **290.63 लाख** इस प्रकार **636.37** कुल खाते खोले गये है। इसी प्रकार 452 लाख रूपे डेबिट कार्ड जारी किए गये है तथा इन खातो में शेष राशि **5,02,173.63 लाख** रूपये है तथा शून्य शेष वाले खातों की संख्या **475.70 लाख** है जो कि कुल खोले गये खातों का 74.75 प्रतिशत है। तालिका के विवेचन से यह भी स्पष्ट है कि सबसे अधिक **144.11 लाख** खाते स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया के द्वारा खोले गए है तथा सबसे कम **0.45 लाख** खाते भारतीय महिला बैंक के द्वारा खोले गए है।

तालिका क्रमांक 02 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 02 के विवेचन से स्पष्ट है कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको द्वारा दिनांक 22 नवम्बर, 2014 तक ग्रामीण क्षेत्र में **113.84 लाख** तथा शहरी क्षेत्र में **20.21 लाख** खाते खोले गये है। इस प्रकार कुल **134.10 लाख** खाते खोले गए है तथा इन खातों में जमा राशि **83,318.29 लाख** रू. है तथा शून्य शेष वाले खातों की संख्या **104.50 लाख** रू. है, जो कि कुल खोले गए खातों का **77.92 प्रतिशत** है। इन बैंको के द्वारा **18.97 लाख** रूपे डेबिट कार्ड भी जारी किए जा चुके है। सबसे अधिक **20.73 लाख** खाते स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया से संबंधित क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के द्वारा खोले गए है तथा सबसे कम **0.1 लाख** खाते पंजाब एण्ड सिन्ध बैंक से संबंधित क्षेत्रीय बैंको के द्वारा खोले गये है।

तालिका क्रमांक 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका क्रमांक 03 के विवेचन से स्पष्ट है कि निजी क्षेत्र की बैंको द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में **10.51 लाख** तथा शहरी क्षेत्रों में **10.81 लाख** खाते खोले है। इस प्रकार कुल खोले गये खातों की संख्या **21.32 लाख** है तथा इन

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री वैष्णव वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

खातों में जमा राशि **37,005.91 लाख** रूपये है तथा शून्य शेष वाले खातों की कुल संख्या **14.07 लाख** रूपये है, जो कि कुल खोले गये खातों का 66 प्रतिशत है। इन खातों पर **11.03 लाख** रूपये डेबिट कार्ड भी जारी किये जा चुके है।

तालिका क्रमांक 04 (नीचे देखे)

तालिका क्रमांक 04 के विवेचन से स्पष्ट है कि दिनांक 22 नवम्बर, 2014 तक भारत देश के ग्रामीण क्षेत्रों में **470.09 लाख** तथा शहरी क्षेत्र में **321.65 लाख** इस प्रकार कुल **791.79 लाख** खाते खोले गए है। इन खातों में कुल जमा राशि **622497.83 लाख** रूपए है तथा शून्य शेष वाले खातों की संख्या **594.27 लाख** है जो कि कुल खोले गए खातों का **75.05 प्रतिशत** है। इसी प्रकार जारी किये गए रूपये डेबिट कार्ड की संख्या **482 लाख** है।

तालिका के विवेचन से यह भी स्पष्ट होता है कि सबसे अधिक **636.37 लाख** खाते सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको के द्वारा खोले गए है। उसके बाद **134.10 लाख** खाते क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के द्वारा खोले गए है तथा सबसे कम **21.32 लाख** खाते निजी क्षेत्र के बैंको के द्वारा खोले गए है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट प्रतीत होता है कि **28 अगस्त, 2014 से 22 नवम्बर, 2014** की मात्र **87 दिनों** की अवधि में कुल **791.79 लाख** खाते खुलना मोदी सरकार की इस प्रधानमंत्री जन-धन योजना की लोकप्रियता, जनमानस के बीच व्यापक प्रचार-प्रसार तथा वर्तमान मोदी सरकार के प्रति जनता के विश्वास एवं प्रेम का परिचायक है।

उपसंहार – यूपीए सरकार देश के पाँच करोड़ परिवारों के बारह करोड़ लोगों को फायदा पहुँचाने के लिए **'मनरेगा''** लाई थी। इसी योजना की टक्कर में प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी की एनडीए सरकार ने **'प्रधानमंत्री जन-धन योजना''** शुरू कर जनता की अपेक्षाओं पर खरा उतरने का भरसक प्रयास किया है। यह योजना इतनी आकर्षक है कि पहले ही दिन **1,84,68,000** खाते खुल गए। सरकार का लक्ष्य था कि कम से कम साढ़े सात करोड खाते जनवरी 2015 तक खुल जायें लेकिन **22 नवम्बर, 2014** तक ही इससे अधिक लगभग **7.92 करोड** खाते इस योजना में खुल चुके है। जिस रफ्तार से अभी खाते खुले है, यदि कमोबेश यही रफ्तार रही तो कोई आश्चर्य नही कि देश में अगले साल तक 20 करोड़ खाते खुल जाऐ यदि ऐसा हो सके तो एक अर्थ में यह वित्तीय क्रांति होगी क्योंकि भारत के उन लोगों के भी अब बैंक में खाते होने लगे है जिन्हें हम गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वालों की श्रेणी में रखते है। इस योजना का सरकारी लक्ष्य अगस्त 2018 तक 7.5 करोड़ परिवारों में 15 करोड़ बैंक खाते खोलना है। इस योजना की शुरूआत का मुख्य उद्देश्य यह है कि 7.64 करोड़ शहरी गरीबों और 2.55 करोड़ ग्रामीण गरीबों के पास बैंक खाता नहीं है। इन लोगों के खाते बैंक में खुलने के बाद सामाजिक सुरक्षा योजनाओं तथा सब्सिडी का रूपया सीधे लाभार्थियों के खातों में जमा हो जावे। जब सरकारी रूपया नगद बँटता है तो हमें पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गाँधी का वह अमर वाक्य याद आता है कि असली आदमी के पास पहुँचते-पहुँचते वह बस 15 पैसे रह जाता है। जब यह रूपया बैंको के जरिए ग्रामीणों, गरीबों, वंचितों, अल्पशिक्षितों और महिलाओं के हाथ में जायेगा तो उसकी लूट-खसोट जरा मुश्किल हो जायेगी। उम्मीद है कि इस योजना के आने के बाद डायरेक्ट बेनिफिट ट्रांसफर होगा। शुरूआत रसोई गैस से हो सकती है, गैर जरूरतमंदों को सब्सिडी रोकने में मदद मिलेगी। किसान कार्ड भी इसी योजना के तहत जारी होंगे। मनरेगा के तहत मजदूरी का भुगतान इन्हीं खातो के माध्यम से होगा नगदी का इस्तेमाल नही होगा जिससे कि भ्रष्टाचार भी कम होगा। मनरेगा के जॉब कार्ड धारक भी प्रधानमंत्री जन-धन योजना के दायरे में आ जायेंगे। योजना 80 फीसदी तक भी लागू हो जाए तो एनडीए सरकार की बडी कामयाबी मानी जायेगी। वास्तव में देखा जाये तो भारत की अर्थव्यवस्था में प्रधानमंत्री जन-धन योजना एक मिल का पत्थर साबित होगी और प्रत्येक भारतीय का अपना बैंक खाता साथ में रूपे डेबिट कार्ड होगा और इसी खाते द्वारा समस्त शासकीय योजनाओं का उसे सीधा लाभ प्राप्त होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर, इन्दौर
2. दैनिक नईदुनिया, इन्दौर
3. रोजगार और निर्माण, भोपाल
4. इन्टरनेट से प्राप्त विभिन्न आँकडे एवं सूचनाएँ
5. प्रधानमंत्री जन-धन योजना का ब्रोशर
6. www.pmjdy.gov.in

तालिका क्रमांक 04 : विभिन्न बैंको के द्वारा दिनांक 22 नवम्बर, 2014 तक खोले गये कुल खाते

बैंक का नाम	खातों की संख्या (लाख में)			रूपये डेबिट कार्ड (लाख में)	खातों में शेष राशि (लाख में)	शून्य शेष वाले खातों की संख्या(लाख में)
	ग्रामीण	शहरी	कुल खाते			
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक	345.74	290.63	636.37	452.00	502173.63	475.70
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	113.84	20.21	134.10	18.97	83318.29	104.50
निजी बैंक	10.51	10.81	21.32	11.03	37005.91	14.07
कुल	**470.09**	**321.65**	**791.79**	**482**	**622497.83**	**594.27**

तालिका क्रमांक 01: सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको के द्वारा दिनांक 22 नवम्बर, 2014 तक खोले गए खाते

बैंक का नाम	खातों की संख्या (लाख में)			रूपये डेबिट कार्ड (लाख में)	खातों में शेष राशि (लाख में)	शून्य शेष वाले खातों की संख्या(लाख में)
	ग्रामीण	शहरी	कुल खाते			
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	59.29	84.82	144.11	82.57	13568	132.77
बैंक ऑफ बडौदा	17.46	25.11	42.57	36.8	30242	23.39
केनरा बैंक	28.19	13.73	41.92	33.96	72960.45	22.83
पंजाब नेशनल बैंक	32.59	8.2	40.8	18.28	77553.49	33.71
सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया	27.47	8.96	36.43	24.77	10785.51	28.64
बैंक ऑफ इंडिया	14.57	21.24	35.8	27.2	13180	26.63
यूनियन बैंक ऑफ इंडिया	22.69	741	30.1	26.28	11560.66	23.2
सिंडिकेट बैंक	15.64	8.54	24.18	13.29	10722.57	19.01
यूको बैंक	10.75	11.06	21.81	19.4	39595	16.36
यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया	12.29	8.55	20.84	12.67	34003.35	7.19
इंडियन ओवरसीज बैंक	6.42	13.09	19.51	14.88	926.38	16.3
भारतीय बैंक	11.82	7.07	18.89	18.28	5714.92	14.6
इलाहाबाद बैंक	12.81	5.75	18.56	9.49	3174.99	15.25
स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद	5.51	11.12	16.63	16.58	5061.34	14.13
ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स	9.08	6.47	15.54	10.25	48935.5	7.34
देना बैंक	8.95	5.39	14.34	11.83	6471	11.08
बीकानेर एण्ड जयपुर-स्टेट बैंक	6.17	7.92	14.1	12.17	20031.4	8.84
आंध्रा बैंक	8.08	5.48	13.56	12.1	2802.67	10.73
कार्पोरेशन बैंक	6.64	6.36	13	9.29	21625.72	5.49
बैंक ऑफ महाराष्ट्र	8.41	4.11	12.52	7.64	6029.44	9.16
पंजाब एंड सिंध बैंक	5.8	3.28	9.08	7.23	24388.95	5.5
स्टेट बैंक ऑफ पटियाला	3.1	5.86	8.96	8.2	23106	6.18
विजया बैंक	4.37	3.46	7.82	7.01	1578.89	5.68
आईडीबीआई	3.09	3.12	6.22	4.66	1030.27	5.5
स्टेट बैंक ऑफ मैसूर	4.24	1.41	5.65	5.37	278.92	5.34
स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर	0.31	2.67	2.98	1.34	15758	0.59
भारतीय महिला बैंक	0	0.45	0.45	0.45	188.4	0.26
कुल	**345.74**	**290.63**	**636.37**	**452.00**	**5,02,173.63**	**475.70**

तालिका क्रमांक 02 एवं 03 अगले पृष्ठ पर है

तालिका क्रमांक 02 : क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के द्वारा दिनांक 22 नवम्बर, 2014 तक खोले गये खाते

बैंक का नाम	खातों की संख्या (लाख में)			रूपे डेबिट कार्ड (लाख में)	खातों में शेष राशि (लाख में)	शून्य शेष वाले खातों की संख्या(लाख में)
	ग्रामीण	शहरी	कुल खाते			
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया	17.8	2.92	20.73	1.23	10513	14.55
यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया	15.98	0.26	16.24	0.44	8602.59	12.39
सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया	11.92	2.23	14.15	0.58	16321.31	12.38
पंजाब नेशनल बैंक	11.11	2.31	13.43	1.36	18205.9	9.93
बैंक ऑफ बडौदा	8.89	2.65	11.54	4.69	5520	9.62
बैंक ऑफ इंडिया	8.52	1.98	10.5	0.42	1132	9.83
सिंडिकेट बैंक	6.72	2.17	8.9	0.98	7733.87	7.03
बीकानेर एंड जयपुर स्टेट बैंक	4.89	0.16	5.05	3.95	3976.64	4.6
इलाहाबाद बैंक	4.13	0.84	4.98	0.92	548.16	3.8
यूनियन बैंक ऑफ इंडिया	3.73	1.06	4.8	0.17	2476.33	4.45
केनरा बैंक	2.84	1.57	4.41	1.56	215.46	2.19
स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद	3.31	0.17	3.49	0.47	568.84	2.84
यूको बैंक	3.18	0.08	3.26	0.13	2644	2.07
इंडियन ओवरसीज बैंक	2.92	0.09	3.01	0	1890.24	1.64
भारतीय बैंक	2.23	0.36	2.59	0	719.09	2.13
स्टेट बैंक ऑफ मैसूर	1.81	0.77	2.59	1.59	1125.75	1.78
बैंक ऑफ महाराष्ट्र	1.24	0.43	1.67	0.18	89	1.12
देना बैंक	1.34	0.05	1.39	0.28	756	1.2
आंध्रा बैंक	0.89	0.08	0.96	0	189.74	0.76
स्टेट बैंक ऑफ पटियाला	0.3	0.01	0.31	0.01	87	0.17
पंजाब एंड सिंध बैंक	0.09	0.02	0.1	0.01	3.37	0.02
योग	**113.84**	**20.21**	**134.10**	**18.97**	**83318.29**	**104.50**

तालिका क्रमांक 03 : निजी बैंको के द्वारा 22-11-2014 तक खोले गए खाते

बैंक का नाम	खातों की संख्या (लाख में)			रूपे डेबिट कार्ड (लाख में)	खातों में शेष राशि (लाख में)	शून्य शेष वाले खातों की संख्या(लाख में)
	ग्रामीण	शहरी	कुल खाते			
एक्सिस बैंक	0.67	1.29	1.97	0.73	1188.22	1.3
सिटी यूनियन बैंक लिमिटेड	0.08	0.35	0.44	0	210.33	0.3
फेडरल बैंक	1.1	0.33	1.43	0.64	9770.97	0.75
एचडीएफसी बैंक	1.21	4.95	6.16	2.51	21110.06	3.74
आईसीआईसीआई बैंक	4.09	1.03	5.12	5.11	658.28	4.25
इंडसइंड बैंक	0.1	0.67	0.76	0.6	97.41	0.69
जम्मू-कश्मीर बैंक	2.27	0.53	2.8	0	3363.18	1.47
करूर वैश्य बैंक	0.04	0.55	0.6	0.51	123.23	0.49
कोटक महिन्द्रा बैंक	0.23	0.17	0.39	0.38	98.83	0.35
लक्ष्मी विलास बैंक	0.04	0.17	0.21	0	40.92	0.13
रत्नाकर बैंक	0.57	0.28	0.85	0.28	49.94	0.57
साउथ इंडियन बैंक	0.09	0.48	0.57	0.24	284.26	0
यस बैंक	0.02	0.01	0.03	0.03	10.28	0.03
योग	**10.51**	**10.81**	**21.32**	**11.03**	**37005.91**	**14.07**

****

आटा मिलों का लागत-लाभ विश्लेषण (उज्जैन जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. ऋतु पोरवाल *

प्रस्तावना – पाश्चात्य देशों में औद्योगिकरण को आर्थिक प्रगति का द्योतक माना जाता है जबकि भारत में कृषि विकास को ही आर्थिक विकास का आधार माना जाता है। अत: औद्योगिक विकास के लिए कृषि विकास करना अति आवश्यक है। भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसमें 74.29 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है और जिनका प्रमुख उद्यम कृषि है। भारत में 76.3 प्रतिशत जनसंख्या कृषि संबंधित कार्यो से अपना जीवनयापन करती है। भारतीय जनता का प्रमुख व्यवसाय कृषि होने के कारण कृषि पर आवश्यकता से अधिक जनसंख्या निर्भर है। अत: प्रतिव्यक्ति उपज का हिस्सा भी बहुत कम आता है। कृषि में छिपी बेरोजगारी पाई जाती हैं जिसे कम करने से औद्योगिकरण को भी गति प्राप्त हो सकेगी जिससे उनके जीवन स्तर एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होगी। देश के लिए बेरोजगारी सबसे बड़ी चुनौती है कि आज गांव का बेरोजगार काम की तलाश में महानगरों की ओर पलायन कर दर-दर की ठोकरे खा रहा है। ऐसी दशा में आवश्यक हो जाता है कि जो भी ग्रामीण बेरोजगार है उसको कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों की ओर मोड़ा जाए जिससे ग्रामीण प्रतिभा का शहरों की ओर पलायन रूक जाए। बेरोजगारी को रोकने के लिए कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों जैसे आटा मिल, दाल मिल, तेल मिल आदि को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। यदि देश का विकास करना है तो कृषि एवं उसके उत्पाद पर आधारित उद्योगों को वैश्विक परिदृश्य में अधिक ताकत के रूप मे प्रतिष्ठित करना होगा।

कृषि उद्योगों की अवधारणा कृषि एवं उद्योगों के महत्व एवं अंत:निर्भरता को दर्शाती है। 'कृषि उद्योग ऐसे उद्योगों को कहते है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि के आगत-निर्गत से जुड़े हुए होते है। ये उद्योग अधिकांशत: कृषि उपज पर निर्भर रहते है या कृषि से प्राप्त कच्चे माल की प्रक्रिया से उपयोग सामग्री का उत्पादन करते है।' कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार होने के कारण औद्योगिक इकाईयों औद्योगिक रोजगार तथा कुल उत्पादन मूल्य में कृषि उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान होता है जबकि इन उद्योगों को बहुत कम पूंजी विनियोग की आवश्यकता होती है। इसका कारण यह है कि ये मिल मुख्यत: श्रम प्रधान होती है।

उद्देश्य – शोध का प्रमुख उद्देश्य उज्जैन जिले की आटा मिलों की वित्तीय स्थिति का अध्ययन कर उनका लागत-लाभ विश्लेषण करना है एवं मिलों में आने वाली समस्याओं का अध्ययन कर उनका समाधान करना है।

प्राक्कल्पना – पुष्टि की प्रत्याशा में प्राक्कल्पना की जाती है कि कच्चे माल के भावों अनिश्चितता के कारण लागत प्रभावित हुई है जिसके कारण लाभार्जन क्षमता भी प्रभावित हुई है।

आटा मिलों का लागत-लाभ विश्लेषण – लागत संरचना – किसी वस्तु के निर्माण में जो खर्चे किए जाते है वे सब मिलकर वस्तु की लागत कहलाती है। किसी भी वस्तु का निर्माण सामग्री, श्रम तथा अन्य व्ययों की सहायता से ही संभव होता है। उदाहरणार्थ आटा मिलों को संचालित करने के लिए कच्ची सामग्री के रूप में गेहूँ, श्रम तथा अन्य व्ययों (गोदाम किराया, बीमा व्यय, विद्युत) का प्रयोग किया जाता है। लागत संरचना लागत के तत्वों पर आधारित होती है। ये तीन तत्व है- सामग्री, श्रम तथा व्यय।

ये तत्व प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार के होते है। प्रत्यक्ष अर्थात जिसे वस्तु निर्माण में प्रत्यक्ष रूप से प्रयोग किया गया हो एवं अप्रत्यक्ष अर्थात् जिसका प्रयोग वस्तु निर्माण में प्रत्यक्ष रूप से नहीं किया गया है। उदाहरणार्थ आटा मिल में प्रयुक्त गेहूँ एक कच्चे माल के रूप में प्रत्यक्ष सामग्री है तथा मशीनों के लिए तेल, झाडू, मशीनों की सफाई का कपड़ा इत्यादि अप्रत्यक्ष सामग्री है।

प्रत्यक्ष सामग्री, प्रत्यक्ष श्रम एवं प्रत्यक्ष व्यय को जोड़ने पर मूल लागत ज्ञात की जाती है। उपरिव्यय से तात्पर्य यहां कारखाना उपरिव्यय कार्यालय उपरिव्यय तथा विक्रय एवं वितरण उपरिव्ययों से है।

आटा मिलों का लागत विश्लेषण –लागत के विभिन्न तत्वों को अर्थात् प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष व्ययों को जोड़कर उत्पादित वस्तु की कुल लागत प्राप्त की जाती है। किसी भी संस्था में लागत ज्ञात करते समय विभिन्न चरणों में कार्य किया जाता है। अत: जिस क्रम से लागत ज्ञात की जाती है उसे ही लागत विश्लेषण कहा जाता है। कुल लागत ज्ञात करने के लिए लागत विश्लेषण के निम्न प्रारूप को प्रदर्शित किया गया है-

विवरण	**प्रति क्विंटल**	**रकम**
सामग्री का मूल्य		–
+ प्रत्यक्ष व्यय एवं श्रम		–
	●मूल लागत	–
+ कारखाना उपरिव्यय		–
	● कारखाना लागत	–
+ कार्यालय उपरिव्यय		–
	● कार्यालय लागत	–
+ विक्रय एवं वितरण उपरिव्यय		–
	● बेचे गए माल की लागत	–
+ कर एवं वित्तीय उपरिव्यय		–
	● कुल लागत	–

आटा मिलों का लागत-लाभ विश्लेषण – माल की लागत एवं विक्रय लागत के अंतर को लाभ के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। लागत पर जब विक्रय का आधिक्य पाया जाता है तब विक्रेता को लाभ होता है एवं जब विक्रय पर लागत का आधिक्य पाया जाता है तो विक्रेता को हानि होती है। आटा मिलों की हानि या लाभ को निम्न समीकरण द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है-

* अतिथि विद्वान (वाणिज्य) शासकीय विक्रम महाविद्यालय,खाचरौद, जिला-उज्जैन (म.प्र) भारत

हानि = लागत मूल्य – विक्रय मूल्य
लाभ = विक्रय मूल्य – लागत मूल्य

तालिका अगले पृष्ठ पर देखे

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि जिले की आटा मिलों में सर्वाधिक लाभ घासीराम कालूराम आटा मिल द्वारा 249 रूपये प्रति क्विंटल 20.81 प्रतिशत की दर से प्राप्त किया गया है। मिल द्वारा कुल 550 हजार क्विंटल माल का उत्पादन किया गया है। मिल द्वारा उत्पादित माल का लागत मूल्य 1196 रूपये प्रति क्विंटल है तथा विक्रय मूल्य 1445 रूपये प्रति क्विंटल पाया गया है। खण्डेलवाल इण्डस्ट्रीज द्वारा कुल 1300 हजार क्विंटल माल का उत्पादन एवं विक्रय किया गया है। मिल में 214 रूपये प्रति क्विंटल लाभ 17.96 प्रतिशत की दर प्राप्त किया है। राजेन्द्र इन्टरप्राइजेस द्वारा 500 हजार क्विंटल माल का उत्पादन किया गया है। मिल द्वारा 202 रूपये प्रति क्विंटल लाभ 16.79 प्रतिशत की दर से ज्ञात किया गया है। माल का लागत मूल्य 1203 रूपये प्रति क्विंटल है तथा विक्रय मूल्य 1405 रूपये प्रति क्विंटल पाया गया है। राजेन्द्र इन्टरप्राइजेस के विक्रय किए गए माल का लाभ प्रतिशत अन्य दो मिलों की तुलना में कम पाया गया है। तालिका के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि लाभ प्रतिशत में वृद्धि का कारण लागत पर विक्रय का आधिक्य पाया गया है।

कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों की समस्याएँ एवं सुझाव – हमारा देश कृषि प्रधान देश है तथा इसकी जनसंख्या बहुत अधिक होने के कारण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना अत्यन्त आवश्यक है। यदि हम अपने देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना चाहते है तो कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों का विकास अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। सरकार इन उद्योगों के लिए प्रयास तो कर रही है परन्तु फिर भी इनके विकास के मार्ग में कठिनाईयाँ अनुभव की जा रही है। जिले में संचालित उद्योगों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है जो निम्नानुसार है–

1. कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है। मानसून की अनिश्चितता के कारण कृषि उपज में भी अनिश्चितता बनी रहती है जिससे इन उद्योगों को कच्चे माल की प्राप्ति में कठिनाई आती है।
2. इन उद्योगों के द्वारा कच्चे माल की प्राप्ति राज्यीय एवं अंतर्राज्यीय बाजारों से की जाती है जिससे कच्चा माल अधिक मूल्य पर प्राप्त होता है फलस्वरूप इसका लागत मूल्य अधिक होता है।
3. आटा मिलों के लिए बैंको द्वारा कोई विशेष योजना नहीं चलाई गई है जिससे उन्हें उच्च ब्याज दर पर ऋण लेना पड़ता है तथा बैंक से ऋण प्राप्त करने में उद्यमी के समक्ष प्रतिभूति की समस्या भी उत्पन्न होती है।
4. आटा मिलों द्वारा अपना माल मध्यस्थों के द्वारा विक्रय करवाया जाता है, जिससे लागतों में वृद्धि हो जाती है।
5. नागरिकों द्वारा ब्राण्डेड उत्पादों का उपयोग स्थानीय उत्पादों की अपेक्षा अधिक किये जाने के कारण इन्हें जटिल प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है एवं अपना माल प्रतिकूल शर्तों पर बेचना पड़ता है।
6. श्रमिक से संबंधित समस्या भी बनी रहती है। व्यस्त समय में यह समस्या अधिक तीव्र हो जाती है।
7. विद्युत की समस्या के कारण क्षेत्रों की अनेकों मिले बंद पड़ी है।
8. उज्जैन जिले के अंतर्गत अनेक मिले पुरानी है जिसके कारण इनके भवन की स्थिति माल की सुरक्षा की दृष्टि से ठीक नहीं पाई गई है जिस कारण भण्डारण की समस्या बनी हुई है।
9. सरकार द्वारा इन उद्योगों के विकास के लिए कोई विशेष कार्यक्रम नहीं चलाए गए है जिनसे इनका वांछित विकास नहीं हो पाया है।
10. इन उद्योगों द्वारा नवीनतम तकनीकी का प्रयोग नहीं किए जाने के कारण इनकी पूर्ण उत्पादन क्षमता का उपयोग नहीं हो पा रहा है।

इन समस्याओं के समाधान हेतु निम्न प्रयास किए जा सकते है–

1. कच्चे माल की उपलब्धता स्थानीय स्तर पर एवं निकटतम स्थानों से की जा सके इस दिशा में प्रयास किये जाने चाहिए। विशेष रूप से भण्डारण पर ध्यान दिया जाना चाहिए।
2. कृषि आधारित उद्योगों के लिए ऋण प्रक्रिया एवं ब्याज दर युक्ति संगत की जानी चाहिए।
3. मिल मालिकों द्वारा माल की विपणन प्रक्रिया में सुधार करना चाहिए। उन्हें बाजार में अपने माल के स्थायित्व हेतु उसका प्रचार–प्रसार करना चाहिए जिससे स्थानीय उपभोक्ता उससे आकर्षित होकर विक्रय वृद्धि में योगदान दे।
4. विद्युत की समस्या के समाधान के लिए सरकार एवं निजी क्षेत्र द्वारा इन उद्योगों के लिए निरंतर अबाधित विद्युत आपूर्ति हेतु प्रयास किये जाने चाहिए।
5. श्रमिकों को प्रशिक्षित एवं अभिप्रेरित कर उनके कार्यहीन समय को न्यूनतम करते हुए अधिकाधिक उत्पादन हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए।
6. उत्पाद के सुरक्षित भण्डारण हेतु आधुनिकतम भण्डारगृहों की स्थापना की जानी चाहिए साथ ही पुराने भण्डारगृहों की आवश्यकतानुसार मरम्मत की जानी चाहिए।
7. सरकार एवं औद्योगिक संगठनों के द्वारा इन उद्योगों के विकास हेतु कार्यक्रमों, संगोष्ठियों एवं कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए।
8. उद्योगों के स्वामियों को तकनीकी ज्ञान की जानकारी प्रदान करने के लिए सरकार द्वारा कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए तथा उन्हें यह अवगत करवाया जाए कि वे किसी तकनीकी विशेषज्ञ की सहायता लेकर अपने उद्योगों में आधुनिक तकनीकियों का प्रयोग करे जिससे उत्पादन में वृद्धि कर लाभ में भी वृद्धि की जा सके।
9. इन उद्योगों के विकास हेतु निरन्तर शोध एवं अनुसंधान प्रक्रिया जारी की जानी चाहिए।

शोध के अपेक्षित परिणाम की पुष्टि – पुष्टि की प्रत्याशा में प्राक्कल्पना की गई थी कि कच्चे माल के भावों में अनिश्चितता के कारण लागत प्रभावित हुई है जिसके कारण लाभार्जन क्षमता प्रभावित हुई है।

निष्कर्ष –

1. इन उद्योगों में किसी विशेषज्ञ की नियुक्ति नहीं की गई है।
2. आटा मिलों में एकाकी व्यवसाय के अंतर्गत कार्य करने वाली मिलों का बाहुल्य पाया गया है।
3. इन मिलों में एक पाली 8 घंटे की होती है।
4. जिले में संचालित आटा मिलों का प्रबंधन कार्य मिल मालिकों के परिवार के सदस्यों द्वारा किया जा रहा है।
5. लेखा संबंधित समस्त कार्य करने के लिए मुनीम की नियुक्ति की गई है।
6. इन मिलों में विभागीकरण पद्धति का प्रयोग नहीं किया गया है।
7. श्रमिकों की भर्ती के लिए 'कारखाने के दरवाजे पर भर्ती' स्त्रोत का सर्वाधिक प्रयोग किया गया है।

8. आटा मिलों में स्थायी पूंजी की तुलना में कार्यशील पूंजी की अधिकता पाई गई है।
9. जिले की आटा मिलों द्वारा पूंजी के स्त्रोत में स्वयं की पूंजी का प्रयोग अधिक किया गया है।
10. मिलों की विपणन प्रक्रिया उचित नहीं पाई गई है।
11. विपणन कार्य स्वामी एवं मध्यस्थों के माध्यम से किया जा रहा है।
12. इन मिलों में सुरक्षित भण्डारण की वैज्ञानिक पद्धति नहीं पाई गई है।
13. इन मिलों में अत्याधुनिक तकनीकों का प्रयोग नहीं किया जा रहा है जिससे उत्पादन क्षमता प्रभावित हुई है।
14. आटा मिलों में सर्वाधिक लाभ प्रतिशत घासीराम कालूराम आटा मिल का है एवं न्यूनतम लाभ प्रतिशत राजेन्द्र इन्टरप्राइजेस का है।
15. इन मिलों का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ है कि पूर्व की तुलना में लाभ प्रतिशत में वृद्धि हुई है जिसका कारण उनकी लागत एवं विक्रय के मध्य पाया गया अंतर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. यादव सुबहसिंह : कृषि अर्थव्यवस्था, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. मुखर्जी रविन्द्रनाथ : सामाजिक शोध एवं सांख्यिकी, विवेक प्रकाशन दिल्ली।
3. विकास आयुक्त : लघु उद्योग, लघु उद्योग परियोजनाएँ, खण्ड प्रथम, उद्योग मंत्रालय भारत सरकार, नई दिल्ली।
4. सिंह इंद्रजीत : श्रमिक विधियाँ, सेन्ट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद।
5. किशोर रवि एम : लागत लेखांकन टेक्समेन अलाइड सर्विसेस प्रा. लि., दिल्ली।
6. www.industries.com
7. इंडियन लेबर ईयर बुक
8. www.raftar.in

तालिका 01
जिले की आटा मिलों का प्रति क्विंटल
लागत–लाभ विश्लेषण

क्र.	मिल का नाम	कुल उत्पादन (हजार क्विं.)	विक्रय मूल्य (रू. में)	लागत मूल्य (रू. में)	लाभ	
					रूपये	प्रतिशत
1.	खण्डेलवाल इण्डस्ट्रीज	1300	1405	1191	214	17.96
2.	घासीराम कालूराम आटा मिल	550	1445	1196	249	20.81
3.	राजेन्द्र इन्टरप्राइजेस	500	1405	1203	202	16.79

व्यक्तिगत सर्वेक्षण द्वारा मिल मालिको से प्राप्त आँकड़ो पर आधारित

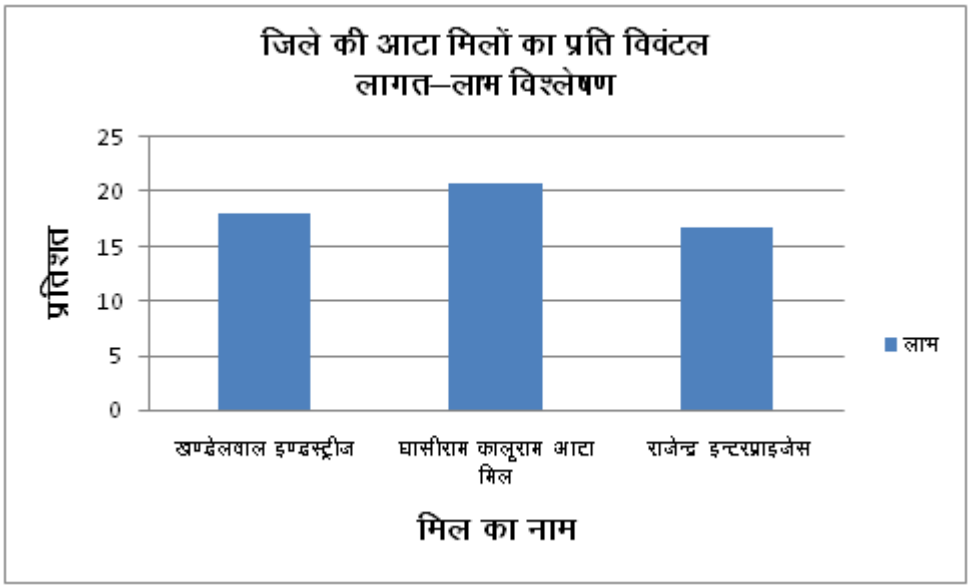

****

सहकारी बैंकिंग – उपलब्धियाँ और चुनौतियाँ

डॉ. सोनी व्यास *

प्रस्तावना – किसी की देश की अर्थव्यवस्था में बैंको का प्रमुख स्थान होता है । यदि यह कहा जाये कि किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में बैंक का योगदान मानव की धमनियों में रक्त के समान है तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। कोई भी देश बैंकों के बिना आर्थिक विकास नहीं कर सकता है । देश में वृहत उद्योगों की स्थापना, कृषि व लघु उद्योगों का विकास, बचत एवं पूंजी निर्माण, प्राथमिकता क्षेत्र को प्रोत्साहन, रोजगार अवसरों का विस्तार तथा निर्यात संवर्द्धन बिना बैंकों के संभव नहीं है । लोगो की छोटी–छोटी बचतों को संग्रह करके उन्हे लाभदायक तथा उत्पादक कार्यो में लगाने का श्रेय बैंकों को ही जाता है। किसी भी देश के विकास में सहकारी बैंकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

सहकारिता की विचारधारा – सहकारिता की विचारधारा एवं उसके विकास का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि सहकारिता की उत्पत्ति सहकार अर्थात मिलकर कार्य करने से हुई है। वस्तुत: जिसे हम सहकार कहते है वह मानव मात्र की स्वाभाविक प्रकृति है।

सहकारिता की भावना का प्रादुर्भाव इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध उद्योगपति राबर्ट ओवन सन् (1771–1850) तथा उनके कुछ सहयोगी द्वारा हुआ। राबर्ट ओवन ने उपभोक्ता सहकारी भण्डार प्रारम्भ किया। जिनमें सदस्य श्रमिकों को अच्छा माल सस्ते मूल्य पर देने की व्यवस्था की गई। जर्मनी के रैफसन में अपने देश में कृषकों एवं श्रमिकों के लिए अल्प ब्याज पर ऋण उपलब्ध करने के लिए ग्रमीण साख समितियों की स्थापना की। इसी प्रकार शुल्ज डेलीश ने नगरो के मध्यमवर्गीय परिवारो को न्यूनतम ब्याज पर नागरिक सहकारी समितियॉ स्थापित की। तदुपरांत यूरोप अमेरिका तथा विश्व के अन्य देशों में सहकारी संस्थाऍ स्थापित होना प्रारम्भ हो गई और इस प्रकार विश्व में सहकारिता आंदोलन सर्वत्र फैल गया ।

भारत में सहकारिता का विकास– भारत की सहकारी संरचना एक शताब्दी पुरानी तथा विश्व की सबसे पुरानी सहकारी संरचनाओं में से एक है। भारत के लिए सहकारिता कोई नवीन विचारधारा नहीं है। लार्ड कर्जन ने सन् 1901 में एक कमीशन नियुक्त किया। कमीशन ने यह सुझाव दिया गया कि देश की स्थिति को उन्नत करने के लिए ग्रामीण क्षेत्र में सहकारी समितियाँ आरम्भ करना लाभदायक सिद्ध होगा। फलत: सन् 1903 में केंद्रीय विधानसभा में एक बिल प्रस्तुत किया गया इसके आधार पर सन् 1904 का सहकारी साख अधिनियम बना। इस प्रकार भारत में सहकारी तौर पर सहकारी आंदोलन का श्रीगणेश हुआ इसके पश्चात् विभिन्न प्रांतीय सरकारों ने अपने–अपने प्रांत में सहकारिता की सफलता के लिए केन्द्रीय बैंको की स्थापना की ।

सर्वप्रथम केन्द्रीय बैंक 1906 में उत्तरप्रदेश में एक प्राथमिक समिति के रूप में स्थापित किया गया परन्तु वास्तविक रूप से केन्द्रीय बैंक की स्थापना सबसे पहले मध्यप्रांत बिहार में हुई। राजस्थान में इस प्रकार का सबसे पहला बैंक अजमेर में 1910 में स्थापित किया गया। संशोधित अधिनियम ने केन्द्रीय वित्तीय संस्थाओं के संगठन को विशेष प्रोत्साहन प्रदान किया गया जिसके फलस्वरूप कुछ ही वर्षो में ऐसे कई बैंक स्थापित हो गए। 1906 से 1918 तक की अवधि को देश के विभिन्न भागो में केन्द्रीय बैंकों का उद्भव काल कहा जा सकता है।

सहकारी साख व्यवस्था की संरचना अथवा रूपरेखा – देश में सहकारी साख व्यवस्था की संरचना एक 'पिरामिड' के सदृश है, जो संघीय ढांचे पर आधारित है। संपूर्ण संरचना का आधार ग्राम स्तर पर स्थापित प्राथमिक साख समिति है, जिस पर संपूर्ण सहकारी साख व्यवस्था आधारित है। प्राथमिक साख समितियों को मिलाकर जिला स्तर पर केन्द्रीय समिति संगठित की जाती है, जिससे समितियाँ संघीय व्यवस्था के अनुसार सदस्य के रूप में संबंधित रहती है। जिला स्तर पर स्थापित केन्द्रीय समिति को ही केन्द्रीय सहकारी बैंक कहते है। राज्य स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंकों की भी एक संघीय संस्था स्थापित की जाती है, जिसे शीर्ष बैंक अथवा राज्य सहकारी बैंक (अपेक्स बैंक) कहते है। राष्ट्रीय कृषि ओर ग्रामीण विकास बैंक संपूर्ण सहकारी बैंक व्यवस्था को आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

सहकारी साख व्यवस्था की संरचना को निम्न प्रकार से प्रस्तुत किया गया –

राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड बैंक)
राज्य सहकारी बैंक (अपेक्स बैंक)
जिला केन्द्रीय बैंक (जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक)
प्राथमिक सहकारी साख समिति

उपर्युक्त सहकारी साख व्यवस्था की संरचना को देखने से यह प्रतीत होता है कि विभिन्न स्तरों पर स्थापित संस्थाएं एक–दूसरे से संबद्ध है, परन्तु

* सहायक प्राध्यापक, भारतीय महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

वास्तविकता यह है कि वैधानिक तथा वित्तीय मामलों में उनका अलग-अलग अस्तित्व है। प्रत्येक संस्था अपने स्तर पर तथा क्षेत्र में विशेष उद्देश्यों की पूर्ति करती है, जिसके कारण उसे एक स्वतंत्र इकाई माना जाता है। सामूहिक रूप से ये सभी संस्थाएं एक ऐसे संगठन का निर्माण करती है। जो पारस्परिक सहायता करने तथा साख आंदोलन में संतुलन बनाए रखने के उद्देश्य से बाहरी स्त्रोतों से ऋण प्राप्त करता है। प्राप्त किये गये ऋणों में ये संस्थाएं कृषि साख की पूर्ति करती है। प्रदान किये गये ऋणों में उचित उपयोग की वे जांच करती है तथा देय तिथियों पर उन ऋणों को वसूल करने की व्यवस्था करती है। संघीय ढांचे की विशेषता यह है कि स्वतंत्र होते हुए भी विभिन्न संस्थाओं की संपूर्ण कडी अपनी प्रत्येक इकाई को शक्ति से प्रभावित होती है।

सहकारी बैंकिंग की कमजोरियाँ – भारत में सहकारी साख आंदोलन अपनी प्रदीर्घ उपस्थिति के बावजूद समकालीन ग्रामीण वित्तीय संस्थानो के साथ कदम मिलाकर नहीं चल पाया है। न तो ये सदस्य-चालित उद्यम रह पाए है न ही ज्यादातर मामलों में इनका नेतृत्व स्वयं को पेशेवर, पारदर्शी, जिम्मेदार और क्रियात्मक रूप से प्रभावी साबित कर पाया है। निचले स्तर की बुनियादी कृषि साख समितियॉ कमजोर रही है। इसमें से अधिकांश आकार में इतनी छोटी होती है कि आर्थिक रूप से कार्यक्षम नहीं रह पाती तथा बडी तादाद में निष्क्रिय एवं मरणासन्न है।

विभिन्न अध्ययनों के द्वारा साख सहकारिताओं के असंतोषजनक कार्य-निष्पादन के निम्न कारण है-

1. अपर्याप्त प्रेरणा तथा सदस्यों की सहभागिता का निम्न स्तर।
2. जनतंत्रीकरण तथा पेशेवर प्रबंधन की कमी।
3. राज्य सरकार और भारतीय रिजर्व बैंक का दोहरा नियंत्रण।
4. अधिक कर्मचारी तथा उच्च प्रबंधन लागत।
5. बुनियादी कृषि साख समितियों पर ऐसी गैर-साख गतिविधियॉ चलाने के लिए दबाव डाला जाता है जो कृषि क्षेत्र के विकास से नहीं जुडी होती है। फलत: उन्हें हानि उठानी पडती है।

सहकारी बैंकिंग की चुनौतियॉ – भारतीय अर्थव्यवस्था उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण के आलोक में सहकारिता को अपनी भूमिका को साख तथा गैर-साख सेवाओं के द्वारा ग्रामीण घरो का स्तर सुधारने पर केंद्रित करना होगा ताकि ग्रामीण अर्थतंत्र के प्राथमिक, माध्यमिक तथा सहायक क्षेत्रों को उपलब्ध कराई गई साख बडे पैमाने पर स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराने का माध्यम बन सके और इस तरह ग्रामीण परिवारो मे व्याप्त गरीबी पर प्रहार किया जा सके।

जिन चुनौतियों का सामना करना है वे ग्रामीण बैंकिंग के द्वारा समग्र ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में भागीदारी से सम्बद्ध है।राष्ट्रीय विकास तथा सामाजिक कल्याण के लिए ग्रामीण विकास को अब सर्वाधिक मानना होगा। समस्या केवल ग्रामीण इलाको के विकास की नहीं है वरन् ग्रामीण समाजो के विकास की है ताकि अज्ञानता तथा स्वपोषी स्वस्थ आधुनिक लघु समाज का निर्माण करने की प्रक्रिया में सहायता की जा सके। इस प्रकार ग्रामीण विकास को अब केवल सकल राष्ट्रीय आय में वृद्धि से जोड़कर नहीं देखा जा सकता। सक्षेंप में सकल राष्ट्रीय उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति आय बढाने में प्रत्येक ग्रामीण परिवार का तर्कसंगत हिस्सा होना चाहिए। मुख्य उद्देश्य पुननिर्माण और विकास करने का होना चाहिए ताकि उत्पादक परिसम्पत्तियों और श्रम के स्वामित्व से होने वाली आय का क्रमिक रूप से अधिक समतापूर्ण वितरण हो। यह अवधारणा हमारा ध्यान उन्नत आवास, विश्वसनीय तथा सुलभ उर्ज्जा आपूर्ति, यातयात और संचार की समुचित सुविधा से युक्त कार्यक्रम ग्रामीण बस्तियों के निर्माण पर केंद्रित करती है।

सहकारी बैंकिंग की अपेक्षाएँ – सहकारी बैंको को वर्तमान चुनौतियों का सामना करने के लिए अपनी कार्यशैली को बदलना होगा एवं गुणवत्तापूर्ण प्रतिस्पर्धात्मक कौशल हासिल करना होगा। आवश्यकता सहकारिताओं राज्य सरकारों, आरबीआई, नाबार्ड तथा केंद्र सरकार के समन्वित एवं सकेंद्रित प्रयास से सभी स्तरों पर व्यापक और सतत् सुधार आरम्भ करने तथा उन्हें कार्यरूप में परिणित करने की है। उन्हें तत्काल अपने कौशल, उत्पादकता एवं लाभ को प्रभावित करने वाले मामलों को हल करना होगा तथा उन्हें गतिशील साख संस्थान बनाने और ग्रामीण ग्राहकों की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील हेतु विशिष्ट अनुशंसाएँ करनी होगी। कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर सरकार और आरबीआई द्वारा तत्काल ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है-

1. अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन दोनों ही क्षेत्रों में शीर्ष बैंकों से निचले स्तर से लेकर समुचित साख संरचना के विकास में अग्रणी भूमिका निभाने की अपेक्षा की जाती है।
2. सहकारी बैंकों में प्रशिक्षण प्रणाली उपलब्ध है तथापि उनका मिलान वर्तमान तथा भावी कर्मचारी की जरूरतों से शायद ही कभी करने का प्रयास किया जाता है। प्रशिक्षण कार्यक्रम में कौशल अभिवर्द्धन तथा योग्यता विकास को समुचित रूप में शामिल किया जाए। समय-समय पर कर्मचारियों के काम में परिवर्तन, कार्य-संवर्द्धन, तथा कार्य-निष्पादन की पहचान देकर उनको काम की ओर प्रवृत्त रखना भी अनिवार्य है।
3. वर्तमान में कृषि साख समितियों तथा दीर्घकालिक संरचना को बैंकिंग विनियमन अधिनियम के क्षेत्र से बाहर रखा गया है। कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंकों को पूर्ण बैंक के रूप में कार्य करने तथा ग्रामीण बचत को अनुमति देने से वे मजबूत संसाधन आधार तैयार पाएँगे एवं बाहरी वित्तीय सहायता पर निर्भरता कम कर पायेंगे। इससे इन बैंकों को बैंकिंग सुविधाएँ उपलब्ध कराने तथा अन्य बैंकिंग एवं वित्तीय संस्थानों के साथ प्रतिस्पर्धा करने में मद्द मिलेगी।
4. सहकारी बैंकों को स्वस्थ प्रबंधकीय प्रणाली अपनाकर व्यावसायिक संगठनों की तरह काम करना चाहिए। बाजार में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए उन्हें भावी आवश्यकताओं के अनुमान को ध्यान में रखना चाहिए।
5. व्यापार की मात्रा बढ़ाकर और अपनी सेवाएँ बेहतर कर स्वस्थ बैंक ग्राहकसम्बन्धों का विकास करना बैंकों के कार्यक्रम बने रहने के लिए अनिवार्य है।
6. सहकारी बैंकों को संसाधनों के प्रत्येक स्त्रोत पर कुशल कोष प्रबंधन नीति तथा कार्यविधि के द्वारा लाभ को अधिकतम करने पर ध्यान देना चाहिए।
7. सरकार को यह निर्णय करना चाहिए कि किसी भी कारण से ऋण/ब्याज को न तो माफ किया जाएगा, न ही स्थगित, न ही ब्याज दर पर सब्सिडी दी जाएगी।
8. एक लाख रूपये से अधिक के ऋणों के मामले में बकाये की वसूली तेज करने के लिए सहकारी बैंकों में बकाया वसूली प्राधिकरण को लागू करना चाहिए।

निष्कर्ष – ग्रामीण सहकारिताओं ने कृषि में आत्मनिर्भरता प्रदान करने तथा इसे निर्यातोन्मुख बनाने में बहुत ही उल्लेखनीय योगदान किया है हाँलाकि कृषि उपज के लाभ ग्रामीण आबादी के बडे हिस्से तक नहीं पहुँच सकते। इसके अलावा चूँकि ये संस्थाएँ ग्रामीण इलाकों में सुगमतापूर्वक अपने कार्यसंचालन में गम्भीर समस्याएँ झेल रही है, इसलिए उन्हें मान्यता प्रदान करने तथा फिर से ताकत प्रदान करने की आवश्यकता है ताकि उन्हें ग्रामीण बैंकिंग एवं ग्रामीण विकास का प्रभावशाली उपकरण बनाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. माथुर बी. एस. – सहकारिता, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
2. चतुर्वेदी नीलमेघ – सहकारिता : विचार और विश्लेषण ,अजय प्रकाशन सिरपुर,धार।
3. यादव सुबह सिंह – भारतीय बैंकिंग की आधुनिक प्रवृत्तियाँ ,रावत पब्लिकेशन, जयपुर – नईदिल्ली।
4. डॉ. वर्मा सवलियॉ बिहारी, डॉ. पाठक एस. वी.,डॉ. पाण्डेय पी. पी. – ग्रामीण बैंकों की भूमिका, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नईदिल्ली।
5. भार्गव चन्द्रेश – बैंकिंग प्रणाली, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नईदिल्ली।

पत्र – पत्रिकाएँ –

1. कुरूक्षेत्र पत्रिका –संपादक –कुरूक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय कृषि भवन, नईदिल्ली।
2. योजना पत्रिका – 538 योजना भवन संसद मार्ग नईदिल्ली।
3. प्रतियोगिता दर्पण,

समाचार –पत्र –

दैनिक भास्कर , बिजनेस स्टेन्डर्ड , बिजनेस भास्कर।

वेबसाईट – www.24duniya.com
www.nayaindia.com

****

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का मूल्यांकन एवं प्रभाव (अर्थव्यवस्था एवं बारहवीं योजना के संदर्भ में)

डॉ. प्रीति शाह *

प्रस्तावना – दसवीं पंचवर्षीय योजना अवधि के दौरान अर्थव्यवस्था में 7.7 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वृद्धि होने के कारण ग्यारवहीं पंचवर्षीय योजना की शुरूआत बहुत ही अनुकूल परिस्थितियों में हुई तथापि तब भी देश में बड़ी संख्या में लोगों का पोषण, शिक्षा और बुनियादी स्वास्थ्य तथा जलपूर्ति और मल-निकाय व्यवस्था जैसी अन्य सार्वजनिक सेवाएं जो कि एक अच्छे रहन-सहन की बुनियादी जरूरतें मानी जाती है उपलब्ध नहीं थी। ग्यारहवीं योजना का उद्देश्य विकास को और अधिक पूर्णता की ओर बढ़ाते हुए और उसकी गति को तेज करते हुए कमियों को दूर करना था। विकास का उद्देश्य योजना अवधि के दौरान 9 प्रतिशत प्रतिवर्ष की औसत वृद्धि दर प्राप्त करना था। योजना में कृषि और ग्रामीण विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य, आधारभूत संरचना का विकास आदि विषयों पर कई रणनीतियां बनाई गई। प्रस्तुत शोध पत्र ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजनाओं के उद्देश्य प्राप्ति में क्षेत्रवार योगदान एवं आने वाली बाधाओं का अर्थव्यवस्था व बारहवीं पंचवर्षीय योजना पर पड़ने वाले प्रभावों एवं नई रणनीतियों का अध्ययन करता है।

उद्देश्य : प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यह जानने का प्रयास किया गया है कि-

1. योजना को लक्ष्य की तुलना में क्या उपलब्धि प्राप्त हुई ?
2. कौन-सी बाधाएं योजना की सफलता में बाधक बनी ?
3. बारहवीं योजनाओं को बनाते समय बाधाओं को दूर करने का प्रयास किया गया या नहीं।
4. बारहवीं योजना में क्या रणनीति अपनाई गई।

ताकि आशातीत विकास वृद्धि दर को प्राप्त किया जा सके।

क्षेत्रवार योजना के लक्ष्य/उपलब्धि –

क्षेत्र	ग्यारहवीं योजना का लक्ष्य	उपलब्धि
कृषि	4.0	3.7
उद्योग	10.11	7.2
सेवाएं	9.11	9.7
जी.डी.पी.	9.0	8.0

स्रोत - केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय

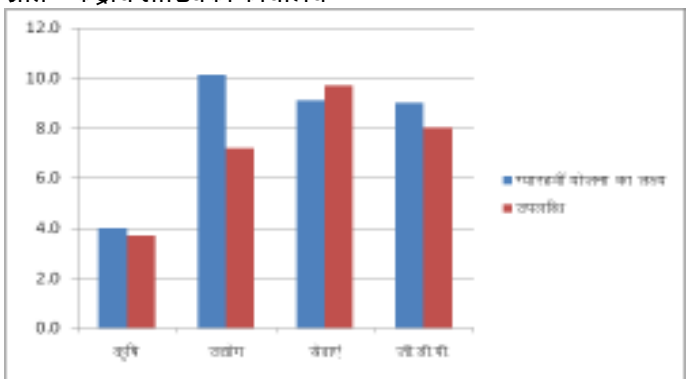

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में अर्थव्यवस्था का क्षेत्रकीय विकास निष्पादन:

वर्ष	कृषि	उद्योग	सेवाएं	जी.डी.पी.
2007-08	5.8	9.7	10.3	9.3
2008-09	0.1	4.4	10.0	6.7
2009-10	0.8	9.2	10.5	8.6
2010-11	7.9	9.2	9.8	9.3
2011-12	3.6	3.5	8.2	6.2

स्रोत - केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय

यदि हम इतिहास की ओर ध्यान दे तो ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) का उद्देश्य 9.0 प्रतिशत औसत वार्षिक विकास लक्ष्य के साथ, दसवीं योजना में प्राप्त 7.6 प्रतिशत विकास दर से काफी अधिक तीव्र तथा समावेशी विकास प्राप्त करना था। ग्यारहवीं योजना के दौरान प्रथम वर्ष में 9.3 प्रतिशत की वृद्धि दर प्राप्त हुई परंतु विश्व वित्तीय संकट की वजह से 2008-09 में विकास दर कम होकर 6.7 प्रतिशत हो गई। बाद में वर्ष 2009-10 एवं 2010-11 के दौरान पुन: विकास दर बढ़कर 8.6 प्रतिशत व 9.3 प्रतिशत हो गई। तत्पश्चात वर्ष 2011-12 में विकास दर घटकर मात्र 6.2 प्रतिशत हो गई इसकी वजह यूरोप में राजकीय ऋण संकट, 2011 की वैश्विक मंदी, कड़ी मौद्रिक नीति एवं आपूर्ति पक्ष जैसी कई बाधाएं उपस्थित थी। परिणामस्वरूप कुल मिलाकर ग्यारहवीं योजना के दौरान सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की औसत वार्षिक दर 8 प्रतिशत प्राप्त हुई जो हमारे लक्ष्य की तुलना में कम थी, परंतु दसवीं योजना की उपलब्धि से बेहतर थी। अत: ग्यारहवीं योजना में प्राप्त विकास दर को उक्त समस्याओं के कारण संतोषजनक कहा जा सकता है।

ग्यारहवीं योजना के दौरान हम कृषि, उद्योग एवं सेवा क्षेत्र के संबंध में प्राप्त जीडीपी वृद्धि दर पर ध्यान डाले तो क्रमश: 3.7 प्रतिशत, 7.2 प्रतिशत, 9.7 प्रतिशत प्राप्त हुई। इन क्षेत्रों पर पृथक-पृथक रूप से गौर करे तो सर्वप्रथम कृषि क्षेत्र में वर्ष 2007-08 में 5.8 प्रतिशत की वृद्धि प्राप्त की गई, परंतु 2008-09 यह दर काफी गिर गई। वर्ष 2009-10, 2010-11 में दर में वृद्धि हुई जिसका कारण सामान्य मानसून था। इस प्रकार वर्ष 2011-12 के दौरान वृद्धि में पुन: गिरावट आई। इस गिरावट के खाद्यान्नों के उत्पादन की वृद्धि में गिरावट की दृष्टि से बताया जा सकता है।

इसी तरह वर्ष 2009-10 एवं 2011-12 अवधि के दौरान औद्योगिक और साथ ही सेवा क्षेत्रक में भी मंदी देखी गई। औद्योगिक क्षेत्र में मंदी मुख्यत: खनन और उत्खन्न और विनिर्माण क्षेत्र में वृद्धि निष्पादन में कमी के कारण थी। यह गिरती प्रवृत्ति वैश्विक मंदी के सतत प्रभाव और साथ ही घरेलू वृहद-आर्थिक प्रांचलों में गिरावट को परिलक्षित करती है।

ग्यारहवीं योजना के दौरान सेवा क्षेत्र की और ध्यान दे तो प्रथम तीन वर्षों में 10-10.5 प्रतिशत की रेंज में दर अधिक समान रूप एवं सतत ढंग से

* 63/1 बनियावाड़ी, धार (म.प्र.) भारत

ऊंची वृद्धि दर देखी गई, तथापि सेवा क्षेत्र भी वैश्विक मंदी से अछुता नहीं रहा। वर्ष 2010-11 व वर्ष 2011-12 में दर साधारण रहीं, इसका प्रमुख कारण व्यापार, होटल, रेस्त्रा तथा परिवहन, भंडारण व संचार में गिरावट थी। परंतु कुल मिलाकर जीडीपी के विकास में सेवा क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट है कि ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान हम क्षेत्रवार निर्धारित लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पाए जिसके कई प्रमुख कारण जैसे वर्ष 2008 व वर्ष 2011 की वैश्विक मंदी, अनियमित मानसून, खाद्यान्न के उत्पादन में गिरावट, कड़ी मौद्रिक नीति आदि थे।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना से अपेक्षाएं – भारतीय अर्थव्यवस्था की मजबूती और साथ ही आंतरिक/बाह्य बाधाओं को भी स्वीकारते हुए बारहवीं पंचवर्षीय योजना का उद्देश्य तीव्र, संधारणीय तथा अधिक समावेशी विकास प्राप्त करना है। बारहवीं योजना से अपेक्षा है कि समावेशी विकास के परिणामस्वरूप गरीबी के भार में कमी, स्वस्थ परिणामों में व्यापक और महत्वपूर्ण सुधार, बच्चों के लिए शिक्षा की सर्वसुलभता, शिक्षा के सुधरे स्तर प्राप्त होना चाहिए। साथ ही मजदूरी रोजगार और आजीविका दोनों के लिए बेहतर अवसरों और पानी, बिजली, सड़कों, स्वच्छता और आवासन जैसी बुनियादी सुविधाओं के प्रावधान में सुधार भी परिलक्षित होना चाहिए। योजना को सफल बनाने हेतु आवश्यक है कि समर्थनकारी नीतियां लागू की जाए।

बारहवीं योजना के लक्ष्य प्राप्त हेतु करने हेतु किए प्रयास – बारहवीं योजना में जी.डी.पी. की वृद्धि दर हेतु दो बुनियादी मूलाधार पर ध्यान दिया जा रहा है। (अ) बचत (ब) निवेश दर

इस प्रकार सरकारी बचतों में सुधार हेतु कार्यनीति अधिक कर जुटाने व राजस्व घाटे के स्तर को कम करने की होनी चाहिए। योजना में समग्र उत्पादकता को बढ़ाने पर बल दिया जा रहा है जिससे उच्च उत्पादकता के फलस्वरूप श्रम व पूंजी का अधिक कुशलता के साथ उपयोग होगा व अर्थव्यवस्था को उच्च विकास मार्ग पर लाने के लिए अनिवार्य होगा। प्रतिस्पर्धा एवं उत्पादकता स्तरों में वृद्धि और अधिक प्रत्यक्ष निवेश के माध्यम से होगी। इस प्रकार राजकोषीय घाटा कम होने के साथ अर्थव्यवस्था में और अधिक वृद्धि होगी जिससे प्रत्येक क्षेत्र में उत्पादकता में सुधार होगा।

यद्यपि जी.डी.पी वृद्धि में आई मंदी को दूर करने के लिए कई कदम उठाए गए उनमें बड़ी निवेश परियोजनाओं को गति प्रदान करने के लिए निवेश संबंधी मंत्रिमंडल समिति का गठन करना, मल्टी ब्रांड रिटेल, पावर एक्सचेंज और विमानन जैसे क्षेत्रों में प्रत्यक्ष निवेश को मंजूरी देना, वित्तीय और बैंकिंग क्षेत्र को सुदृढ़ करना और अवसंरचना के वित्त पोषण को बढ़ावा देना शामिल है। इसी प्रकार कुछ अवसंरचना ऋण निधियों को प्रोत्साहित करने, अवसंरचना कपंनियों के लिए उधार देने में बढ़ोतरी, ग्रामीण अवसंरचना विकास निधि के समूहों का उन्नयन, निवेश भत्ता प्रारंभ आदि है। इसी प्रकार कृषि क्षेत्र में फसल के विविधीकरण के कार्यक्रम प्रमुखत: रूप से शामिल है जो तकनीकी नवप्रवर्तन को बढ़ावा देगा। क्रेडिट गारंटी निधि भी लघु कृषक कृषि कारोबार निगम सृजित की जा रही है जिसकी शुरूआती संग्रह राशि 100 करोड़ रू. की है जिसमें से राष्ट्रीय कृषि विकास योजना और राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन इत्यादि के लिए आवंटन होगा।

अत : उपरोक्त प्रयासों से बाजार के पुनरूद्धार आवश्यक रूप से होगा और ये विकास को एक प्रेरणा प्रदान करेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय योजना आयोग
2. म.प्र. योजना आयोग
3. संदेश पत्रिका म.प्र. शासन
4. नवीन शोध संसार (अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) आई.एस.एस.एन. 2320-8767.
5. योजना पत्रिका
6. कुरुक्षेत्र

****

औद्योगिक विकास केन्द्र पीथमपुर - एक अध्ययन (वर्ष 2012 तक की स्थिति के संबंध में)

डॉ. प्रीति शाह *

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश की औद्योगिक स्थिति का मजबूत आधार शहर पीथमपुर जिला धार में स्थित है। बीते 10 वर्षों के दौरान मध्यप्रदेश का औद्योगिक परिदृष्य तेजी से परिवर्तित हो रहा है। म.प्र. में जी.एस.डी.पी. में उद्योग का योगदान 29 प्रतिशत रहा। साथ में वर्ष 2011-12 में उद्योग विकास दर 8 प्रतिशत रही है। औद्योगिक सुधार में पीथमपुर क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

औद्योगिक विकास केन्द्रों की पहचान वहां स्थापित औद्योगिक इकाइयों और औद्योगिक उत्पादन से तो होती है, परंतु पीथमपुर औद्योगिक विकास केन्द्र अपने संरक्षित पर्यावरण के कारण अपनी एक अलग पहचान रखता है। साथ ही उद्योगों को विकसित करने हेतु आवश्यक आधारभूत सुविधाएं उसे मजबूत औद्योगिक विकास केन्द्र बनाती है।

हमने यहां पर वर्ष 2012 तक पीथमपुर क्षेत्र को एक मजबूत औद्योगिक विकास केन्द्र बनाने हेतु सरकार द्वारा प्राप्त आधारभूत सुविधाओं का अध्ययन किया है तथा यह भी जानने का प्रयास किया है कि -

उद्देश्य –

1. पीथमपुर क्षेत्र की वर्तमान औद्योगिक स्थिति क्या है।
2. उद्योगों से प्राप्त रोजगार की स्थिति को जानना।
3. कार्यरत उद्योगों का अध्ययन एवं पूंजी निवेश स्थिति का आकलन करना।
4. सरकार द्वारा विकास केंद्र बनाने हेतु कौन-कौन सी आधारभूत सुविधाएं प्रदान की गई है।

क्षेत्र व सीमा – प्रस्तुत शोध धार जिले के पीथमपुर औद्योगिक विकास केन्द्र के अध्ययन पर आधारित है एवं प्रस्तुत शोध में आंकड़े वर्ष 2012 तक की अवधि से संबंधित है।

शोध पद्धति – प्रस्तुत शोध द्वितीयक संमको पर आधारित है। संग्रहण हेतु पत्र-पत्रिकाओं तथा इंटरनेट से प्राप्त सूचनाओं को संग्रहित किया गया है।

पर्यावरण संरक्षण हेतु – औद्योगिक विकास केन्द्र में पर्यावरण संरक्षण हेतु 62 हजार वृक्षों का रोपण किया गया। इसमें से 37 हजार वृक्ष औद्योगिक विकास निगम इंदौर ने और 25 हजार वृक्ष पीथमपुर में स्थापित औद्योगिक इकाइयों ने लगाए।

यातायात सुविधाएं – यह विकास केन्द्र महू-नीमच राजमार्ग पर इंदौर से लगभग 25 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इंदौर शहर के माध्यम से सड़क, रेल एवं वायु मार्ग से देश के प्रमुख स्थानों से जुड़ा हुआ है। संपूर्ण क्षेत्र में लगभग 70 किलोमीटर सड़कों का निर्माण किया जा चुका है। **सरकार द्वारा पीथमपुर क्षेत्र को भूमि आवंटन –** म.प्र. औद्योगिक विकास निगम इंदौर को धार जिले के पीथमपुर क्षेत्र में औद्योगिक क्षेत्र के विकास हेतु कुल 1876.28 हेक्टेयर की भूमि उपलब्ध करवाई गई। जिसमें 546.884 हेक्टेयर भूमि शासकीय है और 1413.396 हेक्टेयर भूमि निजी है। पीथमपुर औद्योगिक क्षेत्र तीन सेक्टरों में विभक्त है। इसी प्रकार पीथमपुर की कुल उपलब्ध 1876.28 हेक्टेयर भूमि में से 1361.40 हेक्टेयर भूमि आवंटन योग्य है तथा 588.29 हेक्टेयर भूमि सड़क, वृक्षारोपण तथा अन्य सुविधाओं हेतु आरक्षित है।

पीथमपुर क्षेत्र में कार्यरत इकाइयों/निवेष/प्राप्त रोजगार की स्थिति

इकाईयां	संख्या	निवेश	प्राप्त रोजगार
वृहद व मध्यम	146	97 अरब 48 करोड़ रुपए	26,390
लघु इकाईयां	571	45 अरब 46 करोड़ रुपए	16,862

वर्तमान में कुल 717 इकाइयां पीथमपुर क्षेत्र में कार्यरत है। जिसमें 1 खरब 42 अरब 94 करोड़ रुपए से अधिक का निवेश किया जाकर 43 हजार 252 नागरिकों को प्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्राप्त होने के साथ ही हजारों नागरिकों को अप्रत्यक्ष रोजगार भी प्राप्त हुआ है।

स्वच्छता संबंधी सुविधाएं – पीथमपुर क्षेत्र में स्वच्छता पर ध्यान देते हुए लगभग 43.5 कि.मी. पक्की नालियों तथा लगभग 61 कि.मी. कच्ची नालियों का निर्माण किया गया।

विद्युत सुविधाएं – पीथमपुर में विद्युत मंडल द्वारा पर्याप्त संख्या में विद्युत उपकेन्द्रों की स्थापना की गई है। जिससे औद्योगिक इकाइयों के साथ-साथ आम नागरिकों को भी पर्याप्त विद्युत प्रदाय की जा रही है। औद्योगिक क्षेत्रवासियों को सड़कों पर बेहतर आवागमन को ध्यान में रखते हुए प्रकाश व्यवस्था की और भी औद्योगिक क्षेत्र में विशेष ध्यान दिया गया है। वर्ष 2012 तक 68 कि.मी. मार्ग पर स्ट्रीट लाइट लगाई गई है। इसी प्रकार निवासियों की सुविधाओं हेतु महू-नीमच मार्ग पर औद्योगिक केन्द्र विकास निगम इंदौर द्वारा अतिरिक्त स्ट्रीट लाइट भी लगाई गई।

जल सुविधाएं – औद्योगिक इकाइयों एवं रहवासियों हेतु जल सुविधाएं प्रदाय करने के लिए यहां संजय जलाशय परियोजना का निर्माण किया गया है तथा जल शुद्धिकरण हेतु जल शोधन यंत्र की स्थापना की गई है। जल प्रदाय हेतु 50 कि.मी. जल वितरण लाइन बिछाई गई। 83 नलकूपों का खनन किया गया। इसी प्रकार औद्योगिक इकाइयों को जल प्रदान करने के लिए कारम जलाशय परियोजना बनाकर जल शोधन संयंत्र स्थापित कर जल वितरण हेतु 70 कि.मी. लम्बी जल वितरण लाइन बिछाई गई।

शैक्षणिक व स्वास्थ्य सुविधाएं – औद्योगिक विकस केन्द्र द्वारा निवासियों के बच्चों को शैक्षणिक सुविधा को ध्यान रखते हुए उच्चतर माध्यमिक विद्यालय स्थापित किए गए। स्वास्थ्य सुविधा हेतु 30 बिस्तरों का अस्पताल भी स्थापित किया गया।

* 63/1 बनियावाड़ी, धार (म.प्र.) भारत

संचार सुविधाएं – पीथमपुर में ही 1600 लाइनों वाले अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक एक्सचेंजों की स्थापना की गई। जिसमें एस.टी.डी., आई.एस.डी. एवं फैक्स जैसी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

आयात-निर्यात सुविधाएं – आयात-निर्यात सुविधाओं हेतु कंटेनर कार्पोरेशन ऑफ इंडिया को इंग्लैंड कंटेनर डिपो की स्थापना हेतु म.प्र. औद्योगिक विकास निगम द्वारा रियायती दरों पर भूमि उपलब्ध करवाई गई।

अन्य सुविधाएं – अग्निशमन वाहन, त्वरित आगमन हेतु (इंदौर-पीथमपुर) इन्बस्ट्रक्चर लीजिंग एवं फाइनेनशियल सर्विस मुम्बई के माध्यम से 12 कि.मी. मार्ग निर्माण, औद्योगिक इकाइयों में कार्यरत श्रमिकों, कर्मचारियों एवं प्रबंधकीय वर्ग हेतु आवासीय व्यवस्था की गई।

औद्योगिक विकास क्षेत्र के निवासियों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पीथमपुर सेक्टर तीन में वाणिज्यिक परिसर स्थापित किया गया है। इस परिसर में 8-10 फुट साइज की भूमि दुकानों की स्थापना हेतु रियायती दरों पर स्थानीय लोगों को दी गई है। परिसर की स्थापना से जहां एक ओर अनियंत्रित अतिक्रमण पर रोक लगी है, वहीं आम निवासियों एवं श्रमिकों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय रूप से हो सकी है।

उपसंहार – पीथमपुर में अधोसंरचना कुशल एवं अकुशल मानव संसाधन, उद्योगों के लिए भूमि की उपलब्धता, रियल सिंगम विण्डो प्रणाली, पर्याप्त जल, निरंतर विद्युत आपूर्ति और उत्तम कानून व्यवस्था जैसे सभी सहायक कारक है, जो भरपूर औद्योगिकीकरण की संभावनाओं से सर्वथा अनुकूल है। उपरोक्त सुविधाएं निवेशकों को उद्योग स्थापित हेतु आकर्षित करेगी। परिणास्वरूप भविष्य में पीथमपुर सर्वाधिक मजबूत औद्योगिक विकास केन्द्र के रूप में उभरकर आएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश संदेश
2. म.प्र. औद्योगिक केंद्र विकास निगम (इंदौर) लि. वेबसाइट
3. रोजगार निर्माण
4. नवीन शोध संसार (अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) आई.एस.एस.एन. 2320-8767.
5. योजना पत्रिका
6. कुरुक्षेत्र
7. दैनिक भास्कर

****

व्यापक भ्रष्टाचार का लोकपाल से निदान - एक मूल्यांकन

डॉ. वी. के. जैन *

प्रस्तावना – देश में भ्रष्टाचार की जड़े इतनी गहरी और व्यापक हो चुकी है कि केवल प्रशासनिक सुधारों से नहीं बल्कि व्यापक राजनीतिक दलों के प्रजातांत्रिकरण से संभव है, हालाकि वर्तमान परिपेक्ष्य में देश में भ्रष्टाचार खासकर संस्थानिक भ्रष्टाचार के खिलाफ एक व्यापक जनचेतना दिखाई पड़ रही है।

भ्रष्टाचार = (एकाधिकार + विवेकाधिकार) – (जवाबदेही + ईमानदारी + पारदर्षिता)

भ्रष्टाचार में निम्नांकित मामले शामिल है

- नियमों, नियमनों ,नीतियों एवं कानून का अभाव
- कमजोर प्रवर्तन प्रणाली
- निगरानी की कमजोर प्रणाली
- जवाबदेही का अभाव
- पारदर्शिता का अभाव
- प्रणाली के नियंत्रण का अभाव
- ईमानदारी का अभाव
- एकाधिकार
- अत्यधिक विवेकाधिकार
- अपराध अनुसंधान की निम्न दर

भ्रष्टाचार भूतकाल की देन है मानव समाज में यह किसी न किसी रूप में विद्यमान रहा है, कौटिल्य ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ अर्थशास्त्र में भ्रष्टाचार के विविध रूपों का वर्णन किया स्पष्ट है कि उसके काल में भी भ्रष्टाचार मौजदू था।

भ्रष्टाचार का अर्थ– सामान्य अर्थो में भ्रष्टाचार किसी अधिकारी के द्वारा अपने पद स्थिति या संसाधनो का व्यक्तिगत उन्नति के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष ढंग से इच्छानुरूप और विचारपूर्वक किया गया शोषण है।

भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार कोई व्यक्ति जो सरकारी कर्मचारी है या ऐसा बनने का प्रत्याशी यदि किसी व्यक्ति से वैध वेतन के अतिरिक्त , किसी व्यक्ति के प्रति कोई पक्षपात या कोई हानि करने, या किसी सरकारी कार्य को करने या न करने या केन्द्रीय अथवा किसी राज्य सरकार अथवा संसद या किसी राज्य विधान मण्डल या किसी सरकारी अधिकारी से किसी दूसरे व्यक्ति के लिए कोई सेवा या हानि करने हेतु किसी प्रकार का कोई लाभ प्राप्त करता है तो वह व्यक्ति तीन वर्षो तक के कारावास का या जुर्माना अथवा दोनो से दण्डित किया जाएगा।

भ्रष्टाचार के कारण –

1. ऐतिहासिक भूतपूर्व शासक सभी उच्च पदो का अपने नागरिको के लिए सुरक्षित रखते थे जबकि निम्न पद अधीन नागरिको के लिए रखे जाते थे।
2. अनावश्यक आवश्यकताएँ उच्च होना – जब व्यक्ति की आवश्यकता पर्याप्त से बढकर अनावश्यक बढ़ जाती है जबकि वे आवश्यकता उसके लिए अनिवार्य नहीं है। जैसे – गंजे को कंघी की आवश्यकता महसूस होना और जब अनावश्यक इच्छाएँ बढती है तो उसकी संतुष्टि करने के लिए एक साधन मुद्रा है और उसकी मुद्रा माँग बढ जाती है जिसे वह येन–केन प्राप्त करना चाहता है और भ्रष्टाचार की ओर उन्मुख हो जाता है।
3. समाज शास्त्रीय – समाज यदि धन द्वारा देवी देवताओ को प्रसन्न कर सकता है तो सिविल कर्मचारी को क्यों नहीं किया जा सकता है।
4. क्रियाविधिक प्रणाली – दोषपूर्ण क्रियाविधिक प्रणाली एवं प्रभावहीन भ्रष्टाचार विरोधी कानून रेलवे भ्रष्टाचार जाँच समिति ने नियमों एवं विनियमों में उन दोषों की ओर ध्यान आकर्षित किया जिनसे भ्रष्टाचार उत्पन्न होता है।
5. नागरिक चेतना का अभाव – भारत देश में जन चेतना का आज भी अभाव है और जब तक चेतना जाग्रत नहीं हो गई तब तक भ्रष्टाचार में चलता रहेगा।
6. राजनैतिक – भारत केवल केन्द्रीय एवं राज्यों के मंत्री ही नही अपितु अन्य जनप्रतिनिधि भी कर्मचारियों पर गलत काम के लिए दबाव डालते है
7. व्यापारिक वर्गो का असहयोग–
8. लाल फीताशाही – भारत में सरकारी कार्य प्रणाली जटिल एवं पेचीदगी पूर्ण है नियमों और कानून कायदों का इतना भारी जाल फैला हुआ है कि शीघ्रता और आसानी से काम हो ही नहीं पाता है।
9. सी.बी.आई और अन्य गुप्त एजेंसियों की प्रभावशाली भूमिका का अभाव
10. समाज में बढ़ता धन का प्रभाव
11. सजग प्रेस का अभाव आदि
12. याराना पुंजीवाद (रिश्तेदारो, चहेतो और करीबीयों के छोटे समूह का वैध अवैध तरीको से लाभ पहुॅचाने वाला पुंजीवाद) का चलन

भारत में भ्रष्टाचार निवारण के उपाय –

1. लोकमत तैयार करना– भ्रष्टाचार के विरूद्ध लोकमत तैयार किया जाना चाहिए।
2. चुनावो मे और सुधार लाना – ऐसा सुधार हो कि चुनाव में कम से कम व्यय हो।
3. कठोर दण्ड की व्यवस्था करना – भ्रष्टाचार में लिप्त व्यक्तियो के लिए कठोर दण्ड का प्रावधान होना चाहिए ताकि अन्य भ्रष्टाचार के बारे में सोचे भी नहीं ।

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र) भारत

4. जनसेवको के लिए आचार संहिता का निर्माण करना– आचार संहिता का कठोरता से पालन भीकरवाना है।
5. नियुक्ति एवं वेतन व्यवस्था में सुधार करना– सरकारी सेवा में नियुक्ति योग्यता के आधार पर होनी चाहिए।
6. सर्तकता आयोग का गठन – भारत में केन्द्रीय सर्तकता आयोग और उसकी सहायता के लिए केन्द्रीय जाँच ब्यूरो को भ्रष्ट अधिकारियो के कार्यो की जाँच करने का अधिकार है ये केवल अपनी रिपोर्ट गृहमंत्रालय को देते है।
7. सुचना का अधिकार अधिनियम 2005 का लागू होना।
8. लोकसेवा गांरटी अधिनियम 2011 को लागू करना।
9. लोकपाल एवं लोकायुक्त की नियुक्ती

लोकपाल – सन् 1966 में प्रशासनिक सुधार आयोग ने जनता की शिकायतो एवं भ्रष्टाचार के बढतें हुए कदमों को रोकने के लिए केन्द्रीय सरकार ने लोकपाल व लोकायुक्त की संस्थाओं को स्थापित करने की सिफारिश की थीं लोकपाल विधेयक 1971 में रखा गया जिसमें प्रधानमंत्री को छोडकर शेष के लिए जाँच का प्रावधान रखा गया परन्तु विधेयक पर कोई निर्णय नहीं हुआ। 1977 में भी यह विधेयक अधिनियम का रूप नही लें सका उसके पश्चात 1985, 1989 , 1996 , 1998 परन्तु अधिनियम नहीं बन सका।

लोकपाल विधेयक 1998– 3 अगस्त 1998 को प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने बहुचर्चित लोकपाल विधेयक को लोकसभा में प्रस्तुत किया यह विधेयक भी संसद के भंग होने के कारण पारित नहीं हो सका ।

इस विधेयक के अनुसार लोकपाल संख्या त्रिसदस्यी होगी जिसमें अध्यक्ष के अतिरिक्त दो अन्य सदस्य होगे। सर्वोच्च न्यायालय के सेवारत मुख्य न्यायाधीश को ही लोकपाल संस्था का अध्यक्ष बनाया जा सकता है जबकि सदस्य के रूप में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को नियुक्त किया जा सकेगा। इनका कार्यकाल 3 वर्ष का होगा तथा 70 वर्ष की आयु तक पद पर रहेंगें।

क्षेत्राधिकार – लोकपाल राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार के किसी मंत्री या सचिव द्वारा या उसकी स्वीकृति से किये गए प्रशासकीय कार्य के विरूद्ध किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जिसे उस कार्य से कोई हानि हुई है कि शिकायत की जाँच पड़ताल कर सकता है।

लोकपाल ऐसी शिकायतो की जाँच नहीं कर सकता जो निम्न है

1. जिनका संबंध केन्द्रीय सरकार तथा किसी विदेशी सरकार या अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के बीच सम्बंधो के कार्य से संबंधित है।
2. प्रत्यर्पण कानून
3. राज्य की सुरक्षा से संबंधित विषय
4. लोक कर्मचारियों की सेवा से संबंधित विषय
5. उपाधियों एवं मान पत्र देने से संबंधित
6. व्यापारिक प्रकृति के विषय

क्रिया विधि – कष्ट के बारे में शिकायत पीडित व्यक्ति द्वारा की जानी चाहिए। यदि पीडित व्यक्ति की मृत्यु हो गई हे तो विधि के अनुसार उसका अधिकृत व्यक्ति कर सकता है।

किसी जाँच को आरम्भ करने से पूर्व लोकपाल शिकायत की प्रतिलिपी संबंधित अधिकारी को भेजता है ताकि वह इस पर अपना स्पष्टीकरण दे सके जाँच पडताल समाप्त होने के बाद वह संबंधित अधिकारी के बारे में सक्षम अधिकारी को अपनी रिपोर्ट भेजता है।

लोकायुक्त – लोकापाल के परामर्श से राष्ट्रपति एक या अधिक लोकायुक्त नियुक्त कर सकता लोकायुक्त लोकपाल में प्रशासकीय नियंत्रण के अधीन होगा जों उसे कार्य को शीघ्र निपटाने के लिए निर्देश भेज सकता है परन्तु लोकपाल लोकायुक्त द्वारा पहुँचे गए किसी तथ्य, निष्कर्ष या सिफारिशे पर कोई आपति नहीं उठा सकता है। लोकपाल विधेयक 1998 एक प्रकार का **बिना दाँतो वाला शेर** हैं।

लोकापाल विधेयक 2001 – लोकसभा में प्रस्तुत किया यह आठवां विधेयक है इस विधेयक की मुख्य विशेषता यह रही हे कि लोकपाल स्वतंत्र रूप से कार्य कर सके और अपने दायित्वों का निर्वाह बिना किसी भय और पक्षपात से करने में समर्थ हो सके–

लोकपाल विधेयक 2001 की विशेषताएँ – 14 अगस्त 2001 को नया लोकपाल विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया गया था यह आठवीं बार प्रस्तुत किया गया है इसकी निम्न विशेषता है–

1. **गठन –** लोकपाल त्रिसदस्यीय होगा जिसमें अध्यक्ष के अलावा दो सदस्य होगे जो उच्चतम न्यायालय के सेवारत या पूर्व मुख्य न्यायाधीश या न्यायाधीश को नियुक्त किया जायेगा।
2. **नियुक्ति –** विधेयक के अनुसार लोकपाल की नियुक्ति सात सदस्यीय चयन समिति की अनुशंसा के आधार पर राष्ट्रपति द्वारा की जायेगी समिति के अध्यक्ष उपराष्ट्रपति होंगे तथा 6 सदस्य में प्रधानमंत्री , लोकसभा अध्यक्ष ,गृहमंत्री , संसद के उस सदन के नेता जिसमें प्रधानमंत्री न हो , लोकसभा एवं राज्यसभा के विपक्ष के नेता होंगे।
3. **कार्यकाल–** लोकपाल के अध्यक्ष एवं सदस्यों का कार्यकाल तीन वर्ष या 70 वर्ष की आयु तक होगा परन्तु दुर्व्यवहार या अक्षमता सिद्ध हाने पर लोकपाल के अध्यक्ष या किसी सदस्य को राष्ट्रपति द्वारा उसके पद से हटाया जा सकेगा।
4. **क्षेत्राधिकार–**मंत्री परिषद के सभी सदस्यो,सांसदो व सरकारी कर्मचारियों के साथ–साथ प्रधानमंत्री को भी लोकपाल की जाँच के दायरे में रखा गया है।

परन्तु उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों एवं निर्वाचन आयुक्तो आदि पदाधिकारियो को इससे बाहर रखा गया है।

निष्कर्ष– लोकपाल व लोकायुक्त– अकेले भ्रष्टाचार दूर नहीं कर सकते है यह केवल एक साधन है हमें अल्पकालीन ढ़ग के साथ–साथ दीर्घकालीन उपायों पर भी व्यवस्था करनी होगी, हमारे दृष्टिकोण बदलने होगे, पद एवं प्रभुता का परिचायक नीजि सम्पत्ति नहीं होनी चाहिए इसके अतिरिक्त राजनैतिक स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार जो कर्मचारियों में भ्रष्टाचार का प्रमुख कारण है, को दूर करना अतिआवश्यक है

संक्षेप में भ्रष्टाचार भारत में केंसर का रूप धारण कर चुका है यदि समय रहते इसका उपचार नही किया गया तो भारत की समूची व्यवस्था राजनैतिक,आर्थिक,सामाजिक एवं प्रशानिक छिन्न–भिन्न होकर अराजकता में बदल जायेगी। लोकपाल विधेयक को क्रियान्वित करने वाले लोग ईमानदार होने चाहिए। अन्यथा भ्रष्टाचार को भ्रष्टाचार देकर और बढ़ावा दिया जायेगा। भारत में लोकतंत्र के सफल सचालंन के लिए भ्रष्ट्राचार मुक्त भारत तभी संभव है जब लोकपाल विधेयक पारदर्शी रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. लोकप्रशासन के सिद्धात–विष्णु भगवान विधा भूषण ।
2. भारतीय सरकार एवं राजनीति त्रिवेदी,राय ।
3. भारत में लोक प्रशासन–दुबे एवं शर्मा ।
4. नवीन शोध संसार अन्तर्राष्ट्रीय जर्नल, जनवरी से मार्च 2014 ।
5. राजस्थान पत्रिका के अंक ।

वैदिक शिक्षा के सामाजिक सांस्कृतिक आदर्श एवं मूल्य (भारतीय संदर्भ में)

डॉ. विम्मी बहल * डॉ. अनिल शिवानी * *

शोध सारांश – वेद सम्पूर्ण मानव जाति के लिए आदर्श संहिता है। वेद मन्त्र (मंत्र) ईश्वर की पवित्र वाणी है। जिसमें मानव का सर्वाधिक समाजिक कल्याण हो साथ ही अकल्याण कारी मार्ग से निवृति की प्रेरणा दी गई है। संक्षेप में वेदो मे सदाचार, सत्य, अहिंसा, मित्रता पुरूषार्थ तथा सन्मार्ग का उपदेश दिया गया है।

कुंजी शब्द – आदर्श, संहिता, पुरूषार्थ, सन्तोष, अनुशासन आदि।

प्रस्तावना – शिक्षा मनुष्य के अभ्युदय के लिए होती है। शिक्षा की प्रक्रिया मनुष्य के जन्म से मृत्यु तक निरन्तर चलती रहती है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपनी शारीरिक, मानसिक, वौद्धिक और आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित कर वास्तविक सुख को प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त वेद सम्पूर्ण मानव जाति को साथ–साथ वार्तालाप करने परस्पर एक दूसरे को जानने की शिक्षा देता है। वैदिक शिक्षा में अथर्ववेद का विशेष महत्व है।

सायण ने इस विषय में प्रकाश डालते हुए कहा है कि जहां अन्य तीन वेद स्वर्ग प्राप्ति आदि पारलौकिक फल देने वाले है वहीं, अथर्ववेद लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार का फल देने वाले है। अतः कह सकते है कि प्रायः विषयों का वर्णन किया गया है। विशेषतः इस में आयुर्वेद, राजनीति, नीति शिक्षा आचार–शिक्षा, शिक्षा, समाज और आर्थिक जीवन उल्लेखनीय है। वैदिक समाज दर्शन के (घटक) महत्वपूर्ण बिन्दु ये है।

सर्वकल्याण की भावना – अथर्ववेद के एक मंत्र में प्रबुद्ध जनों को चाहिए कि वे गिरे हुए अर्थात् लोगों को बार–बार ऊपर उठाऐं

'उत देवा अवहिंत देवा उन्नयथा पुन:'[1]

वेदो में मानव से यह कामना की गई है कि कमाना तो सौ हाथों से चाहिए लेकिन कमाये धन का वितरण हजार हाथों से करना चाहिए।

शतहस्त समाहर सहस्रहस्त सं किए।[2]

ऋग्वेद में अनेक प्रेरक सूक्त मिलते है जैसे–
जिनमे से दशम मंडल उल्लेखनीय है

न वा उ देवा; क्षुधमिद्धदं ददुरूताशितमुप गच्छन्ति मृत्यव:।
उतो रयि: पृणतो नोपदस्यत्युतापृणन् मर्डितारं न विन्दते।।
(10.117.9)

केवल भूखे लोग ही भूख से नहीं मरते, वे भी मरते है जिनके पेट भरे हुए है। दान देने वाले का धन समाप्त नहीं होता और कृपण पर कोई दया नहीं करता)

स इदभोजो जो गृहवे ददात्य=ाकामाय चरते कृशाय।
अरमस्मै भवति यामहूता उतापरीषु कृणुते सखायम्।। (10.1173)

अन्न की कामना से भटकते हुए भिखारी को जो दान देता है, वह उदार है। याचक का मार्ग में जो सहायता कर देता है वह भविष्य के लिए उसे मित्र बना लेता है।

अवैध धन की अनुपादेयता – वेद के अनुसार व्यक्ति को अवैध उपायों से धनोपार्जन नहीं करना चाहिए। अग्नि को प्रार्थना कर ऋषि कह रहे है कि हे अग्निदेव! हमे सन्मार्ग से धनोपार्जन की प्ररेणा प्रदान करो –

अथर्ववेद में ऋषि कहते है – मैं अवैध मार्गो से अर्जित धन राशि को फेंक रहा हूॅ। मेरे घर में वही शुभ धनराशि रूके, जिसका अर्जन ईमानदारी से किया गया है। अथर्ववेद के एक ऋषि की प्रार्थना है कि हे स्वर्णमय हाथो वाले प्रभो! आप हमें उस धन लक्ष्मी से दूर रखिये, जो हमें पतन की और ले जाती है जिससे हमारी निन्दा होती है और जो हमें परजीवी वृक्षों की भाँति चारों ओर से जकड़ लेती है। आप हमें वही धन दीजिए, जिससे हमें शांति पूर्ण आनन्द मिले–

'या मा लक्ष्मी पतयालूर जुष्टामिचस्कन्द वन्दनेव वृक्षम्।
अन्यत्रास्मत् सवितस्तामितो धा हिरण्यहस्ते वस्तु नो रराण:।।[5]

स्त्रियो और अन्य प्राणियो से सद्भावपूर्ण व्यवहार करने का निर्देश– अथर्ववेद के निम्नलिखित मंत्र में कहा गया है कि स्त्रियों, मित्रों और बड़ों से कभी अप्रिय व्यवहार नहीं करना चाहिए। कृषि, क्षेम, धन और पोषण के लिए स्त्रियों का सदैव आदर करना चाहिए। किसी निर्दोष और निरपराध व्यक्ति की हत्या करना या उसे आघात पहुॅचाना सबसे बड़ा पाप तथा अपराध है। अथर्ववेद में सपष्ट कहा है स्वंय जियो और दूसरे को जीने दो।

'जीवा स्थ जीव्यासमत्'[6] **(अथर्व 19.69.1)**

नैतिक नियमो का पालन करते हुए उन्नति करने का संदेश – ऋग्वेद का कथन है कि ऊपर उठना और आगे बढ़ना जीवित (पुरूष) मनुष्य की पहचान है –

'आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतोडयनम्।'[7]

मनुष्यों के पास पक्षियों –जैसे पंख नहीं है, लेकिन उसके पास गुणों से समन्वित प्रतिमा के सुन्दर पंख है, जिनके बल पर वह गुरूड़ के सदृश ऊपर उठकर अपनी तेजोमयता से सम्पूर्ण विषय को ज्योर्तिमय कर सकते है।

सुपर्णोडसि गुरूप्मान् पृष्ठे पृथित्या: सीद।
भासान्तरिक्षमापृण ज्योतिषा दिवमुतभान तेजसा दिशडउद्दृंह ।।[8]

अथर्ववेद का आदेश है कि सभी मनुष्य विकास और उत्पादन बढ़ाने के लिए कर्म करे।

अत: कहा गया है कि अथर्ववेद के एक सूक्ती से पता चलता है कि जीवन केवल अच्छी–अच्छी वस्तुओं का ही नहीं है। उसमें असुन्दर, अप्रिया

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) अटल बिहारी वाजपेयी, हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष, अटल बिहारी वाजपेयी, हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

तथा निन्दनीय वस्तुओं का भी समावेश विधाता ने कर रखा है। मानव शरीर में यदि सौन्दर्य है, सुदृढता है, उपयोगिता है तो आलस्य, मृत्यु, पाप, वृद्धावस्था के लक्षण भी है। समृद्धि के साथ असमृद्धि, भाव के साथ अभाव, प्रशंसा के साथ निन्दा, ज्ञान के साथ अज्ञान भी है। इस सब अप्रिय स्त्रियों के प्रति सदैव सावधान रहकर ही जीवन की समग्रता का अनुभव किया जा सकता है। वैदिक शिक्षा मे वेदो में व्रत का अर्थ सयंम है। सयंम साधना करने से चित्त प्रसन्न रहता है। शरीर स्वस्थ तथा स्फूर्तिवान रहता है। व्रत के साथ-साथ वेद कर्म की भी शिक्षा देता है। तप व्रत के द्धारा अभीष्ट की सिद्धि होती है कर्म उसमें सहायक होता है। जो व्यक्ति कर्म करता है। पुरूषार्थ करता है, देवता उसी की सहायता करते है। जीवन का लक्ष्य है कर्म करना और यश प्राप्त करना। कर्म मे नियुक्त एवम् कार्य की प्रेरणा देने वाला ईश्वर (परमात्मा) है। मानव सत्कर्म का आचारण करे एवम् र्दुगुणों से रक्षा करे।

'वाचं ते शुन्धामि, प्रांण ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि।[9]
श्रोत्रं ते शुन्धामि नामिं ते शुन्धामि चरित्रास्ते शुन्धामि।। (यजुर्वेद 6.14)

अर्थात् मैं तेरी वाणी को शुद्ध करता हूँ, तेरी आँखों को शुद्ध करता हूँ, तेरे कानों को शुद्ध करता हूँ, तेरी नाभि को शुद्ध करता हूँ, मै तेरे आचरण और पैरो को शुद्ध करता हूँ। तात्पर्य है कि ऑख, नाक, कान, वाणी पैर और चरित्र शुद्ध होना चाहिए। ज्ञानेन्द्रियों के शुद्ध रहने से शुभ विचारो का ग्रहण होता है, वाणी से असत्य या कटुवचन नहीं बोले जाते अत: चरित्र की पवित्रता की रक्षा करना परम कर्तव्य है।

वेदों में दान को अनिवार्य कर्म माना गया है। दान करने से आत्मशुद्धि, आत्मसंतुष्टि होती है उदार दानी के लिए सम्पूर्ण संसार सुख देने वाला होता है। जो गायो का दान करता है स्वर्ग में उच्च स्थान पर जाता है, जो अश्व का दान करता है वह सूर्य लोक में निवास करता है, जो स्वर्ण का दान करता है वह देवता होता है, जो परिधान का त्याग करता है वह दीर्घ जीवन प्राप्त करता है।10 (त्रग्वेद 10.1078) दान देने से जीवन में अक्षय जीवन शाक्ति प्राप्त होती है। जो शुभ कार्यो में धन व्यय करता है उसे स्थायी ऐश्वर्य प्राप्त होता है। दान का प्रेरक मंत्र है -

'शतहस्त समाहर, सहस्रहस्त सं किए।[11]
कृतस्य कार्यस्य चेह स्फार्ति समावह।। (अथर्ववेद 3.24.5)

अर्थात् सौ हाथों से धन संग्रह करो, हजार हाथों वाले होकर उसे बाँट दो। इस प्रकार तुम अपने किए हुए और आगे करने योग्य कार्यो की समृद्धि को प्राप्त करोगे। इसका तात्पर्य है कि मनुष्य दो हाथों वाला होकर भी इतना पुरूषार्थी और उत्साही हो सकता है कि उसकी क्रियाशीलता सौ हाथों के बराबर हो। कहना यह है कि सौ हाथों से संग्रह करो और हजार हाथों से उन्मुक्त हृदय से दान करो। दान धन की सुरक्षा का परोक्ष साधहै। दान देने से धन की अभिवृद्धि होती है।

श्रीमद्भगवतगीता में दान के विषय में कहा गया है कि दान देना कर्तव्य है, ऐसे भाव से जो दान देश, काल और पात्र के प्राप्त होने पर प्रव्युपकार न करने वाले के लिए दिया जाता है वह दान सात्त्विक कहा जाता है और जो दान 'लेसपूर्वक तथा प्रव्युपकार' के प्रयोजन से अर्थात् बदले में अपना सांसरिक कार्य सिद्ध करने की आशा से अथवा फल के उद्देश्य से दिया जाता है, वह राजस कोटि की स्थिति का दान होता है।

निष्कर्ष - सक्षेंप में वेदों में सदाचार, सत्य, अहिंसा, मित्रता पुरूषार्थ तथा सन्मार्ग पर प्रवृत होने का उपदेश दिया गया है। वैदिक संस्कृति का पालन करके सुख शान्ति तथा परम संतोष की प्राप्ति होती है। इस प्रकार से वैदिक शिक्षा के तथ्य वर्तमान में भी उतने ही मूल्यवान है। शिक्षा का वैदिक उदेश्य यह भी है कि छात्र गुरू के साङ्निध्य में रहकर शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का विकास करे। शरीर से वे अङ्नाद, स्वंस्थ, बलवान् तेजस्वी और दीर्घायु बने तथा मन, बृद्धि और आत्मा से दृढसंकल्प, मेधावी, ज्ञानवान् यशस्वी बने। सच्चा मनुष्य या सच्चा नागरिक बनाना ही शिक्षा का उदेश्य है। अत: मूल्यों पर आधारित शिक्षा मनुष्य का अज्ञान समाप्त कर उसे कल्याणकारी मार्ग की और ले जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अथर्ववेद 4.13.1
2. तदेव 3245.
3. ऋग्वेद 10.117.1
4. ऋग्वेद 10.1173
5. अथर्ववेद 7.1152.
6. अथर्ववेद 1969.1.
7. ऋग्वेद
8. शुल यजुर्वेद 1772.
9. यजुर्वेद 6.14
10. ऋग्वेद 10.1072
11. अथर्ववेद 3245

****

मानव पूंजी प्रबंधन का संगठनात्मक कार्य निष्पादन पर प्रभाव- एक अध्ययन (उज्जैन संभाग के विशेष संदर्भ में)

डॉ. एस. सी. मूणत् * सविता वर्मा **

प्रस्तावना – मानव संसाधन सदैव ही धन सृजन का प्रमुख स्त्रोत रहा है। इसके माध्यम से प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। राष्ट्रो के उत्पादन और जीवन स्तर की वृद्धि में मानव पूंजी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। विकसित देशों में उच्च लाभ और उच्च मजदूरी बनाए रखने के लिए मानव पूंजी का महत्व बढ़ा है। मानव पूंजी संगठन की परिसंपत्ति होती है। किसी संगठन का नियोक्ता कर्मचारियों के कौशल स्तर में सुधार करने के लिए प्रशिक्षण का प्रतिनिधित्व करता है। कर्मचारी कौशल मानव पूंजी प्रबंधन का हिस्सा ही नहीं, अपितु इससे संगठन की लाभदायकता एंव उत्पादकता को अधिकतम किया जा सकता है। कर्मचारियों के ज्ञान, कौशल और योग्यता से लाभ प्राप्त करने के लिए संगठन मानव पूंजी प्रबंधन के विभिन्न दृष्टिकोण को अपनाते है।

मानव पूंजी प्रबंधन के द्धारा वर्तमान मूल्य मापा जा सकता है और भविष्य मूल्य निवेश के माध्यम से बढ़ाया जा सकता है। एक संगठन में मानव पूंजी प्रबंधन के अन्तगर्त प्रबंधक कर्मचारियों को पुरुस्कृत करने, विशिष्ट व्यावसायिक लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए, नवाचार बनाने और सतत् सुधार के लिए जवाबदेह होता है।द चार्टिड इन्स्टीटूयट् पर्सनल एंव डेवलपमेन्ट के अनुसार 'मानव पूंजी प्रबंधन में कौशल, अनुभव और नया करने की क्षमता व्यक्तियो के स्वामित्व में होती है। यह सामाजिक एंव संगठनात्मक पूंजी भी होती है।'आज मानव पूंजी में अधिक विनियोजन की आवश्यकता है, क्योकि मानव पूंजी ही संगठन को सफलता की उच्च सीढ़ी पर पहुंचा सकता है।

मानव पूंजी को तीन वर्गो में विभाजित किया गया है –

1. **बौद्धिक पूंजी संपदा –** इसके अन्तर्गत सामान्य ज्ञान से लेकर विशिष्ट ज्ञान, तकनीकी ज्ञान, कौशल , अनुभव आदि को शामिल किया जाता है।
2. **सामाजिक पूंजी –** इसके अन्तर्गत मनुष्य के मानवीय संबंधो पर विचार किया जाता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। एल्टन मायो ने हार्थोन प्रयोग में यह सत्यापित किया है, कि संगठन में सामाजिक पहलू की अधिक महत्ता है।
3. **भावनात्मक पूंजी –** इसके अन्तर्गत मानवीय भावनाओं को शामिल किया गया है। जिसका संगठन में महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि जब तक मानव भावनात्मक रुप से कार्य स्थल से जुड़े नहीं होगे, तब तक उत्पादन की प्रक्रिया सही प्रकार से संचालित नहीं की जा सकती हैं।

Elements Of Human Capital

Intellectual capital	Social capital	Emotional capital
1. Specialized knowledge	1.Network or relationships	1.Self confidence
2. Skill and expertise	2.Sociability	2.Ambition and courage
3. Cognitive complexity	3.Trust worthiness	3.Risk taking ability
4. Learning capacity		4.Resilience

बिल गेट्स ने मानव पूंजी प्रबंधन की महत्ता पर बल देते हुए कहा कि यदि हमारी कंपनी से 20 सबसे अच्छे व्यक्तियों को निकाल दिया जाय, तो हम रातो रात एक अति सामान्य कंपनी बन के रह जायेगे।

मानव पूंजी प्रबंधन के संगठन में निम्न लाभ है –

1. **कार्यक्षमता में वृद्धि –** मानव पूंजी प्रबंधन से संगठन में कर्मचारियों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। कर्मचारी वर्ग पूर्ण निष्ठा एवं लगन से अपना कार्य करते है।कार्य के प्रति उनका मनोबल बढ़ जाता है।
2. **समूह भावना का विकास –** किसी संगठन में समूह भावना के विकास में मानव पूंजी प्रबंधन का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जिसके अन्तर्गत कर्मचारी वर्ग में समूह भावना का विकास होता है। तथा कर्मचारी मिल-जुल कर कार्य करने के लिए प्रेरित होते है।
3. **मानव संपदा का प्रयोग –** मानव पूंजी प्रबंधन से संगठन में कार्यरत मानव संपदा का प्रभावशाली उपयोग होता है। संगठित लक्ष्यो के आधार पर मानव कार्य का निर्धारण किया जाता है। ताकि लक्ष्य की प्राप्ति सरलता से की जा सके।
4. **औद्योगिक शान्ति –** मानव पूंजी प्रबंधन से संगठन में औद्योगिक शान्ति बनी रहती है। प्रबंधक एवं कर्मचारियो के मध्य तथा कर्मचारियों एवं कर्मचारियों के मध्य मतभेद होने की संभावना कम हो जाती है।
5. **सामाजिक सुरक्षा –** मानव पूंजी प्रबंधन संगठन में कार्यरत कर्मचारियों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है। जिससे कर्मचारी वर्ग निश्चित तथा स्वतंत्र रुप से अपना कार्य करते है।

Source from Internet website

निम्न तालिका से स्पष्ट है, कि किसी वित्तीय सेवा संगठन में उच्च मानव पूंजी प्रंबधन से संगठन की आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ होती है।

निष्कर्ष – आज के इस वर्तमान प्रतिस्पर्धी युग में अधिकांशत: सभी संगठनों, व्यवसाय, व प्रतिष्ठानों को वैश्विक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इस चुनौतियों का प्रत्यक्ष रुप से सामना करने के लिए मानव पूंजी प्रबंधन के विनियोग को बढ़ाना चाहिए। जिससे मानव संपदा वैश्विक स्तर पर आने वाली चुनौतियों का सामना कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :- 1.Pandit ,k (2009) " Industrial relation and trade unions" Novelty & co. patana.
2. Pandit ,k (2010) "Human Resource Management" patana university, patana.
3. Journal 4. Website of Internet.

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय माधव कला, वाणिज्य, विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र) भारत
** शोधार्थी शासकीय माधव कला, वाणिज्य, विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र) भारत

मानव संसाधनों का प्रबंध

गणेश लाल राठौर *

शोध सारांश – वर्तमान में जिस तेजी से सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, औद्योगिक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर परिवर्तन देखने में आ रहा है, उसका मूल कारण प्रत्येक क्षेत्र में विशेषज्ञ प्रबंध सेवाओं का उपयोग करना है। किसी व्यक्ति के विकास का अध्ययन किया जाय तो उसमें उसके स्वयं द्वारा तैयार किये गए प्रबंध व उसके अनुशासन का ही महत्वपूर्ण स्थान देखने को मिलेगा।
किसी भी अर्थव्यवस्था प्रबन्ध के तीन महत्वपूर्ण संसाधन होते है। (1) मानव संसाधन (2) प्राकृतिक संसाधन (3) वस्तु प्रबंध

प्रस्तावना – मानव संसाधन के अन्तर्गत मानवीय शक्ति शारीरिक एवं मानसिक व प्राकृतिक संसाधनों में प्रकृति द्वारा प्रदत्त संसाधनों जैसे जल, वायु, हवा, पहाड़, खदाने आदि आते है। मानव संसाधन के अन्तर्गत मनुष्य और उसके द्वारा निर्मितसाधन मशीने उपकरण वस्तु प्रबंध के अन्तर्गत आते है। प्रस्तुत शोध पत्र में मानव संसाधन प्रबंध से जुडे क्षेत्रों का अध्ययन कर विचार प्रस्तुत किये जा रहे है।

मानव संसाधन प्रबंध के अन्तर्गत किसी संगठन के मानवीय घटकों से संबंधीत होता है। वर्तमान समय में सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, व्यवसायिक आदि क्षेत्र में उन्नत मशीनो का उपयोग तेजी से हो रहा है, नवीन तकनीकों, उपकरणों और मशीनों के कारण पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में बहुत परिवर्तन हो रहा है। मनुष्य के स्तर व सोच में व्यापक बदलाव आये है। उन्नत और तीव्र परिणाम वाली मशीनों की नीत–नई खोज हो रही है। प्रत्येक व्यक्ति वर्ग, समाज या राष्ट्र अपने को दूसरे से अलग रखना चाहता है। गलाकाट प्रतिस्पर्धा के इस दौर में हर कोई "I am the best" के प्रयास करता है। गैर मानव संसाधनो (भूमि, धन, मशीन) अधिक से अधिक उपयोग करता है। लेकिन किसी भी क्षेत्र के विकास या उन्नति में मूलरूप से मानव ही जुड़ा रहा है। ऐसी स्थिति में मानव का श्रेष्ठतम उपयोग ही लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक हो सकता है। मानव को ही साधनों के अनुरूप उसकी क्षमता के अनुसार संयोजित कर किसी भी क्षेत्र का तीव्र विकास किया जा सकता है। प्रत्येक क्षेत्र में बडी संख्या में मानव संसाधनों का उपयोग किया जाता है, ऐसी स्थिति में उनके कुशल प्रबंध की आवश्यकता महसूस की जाती है। मानव शक्ति का मानव के द्वारा निर्धारित लक्ष्यों के अनुरूप संयोजन करना जिससे न्युन्तम लागतो पर कुशल व गुणवत्ता युक्त उत्पादन करना ही मानव संसाधन प्रबंध है।

मानव केवल इस्तेमाल की वस्तु नहीं है वह निर्जीव या गुंगा बहरा नहीं है, इसलिए केवल कार्य के अतिरिक्त मानव स्वयं के विकास, सुरक्षा, मनोरंजन, स्वास्थ्य, व्यक्तित्व विकास आदि सभी बातों को ध्यान में रखते हुए मानव विकास की सोच लेकर मानव संसाधन प्रबंधन करता है।

मानव संसाधन प्रबंध के अन्तर्गत कार्य के अनुरूप व्यक्ति का चयन विकास उपयोग आदि को सम्मिलित किया जाता है। इसमें चयन के अन्तर्गत कार्य के अनुरूप निर्धारित योग्यता रखने वाले समान व्यक्तियों में से श्रेष्ठ का चयन करना विकास के अन्तर्गत चयन के बाद कार्य से सम्बन्धित प्रशिक्षण, शिक्षण आदि प्रदान करना उनके परिवार के लिए आदर्श वातावरण उपलब्ध करवाना उनके कार्यो के आधार पर प्रोत्साहित करना व पुरस्कृत करना मानव साधनों के उपयोग के अन्तर्गत उनको उनके कार्य पर लगाना व अच्छे परिणाम के लगातार प्रेरित करना है।

वर्तमान समय में मानव संसाधन प्रबंध में अनेक नवीन प्रवृतियॉ देखी जा रही है। जिसमें सबसे महत्वपूर्ण मानव संसाधन सम्बन्धी शोधकार्य है। जिसमें निम्न बिन्दूओं के आधार पर मानव संसाधन प्रबंध को अधिक उपयोगी व वैज्ञानिक बनाने के लिए कार्य किया जा रहा है।

1. संगठन में मानव संसाधन हेतु अनुसंधान करना तथा नई विधियों को लागू करना जैसे –

(अ) योग्यता प्रमाप निर्धारण।
(ब) परीक्षणों की व्यवस्था।
(स) साक्षात्कार की नई विधियॉ खोजना।
(द) कार्य सन्तुष्टि अध्ययन।
(इ) नियुक्ति प्रणाली में सुधार।
(फ) प्रमाप लेख पद्धति।
(ज) नियन्त्रण प्रणाली में सुधार।

2. बाह्य कार्यो के अध्ययन में भाग लेना।
3. औद्योगिक संबंध के लिए उपयोगी विषय सामग्री में संग्रह करना व कर्मचारियों के उपयोग के लिए उपलब्ध कराना।

अन्त में मानव संसाधन प्रबंध (प्रशासन) के अन्तर्गत मानव संसाधन कार्यक्रम एवं नीतियों को व्यापक रूप में लागु किया जाता है। जिनमें चयन, प्रशिक्षण,क्षतिपूर्ति सेवाएँ, कार्य, कार्यदल का निरीक्षण एवं पर्यवेक्षण अभिप्रेरणा तथा नेतृत्व और बल सम्बन्धी कार्य सम्मिलित किये जाते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. मानव संसाधन प्रबंध – अग्रवाल एवं फोजदार
2. प्रबंध के सिद्धान्त – डॉ. गुप्ता
3. प्रबंध के सिद्धान्त – अग्रवाल एवं अग्रवाल
4. टाईम्स ऑफ इंडिया
5. इंडिया टूडे
6. फोर्ब्स पत्रिका

****

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय,धार (म.प्र) भारत

निवेश के क्षेत्र में ज्यादा लाभ कमाने के लिए दीर्घकालिन विनियोग की आवश्यकता

डॉ. रमेश कुमार रावत *

प्रस्तावना – विनियोग से आशय् वित्तीय अथवा मूर्त सम्पत्तियों में धन लगाने से हैं जिसके अन्तर्गत एक निश्चित अवधि के पश्चात निवेशित धन में अभिवृद्धि की आशा होती हैं। वर्तमान युग में किसी भी क्षेत्र में विनियोग बहुत ही सोच समझकर किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें लाभ के साथ जोखिम का तत्व भी विद्यमान रहता हैं। निवेशक आम तौर पर यह मानते हैं कि विभिन्न एसेट श्रेणियों में से इक्विटीज में सबसे ज्यादा आमदनी देने की क्षमता होती हैं। लेकिन कुछ शेयर मार्केट के उतार चढ़ाव वाली प्रकृति के कारण ज्यादातर निवेशक इक्विटीज को लंबी अवधि में चक्रवृद्धि दर से बढ़ने की क्षमता का लाभ नही उठा पाते हैं कुछ निवेशक इक्विटी मार्केट में प्रवेश करने और उससे निकलने का समय निर्धारित करना चाहते हैं। इस प्रक्रिया में वे आखिर में नकुसान उठाने को बाध्य होते हैं। इन समस्याओं से निपटने का सबसे अच्छा रास्ता यह हैं कि इक्विटीज में लंबी अवधि लिए निवेषित रहा जाए।

लंबी अवधि का दृष्टिकोण – लंबी अवधि यानि पांच या अधिक वर्ष में मार्केट द्वारा निवेशको को कई फायदे दिए जाते हैं यह निवेशको को अल्पावधि के उतार चढ़ाव से निपटने में मदद करता हैं अल्पकाल में कंपनी के संबंध में कोई बुरी खबर कंपनी के शेयरो में अत्याधिक गिरावट ला सकती हैं लेकिन लंबी अवधि में बुनियादी रूप से मजबूत कंपनिया मजबूती से खड़ी रहती हैं तथा हर तरह के वातावरण में उनका बिजनेस आगे बढ़ता रहता हैं। इसलिए इक्विटीज में जितनी लंबी अवधि के लिए निवेश करेंगे, उतना ही अधिक लाभ होगा।

अल्पकाल दृष्टिकोण – कम अवधि के लिए विनियोग करने वाले प्रतिभागी किसी भी घटना पर जल्दी प्रतिक्रिया दिखाते हैं इस कारण से स्टॉक मार्केट में काफी ज्यादा उतार चढ़ाव देखने को मिलता हैं यही कारण हैं कि जब 9/11 की घटना के बाद दुनिया भर के स्टॉक मार्केट धराशायी हो गये लेकिन लंबी अवधि वाले विनियोग में संतुलन बना रहता हैं तथा उतार चढ़ाव का ज्यादा प्रभाव नही पड़ता।

इसलिए विनियोग को अल्पावधि के उतार चढ़ाव से प्रभावित होकर गिरने से बचाने के लिए कम से कम पांच वर्ष की अवधि के लिए इक्विटी म्यूचल फंड में विनियोग करना चाहिए।

निवेशक हमेशा यही चाहता हैं कि शेयर्स इक्विटी फंडस की कीमत जब गिरी हुई होती हैं तब खरीदा जाए तथा कीमत बढ़ने पर इसे बेच दिया जाए लेकिन ऐसा करने पर मार्केट के सबसे अच्छे दिनों का नुकसान हो सकता हैं। अनुशासन के साथ लंबी अवधि के लिए निवेश करने वाले धैर्यवान निवेशक को इसका फायदा शानदार आमदनी के रूप में मिलता है उदाहरण के तौर पर यदि कोई व्यक्ति हर महीने 5000/– की बचत को निवेश करता हैं तो उसे 12% की दर से 30 वर्षो में उसे 1 करोड़ 52 लाख रूपये मिलेंगे लेकिन यदि निवेशक निवेश प्लान को बदलना चाहता हो तो उसके पास तीन विकल्प उपलब्ध हैं–

(अ) 9% आमदनी देने वाला विकल्प से मिलने वाली राशि 84.95 लाख होगी।

(ब) निवेश की राशि 5000/– से घटाकर 3000/– करने पर मिलने वाली राशि 91.58 लाख होगी।

(स) यदि निवेश की अवधि 25 वर्ष करती जाए तो प्राप्त होने वाली राशि 84.33 लाख होगी।

अत: निवेश की राशि को 40% कम करने या दर को 3% कम करने पर अंत में प्राप्त होने वाली राशि पर उतना प्रभाव नहीं पड़ता जितना असर अवधि को 30 वर्ष से घटाकर 25 वर्ष करने पर पड़ता हैं।

कंपाउंडिग अर्थात चक्रवृद्धि निवेश निवेशक को अच्छा रिटर्न देता हैं कंपाउंडिग निवेश जितनी जल्दी शुरू किया जाए यह उतना ही अधिक लाभदायक सिद्ध होता हैं।

कंपाउंडिग की निवेश शक्ति की तालिका

उम्र	SI-P	अवधि	निवेशित मूलधन	60 वर्ष बाद पूंजी
25 वर्ष	2000/– pm	35 वर्ष	8.4 लाख	10.09 करोड़
35 वर्ष	4000/– pm	25 वर्ष	12 लाख	67.46 लाख
45 वर्ष	8000/– pm	15 वर्ष	14.4 लाख	37.72 लाख

अत: उक्त तालिका से स्पष्ट हैं कि कंपाउंडिग निवेश जितना जल्दी शुरू किया जाए व दीर्घ अवधि के लिए किया जाए वह निवेश उतना ही अधिक लाभादायक होता हैं।

उपरोक्त तालिका अनुसार निवेशक 25 वर्ष की उम्र से 2000/– प्रतिमाह 35 वर्ष तक निवेश करने पर कुल निवेशित राशि 8.40 लाख होती हैं जो 35 वर्ष में अर्थात 60 वे वर्ष में निवेश से प्राप्त राशि 10.09 करोड़ होगी। इसी प्रकार 35 वर्ष की उम्र से 4000/– प्रतिमाह 25 वर्ष तक निवेश करने पर कुल निवेशित राशि 12 लाख होती हैं जो 25 वर्ष में अर्थात 60 वे वर्ष में निवेश से प्राप्त राशि 67.46 लाख होगी। इसी प्रकार 45 वर्ष की उम्र से 8000/– प्रतिमाह 15 वर्ष तक निवेश करने पर कुल निवेशित राशि 14.40 लाख होती हैं जो 15 वर्ष में अर्थात 60 वे वर्ष में निवेश से प्राप्त राशि 37.72 लाख होगी।

अत: निवेश के क्षेत्र में ज्यादा रिटर्न प्राप्त करने हेतु दीर्घकालिन विनियोग की आवश्यकता होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वित्तीय बाजार एवं विनियोग प्रबंधक।
2. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
3. इकोनॉमिक्स टाईम्स।
4. फोर्ब्स पत्रिका।
5. द हिन्दू समाचार पत्र।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद , धार (म.प्र) भारत

Balance Of Payments & Foreign Exchange Reserves : A Review of Literature

Dr. R P Saharia *

Abstract - Balance of payments (Bops) account is an accounting record of all monetary transactions between a country and the rest of the world .These transactions include payments for the country's exports and imports of goods, services, financial capital, and financials transfers. The country's ability to import would limited by the foreign exchange it has earned from its exports, or from what is called the 'current account' – unless it choose, as countries often do, to finance their deficit by borrowings, i.e. from the 'capital account'. To the extent that deficit is not financed by the capital account, it will experience a reduction in its foreign currency 'cash balance' i.e. a fall in its forex reserves. In the same way, forex reserves will increase if the exports are more than the imports'. Until recently many researchers have shown interest in the field of the Balance of payments and Foreign Exchange Reserves. They have carried out numerous field observations to illuminate the darkness of this fields. Their findings and suggestions are reviewed here in this paper .

Key Words - Balance of payments Foreign Exchange/Forex Reserves, Current Account capital account.

Why is the Literature Reviewed ?A literature review discusses published information in a particular subject area,and sometime information in a particular subjects areas within a certain time period . Literature reviews provide a handy guide to a particular topic . For professionals, they are useful reports that keep them up to date with what is current in the field. For scholars, the depth and breadth of the literature review emphasizes the credibility of the writer in his or her field. Literature reviews also provide a solid background for the research topic under investigation. And depending on situation, the literature review may evaluate the sources and advise the reader on the most pertinent or relevant point of research. Comprehensive knowledge of the literature of the field is essential to most researches. To answer the question of "why the study of Bop_s?" the review of literature (directly or indirectly pertaining Bops'/Foreign Trade / Foreign Exchange) has been done . For the purpose of this proposal, a small review of literature goes through the following paragraphs:-

Dhliwayo (1996) examined whether excess money supply played a role as a disturbance to Zimbabwe's balance of payment during the period 1980 to 1991 using multivariate co-integration and error – correction modeling . The one – to- one negative relationships and strong link between domestic credit and the flow of international reserves was established in this research . The policy conclusion was that, given a stable demand for money function, balance of payments disequilibrium can be corrected through appropriate financials programming and monetary targeting .

Reddy (2002) attempted to capture the basic concepts, theory and practice with orientation on issues relevant to India. The presentation proceeded further to focus on several aspects of forex management, such as the implication for quasi fiscal deficit and communication policy of the Reserve Bank. The issue in regard to policy and management of forex reserves in India were posed in some detail while concluding part contained his random thoughts from a futuristic perspective.

Moreno-Bird and Perez (2003) examined the long-run relationship between export performance and economic growth in three central American countries from 1950 to 1999 . The co – integration analysis supports the view that the external sectors has been a key determinant of these countries long-run rate of economic growth. They also suggested that the trade liberalization experiences seen since the mid-1980s have had very disparate impacts on these countries long-run rates of economic growth. And in the end implications of these results for trade liberalization strategies and the possible impact of a United states – Central American Free Trade Agreement were examined.

Frederico (2003) applied the Thirlwall's balance of payments constraint model to Brazilian economy. The results show that there is a positive co-integration between growth in exports and long-term economic growth in Brazil, which support the fact that external factors constrain Brazilian economic growth.

Parikh (2004) examined the impact of liberalization on trade deficits and current account of developing countries . This study used panel data of 42 countries (both time series and cross section dimension) to estimate the effect of trade liberalization and growth on trade balance while controlling for other factors such as income terms of trade . The major finding of the study was that trade liberalization could constrain growth through adverse impact on balance of payments .

Parikh and Stirbu (2004) studied 42 developing countries

* **H.O.D (Economics) Govt. J.M.P. College, Takhatpur, Distt. Bilaspur (C.G.) INDIA**

of Asia, Africa and Latin America in which they first examined the impact of trade liberalization on economic growth, investment share of GDP, openness, trade balance and current accounts (as percentages of GDP) .

This study used the latest available data on real GDP, growth rates of individual and advanced countries and examined the relationship between liberalization and growth, liberalization and trade balance and also the impact of exchange rate or terms of trade policies on trade balance.

Razmi (2005) tested the validity of the BPCG hypothesis for India, a large developing country with a relatively strong industrial base and a relativety low trade to GDP ratio, for the period 1950 -1999 . Johansen's co -integration technique was employed to estimate trade parameters . Short-run adjustment were explored within a vector error correction framework. The average growth rates predicted by various forms of the BPCG hypothesis were found to be close to the actual average growth rate, although individual decades displayed substantial deviations .

Dania and Spillan (2007) sought to revisit the international reserve policies of emerging market countries ; taking the case of India they aimed to demonstrate how these reserves could be put towards effective growth by implementing better reserve and debt management policies.

Descriptive and comparative ratio analysis methods were used. These methods provided a clear view of India's international reserves and how reserves vulnerabilities could be identified. Based on the suggested benchmarks, the findings indicate that India may be holding reserves in excess of the suggested requirements .

Kandil and Dincer (2008) examined the effects of exchange rate fluctuations on real output, the price level, and the real value of components of aggregate demand in Egypt and Turkey. In Turkey, anticipates exchange rate appreciation had significant adverse effects, contracting the growth of real output and the demand for investment and exports, while raising price inflation. Random fluctuations in Turkey had asymmetric effects that highlighted the importance of unanticipated depreciation in shrinking output growth and the growth of private consumption and investment, despite an increase in export growth. In Egypt, anticipated exchange rate appreciation decreased export growth. Given asymmetry, the net effect of unanticipated exchange rate fluctuations, in Egypt, decreased real output and consumption growth and increased export growth on an average, over time.

Jay Raman and Choong (2008) studied annual exchange market pressure (EMP) over a 31- year (1975-2005) period and attempted to determine the factors behind EMP . The autoregressive distributed lag (ARDL) bounds testing procedure was applied to a multivariate model covering four variable, namely EMP in index numbers, and budget deficit ,domestic credit to private sector and external debt, all the three expressed as percentages of gross domestic product . Also, an uncertainty variable was added to the regression analysis with a view to find out whether political uncertainty had been responsible for speculative attacks on currency. It was then followed by Granger-causality tests in an error-correction model with a view to exploring the short and long -term relationships between the variables . The findings were that there existed a long-run relationship between EMP and budgets deficit, domestic credit to private sector, external debt and political uncertainty; and EMP was positively related to budget deficit, domestic credit to private sector and external debt as well as speculative pressures exercised by political uncertainty .

Singh and Pandey (2010) attempted to take a meticulous look on stability of money demand in India with quarterly data for 1996-97 : 2001-02 and 2009-10 period in the backdrop of 1991 balance of payments crisis that brought much needed reforms in the economy and financial sector and triggered financial innovation fueled with revolution in information technology world- wide and in India. Based on Gregory- Harden (1996) method of co-integration estimation the analysis confirms that in contrast to most of the previous studies ,money demand function in India is not stable in the post reform period .

Chakra borty et. Al. (2010) explored how far capital account convertibility (KAC) was destabilizing the current account balance (CAB) and measured the strength of the inter-relationship between CAB and KAC and also contributed to the literature by incorporating multiple endogenous structural breaks in the empirical analysis . They found that there was no long term relationship between capital and current account balance and revealed that two significant structural breaks were observed in 1993-94 and 2003-04 .

Uegaki (2010) clarified each country's (i.e. china ,India and Russia) similarities and peculiarities in their international financing in a globalizing economic situation by using balance of payments statistics .

Shined (2010) - attempted to study the trends in balance of payments in various period since independence, the period for study was subdivided into four periods as :-(1) 1956-57 to 1975-76(2) 1976-77 to 1979-80 (3) 1980-81 to 1990-91 (4) 1991 onwards.

Adamu and Itsede (2010) examined the monetary approach to the balance of payments for the WAMZ countries during the period 1975-2008. It examined whether excess money supply played a role as a disturbance using panel data estimation technique involving both the within -country and the cross -country effects . The empirical results suggested that money played a significant role in determining the balance of payments . The strong negative link between domestic credit and net foreign asset was established. Interest rate and GDP growth were also found to have significant impact on the balance of payment in the WAMZ . The policy conclusion was that, the balance of payments disequilibrium could be corrected through appropriate financial programming ,monetary targeting and the implementation of prudent fiscal policy.

Seguino (2010) investigated the impact of gender equality in economic growth by considering both the short and long run, evaluating the effects of gender equality in two types of

economies- semi -industrialized economies (SIEs) and low income agricultural economies (LIAEs) . it incorporated gender effects on the balance of payments constraint to growth. The results were that gender wage and capabilities equality work in opposite directions in SIEs and in the same (positive) direction in LIAEs. In the long run- analysis, government macroeconomic management policies are shown to be necessary in order to ratify movements towards gender equality.

IMF (2011) balance of payments and international investment position manual 6th edition, chapter -14 discussed the factors influencing international transactions and positions and the extent to which such factors were sustainable. Finally, some of the implications of balance of payments adjustments for economic policy were considered.

Thrill wall (2011) surveyed balance of payments constrained growth models from Thrill wall' s original contribution in 1979 to the latest tests of the models using co-integration techniques. Historical antecedents of the model were explored (e.g. the Harrods trade multiplier; dual gap analysis; prebisch's centre- periphery model), and various extensions of the model were outlined including : capital flows; interest payments on debt. and generalization of the model to include many countries and many goods. The relevance of the models is shown for the current discussion of global imbalance in the world economy.

Rana and Khurana (2011) focused on the concept of BOP and comparative research on Indian balance of payments. Managements of the balance of payments will remain an important problem especially if the objective is to achieve a balance so as to finance imports that is needed for technological modernization in numbers of sectors of the economy and also there is immediate need to strengthen India's exports capability. They developed a technological modern models for perfect export and import policies for sustained balance of payments.

Amini et. Al. (2012) investigated the effects of trade liberalization on current account balance of payments and economics growth in Iran . Time series data had been used to estimate the model in the years 1961-2006. Using auto regressive distributed lags (ARDL), the existence of long – term relationships between variables had been investigated and using the error correction method (ECM), the existence of short term-relationship between variables had been investigated . The results show that, the effect of trade liberalization on the trade balance is positive and significant in the long run as well as on economic growth. But, the effect of trade liberalization on the current account balance of payments is not significant .

Halicioglu (2012) tested the existence of Thrill wall's law for Turkey during the period of 1980-2008; bounds test approach to co-integration was applied. The results suggested that Thrill wall's law holds good for Turkey . He also suggested some policy recommendations to curb the deficits in the balance of payments.

Tiwari (2013) examined the long-run sustainability of trade deficits for the ASEAN's five economies viz. Indonesia, Malaysia , the Philippines, Myanmar and Thailand, in the presence of structural breaks. The saikkonen and Lu"tkepohl co-integration procedure was utilized , allowing for structural breaks in the series and to determine endogenous structural breakes , the Lanne et al. Unit root test was applied. The researcher found a long-run relation between exports and imports for Indonesia , Myanmar and Thailand; and sustainable long run trade deficit only for Myanmar .

Conclusion - The balance of payments is one of the major indicators of a country's status in international trade, because it is affected not only by political events or government policies but also by the economic events represented by the BOPs. So, there is a need to study different aspects of BOPs. After reviewing the literature on the concerned topic, it can be observed that most of the previous studies were conducted on the issue like impact of liberalization on trade deficits and current account, impact of exchange rate on trade balance, impact of externals factors on growth, impact of BOPs on economic growth, trend in BOPs, and impact of inflation on foreign trade . But still there is no such comprehensive study in India which could cover all the above mentioned aspects. So, there is a fresh attempt on the part of researcher to cover all the above mentioned aspects for the researches to be under taken in future in India .

References :-

1. Parikh ,Ashok (2004) . "Relationship between Trade Liberalization , Growth and Balance of payments in Developing Countries : An Econometric study" . HWWA Discussion Paper No. 286.
2. Federico Gonzoga Jayme Jr. (2003). "Balance of Payments Constrained Economic Growth in Brazil " . Brazilians Journal of Political Economy . vol. 23. no. 1(89).
3. Amini, Sadat Yalda et.al. (2012) " The Effect of Trade Liberalization on Balance of Payment and Economic Growth in Iran " . Journal of Basic and Applied Scientific Research. Text Road Publication . 2(7). 7227-7231.
4. Parikh, A. and Stirbu, C. (2004) . "Relationship between Trade Liberalization, Economic Growth and Trade Balance: An Econometric Investigation. " HWWA Discussion Paper. No. 289 . Hamburg Institute of International Economics Hamburg . 1-50.

****

भारत का विदेशी व्यापार

डॉ. लीला डावर *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण के वर्तमान दोर में दुनिया के अधिकतर देशों की अर्थव्यवस्था की प्रगति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय निर्भरता के कारण अधिकांश देश एक दूसरे के करीब आए है। तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एवं समझोते में तेजी से वृद्धि हुई है।

व्यापार शब्द से अभिप्राय है लाभ की प्राप्ति के उद्देश्य से व्यक्तियों और संस्थाओं के बीच वस्तुओं और सेवाओं के क्रय-विक्रय से होता है। व्यापार दो भागो में विभाजित किया जाता है। आंतरिक व्यापार या घरेलू व्यापार तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार या विदेशी व्यापार। जब किसी व्यापारिक सौदे के क्रेता विक्रेता एक ही देश के निवासी होते है तो उसे व्यापार का आंतरिक व्यापार या घरेलू व्यापार कहते है जैसे- दिल्ली, मुंबई, इन्दौर आदि। इसके विपरित अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से अभिप्राय उस व्यापार से है जो दो या दो से अधिक देशों के बीच आयात एवं निर्यात होता है वह अन्तर्राष्ट्रीय व्याापार कहलाता है जैसे- भारत, अमेरीका, इंग्लैड आदि। व्यापार संतुलन में आयात निर्यात के केवल दृश्य मदों को ही शामिल किया जाता है दृश्य मदें वे वस्तुएँ है जिनका लेखा जोखा बंदरगाहो, हवाई अड्डो, सीमा चौकियों आदि पर रखा जाता है। इसमें अदृश्य मदों को शामिल नहीं किया जाता है।

भुगतान संतुलन- भुगतान संतुलन किसी देश के द्वारा विश्व के अन्य देशों के साथ किये गये समस्त लेन देन का विस्तृत विवरण होता है। इसमें देश के दृश्य एवं अदृश्य दोनों ही प्रकार के आयात एवं निर्यात को सम्मिलित किया जाता है। भुगतान संतुलन किसी देश के आर्थिक सौदों का लेखा जोखा होता है जिसमें दो पक्ष होते है प्रथम लेनदारीया और दूसरा देनदारीया होती है। भुगतान संतुलन सदैव संतुलित रहता है अर्थात लेनदारीया एवं देनदारीया बराबर रहती है। व्यापार संतुलन एवं भुगतान संतुलन दोनों ही श्रम विभाजन एवं विशिष्टीकरण के कारण होते है।

भारत में विदेशी व्यापार का अंश-

वर्ष	निर्यात	आयात	व्यापार (प्रतिशत में)
1950	1.85	1.71	1.78
1960	1.03	1.69	1.36
1970	0.64	0.65	0.65
1980	0.42	0.72	0.57
1990	0.52	0.66	0.59
1999	0.60	0.80	0.70
2000	0.70	NA	0.70
2002	0.80	NA	0.80
2003	0.8	NA	0.80
2004	9.0	NA	1.10
2005	1.0	NA	NA
2006	1.0	NA	1.5
2009	1.0	NA	2.0

स्त्रोत भारतीय अर्थव्यवस्था 2009-10 प्रतियोगिता दर्पण
NA आंकड़े अप्राप्त

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि स्वतंत्रता के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। विश्व के कुल विदेशी व्यापार में भारत का अंश लगभग 1 प्रतिशत था। WTO की विश्व रिपोर्ट के अनुसार 2009 तक विश्व वस्तुओं के कुल विदेशी व्यापार में भारत का 2 प्रतिशत हो गया है। सन् 2004-05 में क्रमश: 1.1 प्रतिशत एवं 1.5 प्रतिशत था। 2011-12 मे 11.55 प्रतिशत तथा 2013-14 मे 13.97 प्रतिशत विश्व व्यापार में भागीदारी की है तथा भारत विश्व व्यापार मे 31 वाँ निर्यातक तथा 24 वाँ आयातक देश रहा।

भारत का विदेशी व्यापार, आयात, निर्यात एवं व्यापार शेष –

(करोड़ रू. मे)

वर्ष	आयात	निर्यात	व्यापार शेष
1950-51	608	606	-2
1960-61	1122	642	-480
1970-71	1634	1535	-99
1980-81	12549	6711	-5838
1990-91	43196	32553	-10645
2000-2001	230873	203571	-27302
2006-07	840506	571779	-266727
2007-08	1012312	655864	356448
2008-09	1374436	840755	533681
2009-10	1363736	845534	518202
2010-11	1683467	1142649	540818

स्त्रोत आर्थिक सर्वे 2011-12

उक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि योजना अवधि में दो वर्षो को छोड़कर हमारा व्यापार संतुलन प्रतिकूल ही रहा है। 1972-73 एवं 1976-77 में हमारा व्यापार संतुलन अनुकूल था। विश्व व्यापार में वृद्धि के साथ साथ व्यापार संतुलन का घाटा और उत्तरोतर बढ़ता जा रहा है। 1980-81 से 1990-91 में विदेशी व्यापार नीति में सुधार से पूर्व देश के निर्यातो का मूल्य कुल आयात बिल का वार्षिक औसत 62 प्रतिशत था। 1992-93 से 2011-02 मे निर्यातो का वार्षिक औसत मूल्य आयात मूल्य का 74 प्रतिशत हो गया है। भारत का विदेशी व्यापार विश्व के लगभग सभी देशो के साथ होता है। 93000 से भी अधिक वस्तुएँ लगभग 190 देशो को निर्यात की जाती है। 8250 वस्तुएँ आयात की जाती है।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला – उज्जैन (म.प्र.) भारत

विदेशी व्यापार के आंकड़े – **सारणी – (देखे अगले पृष्ठ पर)**

तालिका से स्पष्ट है कि मंदी के चलते 2009–10 में निर्यातो में 3.5 प्रतिशत व आयातो में 5.0 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई थी। 2011–12 मे वस्तुएँ निर्यातो में 29.5 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गई है। आयातो में वृद्धि 19.0 प्रतिशत रही है।

भारत मे निर्यात व्यापार की वस्तुएँ – **सारणी – (देखे अगले पृष्ठ पर)**

तालिका से स्पष्ट है कि 1950 के बाद निर्यात व्यापार में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। इस समय भारत सूती कपड़ा, जूट एवं जूट की वस्तुएँ, चाय, चमड़ा व उससे बनी वस्तुएँ, कच्चा लोहा, खली, काजू व मसालों का निर्यात करता है। वर्तमान में हमारे प्रमुख निर्यात होने वालो में इंजीनियरिंग उत्पाद, रत्न आभूषण उत्पादन, चमड़ा आदि शमिल है इस प्रकार कुल 80 प्रतिशत वस्तुएँ निर्यात की जाती है।

वर्ष 2010–11 की अवधि में भारत का कुल निर्यात 251136 मिलियम अमेरीकी डालर है। पिछले वर्षो से 37.5 प्रतिशत वृद्धि हुई है निर्यात व्यापार में वस्तुओं का प्रतिशत वर्ष 2010–11 में भारत से निर्यात होने वाले उत्पादो में प्रमुख रूप से इंजीनियरिंग उत्पादन (18.21 प्रतिशत), रत्न आभूषण 16.27 प्रतिशत, पेट्रोलियम उत्पाद 15.77 प्रतिशत, वस्त्र 10.23 प्रतिशत, रसायन एवं औषधीय उत्पादन 8.8 प्रतिशत, कृषि उत्पादन 7.6 प्रतिशत, लोहा अयस्क 3.37 प्रतिशत, इलेक्ट्रानिक्स सामान 3.05 प्रतिशत, प्लास्टिक 1.88 प्रतिशत चमड़ा तथा चमड़े से निर्मित सामान 1.83 प्रतिशत, अभ्रक 1.5 प्रतिशत आदि शामिल है।

भारत में आयात व्यापार की वस्तुएँ – **सारणी – (देखे अगले पृष्ठ पर)**

तालिका से स्पष्ट है कि आयात व्यापार में भी परिवर्तन हुए है। खाद्यान्नो का आयात भी बढ़ा है। मशीने व अन्य पूँजीगत वस्तुओं एवं उर्वरक, लोहा एवं इस्पात, पेट्रोलियम, तेल व चिकनाई युक्त पदार्थ, कपास, अलोह धातुओं, मोती व बहुमूल्य पत्थर आदि के आयातो मे भारी वृद्धि हुई है। वर्ष 2010–11 में आयात 269769 मिलियन अमेरीकी डालर रहा और व्यापार घाटा 118633 मिलियन डालर रह गया आयात के संबंध में भारत के कुल आयात का 61.2 प्रतिशत एशिया और आशियान देशों से 19.3 प्रतिशत तथा युरोप से 19.8 प्रतिशत आयात किया जाता है।

वर्ष 2010–11 में भारत में जिन प्रमुख चीजों का आयात किया गया है उनमें कच्चा तेल व उत्पादन (28.6 प्रतिशत), सोना चाँदी (11.5 प्रतिशत), मोती व रत्न (9.4 प्रतिशत), इलेक्ट्रानिक सामान (7.2 प्रतिशत), मशीनरी (6.4 प्रतिशत), उर्वरक (1.9 प्रतिशत), खाद्य तेल (1.8 प्रतिशत), परिवहन उपकरण (3.01 प्रतिशत), रसायन (5.2 प्रतिशत), लोहा इस्पात (2.8 प्रतिशत), कोयला (2.7 प्रतिशत) आदि।

सरमार द्वारा नियंत्रित संस्थाओं द्वारा विदेशी व्यापार की एक विशेषता रही है कि सरकार द्वारा नियंत्रित संस्थाएँ भी विदेशी व्यापार करने लगी है। संस्थाएँ निम्न है– भारतीय राज्य व्यापार निगम, हस्तकला एवं हथकरघा निर्यात निगम, भारतीय काजू निगम, भारतीय चलचित्र निर्यात निगम, भारतीय खनिज एवं धातु निगम, भारतीय अभ्रक व्यापार निगम इसके अलावा निर्यात व्यापार करने वाली संस्था जैसे – हिन्दुस्तान मशीन टुल्स। सरकार कम्पनीयों एवं संस्थाओं का भारत में निर्यात का प्रतिशत बराबर बढ़ रहा है।

निष्कर्ष – वर्तमान समय में भारत के व्यापार संबंधी सभी बड़े व्यापारिक ब्लाको ओर दुनिया के सभी भौगोलिक क्षेत्रों से है। भारत के विदेशी व्यापार की दिशा एवं संरचना में विशेषकर 1990 के दशक में उदारीकरण प्रक्रिया शुरू होने के बाद बहुत बदलाव आया है। एशिया और आसियान देशों व अफ्रीका को हमारे निर्यात में पर्याप्त भारत की अर्थव्यवस्था के सभी प्रमुख क्षेत्र प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कारोबार से जुड़ गए है।

वर्ष 2010–11 मे भारत का कुल निर्यात 251136 मिलियन अमेरिकी डॉलर का रहा। गत वर्ष की अपेक्षा 37.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसी अवधि में आयात 369769 मिलियन अमेरिकी डॉलर रहा और व्यापार घाटा 118633 मिलियन डॉलर रह गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था (प्रतियोगिता दर्पण)
2. समसामयिक वार्षिक – 2014
3. भारतीय विदेशी व्यापार एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएँ (डॉ पी.डी. माहेश्वरी, डॉ श्रीचंद्र गुप्ता)
4. अन्तर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एवं सार्वजनिक वित्त (डॉ. जयप्रकाश मिश्र, डॉ. के. एल. गुप्ता)
5. भारतीय अर्थव्यवस्था (अरिहन्त पब्लिकेशन)
6. लोकस्वामी पत्रिका (15.09.2014)
7. इंडिया टुडे एवं तथ्य भारती (जनवरी 2014)

विदेशी व्यापार के आंकड़े- (अरब डॉलर में)

वर्ष	निर्यात	आयात	व्यापार घाटा	निर्यात वृद्धि दर (प्रतिशत मे)	आयात वृद्धि दर (प्रतिशत मे)
2002-03	52.719	61.412	8.693	20.3	19.4
2003-04	63.893	78.149	14.307	21.1	27.3
2004-05	83.536	111.517	27.981	30.8	42.7
2005-06	103.091	149.166	46.075	23.4	33.8
2006-07	126.414	185.735	59.321	22.6	24.5
2008-09	163.132	251.654	88.522	29.0	35.5
2009-10	185.295	303.696	118.401	13.6	20.7
2010-11	178.751	288.373	109.622	-3.5	-5.0
2011-12	164.707	246.744	82.017	29.5	19.01
2012-13	144.67	1465959	1635261	11.55	13.97

स्त्रोत -आर्थिक समीक्षा 2011-12

भारत में निर्यात व्यापार की वस्तुएँ - (करोड़ रू. में)

क्रं.	वस्तु	1950-51	1970-71	1990-91	2001-02	2010-11
1	जूट एवं जूट से बनी वस्तुए	113	190	298	612	2086
2	चाय	80	148	1070	1719	3247
3	सूती कपड़ा	119	142	2100	14655	25086
4	इंजीनियरिंग वस्तुएँ	0.4	198	3872	33093	313382
5	कॉफी	1.4	25	0252	1095	2908
6	रत्न आभूशण	NA	45	5247	34845	167846
7	रेडीमेड वस्त्र	NA	29	4012	23877	51010
8	चमड़ा एवं संबंधित सामग्री	25	80	2600	9110	17168
9	हस्तकला की वस्तुएँ	NA	73	6167	4406	5947
10	कच्चा लोहा	NA	117	1049	2034	21416
11	रसायन	NA	029	2111	22339	132054

स्त्रोत आर्थिक सर्वे 2011-12

भारत में आयात व्यापार की वस्तुएँ - (करोड़ रू. में)

क्रं.	वस्तु	1950-51	1970-71	1990-91	2001-02	2010-11
1	अन्न एवं उससे बनी वस्तु	99	213	182	87	545
2	पूँजीगत माल	126	404	10466	28059	221437
3	लोहा एवं इस्पात	14	147	2113	3975	47275
4	पेट्रोलियम पदार्थ	54	187	10816	66769	482282
5	उर्वरक पदार्थ	31	187	1455	2964	31533
6	अलोह धातुएँ	-	114	1102	3086	221153
7	कागज	10	25	914	2131	9614
8	खाद्य तेल	100	23	326	479	29860
9	प्लास्टीक सामग्री	NA	08	1095	3215	31304
10	दवाईयाँ	NA	24	468	2027	11114
11	मोती व बहुमूल्य पत्थर	NA	25	3738	22046	157596

स्त्रोत आर्थिक सर्वे 2011-12

****

कृषि व्यावसायीकरण का कृषकों पर प्रभाव (धार जिले के संदर्भ में)

डॉ. आर.एस. मण्डलोई *

प्रस्तावना – भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ कि 70 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। किसी भी देश का विकास कृषि के विकास से प्रांरभ होता है। विकास हेतु कृषि से कच्चेमाल की प्राप्ति, खाद्यान्न की प्राप्ति आदि प्राप्त होता है। अत: कृषि के विकास के बिना देश का उच्चतम आर्थिक विकास करना असंभव है। इसी के संदर्भ में देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि– 'भारत का विकास करना है तो कृषि का विकास करना चाहिए।' इसलिए कृषि विकास से ग्रामीण विकास तथा ग्रामीण विकास से देश का विकास का चक्र प्रांरभ हो जाता है। भारतीय कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है जिस वर्ष मानसून अच्छा होता है कृषि में उत्पादन अच्छा होता है, तथा जिस वर्ष मानसून असफल होता है तो कृषि भी असफल होती है। क्योंकि भारत में अभी भी सिंचाई के साधन तैयार नही हैं।

भारत में कृषि का विकास नियोजित तरीके से वर्ष 1951–52 से प्रांरभ होता है। 1951 से 2014 तक निरंतर कृषि विकास हेतु योजनाएँ बनी तथा हमारी कृषि में उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं दिखाई दे रहा है। फिर भी कृषि आधुनिकीकरण तथा व्यावसायीकरण से हम खाद्यान्न के मामले में आत्मनिर्भरता प्राप्त की है। कृषि का धीरे–धीरे विकास हो रहा है और आज हम इस स्थिति में है कि कृषि अधिक्य को निर्यात कर रहे है।

वर्तमान कृषि में काफी परिवर्तन देखने को मिलता है। कृषि क्षेत्र में निरंतर प्रगति से कृषि में आधुनिकीकरण हुआ। जिससे कृषि क्षेत्र में सुधार हुआ है। कृषक पुराने कृषि यंत्रों के स्थान पर नये–नये आधुनिक यंत्रो का तथा उन्नत किस्मों के बीजों का प्रयोग कर रहे है। सिंचाई हेतु नहर, तालाब तथा ट्यूबवेल का प्रयोग हो रहा है जैविक एवं रासायनिक खादों का भरपुर प्रयोग करते हुए खाद्यान्न का बम्बर उत्पादन कर रहे है।

कृषि प्रधान देश होने के नाते न सिर्फ भारत की राजकोषीय अर्थव्यवस्था में कृषि का अहम् योगदान है बल्कि भारत का 70 प्रतिशत मध्यम एवं निम्न वर्ग भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर आश्रित है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति में पश्चात् से ही कृषि के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया हैं प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर बारहवीं पंचवर्षीय योजना तक कृषि सुधार में योजनाऐं बनाकर लागू की है। किन्तु फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि हमारा देश कृषि के क्षेत्र में कहीं न कहीं उस मुकाम को हासिल नहीं कर पाया जहां आज हमें होना चाहिए था। वर्ष 1951 से लेकर वर्तमान तक भारत में कुल जीडीपी में कृषि का योगदान निरंतर घटा है।

तालिका 01

वर्ष	सकल घरेलू उत्पाद के कृषि की हिस्सेदारी
1950–51	59.3 प्रतिशत
1982–83	36.3 प्रतिशत
2001–02	24.9 प्रतिशत
2006–07	18.7 प्रतिशत
2011–12	16.2 प्रतिशत

स्तोत्र – प्रतियोगिता दर्पण (वार्षिक) 2013, भारतीय अर्थव्यवस्था विशेषांक ।

अध्ययन का उद्धेश्य –

1. धार जिले के कृषकों में कृषि व्यावसायीकरण से हुए परिवर्तन को जानना।
2. कृषि व्यावसायीकरण के लाभ एवं प्रभावों का अध्ययन करना।
3. कृषि आधुनिकीकरण के लाभ तथा हानियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।
4. कृषि में हुए परिवर्तनों का अध्ययन।
5. कृषकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।
6. जिले के कृषकों की क्रय शक्ति एवं कृषि विपणन का अध्ययन करना।

अध्ययन की विधि – प्रस्तुत शोध अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको के आधार पर विश्लेषित है। प्राथमिक संमकों का संकलन जिले के कृषकों का देव निदर्शन रीति के माध्यम से अनुसूची द्वारा किया गया है तथा द्वितीय समंको का संकलन संदर्भ पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं, प्रकाशित लेख तथा वेबसाइड के माध्यम से किया गया है तथा उनका सांख्यिकी माध्य से विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ–

1. कृषि व्यावसायीकरण से जिले के कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ हैं।
2. कृषि व्यावसायीकरण से कृषक, कृषि में अधिक रूचि रखने लगे हैं।

धार जिले का परिचय – धार जिला मध्यप्रदेश के इन्दौर संभाग में मालवा–निमाड़ में अवस्थित है। धार जिले का कुल क्षेत्रफल 8153 वर्ग कि.मी. तथा भौगोलिक विस्तार 20^0से $23^0 10'$उत्तरी अक्षांश तथा $75^0 28'$ से $75^0 12'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य अवस्थित है। जिले की 2011 की जनगणना के अनुसार 22,84,672 जनसंख्या है तथा 60.57 प्रतिशत साक्षरता दर हैं।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र) भारत

धार जिला मुख्य रूप से कृषि प्रधान है। यहाँ कि प्रमुख कृषि फसल, सोयाबीन, ज्वार, बाजरा, मक्का, गेहूँ, चना, कपास आदि है। नगदी फसलों में कपास, सोयाबीन, केला, पपीता, अदरक, प्याज, लहसून आदि फसलों को व्यावसायिक फसलों में रूप में बोयी जाती हैं।

कृषि व्यावसायीकरण – कृषि व्यावसायीकरण से आशय है कि कृषि में नगदी फसलों का उत्पादन करना है। कृषकों द्धारा जीवन निर्वाह फसलों का उत्पादन न करते हुए उन फसलों का उत्पादन करना जिन्हें बेंचकर अधिकतम आय प्राप्त किया जा सके। कृषकों द्धारा अपनी आमदनी में वृद्धि करने हेतु खाद्यान्न फसलों को नाममात्र उत्पादन में शामिल किया जाता है तथा तुरन्त पैसा देने वाली फसलों को उत्पादित करने की ओर प्रोत्साहित होना कृषि व्यावसायीकरण है।

वर्तमान में भारतीय कृषि के आमूल चूल परिवर्तन हो चुका है। कृषि के आधुनिकीकरण से कृषक कृषि में आधुनिक तकनीक का प्रयोग कर उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि कर रहे है। फसलों की नवीनतम किस्म, कम अवधि वाली फसल तथा रासायनिक एवं उर्वरक तथा जैविक खाद का प्रयोग भरपूर मात्रा में किया जा रहा हैं। जिससे बम्बर उत्पादन होने लगा। कृषि में आधुनीकीकरण से परम्परागत कृषि धीरे–धीरे कम होती जा रही हैं। आजकल छोटे कृषक भी कृषि कार्य जैसे – बुआई, जुताई, निंदाई, गुड़ाई का कार्य ट्रेक्टर से कर रहे है। कृषक उत्पादन हेतु बाजार से या सोसायटी के माध्यम से बीज क्रय कर बोते है, अत: कहा जा सकता है कि कृषि व्यावसायीकरण से कृषकों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है। उनकी प्रति व्यक्ति आय बढ़ी है तथा उत्पादन बढ़कर क्रय शक्ति एवं राष्ट्रीय में वृद्धि हो रही है। किन्तु इसका दूसरा पहलू बहुत महत्वपूर्ण है कृषि व्यावसायीकरण एवं आधुनिकीकरण का लाभ केवल सम्पन्न कृषक ही ले पा रहे है। मध्यम व छोटे कृषक बहुत कम इसका लाभ उठा पा रहे हैं। साथ ही कृषि की कई दुर्लभ फसलें नष्ट होती जा रही हैं।

इस प्रकार कृषि व्यावसायीकरण कृषि फसलों का बाजारीकरण है जिसमें कृषक नगदी फसलों का ही उत्पादन करता है।

कृषि व्यावसायीकरण के कारण –

1. कृषि उत्पादन में सुधार का प्रमुख कारण उत्पादन की नवीनतम तकनीक का प्रयोग करने से है। जिसमें उन्नत किस्म के बीज, उर्वरक, कीटनाशक, दवाईयाँ, सिंचाई आदि।
2. पिछले 50 वर्षो के दौरान कृषि के उत्पादन के तरीको में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है जिस कारण कृषि उत्पादकता बहुत बढ़ चुकी है। अत: किसान भूमि को मात्र निर्वाह का साधन न मानकर उससे अधिक से अधिक आय प्राप्त करना चाहता हैं।
3. कृषि मण्डियों के विस्तार होने के कारण कृषि फसलों को तुरंत बेचा जा रहा हैं।
4. कृषि पदार्थो का उचित मूल्य प्राप्त होना।
5. सड़क एवं यातायात के साधनों का विस्तार होना ।
6. कृषकों का बनियों के ऋण जाल से मुक्ति।
7. फसलों के पकने की अवधि कम होना।

कृषि का व्यावसायीकरण और वित्तीय संस्थाओं पर प्रभाव – कृषि व्यावसायीकरण का वित्तीय संस्थाओं पर भी प्रभाव पड़ा है। इससे वित्तीय संस्थाओं का उत्तरदायित्व बड़ा है एवं वित्तीय संस्थाओं को आगे बढ़ने और अपने कार्यो के विस्तार करने का अवसर मिला है –

1. कृषि व्यावसायीकरण से कृषि उत्पादन बढ़ा तथा कृषकों की आय में वृद्धि होने से बचत प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है। जिससे वित्तीय संस्थाओं में जमा राशि बढ़ी हैं।
2. पूंजी निर्माण की दर में वृद्धि हुई है।
3. व्यापारिक यातायात के साधनों के विस्तार से वित्तीय संस्थाओं का विस्तार हुआ जिससे उनकी आय बढ़ी।
4. साधन सम्पन्न कृषक ऋण जल्दी लौटा देने से वित्तीय संस्थाओं की आय बढ़ी।
5. व्यावसायीकरण से ग्रामीण कृषक की प्रति व्यक्ति आय बढ़ी हैं।

धार जिले में कृषि व्यावसायीकरण के प्रभाव – प्रस्तुत शोध अध्ययन में धार के कृषकों पर कृषि व्यवसायीकरण के प्रभाव जानने हेतु सर्वेक्षण अनुसूची के माध्यम से अध्ययन किया गया हैं।

धार जिले के कृषकों में कृषि व्यावसायीकरण के प्रभाव स्थिति

सारणी – 02 (देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका से स्पष्ट है कि धार जिले में कृषि व्यावसायीकरण से कृषकों के लाभ है उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। कृषि योजना का लाभ कृषकों को नहीं मिल रहा है इस संबंध में 70 प्रतिशत कृषकों ने कृषि योजना का लाभ नहीं मिलता है, कहा है तथा मण्डियों में भी कृषक अपनी उपज बहुत कम बेचते है। ऋण भी साहूकारों से लेते हैं।

अत: अध्ययन से स्पष्ट है कि धार जिले के कृषकों पर कृषि व्यावसायीकरण एवं आधुनीकीकरण का प्रभाव पड़ा है। उनके जीवन स्तर में सुधार हो रहा है उनकी आय एवं क्रय शक्ति बढ़ी है। किन्तु अभी भी धार जिले के अधिकांश कृषक मण्डियों में कृषि उपज नहीं बेच पा रहे है तथा साहूकारों व बनियों से ऋण लेकर ही सम्पूर्ण कार्य सम्पादित कर रहे है। जिससे उनकी बढ़ी हुई आय साहूकारों के पास चली जाती है और कृषक वहीं का वही है। कृषकों की रूचि कृषि क्षेत्र में धीरे–धीरे कम होती जा रही है। इस संबंध में कृषकों का कहना है कि अब खेती घाटे का सौदा हो गयी है। सिंचाई के साधनों का अभाव तथा कृषि मानसून की अनिश्चिता के कारण कई कृषक कृषि कार्य को छोड़कर अन्य कार्यो की और पलायन कर रहे हैं।

निष्कर्ष – नि:संदेह कृषि व्यावसायीकरण से कृषकों के जीवन स्तर में सुधार हुआ है। कृषि उत्पादन हेतु नवीनतम तकनीक जैसे ट्रेक्टर, थ्रेसर, हार्डवेस्टर, मोटर पम्प, रासायनिक खाद, बीज, कीटनाशक आदि का उपयोग होने से उत्पादन में वृद्धि हुई है। पहले कृषक उत्पादन की पुरानी तकनीकों का प्रयोग करते थे जिससे उत्पादन कम होता था। कृषक अपने पेट तक की ही अनाज उत्पादित नहीं कर पाते थे। कृषि के मानसून पर निर्भर रहने के कारण तथा सिंचाई सुविधाओं के अभाव से उत्पादन कम होता था। किन्तु आज परिस्थितियां भिन्न है, आज प्रत्येक कृषक उत्पादन के नवीनतम संसाधनों का प्रयोग कर रहे है। बीज की हुई फसल में से न बोकर सरकार द्धारा प्रमाणित बीजों को ही बोया जा रहा है। जिससे उत्पादन बढ़ा है तथा कृषकों की आय में वृद्धि हुई है तथा उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ हैं। आज प्रत्येक कृषक के पास मोबाईल फोन है। अधिकांश कृषक के पास ट्रेक्टर, थ्रेसर, जनरेटर है। कुल मिलाकर व्यासायीकरण से कृषक हाइटेक होकर उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ा रहे है। कृषि क्षेत्र की और आकर्षित हो रहे है धार जिले की उबड़–खाबड़ जमीन में भी कृषक ट्रेक्टर हाइवेस्टर जैसी मशीन के माध्यम से कृषि की जा रही है। अध्ययन के दौरान पाया है कि कृषक पुरानी कृषि पद्धति को धीरे–धीरे छोड़ रहे है। कृषकों का कहना है कि पुरानी कृषि में उत्पादन कम होता था जिससे आय में भी वृद्धि नहीं हो पाती थी। आज की कृषि मंहगी जरूर है पर उत्पादन अधिक प्रदान करती हैं।

अंत में कहा जा सकता है कि कृषि व्यावसायीकरण से कृषि उत्पादन बढ़ा, कृषकों की आय बढ़ी, क्रय शक्ति बढ़ी, कृषि यंत्रों के मांग बढ़े, कृषकों की आर्थिक स्थिति मजबूत हो रही है। कृषि रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई जिससे कृषि मजदूर परिवारों का पलायन रूका है। ट्यूबवेल का अधिक उपयोग करने लगे। सिंचाई के साधनों का विस्तार हुआ। कृषि के साथ-साथ पशुपालन भी किया जा रहा है। इससे कृषकों की आय में अच्छी बढ़ोत्तरी हो रही है। अध्ययन के दौरान पाया है कि आज भी कृषक ऋण साहूकार से लेते है। जिनका प्रतिशत लगभग 70 प्रतिशत है तथा कृषि फसल को भी साहूकार से ही बेच देते है। कृषि काण्ड में नहीं ले जाते हैं।

समस्या तथा सुझाव -

समस्या -

1. कृषि जोत का आकार बहुत छोटा होने के कारण कृषि में आधुनिक तकनीकों का प्रयोग नहीं किया जा सका।
2. खेत अलग-अलग स्थान पर होने से आधुनिक यंत्रों का प्रयोग संभव नहीं हो सकता है।
3. कृषकों को कृषि योजना का लाभ प्राप्त न होना।
4. कृषि फसल का उचित मूल्य न मिलना।
5. प्राकृतिक आपदा से हुए नुकसान की भरपाई न होना।
6. आधुनिक कृषि यंत्रों से अपरिचित होना।
7. कृषि मंडियों की उचित व्यवस्था न होना।

सुझाव -

1. चक बन्दी अनिवार्य रूप से करना चाहिए।
2. कृषकों को फसल रखने के लिए भण्डारण की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
3. कृषि योजना का लाभ वास्तविक लाभार्थियों को ही दिया जाना चाहिये।
4. कृषकों के कृषि पदार्थो के विपणन की उचित व्यवस्था हो।
5. कृषि पदार्थो का उचित मूल्य का भुगतान होना चाहिए।
6. नगदी फसलों के साथ-साथ खाद्यान्न फसलों का भी उत्पादन कि जाना चाहिए।
7. सिचांई सुविधाओं का विस्तार किया जाना चाहिए।
8. कृषकों को साहूकारों से ऋण लेने की व्यवस्था समाप्त होना चाहिए।
9. कृषि को रोजगार मूलक बनाने के साथ-साथ कृषि आधारित उद्योग धंधों का विस्तार करना चाहिए।
10. प्राकृतिक आपदा में होने वाले नुकसान की भरपाई शासन स्तर से मौके पर तुरंत करना चाहिए।
11. कृषकों हेतु संस्थागत ऋण का प्रचार-प्रसार होना चाहिए।
12. आधुनिक तरीके से खेती करने के तरीके सीखाने हेतु प्रत्येक गांव में माह में एक बार कृषि विशेषज्ञों द्वारा प्रशिक्षण व्यवस्था सुनिश्चित करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पी.के.सिंह, 'फसलों के सिद्धांत' रामा पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली पृ.-75।
2. डॉ. गुप्ता शिवभूषण 'कृषि अर्थव्यवस्था', पी.सी. पब्लिसिंशग हाउस, आगरा।
3. डॉ. प्रमीला कुमार (2004), मध्यप्रदेश - एक भौगोलिक अध्ययन हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
4. Ramarkrishnan Ruchika (2003), Rural marketing in India, Century Publication, New Delhi.
5. M.K. Nabi (1995) "Problems and Imperatives of Rural Marketing an India" Indian Journal of Marketing, Feb. & March P.16-24
6. योजना मासिक पत्रिका (2004) प्रकाशन विभाग, नईदिल्ली।
7. www.mpkrishi.org
8. www.agriculture.co.in
9. अर्थिक सर्वेक्षण, 2013, भारत सरकार।

तालिका क्रमांक-02: धार जिले के कृषकों में कृषि व्यावसायीकरण के प्रभाव स्थिति

अ. क्र.		हॉ		नहीं		योग
		हॉ	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत	
1.	कृषि व्यावसायीकरण से लाभ हुआ	30	60	20	40	50
2.	आर्थिक स्थिति में सुधार	38	76	12	24	50
3.	क्रय शक्ति बढ़ी	35	70	15	30	50
4.	कृषि योजना का लाभ प्राप्त हुआ	15	30	35	70	50
5.	नगदी फसल ही बोते है।	30	60	20	40	50
6.	कृषि पदार्थो का विपणन मण्डियों में ही करते है।	20	40	30	60	50
7.	ऋण साहुकरों से लेते हैं।	42	84	08	16	50
8.	कृषि में रूचि है।	26	52	24	48	50

****

कामकाजी महिलाओं द्वारा समय प्रबंध

कार्तिका गुप्ता मेहता * डॉ. शैलेन्द्र मिश्रा **

शोध सारांश – आज के महंगाई के युग में पढ़ लिख महिलाओं का घर बैठ जाना और अनपढ़ महिलाओं की तरह घर परिवार की साज संभाल करना पुरूषों पर बोझ डालने के समान है। महिलाएं कामकाजी हो तो उसका लाभ उन्हें स्वयं को तो प्राप्त होता ही हैं साथ ही पुरूषो की चिंताएं भी थोड़ी कम हो जाती हैं और पारिवारिक आय पर अनुकूल प्रभाव पडता हैं। बच्चों को अच्छी व उच्च शिक्षा के साधन प्राप्त होते हैं तथा महिलाओं की वृद्धावस्था की परेशानियां भी दूर हो जाती हैं। लेकिन इन सब को ध्यान में रखते हुए महिलाओं को अपने समय का उचित प्रबंधन भी करना होता है। जिसके बिना वे अपने किसी कार्य को सरलतापूर्वक नहीं कर सकती है। कामकाजी होने के कारण उन्हें प्रत्येक कार्य के लिए विचार करना पडता है कि कौन सा कार्य कब करे। महिलाएं एक ही समय में कई प्रकार के कार्य को करती है। इस प्रकार कामकाजी महिलाएं अपने समय का प्रबंधन कर लेती है।पारिवारिक, सामाजिक एवं कामकाजी जीवन में विभिन्न चुनौतियों व तनावों का सामना करते हुए कामकाजी महिलाओं को अपने कार्यो पर ध्यान केन्द्रीत करना होता है तथा सभी कार्यो को करने के लिए उचित समय प्रबंधन करना उनके लिए अत्यन्त आवश्यक है। उचित समय प्रबंधन द्वारा ही वे अपने परिवार की और संस्थान की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है। क्योंकि समय किसी का इंतजार नहीं करता।

प्रस्तावना – प्राचीन समय में महिलाओं को घर के बाहर काम करने के लिए नहीं जाने दिया जाता था, उनका मुल कार्य घर में रहकर घर के कामकाज करना था। महिलाएं चुल्हों पर भोजन पकाती थी तथा सामान्य रूप से संयुक्त परिवार प्रथा का चलन था। परिवार बड़ा होने के कारण प्राय: छोटे–बडे सभी कार्य घर की महिलाओं को ही करने होते थे। घर के बड़ो द्वारा महिलाओं (बहु बेटियों) पर कई प्रकार के प्रतिबन्ध व रिति रिवाज थोपे जाते थे जो आज तक चले आ रहे हैं।

धीरे – धीरे शिक्षा का विकास होने लगा, नवीन तकनीकों का प्रकाश फैला जिसने समाज को नई रोशनी दी और पुरूषों के समान महिलाएं भी प्रत्येक क्षेत्र में आगे आने लगी।भारत में औसतन प्रत्येक घर की महिला घर के बाहर या घर में ही बैठकर आयार्जन करने में लगी है साथ–साथ अपने निजी जीवन को भी गतिशील रखने के प्रयास करती है। चाहे वे कितने भी उच्च पद पर आसीन हो जाऐं सामाजिक बंधन उसे आज भी जकड़े है। कामकाजी महिलाएं अपने परिवार और अपने भविष्य को संवारने के लिए कार्य करती है। इतनी महंगाई के युग में केवल घर के पुरूष की आय पर ही निर्भर रहना ओर उस पर खर्च का बोझ लादना अकेले बैल से खेत जुतवाने के समान है।

आधुनिक युग में महिलाएं कामकाजी होने के साथ साथ सफल गृहणियां भी सिद्ध हो रही है लेकिन कभी किसी ने इस बात पर शायद ही ध्यान दिया होगा कि महिलाएं किस प्रकार सभी कार्यो का समायोजन करती होगी। आधुनिक युग की महिलाएं घड़ी की सुई के साथ चलती है या यह कहा जाए कि भागती रहती हैं तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। कामकाजी महिलाओं से भी वही आशा की जाती हैं जो कुशल गृहणियों से की जाती है। इतनी अधिक जिम्मेदरियां उस पर होती हैं कि वह वास्तव में देविय रूप धारण कर चुकी है, जिसके कई हाथ है और प्रत्येक हाथ में दफ्तर व घर के काम हैं तथा काम करने के दौरान दिमाग में कई प्रकार के विचार भी चलायमान रहते है।

कामकाजी महिलाएं सुबह उठते से ही दिनभर में किये जाने वाले कार्यो की समय सारणी मन ही मन में बना लेती हैं तथा विभिन्न कार्यो को करने की प्राथमिकता को ध्यान में रखते हुऐ अपनी समय सारणी के अनूरुप कार्य को सम्पन्न करती है। इन सभी कार्यो के बीच महिलाओं को अपने समय का उचित समायोजन करना होता है ताकि वह एक कुशल गृहणी एवं सफल कामकाजी महिला के कर्तव्यों का पालन कर सके तथा अपना व अपने बच्चों के भविष्य को संवार सके और साथ ही अपने हमसफर के साथ जीवन के हर मोड पर कंधे से कंधा मिलाकर चल सके।

प्रस्तुत लघु शोधपत्र का प्रमुख उद्देश्य कामकाजी महिलाओं के समय प्रबंधन का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। साथ ही अन्य सहायक उद्देश्य इस प्रकार है :–

1. कामकाजी महिलाओं के कामकाजी और निजी जीवन में समायोजन की स्थिति ज्ञात करना।
2. व्यस्ततओं के बीच परिवार के अन्य सदस्यों के साथ कामकाजी महिलाएं किस प्रकार सामंजस्य स्थापित करती हैं यह ज्ञात करना।
3. कामकाजी महिलाओं की सामाजिक व सांस्कृतिक समारोह में भागीदारी ज्ञात करना।
4. यह ज्ञात करना कि कामकाजी महिलाएं अपने जीवन से कितनी संतुष्ट है।
5. यह ज्ञात करना कि परिवार के अन्य सदस्य कामकाजी महिलाओं को किस प्रकार प्रोत्साहित करते है?

अध्ययन की परिकल्पना – 'कामकाजी महिलाएं कुशलतापूर्वक अपने समय का समायोजन कर लेती है'

विश्लेषण – निजी संस्थाओं में कार्यरत 60 कामकाजी महिलाओं पर किये गये शोध में निम्नलिखित परिणाम प्राप्त किये गये –

क्र.	आधार	सकारात्मक	प्रतिशत
1	समय तालिका का निर्माण	38	63.33%
2	स्वयं के लिये समय	48	80%

* व्याख्याता, आर.पी.एल. महेश्वरी महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** व्याख्याता, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

3	परिवार के सदस्यों के लिये समय	54	90%
4	परिवार के सदस्यों द्वारा बातों का साझेदारी	46	76.67%
5	परिवार के सदस्यों द्वारा सहयोग	56	93.33%
6	कार्यालय या उद्यम में समय	60	100%
7	निजी जीवन का पेशेवर जीवन पर प्रभाव	34	56.67%
8	पेशेवर जीवन का निजी जीवन पर प्रभाव	38	63.33%
9	कामकाजी जीवन भविष्य के लिये उपयोगी	58	96.67%
10	अवकाश का दिन भी व्यस्त	30	50%
11	सामाजिक, सांस्कृतिक समारोह में भागीदारी	42	70%
12	कार्य योजनाओं की समय पर पूर्णता	36	60%
13	उत्साहपूर्वक बिन बताये आए अतिथि का सत्फार	36	60%
14	इंटरनेट का उपयोग	46	76.67%
15	इंटरनेट उपयोग के कारण समय की बर्बादी	12	20%
16	आकस्मिक कार्यो के लिये समय	50	83.33%
17	घर परिवार व पेशेवर जीवन में समायोजन	28	46.67%
18	कामकाजी जीवन से संतुष्टि	60	100%

उपर्युक्त तालिका के अवलोकन से :-

1. समय तालिका का निर्माण – शोध में 60 में से 38 कामकाजी महिलाएं ही समय तालिका का निर्माण करती है। उनमें से कुछ महिलाएं यह कहती है कि वे लिखित रूप से कोई समय सारणी नहीं बनाती है केवल मानसिक तौर पर यह निश्चित करती है कि उन्हें कौन-से कार्य कब व कैसे करने है तथा एक क्रम निर्धारित कर सम्पूर्ण कार्य करती रहती है।

2. स्वयं के लिये समय – शोध के अनुसार कामकाजी महिलाओं की व्यस्तता इतनी अधिक होते हुए भी 80 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं स्वयं के लिये समय निकालकर अपने इच्छित एवं रूचिपूर्ण कार्य को करती है। चाहे उन्हें घर परिवार और कामकाजी जीवन के कितने ही काम हो वे स्वयं के लिये कैसे न कैसे वक्त निकालकर अपने शौक पूरे करती ही है वे अपनी चाही गई हर इच्छा को पूर्ण करती है। ऐसी महिलाएं अधिक खुश व स्वस्थ रहती है शोध में ऐसा देखा गया है। इसके ठीक विपरीत जो महिलाएं स्वयं के लिये समय नहीं निकाल पाती वे चिड़चिड़ेपन का शिकार हो जाती है।

3. परिवार के सदस्यों के लिये समय – कामकाजी महिलाओं को दोहरी भूमिका का निर्वाह करना होता है। एक और जहां उसे अपने कामकाज पर ध्यान देना होता है वही पारिवारिक दायित्वों को भी निभाना होता है। कामकाजी महिलाओं को इसका पूरा पूरा ध्यान रखना होता है। शोध में यह पाया गया है कि 90 प्रतिशत महिलाएं यह कहती है कि वे परिवार के सदस्यो को भी अपना समय देती हैं उनके साथ घूमने जाने, बच्चों को विद्यालय का गृहकार्य करवाने, पति, सास ससुर व घर के सभी सदस्यों से बात करने एवं सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अपना ध्यान लगाती है। 10 प्रतिशत महिलाओं की स्थिति ऐसी है कि वे परिवार के सदस्यों के साथ समय व्यतीत नहीं कर पाती क्योंकि उनके पास समय नहीं होता ।

4. परिवार के सदस्यों द्वारा मन की बातें साझा करना – शोध में यह पाया गया कि 90 प्रतिशत महिलाएं अपने परिवार के सदस्यों के साथ समय व्यतीत करती है फिर भी 76.67 प्रतिशत कामकाजी महिलाओं के साथ परिवार के सदस्य दिनभर में हुई बातों को, किसी प्रकार का निर्णय लेने में या अन्य कोई बात बताने में संकोच नहीं करते है। 60 में से 8 कामकाजी महिलाएं परिवार को अपना समय देती है फिर भी परिवार के सदस्य उनसे अपनी बातें साझा नहीं करते। यह एक निन्दनीय बात है कि कामकाजी महिलाएं परिवार को अपना कीमती समय देने के बावजूद अपने ही परिवार द्वारा अनदेखी की जा रही है।

5. परिवार के सदस्यों द्वारा सहयोग – शोध में यह पाया गया है कि 93.33 प्रतिशत कामकाजी महिलाओं का सहयोग उनके परिवार के सदस्य करते है। परिवार के सदस्य कामकाजी महिलाओं का उत्साहवर्द्धन भी करते है तथा साथ ही उनके पति, बच्चे, सास ससुर व परिवार के अन्य सदस्य उनके कार्यो में सहयोग भी करते है। कई कामकाजी महिलाएं यह कहती है कि वे जब अपने कार्य के लिये घर से बाहर जाती है तो घर की अन्य महिलाएं भोजन पकाना, टिफिन पैक करना, उनके बच्चों का लालन-पालन व अन्य कार्य भी कर देती हैं । उन्हें परिवार की पूर्ण सहयोग प्राप्त होने के कारण ही वे घर के बाहर निश्चिंत होकर निकल पाती है।

6. कार्यालय या उद्यम में समय – शोध में 100 प्रतिशत महिलाएं अपने कामकाज को निश्चित समय देती है। समय पर कार्य करने के लिये पहुंचती है और निर्धारित समय पर घर के लिये निकल जाती है। कार्यालय / उद्यम में भी सही समय देती है शायद इस ही कारण आधुनिक युग में प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा दिया जा रहा है। क्योंकि महिलाएं अपने कामकाज को सही समय देती है।

7. निजी जीवन का पेशेवर जीवन पर प्रभाव – कामकाजी महिलाओं को अपनी निजी जिंदगी और पेशेवर जिंदगी को अलग अलग रखकर कार्य इस प्रकार करना होता है कि एक का प्रभाव दुसरे पर न पड़े । शोध के अनुसार 60 में से 34 महिलाएं यह मानती है कि उनके निजी जीवन में होने वाली घटनाओं का प्रभाव उनके कामकाजी जीवन पर पड़ता है, जिसके कारण उनका समय प्रबंधन अव्यवस्थित हो जाता है। वे कई बार समय पर कार्यालय / उद्यम पहुंच तो जाती है लेकिन मन में निजी जीवन के विचार चलायमान रहते है जो उनके कामकाज के निष्पादन पर विपरीत प्रभाव डालते है।

8. पेशेवर जीवन का निजी जीवन का प्रभाव – शोध के अनुसार 63.33 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं यह कहती है कि उनके कामकाजी जीवन का निजी जीवन पर प्रभाव पड़ता है। जब उन्हें अपने कामकाज के लिये समय पर निकलना हो और कोई आवश्यक कार्य आ जाए तो उन्हें अपने कार्य से अवकाश लेना पड़ता है और यदि वो ऐसा नहीं कर पाती या किसी कारणवश उन्हें अवकाश नहीं मिल पाता तो परिवार या रिश्तेदारों की तानाकशी का सामना करना पड़ता है। कई बार महिलाओं को अपने कार्यस्थल पर अतिरिक्त समय रूक कर कार्य करना पड़ता है जिसका सीधा प्रभाव उनके निजी जीवन पर पड़ता है।

9. कामकाजी बने रहना भविष्य के लिये उपयोगी – शोध के अनुसार 96.67% कामकाजी महिलाएं यह कहती है कि उनका वर्तमान में कामकाजी बने रहना उनके व उनके परिवार के भविष्य के लिये उपयोगी है। वे समय प्रबंध कर सबकुछ व्यवस्थित कर लेती है क्योंकि आधुनिक युग में बच्चों की पढ़ाई, उनके केरियर, स्वयं की वृद्धावस्था और अन्य कई प्रकार के खर्चों का बोझ अकेले पुरूष पर नहीं डाला जा सकता। महिलाएं समय प्रबंध कर समस्त दायित्वों का निर्वाह कर रही है। 96.67 प्रतिशत महिलाएं इस बात से सहमत है कि उनका कामकाजी बने रहना भविष्य के लिये उपयोगी है।

10. अवकाश का दिन भी व्यवस्ततापूर्ण – शोध के अंतर्गत 50 प्रतिशत महिलाएं यह कहती है कि उनके अवकाश का दिन भी सामान्य दिनों की तरह व्यस्ततम होता है। 5-6 दिन तक जो कार्य उन्होंने कार्य पर जाने के कारण नहीं किये थे वे कार्य उन्हें अवकाश के दिन करने होते है। अवकाश के दिन

परिवार के सदस्य भी यह आशा करते है कि वे भोजन में कुछ नये या अच्छे व्यंजन पकाएं व उनके साथ कहीं घुमने जाये। जो कार्य उन्होंने पहले नहीं किये होते वे उन्हें अवकाश के दिन करने पड़ते है। इस पर से कई बार ऐसा होता है कि कामकाजी महिलाओं को अवकाश के दिन घर के बाहर जाना हो तो वे समय प्रबंध के बारे में कल्पना भी नहीं कर पाती।

साथ ही 50 प्रतिशत महिलाएं यह कहती है कि उनका अवकाश का दिन सामान्य दिनों की तरह व्यस्त नहीं होता है क्योंकि वे कार्यशील दिवसों में ही समस्त कार्य करती जाती है ताकि अवकाश के दिन अन्य कार्य कर सके व परिवार को समय दे सकी।

11. सामाजिक, सांस्कृतिक समारोह व किटी पार्टी में भागीदारी – तालिका के अनुसार 70 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं अपने व्यस्ततम जीवन में भी इतना समय निकाल लेती है कि वे सामाजिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक समारोह में भाग लेने के साथ-साथ अपने शौक के लिये किटी पार्टी में भी हिस्सा लेती है। वे कामकाजी व गृहणी होने के साथ साथ सामाजिक अस्तित्व को भी बनाये रखती है। वे इस प्रकार समय का समायोजन करती है कि समाज व परिवार के आयोजन में बढ़चढ़ कर भाग ले सके।

12. कार्य योजनाओं की समय पर पूर्णता – तालिका के अनुसार 60 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं ही आने वाले दिनों के लिये बनाई गई कार्य योजना को समय पर पूर्ण कर पाती है। इसके ठीक विपरीत 40 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं यह कहती है कि वे चाह कर भी अपने कार्यो को समय पर पूर्ण नहीं कर पाती है।

13. उत्साहपूर्वक बिन बताए आए अतिथि का सत्कार – कामकाजी महिलाओं के पास समय बहुत कम होता है, फिर भी तालिका के अनुसार 60 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं अवकाश के दिन भी इतना समय निकाल लेती है कि यदि उस दिन कोई बिना बताए उनके घर किसी कारणवश या उनसे मिलने आ जाए तो वे उनका स्वागत पूर्ण उत्साह से करती है। इसके विपरीत 40 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं नकारात्मक उत्तर देते हुए कहती है कि इस प्रकार आए अतिथि हमारे समय प्रबंध को बिगाड़ देते है।

14. इंटरनेट का उपयोग – तालिका के अनुसार 76.67 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं आधुनिक युग की एक महत्वपूर्ण सुविधा इंटरनेट से जुड़ी हुई है तथा इसका उपयोग करना जानती है। जब कामकाजी महिलाओं से यह पूछा गया कि वे किस लिये इसका उपयोग करती है तो उनका कहना था कि विभिन्न प्रकार के कार्यो के लिये बच्चों के पालन-पोषण के लिये तथा सोशल नेटवर्किंग साइट के माध्यम से अपने परिवार, रिश्तेदारों, सहेलियों और समाज से जुड़ने के लिये इंटरनेट का उपयोग करती हैं वे घर परिवार व कामकाजी जीवन से जुड़ी विभिन्न बातों की जानकारी के लिये प्राय: इंटरनेट का सहारा लेती है।

15. इंटरनेट के अधिकतम उपयोग के कारण समय की बर्बादी – तालिका के अनुसार 20 प्रतिशत महिलाएं ही ऐसी है जो इंटरनेट के अधिकतम उपयोग करने के कारण समय पर अपने कार्यो को पूर्ण नहीं कर पाती है। वे कहती है कि जब वे फेसबुक, वाट्स एप जैसी साईटो का उपयोग करती है तो सभी से बाते करने में उनका बहुत समय नष्ट हो जाता है। इसके विपरीत 80 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं यह कहती है कि वे इंटरनेट का उपयोग करती तो है पर इतना भी नहीं करती कि वे अपना अमुल्य समय इंटरनेट के उपयोग में व्यर्थ कर दे।

16. आकस्मिक कार्यो के लिये समय – तालिका के अनुसार 83.33: कामकाजी महिलाएं अपनी समय तालिका में इतना मार्जिन रखती हैं की कभी-भी कोई आवश्यक कार्य आ जाने पर उसे सरलतापुर्वक कर लें। इससे उनकी समय प्रबंधन व्यवस्था प्रभावित नहीं होती हैं। यदि ऐसा लगता भी है तो वे प्राथमिकताओं का निर्धारण कर कार्य सम्पन्न करती हैं।

17. घर परिवार व पेशेवर जीवन में समायोजन – तालिका के अनुसार 46.67% कामकाजी महिलाएं ही यह मानती है कि घर परिवार व पेशेवर जीवन में समायोजन करना एक सरल कार्य है और वे कुशलतार्वूक दोनों के बीच समय का समायोजन कर लेती है तथा अपनी दोहरी भुमिका का निर्वाह कर सरलता से कर लेती है।

इसके ठीक विपरीत 32 कामकाजी महिलाएं यह कहती है कि उनके लिये दोहरा कार्य करना बहुत मुश्किल होता है।

18. कामकाजी जीवन से संतुष्टि –तालिका के अनुसार एक प्रसन्नतादायी परिणाम यह प्राप्त हुआ है कि कामकाजी महिलाएं इतनी व्यस्त एवं परेशानियों से घिरी होने के बावजूद भी अपने जीवन से संतुष्ट है। 100 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं अपने कामकाजी जीवन से संतुष्ट है। उनके अनुसार वे कामकाज अपने शौक, अपने अस्तित्व की रक्षा व आत्मनिर्भरता के लिये करती है। वे कहती है कि हम अपने परिवार और अपने बच्चों के लिये यह कार्य कर रहे हैं ताकि उनके भविष्य को संवारा जा सके। कामकाजी महिलाएं किसी भी कार्य को अपनी पूर्ण क्षमता से करती है तथा सभी के बीच समायोजन कर परिवार को एक साथ जोड़े रखती है। अत: उनका कामकाजी बने रहना व समयानुसार समायोजन करना ही उन्हें अच्छा लगता है तथा वे ऐसे ही जीवन से संतुष्ट है।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि कामकाजी महिलाओं को अपने जीवन में दोहरी भुमिका का निर्वाह करते हुए स्वयं पर भी ध्यान देना होता है ताकि वह समस्त दायित्वों को संपन्न कर सके। इन सभी के साथ-साथ कामकाजी महिलाओं को अपने पति, बच्चों, ससुराल के सदस्यों व रिश्तेदारों स्वयं के माता-पिता, भाई-बहन व अन्य संबंधियों के स्वास्थ्य व उनके यहां समय-समय पर होने वाले आयोजनों में भी सम्मिलित होना पड़ता है। इन सभी की आवश्यकताओं व इच्छाओं को संतुष्ट करना कामकाजी महिला का दायित्व है अत: इन सभी कार्यों के लिये कामकाजी महिलाओं को 24 x 7 का समायोजन इस प्रकार करना होता कि वह समस्त कार्य समय कर सके।

शोध में यह पाया गया है कि 100 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं अपने कामकाजी जीवन से संतुष्ट है। उनमें इतना आत्मविश्वास है कि वे सरलतापूर्वक समय का समायोजन कर सकती है। 63.33 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं समय तालिका का निर्माण मौखिक या मानसिक या लिखित रूप से करती है। फिर भी 83.33 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं अपनी समय तालिका को इस प्रकार लोचशील बनाती हैं कि कभी कोई आकस्मिक कार्य आने पर उनकी समय तालिका अव्यवस्थित नहीं होती है। 93.33 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं यह भी कहती है कि उनके परिवार के सदस्य भी घर के कामकाज में उनकी सहायता करते है। शोध में महिलाओं ने यह भी कहा कि घर के कामो में सबसे ज्यादा सहायता उनके पति करते है यदि वे ऐसा नहीं करे तो वे नौकरी नहीं कर सकती है। 80 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं ही स्वयं के शौक पूरे करने के लिये समय की व्यवस्था करती है अर्थात् शोध के अनुसार 10 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं स्वयं के लिये ही नहीं अपितु परिवार के लिये समय निकालकर उनके साथ समय व्यतीत करती है। कामकाजी महिलाएं अपने मनोरंजन का ध्यान रखते हुऐ किटी पार्टी, सामाजिक व सांस्कृतिक समारोह में बढ़चढ कर भाग लेती है। 70 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं इन आयोजनों में सम्मिलित होने से सहमत भी है। 60 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं

समय की इतनी पाबंद होती है कि जिस दिन के लिये जो कार्य निर्धारित किया था उस कार्य को तब ही पूरा करती है। उनके अनुसार यदि वे एक भी कार्य को आगे किसी ओर दिन करने पर टालती है तो आगे आने वाले सभी कार्य योजनाएं अव्यवस्थित हो जाती है।

76.67 प्रतिशत कामकाजी महिलाएं आधुनिक उपकरणों का उपयोग भी करती है। महिलाएं समय की व्यवस्था कर इंटरनेट का उपयोग अपने निजी व कामकाजी जीवन के लिये करती है ताकि स्वयं को आधुनिक जगत से जोड़ सके लेकिन 20 प्रतिशत कामकाजी महिलाओं को इंटरनेट का इतना शौक है कि वे इंटरनेट का अधिकतम उपयोग करने के कारण समय पर अपने कार्यो को पूर्ण नहीं कर पाती है।

अत: आधुनिक युग में कामकाजी महिलाएं समय की कीमत को समझने लगी है फिर भी समय-समय पर वे अपने हर शौक को पूरा करती है तथा पारिवारिक सामाजिक, सांस्कृतिक और वैवाहिक दायित्वों की पूर्ति के साथ स्वयं के लिये भी समय निकालती हैं और परिवार के लिये भी। कामकाजी महिलाएं जानती है की उनका कामकाजी बने रहना, भविष्य के लिये उपयोगी है चाहे वर्तमान में वे कैसे भी समय प्रबंध करे। इन सब के बावजूद कामकाजी महिलाएं अपने कामकाजी जीवन से पूर्णरूप से संतुष्ट है लेकिन उनके लिये घर परिवार और पेशेवर जीवन के बीच समायोजन करते हुए समय प्रबंधन करना एक कठिन कार्य है। फिर भी कामकाजी महिलाएं हताश नहीं होती है। वे निरन्तर कार्यरत है और हमेशा रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पुस्तक-उद्यमिता विकास (कोठारी, मिश्रा, साहू)।
2. पुस्तक-कामकाजी महिलाए समस्याएं एवं समाधान (शीला सलूजा ,चुन्नीलाल सलूजा)।
3. कात्यायन द्वारा वर्तिका 125, 24,77।
4. दैनिक भास्कर समाचार पत्र।
5. Vedic women : Loving Learned Lucky.
6. Jyotsana Kamat "Status of women in medieval Karnataka"
7. Women in India " How Free How Equal ? "(Kalyani Menon Sen, A.K.Shiva kumar)
8. "Women of the world : Women's Health in India" (Victoria A Velkoff & Arjun Adlokha)
9. "National policy for Empowerment of Women"(Rajya Sabha Passed Women's reservation Bill) 25.08.2010. 10.Wikipedia.org/s
11. www.whereismypants.com

****

मध्यप्रदेश में ग्रामीण विकास योजनाओं में जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन का योगदान (खरगोन-बड़वानी जिलों के संदर्भ में)

डॉ. टी.एम. खान *

प्रस्तावना – भारत का हृदय स्थल मध्यप्रदेश के निमाड़ांचल में स्थित आदिवासी बहुलद्वय जिलों का अपना महत्व है। पूर्व बड़वानी जिला खरगोन जिले की तहसील था। सतपुड़ा और विंध्यांचल की वादियां तथा जीवनदायीनी नर्मदा नदी इन क्षेत्रों को विकसित और प्रफुल्लित करती है। यहां की काली मिट्टी से कपास की भरपूर पैदावार होने से इन द्वय जिलों में जिनिंग-फेक्ट्रियों की बहुतायात होने से जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन अपनी महत्ती भूमिका निभा रहा है।

जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन की जनजातीय जिलें खरगोन एवं बड़वानी के ग्रामीण विकास की प्रमुख योजनाओं में महत्वपूर्ण सहभागिता रही हैं। मध्यप्रदेश शासन द्वारा इन योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए मापदण्ड निर्धारित किए है। इन निर्धारित मापदण्डों के आधार पर हितग्राहियों को ग्रामीण विकास की योजनाओं से ऋण सहायता अथवा अनुदान प्राप्त हो सकता है।

शोध का उद्देश्य – मध्यप्रदेश में ग्रामीण विकास की अनेक योजनाएं संचालित है। इन योजनाओं में जिला सहकारी केन्द्रिय बैंक मर्यादित खरगोन का क्या योगदान है, यह ज्ञात करना शोध का उद्देश्य है।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र– प्रस्तुत शोध पत्र में द्वितीयक समंकों एवं सूचनाओं के आधार पर विवेचना कर निष्कर्ष प्राप्त किए गए है एवं शोध का अध्ययन क्षेत्र म.प्र. के खरगोन एवं बड़वानी जिले को सम्मिलित किया गया है। जिसमें जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन द्वारा संचालित प्रमुख योजनाओं का अध्ययन किया गया है।

शोध व्याख्या–

किसान क्रेडिट कार्ड योजना – इस योजना के अंतर्गत किसानों के द्वारा

पशुओं की देखभाल हेतु चारा खरीदना– नाबार्ड भोपाल के अनुसार क्रेडिट कार्ड के संशेधित दिशा निर्देशों में पशुपालन के अंतर्गत कार्यशील पूंजी ऋण का भी प्रावधान किया गया है जिसमें किसानों द्वारा पशुओं की देखभाल हेतु चारा खरीदना शामिल है। इस बारे में यह भी उल्लेखित है कि फसलों की खेती में चारा उगाना भी शामिल है। इस हेतु ऋण प्रदाय किया जावें।

समितियों के ऋणों की वसूली के लिये सुनियोजित कार्यक्रम निर्धारित करना– समितियों के ऋणों की वसूली के लिये समयबद्ध सुनियोजित कार्यक्रम पर बैठक में विचार किया जाता है ताकि सर्वानुमति से निर्णय लेकर जिसका अनुमोदन किया जाता है।

ड्रीप ऐरिगेशन (टपक सिंचाई) योजना–ड्रीप ऐरिगेशन हेतु सहायक संचालक उद्यान द्वारा अनुशंसित प्रकरणों में हेक्टर मॉडल योजनानुसार ऋण की स्वीकृति दी जा सकेगी। इस हेतु आवेदक को नियमानुसार ऋण स्वीकृति दी जा सकेगी। इस आवेदक को नियमानुसार मध्यावधि ऋण योजनान्तर्गत निर्धारित ऋण आवेदन-पत्र में आवेदन-पत्र, आवेदक व प्रतिभूति दावा द्वारा संस्था/बैंक की नाममात्र की सदस्यता ग्रहण करना होगी, योजना हेतु प्रोजेक्टर रिपोर्ट, कोटेशन व एस्टीमेंट, एन. सी. एस. की प्रमाणित प्रति, कृषि भूमि की बी-1 की नकल व 5 साल खसरा, अन्य बैंकों का नोड्यूज प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करना होगा। शेष शर्ते पूर्व में जारी निर्देशानुसार होगी। ऋण अवधि 4 से 15 वर्ष होगी।

तालिका क्र.01

फसल के मान से योजना मॉडल

क्र.	विवरण	पौधों की दुरी	ऋणमान प्रति एकड़
1.	सब्जी	1.5 x 1.5	22600.00
2.	अनार	4 x 4	10500.00
3.	निम्बू/अमरुद	6 x 6	8500.00
4.	केला/पपिता	3 x 3	13400.00
5.	अंगूर	3 x 2.5	13600.00
6.	कपास/मिर्च	3 x 3	13400.00

स्त्रोत- जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन

समीक्षा– उपर्युक्त तालिका से निम्न निष्कर्ष प्राप्त होते है -

1. सर्वाधिक ऋण दर सब्जी उत्पादकों के लिए तय की गई है।
2. केला, पपीता, मिर्च और कपास निमाड़ की तीन प्रमुख उपज है। अत: इनकी ऋण दर एक समान है।
3. अंगूर की खेती को निमाड़ में प्रोत्साहन हेतु प्रति एकड़ ऋण दर यहां की प्रमुख उपज की तुलना में अधिक है।

पड़त/बंजर भूमि पर जेट्रोफा पौधारोपण योजना– बायोडीजल के उत्पादन की दृष्टि से जोट्रोफा पौधारोपण को देखते हुए भारत सरकार द्वारा जेट्रोफा पौधारोपण योजना को बड़े पैमाने पर प्रोत्साहन किया जा रहा है। राष्ट्रीय तिलहन एवं वानस्पतिक तेल विकास बोर्ड द्वारा भी 30 प्रतिशत तक का अनुदान प्रदाय किये जाने का प्रावधान रखा गया है। उक्त परिपेक्ष्य में राज्य शासन द्वारा भी पड़त भूमि विकास तथा स्वरोजगार के अवसर सृजित करने के लिए जेट्रोफा की खेती को बड़े पैमाने पर प्रोत्साहित किया जा रहा है। उक्त परिपेक्ष्य में बैंक द्वारा अपने कार्यक्षेत्र के अंतर्गत जेड्रोपा पौधारोपण के लिये निर्धारित मापदण्ड़ों के तहत पात्र कृषकों को ऋण उपलब्ध कराया जाता है। जिसका विवरण नीचे दी गई तालिका में दिया गया है-

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय धामनोद, जिला -धार (म.प्र.) भारत

तालिका क्र.02

वितरण तालिका (एक एकड़ में 2000 पौधों के लिए)

क्र.	किश्त	उद्देश्य	कार्य अवधि	उपयोगिता जांचकर्ता अधिकारी
1.	प्रथम किश्त	गढढे खेदना, खाद डालना, पुन: पौधारोपण, निरीक्षण एवं तकनीकि सलाह	7 दिवस	पर्यवेक्षक/शा. प्र.
2.	द्वितीय किश्त	पौधारोपण	3 दिवस	शाखा प्रबंधक
3.	तृतीय किश्त	पौधों के रखरखाव	12 माह	शाखा प्रबंधक
4.	चतुर्थ किश्त	पौधों के रखरखाव	24 माह	शाखा प्रबंधक

स्त्रोत – जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन

समीक्षा –उपर्युक्त तालिक से निम्न निष्कर्ष प्राप्त होते है:–

1. निमाड़ में बायोडीजल के उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए कृषकों को आकर्षक ऋण सुविधा दी गयी हैं।
2. इस ऋण सुविधा का लाभ कृषक निर्धारित समयावधि में ही प्राप्त कर सकते हैं।
3. कृषकों को पौधारोपण में लगभग दो वर्ष तक चार किष्तों में ऋण दिया जाता है।

डेरी मुर्गी पालन जोखिम पूंजी निधि–डेयरी उद्यमिता विकास योजना (डीइडीएस) – नाबार्ड डेरी योजना के अंतर्गत 10 पशुओं हेतु रु. 3.00 लाख तक का ऋण हितग्राहियों को वितरण किया जा रहा था, जिसमें संशोधन करते हुये नाबार्ड द्वारा डेरी परियोजना दिनांक में 01 सितंबर 2010 से संशोधन करते हुये डयेरी उद्यमिता विकास योजना के अंतर्गत पशु पालन, डेयरी और मत्स्य पालन विभाग भारत सरकार द्वारा कार्यान्वित मोड़ को ब्याज मुक्त ऋण से (आईएफएल) से पूंजी उपदान में परिवर्तित करने का यूनिट लागतों को संशेधित करने का कुछ नये घटकों को शामिल करने का एवं नाम को बदलकर 'डेयरी उद्यमिता विकास योजना' नाम देने का निर्णय लिया गया है। जिसके अंतर्गत संकर नस्ल की गायों/देशी दुधारु गायों यथा साहिवाल, रेड सिंधी, गौर, राठी आदि या दस ग्रेडेड भैसों तक की छोटी डेयरी की इकाइयों की स्थापना हेतु 10 पशुओं की इकाई में जिसमें न्यूनतम 2 पशु और अधिकतम् 10 पशुओं के लिये रु. 5.00 लाख तक ऋण स्वीकृत की जा सकेगी तथा नाबार्ड भोपाल के अनुसार विभिन्न घटकों के लिये रु. 30.00 लाख तक ऋण स्वीकृत किए जा सकते हैं।

निष्कर्ष – पश्चिम निमाड़ के दोनों जिलें खरगोन एवं बड़वानी जनजातीय बहुल है। व्यापारिक बैंक ग्रामीण विकास की योजनाओं के क्रियान्वयन में अधिक भागीदारी नहीं करते हैं। अत: सहकारी बैंकों की इन योजनाओं को सफल बनाने में महत्ती भूमिका होती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मध्यप्रदेश संदर्भ 2012, मध्यप्रदेश जनसंपर्क का प्रकाशन, भोपाल, 2012
2. कुमार, प्रमीला : मध्यप्रदेश का भौगोलिक अध्ययन, मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2008
3. जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन
4. जिला सांख्यिकी कार्यालय, खरगोन
5. श्रीवास्तव, प्रेमनारायण : पश्चिम् निमाड़ गजेटियर
6. ऋण पुस्तिका, जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक मर्यादित, खरगोन
7. अग्रवाल, माथुर, गुप्ता : सहकारी चिन्तन एवं ग्रामीण विकास, रमेश बुक डिपों, जयपुर

****

बालिकाओं का घटता अनुपात – एक चिंतनीय विषय

डॉ. सुरेखा जैन *

शोध सारांश – संपूर्ण विश्व आज आतंकवाद, गरीबी, पर्यावरणीय संकट, अशिक्षा,बेरोजगारी आदि कई अन्य सामाजिक समस्याओं से जूझ रहा है। 21 वीं शताब्दी में हम कुछ अधिक या अति आधुनिक होते जा रहे है। भारतीय संस्कृति तथा उसकी आस्थाऐं समाप्त होती जा रही है , इसका प्रमाण है कि देश में स्त्रियों की संख्या में लगातार गिरावट आ रही है। जन्म लेने से पूर्व ही लडकियों को इस संसार में आने से रोका जा रहा है। यह एक सामाजिक चिंता और चिंतन का मुद्दा है,यह एक ग्लोबल चुनौती है,जिस पर शोध पत्र में राजनैतिक,सामाजिक,आर्थिक व्यवस्था के उन बिंदुओं को जोडने का प्रयास किया गया है साथ ही साथ उन उपायों का विश्लेषण भी इस शोध पत्र में किया गया है, जिससे इस समस्या को समाप्त या कम किया जा सके।

लडकी के जन्म पर आंसू बहाने वालों,
घर और देश की शोहरत है लड़कियॉ।
बेटी और बेटे में भेद करने वालों,
हीरा है लड़का तो कोहनूर है लड़कियॉ।।

प्रस्तावना – संपूर्ण विश्व आज आतंकवाद,पर्यावरण संकट,गरीबी और अशिक्षा जैसे कारणों सें पीडित तो है ही पर इसके साथ एक प्रमुख ग्लोबल चुनौती भी हमारे सामने स्पष्ट दिखाई देने लगी है, और वह है घटती बालिकाओं की संख्या।

एक ऐसे देश में जहॉ कन्याओं की पूजा की जाती है जिन्हें देवी का रूप माना जाता है उन्हें दुनिया में आने से पहले ही मार दिया जाता है, क्यों उन्हें हक नहीं मिल पाता दुनिया को देखने का ? आखिर क्या कसूर होता है उनका? सिर्फ इतना ही नहीं कि वो लड़की के रूप में गर्भ में आती है। बच्चा जब जन्म लेकर आता है तो मॉ उसे कितना प्यार करती है उसके लिए सारी दुनिया से लड़ती है,शास्त्रों में मॉ के वात्सल्य को सर्वोपरी रखा जाता है उसकी ममता के आगे तो पत्थर भी पिघल जाता है। फिर कैसे करवाती है वह भ्रूण हत्या,कहॉ चली जाती है, उसकी ममता, उसका वात्सल्य अगर भ्रूण हत्या होती भी है तो सिर्फ कन्याओं की ही क्यों?

बालकों की भ्रूण हत्या तो कभी नहीं की जाती क्यों हर जगह नारियों को ही कष्ट दिया जाता है। आधुनिकता में अब हर कोई एक ही या ज्यादा से ज्यादा दो संतान चाहता है। जो एक संतान चाहते हैं वो सिर्फ लड़का ही चाहते है और यदि गर्भ में लड़की आती है तो तब तक । Abortion करवाते हैं जब तक उन्हें लड़का नहीं मिलता। अगर कोई दो संतान चाहता है तो वो एक लड़का और एक लड़की चाहेगा। अगर दोनों लड़का हुये तो भी उसके लिए कोई पेरशानी नहीं पर वो कभी भी दोनों संतान लड़की नहीं चाहेगा,क्यों? आखिर ऐसा क्या है,लड़की में ? क्या वह अभिश्राप है जिससे हर कोई डरता है।

वर्ष 2003-04 की गणना के अनुसार देश में प्रति 1000पुरूषों पर 927 महिलाएं है। अब तो महिलाओं की संख्या और भी कम हो गई है और अगर इसी तरह चलता रहा तो प्राचीन समय लौट आयेगा। पहले एक राजा 100,200 तक रानियॉ रखता था अब एक महिला 100,200 पति रखेगी। पहले हम अपने बेटे की शादी के लिए शान से लड़किया देखने जाते थे। लड़की का पिता हाथ जोड़कर हॉ में हॉ मिलाता खड़ा रहता । अब तो लडकियां की मुश्किल से मिलती है और आने वाले 25-30 सालों बाद लड़कियॉ वाले शान से लड़का देखने जायेगें और दहेज मांगेंगे। हजारों लड़के कुंवारे ही बूढ़े हो जायेंगे।

हम सोचते है, कि कन्या भ्रूण हत्या गांवों में ज्यादा होती है पर हम शिक्षित,समझदार आधुनिक नागरिक कितना समझते हैं। हम स्त्री होकर भी कभी नहीं चाहते कि हमारी संतान लड़का न होकर लड़की हो, भले ही ऊपर से हम कुछ भी कहते रहे कुछ भी करते रहे,कितना ही दिखावा क्यों न कर ले, पर हम अपने भविष्य के साथ खिलवाड़ कभी नहीं कर सकते। हमें पता है कि एक लड़का ही माता-पिता को अकेला छोड़ देता है। जबकि हर लड़की अपने माता-पिता को सहारा देने के लिए हर पल तैयार रहती है फिर भी हम कन्या भ्रूण हत्या करवाते है।

कारण कोई भी हो, यदि लगातार ऐसे ही स्त्रियों की संख्या कम होती जायेगी, तो अविवाहित पुरूषों की संख्या बढ़ेगी और स्त्रियों की संख्या कम हो जायेगी। अविवाहित पुरूष अपनी कामेच्छा पूरी करने के लिए गलत मार्ग अपनाएंगे। घर संसार, बाल बच्चों और बीवी का सपना पूरा नहीं होगा जिससे व्यक्ति व्यसनाधीन बनेंगे, मनोविकृत होगें और इसमें राष्ट्र की अवनति ही होगी।

समाज इस समस्या को लेकर बहुत असंवेदन शील हो गया है, एक तरफ आधुनिकता बढ़ रही है वहीं महिलाओं की संख्या घट रही है इसके वास्तविक कारण कौन-कौन से है, राजनैतिक,सामाजिक,आर्थिक व्यवस्था के उन बिंदुओं को जोड़ने का प्रयास इस शोध पत्र में किया गया है साथ ही साथ उन उपायों का विश्लेषण भी इस शोध-पत्र में किया गया है जिससे समस्या को समाप्त या कम किया जा सके।

बालिकाओं के घटते अनुपात के पीछे उत्तरदायी कारण –

- बालिकाओं की उपेक्षा करने के कारण कम आयु में उनकी मृत्यु दर अधिक होना।
- दहेज प्रथा के कारण लड़कियों को पसंद न किया जाना।

* सहायक प्राध्यापक, महाराजा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

- भारत जैसे गरीब देश में लड़कियों की देखभाल की बजाय आर्थिक स्त्रोंतो पर जीवन जीने के लिये ज्यादा ध्यान दिया जाता है।
- तकनीकी विकास के साथ-साथ लिंग परीक्षण तरीका सस्ता एवं सुलभ होने के कारण।
- महिलाओं का घरेलू एवं बाहरी हिंसा का शिकार होना।
- माता-पिता अनेक सामाजिक,सांस्कृतिक आर्थिक कारणों से लड़के का जनना ज्यादा उचित समझते है। इसलिए भ्रूण अगर कन्या होती है तो गर्भपात करा दिया जाता है।
- लड़कों की तुलना में लड़कियों को कम भोजन दिया जाना जिससे वे कमजोर हो जाती है और मृत्युदर ज्यादा होती है।
- उच्च मृत्यु दर होने के भी कई कारण है जैसे - कम आयु में विवाह, समाज में महिलाओं की निम्न स्थिति, सेवा सुलभ न होना इत्यादि।
- समाज का रूढ़िवादी नेतृत्व जो परंपराओं और मजहब के नाम पर महिलाओं को अधिकार न प्रदान करना।
- बेटे के अभाव में वंश बचाना माता-पिता का मृत्यु संस्कार कौन करेगा, इस हेतु बेटे का जन्म आवश्यक है, बेटी का नहीं जैसे मान्यतायें माना जाना।
- बेटी की सुरक्षा की जिम्मेदारी शिक्षा संस्कार, शारीरिक सुरक्षा , आदि की जिम्मेदारी की वजह से।
- छोटा परिवार भी इसके लिए जिम्मेदार है अधिकांश दम्पत्ति की सोच अगर एक बच्चे को जन्म देना है तो क्यों न बेटे को ही जन्म दिया जाए ताकि वह बुढापे का सहारा बन सके।

आज हकीकत यह है कि विश्व में सर्वाधिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक शोषण महिलाओं का हो रहा है। महिलाओं पर होने वाले शोषण को रोकने हेतु महिलाओं को अधिक से अधिक शिक्षित करना होगा जनसंख्या में महिला अनुपात संतोषजनक रखने के लिए व्यापक सरकारी प्रयास किये गये है, और किये जा रहे है, इसमें करोड़ों रूपये प्रति वर्ष खर्च किये जा रहे हैं लेकिन इनका समुचित उपयोग नहीं हो पाता है प्रकृति और समाज का संतुलन बनाये रखने के लिए स्त्री और पुरूषों की संख्या में समानता होना चाहिये।

समानता बनाने के लिए आवश्यक सुझाव-

- गर्भपात को पूरी तरह प्रतिबंधित किया जाना चाहिये और इसके लिए कानून में व्यापक बदलाव लाने की जरूरत है।
- गर्भ परीक्षण पर रोक लगाने जनमत तैयार किया जाए।
- दहेज प्रथा के विरोध में प्रबल जनमत तैयार करे।
- जन-जागृति कार्यक्रमों जैसे-महिला मंडल,मीडिया,समाचार पत्र,सेमीनार आदि के माध्यम से स्त्री पुरूष में समानता स्थापित करनी चाहिये।
- दहेज लेने और देने पर कानूनी प्रतिबंध का सख्ती से पालन किया जाना चाहिये।
- समाज के लड़के और लड़कियों के बीच बढ़ते भेदभाव पर नियंत्रण करना आवश्यक है।
- सामाजिक व्यवस्था और सांस्कृतिक परंपराओं में इस प्रकार परिवर्तन लाया जाये जिसमें महिलाओं को पुन: गरिमामय स्थान प्राप्त हो सके।
- महिलाओं पर होने वाले अत्याचारों को कठोरता से समाप्त किया जाना चाहिये।
- पारिवारिक जिम्मेदारियों में स्त्री पुरूष में समानता होना चाहिये।
- स्त्री शिक्षा में वृद्धि होना चाहिये।
- परिवार और समाज द्धारा उच्च गुणवत्ता वाली स्वास्थ्य सुविधायें मिलनी चाहिये।
- गर्भ जल चिकित्सा कानून को कठोर बनाया जाना चाहिये।
- डाक्टरों को कन्या भ्रूण हत्या को गंभीर मानकर गर्भपात से बचाना चाहिये।
- रूढ़िवादी मान्यता-लड़का कुलदीपक का समाज के शिक्षित वर्ग को दूर करने का प्रयास करना होगा।
- दहेज विरोधी कानून को सख्ती से लागू किया जाये।
- प्रोत्साहन के द्धारा ही भ्रूण हत्या को समाप्त करके स्त्री अनुपात में संतुलन बनाये रखा जा सकता है।
- ऐसी ग्राम पंचायतों एवं शहरों को पुरस्कृत किया जाए जहॉ प्रतिवर्ष 50 प्रतिशत लड़कियों का जन्म हुआ हो।

आज आवश्यकता है हमें अतीत में झॉकने की जहॉ, अनेक वीर महिलाओं का उल्लेख है। भारत का इतिहास,अहिल्याबाई होल्कर,रानी लक्ष्मीबाई,जीजाबाई, रानी दुर्गावती, रजिया सुल्तान,ताराबाई,सावित्री आदि अनेक महिलाओं की गाथाओं से भरा हुआ है। आधुनिक युग में विश्व के कई देश महिलाओं के नेतृत्व में प्रगति की ओर अग्रसर है भारत की प्रथम महिला प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरागांधी, पाक प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टों,म्यांमार की आंगसान सूरी,ब्रिटेन की मार्गरिट थ्रेचर,श्रीलंका की सिरिमावों भंडार नायके,अर्जेन्टीना की प्रथम राष्ट्रपति मारिया एस्टेला, भारत की महामहिम राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल आदि महिलाओं ने अपनी महत्ता साबित की।

यह महिला शक्ति ही है जिसका बखान हमारे धार्मिक ग्रंथों में भी मिलता है कि देवताओं को भी राक्षसों से रक्षा हेतु देवी दुर्गा की शरण में जाना पड़ा था इन उदाहरणों के माध्यमों से प्रोत्साहन स्वरूप समझाया जा सकता है कि लड़कियॉ कमजोर नहीं है उन्हें समाज में बराबरी का हक है इसके लिए हम सबको इस दिशा में सकारात्मक कार्य को अंजाम देना होगा।

मध्यप्रदेश के माननीय मुख्यमंत्री की घोषणा-भ्रूण हत्या की सूचना देने वाले को 10 हजार रूपये की राशि 'पुरस्कार' के रूप में नगद दी जाए तथा केन्द्र सरकार का बेटी बचाओं अभियान तथा लाड़ली बेटी योजना लिंगानुपात संतुलन करने में मील का पत्थर साबित होगा।

हो सकता है आज बचायी गई कन्या कल की राष्ट्रपति हो,वैज्ञानिक हो और हमारा सिर गर्व से ऊॅचा कर सके।

गुड़िया या ब्याह हंसकर,रचाऍ बेटियॉ,
जीवन नहीं पर खेल,समझ जाए बेटियॉ।
रास्ते के मुसाफिर को भी,रूलाऍ बेटियॉ,
हर शाम हर सवेरे याद आऍ बेटियॉ।
विनती है आप से मेरी, न मरवाऍ बेटियॉ,
रिश्तों में 'अमृत' बनके, समा जाए बेटियॉ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपकार, भारत की जनसंख्या 2001, आंकडे एवं तथ्य
2. प्रतियोगिता, जून जुलाई 2006
3. लड़कों के मुकाबले लड़कियॉ घटी , नई दुनिया , इंदौर ,23 जुन 2006
4. बदहाल बेटियॉ और सुपर पावर,अजय खेमरिया,नई दुनिया,इंदौर 3 मार्च 2006

****

सामाजिक अंकेक्षण का ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में योगदान

डॉ. आर.एस. मण्डलोई *

शोध सारांश – भारत गांवो का देश है और यहा की लगभग 70% जनसंख्या गांवो में निवास करती है ऐसी स्थिति में देश का विकास ग्रामों के विकास पर निर्भर करता है जब तक ग्रामीण क्षेत्र का समानता से विकास नहीं होगा तक तक देश के विकास में वृद्धि करना असंभव है। इस हेतु शासन स्तर से विकास की सुनहरी परियोजनाओं एवं कार्यक्रमों को लागू किया जाकर प्रतिवर्ष करोड़ो रूपये व्यय किये जाते है। पिछले 40–50 वर्षो से अस प्रकार करोडों रू. की राशि ग्रामीण विकास कार्यो हेतु हमारे देश की सरकार द्वारा व्यय की गयी है। किन्तु ग्रामीण विकास में अपेक्षित सफलता नहीं प्राप्त हो सका। जिसका एक प्रमुख कारण योजनाओं का सही क्रियान्वयन तथा निगरानी (मानीटरिंग) न होना रहा है। ग्रामीण विकास के कार्यो की निगरानी तथा धन व्यय की जॉच हेतु सामाजिक अंकेक्षण पद्धति को अपनाया गया है। सामाजिक अंकेक्षण में ग्रामीण जनता द्वारा ग्रामीण विकास कार्यो की जानकारी उन पर हुए खर्चे आदि की जानकारी सामूहिक रूप से ग्राम सभाओं में मांग सकते है। इससे धन के दुरूपयोग को रोका जा सकता है। आम जनता को जज की भूमिका देकर ग्रामीण विकास को सशक्त बनाया जा रहा है। अत: निश्चत रूप से सामाजिक अंकेक्षण से ग्रामीण विकास गति प्राप्त कर उँचाइयों को छू लेगा।

प्रस्तावना – ग्रामीण विकास का आशय है ग्रामीण क्षेत्र का सम्पूर्ण विकास ग्रामीण से आशय है गांवो में निवास करने वाले जिनकी जीविका का मूल आधार कृषि है। अर्थात ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना ग्रामीण विकास कहलाता है। ग्रामीण क्षेत्र का विकास देश के विकास का आधार है। चूकि भारत में 68.84 प्रतिशत जनसंख्या 2011 की जनगणना अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है और वे प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था कि भारत गांवो का देश है और इसकी आत्मा गांवो में बसती है। अत: ग्रामीण विकास के बिना देश विकास की कल्पना अधुरी है।

ग्रामीण विकास में कृषि विकास के साथ–साथ आधारभूत सेवाओं के निर्माण के साथ–साथ मानवीय विकास के विविध पहलुओं को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। बगैर बुनियादी सेवा के निर्माण एवं विकास के सम्पूर्ण ग्रामीण विकास कल्पना करना व्यर्थ है। बुनियादी सेवाओं में रेल, सडक, परिवहन, दुरसंचार, ऊर्जा, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि विकास, आधुनिक सिचाई सुविधा, स्वच्छ जल आपूर्ति, रोजगारोन्मुखी कार्यक्रम आदि शामिल है। इन बुनियादी आधारभूत सेवाओं के विकास पर ही ग्रामीण विकास एवं देश का विकास टिका हुआ है। यदि देश के ग्रामीणों में आधारभूत सुविधाओं का विकास नहीं है तो सम्पूर्ण ग्राम का विकास असम्भव है। अत: सर्वप्रथम ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत सुविधाओं का विकास कर ग्रामीणों के जीवन स्तर में सुधार की योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाना चाहिए जिससे स्वत: विकास की प्रक्रिया आरम्भ हो जायेगी। जब एक बार विकास का चक्र प्रारम्भ हो जाता है तो विकास सतत् चलता रहता है।

भारत में ग्रमीण क्षेत्रो में निवासरत जनसंख्या का लगभग 70 प्रतिशत होने के कारण विकास की प्रारम्भिक सीढी ग्रामीण से लेना चाहिए। इसी सम्बन्ध में हमारे नीति निर्माता तथा राजनेताओं ने ग्रामीण विकास को विकास का आधार मानकर योजनाएँ क्रियान्वित करते है।

अंग्रेजी शासनकाल के पूर्व भारत में गांवो का आकार सशक्त एवं मजबूत था। भारतीय गांव आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर थे। ग्रामीण आवश्यकताओं की पूर्ति ग्रामीण उत्पादन से ही कर लेते थे। 19 वीं शताब्दी के मध्यचरण में मुगल साम्राज्य डगमगाने लगा और अंग्रेजों ने उसकी दुर्बलता का लाभ उठाते हुए भारतीय ग्रमीण क्षेत्रों की स्थिति तहस–नहस कर दी।

स्वतंत्रता पारित के पश्चात ग्रामीण विकास हेतु अनेक कार्यक्रम व योजनाएँ लागू की गई तथा ग्रामीण विकास के आधारभूत ढांचे को मजबूत बनाने के प्रायास किये गये किन्तु आज भी हम यथा स्थान ही है अपेक्षित सफलता को प्राप्त नहीं कर पाये। यह सत्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों में परिवर्तन की लहर की सुग–बुगाहत हुई है। ग्रामीणों के सकारात्मक सोच में बदलाव, परिवर्तन एवं विकास हुआ है। शासन से ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु त्रिस्तरीय ग्रामीण विकास कार्यक्रम व योजनाएँ संचालित हो रही है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के तीसरे दशक में ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में नया मोड आया और अति पिछडे तथा गरीब त्रस्त परिवारों को सीधे लाभ पहुँचाने की दिशा में प्रयास किये गये। निरंतर देश में कई योजनाएँ व कार्यक्रम बनाकर क्रियान्वित किये जा रहे है, प्रतिवर्ष अरबों रूपये ग्रामीण विकास योजनाओं पर व्यय किया जाता है किन्तु अभी भी भारत के अधिकांश ग्रामीण क्षेत्रों में मूलभूत परिवर्तन नहीं हुए इतनी धनराशि व योजनाएँ के होने से देश के साढे–सात लाख ग्राम का चहुमुखी विकास होना चाहिए था परन्तु ऐसा नहीं दिखाई दे रहा है। आज भी पिछडे क्षेत्र के ग्रामीण शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात, संचार के साधनों से कोसो दूर है। इनके लिए योजना तो बनी है किन्तु सही क्रियान्वयन के अभाव में उसका लाभ अपेक्षित वर्ग को नहीं मिल पाया है।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में इन मूलभूत समस्याओं के समाधान के लिए एवं ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयनों में जनभागीदारी को बढ़ाया जाये और इस जनभागीदारी को बढ़ाने के एक साधन के रूप में 'सामाजिक अंकेक्षण' को अस्तित्व में लाया गया है। सामाजिक अंकेक्षण ही ग्रामीण विकास का सशक्त आधार हो सकता है। यदि कार्यक्रम व योजनाएँ अपने मूल उद्देश्यों को लेकर लागू की जाती है तो उसका सही क्रियान्वयन नहीं हो पाता है जिसका परिणाम विकास धीमे हो जाता है। सामाजिक अंकेक्षण से समस्त तंत्र में भय व ईमानदारी के गुण निर्मित होगे जिसे वास्तविक लाभर्थियों को लाभ प्राप्त हो सकेगा, सामाजिक अंकेक्षण से योजनाओं का

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

सही क्रियान्वयन होगा, सही भारत का विकास होगा। इन्हीं समस्या को देखते हुए शोध विषय का चयन किया गया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य –

1. ग्रामीण विकास कार्यक्रम में सामाजिक अंकेक्षण की भूमिका
2. सामाजिक अंकेक्षण के क्षेत्र का अध्ययन।
3. सामाजिक अंकेक्षण की प्रक्रिया का अध्ययन करना।
4. सामाजिक अंकेक्षण के उद्देश्य एवं महत्व को जानना।

अध्ययन की विधि –प्रस्तुत शोध अध्ययन द्वितीयक समंको पर आधारित है। द्वितीयक समंको को सन्दर्भित ग्रंथ, पत्र पत्रिकाओं तथा ग्रामीण विकास विभाग की वेबसाइड के माध्यम से प्राप्त कर अध्ययन में यथास्थान उपयोग किया गया।

सामाजिक अंकेक्षण –सामाजिक अंकेक्षण निरीक्षण की प्रक्रिया है जिसका मूल उद्देश्य जवाबदेही सुनिश्चित करना, पारदर्शिता, भागीदारी, जवाबदेही और परिवेदना का निस्तारण इसका प्रमुख अंग है। अत: सामाजिक अंकेक्षण में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों पर हुए व्यय कार्य की प्रगति, आंवटित राशि तथा उसका उपयोग तथा अन्य कार्यो का लेखा–जोखा की जॉच ग्रामीण जनता द्वारा करना। इसमें जवाबदारी तय होती है तथा कार्य में पारदर्शिता आती है। इसमें ग्राम पंचायत के मुखियों द्वारा समस्त विकास कार्यो के बजट आवंटन एवं प्रगति का जनता के द्वारा वर्ष में दो बार जॉच करवाने की जवाबदारी सुनिश्चित की गई है। इस हेतु पंचायती राज संस्थाओं तथा ग्राम सभाओं के माध्यम से संचालन होता है। सामाजिक अंकेक्षण संविधान 73 वे संशोधन के बाद अनिवार्य हो गया है। इसके परिये ग्रामीण समुदाय अपने–अपने इलाके में हर तरह का वैकासिक कार्य के सामाजिक अंकेक्षण के अधिकार दिये गये है।

भारत में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम 2005 ने सबसे पहले सामाजिक अंकेक्षण की प्रक्रिया को विधिवत स्वीकार किया है। जवाबदेह, पारदर्शिता और विकास को सार्थक सिद्ध करने के लिए क्रांतिकारी प्रयास किये गये। नरेगा के अन्तर्गत अनुच्छेद 17 (2) में कहा गया है कि ग्राम सभा नरेगा के अन्तर्गत किसी ग्राम पंचायत में चल रही सारी योजनाओं का नियमित सोशल ऑडिट करेगी फिर अनुच्छेद 17 (3) में कहा है कि ग्राम पंचायत की जिम्मेंदारी है कि सभी जरूरी कागजात, ऑडिट के लिए मुहैय्या कराये।इस प्रकार भारत में मनरेगा कानून के बाद सामाजिक अंकेक्षण हर पंचायत में करवाया जाना अनिवार्य है। यह वर्ष में दो बार निर्धारित तिथि में कराया जाता है। इस दिशा में कई राज्यों में नियमित अंकेक्षण का कार्य हो रहा है जिससे ग्रामीण विकास कार्यो की स्थिति समाज के सामने आने लगी है। ग्रामीण विकास कार्यो में प्रगति होने लगी है। भ्रष्टाचार कुछ हद तक कम हो रहा है। वास्तविक गरीब परिवारों को योजनाओं का लाभ दिया जा रहा है। कुल मिलाकर सामाजिक अंकेक्षण से ग्रामीण विकास की प्रगति का आधार मिला है तथा धन की अनावश्यक बर्बादी पर रोक लगी है।

सामाजिक अंकेक्षण के उद्देश्य एवं महत्व –

1 विकास तंत्र में पारदर्शिता एवं जवाबदेह लाना
2 ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की प्रभावशीलता में वृद्धि करना
3 भौतिक एंव वित्तीय असन्तुलन का अनुमान लगाना
4 निर्धन व्यक्तियों हेतु नीतियॉ व निर्णयन करना
5 स्थानीय उत्पादकर्ता एवं सेवा प्रदानकर्ताओं में चेतना जागृत करना
6 लोकतांत्रिक एवं सुशासन के मूल्यों की स्थापना
7 स्थानीय संसाधनों के दोहन की उचित व्यवस्था करना

सामाजिक अंकेक्षण के साधन –

1. कार्य का प्रत्यक्ष अवलोकन
2. जनसभा में खुली सुनवाई
3. सूचना के अधिकार पत्र, मिडिया के माध्यम से सूचना प्रसारण एवं प्रकाशन शोध एवं सर्वेक्षण प्रतिवेदन, हितग्राहियों से साक्षात्कार आदि

सामान्य अंकेक्षण की प्रक्रिया –

1. निर्धारित प्रपत्रानुसार कार्यो की प्रगति मय दस्तावेज उपलब्ध कराना
2. सामाजिक अंकेक्षण कार्यवार निर्माण कार्यो की एवं सामग्री क्रय बिलो की जानकारी रिपोर्ट तैयार करवाना
3. दो सामाजिक अंकेक्षण सहयोगियों की नियुक्ति करना
4. ग्राम समाज में कोरम पुरा होना चाहिये। जो मतदाता का 10 प्रतिशत होता है।
5. ग्रामसभा का आयोजन स्थल का चयन लोगों की इच्छानुसार है
6. सभी सदस्यों को अपनी बात करने का पूर्ण अवसर दे
7. अंकेक्षण का अनिवार्य ऐजेण्डा होना चाहिए।
8. कार्यो की स्वीकृति एवं पारदर्शिता
9. ग्रामसभा के मस्टर–रोल का सारांश पड़कर सुनाया जाता है।

ध्यान देने योग्य बातें –

1. सामाजिक अंकेक्षण की जानकारी विस्तार से बताना
2. आडिट के सदस्यों का नाम ग्राम पंचायत की मुख्य दिवार पर लिखा जाना चाहिए
3. ग्रामसभा रजिस्टर पर सभी उपस्थिति जन के हस्ताक्षर होना
4. महात्मा गांधी नरेगा श्रमिकों को सूचना देना
5. पिछली अंकेक्षण की रिपोर्ट पढकर सुनाया जाना।

सामाजिक अंकेक्षण के प्रयास –मनरेगा अधिनियम 2005 की धारा 17 के अनुसार

1. ग्रामसभा ग्राम पंचायत पर योजना के क्रियान्वयन की मानीटरिंग
2. ग्राम पंचायत के समस्त दस्तावेज समिति को उपलब्ध करना चाहिए।
3. ग्रामसभा ही ग्राम पंचायत के कार्यो का सामाजिक अंकेक्षण करेगे।
4. मनरेगा की धारा 19 यह प्रावधान करती है कि राज्य सरकार योजना के क्रियान्वयन के क्रम में किसी व्यक्ति द्वारा किसी कार्य के निस्तारण के लिए नियमों द्वारा खण्डस्तर, जिलास्तर पर समुचित तंत्र निश्चित करेगी।मनरेगा के क्रियान्वयन में सामाजिक अंकेक्षण के सुनिश्चित करने के लिए निम्न आवश्यक तत्वों को शामिल किया गया।

1. प्रमुख दस्तावेजों का नियमित संधारण
2. उचित पारिश्रमिक का भुगतान
3. हितग्राहियों का पंजीयन
4. परियोजनाओं का चयन
5. कार्यो का क्रियान्वयन
6. कार्य चाहने वाले आवेदन पत्रों की पावती
7. जाबकार्डो के निर्गमन एवं उसमें अद्यतन प्रविष्टियां
8 ग्रामसभा में सभी दस्तावेज ग्राम पंचायत द्वारा सामाजिक अंकेक्षण के समय उपलब्ध कराना
9. सामाजिक अंकेक्षण नियमित होना चाहिए।

सामाजिक अंकेक्षण की समस्याएँ –

1. ग्रामीण लोगों में जागरूकता का अभाव
2. ग्राम पंचायत द्वारा अभिलेखों का सही संधारण न करना

3. ग्रामसभा की नियमित बैठकों का न होना
4. जनता द्वारा सहयोग नहीं करना
5. सामाजिक अंकेक्षण की प्रक्रिया की जानकारी का अभाव होना।
6. ग्रामीण लोगों को अंकेक्षण में रूचि न होना
7. ग्रामसभा की पुरानी रिपोर्ट को सामाजिक अंकेक्षण के समय कभी नहीं पढी जाती है।
8. सरपंच तथा सचिव द्वारा सहयोग नहीं करना तथा सही जानाकारी ग्रामीण को प्रचार-प्रसार नहीं करते है। ये ही वर्ग भ्रष्टाचार को बढावा देते है।

मनरेगा के तहत झाबुऑ जिले के ग्रम पंचायत कोदली ग्रामीण मजदूरों की मजदूरी का भुगतान तीन साल तक सरपंच सचिव द्वारा नहीं की गई तब ग्रामीणों द्वारा सामाजिक ऑडिट की मांग की और सामाजिक आडिट किया गया तब सरपंच व सचिव द्वारा कार्य का प्रतिवेदन तथा मस्टर रजिस्टर आदिअगली बैठक में बताने को कहकर टाल दिया। जब अगली बैठक में पुछा तो अगली बैठक पर टाल दिया। इस प्रकार ग्राम पंचायतों में कार्य किये जा रहे है। गरीब ग्रामीण कुछ भी नहीं कर सकता है। इसी प्रकार एक अन्य और प्रकरण अध्ययन के दौरान देखने में आया है कि बडवानी जिले में 52 मजदूरों ने सामाजिक अंकेक्षण करवाया किन्तु आज तक मजदूरी का भुगतान नहीं हुआ है।

सुझाव – उपरोक्त समस्या से ग्रस्त सामाजिक अंकेक्षण को सफल एवं प्रभावी बनाकर ग्रामीण को मजबूत किया जा सकता है। यथा-

1. ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक अंकेक्षण को जानकारी का प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिए।
2. ग्रामीणजनों में ग्रामीण विकास में भागीदारी हेतु पहल करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।
3. सामाजिक अंकेक्षण को मजबूत करने के लिए ग्रामीणों को तथा युवाओं को सामाजिक अंकेक्षण का प्रषिक्षण दिया जाना चाहिए।
4. सामाजिक अंकेक्षण की तारीख के एक माह पूर्व ग्रामीणों को सूचना दी जानी चाहिए।
5. ग्राम पंचायत के कार्यो का विवरण ग्राम पंचायत की दिवारों पर अंकित करना चाहिए।
6. ग्रामसभा की बैठके समय-समय पर होना चाहिए।
7. सामाजिक अंकेक्षण निर्धारित में ही सम्पन्न होना चाहिए।
8. ग्रामीण विकास कार्यो में जनभागीदारी बढाने के साथ सामाजिक अंकेक्षण का व्यापक प्रचार-प्रसार करना चाहिए।

निष्कर्ष –अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि देश का विकास ग्रामीण विकास से ही संभव है और ग्रामीण विकास ग्राम पंचायत तथा इससे जुडे तंत्रों से होना है जिसके लिए लाखों रू. प्रतिवर्ष व्यय किये जाते है, किन्तु भ्रष्टाचार के चरम सीमा के कारण ग्रामीण विकास की योजनाओं का लाभ वास्तविक हितग्राहियों को नहीं मिलता है जिससे ग्रामीण विकास होना तो दूर ग्रामीण क्षेत्रो में असमानता पैदा हो रही है। ग्रामीण विकास की योजना का लाभ समृद्ध कृषक और प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा ले लिया जाता है। जिससे वे अमीर होते जाते है तथा दूसरा वर्ग जो गरीब है वह और गरीब हो रहा है। यह असमानता देश के विकास हेतु गम्भीर चुनौती बन रही है। अत: वास्तविक ग्रामीण एवं देश का विकास करना है तो ग्रामीण विकास की हजारों योजनाओं को विलयकर एक महत्वपूर्ण योजना लागू करना चाहिए तथा उसका सतत् मूल्यांकन हो। साथ ही धन के दूरूपयोग रोकने के लिए ग्रामीण क्षेत्र के लोगो द्वारा प्रतिवर्ष के विकास कार्यो के आवंटन एवं प्रगति का सामाजिक अंकेक्षण वर्ष में दो या तीन बार होना चाहिए। अंत होगा सामाजिक अंकेक्षण से ग्रामीण विकास तंत्र में भ्रष्टाचार, भाई भतीजावाद, प्रभावषाली प्रभुत्व का तथा ग्रामीण के वास्तविक हितग्राही जिसके लिए योजना बनी है उसको लाभ मिलेगा तथा ग्रामीण विकास की प्रक्रिया में सुधार होगा। अत: ग्रामीण विकास में सामाजिक अंकेक्षण वर्तमान परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण हथियार है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. माथूर, बी.एल. (2009) 'ग्रामीण अर्थव्यवस्था' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस दिल्ली पृ. 3
2. दत एवं सुन्दरम, (2011) 'भारतीय अर्थव्यवस्था' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस दिल्ली पृ. 386
3. डॉ. माथूर, बी.एल. (2009) 'भारतीय अर्थव्यवस्था' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस दिल्ली पृ. 190
4. डॉ. माथूर, रीता (2009) 'आर्थिक विकास एवं नियोजन' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस दिल्ली पृ. 132
5. Tewari R.T. & Sinha R.C. (1988) "Rural Development' in Indis, Ashish publidhing house, New Delhi, P.28
6. डॉ. गर्ग डी.पी., (1986) 'समन्वित ग्रामीण विकास एवं सहकारिता शिव प्रकाशन इन्दौर पृ. 256'
7. के.एल. चार्लिस (1990) Total Developmen, नेशनल बुक सेन्टर, दिल्ली
8. मार्ग दर्शिका, 2011 मनरेगा तथा अंकेक्षण भारत सरकार
9. योजना (पत्रिका) 2013-14 ग्रामीण विकास मंत्रालय, दिल्ली
10. कुरूक्षेत्र पत्रिका (2014) ग्रामीण विकास मंत्रालय, दिल्ली
11. दैनकि भास्कर सीटी, 26 फरवरी 2013, ग्रामसभा में होगा मनरेगा का अंकेक्षण, दैनिक भास्कर कार्यालय, अलीगढ।

****

भारत में बैंकिंग - एक अध्ययन

प्रो. सीमा नागर *

प्रस्तावना – बैंकिंग व्यवसाय अत्यधिक प्राचीनकाल से अस्तित्व में है। किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में बैंकिग प्रणाली का महत्वपूर्ण योगदान होता है। देश में आर्थिक विकास में बैंकों की केन्द्रीय भूमिका होती है। प्राचीन समय से महाजन, सुनार, सराफ आदि मुद्रा के लेन-देन में लगे रहे है। प्राचीन भारत में राजा, नवाब आदि अपने राज्यों में साहूकारों को बसाकर उनसे ऋण लेते थे। ये साहूकार अन्य लोग को भी ऋण देते थे। भारत में बैंकिंग विकास विभिन्न चरणों में हुआ है।

भारत में बैंकिग विकास के चरण – भारत में बैंकिग प्रणाली के विकास को 7 चरणों में विभाजित किया जा सकता है –

प्रथम चरण (1806 तक) – 18वीं शताब्दी में ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बम्बई तथा कलकत्ता में कुछ ऐजेंसी गृहों की स्थापना की। इन एजेंसी गृहों का वित्त पोषण ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा ही किया जाता था। यूरोपीय बैंकिग पद्धति पर आधारित भारत का पहला बैंक विदेशी पूंजी के सहयोग से एलेक्जेंडर एंड कम्पनी द्वारा बैंक ऑफ हिंदुस्तान के नाम से 1770 में कलकत्ता में स्थापित किया गया था। परन्तु यह बैंक शीघ्र ही असफल हो गया।

द्वितीय चरण (1806 से 1860 तक) – 1813 में ईस्ट इंडिया कम्पनी के वाणिज्य अधिकार समाप्त होने के साथ ही एजेंसी गृहों के पतन की प्रक्रिया शुरू हो गई। इसके बाद देश में निजी अंशधारियों द्वारा तीन प्रेसीडेंसी बैंको की स्थापना की गई जो इस प्रकार है – 1806 में बैंक ऑफ बंगाल, 1840 में बैंक ऑफ बाम्बे तथा 1843 में बैंक ऑफ ग्रदास। इन तीनों प्रेसीडेंसी बैंको को सरकार के बैंक के सभी अधिकार प्राप्त थे।

तृतीय चरण (1860 से 1913) – भारत सरकार ने 1860 में एक संयुक्त पूंजी कम्पनी अधिनियम पारित किया। इसके अन्तर्गत बैंकों के गठन संबंधी शर्तो को काफी उदार बना दिया गया तथा सीमित देयता के आधार पर देश में बैंकों के गठन की अनुमति दी गई। इस अधिनिमय के पारित होने के बाद देश में बैंकिंग विकास को एक नई दिशा मिली। सीमित देयता के आधार पर 1881 में स्थापित अवध कॉमर्शियल बैंक भारतीयों द्वारा संचालित पहला बैंक था। पूर्णरूपेण भारतीयों का पहला बैंक पंजाब नेशनल बैंक था जिसकी स्थापना 1894 में की गई थी। 1906 में बैंक ऑफ इण्डिया, 1908 में बैंक ऑफ बड़ौदा, 1911 में सेन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया तथा 1913 में बैंक ऑफ मैसूर की स्थापना की गई।

चतुर्थ चरण (1913 से 1939 तक) – इस अवधि में भारत में बैंकिंग क्षेत्र के सम्मुख प्रथम विश्व युद्ध छिड़ जाने के कारण संकट उत्पन्न हो गया। भारतीय बैंकों से लोगों का विश्वास अचानक समाप्त हो गया। फलत: जमाकर्ताओं द्वारा अपना निक्षेप निकालने की प्रक्रिया शुरू हो गई। भारतीय बाजार में मुद्रा की कमी हो गई थी। प्रथम विश्व युग की समाप्ति के बाद भारत में बैंकिंग विकास की दर एक बार पुन: त्वरित हुई।

1921 में तीनों प्रेसीडेंसी बैंकों का आपस में विलय करके इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना की गई। 1930 की व्यापक मंदी का भी भारतीय बैंकिंग व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। 1930 में ही केन्द्रीय बैंकिंग जाँच समिति का गठन किया गया है। समिति ने अपने प्रतिवेदन में सुझाव दिया था कि देश में एक सृदृढ़, सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित बैंकिंग व्यवस्था की स्थापना के लिए केन्द्रीय बैंक की स्थापना तथा व्यापक बैंकिंग अधिनियम बनाने पर बल दिया जाए। 1939 में भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम पारित किया गया। फलत: 01 अप्रैल, 1935 से भारतीय रिजर्व बैंक ने कार्य करना शुरू कर दिया।

पंचम चरण (1939 से 1947) – इस अवधि को बैंकिग विस्तार की अवधि कहा जाता है क्योंकि द्वितीय विश्व युद्ध के कारण जनित मुद्रा स्फीति से जनसामान्य की मौद्रिक आय में वृद्धि हुई। इस अवधि में नए बैंकों की स्थापना के साथ-साथ पुराने बैंकों द्वारा नई-नई शाखाएँ खोली गई। यूनाइटेड कॉमर्शियल बैंक तथा हिन्दुस्तान कॉमर्शियल बैंक आदि की स्थापना हुई।

षष्टम चरण (1947 से 1991 तक) – इस चरण में भारतीय रिजर्व बैंक का 1 जनवरी, 1949 को राष्ट्रीयकरण किया गया तथा मार्च 1949 में भारतीय बैंकिंग अधिनिमय पारित किया गया। इस अधिनियम के अन्तर्गत अनुसूचित बैंकों का निरीक्षण करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक को अधिक व्यापक अधिकार प्रदान किया गया। देश में, विशेषत: ग्रामीण क्षेत्रों में, बैंकिंग सुविधाओं के विकास के लिए इंजीरियल बैंक ऑफ इंडिया का 01 जुलाई,1955 को राष्ट्रीयकरण किया गया तथा इसका नाम बदलकर भारतीय स्टेट बैंक रख दिया गया।

19 जुलाई, 1969 तथा 15 अप्रैल, 1980 को क्रमश: 14 तथा 6 बड़े व्यावसायिक बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया। इसके पूर्व 1975 में क्षेत्रीय ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना करने की प्रक्रिया शुरू की गई जिससे ग्रामीण क्षेत्र को वित्तीय संसाधन अधिक मात्रा में उपलब्ध कराया जा सके।

सप्तम चरण (1991 से अब तक) – भारत में बैंकिग इतिहास का सातवाँ चरण 1991 के बाद शुरू होता है। 1991 में नई आर्थिक नीति लागू होने के बाद 1993-94 में निजी क्षेत्र में पुन: बैंक खोलने की अनुमति दे दी गई। इसके बाद ही विदेशी बैंकों को भी भारत में अपना विस्तार करने तथा नई शाखाएँ खोलने की अनुमति दे दी गई।

हाल की वर्षो में यह अनुभव किया गया कि तीव्रगति से परिवर्तित होती वैश्विक अर्थव्यवस्था के अनुरूप भारतीय बैंक कार्य नहीं कर पा रहे हैं। अत: भारतीय बैंकिंग में परिवर्तन की आवश्यकता को ध्यान में रखते हए सरकार ने बैंकिंग कानून संशोधन विधेयक 2011 पारित किया।

बैंकिंग कानून संशोधन विधेयक 2011 के मुख्य प्रावधान –

1. नये बैंक शुरू करने के लिए अब सिर्फ 500 करोड़ रूपये की न्यूनतम पूंजी की आवश्यकता।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

2. नये बैंक की स्थापना की इच्छुक कम्पनी या व्यक्ति को कम से कम 10 वर्ष के कारोबार का अनुभव।
3. कम्पनी का प्रर्वतक भारतीय और ईमानदार छबि वाला होना चाहिए।
4. आवश्यकता पड़ने पर बैंक नियंत्रण भारतीय रिजर्व बैंक को अपने हाथ में लेने का अधिकार।
5. निजी बैंक में निवेश की सीमा 10 प्रतिशत से बढ़ाकर 26 प्रतिशत तक।
6. बैंक के निदेशक मण्डल में विदेशी नागरिक शामिल हो सकते हैं।
7. सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको को आवश्यकतानुसार अपनी आधार पूंजी घटाने या बढ़ाने का अधिकार।
8. सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक पूंजी प्राप्त करने के लिए बोनस शेयर और राईट इश्यू जारी कर सकेगें।
9. सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में निवेशकों का वोटिंग अधिकार एक प्रतिशत से बढ़ाकर 10 प्रतिशत तक किया गया।
10. किसी भी बैंक में पांच प्रतिशत या इससे अधिक शेयर लेने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक की अनुमति जरूरी।
11. भारतीय रिजर्व बैंक कुछ विशेष बैंको के लिए नगद सुरक्षित अनुपात (सीआरआर) का निर्धारण कर सकता हैं।
12. भारतीय रिजर्व बैंक के निर्देशन में जमाकर्ता शिक्षण एवं जागरूकता कोष का गठन होगा।
13. भारतीय रिजर्व बैंक, सहकारी बैंक के लिए और विशेष सहकारी बैंक के लिए नगद सुरक्षित अनुपात (सीआरआर) का निर्धारण कर सकता हैं।

बैंकिंग द्वारा वित्तीय समायोजन – नये बैंकिंग कानून में भारतीय बैंकों के सामने आने वाली चुनौतियों को ध्यान में रखकर उन्हें अधिक स्वतंत्र और सक्षम बनाने का प्रयास किया गया है। इसके लिए निवेशकों की भागीदारी बढ़ाई गई है तथा बैंकों को अधिक अधिकार दिए गए हैं। वर्तमान में भारतीय बैंकों के समक्ष एक व्यापक चुनौती विशाल जनसंख्या के वित्तीय समायोजन की है। सरकार को अपनी कल्याणकारी योजनाओं को लागू करने के लिए बैंकों की सहायता की आवश्यकता है। सरकार का लक्ष्य देश में बैंकिंग सेवा तथा व्यवसाय को सशक्त बनाना है। सरकार पूरे देश में वित्तीय समायोजन करना चाहती है। इसके लिए वर्तमान सार्वजनिक बैंकों की मजबूती एवं निजी बैंकों की सहभागिता आवश्यक है। इसके लिए बैंकों की नई शाखाएँ खोली जाएगी। जिससे रोजगार के नये अवसर उत्पन्न होगें। सरकार द्वारा मनरेगा का भुगतान बैंकों के जरिये किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त प्रत्यक्ष लाभ अंतरण योजना का क्रियान्वयन भी बैंकों के द्वारा होगा। सरकार द्वारा छात्रवृत्तियों, पेंशन, वेतन आदि का भुगतान बैंक खातों के जरिये किया जाता है। हाल ही में प्रांरभ की गई प्रधानमंत्री जन धन योजना भी बैंकों के द्वारा वित्तीय समायोजन की अगली कड़ी है। इस योजना के तहत 7.5 करोड़ परिवारों के लिए बैंक खाते खोलने का लक्ष्य रखा गया है। इसके लिए आवश्यक है कि देश के प्रत्येक हिस्से में बैंकों की पहुँच हो तथा प्रत्येक व्यक्ति का बैंक खाता हो।

जून 2012 तक वित्तीय समायोजन (बैंकिंग)

1.	बैंकों की कुल शाखाएँ	99,771
2.	ग्रामीण क्षेत्रों में शाखाएं	37,471
3.	2000 से अधिक आबादी वाले गांवों में बैंकिंग सेवा	1,13,173
4.	2000 में कम आबादी वाले गांवों में बैंकिंग सेवा	74,855
5.	जीरो बैलेंस बैंक खातों की संख्या	14.79 करोड़
6.	जीरो बैलेंस खातों में जमा कुल रकम	11.93 अरब
7.	बिजनेस कोरेसपोंडेस के जरिये बैंकिंग	1,47,167

स्त्रोत – भारतीय रिजर्व बैंक।

तालिका से स्पष्ट है कि वित्तीय समायोजन में बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

भारत बैंकिंग की चुनौतियाँ – अंतर्राष्ट्रीय मानको के अनुसार बेसल –III के मापदण्डों पर खरा उतरना भारतीय बैंको के लिए एक चुनौती है। इसके लिए भारतीय बैंकों को पूँजी आधार बढ़ाने की आवश्यकता पड़ेगी। बैंको के लिए पूँजी जुटाने के नियम उदार बनाये गये हैं। बैंकों में विदेशी निवेश के रास्ते भी खोले गए हैं। गैरनिष्पादित परिसंपत्तियों का प्रबंधन भारतीय बैंकों की एक अन्य बड़ी समस्या है। बैंको की नई शाखाएँ खोलना भी एक चुनौती है। बैंकों को अपने ऋण संबंधी नियमों को सुधारने की आवश्यकता है। नये बैंकिंग कानून लागू होने के बाद भारतीय बैंकिग क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा में वृद्धि होगी। इससे सहकारी बैंको तथा ग्रामीण बैंकों के लिए कठिनाईयाँ बढ़ सकती है क्योंकि ये बैंक सामाजिक उद्देश्यों को प्राथमिकता देते है। इन बैंकों का निजी बैंकों की प्रतिस्पर्धा में टिकना असंभव है। तकनीकी रूप से भारतीय बैंकों को मजबूत करना भी एक चुनौती है। सहकारी तथा ग्रामीण बैंकों की तकनीकी ताकत कम है। बड़े तथा व्यावसायिक बैंक विश्व स्तर के नहीं हैं। आबादी का एक का बड़ा हिस्सा बैंकिंग सेवाओं से वंचित हैं।

निष्कर्ष – भारतीय बैंकिंग व्यवसाय का भविष्य उज्जवल दिखाई देता है। इसमें विस्तार की अपार संभावनाएँ मौजूद हैं। भारतीय रिजर्व बैंक के आर्थिक समावेश के संचालन के कारण बैंक खातों की संख्या 2011–13 के दौरान लगभग 10 करोड़ तक बड़ी है। आज 22.9 करोड़ बैंक खाते हैं। वर्तमान में 1,15,082 बैंक शाखाओं का नेटवर्क तथा 1,60,055 एटीएम नेटवर्क हैं। इनमेंसे 43,962 शाखाएँ तथा 23,334 एटीएम ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। इस ग्रामीण बैंकिंग ढ़ाँचे का निर्माण भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा बैंकों को यह निर्देश देने के बाद प्रांरभ हुआ कि सभी बैंकों को अपनी कुछ निश्चित शाखाएँ व एटीएम गाँवों में भी खोलने होंगे। आज भी कई गाँवों में बैंक की शाखा नहीं है अत: वित्तीय समावेशन के सही क्रियान्वयन के लिए मौजूदा बैंकिंग नेटवर्क को और विस्तारित करने की आवश्यकता है।

ये तभी संभव है जबकि भारतीय बैंक सामाजिक उद्देश्यों को ध्यान में रखकर कार्य करे। देश में ऐसे बैंकों की जरूरत है जो छोटे उद्योग–धंधों तथा कृषि के लिए पूँजी उपलब्ध करा सके। बैंकों का तकनीकी पक्ष मजबूत होना आवश्यक है तभी बैंकिंग व्यवसाय की लागत कम तथा लाभ अधिक होगा। बैंकों को अपने लाभ के साथ ही निवेशकों तथा ग्राहकों के हितों को भी ध्यान में रखना होगा तभी देश सतत् विकास की और अग्रसर हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय अर्थव्यवस्था – धनकड़ प्रकाशन, मेंरठ।
2. योजना 2013, 2014 (भारत सरकार का प्रकाशन)
3. मुद्रा एवं बैंकिंग – डॉ पी.डी. माहेश्वरी व डॉ शीलचन्द्र गुप्ता
4. इकोनॉमिक्स टाईम्स
5. योजना पत्रिका
6. दैनिक पत्रिका
7. नवभारत टाईम्स
8. इंडिया टूडे
9. विक्कीपीडिया

मध्यप्रदेश में श्रमिकों से सम्बन्धित कानूनों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. दीपाली बेहेरे *

प्रस्तावना – बीते दस वर्षों में मध्यप्रदेश का कायाकल्प हो गया है। कभी बीमारू और ओवर ड्राफ्ट लेने वाला प्रदेश अब देश के नक्शे पर अपनी शोहरत में चार चांद लगा रहा है। प्रदेश में पूंजी निवेश तथा औद्योगिक विकास पर सर्वाधिक ध्यान दिया जा रहा है ताकि प्रदेश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हो सके। इसलिये विश्वभर के उद्योगपतियों तथा देश के औद्योगिक घरानों को प्रदेश में पूंजी निवेश के लिये आमंत्रित तथा आकर्षित किया जा रहा है। प्रदेश में वर्ष 2005 से वर्ष 2012 के बीच तीन ग्लोबल इन्वेस्टर्स समिट आयोजित हो चुके हैं। हर दो साल में होने वाले इस औद्योगिक विस्तार आयोजन से प्रदेश में निवेश के 1751 प्रस्ताव मिले। इन 11065 अरब रुपये के प्रस्तावों में से 1060 अरब के 236 प्रस्तावों पर काम पूरा हो चुका है यह एक बड़ी उपलब्धि है। इतना ही नहीं 6099 अरब रुपये लागत के 1281 प्रोजेक्टस पर काम तेजी से चल रहा है। हाल ही में सम्पन्न ग्लोबल इन्वेस्टर्स समिट को देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने संबोधित किया है, उन्होंने मध्यप्रदेश को दृढ़ इरादों वाला तथा तरक्की की दौड़ में तेजी से अग्रसर राज्य बताया है।

मध्यप्रदेश में विकास की गति को निरंतर बनाये रखने में श्रम और रोजगार की महत्वपूर्ण भूमिका है। किसी भी प्रदेश की जनसंख्या को उपलब्ध रोजगार और श्रम के आधार पर ही प्रगति एवं समृद्धि का अनुमान लगाया जा सकता है। मध्यप्रदेश की मौजूदा श्रम नीति जिन अधिकारों का संरक्षण करती है उसके अनुसार संघ बनाने की स्वतंत्रता, कारखानों, खदानों तथा जोखिम युक्त नियोजनों में बालश्रम का निषेध, पुरुषों और महिलाओं को समान कार्य के लिये समान वेतन कामगारों के स्वास्थ्य और शक्ति की तथा बच्चों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से रक्षा काम की न्याय संगत और मानवोचित दशाओं और प्रसूति सहायता हेतु उपबंध, सभी कामगारों के लिये निर्वाह मजदूरी आदि सुनिश्चित किया जाना और उद्योग के प्रबंध में कामगारों की भागीदारी आदि शामिल है :–

म.प्र. की श्रम नीति – म.प्र. में श्रमिकों एवं विशेष रूप से असंगठित श्रमिकों के हितरक्षण तथा उद्योगों के विकास को दृष्टिगत रखते हुए नवीन श्रम नीति तैयार की गई है जिसकी घोषणा मुख्यमंत्री कर चुके हैं। इस श्रम नीति में असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों की सामाजिक सुरक्षा कल्याणकारी गतिविधियों तथा असंगठित क्षेत्र में औद्योगिक शांति बनाये रखते हुए नवीन उद्योगों की स्थापना और श्रम विभाग के सुदृढ़ीकरण पर विशेष जोर दिया गया है। संविधान के उपर्युक्त प्रावधानों के अनुसरण में अनेक श्रम कानून बनाये गये हैं इनमें से म.प्र. के लिये महत्वपूर्ण श्रम कानून इस प्रकार है –

1. **औद्योगिक संबंध विषयक कानून –** इसके तहत औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947, म.प्र. औद्योगिक संबंध अधिनियम 1960, औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946, म.प्र. औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1961, व्यवसाय संघ अधिनियम 1926 आदि आते हैं।
2. **मजदूरी संबंधी कानून –** इसके तहत मजदूरी भुगतान अधिनियम 1936, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948, बोनस भुगतान अधिनियम 1965 आते हैं।
3. **औद्योगिक स्वास्थ्य एवं सुरक्षा संबंधी सामान्य कानून –** इसके तहत कारखाना अधिनियम 1948, पर्यावरण अधिनियम 1966, विशेषत: उसके अंतर्गत बनाये गये परिसंकटमय रसायनों का विनिर्माण भंडारण एवं आयात अधिनियम 1989, एवं रासायनिक दुर्घटना नियम 1996, खतरनाक मशीन अधिनियम 1983, इत्यादि आते हैं।
4. **विशिष्ट प्रकार के नियोजनों में कार्यदशाओं के विनियम संबंधी कानून –** इसके तहत मध्यप्रदेश दुकान एवं स्थापना अधिनियम 1938, बीड़ी तथा सिगार कर्मकार अधिनियम 1966, ठेका श्रम अधिनियम 1970, मोटर वाहन कर्मकार अधिनियम 1961, भवन एवं अन्य संनिर्माण कर्मकार अधिनियम 1979, विक्रय संवर्धन कर्मचारी अधिनियम 1976, श्रमजीवी पत्रकार और अन्य समाचार पत्र कर्मचारी और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम 1955, सिने कर्मकार तथा सिनेमागृह कर्मकार अधिनियम 1981, शामिल हैं।
5. **महिला समानता एवं सशक्तिकरण संबंधी कानून –** इसके तहत मातृत्व हित लाभ अधिनियम 1961, और समान परिश्रामिक अधिनियम 1976 शामिल हैं।
6. **श्रमिकों के कमजोर वर्गों से संबंधित कानून –** इसके तहत बंधित श्रम पद्धति अधिनियम 1976, बालश्रम अधिनियम 1986, बाल अधिनियम 1933 शामिल है।
7. **सामाजिक सुरक्षा संबंधी कानून –** इसके तहत कर्मकार क्षतिपूर्ति अधिनियम 1923, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948, कर्मचारी भविष्य निधि और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम 1952, उपादान भुगतान अधिनियम 1972, शामिल हैं।
8. **श्रम कल्याण निधियों संबंधी कानून –** इसके तहत बीड़ी कर्मकार कल्याण निधि अधिनियम 1976, लौह अयस्क, मैगनीज अयस्क तथा क्रोम अयस्क खान, कर्मकार कल्याण निधि अधिनियम 1976, मप्र श्रम कल्याण निधि अधिनियम 1982, म.प्र. स्लेट पेंसिल कर्मकार कल्याण निधि अधिनियम 1982, शामिल हैं।

श्रम कल्याण – प्रदेश के अनेक औद्योगिक नगरों में वहाँ कार्यरत श्रमिकों के बच्चों के लिये कई श्रम कल्याण केन्द्र कार्यरत हैं जिनमें मुख्यत: वाचनालय, मनोरंजन सांस्कृतिक गतिविधियों, खेलकूद का संचालन किया जाता है कुछ

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) कैरियर कॉलेज, भोपाल (म.प्र) भारत

केन्द्रों पर महिलाओं के लिये सिलाई व कढ़ाई तथा प्रौढ़ शिक्षा का प्रबंध किया गया है।

ग्रामीण श्रमिकों के लिये न्यूनतम मजदूरी – दिनांक 14 सितम्बर 1989, से कृषि श्रमिकों के लिये पुनरीक्षित वेतन निर्धारित किया गया है। इसके तहत अकुशल श्रमिकों को वर्तमान में रुपये 5350.00 प्रतिमाह या रुपये 178 प्रतिदिन अक्टूबर 2014 से मार्च 2015 तक देय है, इसके अलावा कृषि नियोजनों को उपभोक्ता मूल्य सूचकांक में वृद्धि होने के कारण समय-समय पर पुनरीक्षित वेतन का लाभ प्राप्त होता है।

इन्दिरा कृषि श्रमिक दुर्घटना क्षतिपूर्ति योजना – इस योजना के तहत कृषि श्रमिकों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान की दृष्टि से दुर्घटना होने पर क्षतिपूर्ति देने का प्रावधान है इसके तहत दुर्घटनाग्रस्त कृषि श्रमिक का एक अंग भंग होने या मृत्यु होने की स्थिति में 30 हजार तथा दोनों अंग भंग होने पर रुपये 15.00 हजार की आर्थिक सहायता क्षतिपूर्ति के रूप में स्वयं श्रमिक को या उसके उत्तराधिकारी को प्रदान की जाती है। इस योजना का वर्तमान में दायित्व पंचायतों को सौंप दिया गया। वर्ष 2010-11 हेतु कुल 34.81 लाख का आवंटन प्राप्त हुआ था जिसके विरुद्ध 33.81 लाख का व्यय किया जा चुका है।

बीड़ी श्रमिक आवास योजना – राज्य में बीड़ी श्रमिकों के आवास गृहों के निर्माण की यह योजना वर्ष 1995 एवं 1997 से केन्द्र सरकार के सहयोग से चलाई जा रही है, सागर में 911, दमोह में 889, छतरपुर में 342 टीकमगढ़ में 180 तथा पन्ना जिले में 124 आवासगृहों का निर्माण कार्य पूर्ण हो चुका है।

बीड़ी श्रमिकों के आवास हेतु बीड़ी कर्मकार कल्याण निधि से 1 अप्रैल 2007 से रुपये 40,000- का अनुदानआर्थिक सहायता दी जाती है तथा 5000- कामगार का अंशदान होगा। अनुदान या अंशदान के अतिरिक्त शेष राशि कामगार द्वारा या अपने स्वयं के वित्तीय संस्थानों से ऋण के रूप में वहन करनी होगी।

बीड़ी श्रमिकों की शिक्षा – बीड़ी श्रमिकों के अध्ययनरत पुत्र-पुत्रियों को कक्षा 5 से लेकर स्नातकोत्तर, इंजीनियरिंग, मेडिकल पाठ्यक्रमों तक में अध्ययन हेतु रुपये 500 से 8000 तक वार्षिक दर से ही की जाती है तथा यूनिफार्म तथा कक्षा 1 से 4 तक रुपये 250 वार्षिक सहायता दी जाती है।

श्रमजीवी पत्रकार और अन्य समाचार पत्र कर्मचारी और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम 1955 – भारत सरकार ने उक्त अधिनियम के अन्तर्गत प्रसारित अधिसूचना दिनांक 15-12-2000 द्वारा श्रमजीवी पत्रकारों एवं गैर पत्रकारों के संबंध में मानिसाना वेतन मण्डल की अनुशंसाऐं श्रेणी तीन एवं इससे ऊपर के समाचार पत्र संस्थानों के लिए 1 अप्रैल 1998 से, श्रेणी चार एवं पाँच के लिये 1 जून 1999 से तथा श्रेणी छः से नौ तक के लिये 1 अप्रैल 2000 से प्रभावशाली की हैं मानिसाना वेतन मण्डल की अनुशंसाओं के क्रियान्वयन हेतु समाचार पत्र संस्थानों वर्गीकरण वर्ष 1995-96, 1996-97 एवं 1997-98 के औसत सकल राजस्व के आधार पर किया जाना है।

श्रमिकों के लिये न्यूनतम वेतन की दरें – राज्य सरकार द्वारा अक्टूबर 2014 से मार्च 2015 तक 35 नियोजनों में कार्यरत श्रमिकों के लिये न्यूनतम मजदूरी की दरें निर्धारित की गई हैं जो वर्तमान में इस प्रकार हैं :-

1. अकुशल श्रमिक रुपये 5939- प्रतिमाह या रुपये 228- प्रतिदिन।
2. अर्द्धकुशल श्रमिक रुपये 7057- प्रतिमाह या रुपये 271- प्रतिदिन।
3. कुशल श्रमिक रुपये 8435- प्रतिमाह या रुपये 324-प्रतिदिन।

इसके अतिरिक्त एक अन्य श्रेणी तकनीकी श्रमिकों के लिये निर्धारित की गई है जिसे उच्च कुशल श्रेणी कहा गया है। इसमें रुपये 9735- प्रतिमाह या रुपये 374- प्रतिदिन न्यूनतम मजदूरी निर्धारित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था मिश्रा एवं पुरी
2. मध्यप्रदेश विकास वार्षिकी 2013 संपादक रामभुवनसिंह कुशवाह
3. श्रम कल्याण मासिक नवम्बर 2014 संपादक डॉ.दिलीप बेहेरे
4. योजना पत्रिका
5. श्रमिक कानून एवं प्रबंध

प्रदेश में पंजीकृत कारखानों एवं स्थानाओं की जानकारी

वर्ष 2011-12

क्र	अधिनियम का नाम	पंजीयत संस्थानों की संख्या	ठेका श्रम अधिनियम के अन्तर्गत अनुज्ञप्ति प्राप्त ठेकेदारों की संख्या	श्रमिक/कर्मचारियों की संख्या जो अनुज्ञप्ति/पंजीयन प्रमाण पत्र में उल्लेखित है।
1.	कारखाना अधिनियम 1948	14456	-	77512
2.	मप्र.दुकान एवं स्थापना अधिनियम 1970	47683	-	203053
3.	ठेका श्रम (विनियमन और उपादान) अधिनियम	1578	5433	294116
4.	मोटर परिवहन कर्मकार अधिनियम 1961	4290	-	33208
5.	बीड़ी एवं सिगार कर्मकार अधिनियम 1966	351	-	74343

****

गाँधीजी का आर्थिक चिन्तन (ग्रामीण विकास के विशेष संदर्भ में)

डॉ. निशा मिश्रा *

शोध सारांश – महात्मा गाँधी का आर्थिक दर्शन और चिन्तन आज भी उतना महत्वपूर्ण है। जितना 50 वर्ष पूर्व था यही कारण है कि आज भारत ही नहीं बल्कि अमेरिका और यूरोप में भी गाँधीजी के आर्थिक दर्शन की पुनर्खोज जारी है। गाँधीजी ने हिन्द स्वराज नामक पुस्तक में 1909 में लिखा था कि भारत को अंग्रेजों से नहीं अंग्रेजी राज्य की कुरीतियों से मुक्त कराना चाहते थे। गाँधीजी के नेतृत्व में चले 33 वर्ष लम्बे स्वतंत्रता संग्राम में स्वराज की परिभाषा कभी भी राजनीतिक आजादी तक सीमित नहीं रहा उनका मूल उद्देश्य था प्रत्येक भारतीय को आर्थिक, सामाजिक एवं नैतिक आजादी दिलाना था जिससे एक अहिंसक, शोषण मुक्त व समृद्ध समाज का निर्माण हो सके। गाँधीजी के अनुसार आर्थिक समता ही अहिंसक समाज की मूल कुंजी है। अर्थात थोड़ से समृद्ध लोगों और लाखों निर्धनों के बीच की गहरी खाई को भरना आवश्यक है। गाँधीजी के आर्थिक विचार 'स्वराज' की प्राप्ति आर्थिक सामाजिक व नैतिक स्वतंत्रता जीतने पर ही प्राप्त होगी।

एडम स्मिथ, कार्लमार्क्स व केन्स के अकादमिक आर्थिक सिद्धान्तों से परे हटकर गाँधीजी ने ऐसे मार्गदर्शक सिद्धान्तों का विकास किया जो नैतिक अहिंसक, सम्यक व टिकाऊ समाज का निर्माण कर सके।

प्रस्तावना – भारत देश गाँवों का देश है। गाँवों की प्रगति ही सही अर्थों में देश की प्रगति है। भारत की 75 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती है जिसमें से 69.5 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी हुई है। वर्तमान भारत में 57,57,137 आबाद एवं 48,087 गैर आबाद गाँव है। गाँधीजी के अनुसार गाँव की तरक्की के बिना देश की तरक्की की कल्पना बेइमानी होगी, उन्होंने विकास की धारा गाँवों से आरम्भ करने पर बल दिया था। आज भारत में अनेक समस्यायें विद्यमान हैं जैसे बिजली, पानी का अभाव, कम उत्पादकता, बेरोजगारी, निर्धनता, जिन्हें ग्रामीण विकास द्वारा ही हल किया जा सकता है। अत: भारत के सन्दर्भ में ग्रामीण विकास की महत्ता अनिवार्य है। भारत में असंतुलित आर्थिक विकास की स्थिति दिखाई देती है। समाज में एक और अमीर वर्ग तो दूसरी ओर एक ऐसा वर्ग जो अपनी दैनिक आवश्यकताएं भी दिनभर मेंहनत करके भी पूरी नहीं कर पाता है। अत: ग्रामीण विकास वास्तव में ग्राम स्वराज्य को पूर्ण करने का अहम साधन है। गाँधीजी ग्रामीण विकास को राष्ट्र के विकास की कुंजी मानते थे। ग्रामीण विकास ग्रामीण क्षेत्र में निवासित अधिकांश निर्धन जनसंख्या के रहन–सहन में सुधार एवं उसको आत्मनिर्भर बनाने की प्रक्रिया है।

गाँधीजी के ग्रामीण विकास हेतु आर्थिक विचार – गाँधीजी के आर्थिक विचारों की कोई निश्चित योजना नहीं है। वे अर्थशास्त्र को भी जीवन का अंग मानते थे, इसलिए उनका जीवन दर्शन अध्यात्मिक एवं नैतिक मान्यताओं पर आधारित है। उनका मानना था कि आर्थिक क्रियाओं के नैतिक एवं सामाजिक परिणामों का अध्ययन अर्थशास्त्र से अलग रखकर नहीं किया जा सकता है उनके लिए भौतिकवाद का कोई महत्व नहीं था।

गाँधीजी ने संपूर्ण स्वराज्य की कल्पना के संदर्भ में ग्रामीणों की समस्या को बहुत करीब से देखा व समझा था। गाँधीजी ने कहा था उस आजादी का कोई मूल्य नहीं है जिसमें सबसे पीड़ित और सबसे कमजोर को मुक्ति न मिले और वह यह न महसूस करे कि यह आपका देश है। गाँधीजी ने ग्राम स्वराज्य को महत्व देते हुए कहा था कि अपने पैरों पर खड़े हुए बिना देहाती सुखी न बन सकेंगे इसलिए वे ग्रामीणों को अपने पैरों पर खड़े होने पर बल देते थे। उनके ग्रामीण विकास हेतु निम्न विचार थे –

1. **पंचायतीराज के माध्यम से ग्रामों का विकास –** गाँधीजी पंचायती राज के माध्यम से ग्रामों का विकास कर आत्मनिर्भर बनाना चाहते थे उन्होंने हरिजन में लिखा 'स्वतंत्रता नीचे से आरम्भ होनी चाहिए इस प्रकार प्रत्येक गाँव एक गणराज्य व पंचायती राज हो व आत्मनिर्भर हो जिससे अपनी आवश्यकता स्वयं पूरी कर सके गाँधीजी ग्रामीणों की आवश्यकताओं को पूरा करने पर बल देते थे। उनका कहना था भारत के गाँवों में ग्राम पंचायतों को पुनर्जीवित कर ग्राम स्वराज्य की स्थापना की जाये जब तक वास्तविक शक्ति गाँव के लोगों के पास न होगी वे अपना पूर्ण विकास नहीं कर पायेंगे। उन्होंने हरिजन में 22 जुलाई 1948 में स्वतंत्र भारत के गाँवों की उपमा मीनार से न देकर समुद्र से दी जहाँ एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर खड़ा नहीं होगा वरन सभी व्यक्ति समान होंगे। वहाँ व्यक्ति का संपूर्ण विकास समष्टि को सबल व समृद्ध बनायेगा।
2. **सादा जीवन स्वीकार करना –** ग्रामीण विकास के बारे में गाँधीजी की मान्यता थी कि ग्रामीण लोगों को विलासिता से दूर रहकर सरल जीवन स्वीकार करना चाहिए। गाँधीजी की कल्पना थी कि हर गाँव एक पूर्ण प्रजातंत्र होगा जो अपनी आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसी देशों पर निर्भर नहीं करेगा। उन्होंने 1945 में नेहरू जी को पत्र में लिखा था मेरी दृढ़ मान्यता है कि अगर भारत को सच्ची आजादी प्राप्त करनी है और भारत के जरिये संसार को भी अपने पीछे समझ लेना होगा कि भारत की जनता को गाँवों में रहना है शहरों में नहीं झोपड़ियों में ही रहना है महलों में नहीं। गाँवों की दयनीय स्थिति पर चेतावनी देते हुए 29 जनवरी 1948 के महत्वपूर्ण भाषण में कहा था 'भारत को अपने चन्द शहरों व कस्बों से मिलाकर सात लाख गाँवों के संदर्भ में सामाजिक, नैतिक व आर्थिक आजादी तभी हासिल होगी। देश का सही व संतुलित विकास इन लाखों गाँवों के बुनियादी विकास पर ही निर्भर है। गाँधीजी के ग्रामीण विकास के लिए विकेन्द्रित अर्थनीति सामुदायिक कृषि

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

विकास, लघु कुटीर उद्योग के विकास को प्रधानता दी, उन्होंने चरखे को आजीविका का साधन व श्रम की प्रतिष्ठा का प्रतीक माना है ताकि लोगों की स्वाभाविक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध होनी चाहिए।

3. ग्रामीण निर्धनता को दूर करना – गाँधीजी समान वेतन के क्रांतिकारी सिद्धान्त का समर्थन करते थे उन्होंने ग्रामीण निर्धनता को दूर करने के लिए सर्वोपरि महत्व दिया उनका विश्वास था कि देश की गरीबी को दूर कर राष्ट्र की उन्नति करनी है तो उसका प्रारम्भ गाँव में रहने वाले कृषकों और उनके मुख्य व्यवसाय कृषि के विकास से आरम्भ करना होगा। वे कृषि को राष्ट्र विकास की कुंजी मानते थे। वे जमींदारों व जागीरदार प्रथा के विरोधी थे उनका मत था कि कृषकों व खेतिहर मजदूरों को खेती का मालिक बनाया जाये भूमि उसी की है जो उसे जोतता है। वे संतुलित व नियोजित कृषि के समर्थक थे कृषकों की ऋणग्रस्तता दूर करने के लिए सहकारी साख व्यवस्था होनी चाहिए।

4. ग्रामीण सर्वोदय उनका महान आदर्श – गाँधीजी का ग्रामीण सर्वोदय उनका महान आदर्श था प्राचीन ग्रामीण समुदायों की फिर से स्थापना की जाय क्योंकि सर्वोदय समाज में श्रमिक व किसान अपनी संस्थाओं व संघों द्धारा ग्रामीण उद्योगों का विकास करेंगे। इससे ग्रामीण समुदाय में आर्थिक समानता आयेगी। समृद्धशाली कृषि, विकेन्द्रित उद्योग एवं छोटे पैमाने के सहकारी संगठन बने प्रत्येक ग्राम स्वावलम्बी गणतन्त्र बने एक आदर्शग्राम में व्यवस्थित ढाँचा, अस्पताल, भोजन वस्त्र की पूर्ति, फलों के पेड़, स्वच्छ सड़कें, नालियां, पेयजल व्यवस्था, सभा भवन, स्कूल खेल का मैदान, पशुशाला, सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था होनी चाहिए। ग्रामीण प्रशासन की पूरी तरह अधिकार सम्पन्न पंचायतों द्धारा संचालित हो।

5. आर्थिक विकेन्द्रीकरण एवं लघुकुटीर उद्योग – गाँधीजी आर्थिक विकेन्द्रीकरण एवं लघु कुटीर उद्योगों के समर्थक थे कि सभी आवश्यक वस्तुओं के संदर्भ में गाँव आत्मनिर्भर बने जिससे बेरोजगारी की समस्या कुछ हद तक कम हो सके। ऐसे गाँवों पर ध्यान केन्द्रित किया जाये तो आवश्यक वस्तुओं का निर्माण कर सके। उत्पादन विकेन्द्रीयकरण से करोड़ों लोग कुछ इने गिने लोगों के दास बन जाते हैं। इसलिए आवश्यक है इससे राजनैतिक सत्ता का भी केन्द्रीकरण होता है। इसलिए आवश्यक है लघु उद्योग स्थापित है घरों में छोटी-छोटी इकाईयाँ स्थापित की जाये वे कुटीर व ग्रामीण उद्योगों के पक्षधर थे। 1934 में हरिजन सेवक में उन्होंने कहा था दरअसल बात यह है कि आज प्रत्येक मिल सामान्यत: गाँवों की जनता के लिये कामरूप हो रही है। उनकी रोजी-रोटी पर मायाविनी मिलें छाया डाल रही है। गाँवों में जहाँ 10 मजदूर काम करते हैं। उतना ही काम मिल में एक मजदूर करता है। 10 व्यक्तियों की रोजी छीनकर मिल में काम करने वाला एक आदमी गाँव में जितना कमाता था उससे अधिक कमा रहा है। इस तरह कटाई, बुनाई की मिलों में गाँव के लोगों की जीविका का बड़ा भारी साधन छीन लिया है।

6. ग्रामोद्योग का समर्थन – गाँधीजी ने ग्रामोद्योग का कट्टर समर्थन किया वे आर्थिक केन्द्रीयकरण, बृहत औद्योगीकरण एवं मशीनीकरण के विरूद्ध थे। इनके अनुसार सस्ते बाजार से खरीदकर मंहगे बाजार में बेचना अर्थशास्त्र का सबसे अमानवीय सिद्धान्त है मानव जीवन मुद्रा से अधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए उन्होंने भारी उद्योगों एवं मशीनों का विरोध किया मशीने मानव मूल्यों को भुलाकर मानवजाति को पतित करती है। उन्होंने यह स्वीकार किया कि मशीन वहाँ तक ठीक है जहाँ तक वह मानव की सहायिका है। गाँधीजी का मानना था कि भारत की प्राचीन विधियों के प्रयोग से लाखों ग्रामीणों को रोजगार मिलेगा। भारत में श्रम की प्रचुरता व पूंजी की दुर्लभता है। इसलिए कुटीर उद्योगों का विकास आवश्यक है। जीवन के अन्तिमचरण में गाँधीजी ने कहा था कोई भी मशीन जो मनुष्यों को श्रम के अवसरों से वंचित नहीं करती वरन मनुष्यों को सहायता पहुँचाकर उनकी कार्यक्षमता बढ़ाती है और जिसका संचालन मनुष्य बिना दास बन कर रहता है उन्हें प्रोत्साहन दे। वे ऐसी मशीनों के पक्ष में थे जो कि देहातों में प्रतिस्थापित हो सके, जिससे निर्धन ग्रामीणों का बोझ कम हो। गाँधीजी ग्रामोद्योग की वस्तुओं के अनुरूप वातावरण तैयार करना चाहते थे। उनका मानना था कि अग्रणी लोग इन चीजों के इस्तेमाल में पहल करेंगे तो बाकी लोग भी इनका इस्तेमाल करेंगे खादी एक जीता जागता उदाहरण है।

7. ग्रामीण शिक्षा को महत्व – गाँधीजी ने ग्रामीण शिक्षा को ग्रामीण विकास में अध्य स्थान दिया था। शिक्षा मनुष्य के मानसिक, सामाजिक स्तर का निर्धारण करती है। गाँधीजी ने कहा था शिक्षा से मेंरा तात्पर्य यह है बच्चों व व्यस्कों का शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक रूप से पूरा विकास हो। वास्तव में शिक्षा का देना निर्बाध दुरूपयोग पिछले दशकों में हुआ है। बच्चों के मन में संकीर्णता, लापरवाही अनिश्चितता के साँचे में ढालने का दूर-दूर तक जड़ें जमाने वाला व्यापार बन गया है। आज शिक्षा को गाँवों तक ले जाकर उसे ग्रामीण वातावरण में विकसित करना होगा। हमारे देश में अशिक्षा को दूर करने के लिए गाँव में शहरी ढर्रे का स्कूल खोल देते हैं। ऐसी समस्या को सुलझाने हेतु बुनियादी शिक्षा योजना प्रस्तुत की थी। 1937 में वर्धा में राष्ट्रीय सेवकों के सम्मेलन में चार प्रस्ताव स्वीकृत किये जिन्हें बुनियादी शिक्षा का मुख्य अंग कह सकते हैं :-

1. सात वर्षीय नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा
2. शिक्षा का माध्यम मातृभाषा
3. उद्योग के आधार पर शिक्षा व्यवस्था
4. स्वावलम्बन पर आधारित शिक्षा

गाँधीजी की बुनियादी शिक्षा के सम्बन्ध में शिक्षा विशेषज्ञों की यह आपत्ति थी कि इसमें 7 वर्ष से कम आयु के बालकों के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। इसे दूर करने गाँधीजी ने सम्पूर्ण जीवन की शिक्षा का रूप दिया व 1945 में सेवाग्राम में उन्होंने घोषित किया बुनियादी शिक्षा का क्रम जन्म से मृत्यु पर्यन्त रहेगा जिसके चार भाग हैं –

1. पूर्ण बुनियादी
2. बुनियादी
3. उत्तर बुनियादी
4. प्रौढ़ शिक्षा

निष्कर्ष – सारांश रूप में कह सकते हैं कि गाँधीजी ग्रामीण विकास को प्राथमिक महत्व देना, सभी की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति करना, निर्धनता दूर करना, ग्रामोद्योग को प्रोत्साहन, ऋण ग्रस्तिता को दूर करना, भूमि पर जोतने वालों को अधिकार मिलना आदि का समर्थन करते रहे हैं। किन्तु स्वतंत्रता के पश्चात हमने गाँधीवादी दृष्टिकोण को मूलत: नहीं अपनाया यद्यपि कृषि के क्षेत्र में हमें आत्मनिर्भरता प्राप्त हुई है। किन्तु वास्तविक रूप से आज भी ग्रामीण समाज का पूर्णत: विकास नहीं हो पाया। क्योंकि विकास की सारी सुविधायें कुछ लोगों के हाथों में सिमटकर रह गई है। इस सम्बन्ध में किसे शंका हो सकती है कि हमारे प्रशासन तंत्र का झुकाव व लगाव किस ओर है। विज्ञान एवं तकनीकी के इस युग में असमानता की खाई का लगातार बढ़ना, मंहगाई बेरोजगारी में वृद्धि, मूलभूत आवश्यकताओं की कमी के बीच कस्बों का शहर में व शहरों का महानगरों में बदलना महानगरों में उगती हुई

झोपड़ पट्टियाँ, पर्यावरण की विकराल समस्या, नैतिक मूल्यों में गिरावट, गाँवों से शहरी में पलायन, शहरी में बढ़ती जनसंख्या, शिक्षित बेरोजगारों के भयावह आंकड़े चिन्ता का विषय है।

आज आवश्यकता है इस बात की है हमारी सरकार विकास योजनायें लागू कर उन्हें क्रियान्वयन में जनता की भागीदारी अधिक से अधिक हो तभी ये योजनाएं अपने उद्देश्य में सफल हो सकती हैं। भारत में ग्रामीण विकास की समस्त सरकारी योजनाएं सामुदायिक विकास पंचायतीराज, भूमि सुधार, समन्वित विकास आदि अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में असफल रही है। विकास योजना का लाभ निम्नवर्गीय कृषकों व मजदूरों को नहीं मिल रहा है। गाँधीजी को यह पसंद नहीं था कि तकनीक के नाम पर मनुष्य को काम से व काम को मनुष्य से जुदा कर दिया जाये। अर्थव्यवस्था, कृषि व कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ाकर दिये बिना मजबूत नहीं हो सकती।

वास्तव में गाँधीजी के यथार्थवादी दृष्टिकोण को न केवल चीन, क्यूबा जैसे समाजवादी देशों ने अपनाया लेकिन गुन्नार मिर्डल जैसे पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों ने हमें घनी आबादीवाले पूर्वी एशियाई देशों के विकास का एक मात्र उपाय बताया लेकिन स्वयं भारत पश्चिमी देशों के आधुनिकीकरण व चमक-दमक में गाँधीजी के सपनों को साकार करने की अपेक्षा भुला बैठे हैं। अत: ग्रामीण विकास के लिये आवश्यक है कि गाँधीजी की अवधारण निश्चित करके ढाँचा बनाया जावे क्या यह उचित नहीं होगा ?

सुझाव -

- कृषि व कृषि संबंधी उद्यमों, पशुपालन, कृषिपूरक उद्योगों व उत्पादक व उत्पादनों में वृद्धि
- न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम को ग्रामीण क्षेत्रों व शहरी क्षेत्रों के साथ समन्वित किया जाय
- नगरीय व ग्रामीण बाजार व्यवस्था को पुनर्गठित किया जाय
- उपभोक्ता वर्ग को ग्रामोद्योग वस्तुओं के उपयोग के लिये वातावरण निर्मित कर प्रशिक्षित किया जाये
- शिक्षा को व्यवसायिक बनाया जाय जिससे ग्रामीण बेरोजगारी को दूर किया जा सके
- ग्रामीण विकास कार्यक्रम में आम लोगों की सहभागिता हो तथा राजनैतिक हस्तक्षेप नहीं हो
- सरकारी कर्मचारियों व अधिकारियों में देश प्रेम व त्याग की भावना हो

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. प्रभात भट्टाचार्य, गाँधी दर्शन पृष्ठ 207
2. हरिजन, मार्च 31, 1946
3. तिकनारायण हजेला, आर्थिक विचारों का इतिहास पृष्ठ 536
4. बी.सी.सिन्हा एवं जी.सी.सिंघई,आर्थिक विचारों का इतिहास पृष्ठ 483
5. प्रयास एवं सफलताएं, सूचना एवं प्रकाशन, म.प्र.शासन, भोपाल
6. मध्यप्रदेश पंचायिका, जनवरी 1998 एवं 2009
7. तरक्की की दिशा में हमारे गाँव, ग्रामीण सूचना सेवा प्रकाशन, भोपाल
8. चतुर्वेदी एवं चतुर्वेदी, आर्थिक विचारों का इतिहास
9. जीड एवं रिस्ट (हिन्दी अनुवाद) आर्थिक विचारों का इतिहास
10. प्रतापसिंह, गाँधी दर्शन व्यवहारिक अध्ययन

****

कृषि विकास द्वारा आर्थिक परिवर्तन के आयाम

राकेश कुमार गुप्ता *

शोध सारांश – कृषि हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के साथ-साथ विकास की जननी भी रही है। यह भौतिक महत्व के अलावा जीवन की एक प्रणाली है। जो कि मानवीय मूल्यों में अनुपम एवं अद्धितीय है। हमारे देश भारत की जीवन शक्ति का आधार ग्रामीण समाज है। देश की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या गांवों में निवास करते हुये राष्ट्रीय आय में करीब का 40% योगदान कर रही है। गांवों के विकास के बिना देश के विकास की कल्पना अधूरी है। ऐसा अनुमान है कि ग्रामीण क्षेत्रों में 90% व्यक्ति आय भी कृषि या कृषि सम्बधी व्यवसाय में ही निर्भर है। अत: कृषि को भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगीं।

हमारे देश में एक प्राचीन एवं प्रसिद्ध लोकोक्ति रही है। 'उत्तम खेती माध्यम बान अधम चाकरी भीख निदान' अर्थात् अर्थोपार्जन या व्यवसाय की दृष्टि से कृषि कार्य को उत्तम माना गया है। जबकि मध्यम श्रेणी का कार्य वाणिज्य था। व्यापार को अधमकारी कार्य माना गया है। तथा उपरोक्त तीनों में से कुछ भी न होने पर अंतत: जो कार्य बचता है वह शिक्षा दृष्टि है। इस लोकोक्ति को सिद्ध होता है। कि कृषि कार्य कितना महत्वपूर्ण तथा सम्मानजनक था परंतु आज की स्थिति में देश के विभिन्न राज्यों में किसान आत्महत्या करने हेतु मजबूर हो रहे है। जिनमे आत्महत्या की सर्वाधिक संख्या महाराष्ट्र मे रही है।'

कुंजी शब्द:। कृषि विकास, आर्थिक परिवर्तन, क्रान्ति, ज़मींदारी उन्मूलन, कास्तकारी प्रथा।

प्रस्तावना – कृषि हमारी सभ्यता एवं संस्कृति के साथ-साथ विकास की जननी भी रही है। यह भौतिक महत्व के अलावा जीवन की एक प्रणाली है। जो कि मानवीय मूल्यों में अनुपम एवं अद्धितीय है। हमारे देश भारत की जीवन शक्ति का आधार ग्रामीण समाज है। देश की लगभग तीन चौथाई जनसंख्या गांवों में निवास करते हुये राष्ट्रीय आय मे करीब का 40% योगदान कर रही है। गांवों के विकास के बिना देश के विकास की कल्पना अधूरी है। ऐसा अनुमान है कि ग्रामीण क्षेत्रों में 90% व्यक्ति आय भी कृषि या कृषि सम्बधी व्यवसाय में ही निर्भर है। अत: कृषि को भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ कहा जाये तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी।

हमारे देश में एक प्राचीन एवं प्रसिद्ध लोकोक्ति रही है। 'उत्तम खेती माध्यम बान अधम चाकरी भीख निदान' अर्थात् अर्थोपार्जन या व्यवसाय की दृष्टि से कृषि कार्य को उत्तम माना गया है। जबकि मध्यम श्रेणी का कार्य वाण्ज्यि था। व्यापार को अधमकारी कार्य माना गया है। तथा उपरोक्त तीनों में से कुछ भी न होने पर अतंत: जो कार्य बचता है वह शिक्षा दृष्टि है। इस लोकोक्ति को सिद्ध होता है कि कृषि कार्य कितना महत्वपूर्ण तथा सम्मानजनक था परंतु आज की स्थिति मे देश के विभिन्न राज्यों में किसान आत्महत्या करने हेतु मजबूर हो रहे है। जिनमे आत्महत्या की सर्वाधिक संख्या महाराष्ट्र में रही है।'

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ग्रामीण जीवन की दशा सुधारने व कृषि विकास हेतु अनेक कार्यक्रम व योजनाएँ क्रियान्वयन से एक निश्चित सीमा तक ग्रामीण अर्थव्यवस्था की धूरी कृषि मे आमूलचुल परिवर्तन लाने के लिए सरकार ने भूमि सुधार कार्यक्रम अपनाया। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य जमीदारों एवं जागीरदारों जैसे माध्यमों का अंत करना। काश्तकारों के काश्त की सुरक्षा करना व कृषि के अंतरण को सुनिश्चित करना था। काश्तकारी सुधार करने हेतु लगान नियमन काश्तकारों की बेदेखी से सुरक्षा व मालिकाना हक दिलाना जैसे कदम उठाये गये। इसी भॉति बढती जनसंख्या व कृषि पर बढ़ते दबाव के कारण जोतों का उपविभाजन व उपखंडन तीव्र गति से हो रहा है। खेतों का औसत आकार निरंतर कम होता जा रहा है।

कृषि विकास में वित्त की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुये सरकार ने किसानों को उचित ब्याज दरों पर सही समय पर ऋण उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिये। संस्थागत साख व्यवस्था को प्राथमिकता दी। इसी क्रम में सरकार ने सहकारी ऋण व्यवस्था बैंकों के राष्ट्रीयकरण, नाबार्ड व क्षेत्रीय ग्रामीण बैकों की स्थापना जैसे प्रभावी कदम उठाये। गौरतलब है कि 1950-51 में कृषि के लिये सहकारी साख का योगदान 31% था जो कि 2014 तक बढकर लगभग 50% से अधिक हो गया है। इसी प्रकार सहकारी कृषि साख भी लगभग 1,00,000 करोड रुपए वार्षिक तक पहुंच गया है। यही नहीं किसानों को आसानी से अल्पावधि ऋण उपलब्ध कराने के लिए वर्ष 1998-99 में किसान क्रेडिट योजना भी प्रारंभ की गई। नाबार्ड एवं स्व सहायता संगठनों के माध्यम से भी किसानों की आर्थिक स्थिति सुदृढ करने में प्रयासरत है।

गांवों में आधारभूत संरचना को सुदृढ करने के लिए नाबार्ड ने ग्रामीण आधारिक विकासखंड की स्थापना की जो कि राज्य सरकारो को इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु ऋण उपलब्ध कराने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इन सबका सामूहिक प्रभाव यह हुआ कि किसान महाजनों एवं साहूकारों के ऋण जाल से मुक्त हुए है। तथा उनके शोषण पर कुछ हद तक पाबंदी लग गई है। भारतीय कृषि मानसून पर आधारित होने के कारण जोखिम से परिपूर्ण है। इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए सरकार ने कृषि उत्पादों की कीमतों में गिरावट से होने वाली हानि से कृषकों को सुरक्षा कवच प्रदान करने के दृष्टिकोण से कृषि लागत एवं मूल्य आयोग की स्थापना सन् 1965 में की इसकी सिफारिशो के आधार पर सरकार प्रतिवर्ष फसल के तैयार होने के पूर्व उनके न्यूनतम समर्थन मूल्यों एवं खरीद मूल्यों की घोषणा करती है, ताकि किसानों को कृषि उपज की किमतों में कमी से सुरक्षा प्रदान की जा सके।

* सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सी. वी. रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

समर्थन मूल्यों की घोषणा से किसान अधिक उत्पादन हेतु प्रेरित होते है। जिससे राष्ट्रीय उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है। इसी भांति किसानों को जोखिम से सुरक्षा प्रदान करने हेतु फसल बीमा योजना प्रारंभ की गई है। इसके अंतर्गत कृषि उत्पादों के मूल्यों में उतार-चढाव के साथ साथ बुवाई से कटाई तक किसानों को बीमा पॉलिसी पैकेज उपलब्ध कराने की व्यवस्था है।

किसी भी अर्थव्यवस्था में उद्योग, शिल्प व अन्य कलाओं एवं नगरों के विकास मे कृषि की बडी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कृषि से प्राप्त अधिशेष से ही नगरों के विकास मे सहायता मिलती है। कृषि अधिशेष से ही नगरों मे जनसंख्या का निवास संभव हो पाता है। जिससे अंतत: वहा उद्योग शिल्प व अन्य कलाओं का विकास संभव होता है। उद्योगों की स्थापना के लिए आरम्भिक पूंजी भी कृषि अधिशेष ही उपल्ब्ध कराता है। दूसरी ओर कृषि उद्योगों के उत्पादो के लिए बाजार उपलब्ध करा कर उनके विकास को संभव बनाती है। विकासशील राष्ट्रों के संदर्भ में कृषि विदेशी मुद्रा प्राप्ती के महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में सामने आती है। विकासशील राष्ट्रों के आर्थिक विकास के लिए औद्योगीकरण एक आवश्यक शर्त है। जिसके लिए आवश्यक पूंजी वस्तु व प्रौद्योगिकी का आयात करना होता है। इस आयात को कृषि से अर्जित विदेशी मुद्रा के माध्यम से किया जा सकता है। इस प्रकार आर्थिक विकास में कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में 'कृषि' अर्थव्यवस्था की रीढ बनी हुई है। कृषि क्षेत्र में परिवर्तनों का प्रभाव सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में दृष्टिगोचर होता है। विकसित राष्ट्रो में कृषि क्षेत्र में कार्यकारी जनसंख्या का मात्र 2-7% अंश ही कृषि से जीविका प्राप्त करता है। कृषि क्षेत्र पर अत्याधिक व्यक्तियों की निर्भरता ही इसके महत्व को बढ़ा देती है। कृषि क्षेत्र में सकारात्मक या नकारात्मक परिवर्तनों से व्यापक जनसंख्या प्रभावित होती है। जिसके सामाजिक आर्थिक व राजनैतिक परिणाम हो सकते है। भारतीय उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति कर कृषि उद्योगों के विकास में अंश दान करती है। इसके अतिरिक्त कृषि ग्रामीण क्षेत्र के उद्योगों के उत्पाद के लिए बाजार भी सुलभता से उपलब्ध कराती है । इस प्रकार समग्र दृष्टि से देखे तो कृषि क्षेत्र उपभोग आवश्यकताओं का आपूर्तिकर्ता तथा प्रमुख्य रोजगार उपलब्ध कराने वाला क्षेत्र होने के साथ साथ उद्योगों के विकास मे भी प्रमुख योगदान प्रदान कर रहा है।

कृषि विकास के द्वारा आर्थिक परिवर्तन के आयाम विभिन्न क्रांति के माध्यम से भारत में संचालित हुए है। जिस तारतम्य में हरित क्रांति का सूत्रपात भारत में खाद्यान उत्पादकता में आत्म निर्भरत प्राप्त करने के लिए मील का पत्थर साबित हुई। यद्धपि विश्व को हरित क्राति प्रदान करने में स्वीडिश कृषि वैज्ञानिक नार्मन बोरलाग ने कृषि के विभिन्न घटकों मे वैज्ञानिक तकनीकी का प्रयोग कर नवीन क्रांति का शुभारंभ किया। भारतीय परिवेश में हरित क्रांति के जन्मदाता के रूप में डॉ. एस स्वामीनाथन ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। हरित क्रांति में गेहूँ के उत्पादन में आशातीत् सफलता प्राप्त की जबकि चावल के उत्पादन में वृद्धि गेहूँ की तुलना में थोडी कम थी। किंतु हरित क्रांति के कारण मोटे आनाज के उत्पादन में कमी आई। सारत: हरित क्रांति अपने मुख्य लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रही है।

द्वितीय क्रांति के रूप में आपरेशन फ्लड को विश्व में वर्गीज कुरियन ने प्रस्तुत किया। जिसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण विश्व में दुग्ध की उत्पादकता में शानदार सफलता अर्जित की। इस संदर्भ में भारत ने आशातीत सफलता प्राप्त की। जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान में भारत सम्पूर्ण विश्व में सर्वाधिक दुग्ध उत्पादन करने वाले देश बनकर उभरा है।

उपरोक्त दोनों क्रांति के पश्चात् भारतीय कृषि वैज्ञानिकों का ध्यान तिलहन के उत्पादन की ओर गया जिसके परिणाम स्वरूप उन्होंने 'पीली क्रान्ति' का सुत्रपात किया। पीली क्रान्ति का मूल उद्धेश्य तिलहन एवं दलहन फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहित करना था। जिसमें उन्हें आशानुरूप सफलता अर्जित हुई।

पीली क्रान्ति के पश्चात आलू क्रान्ति भूरी क्रान्ति (उर्वरक क्रान्ति) आदि के अधुनातन प्रयोगों ने कृषि क्षेत्र मे विकास की गति द्रुत करने में सफल रही। कृषि मे खाद्य फसले एवं अखाद्य फसलों को शामिल किया गया है। विश्व की सभ्यताओं का अनुसरण करते हुए भारत में भी कृषि के वाणिज्यीकरण को प्राथमिकता देने हेतु विभिन्न शासकीय योजनाएँ संचालित की जाने लगी है।

निष्कर्ष – उपरोक्त अध्ययन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि 'कृषि विकास द्वारा आर्थिक परिवर्तन के आयाम' में योगदान को हम ज्यादा सरलता से समझ सकते है। कृषि विकास के द्वारा हम समस्त क्षेत्र में विकास की बयार बहा सकते है और इसमें क्रान्तियों के माध्यम से हमारा प्रयास सतत् रूप से सक्षम रहा है। कृषि का योगदान औद्योगिक क्षेत्र हेतु भी कच्चे माल की आपूर्तिकर्ता के रूप में देखा जा सकता है। अंतत: हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते है कि कृषि हमारे सामाजिक जीवन की प्रारंभिक व अनिवार्य आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. दत्त एंव सुंदरम्, भारतीय अर्थव्यवस्था
2. मिश्रा एवं पुरी, भारतीय अर्थव्यवस्था
3. लाल एंव लाल, भारतीय अर्थव्यवस्था
4. योजना, मई 2007
5. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2006, अगस्त 2007, सितम्बर 2007, अक्टूबर 2007
6. शर्मा अभिषेक, भारतीय अर्थव्यवस्था

****

आर्थिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षण

डॉ. टी.एम. खान *

प्रस्तावना – वर्तमान परिपेक्ष्य में सम्पूर्ण विश्व एक गाँव का रूप ले चुका है, चारों ओर व्यापार प्रगति, विज्ञान की बातें की जा रही हैं। जबकि भारतीय सिद्धान्त 'पीपल की ही पूजा करो' को मखौल उड़ाने की दृष्टि से देखा जा रहा है। विचार करने योग्य यह बात है कि यदि हम विकास चाहते हैं तो क्या पर्यावरण को अनदेखा कर हम ऐसा कर सकते हैं? बिल्कुल नहीं, सुनामी कैटरीना, रिटा, डेमरे, स्टेन, हुदहुद निलोफर हमारी इन बातों को पूरजोर रूप से सिद्ध कर रहीं है। विश्व के आस्तित्व हेतु पर्यावरण संरक्षण को अनदेखा करना मानवीय आस्तित्व के लिये घातक है। पर्यावरण प्रदूषण के खतरे कितने भयावह होते हैं? और समस्याएँ कितनी आगे बढ़ चुकी हैं? और विकास के इस दौर में हम उनके प्रति कितने सजग हैं? यह रचना में प्रकाशित एक लेख से सिद्ध होती है, जिसमें लिखा है कि पर्यावरण प्रदूषण की भयावहता की तुलना में हमारे प्रयास 'ऊंट के मुँह में जीरे' की भांति हैं। ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन परत का क्षीण होना तथा जलवायु में परिवर्तन के साथ-साथ वायु, भूमि, जल और सौर प्रदूषण से जनित समस्याओं के बारे में हम आये दिन सुनते और पढ़ते रहते है। परंतु इसके हल हेतु प्रभावी उपाय नहीं किये जा रहे हैं। पूरी दुनिया सीना फुला कर विकास की राह पर दौड रही है, किन्तु पर्यावरण घायल हो रहा है। इसे नुकसान पहुंचाने में हम सब शामिल हैं। चाहे व पॉलिथिन हो, या गाड़ियों का उड़ता हुआ धुंआ? या म्यूजिक सिस्टम की तेज आवाज हमारी हवा शुद्ध नहीं है। हमारा पानी शुद्ध नहीं रहा और हमारी धरती प्रदूषित हो गयी है। आश्चर्यजनक तो यह है कि हम महामारियों को गंभीरता से लेते हैं, किन्तु उनके कारण बढ़ते प्रदूषण को नहीं, हमारे मुगालतों ने हमारी रूह को भी प्रदूषित कर दिया है और यदि हम अब भी नहीं जागे तो 'विनाश की ओर बढ़ रही पृथ्वी को बचाना मुश्किल हो जायेगा'।

मानव अस्तित्व एवं पर्यावरण संरक्षण – देश में 1997 से 2013 तक लगभग 50000 किसानों ने आत्महत्या की, इस देश का धरतीपुत्र आत्महत्या के लिये क्यों मजबूर हुआ? क्योंकि प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान तबाही के लिये उपयुक्त रसायनों का प्रयोग अब खेती के प्रयोग में हो रहे कीट नाशकों में भी हो रहा है। 30 वर्ष पूर्व हुई भोपाल गैस त्रासदी का भयावह यथार्थ आज भी हम भूल नहीं पा रहे हैं। कीटनाशकों के प्रयोग से फसल हेतु लाभदायक जीव मकडी, केचुआ आदि मर जाते हैं, जबकि नुकसान पहुंचाने वाले कीटों की संख्या में वृद्धि देखने को आई है। आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के साथ मानव अस्तित्व किस प्रकार जुडा है? यह प्रसिद्ध पर्यावरणकर्मी **वंदना शिवा** के इस लेख से स्पष्ट हैं, जिससे उन्होंने बताया कि इन्दिरा जी की हत्या, भोपाल गैस त्रासदी, हरित क्रांति आपस में जुडे हुए हैं। हरित क्रांति में कीटनाशकों के प्रयोग से धरती का संतुलन बिगडा है। मंहगी रासायनिक खेती के लिये विश्व बैंक से लोन, सबसिडी आदि देकर उन्हें कर्जदार बना दिया है और उधर धरती जहरीली हो चुकी थी। इससे किसानों की आय पर विपरित प्रभाव पड़ा और कर्ज का बोझ बढ़ने लगा। दूसरी ओर मिट्टी खत्म होने लगी, पानी घटने लगा, फलत: किसान आर्थिक तौर पर कमजोर और बर्बाद हो गए और इनके कारण मजबूरी में नौजवानों ने बंदुकें उठा ली और आंतकवाद पनप उठा।

आर्थिक विकास एवं पर्यावरण संरक्षण – आज पर्यावरण की सेहत कैसी है? यह देखने की किसी को फुर्सत ही नहीं है। जबकि उसे सर्वाधिक महत्व दिया जाकर ही विकास की अवधारणा सामने लाई जाना चाहिये। आज विकास के नाम पर 3500 एकड़ वाला किसान खेतों में मेकडॉनल्ड खोल रहा है, खेतों में जुआ घर (केसिनों) खुल रहे हैं, संविदा खेती को बढ़ावा मिल रहा है, तो कहीं खेत में परिणय संस्कार हो रहे हैं। इससे छोटी-छोटी जोतें खत्म हो रही हैं। इस प्रकार आय के साधनों की समाप्ती से छोटे-छोटे किसान आत्महत्या को मजबूर हो रहे हैं। चूंकि देश का विकास व्यापार व उद्योग के विकास से जुडा है और व्यापार का विकास ग्राहकों की मांग करता है और ग्राहक मनुष्य होते हैं। अत: स्वत: सिद्ध है कि यदि हम चाहते हैं कि देश का विकास हो तो यह अत्यन्त आवश्यक होगा कि पर्यावरण संतुलन को बनाएँ रख कर ही कोई कदम उठाया जाए। अन्यथा पर्यावरण प्रदूषण के कारण व्यापार विकास की संभावना पर कालिख पुत जाएगी। जाने-माने ब्रिटिश अर्थशास्त्री **सर निकोलस स्ट्रेन** द्वारा पर्यावरण परिवर्तन के आर्थिक विकास पर प्रभाव आधारित रिपोर्ट पिछले माह लन्दन में जारी हुई है। उनके अनुसार औद्योगिक करण से पहले जहाँ वातावरण में ग्रीन हाउस गैसों और कार्बनडाई ऑक्साईड का उत्सर्जन 280 पीपीएम था, वही अब यह बढ़ कर 430 पीपीएम हो गया है। रिपोर्ट के मुताबिक तापमान में औद्योगिकरण से पूर्व की अपेक्षा पॉच सेन्टिग्रेट की वृद्धि हुई है। स्ट्रेन ने कहा है कि हमें विकास के लिये जल-वायु और वातावरण की अनदेखी नहीं करना चाहिये। वैश्विक भागीदारी से इस दुष्प्रभव पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – वर्तमान में मानव ने स्वयं के विकास हेतु प्रकृति का क्रूर विदोहन किया है। जितना विदोहन सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर 1965 तक हुआ, उतना ही विदोहन मनुष्य ने 1965 के बाद किया। यदि ऐसा ही चलता रहा तो महा भयंकर प्रलय को कोई रोक नहीं सकेगा और तब हमारे विकास की बातें कौन करेगा? अत: **ब्रिटिश अर्थशास्त्री प्रोफेसर स्ट्रेन** ने इस संबंध में निम्न सुझाव दिये हैं –

1. कम से कम कार्बन के उत्सर्जन से अच्छे से अच्छा उत्पादन करने वाली तकनीक का विकास किया जाना चाहिये।
2. दुनियाभर में ऊर्जा के अंतर को समाप्त किया जाना चाहिये, साथ ही लोगों को पर्यावरण संरक्षण के प्रति शिक्षित करना चाहिये।
3. जो देश जितना अधिक ग्रीन हाउस गैस और कॉर्बनडाई ऑक्साईड का उत्सर्जन करे, उस पर उसी अनुपात में कर लगाया जाना चाहिये।

* प्रभारी प्राचार्य एवं प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद , जिला – धार (म.प्र.) भारत

4. उसी अनुपात में उन देशों को पौधा रोपण भी करना चाहिये।
5. पर्यावरण प्रदूषण से देश के आर्थिक विकास का कम से कम पाँच प्रतिशत का नुकसान होता है। यदि इस जीडीपी का एक प्रतिशत पर्यावरण संरक्षण और इसके बचाव पर खर्च किया जाए तो अन्य नुकसान और दुष्प्रभावों को कम किया जा सकता है।
6. शहरी विकास के साथ जल जरूरतों को व उसके सदुपयोग की बात को भी नियोजन से जोड़ जाए।
7. औद्योगिक एवं कृषि विकास विरोधी न होकर एक दूसरे के पूरक के रूप में देखे जाने चाहिये।
8. कल कारखानों में प्रदूषण मुक्त सयंत्र लगाये जाने चाहिये।
9. जैव विविधता हेतु जैविक खेती को प्रोत्साहित किया जाए।
10. पर्यावरणीय लागतों को आर्थिक योजनाओं में स्थान दिया जाए।

अत: आवश्यकता इस बात की है कि किसी भी देश के विकास के लिये पर्यावरण संरक्षण को अनिवार्यत: जोड़ा जाए वर्ना हम लाशों के अंबार पर ही विकास की थोथी बातें करते रह जाएंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारत 2004, 2013
2. अर्थशास्त्र – अनुपम गोयल
3. अर्थशास्त्र – पीडी माहेश्वरी
4. वर्ल्ड डेव्हलपमेन्ट रिपोर्ट – 2013
5. पर्यावरण चेतना– साहित्य ग्रंथ अकादमी।
6. विभिन्न समाचार पत्र ।
7. विभिन्न इंटरनेट वेबसाईट।

****

Concept Of E-Governance In India- An Evaluation

Dr. Shrikant Dubey* **Dr. Ramswaroop Mehra****

Introduction - The concept of e-governance means the process of development and the concept of development in the context of e-governance is the process of decision making and process by which decisions are implement. The concept of e-governance relates to the quality of relationship between the government and the citizens. Whom it serves and protects e-governance could be defined as one in which the concerned authority if any, exercise powers, exerts influence and manages the country social as well as economic resources leading to better development. Actually in present context all elected governments are accountable to people. The elected representatives are accountable to the parliament and the executive is accountable to the elected representatives.

Initiatives of e-governance in India – E-governance in India has steadily evolved from computerization of government of development to initiatives that encapsulate the finer points of governance, such as citizen centricity, service orientation and transparency. The national e-governance plan takes a holistic view of e-governance initiative across the country; integrating them into a collective vision and a shared cause in this section we are highlighting the initiatives of the central and state governments to bring public service closer to the citizen.

E-governance initiatives in India- The government of India started the use of IT in the government in the right earnest by launching number of initiatives; first the government approved the nation E-governance action plan for implementation during the year of 2003-2007. Adoption of "IT act 2000 by the government of India on 17 October 2000. Establishment of National taskforce of IT and software development in may 1998, Creation of centre for e-governance to determinate the best practices in area of E-governance. Developing e-office solution in various departments setting update a high powered committee (HPC) with cabinet secretary as its chairman to improved administrative efficiency by using IT in government. Create of website by almost departments.

Several dimensions and factors influence the definition of e-governance or electronic governance. The word electronic in the term e-governance implies technology between driven governance. E-governance is the affiliation of information and communication technology for delivering government services.

E-governance has become the key to good governance in a developing country like India. To be at par with developed countries the government of India had made out a plan to use information technology extensively in its operation to make more efficient and effective and also to bring transparency and accountability.

National e-governance plan- the national e governance plan has been formulated by Indian government as below-

a) **Common support infrastructure**- NeGP implementation involves setting up of common and support IT infrastructure.
b) **Governance** – Suitable arrangements for monitoring and coordinating the implementation of NeGP
c) **Public** –Private partnerships (PPP)- model is to be adopted wherever feasible to enlarge the resources.
d) **Integrative elements**- Adoption of unique identification codes for citizens, businesses and property.
e) **Programme approach at the national and state levels** – In the programme of NeGP, various Union government departments and state government are involved.

Types of interaction in E-governance – E-governance facilitates interaction between different stakeholders in governance. These interactions may be described as follows-

1. **G2G (Government to government)** – this kind of interaction is only within the sphere of government and can be both horizontal i.e. between different government agencies as well as between different functional areas within an organization
2. **G2C (Government to Citizens)** – In this case an interface is created between the government and citizen which enables to citizens to benefit from efficient delivery of a large range of public services.
3. **G2B (Government to Business)** – E-governance tools are used to aid the business community providers of goods and services to seamlessly interact with the government.
4. **G2E (Government to Employees)** – Government is by for the biggest employer and like any organization; it has to interact with its employees on a regular basis.

Problems of e-governance- In India people are poor and infrastructures are not up to mark. Some other various problems are below-

* Assistant Professor (Political Science) Govt. Home Sc. P G College, Hoshangabad (M.P.) INDIA
** Assistant Professor (Political Science) Govt. Girls College, Itarsi (M.P.) INDIA

a) **Illiteracy** – In the field of IT there is general lack of technical literary as well as literacy in India.
b) **Poverty**- Internet access is expensive in India. In India each telephone connection is unaffordable for maximum people.
c) **Language Problem-** All the web pages in the world are in English and mostly Indian population is hindi speaking. The problem due to the poor literacy.
d) **Unawareness** – there is lack of awareness regarding benefits of e-governance as well as the process involved in implementing successful projects.
e) **Insufficient infrastructure**- main problem of insufficient infrastructure like electricity, internet connectivity, technology and ways of communication.
f) **Insufficient participation of public** – Designing of any application requires a much closed interaction between the govt. departments and the agency developing the solution. At present the users in Govt. departments do not contributed enough to design the solution architecture.
g) **Limited financial resources**- India has limited financial resources so as to implement and maintain the e-government projects properly.
h) **Population**- Population of India is probably the biggest challenge in implementing e-governance projects.
i) **Lack of integrated services**- most of the e-governance services which are offered by the government are not integrated.
j) **Privacy and security** – Major problem in implementing e-governance is the privacy and security of an individual's personal data the he/she provides to obtain government services
k) **Political benefits** - created strong political and administration leadership made detailed project management, clearly identified goals and benefits for public utility services.
l) **Gout reforms**- response to pressure from citizen and other stakeholders towards, among other things, improved service quality and higher internal efficiency while being transparent and accountable.

Advantages of E-governance – Following are the some advantages of E-governance-

a) **Accountability** – Once the governing process is made transparent the government is automatically made accountable.
b) **Transparency** – Use of IT makes governing process transparent all the information of the government would be made available in the internet.
c) **Low Cost** – Most of the government expenditure is appropriated towards the cost of stationary. Internal and phone makes communication cheaper saving valuable money for the government.
d) **Fast communication**- Technology makes fast communication. Internet phones cell phones have reduced the time taken in normal communication.
e) **Benefited for public**- Many government services under one roof and different ways of payment are possible. It is more important in the context of improved services because of competition amongst channel and also good ambience; contract Service by private contract operators managed issues through electronic token.

Conclusion – E-governance projects are strategic to the economic and social development of any society e-governance implementations usually span a long time and touch a large spread of stakeholders. The success are failure of such projects largely depend on the co-ordination between various stockholders effective management and optional use of technology, success of e-governance like in choosing right connection of project detailed planning with stockholders and a careful choice of appropriate and inexpensive technologies to create flexible and scalable system for delivering citizen services. It is necessary that the proper conceptualization must be a priority before kick starting IT projects. Actually today e-governance is a part of our citizen life. It is necessary for our fast and better future in context of our development. It is to that e-governance can play a vital role in socio economic development of a country by reducing corruption and strengthening democracy.

References :-

1. Samanjeet, e-governance: A overview in the Indian context the Indian journal of political science, Vol. IXVII, 2006
2. Sharma S.K., An e-government services framework, encyclopedia of commerce, 2006
3. U. N. Global E-government reading report, united nations publication, United nations 2005
4. www.nic.in/projects
5. www.egovindia.org/egovpotal.html
6. Vakul Sharma, Law and E-governance in International conference building effective e-governance 2002
7. Sharma Arpita, Successful e-governance initiatives in business and economic facts for you 2012
8. Critical issues in e-governance 15th international conference on e-governance, 2007

****

गांधी और नेहरू एक वैचारिक विश्लेषण

प्रो. प्रतीक्षा पाठक *

शोध सारांश – जिन मुद्दों पर गांधीजी और नेहरू के बीच मतभेद था – उनका संबंध स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की नई समाज रचना से था और ये प्रश्न थे कि प्राप्त उपलब्धियों को स्थायी कैसे बनाया जाए ? कोई असफलता मिली तो उसे नज़र अन्दाज कैसे किया जा सकता है? असफलता से उत्पन्न जनता की निराशा को दूर करके, आगे का संघर्ष कैसे चलाया जाए? इन सभी कार्यक्रमों के संदर्भ में गांधी के नेतृत्व की महानता और उसके महत्व का पूरा–पूरा एहसास नेहरू को था। इस सांमजस्य के फलस्वरूप ही स्वाधीनता आंदोलन में इन दो महापुरूषों का योगदान परस्पर पूरक सिद्ध हो सका और आंदोलन को शक्ति भी मिली तथा सफलता भी।

प्रस्तावना – भारतीय स्वतंत्रता के इतिहास में 1920 से 1947 के बीच का जो कालखंड है। उस पर गांधी और नेहरू के व्यक्तित्व की गहरी छाप है। यद्यपि दोनों के व्यक्तित्वों में गहरा अंतर था, फिर भी, स्वाधीनता संग्राम के संदर्भ में, उनके बीच आश्चर्यजनक आत्मीयता थी। दोनों के बीच मतभेद का प्रमुख मुद्दा आर्थिक नीति का ही था – फिर भी, गांधी को अपना 'गुरू' मानते हुए नेहरू को कभी कोई संकोच नहीं हुआ। नेहरू और गांधी के बीच इस आकर्षण का अध्ययन दिलचस्प भी है और आवश्यक थी। अपने पिता श्री मोतीलाल नेहरू की अपेक्षा गांधीजी का प्रभाव जवाहरलालजी पर ज्यादा गहरा था।

1915 में गांधीजी अफ्रीका से भारत लौटे और अपने राजनीतिक गुरू गोखले की प्रेरणा से उन्होंने सम्पूर्ण भारत की यात्रा की तथा जन–जीवन को नजदीक से देखा। 1917 में नेहरू प्रथम बार गांधी से मिले और इस प्रथम साक्षात्कार में ही नेहरू के संवेदनशील मन पर गांधी के व्यक्तित्व की अमिट छाप अंकित हुई। फिर भी नेहरू को यह महसूस हुआ कि राजनैतिक प्रश्नों पर गांधी का रास्ता उनसे अलग ही है। इसके बावजूद गांधी का व्यक्तित्व उन्हें बेहद आत्मीय लगा – क्योंकि उनके आदर्श और आचरण पूरी तरह अद्वेत थे। नेहरू के विद्रोही मन ने गांधीजी को भी एक विद्रोही के रूप में देखा। गांधी की निर्भयता और असीम धैर्य उनकी विशिष्टता थी। जिसने भारतीय जनता के मन में भी एक नई आस्था को जन्म दिया था। उसका, खोया हुआ स्वाभिमान, उसकी अस्मिता (Identify) उन्हें पुन: उपलब्ध करायी थी। आम जनता को निर्भीक और आस्थावान बनाने वाला गांधीजी का यह रूप उन्हें अत्यंत पूजनीय तथा प्रिय लगा।

गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस संगठन को एक सक्रिय गतिशील तथा ताकतवर संगठन का रूप दिया। उनसे पहले कांग्रेस मात्र विचारों की अभिव्यक्ति का एक मंच थी– अब वह कर्मक्षेत्र में उतरने की तैयारी कर रही थी – युवा नेहरू के उत्साही मन में इसी कर्मठता की प्यास थी। गांधीजी प्रस्तावों के साथ–साथ निश्चित कार्यक्रम देने वाले नेता सिद्ध हुए।

'रौलेट एक्ट' के संदर्भ में, पहली बार नेहरू–गांधी के सम्पर्क में आए। गांधीजी ने वाइसराय से निवेदन किया था कि रौलेट एक्ट को स्वीकृति न दी जाए। लेकिन उनका सुझाव अस्वीकृत कर दिया गया। तब रौलेट एक्ट के खिलाफ गांधी ने 'सत्याग्रह–आन्दोलन' प्रांरभ किया– जगह–जगह सभाएँ होने लगी– एक्ट का विरोध होने लगा– यह सब देखकर नेहरू के मन को बड़ी प्रेरणा मिली। प्रथम परिचय में गांधीजी ने नेहरू को 'अ–राजनीतिक' प्रतीत हुए थे – परन्तु जलियावाला बाग के हत्याकांड के समय, नेहरू एक तरह से गांधीजी के सेक्रेटरी जैसे ही थे। वे उनके साथ पंजाब भी गए और जब नेहरू को यह एहसास हुआ कि राजनीतिक निर्णयों के संदर्भ में गांधीजी की दृष्टि कितनी दूरगामी और गहरी है। कई बार नेहरू के विचार गांधीजी के दृष्टिकोण से भिन्न होते थे – और वे अपनी असहमति भी व्यक्त करते – लेकिन समय बीतते ही नेहरू को यह प्रतीति होती कि गांधीजी का निर्णय शतप्रतिशत सही था।

'साध्य और साधन सुचिता' एक ऐसा मुद्दा था जिस पर गांधी का स्पष्ट मत था कि 'केवल साध्य शुभ होना ही जरूरी नहीं – साधन भी पवित्र होने चाहिए।' गांधी की मान्यता थी कि साध्य और साधन का संबध वृक्ष और बीज की तरह है। अच्छे वृक्ष के लिए बीज भी अच्छा होना चाहिए। उन दिनों गांधीजी के इस आदर्श से नेहरू पूरी तरह सहमत थे – 1949 में, कोलम्बिया विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए नेहरू ने स्पष्ट का – 'साध्य की श्रेष्ठता साधनों की श्रेष्ठता पर ही निर्भर है। यदि साधन अनैतिक हुए, तो साध्य भी दूषित होगा ही।'

अपनी युवावस्था में नेहरू गीता पढ़ चुके थे और वह उन्हें प्रिय भी लगी थी। गांधी के प्रभाव में आने के पश्चात् उन्होंने फिर से गीता का गंभीर अध्ययन किया। गीता के निष्काम कर्मयोग से वे गहरे प्रभावित हुए – परन्तु वैज्ञानिक स्पष्टीकरण के बिना उनका मन इस दर्शन को पूरी तरह स्वीकार भी नहीं करता था। इसलिए वे बार–बार यह कोशिश करते कि गीता के कर्मयोग की संगति वैज्ञानिक चिंतन से जोड़ी जा सके और इसी दृष्टि से उन्होंने अपनी तर्क पद्धति ईजाद की – वे कहते थे कि क्रिया और प्रतिक्रिया की एक अटूट, अखण्ड श्रृंखला है – इसलिए यदि कोई भी कर्म या प्रयत्न निष्फल नहीं जाता, तो उचित कर्म का परिणाम भी उचित ही होना चाहिए। समय के बीतने के साथ–साथ गांधी के प्रति नेहरू की आस्था दृढ़तर होती गई और उनके संदेह मिटते गए– फिर भी, गांधी के प्रति इस श्रद्धा के बावजूद, उनके मन से समाजवाद का आकर्षण कभी कम नहीं हो पाया। यह जानना दिलचस्प है कि जिस समय वे गांधीजी के प्रति समर्पित हो रहे थे; उन्ही वर्षो में, रूप की बोलशेविक क्रांति के प्रति उनका आकर्षण भी बढ़ रहा था। एक तरफ रूसी क्रांति और स्टालिन की राजनीतिक गतिविधियों तथा साम्यवाद के प्रति उनके मन में, तीव्र जिज्ञासा पनप रही थी – तो दूसरी तरफ

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

गांधीजी के प्रति श्रद्धा तथा गांधीवाद के नैतिक पक्ष के प्रति आकर्षण भी बढ़ रहा था। इन दोनों के बीच का अंतर्द्वंद शायद कभी नहीं मिट सका।

वे कहते थे 'समाजवाद के प्रति मेरे मन में दिनों-दिन आदर बढ़ने लगा - साम्यवादी पद्धति के कुछ पहलू मुझे अत्यंत प्रिय जान पड़े - उसका सैद्धांतिक पक्ष तो मुझे अच्छा लगता था- परन्तु कम्युनिस्ट कार्यपद्धति मुझे नापसंद थी। विश्व में सुख-समता पर आधारित साम्यवादी समाज की स्थापना हो- यह तो मेरा मन चाहता था, लेकिन इसके साधन शांतिपूर्ण और उचित हों - यह आकांक्षा भी मेरे भीतर गहरे छिपी थी।

गांधीजी के अहिंसक सत्याग्रह का रास्ता नेहरू को मान्य था - लेकिन उनकी दृष्टि में यह एक व्यवहारिक आवश्यकता ही थी- जबकि गांधीजी के लिए यह एक नैतिक निर्णय भी था।

मात्र नैतिक कारणों से किसी मार्ग को मान्यता देने के लिए नेहरू तैयार नहीं थे - यद्यपि अहिंसा के प्रति उनके मन में गहरा आकर्षण था। फिर भी विशिष्ट संदर्भो में, वे हिंसा को अपरिहार्य मानते थे। लेकिन अहिंसा का रास्ता उन्हें भारतीय परम्परा के संदर्भ में अधिक संगतिपूर्ण लगता था। गांधीजी ने जिस मौलिकता से 'राजनीति का अध्यात्मीकरण' किया था- उसके प्रति नेहरू के मन में श्रद्धाभाव तो था, परन्तु सैद्धांतिक रूप से; वे शत प्रतिशत अहिंसावादी नहीं रहे।

फिर भी, हिंसक साधनों की निरर्थकता को वे मन ही मन स्वीकार कर चुके थे। आतंकवादी तरीके से, बम फेंककर या पिस्तौल चलाकर एक-दो अफसरों की हत्या कर देने को वे राजनैतिक दिवालियापन समझते थे। उनकी स्पष्ट मान्यता थी कि व्यक्तिगत हिंसा एक हास्यास्पद मूर्खता है। इसलिए 12 अप्रैल, 1936 की लखनऊ कांग्रेस के अधिवेशन के अध्यक्ष पद से उन्होंने कहा - 'आतंकवाद जनता की राजनैतिक अपरिपक्वता का ही प्रमाण है।' इसलिए गांधीजी का असहयोग आंदोलन उन्हें उचित लगता था। - इस मुद्दे पर, गांधीजी ने देशवासियों से कहा था - 'आप इस आंदोलन को केवल इसलिए स्वीकार न करें - क्योंकि यह उचित है - बल्कि इसलिए मानें क्योंकि यह फलदायक भी है।' इन सब तर्को के बावजूद, नेहरू के लिए अंहिसा का मार्ग एक परिस्थितिजन्य नीति ही थी - वह ऐसा सिद्धान्त नहीं था जिसे निर्विवाद रूप से, हर समय अपनाया जा सके। जब तक अहिंसक नीति के अच्छे परिणाम प्राप्त होते रहे, तभी तक यह उचित है। लेकिन इस पर से यह निष्कर्ष निकालना गलत होगा कि अहिंसा पर उनकी आस्था अचल एवं अडिग थी। वे सोचते थे कि जिस ऊँचे स्तर से गांधीजी अहिंसा की अपेक्षा करते थे, आमआदमी के लिए उसे समझ पाना और आचरण में उतारना संभव नहीं - उदाहरणार्थ दुनिया के सभी राष्ट्र अहिंसात्मक रास्ते को अपना लेगें - यह उम्मीद करना गलत है। मनुष्य जीवन अपूर्ण है और इसलिए कभी-कभी हिंसा को भी अपनाना आवश्यक हो जाता है।

अहिंसक नीति की सफलता के प्रति नेहरू के मन में तीव्र संदेह फरवरी 1922 में जागा तब चौरी-चौरा की घटना के कारण गांधीजी ने अपना असहयोग आंदोलन वापस ले लिया। चौरी-चौरा में नाराज जनता ने पुलिस-चौकी पर हमला कर दिया और उसे आग लगा दी। इस घटना में छः पुलिस वाले मारे गए। जनता की यह पहल गांधीजी को उचित नहीं लगी और उन्होंने यह कहते हुए कि अहिंसक आंदोलन के लिए अभी देशवासी पूरी तरह तैयार नहीं हुए है, इसलिए आंदोलन वापस ले किया गया। इस संदर्भ में, नेहरू का मत था कि इतने विराट आंदोलन मे ऐसी छिटपुट घटनाऐं तो अपरिहार्य ही है। तीस करोड़ भारतवासियों को पहले अहिंसा का दर्शन एवं व्यवहार सीखना और फिर राजनैतिक आंदोलन प्रांरभ करना - व्यवहारिक दृष्टि से असंभव है। राजनैतिक संघर्ष में अहिंसक नीति की असफलता सहज संभव है। नेहरू का यह वैचारिक दृष्टि होते हुए भी, गांधीजी के नेतृत्व पर उनका दृढ़ निश्वास था।

1930 में गांधीजी ने सामूहिक रूप से कानून तोड़ने का 'अवज्ञा-आन्दोलन' फिर प्रांरभ किया। उस समय गांधीजी ने जो घोषणा की वह आश्चर्यजनक ही समझी जाएगी। उन्होंने कहा -'यदि हिंसा की छिटपुट घटनाएँ हुई भी, तो हम निषेधाज्ञा आंदोलन, स्थगित नहीं करेगें।' नेहरू को गांधीजी की यह घोषणा बेहद संतोषजनक लगी। इस संदर्भ में टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा - कि निश्चित ही यह कहना कठिन है कि इस बीच (1922-1930) गांधीजी के विचारों में परिवर्तन आ गया है - परन्तु यह परिवर्तन नेहरू को अत्यंत प्रिय प्रतीत हुआ।

नेहरूजी की आत्मकथा और अन्य लेखों से यह भी स्पष्ट होता है कि अगर वे अहिंसक नीति को परिणामकारक, नहीं समझते; तो वे ऐसे आंदोलन का समर्थन कदापि नहीं करते। नेहरू की दृष्टि में नैतिक प्रश्नों का महत्व तो था ही - लेकिन वे आदर्शवाद को निर्णयक महत्व नहीं देते थे - बल्कि व्यवहारिक उपयोगिता ही उनके लिए प्राथमिक मूल्य थी।

अपनी पुस्तक- 'विश्व इतिहास की झलक' में नेहरू लिखते है कि भारत की बहुसंख्यक जनता के पास शस्त्र नहीं है, शस्त्र कैसे चलाना यह प्रशिक्षण भी उन्हें नहीं मिला - ऐसे हालातों में निशस्त्र जनता के लिए हिंसक और सशस्त्र आंदोलन करने का विचार छोड़ देना चाहिए।'

आखिर नेहरू के मन का अन्तर्द्वन्द क्या था? एक तरफ तो वे अपने उद्धेश्य की पूर्ति के लिए शुद्ध और स्वच्छ साधनों के उपयोग का आग्रह करते हैं - और दूसरी तरफ यह भी कहते है कि यदि अच्छे परिणामों तथा व्यवहारिकता की गारंटी हो- तो सशस्त्र आन्दोलन के लिए भी वे स्वीकृति देते है।

इन दो दृष्टियों का समन्वय वे किस तरह कर पाए? इस प्रश्न के उत्तर में उनका एक महत्वपूर्ण वाक्य समझना ही पर्याप्त है - वे कहते है कि 'हिंसा बुरी चीज है - मगर गुलामी उससे भी ज्यादा बुरी और असहनीय है - और अहिंसा के गांधी जैसे महान देवदूत भी कहते है - कि कायरों की तरह अन्याय सहन करने की अपेक्षा अन्याय का सशस्त्र प्रतिकार करना मैं श्रेष्ठ समझता हूँ।'

इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि शुद्ध साधनों पर नेहरू की आस्था अवश्य थी - लेकिन अपवादात्मक, स्थितियों में; वे पवित्र साध्य के लिए साधनों के प्रश्न पर थोड़ा समझौता करने को तैयार थे। जब जुल्म के खिलाफ अहिंसक विरोध करना यदि संभव न हो; तो फिर दो ही विकल्प बचते है - हिंसा का प्रयोग करना या चुपचाप अन्याय सहन करना और इन दो विकल्पों में से, चुपचाप अन्याय सहन करने के बजाय अहिंसा के प्रश्न पर समझौता करना ही नेहरू को उचित लगता था। वे सोचते थे कि पूर्ण मनुष्य (Perfect Man) के संदर्भ में, हम जो अंतिम विचार प्रस्तुत करते है - वे मार्गदर्शक तो निःसंदेह है- लेकिन हर आदमी उतना पूर्ण नहीं है। जिसका मन पुरी तरह निर्भय नहीं है - जिसका संकल्प अडिग नहीं है - ऐसे सामान्य, अपूर्ण जन क्या करे? उचित साधनों का प्रयोग करना उसकी क्षमता से परे होता है। ऐसी परिस्थिति में, हिंसा का अशुद्ध मानकर चुप बैठ जाने का अर्थ यह होगा कि हम अत्याचारी के सामने शरणागत होकर अपनी पराजय स्वीकार कर ले - परन्तु नैतिक दृष्टि से, ऐसे निर्णय का समर्थन कदापि नहीं किया जा सकता। अन्याय का प्रतिकार करते समय, कुछ अंशो में अशुद्ध साधनों से समझौता करना अपरिहार्य होता है - और इसके गलत नतीजे भी हो सकते है - मगर अपूर्ण जीवन में, ऐसे समझौते करने के अतिरिक्त कोई रास्ता नहीं बचता।

नेहरू ने अहिंसा को अंतिम आदर्श की तरह कभी स्वीकार नहीं किया। तब भी नहीं जब वे एक उभरते हुए नेता थे। जब वे देश के प्रमुख नेता थे और जब वे स्वतंत्र भारत के प्रधानमंत्री थे। उन्होंने निरपेक्ष बुद्धि से अहिंसा का विवेचन कभी नहीं किया। भारतीय लोकसभा में जब गोवा के संबंध में विचार विमर्श चल रहा था – तब नेहरू ने भारत के प्रधानमंत्री के नाते इस प्रश्न के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण उत्तर दिया था। गोआ की चर्चा के संबंध में साधनों का प्रश्न उपस्थित हुआ। आचार्य कृपालानी ने – स्पष्ट प्रश्न किया – मैं सीधा सवाल पूछना चाहता हूँ और उसका असंदिग्ध उत्तर भी मुझे चाहिए– भारतीय शासन अहिंसा के प्रति वचनबद्ध है या नहीं?'

इस पर नेहरू ने कहा – 'प्रश्न जितना सरल है, उतना ही स्पष्ट मेरा जवाब है – 'नहीं' दुनिया की कोई भी सरकार अंहिसा के प्रति वचनबद्ध नहीं हो सकती। ऐसी कल्पना करना भी गलत है। यदि शासन अहिंसा के प्रति वचनबद्ध होता – तो फिर शायद फौज, हवाई जहाज और पुलिस की भी जरूरत न पड़ती। लोकसभा के सदस्यों को याद दिलाते हुए नेहरू ने कहा कि महात्मा गांधी तो अंहिसा की साक्षातमूर्ति थे – लेकिन उन्होंने भी – आक्रमणकारियों से काश्मीर को बचाने के लिए जो भारतीय फौज भेजी गई थी – उसे अपना आशीर्वाद दिया था।

नेहरू के मन में गांधीजी द्वारा चलाए गए स्वतंत्रता आंदोलन के नैतिक पक्ष के प्रति अद्‌भूत आकर्षण था। उनका वैचारिक चेतना पर गीता और उपनिषद् जैसे महान ग्रंथों के अध्ययन से तथा रामायण और महाभारत के जो संस्कार बचपन में ही पड़े थे – उनका प्रभाव आजीवन कायम रहा।

सन् 1920 के पश्चात् गांधीवादी राजनीति में अंतरनिहित इस आर्थिक पक्ष की तरह नेहरू का ध्यान आकर्षित हुआ। आम आदमी की भयावह गरीबी देखकर नेहरू के मन में एक तूफान सा उठने लगा और जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण पहले से अधिक व्यापक आयामों को छूने लगा। इससे पहले किसानों और मजदूरों के जीवन की नारकीय यंत्रणा से वे भलीभांति परिचित नहीं थे। जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण स्वभावत: उच्च वर्गीय रहा था। बिहार में चंपारण और गुजरात में कायरा जैसे स्थानों पर गांधीजी ने किसान आंदोलनों का सूत्रपात किया था। इन्हीं संघर्षो से प्रेरणा पाकर नेहरू ने किसानों की गरीबी उनके कारणों एवं समाधान जैसे प्रश्नों पर, गहरा चिंतन प्रारंभ किया। उन्हें यह बोध हुआ कि स्वाधीन भारत को इस गरीबी के खिलाफ सबसे कठिन युद्ध लड़ना पड़ेगा।

मई 1920 में, प्रतापगढ़ जिले के लगभग दो सौ किसान पचास मील की यात्रा पैदल तय करके, नेहरूजी से मिलने इलाहाबाद पहुँचे। उनका उद्धेश्य यही था कि वे अपने दुख–दर्दो की दास्तान भारत के उदयीमान नेता को सुनाये। उनकी व्यथा–कथा से नेहरू इतने विचलित हुए कि परिस्थिति का प्रत्यक्ष अध्ययन करने के लिए स्वयं प्रतापगढ़ गए। गांव वालों ने बड़े उत्साह से उनका स्वागत किया, मगर जब उन्होंने गांव वालों की करूण गरीबी देखी तो पीड़ा और लज्जा की अनुभूति से, उनका हृदय भर आया। आज तक उन्होंने वैभव और समृद्धि पूर्ण जीवन ही देखा था। शहरों की राजनीति से ही उनका वास्ता पड़ा था, मगर अब उनके सामने था – शोषण की चट्टानों के नीचे कुचला हुआ, पद दलित ग्रामीण समाज दरिद्र भारत की एक नई भयावह तस्वीर उनके सामने थी– नंगे–अंधनंगो, फटेहाल, भूखे शोषितों का समूह और अचरज की बात ये कि सारे कष्टों के बावजूद उनके भोले मन में, अपने नेता के प्रति गहरी आस्था थी। नेहरू लिखते है – 'इस साक्षात्कार से मेरा मन व्याकुल हो उठा। हम शहरो के रहने वाले नेता; औपचारिकताएँ निभाने वाले अतिथि; मुझे पहली बार यह एहसास हुआ कि हमारे कंधों पर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है। यह एहसास भयानक था। मैं बैचेन हो उठा।'

इस घटना ने नेहरू के चिंतन की दिशा ही बदल दी अब तक स्वतंत्रता आंदोलन शहरों तक ही सीमित था – देश की विशाल जनता की समस्याओं से सह असम्प्रक्त था। मगर अब खेतिहर भारत की एक नई तस्वीर उनके सामने थी – अपने प्रश्नों का उत्तर मांगती हुई। गांधीजी के प्रभावों के फलस्वरूप यह चित्र उनके अंतरमन में गहरे, धंस गया। वे सोचने लगे कि 'मैं प्रतापगढ़ जिले में गया – वहॉ से मुझे पुलिस द्वारा गांव की सीमा के पार खदेड़ दिया गया, अगर यह घटना न घटी होती– तो क्या होता?'

गांधीजी दरिद्र जनता को भारतीय किसानों के प्रतिनिधि थे। भारतीय जनता के सभी मूलभूत प्रश्नों की यथार्थपरक पहचान उन्हें थी। उनकी महत्वाकांक्षा एक ही थी – प्रत्येक भारतवासी की ऑख का हर ऑसू पोंछना है। गांधीजी के ग्राम केन्द्रित, राजनैतिक अर्थचिंतन के फलस्वरूप नेहरू के मन में भी गांधीजी की दृष्टि, उनके कार्यक्रमों और गांवों को प्राथमिकता देने का उनके आग्रह – इन सबके प्रति आकर्षक तीव्रतर होता गया।

गांवों की समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित करने की गांधीजी की सलाह नेहरू को उचित प्रतीत हुई और गांवों की गरीबी मिटाने का उनका कार्यक्रम भी महत्वपूर्ण लगा। गांवों के कुटीर उद्योगों को पुनर्जीवित करना तथा चरखे को महत्व देना– ये ग्रामोंद्धार के प्रमुख अंग थे। भारतीय ग्रामीण समाज के संबंध में गांधीजी का अध्ययन निर्भ्रान्त था। 'चरखे का अर्थशास्त्र' उनकी मौलिक सूत्र थी। नेहरू को भी स्वीकार करना पड़ा कि गांधी मार्ग के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है। गांवों में उपलब्ध साधनों के बल पर ही नई ग्राम रचना की जा सकती है – कुटीर उद्योगों का विकास एवं चरखों को लोकप्रिय बनाना – ये दोनों साधन ही उपलब थे।

नेहरू को गांधीजी की यह नीति तो मान्य थी कि गांवों को ही महत्व देना चाहिए – 'परन्तु बड़ी मशीनों के प्रति गांधीजी के दृष्टिकोण से वे सहमत नहीं थे। गांधीजी की मान्यता थी – कि गरीब और अमीर के बीच जो चौड़ी खाई है – उसका कारण पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और मशीन आधारित उत्पादन पद्धति ही है। अर्थात उनकी दृष्टि में, यह भयावह विषमता का कारण पश्चिमी संस्कृति ही था – और बड़ी मशीनें इसी संस्कृति की प्रतीक है।

इस दृष्टिकोण से नेहरू सहमत नहीं थे – नेहरू की क्या गांधीजी के आसपास ऐसे और भी कई नेता थे जिन्हें गांधीजी की यंत्र विषयक भूमिका मान्य नहीं थी – फिर भी, गांधीवादी दृष्टि के प्रभाव एवं शक्ति को वे खूब समझते थे। लेकिन नेहरू के मन में एक मुद्दे पर कोई हिचक नहीं थी– वे बड़ी मशीन की उपयोगिता के पक्ष में थे – खेती के लिए ट्रेक्टर की उपयोगिता उन्हें आवश्यक लगती थी। वे कहते थे – 'कि जनता के सामने सबसे ज्वलंत प्रश्न गरीबी का था और इसे हल करने के लिए, खेती और उद्योगों में काम करने वालों की संख्या कम की जानी चाहिए। यदि हमें अपनी जनता का जीवन स्तर ऊँचा उठाना हो तो देश के औद्योगिकरण तथा आधुनिकीकरण की गति तेज करना जरूरी है।' इसी मुद्दे पर गांधी और नेहरू के बीच मौलिक मतभेद था। फिर भी, उन्हें इस बात से खुशी होती थी कि धीरे–धीरे यंत्रों के प्रति गांधीजी के विरोध का कट्टरपन कम होने लगा था। मसलन गांधीजी यह मानने लगे थे कि अगर गांवों में बिजली पहुँचा दी जाए तो खेती के कामों में बिजली से चलने वाले उपकरणों का उपयोग किया जा सकता हैं।

इसी संदर्भ में पंडित नेहरू की भूमिका सर्वथा भिन्न थी – उनका दृढ़ विश्वास था कि भारत की आर्थिक प्रगति एवं समृद्धि पूरी तरह वृहत–उद्योगों पर ही अवलम्बत है। पिछड़े एवं गरीब मुल्कों के लिए औद्योगीकरण

ही एक मात्र रास्ता है। औद्योगिक दृष्टि से सम्पन्न हुए बगैर किसी देश की स्वतंत्रता परिपक्व नहीं हो सकती – क्योंकि यह देखा गया है कि औद्योगिक –दृष्टि से पिछड़े हुए मुल्क आर्थिक साम्राज्यवाद के शिकंजे में फंस जाते है और ऐसे देशों की आजादी महज कहने भर की होती है। नेहरू कहते थे कि – 'बड़े पैमाने पर औद्योगीकरण करके अपनी ताकत बढ़ाये बगैर कोई देश आत्मनिर्भर नहीं हो सकता। बीसवीं शताब्दी का संदर्भ ही यही है। आधुनिक युग के संघर्षो में, हमें अपना मुकाम खुद ही बनाना पड़ेगा। औद्योगीकरण के अभाव में, हम आर्थिक दृष्टि से गुलाम हो जायेगें। जब कोई मुल्क किसी दुसरे देश पर आर्थिक दृष्टि से निर्भर हो जाता है तो वह शोषण के अंतहीनचक्र में फंस जाता है और लघु–उद्योगों पर टिकी उसकी अर्थव्यवस्था भी टूटकर बिखरने लगती है।

इसलिए सिर्फ छोटे उद्योगों के सहारे अपनी आजादी को कायम रखना ना–मुमकिन है –ना तो हम ग्रामोद्योग पर आधारित अर्थव्यवस्था को कायम रख सकते है और ना अपने देश को बचा सकते है – नतीजा ये कि जनता के बुनियादी सवाल ज्यों के त्यों बने रहते है।

देश की आर्थिक समस्याओं का जो विश्लेषण नेहरू ने प्रस्तुत किया था, वह गांधीजी की तुलना में अधिक गहरा और यथार्थवादी था। औद्योगीकरण के बारे में चर्चा करते समय गांधीजी के सामने एक ही पहलू प्रमुख था और वह था वर्गगत विषमता एवं सम्पत्ति संचय करने की प्रवृत्ति का विरोध। जबकि नेहरू की दृष्टि में औद्योगीकरण के आर्थिक संदर्भो के साथ–साथ, उसे राजनैतिक परिणाम भी विचारणीय थे। मात्र ग्रामोद्योग पर जोर देने के खतरनाक राजनैतिक परिणामों के खतरों को उन्होंने साफ–साफ विश्लेषित किया था इस संदर्भ में, उनके लिए राष्ट्र का अस्तित्व और उसका प्रतिष्ठा का प्रश्न ज्यादा महत्वपूर्ण था। यानी विषमता को मिटाकर जनता का जीवन स्तर ऊँचा किए बिना हमारी स्वतंत्रता अर्थ–हीन ही रहती है। स्पष्ट है कि नेहरू के चिंतन में राष्ट्रवाद को ही प्राथमिकता दी गई है। नेहरू की आंकाक्षा यही थी कि भारत को अन्य देशों द्वारा किए गए हस्तक्षेप तथा उनके आतंक से सर्वथा मुक्त रहना चाहिए।

इसलिए भारत के स्वाधीन होने पर, उन्होंने औद्योगीकरण पर सबसे अधिक जोर दिया। उनकी पुरजोर कोशिश यह थी कि भारत किसी भी प्रकार के साम्राज्यवाद का शिकार न बने।

वृहद उद्योग धंधें को लेकर गांधीजी के दृष्टिकोण से असहमत होने के साथ–साथ वे उनके 'ट्रस्टीशिप के सिद्धांत को' भी स्वीकार नहीं कर सके। बडे पूंजीपति और उद्योगपति स्वयं को मालिक न समझते हुए, खुद को 'ट्रस्ट्री' (विश्वस्त) समझे– तथा अपने मुनाफे का उपभोग जनहित में करें यह विचार ही नेहरू को अ–व्यवहारिक और यथार्थ विरोधी लगता था। वे मानते थे कि किसी व्यक्ति को सम्पत्ति का एकाधिकार सौंपना और फिर उससे ये उम्मीद करना कि वह अपने धन का उपभोग लोकहित में करेगा– एक तर्कहीन कल्पना मात्र है। उदाहरण देते हुए वे कहते है कि प्लेटो ने भी 'दार्शनिक राजा' की आदर्श अवधारणा प्रस्तुत की थी जो निस्वार्थ और परोपकारी वृत्ति से व्यवहार करेगा– लेकिन वास्तविक जीवन में 'दार्शनिक राजा' के लिए भी ऐसा आचरण शायद ही संभव हो पाता है? उनकी मान्यता थी कि इस दुनिया की बदनसीबी ये है कि यह अतिमानवों का जगत नहीं है। सांसारिक मनुष्य अपूर्ण, स्वार्थी और अवगुणों से युक्त होता है। यदि कोई अपवाद हुआ भी – तो उससे इस नियम की सिद्धी होती है।

गांधीजी के 'ट्रस्टीशिप–सिद्धांत' का विरोध करते हुए, नेहरू के भीतर का समाजवाद प्रखर हो उठता है था – जो गांधीजी के खिलाफ विद्रोह के लिए भी तैयार था। वे सोचते थे कि मानव जाति के इतिहास में, व्यक्ति एवं वर्ग के सामाजिक तथा राजनैतिक दृष्टिकोण सदैव ही व्यक्ति और वर्ग के आर्थिक हितों से प्रभावित होते हैं। बुद्धिवादी तर्को तथा नैतिक कारणों के बावजूद भी व्यक्ति अपने वर्ग हितों को छोड़ने में असमर्थ रहता हैं।

इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि गांधी और नेहरू के बीच तो वैचारिक मतभेद था – उसके मूल में दो मूलभूत प्रश्न प्रमुख थे – एक अहिंसा का और दूसरा औद्योगिकरण का। जहाँ गांधीजी का जोर ग्रामोद्योग प्रधान विकेन्द्रित ग्राम व्यवस्था पर था– वही नेहरू औद्योगिकरण एवं योजना–बद्ध–विकास के माध्यम से, ऐसे संघात्मक राज्य की स्थापना चाहते थे जिसमें केन्द्र शक्तिशाली हो। गांधी विचार में राजनैतिक पार्टियाँ महत्वपूर्ण नहीं थी – जबकि नेहरू लोकतंत्र की सफलता के लिए राजनैतिक पार्टियों को महत्वपूर्ण मानते थे।

गांधी की दृष्टि में सेना और पुलिस अनिवार्य बुराईयाँ थी – जबकि नेहरू के लिए सेना देश की सुरक्षा का आवश्यक साधन थी। फिर भी, यह एक महत्वपूर्ण एवं स्मरणीय तथ्य है कि नेहरू पर गांधीजी के व्यक्तित्व का गहरा असर था। गांधी के राजनैतिक नेतृत्व तथा सूझबूझ के प्रति उनकी श्रद्धा असीम थी – इसके बावजूद नेहरू ने अपने व्यक्तित्व की विशिष्ठता को बचाकर रखा था। गांधीजी के प्रति श्रद्धाभाव रखते हुए भी, उन्होंने इस श्रद्धा को वैचारिक गुलामी या अंधश्रद्धा के रूप में कभी परिवर्तित नहीं होने दिया। गांधी से अपने वैचारिक मतभेदों को उन्होंने बे–हिचक जनता के सामने बेलाग तरीके से प्रस्तुत किया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले प्रमुख मुद्दा था – अंग्रेजी शासन के विरूद्ध आजादी की लड़ाई किस तरह चलाई जाए? और इस मोर्चे पर गांधीजी की कार्यपद्धति तथा कार्यक्रमों से नेहरू पूरी तरह सहमत थे और इसलिए उन्होंने सदैव गांधी के उद्धेश्यों एवं कार्यक्रमों का समर्थन किया और वे गांधी के सहयोगी, आत्मीय एवं प्रिय पात्र बन सके तथा आगे चलकर उनके राजनैतिक उत्तराधिकारी कहलाए।

जिन मुद्दों पर गांधीजी और नेहरू के बीच मतभेद था– उनका संबंध स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की नई समाज रचना से था और ये प्रश्न थे– कि प्राप्त उपलब्धियों को स्थायी कैसे बनाया जाए? कोई असफलता मिली हो, तो उसे नजर अंदाज कैसे किया जा सकता है ? असफलता से उत्पन्न जनता की निराशा को दूर करके, आगे का संघर्ष कैसे चलाया जाए? इन सभी कार्यक्रमों के संदर्भ में, गांधी के नेतृत्व की महानता और उनके महत्व का पूरा–पूरा एहसास नेहरू को था। इस सामंजस्य के फलस्वरूप ही स्वाधीनता आंदोलन में इन दोनों महापुरूषों का योगदान परस्पर पूरक सिद्ध हो सका और आंदोलन की शक्ति भी मिली तथा सफलता भी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. विश्व इतिहास की झलक : पं. जवाहरलाल नेहरू।
2. भारत की खोज : पं. जवाहरलाल नेहरू।
3. मेरी कहानी : पं. जवाहरलाल नेहरू।
4. नेहरू – एक बॉयोग्राफी : फ्रैंक मॉरिस।
5. नेहरू – कि मेकिंग ऑफ इण्डिया : एम.जे. अकबर।

****

पंचायती राज : सत्ता के विकेन्द्रीकरण के रुप में सार्थकता

डॉ. अनिल दीक्षित *

शोध सारांश – गॉव की तरक्की और प्रगति पर ही भारत की प्रगति निर्भर करती है। गांधीजी ने ठीक ही कहा था कि 'यदि गॉव नष्ट होते है तो भारत नष्ट हो जायगा, वह भारत ही नहीं होगा, विश्व में उसका संदेश समाप्त हो जायेगा। संविधान के निर्माता भी इस तथ्य से भली–भांति परिचित थे, अत: हमारी स्वाधीनता को साकार करने और उसे स्थाई बनाने के लिए ग्रामीण शासन व्यवस्था की ओर पर्याप्त ध्यान दिया गया। हमारे संविधान में यह निर्देश दिया गया है कि 'राज्य ग्राम पंचायतों के निर्माण के लिए कदम उठाएगा और उन्हें इतनी शक्ति और अधिकार प्रदाय करेगा जिससे कि ग्राम पंचायतें स्व–शासन की इकाई के रुप में कार्य कर सके। भारत में जनतंत्र का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि ग्रामीणजनों का शासन से कितना अधिक प्रत्यक्ष और सजीव सम्पर्क स्थापित हो पाता है ? या यो कहें कि ग्रामीण भारत के लिए पंचायती राज ही एक मात्र उचित योजना है। पंचायतें ही हमारे राष्ट्रीय जीवन की रीढ़ हैं।

प्रस्तावना – ग्राम पंचायतों का इतिहास बहुत पुराना है आपसी झगडों का फैसला पंचायतें ही करती थी, परन्तु अंग्रेजी राज के जमाने में पंचायतें धीरे–धीरे समाप्त हो गई और सब काम प्रांतीय सरकारें करने लगी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राज्यों की सरकारों ने पंचायतो की स्थापना की ओर विशेष ध्यान दिया। प्रो. रजनी कोठारी के अनुसार 'राष्ट्रीय नेतृत्व का एक दूरदर्शितापूर्ण कार्य था पंचायती राज की स्थापना। इससे भारतीय राज–व्यवस्था का विकेन्द्रीकरण हो रहा है और देश में एक सी स्थानीय संस्था के निर्माण से उनकी एकता भी बढ़ रही है' इस की शुरुआत का श्रेय भी पं. जवाहरलाल नेहरु को है। पं. नेहरु का कहना था कि 'गांवों के लोगो को अधिकार सोंपने चाहिए। उनको काम करने दो चाहे वे हजारों गलतियां करें। इससे घबराने की जरुरत नहीं। पंचायतों को अधिकार दो।

सन् 1952 में सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। इसमें काफी संख्या में सरकारी कर्मचारी रखे गए और यह दावा किया गया कि इस कार्यक्रम में जनता की ओर से सक्रिय रुप से भाग लिया जाएगा । इसका उद्देश्य आर्थिक नियोजन और सामाजिक पुनरुद्धार की राष्ट्रीय योजनाओं के प्रति देश की ग्रामीण जनता में सक्रिय रुचि पैदा की जा सके। इसका परिणाम यह हुआ कि गॉव के उत्थान के लिए खुद प्रयत्न करने की बजाय ग्रामीण जनता सरकार का मुंह ताकने लगी। अमेरीकी लेखक **रेनहार्ड बेंडिक्स** लिखते है – 'सामुदायिक विकास की सबसे बडी कमजोरी उसका सरकारी स्वरुप और नेताओं की लफ्फाजी थी। एक तरफ इस कार्यक्रम के सूत्रधार जनता के आगे जाने की आशा करते थे, दूसरी ओर उनका विश्वास था कि सरकारी कार्यवाही से ही नतीजा निकल सकता है। कार्यक्रम जनता को चलाना था, लेकिन वे बनाए ऊपर से जाते थे'।

सामुदायिक कार्यक्रम की जांच के लिये एक अध्ययन दल 1957 में गठित किया गया, जिसके अध्यक्ष श्री बलंवत राय मेहता थे। **मेहता अध्ययन दल** ने अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को सफल बनाने हेतु पंचायती राज, संस्थाओं की तुरन्त शरुआत की जाना चाहिये। इसे 'लोकतंत्रीय विकेन्द्रीकरण ' का नाम दिया। पंचायती राज की शुरुआत की गई, इसकी मुख्यता 4 विशेषताऐं चिंहित की गई –

1. पंचायती राज की तीन सीढियां थी। – ग्राम स्तर पर ग्रामपंचायत, खण्ड स्तर पर पंचायत समिति और जिला स्तर पर जिला–परिषद।
2. पंचायती राज प्रणाली में स्थानीय लोगों को काम करने की आजादी थी, और देख–रेख ऊपर से होती थी।
3. सामुदायिक कार्यक्रम की भांति यह शासकीय ढांचे का अंग नहीं था। पंचायती राज की संस्थाऐं निर्वाचित होती थी और इसके कर्मचारी निर्वाचित जनप्रतिनिधियों के अधीन काम करते थे।
4. साधन जुटाने और जनसहयोग संगठित करने का भी इन संस्थाओं को पर्याप्त अधिकार था।

पंचायती राज का महत्व – नाम पुराना है मगर संस्थाऐं नयी है। इनकी उपयोगिता निम्न बातों से स्पष्ट है –

- प्रजातांत्रिक परम्पराओं की स्थापना करना।
- भावी नेतृत्व प्रदान करना।
- प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण की ओर नया कदम।
- राजनीतिक व्यवस्थाओं और स्थानीय समाज के बीच कड़ी।
- नागरिकों को राजनीतिक जागरुकता प्रदान करना।
- शासन के करीब पहुंचना।

संविधान के 73 वें संशोधन द्वारा पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्रदान की गयी। इस अधिनियम के अनुसार पंचायती राज के मुख्य लक्षण है –

- ग्रामसभा ।
- पंचायतों का गठन – ग्राम स्तर, जनपद स्तर व जिला स्तर ।
- पंचायतों का कार्यकाल ।
- वित्त आयोग का गठन ।
- पंचायतों के निर्वाचन ।

पंचायतों के कार्य – 11 वीं अनुसूची में 29 विषय है।

पंचायती राज संस्थाओं के भारतीय संविधान का हिस्सा बन जाने से अब कोई भी पंचायतों को दिये गए अधिकारों, दायित्वों और वित्त साधनों को उनसे छीन नहीं सकेगा। 73 वां संविधान संशोधन में केवल पंचायती राज संस्थाओं में संरचनात्मक एक एकरुपता लाने का प्रयास है बल्कि यह

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

सुनिश्चित भी करता है कि इन संस्थानों में समाज के कमजोर वर्गो की हिस्सेदारी रहेगी। प्रत्येक पंचायत में पंचायत क्षेत्र में कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति/जनजाति की जनसंख्या के अनुपात में अनिवार्य आरक्षण की भी व्यवस्था की गयी है। राज्यों के लिये यह निर्देश है कि वे कुल सीटों की 1/3 सीटें महिलाओं के लिए आरक्षण करने की व्यवस्था करें।

मध्यप्रदेश शासन ने पंचायत व्यवस्था को 1994 से देश के अन्य राज्यों की तुलना में सर्वप्रथम लागू कर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। अब तक पंचायती राज संस्थाओं को विफलता का कारण उनके चुनाव समय पर ना कराना और उन्हें बार-बार भंग या स्थगित किया जाता रहा है। वर्तमान अधिनियम ने इस समस्या पर समुचित ध्यान दिया गया है। और उम्मीद है कि पंचायती राज संस्थान निचले स्तर पर लोकतंत्र के कारगर उपकरण साबित होंगे, क्योंकि उनके निर्वाचनों की निश्चित अवधि पर समयबद्ध व्यवस्था की गयी है।

73 वें संशोधन अधिनियम का नकारात्मक बिन्दु यह है कि इसमें राजनीतिक दलों की भूमिका को स्पष्ट रुप से परिभाषित नहीं किया गया है। इसी प्रकार पंचायती राज संस्थाओं और स्थानीय नौकरशाही के बीच संबंध सूत्रता के बारे में भी अधिनियम चुप्पी साधे हुए है, अधिनियम बन जाने के बावजूद पंचायती राज संस्थाओं की सफलता राज्य सरकारों की इच्छा पर निर्भर करती है।

पंचायती राज की शुरुआत को एक ऐतिहासिक घटना कहा गया है, पंचायती राज संस्थाओं से अधिक प्रशंसा बहुत है, कम संस्थाओं को प्राप्त है। पं. नेहरु ने स्यवं कहा था कि ' मैं पंचायती राज के प्रति पूर्णत: आशांवित हूँ मैं महसूस करता हूँ कि भारत के संदर्भ में यह बहुत कुछ मौलिक एवं क्रांतिकारी है। **प्रो. रजनी कोठारी** के अनुसार ' इन संस्थाओं ने नए स्थानीय नेताओं को जन्म दिया है जो आगे चल कर राज्य और केन्द्रीय सभाओ के निर्वाचित प्रतिनिधियों से अधिक शक्तिशाली हो सकते है। कांग्रेस और अन्य दलों के राजनीतिज्ञ इन संस्थाओं को समझने लगे है, अब वे राज्य-विधानमंडल के बजाय पंचायत समिति और जिला परिषदों को तरजीह देने लगे है'।

पंचायती राज व्यवस्था की सफलता और असफलता इस बात को प्रदर्शित करती है कि जनता में जागरुकता कितने प्रतिशत आई हैं और इन संस्थाओं ने कितने सराहनीय कार्य किये है। पंचायती राज व्यवस्था में कुछ नई समस्याऐं उत्पन्न हो गयी है, कुछ पहले की थी, जिनका निराकरण करना आवश्यक है। समस्याऐं है -

- सत्ता के विकेन्द्रीकरण की समस्या।
- अशिक्षा व निर्धनता की समस्या।
- दलगत राजनीति।
- धन की समस्या।
- राजनीतिक जागरुकता की कमी।
- विकास कार्यो की उपेक्षा (शासकीय अधिकारियों व निर्वाचित प्रतिनिधियों में सहयोग का अभाव)

सफलता के कुछ सुझाव निम्न है -

- व्याप्त गुटबंदी को समाप्त करना।
- चुनावों में मतदान को अनिवार्य करना।
- वित्तीय हालत में सुधार करना।
- पंचायतों के निर्वाचित प्रतिनिधियों को प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये।
- पंचायतों पर विश्वास करना।

श्री राजीव गांधी ने पंचायती राज के महत्वों को समझकर 'जनता की शक्ति' का नारा देते हुए 64 वां संविधान संशोधन विधेयक प्रस्तुत किया। पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से भारत में स्थानीय शासन की एक नयी और सदृढ़ प्रणाली की नींव पड़ चुकी है, इसके रोचक राजनीतिक परिणामों पर विचार मंथन शुरु हो चुका है जो सत्यता की ओर अग्रसर है -

- राजनीतिक पार्टियों की ताकत बढ़ना।
- राजनीतिक दलों के आंतरिक जीवन पर भी पंचायती राज का असर पड़ा।
- ग्रामीण राजनीति में गतिशीलता व होड़ बढ़ना।
- सम्पर्क सूत्र की राजनीति (**Linkaje politics**) का विकास होना।
- पिछड़ी हुई जातियों में नई चेतना का विकास होना।
- ग्रामीण जीवन में गुटबंदी की भावनाऐं विकसित होना।

विकेन्दीकरण की दिशा में स्वतंत्रता के बाद से अब तक प्रयासों में नि:संदेह पंचायती राज व्यवस्था की संकल्पना में नवीन इच्छा शक्ति का प्रसार किया है, जो आने वाले समय में निश्चित रुप से सकारात्मक प्रतिफल देंगे। अत: निर्विवाद है कि पंचायती राज एक आदर्श विचार है, एक सिद्धांत है, पारम्परिक जीवन दर्शन एवं विश्वास है और हमारे राष्ट्रीय प्रणेताओं एवं नेताओं का स्वप्न है, जिसे हम सभी को सभी स्तरों पर साकार करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रजनी कोठारी : पॉलिटिक्स इन इण्डिया, पेज. 132।
2. रेनहार्ड बेंडिक्स : नेशनल बुल्डिंग एण्ड सिटीजनशिप (न्यूयार्क 1964) पेज. 266-283।
3. रजनी काठारी : पॉलिटिक्स इन इण्डिया, पेज. 137।
4. पंचायती राज संदर्भ में प्रशासन तथा राजनीति-लोकप्रशासन, जनवरी-मार्च, 1975। पेज 90-98।
5. नई दुनिया, इन्दौर, 25 जनवरी, 1994।
6. पुखराज जैन, डॉ. बी.एल. फड़िया : भारत में पंचायती राज की राजनीति।

****

भारत में लोकतंत्र के विविध आयाम : एक अध्ययन

प्रो. भावना कुशवाह *

प्रस्तावना – लोकतंत्र दुनिया की शासन व्यवस्थाओं में सर्वश्रेष्ठ शासन व्यवस्था है। यह मात्र एक शासन व्यवस्था नहीं, बल्कि एक समाज व्यवस्था एवं जीवन पद्धति है। इस शासन व्यवस्था में जन सहभागिता एवं जनता के प्रति उत्तरदायित्व का भाव बना रहता है। जनता अपने मत द्वारा अपने अधिकार, जनप्रतिनिधियों को सौंप देती है। जनतंत्र में जनमानस के अनुसार जनसत्ताऐं मतदान से शांतिपूर्ण ढंग से बदल जाती है। जनता व सरकार का सामंजस्य ही लोकतंत्र की खूबसूरती है। यह व्यवस्था अनेक कमियाँ के बाद भी जनमानस के अधिक पसंद की एवं अधिक निकट की होती है।

फ्रांस की क्रांति में स्वतंत्रता, समानता व बन्धुत्व के महामंत्र से सम्पूर्ण मानवजाति के लिए राजतंत्र की नींव को हिलाकर ही लोकतंत्र का उदय हुआ। इस लोकतंत्र के लिए मानवजाति ने बड़े संघर्षो से बलिदान एवं त्याग की लड़ाईयां लड़ी। इससे लोकतांत्रिक व्यवस्था मानवता के लिए सम्मान व गौरव का प्रतीक बन गई। इस लोकतंत्र को अमेंरीका के पूर्व राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने "**जनता का, जनता के लिए, जनता के द्वारा शासन**" कहा। यही भाव लोकतंत्र की वास्तविकताओं को स्पष्ट करता है।

लोकतांत्रिक व्यवस्था की नींव स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व, स्वतंत्र–निष्पक्ष न्यापालिका, स्वतंत्र–निष्पक्ष मीडिया, स्वतंत्र निष्पक्ष निर्वाचन पर टिकी हुई है। यह व्यवस्था मानवता के लिए वरदान साबित हुई है, क्योंकि इससे व्यक्तित्व विकास का गरिमापूर्ण वातावरण निर्मित होता है।

लोकतंत्र में सार्वजनिक विषयों पर चर्चा होना, जन सहभागिता निभाना, विचार व्यक्त करना, संगठन बनाना, शासन क्रियान्वयन व नीति निर्माण में भागीदार बनना एवं लोकतंत्र में आस्था एवं विश्वास व्यक्त करना लोकतंत्र को मजबूत बनाती है।

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक राष्ट्र है, लोगों के मूल स्वभाव व प्रकृति में ही लोकतंत्र समाहित है। अतीत से वर्तमान तक हमारे इतिहास, संस्कृति में लोकतंत्र निहित रहा है। आज के भारत ने विदेशी सत्ता के विरूद्ध आजादी की लम्बी लड़ाई लड़कर भारतवासियों को गुलामी की जंजीरों से मुक्त करवाया। भारत को जो अधिकार विहिन भारत था, वह अब अधिकार सहित भारत बन गया था। लोकतंत्र ही वह शासन व्यवस्था है जिसमें शासन के अंतिम सूत्र जनता एवं जन प्रतिनिधियों के हाथ में रहते है। सत्ता का उपयोग जनहित को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है। यह जांचा जाना आवश्यक होता है कि जन इच्छाओं के अनुकूल कार्य हो रहे है, एवं भारत समाज में सबसे पीछे खड़े व्यक्ति का भी कल्याण होना चाहिए। उसे सरकार के होने का अहसास, सुरक्षा व कानून, न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति उसे शिक्षा व स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ सहजता से मिलना चाहिए। वह शासन की क्रियाओं में स्वयं को भागीदार समझ सके एवं सरकार की योजनाओं का लाभ जन सामान्य ले सके। लोकतंत्र में वयस्क मताधिकार, गुप्त मतदान व्यवस्था, राजनीतिक दल, उत्तरदायी शासन, बहुमत का शासन, विधि का शासन एवं जनकल्याण के तत्व निहित रहते है। विश्व का प्रत्येक राष्ट्र स्वयं को लोकतांत्रिक मानने में गौरवान्वित अनुभव करता है।

प्रसिद्ध विचारक रोस्टो – 'दूसरे महायुद्ध के बाद की आश्चर्य जनक घटना भारत में लोकतंत्र का कायम रहना है।' भारत की लोकतांत्रिक व्यवस्था विश्व के अन्य राष्ट्रो के लिए प्रेरणादायक रही है। यदि भारतीय लोकतंत्र असफल होता है, तो यह मानव इतिहास की सबसे बड़ी पराजय होगी। विविधताओं, अभावों, निरक्षरता, बाधाओं एवं कमियाँ के बाद भी हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था की विकास यात्रा विगत 16 आम निर्वाचनों के बाद भी सफल रही है, चुनावों के बाद बदलाव एक स्वभाविक प्रक्रिया रही है। भारत में सत्ता हस्तांरण जनमत अनुसार सहजता से होता रहा है।

"**धनवानों का धन व गरीबों की मजबूरी लोकतंत्र के लिए बड़ी चुनौती रही है।**" जातिवाद, सम्प्रदायवाद, भाषावाद, क्षेत्रीयता, गरीबी, अशिक्षा, आतंकवाद, विदेशी हस्तक्षेपों की बड़ी चुनौतियां को लांघते हुए अग्नि परीक्षाओं में खरा उतरकर हमारे लोकतंत्र ने अपना गौरव विश्व में स्थापित किया है। यह भारतीय जनमानस के विकास व कल्याण में सफल रहा है।

आज का युग विज्ञान व तकनीक का युग है। भारत में आधुनिकता का लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनता के हित व कल्याण के लिए व्यापक उपयोग किया है। सूचना का अधिकार, शिक्षा की (6 से 14 वर्ष) अनिवार्यता का अधिकार, लोकसेवा गारण्टी आदि के प्रयास व्यापक रूप में प्रभावी रहे है, ऑनलाइन व्यवस्था ने जनसुविधाओं को बढ़ाया है, समय सीमा में लोकसेवाऐं प्राप्त होने लगी है। भारत निर्वाचन आयोग द्वारा इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन का उपयोग भारत के 75 करोड़ से अधिक मतदाताओं व सात लाख पचास हजार से अधिक मतदान केन्द्रों पर उपयोग कर भारत ने दुनिया के सामने लोकतंत्र में आधुनिक तकनीक के प्रयोग का आदर्श प्रस्तुत किया है। हमारे मंगल अभियान की गौरवमयी सफलता में हमारी स्वदेशी साधनों एवं उच्च बौद्धिक वैज्ञानिक प्रतिभाओं ने सस्ता व सहज बनाकर लोकतंत्र की विजय का सफल उदाहरण रखा है।

मानव के सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास के लिए एवं गरिमापूर्ण जीवन हेतु मूल अधिकारों का प्रावधान भारतीय संविधान में किया गया है। ये बिना भेदभाव के रंग, वंश, मूल, धर्म, लिंग, जाति, भाषा से ऊपर उठकर मानव कल्याण एवं मानवहित को पूर्ण करता है। यह जनहित ही लोकतंत्र की प्राणवायु है। यही लोकतंत्र जन सामान्य की जन अभिव्यक्ति का श्रेष्ठ आईना है।

लोकतंत्र मात्र एक तंत्र नही है। लोकतंत्र में सामूहिक निर्णयों पर

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

सार्वजनिक नियंत्रण और अधिकारों की समानता पर जोर दिया गया है। लोकतंत्र में जनता की आकांक्षाओं का सम्मान किया जाता है एवं मूल्य आधारित आकांक्षा लोकतंत्र का आधार है। लोकतंत्र में जन सामान्य जितना स्वतंत्र होगा, उसे अपने व्यक्तित्व विकास में उतना ही लाभ होगा, प्रत्येक जन को विकास के समान अवसर बिना किसी भेदभाव के मिलना चाहिए। स्वतंत्रता तभी स्वस्थ व चिरायु रहेगी जब उसके निर्माण का आधार भातृत्व भाव रहेगा। भातृत्वहीन स्वतंत्रता व समानता अंतत: दिशाहीन सिद्ध होती है, इसमें कोई संदेह नही है।

प्राचीन युग में भारतीय लोकतंत्र की जड़े तो बहुत गहरी रही है, किन्तु सामन्तवादी मनोवृत्ति एवं विदेशी गुलामी ने इस लोकतंत्र के भाव को प्रभावित किया है, आजादी के बाद भारत में लोकतंत्र के मूलभाव अपने मूलरूप में ही स्वाभाविक ढंग से उभरकर आये एवं एक सशक्त लोकतंत्र की नींव आजाद भारत में पड़ी। फ्रांस, ब्रिटेन एवं अमेरीका की लोकतांत्रिक व्यवस्था ने भी हमें दिशा प्रदान की। दूसरे महायुद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र की स्थापना तथा उसके द्वारा मानव अधिकारों का सार्वभौमिक घोषणा पत्र ने हमारे संविधान में मौलिक अधिकारों के जन्म को सशक्त आधार प्रदान किया है। विश्व समुदाय में लोकतंत्र के लिए निरन्तर संघर्ष जारी रहा है, विश्व जनमत, अन्तर्राष्ट्रीय नैतिकता, अन्तर्राष्ट्रीय कानून, अन्तर्राष्ट्रीय मनोबल एवं चरित्र ने लोकतंत्र को सार्वभौमिकता प्रदान की है। इन्हीं सकारात्मक परिस्थितियों ने एक सफल लोकतंत्र की नींव भारत में रखी है। 15 अगस्त 1947 के बाद से भारत में लोकतंत्र का पौधा संरक्षित व संवर्धित हो रहा है। जो अब विशाल वटवृक्ष का रुप लेता जा रहा है।

" बीसवीं सदी में लोकतंत्र से तात्पर्य एक राजनीतिक नियम, शासन की विधि व समाज के ढांचे से नहीं है, वरन् यह जीवन के उस मार्ग की खोज है जिसमें मनुष्यों की स्वतंत्र और ऐच्छिक बुद्धि के आधार पर उसमें अनुरूपता और एकीकरण लाया जा सके। "

लोकतंत्र की बड़ी बाधाओं में जनता की उदासीनता, अज्ञानता, सहभागिता का अभाव लोकतंत्र में विश्वास एवं आस्था की कमी रहे है। जन सहयोग व जन जागरूकता का अभाव लोकतंत्र को कमजोर बनाते है। संकुचितताएँ एवं नकारात्मकता लोकतंत्र को राह से भटकाती है किन्तु इन बाधाओं के बीच भी लोकतंत्र का रथ अपनी मंजिल की ओर निरन्तर तेजी से बढ़ रहा है।

जनतंत्र में जनमत प्रत्येक निर्णय व सहमति के निर्माण का आधार होता है। जनमत उतना ही स्वस्थ व रचनात्मक होता है, जितने स्वस्थ व रचनात्मक संचार माध्यमों के घटक होते है। मीडिया की लोकतंत्र में इतनी अहम् भूमिका होती है कि लोकतंत्र का चौथा आधार स्तम्भ कहा जाता है। यह मीडिया ही जनता व शासन दोनों को प्रहरी की तरह मजबूत बनाते है।

पुनीत कुमार ने अपनी पुस्तक- " मानव अधिकार एवं भारतीय लोकतंत्र में लिखा है- राजनीतिक दल वे कहार होते है जिसके कंधे लोकतंत्र की पालकी को उसके लक्ष्य तक पहुँचाते है।" नि:संदेह लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की अहम् भूमिका होती है। राजनीतिक दल लोकतंत्र की राजनीति के खिलाड़ी होते है, जो जीत हासिल कर सत्ता का वरण करना चाहते है। सत्ता प्राप्त करना उनका लक्ष्य होता है। ये विचारधारा संगठन, कार्यक्रम को समन्वित रहकर धीरे-धीरे अपने मकसद की ओर बढ़ते है। लोकतंत्र की सफलता तभी संभव है, जब जनता की भागीदारी के साथ सरकार के हर क्रियाकलाप पर निगाह रहें एवं जरूरत के अनुसार सकारात्मक-नकारात्मक विचार जनमानस के बीच अभिव्यक्त हो सके।

निष्कर्ष - किसी भी राष्ट्र की शासन व्यवस्था को संचालित करने के लिए एक प्रणाली होना आवश्यक है। इनमें लोकतंत्र सर्वश्रेष्ठ शासन व्यवस्था है। राष्ट्र में सरकार के तीनों अंगो कार्यपालिका, व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका द्वारा संचालित होता है। स्वतंत्र निष्पक्ष निर्वाचन तथा सशक्त न्याय व्यवस्था लोकतंत्र को शक्ति प्रदान करते है। लोकतंत्र का एक चौथा आधार स्तम्भ स्वतंत्र-निष्पक्ष मीडिया हमारे लोकतंत्र को मजबूत बनाता है। राष्ट्र में जनचेतना, सहभागिता, उत्तरदायित्व, पारदर्शिता, लोक सेवाओं का लोकहित में उपयोग ही लोकतंत्र की प्राण है। लोकतंत्र को जन आस्था व विश्वास से मजबूती मिलती है। इसी सहभागिता से लोकतंत्र की स्वर्णिम विकास यात्रा की राह बन सकती है।

आज का युग लोकतंत्र का युग है। लोकतंत्र में आस्था व विश्वास लोकतंत्र का प्राण है। लोकतंत्र में अधिकारों का वरदान होता है। जो जनकल्याण व जन संरक्षण के लिए आवश्यक है। विश्व शांति, मानव कल्याण, मानवहित के लिए लोकतंत्र एक अनमोल उपहार है। लोकतंत्र ही हमें 'जीयो व जीने दो' का संदेश देता है। सारी मानव जाति को एक परिवार मानता है। एक शोषण विहिन, अधिकार सम्पन्न राष्ट्र ही विकास की नई राह चुन सकता है। जो सारी मानव जाति के लिए प्रेरक बनता है, लोकतंत्र के आधारों में सहभागिता एवं उत्तरदायित्वों का सामंजस्य विश्व के लिए हितकारी हो सकता है।

विवेकानन्द के अनुसार भारत के अतीत में लोकतंत्र की जड़े गहराई तक समाई हुई है, सारी मानव जाति लोकतंत्र की ओर बढ़ रही है। यही विश्व समुदाय के लिए सदैव हितकारी होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजनीतिशास्त्र के सिद्धांत : आर. सी. अग्रवाल, एस. चन्द्र एण्ड कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली (1984)
2. लोकतंत्र : वीथम डेविड एण्ड केविन बायले, नेशनल बुक ट्रस्ट नई दिल्ली (1995)
3. भारत में लोकतंत्र : चन्द्रप्रकाश भांभरी, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली (2011)
4. भारतीय शासन व राजनीति : बी.एल. फड़िया एवं पुखराज जैन, साहित्य भवन, आगरा (2010)
5. मानव अधिकार एवं भारतीय लोकतंत्र : पुनीत कुमार, कैलाश पुस्तक सदन भोपाल (2008)
6. भारत का संविधान-एक परिचय - दुर्गादास बसु, बाधवा एण्ड कम्पनी दिल्ली (2001)
7. मानव अधिकार - डॉ. एच.ओ. अग्रवाल, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद (2008)
8. मानव अधिकार - एस.के. कपूर, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद (2011)
9. द प्राबलम्स ऑफ पॉलिटीकल फिलॉसफी: डी.डी. रफील (1979)
10. मानव अधिकार सिद्धांत व व्यवहार - जी.पी. नेमा, एण्ड के.के. शर्मा, कॉलेज बुक डिपो जयपुर (2010)

****

भारतीय संघ की एकता के शिल्पकार- सरदार वल्लभ भाई पटेल

डॉ. श्रीकांत दुबे * डॉ. रामस्वरूप मेहरा * *

प्रस्तावना – 15 अगस्त 1947 को अंग्रेजों ने भारत को स्वतंत्र करने की घोषणा तो कर दी लेकिन अंग्रेजो ने यह साफ-साफ कह दिया कि 565 रियासतें कानूनन उनकी नहीं है। इसलिए उन्हें भारत या पाकिस्तान को नहीं सौपा जा सकता। यह सुन नेहरू चिंतित हो गये किन्तु सरदार पटेल ने एक रणनीति का निर्माण किया एवं लार्ड माउन्टबेटन से कहा कि वे इन रियासतों को भारतीय संघ में मिलने हेतु अपील करे। माउन्टबेटन इस हेतु राजी हो गये किन्तु शर्त यह रखी कि भारतीय संघ में शामिल होने पर केवल रक्षा, विदेश एवं संचार के मामले ही भारत सरकार देख सकेगी। शेष सारे अधिकार उनके पास सुरिक्षत होंगे। पटेल ने इस पर मौन सहमति जरूर प्रदान कर दी किन्तु पटेल की भविष्य की रणनीति की भनक इन रियासतों को नहीं लगी। आखिर पटेल ने ऐसा क्या किया कि गांधी जी द्वारा उन्हें दी गई सरदार की उपाधि को उन्होंने सार्थक कर दिया। पटेल बर्फ से ढंके एक ज्वालामुखी थे वे नवीन भारत के निर्माता थे । सरदार पटेल को भारत के विस्मार्क की संज्ञा दी गई लेकिन पटेल की सफलताएँ उनसे भी बड़ी हैं क्योकि उन्होंने ऐसे माहौल में काम किया जो बेहद कठिन था । उन्होंने छोटी-छोटी रियासतों और जागीरों को जहाँ अलग-अलग भाषाएँ, परम्पराएँ और धर्म थे, को एकरूप से एकीकृत किया । भारत की इस विशाालता के कारण पटेल ही हैं । पटेल ने यह कार्य उस समय किया जब चर्चिल इस उपमहाद्वीप को खण्ड-खण्ड करना चाहते थे । पटेल ने वह किया जो आज तक किसी देश में कोई नहीं कर पाया । मैनचेस्टर गार्जियन ने लिखा था कि, 'पटेल के बिना गांधी जी के विचारों का व्यवहारिक प्रभाव कम पड़ता और नेहरू के आदर्शवाद का क्षेत्र संकुचित हो जाता । पटेल स्वतंत्रता संग्राम के नायक ही नहीं थे बल्कि वे स्वातंत्रयोत्तर भारत के निर्माता भी थे एक ही व्यक्ति क्रांतिकारी और कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में कभी सफल नहीं होता किन्तु सरदार पटेल अपवाद थे ।'पटेल के योगदान को समझने के लिए हमें विस्तार में जाना होगा।

स्वतंत्रता के पूर्व भारतीय संघ की स्थिति- भारत में संघवाद का प्रारंभ 1861 में हुआ। 1935 के अधिनियम में भारतीय शासन व्यवस्था को संघ व्यवस्था कहा गया। 1935 के पूर्व 1899 का भारतीय शासन अधिनियम संघ व्यवस्था से युक्त था किन्तु इसकी प्रवृत्ति एकात्मक थी। 1935 के अधिनियम में 2 प्रावधान किये गये। पहला ब्रिटिश भारत के शासन की इकाई को विभाजित कर प्रांतों का गठन करना तथा दूसरा ब्रिटिश भारत के अलावा देशी रियासतों को भी शामिल करना। 1935 का अधिनियम इस दृष्टि से महत्वपूर्ण था कि जब 1950 में हमारा नया संविधान बना तो उसके 395 में से 250 अनुच्छेद अक्षरश: या मामूली परिवर्तन के साथ स्वीकार किये गये। 1935 के अधिनियम में तीन बातों पर जोर था- (1) लिखित संविधान, (2) शक्ति विभाजन (3) संघीय न्यायालय। किन्तु इस अधिनियम में कमजोरी यह थी कि (1) प्रांतों एवं देशी रियासतों के संबंध में एकरूपता नहीं थी (2) शक्तिपृथक्करण का प्रावधान नहीं था (3) संघ की इकाईयों में अंतर था (4) विधान की प्रधानता नहीं थी (5) यह अर्धसंघात्मक था।

संघ के निर्माण की पूर्व शर्त पूरी न होने के कारण यह अधिनियम लागू तो किया गया किन्तु संघीय योजना को भविष्य के लिए छोड़ दिया गया। 1946 के केबिनेट मिशन ने निर्णय लिया कि (1) भारत को एक संघ राज्य के रूप में संगठित किया जाये (2) इसमें कार्यपालिका व व्यवस्थापिका हो (3) संघ के पास शक्ति हों एवं प्रांतों के पास भी अधिकार हों (4) प्रांतों की स्वतंत्रता का प्रस्ताव (5) संविधान में संशोधन हेतु प्रांत भी प्रस्ताव रख सकेगा। किन्तु केबिनेट मिशन में यह कमी थी कि (1) इसमें केन्द्र सरकार कमजोर रखी गई (2) प्रांतों की रचना उपयुक्त नहीं थी (3) संविधान निर्माण का तरीका उपयुक्त नहीं था (4) संघ निर्माण की जटिल प्रक्रिया का प्रावधान था।

संविधान सभा एवं भारतीय संघ- संविधान सभा में सदस्यों ने यह तय किया कि भारतीय शासन व्यवस्था संघात्मक होनी चाहिए। इस हेतु प्रस्ताव आये कि (1) संघ में सामान्य के साथ-साथ संकट कालीन शक्तियां हो (2) प्रांत भाषायी आधार पर बने (3) शक्ति पृथक्करण हो (4) देशी रियासतों का विलय हो (5) उच्च सदन की स्थापना हो ।

इन प्रस्तावों से स्पष्ट था कि संविधान निर्माता संघात्मक व्यवस्था चाहते थे। सभा में यह बहस का सबसे बड़ा मुद्दा था। सभा ने निर्णय लिया कि संघ के संबंध में प्रावधान होंगे कि (1) लिखित संविधान बने (2) संविधान सर्वोच्च हो (3) केन्द्र राज्यों के मध्य शक्तियों का विभाजन हो (4) स्वतंत्र एवं सर्वोच्च न्यायालय हो (5) राज्य सभा के रूप में उच्च सदन बनें।

स्वतंत्रता के पश्चात प्रांतों की स्थिति- 1946 में स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर देश के विभाजन के पहले प्रांतों में राज्य भावना बड़ी प्रबल थी। यदि देश का दुखद विभाजन नहीं हुआ होता तो यह कहा जा सकता है कि भारत शक्तिशाली राज्यों का ढीला-ढाला संघ होता। यही कारण है कि संविधान में भारत को राज्यों का संघ कहा गया। संविधान निर्माताओं ने देश में सहकारी संघवाद की नींव डाली। स्वतंत्रता के पश्चात भारत में 9 गवर्नरों के प्रांत मद्रास, बंबई, पश्चिम बंगाल, संयुक्त प्रांत बिहार, पूर्वी पंजाब, मध्यप्रांत व बरार, असम तथा उड़ीसा एवं 5 चीफ कमिश्नरी के प्रांत दिल्ली, अजमेर, मारवाड़, पंत पिपलोदा, कुर्ग तथा अण्डमान निकोबार द्विपसमूह अस्तित्व में थें।

देशी रियासतों का भारत में विलीनीकरण एवं सरदार पटेल की भूमिका- स्वतंत्रता के पश्चात सरदार पटेल के दूरदर्शी नेतृत्व में देशी रियासतों के एकीकरण के पश्चात संक्रमणकालीन व्यवस्था के रूप में वर्गीकृत राज्यों का गठन किया गया। रियासतों की जटिल समस्या को सुलझाने की दिशा में पटेल ने ऐतिहासिक कार्य किया। पटेल के आव्हान पर देशी रियासतों ने समय को भॉपा एवं भारत में मिलने हेतु सहमती दे दी। 500 से ज्यादा रियासतों का भारत में विलय कोई आसान काम नहीं था। कोई भी रियासत अपना रूतबा एवं शानो शौकत खोना नहीं चाहती थी। पटेल ने इन रियासतों को एक-एक कर भारत में मिलाकर कमाल कर दिया। पटेल ऐसा करके भारत

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र विभाग) शासकीय गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र विभाग) शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी (म.प्र.) भारत

की एकता के सूत्रधार सिद्ध हुये। इस हेतु पटेल ने सारे तरीकों का उपयोग किया। क्योंकि ब्रिटिशर्स भारत को फूट डालकर खण्ड-खण्ड बनाये रखना चाहते थे पटेल ने उनके इरादों को भॉप लिया। वास्तव में वे राष्ट्रीय एकता के अद्भुत शिल्पी थे। उन्होंने भारत की इकाईयों को मजबूत धागे में पिरोकर एक सशक्त भारत के रूप में हमें सौप दिया। जबर्जस्त अनुशासन एवं निर्णय पर अडिग रहकर पटेल ऐसा कर पाये। पटेल ने हैदराबाद, जूनागढ़ और कश्मीर को छोड़कर शेष सभी रियासतों को भारतीय संघ में मिला लिया।

हैदराबाद का भारत में विलय – भारत की सबसे बड़ी रियासत हैदारबाद के निजाम ने पाकिस्तान की सहायता से एक शक्तिशाली सेना के निर्माण की कोशिश की। किन्तु पटेल ने हैदराबाद के विरूद्ध सैन्य कार्यवाही की जिसे ऑपरेशन पोलोय कहा गया। पटेल की इस कार्यवाही के परिणाम स्वरूप निजाम को भारतीय संघ में विलय हेतु सहमती देनी पड़ी। पटेल ने चतुराई से यह कार्य किया। इस हेतु वे बल प्रयोग करने से नहीं चूके।

जूनागढ़ का भारत में विलय – जूनागढ़ काठियावाड़ की छोटी रियासत थी। जूनागढ़ के नवाब ने जूनागढ़ के लोगों की इच्छा के विरूद्ध पाकिस्तान में मिलने का निर्णय ले लिया। पटेल ने जूनागढ़ के लोगों का जनमत संग्रह कराया पणिामस्वरूप लोगों ने भारत में विलय के समर्थन में मतदान किया। लोगो के विरोध एवं पटेल के सशक्त निर्णय के कारण नवाब पाकिस्तान भाग गया और जूनागढ़ा का भारत में विलय हो गया।

कश्मीर का भारत में विलय – सरदार पटेल के प्रयासों से ही कश्मीर भारतीय संघ का हिस्सा बन सका। क्योंकि कश्मीर की रियासत भारत में विलय की इच्छुक नहीं थी। पाकिस्तान के समर्थन से प्रभावित कबाईलियों ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। ऐसी परिस्थिति में अपनी सुरक्षा के लिए कश्मीर के महाराजा ने भारतीय संघ में विलय का निश्चय किया।

बस्तर की रियासत का विलय – पटेल को पता लगा उड़ीसा क्षेत्र की बस्तर की रियासत में कच्चे सोने का भण्डार है और हैदराबाद का निजाम उसे खरीदना चाहता है तो उन्होंने तत्काल उड़ीसा जाकर वहां के राजाओं से कहा कि कुएं के मेंढ़क नहीं बनो महासागर में आ जाओ। पटेल की बातों का असर यह हुआ कि उड़ीसा भारतीय संघ में मिल गया।

नागपुर का विलय – पटेल ने नागपुर के 38 राजाओं को कूटनीतिक तरीके से भारतीय संघ में मिलने हेतु राजी कर लिया।

मुम्बई की रियासतों का विलय – पटेल ने मुम्बई के आस-पास के राजाओं को भी प्रवास के दौरान विलीनीकरण हेतु राजी कर लिया।

पंजाब का विलय – पटेल ने फरीदकोट के राजा द्वारा आना-कानी करने पर फरीदकोट के नक्शे पर लाल पेंसील घुमा दी। घबरा कर राज्य के विलीनीकरण हेतु राजा सहमत हो गया।

गोवा पर आधिपत्य- पटेल से साहसिक चातुर्य के बल पर सेना के सहारे गोवा पर कब्जा कर उसे भारत में मिलाने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

लक्ष्यद्वीप समूह का विलय – लक्ष्यद्वीप पाकिस्तान के नजदीक नहीं था किन्तु पाकिस्तान द्वारा इस पर दावे की आशंका के कारण उन्होंनें सेना भेजकर लक्ष्यद्वीप पर आधिपत्य स्थापित कर लिया।

पटेल के जीवन की मुख्य बातें –

1. **स्वदेशी-** इंग्लेड में पढ़े पटेल ने भारत आकर गांधी जी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर स्वदेशी अपना ली एवं उसका जमकर प्रचार-प्रसार किया।
2. **देशभक्त-** भारत की स्वतंत्रता में तो पटेल का अस्मरणीय योगदान है। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया।
3. **भारतीय संघ की एकता के प्रतीक-** पहले गृहमंत्री के रूप में देशी रियासतों के विलीनीकरण का महत्वपूर्ण कार्य बड़ी चतुराई से संपन्न करने के कारण पटेल भारतीय संघ की एकता के मिसाल बने।
4. **निर्णय के धनी-** वे कर्मठ देशभक्त थे उनमें अदम्य संगठन शक्ति व निर्णय लेने की क्षमता थी।
5. **बाढ़बोली के सरदार-** गुजराज के बाढ़बोली कस्बे में भयंकर सूखा पड़ने पर उन्होंने अंग्रेजो पर दबाब डालकर उन्हें लगान न वसूल करने के लिए जब राजी कर लिया तब वे बाढ़बोली के सरदार कहलाये।
6. **संघर्षपूर्ण जीवन-** पटेल का जीवन संघर्षपूर्ण रहा। उनकी मंशा थी कि भारत ऐसी स्थिति में आ जाये जहां नागरिक उंचा सर करके चल सकें।
7. **सफल कूटनीतिज्ञ-** पटेल को महान कूटनीतिज्ञ बिस्मार्क की तरह एक सफल कूटनीतिज्ञ माना गया।
8. **कर्मठ व्यक्तित्व-** पटेल ऐसे कर्मठ व्यक्ति थे जो केवल कर्म को जीवन भर प्रधान समझते रहें।
9. **आईएएस सेवा के प्रणेता-** पटेल ने आई.सी.एस सेवा को समाप्त कर भारतीय प्रशासनिक सेवा प्रारंभ करने का महत्वपूर्ण कार्य किया।

निष्कर्ष – वास्तव में पटेल भारत की राष्ट्रीय एकता के बेजोड़ शिल्पी थे। वे भारतीय जनमानस की आत्मा में बसते थे। यह कहने में कतई गुरेज नहीं है कि यदि पटेल भारतीय रियासतों के विलीनीकरण का कार्य नहीं करते तो भारत कभी भी विश्व की शक्तिशाली संघ व्यवस्था के रूप में स्थापित नहीं हो पाता। पटेल सही मायनों में मनु के शासन की कल्पना थे, उनमें कौटिल्य जैसी कूटनीतिक चतुराई थी, वे महाराजा शिवाजी जैसे दूरदर्शी थे तथा बिस्मार्क जैसी चतुराई पटेल में कूट-कूट कर भरी थी। शायद पटेल कुछ और दिनों तक हमारे बीच रहते तो आज हम कश्मीर की समस्या का सामना नहीं कर रहे होते। यदि पटेल निर्णय लेने के लिए सर्वे सर्वा होते तो कश्मीर आज भारत के लिए समस्या न होकर गौरव की बात होता। यदि पटेल की बात को महत्व मिलता तो आज हम चीन के साथ सीमा विवाद से नहीं जूझ रहे होते। आज भी यह कहना समीचीन होगा कि पटेल दूरद्दष्टा थे। यदि हम ताजा परिप्रेक्ष्य में गौर करें तो देश में विघटनकारी तत्वों की समाप्ति के लिए पटेल जैसी हिम्मत और चातुर्य चाहिए। पटेल ही एक ऐसे नेता थे जिन्होंने भारतीय गणराज्य को विश्व मानचित्र पर एक विशाल गणराज्य के रूप में स्थापित किया। इसलिए गांधी जी ने स्वतंत्रता के पूर्व कहा था कि आजादी तो हमें मिल कर रहेगी किन्तु उसे सुरक्षित रखना कठिन होगा। गांधी जी की इस बात को पटेल ने गांठ बांधकर कर रख लिया एवं एक सशक्त भारत के रूप में विशाल संघात्मक व्यवस्था विरासत के रूप में हमारे लिए छोड़ गयें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्ही.शंकर, माई रेमीनीसेन्स ऑफ सरदार पटेल, मेंकमिलन इण्डिया लिमिटेड।
2. प्रेमसिंह, डॉ.सुधा सिंह, अखण्ड भारत के निर्माता सरदार पटेल।
3. पीएन.चौपड़ा, सरदार पटेल, नेहरू, गांधी एण्ड सुभाष बोस।
4 सिक्ता पाण्डे, पॉलिटिकल आईडियास ऑफ सरदार वल्लभ भाई पटेल, कल्पाज प्रकाशन।
5. बलराज किशोर, इण्डियास बिस्मार्क, सरदार वल्लभ भाई पटेल, इंडस सोर्स बुक्स।
6. रविन्द्र कुमार, सरदार पटेल के प्रमुख निर्णय, कल्पाज पब्लिकेशन।
7. बलराज कृष्णा, लोह पुरूष सरदार वल्लभ भाई पटेल।
8. सोनल मित्रा, सरदार वल्लभ भाई पटेल।
9. ऑफ्टर पार्टीशन माडर्न इण्डिया सीरीज-7, द पब्लिकेशन डिविजन गवर्नमेंन्ट ऑफ इण्डिया 1948।
10. दास दुर्गा, सरदार पटेल करसपॉन्डेन्स, वाल्यूम-7, नवजीवन पब्लिकेशन अहमदाबाद।

हिन्दू जाति व्यवस्था और आरक्षण नीति एक राजनैतिक विश्लेषण

डॉ. अलका भार्गव *

शोध सारांश – देश की वर्तमान राजनीति में आरक्षण का प्रश्न कुछ दिनों से विरोध रूप में नवें दशक के अन्त से समस्या प्रधान प्रश्न के रूप में प्रबुद्ध वर्ग को तथा जनसाधारण को प्रभावित कर रहा है। सारे देश में आरक्षण के पक्ष व विपक्ष में अन्तहीन विवाद की स्थिति उत्पन्न हो गई है, कि उसका समाधान केवल व्यापक संदर्भो और वस्तुगत दृष्टि से ही संभव हो सकता है। आरक्षण देश के जनमानस के लिये संवेदनशील प्रश्न बन गया है जिससे कि एक प्रकार की कटुता विभिन्न जातियों के मध्य बन गई है। जिससे राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा बहुत गहराई से प्रभावित हुई है।

प्रस्तावना – स्वतंत्रता के बाद गणतांत्रिक आदेशों के अनुरूप इसे राष्ट्रीय नीति के रूप में स्वीकार किया गया है। भारत के गणतांत्रिक संविधान में स्वतंत्रता, समानता तथा भातृत्व के आदेशों को स्वीकार कर उन्हें लागू करने का प्रयास किया गया है। सभी नागरिकों को कानून के समक्ष समानता का अवसर तथा कानून का समान संरक्षण दिया जायेगा, इस मान्यता के साथ कि– समानता समान व्यक्तियों के साथ समान परस्थितियों में की जा सकती है, असमान व्यक्ति के साथ असमान परिस्थितियों में नहीं। सदियों से पदद्लित, उपेक्षित तथा विभिन्न निर्योग्यताओं से पीड़ित भारतीय समाज की तथाकथित अस्पर्शयता अब अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों को समानता के साथ ही विशेष सुविधा, संरक्षण व प्रोत्साहन के रूप में आरक्षण का अधिकार दिया गया है। यहाँ हम स्पष्ट कर देना चाहते है कि आरक्षण की नीति की सुविधा हमारे देश के विभिन्न प्रकार के लोगों को दी गई है। मूलत: संविधान में हिन्दू धर्म की निम्न जातियों को ही आरक्षण की सुविधा दी गई थी। जिसे बाद में अन्य धर्मालम्बियों जैसे– सिक्खों, बौद्धों आदि पर लागू किया गया था। सिक्ख धर्म की अनुसूचित जातियों को आरक्षण की सुविधा सन् 1956 में दी गई और सन् 1980 में इस सुविधा का विस्तार बौद्ध धर्म में किया गया। वर्तमान में ईसाई धर्म के धर्मान्तरित अनुसूचित जाति के धर्मावलम्बियों द्वारा भी इस प्रकार की सुविधा प्राप्त करने की मांग कर रहे है। इसके अलावा भूतपूर्व सैनिकों को शासकीय सेवाओं में आरक्षण का लाभ मिलता है।

उपरोक्त संदर्भ में यदि हम देखें तो 'जाति परिवारों या परिवारों के समूह का एक संकलन है, जिसका कि एक सामान्य नाम है। जो एक काल्पनिक पूर्वज मानव या देवता से सामान्य वंश परम्परा या उत्पत्ति का दावा करते हैं। एक ही परम्परागत व्यवसाय को करने पर बल देते हैं और एक सजातीय समुदाय के रूप में उनके द्वारा मान्य होते हैं जो अपना एक मत व्यक्त करने के योग्य है।[1]' जाति एक ऐसा सामाजिक समूह है जिसमें इसके वहीं सदस्य हो सकते हैं जो किसी सदस्य के बेटे हों।

यूरोपीय विद्धानों ने भारत की जाति प्रथा को ब्राह्मणों द्वारा आयोजित एक चतुर राजनैतिक योजना का एक रूप बताया है और यह कहा है कि जाति व्यवस्था ब्राह्मणों की चाल है। अन्य विद्धानों ने भी इस मत का समर्थन किया है, वह कहते है कि 'जाति प्रथा इण्डो आर्यन संस्कृति के ब्राह्मणों का बच्चा है जो कि गंगा और यमुना के मैदान में पला है और वहाँ से देश के दूसरों भागों में ले जाया गया है।[2]'

भारत में हम देखें तो सोपान क्रम दो प्रकार के हैं – एक वह जो परम्परा से चले आ रहे हैं, दूसरे वह जो प्रगट हो रहे हैं। अंग्रेजों ने पिछड़ी जातियों को प्राथमिकता देने की नीति अपनायी। स्वातंत्रोत्तर भारत में जाति व्यवस्था में प्रवाह आ गया है। इस परिवर्तन के दौर में जातियाँ निरन्तर ऊपर की ओर बढ़ रही है और यही उच्च जातियों की चिंता का वर्तमान विषय है।

दूसरी तरफ भारतीय राजनीति का स्वातंत्रोत्तर स्वरूप वोट की राजनीति का रहा है जिसके कारण आरक्षण नीति और प्रखर रूप में सामने आयी है।

हिन्दी के आरक्षण शब्द को आंग्ल भाषा में रिजर्वेशन कहा जाता है। रिजर्वेशन शब्द रिजर्व से बना है, जिसका अर्थ क्रमश: बचा कर रखना, आगे के लिये रख छोड़ना होता है। यहाँ पर आरक्षण अर्थात् रिजर्वेशन से हमारा तात्पर्य भारत वर्ष में संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं आधिकारिक रूप से अधिसूचित समाज के अन्य वर्ग के व्यक्तियों के लिये शैक्षणिक, प्रशासनिक व अन्य भागों में निश्चित स्थान अर्थात् सीट्स सुरक्षित रखना है। ताकि उन्हें जनतांत्रिक आदेशों का समुचित लाभ मिल सके तथा उनको शासन–प्रशासन व देश के राजनैतिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान दिया जा सके।

भारत में आरक्षण नीति का वैचारिक आधार पर खोजने का प्रयास करें, तो यह कहा जा सकता है कि आरक्षण की नीति तात्कालिक लाभों एवं राजनीति से प्रेरित नहीं है। आरक्षण नीति का आरम्भ भूतपूर्व अंग्रेज शासकों द्वारा अपने नीहित स्वार्थो की पूर्ति के लिये किया गया था।

भारत का संविधान जो भारत की स्वतंत्रता के बाद सार्वजनिक जीवन का, राष्ट्र के राजनैतिक शासन, प्रशासन व्यवस्था का मुख्य आधार बना। उसका भी एक निश्चित लक्ष्य विचार और दर्शन था।[3] आरक्षण की नीति जिस रूप में आज हमारे सार्वजनिक जीवन का अंग बन गई है, का अंकुर उसी ब्रिटिश नीति को कहा जा सकता है, पर यह अर्द्धसत्य है। वस्तुत: आरक्षण की नीति को हमारे जातिगत सोपानीय समाज के रूप को एक समतामूलक समाज में बदलने का परिणाम मानना चाहिये।

एक ऐसे समाज का निर्माण करना है जिसमें स्वतंत्र और नागरिक, सामाजिक और मानवीय जीवन मूल्य के अनुसार जीवन जी सके ताकि

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (राजनीति विज्ञान) महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

समाज के उपलब्ध सभ्य जीवन की सुविधाओं का लाभ सभी को समान रूप से मिल सके।[4]

इस तारतम्य में इस वर्ग के बहुत राज्यो बिहार, मध्यप्रदेश तथा उड़ीसा में जनजाति कल्याण मंत्रालय स्थापित किया गया है।

इस दिशा में कई आयोग भी गठित किये गये। सन् 1953 में गाँधीवादी काका कालेलकर आयोग पिछड़ा वर्ग हेतु गठित हुआ। दूसरा पिछड़ा वर्ग आयोग वी.पी. मंडल की अध्यक्षता में 1 जनवरी 1979 को गठित किया गया, 31 दिसम्बर 1980 को मंडल आयोग ने अपनी रिपोर्ट दी। 394 पृष्ठों की यह रिपोर्ट 7 अगस्त, 1990 को जारी की गई। जिसको लेकर देश के युवा वर्ग में भारी आक्रोश रहा।

इसी तरह हमारे संविधान में शिक्षा के साथ-साथ केन्द्रीय प्रशासन और राज्य प्रशासन के अन्तर्गत छोटे-बड़े व मध्यम पदों की भर्ती के लिये एक निश्चित प्रतिशत के आरक्षण का प्रावधान किया है।

संक्षेप में प्रथम अध्याय एक परिचयात्मक विश्लेषण है, जो शोध की समस्या से जुड़ी सम्बद्ध परिकल्पना को स्थापित करने के लिये आवश्यक है। दूसरे अध्याय में हमारा प्रयास भारतीय राजीनति के स्वरूप को रेखांकित करने का रहा है। इस अध्याय में हमने स्वतंत्रतापूर्व और स्वातंत्रोत्तर भारतीय राजनीति के परिपेक्ष्य को वस्तुपरक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है।

तृतीय व चतुर्थ अध्याय आरक्षण नीति सम्बद्ध कहे जा सकते हैं। जहाँ तृतीय अध्याय आरक्षण की नीति की अवधारणा को विस्तृत गहन दृष्टि से वैचारिक आधारों का विवेचन करने का प्रयास करता है। वहीं चतुर्थ अध्याय आरक्षण नीति के व्यावहारिक पक्ष को विवेचित करने का प्रयास करता है।

शोध प्रबंध का पांचवा अध्याय आरक्षण के रूख को समसामयिक राजनीति के संदर्भो में भी अध्ययन करने का प्रयास करता है। जिससे की यह सुनिश्चित किया जा सके कि भारत के परिवर्तित सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक परिद्रव्यों ने आरक्षण की नीति को किस रूप में प्रभावित किया है? यह अध्याय यह भी उद्घाटित करता है कि भारत के राजनैतिक क्षितिज पर सक्रिय दक्षिण पंथी और वाम पंथी शक्तियाँ इस समस्या के विषय में किस प्रकार सोचती हैं? इसके अलावा भारत की निर्वाचन प्रक्रिया और आरक्षण के पारस्परिक अन्त: क्रिया और उससे उत्पन्न परिणामों को भी वर्णित करने का प्रयास किया है।

निष्कर्ष – आरक्षण एक तात्कालिक उपाय के रूप में मान्य किया जाना था। इसी बात को ध्यान में रखकर इसकी अवधि केवल 10 वर्ष रखी थी। परन्तु वर्तमान में यह नीति एक अन्तहीन अनिवार्य प्रणाली के रूप में देखी जा सकती है जिससे मुक्ति शायद ही मिल सके। यदि कोई नीति, सिद्धान्त, दर्शन, विचार एक सकारात्मक दिशा में ले जाती है तो वह समाज के लिये व्यापक दृष्टि से शुभ हो सकती है। उसे हम प्रशंसनीय और वन्दनीय कह सकते है, परन्तु जब नीति, विचार या दर्शन नीहित स्वार्थो को मूर्तरूप देने लगे तो वह निश्चित रूप से आलोचना का पात्र ही कहा जायेगा। हमारी दृष्टि में भारतीय संदर्भो में आरक्षण नीति का यही हश्र हुआ है।

हिन्दू समाज की जाति संरचना हमें विरासत में मिली है जो लोकतांत्रिक मूल्यों के विपरीत है। जातिगत संरचना का मूल चरित्र सामंती है जो समाज को उच्च वर्गीय और निम्न वर्गीय भागों में विभाजित करता है। मूलत: हिन्दू समाज की जातीय संरचना का सोपानीय स्वरूप अपने प्रारम्भिक काल में कार्य के आधार पर स्थापित किया गया था। किन्तु शनै:शनै कार्य के आधार पर निर्मित व्यवस्था जन्म के आधार पर हो गयी। इसी तरह आरक्षण नीति का यह परिणाम है कि आज हम समाज की समस्याओं के विषय में एक एकीकृत दृष्टिकोण से विचार नहीं करते वरन् समाज को टुकड़ों-टुकड़ों में बंटा हुआ देखने की कोशिश करते हैं। प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह ने सामाजिक न्याय के नाम पर मंडल आयोग की अनुशंसाओं को लागू करके अन्य पिछड़ी जातियों को आरक्षण का लाभ देने की नीति बनाकर राजनैतिक गतिविधियों को एक नया आयाम दिया है।

भारत की जाति व्यवस्था सोपानीय जातियां व्यवस्था है। उसमें एक सोपान पिछड़ गया और जो खाई बन गयी हैं। सदियों से उस खाई को दूर करने की कड़ी में आयोग आये परन्तु इससे भारत की सामाजिक व्यवस्था में जो दरारें आयी है तथा मंडल आयोग की संस्तुतियों के आने पर समाज की व्यवस्था में जो आक्रोश सामने आया, वह भारत की इस सोपानीय व्यवस्था को झकझोरने वाला था।

यह भी सर्वविदित है कि आज जिस द्रुतगति से जाति आधारित छोटी और बड़ी संस्थाओं का जितना अधिक विस्तार हो रहा है, वह हमारी समूची व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह लगाने के लिये पर्याप्त है। पांचवे दशक में यह सोच इतना अधिक व्यापक और गहरा नहीं था जितना हम आज नवें दशक में देख रहे हैं।

हमारी दृष्टि में आरक्षण की नीति के प्रश्न पर एक खुली बहस की आवश्यकता है और गहराई से विचार किया जाये और एक सर्वमान्य तथा सर्वसम्मत एक विकल्प सुनिश्चित किया जाये ताकि समाज में पारस्परिक द्वेष व कटुता के स्थान पर सामाजिक मूल्यों का समायोजन किया जा सके और लोक कल्याणकारी समाज के विचार को मूर्तरूप दे सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सर हरबर्ट रिजले - दो पीपुल ऑफ इण्डिया, लन्दन 1915, पृष्ठ 5.
2. जी.एस. धुरिये - कास्ट क्लास एण्ड ओक्युपेंशन पोपुलर बुक डिपों, बोम्बे 1961, पृष्ठ 172.
3. भारतीय संविधान की प्रस्तावना
4. जय प्रकाश नारायण- सोशलिज्म, सर्वोदय एण्ड डेमोक्रेसी, पृष्ठ 67.

पत्रिकाऐं -

1. अंत्यजा वर्ष 5, संयुक्तांक 1991-92, अनुसूचित जाति विकास की त्रैमासिक पत्रिका।
2. इंडिया टुडे, पाक्षिक, 30 सितम्बर 1990.
3. साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 30 सितम्बर 1990.
4. साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 15 अक्टूबर 1990.

सर्वे एवं रिपोर्ट -

1. एशियन सर्वे सं.-7 जुलाई 1967.
2. मंडल आयोग रिपोर्ट 1990.
3. मैसूर जनगणना सेन्सज रिपोर्ट
4. यू.पी. जनगणना 1901

समाचार-पत्र -

1. इंडियन एक्सप्रेस, दिल्ली ऐडिशन, 3 सितम्बर 1990, दैनिक
2. इंडियन एक्सप्रेस, पटना ऐडिशन, 31 जनवरी 1991, दैनिक
3. नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली 10 सितम्बर 1990, दैनिक
4. हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 सितम्बर 1990, दैनिक

****

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत अमेरिका सम्बन्ध - एक अध्ययन

अंजना सेठिया *

प्रस्तावना – भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के सम्बन्धों का इतिहास अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का ऐसा दुखद प्रसंग है जिसे किसी परम्परागत मुहावरे में अभिव्यक्त करना कठिन है। भारत अमेरिका सम्बन्ध उबड़ खाबड़ रास्ते पर चले और दोनों के सम्बंधो का महत्वपूर्ण दौर शीत युद्ध के दौरान रहा, जब भारत असलंग्न आन्दोलन से जुड़ा था वह अमेरिका का पिछलग्गू नहीं बना, जिससे अमेरिका भारत के खिलाफ रहता था। दूसरो सोवियत संघ के विघटन के बाद आया। सोवियत संघ के विघटन के साथ ही भारत के प्रति अमेरिका का नज़रिया बदला।

वर्ष 2000 में तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेई ने भारत और अमेरिका को 'स्वाभाविक सहभागी' बताया था अमेरिका का न तो कोई स्थाई शत्रु है और न स्थाई मित्र वह सिर्फ अपनी जरूरतों के हिसाब से अन्य देशों से सम्बन्ध बनाता है कभी नरेन्द्र मोदी को वीजा न देने वाला अमेरिका मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद से लगातार भारत के साथ अपने सम्बन्ध सुधारने की कोशिश में है। एक समय था जब अमेरिकी मंत्री कई-कई वर्षो में भारत दौरे पर आते थे और अब समय बदल चुका है इस समय एक के बाद एक मंत्री भारत दौरे पर आ रहे है। पहले जान केरी और अब चक हेगल। भारत अमेरिका सम्बन्धों की कड़वाहट खत्म होती नजर आ रही है।

भारत-अमेरिका मतभेद निम्न मुद्दे -

1. भारत द्वारा असलंग्नता की नीति अपनाना। अमेरिका को नागवार गुजरा।
2. कश्मीर विवाद में संयुक्त राष्ट्र संघ में अमेरिका ने भारत के विरूद्ध पाकिस्तान के पक्ष का समर्थन किया।
3. 1949 में चीन में साम्यवादी क्रांति को भारत द्वारा मान्यता। चीन की साम्यवादी क्रांति अमेरिका की बहुत बड़ी कूटनीतिक हार थी।
4. भारत-पाक सम्बन्धो में अमेरिकी दृष्टिकोण पाकिस्तान के पक्ष में।
5. तिब्बत के प्रश्न को लेकर भी अमेरिका ने भारत का साम्यवाद के प्रति समर्पण माना।
6. भारत रंगभेद नीति का सर्वदा विरोधी रहा, जबकि अमेरिका ने रंगभेद नीति का समर्थन किया।
7. वर्ष 2011 में भारत की वार्षिक विकास की रफ्तार कम होने लगी थी ऐसे में अमेरीकी निवेश में कभी भी और बाद में भारत में कोई खास रूचि नहीं रह गई।
8. ब्रिक्स देशो में भारत की रूचि बढ़ना, जो कि अमेरिका को पसन्द नहीं है। ब्रिक्स संगठन की मजबूती से रूस, चीन और भारत काफी ताकतवार हो जाएंगे। ऐसा हो भी रहा है। इससे अमेरिका का प्रभाव कम हो रहा है।
9. ईरान के अमेरिका द्वारा परमाणु प्रतिबन्ध को लेकर भारत दोनों के साथ खड़ा नज़र आया यह अनिश्चितता अमेरिका को पसंद नहीं आई।
10. सीरिया और इजरायल के मामलों में भी भारत का रूख अमेरिका को पसन्द नहीं आया।
11. भारत अमेरिका खराब सम्बन्धों की एक बड़ी वज़ह भारत का परमाणु दुर्घटना उत्तरदायित्व कानून भी है। अमेरिका का 'एड यूज मांनिटरिंग एग्रीमेंट' भारत को खटक रहा है।
12. अमेरिका पाकिस्तान के मुद्दे पर हमेशा भारत का विरोधी रहा है।

भारत-अमेरिका के सुधरते रिश्ते निम्न मुद्दे -

1. 2006 में अमेरिका-भारत के बीच हुए परमाणु समझौते के बाद अमेरिका ने भारत को परमाणु शक्ति मान लिया।
2. एशिया में शक्ति संतुलन की दृष्टि से भी अमेरिका, भारत को महत्वपूर्ण मानता है। दोनों ही देश प्रजातान्त्रिक है।
3. अमेरिका भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी से काफी प्रभावित है, उनकी रूचि, कार्पोरेट, सेक्टर को बढ़ावा देने में है। यदि देश में ऐसा होता है तो उसका सबसे अधिक फायदा अमेरिका को मिल सकता है।
4. अमेरिका की निगाह भारत के बाजार पर है। डिफेन्स और रक्षा क्षेत्र में एफडीआई बढ़ने से अमेरिका के लिए नया रास्ता खुल गया है। मोदी ने सेना के आधुनिकीकरण का संकेत दिया है इससे अमेरिका को काफी फायदा हो सकता है।
5. अमेरिका भारत की मदद से ही चीन को टक्कर दे सकता है। वह रूस को भी टक्कर देना चाहता है। इस मामले में भी उसको भारत का साथ बेहद जरूरी है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की पहली अमेरिका यात्रा असाधारण रही जिसको अमेरिका सालभर पहले तक वीजा देने को तैयार नहीं था, उसी मोदी की अगवानी में अमेरिकी राष्ट्रपति ने पलक-पावडे, बिछा दिए। ओबामा प्रशासन मोदी जी के प्रधानमंत्री बनने के पहले ही अपने सांसदो और राजदूत को अहमदाबाद की तीर्थयात्रा पर भिजवा दिया और चुनाव परिणाम के पहले ही मोदीजी को निमन्त्रण भेज दिया। दोनों राष्ट्र मिलकर काम करे तो विश्व राजनीति की दिशा ही बदल सकते है मोदीजी ने ओबामा और अमेरिका की सराहना में काफी उदारता का परिचय दिया है और वे चाहते है कि राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में दोनों देश कदम से कदम मिलकर चले। अभी तो अमेरिका भी यही चाहता है क्योंकि एशियाई शक्ति समीकरण में अमेरिका को भारत से मित्रता की आवश्यकता है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में किसी भी देश का स्थायी मित्र या न्यायी शत्रु नहीं होता स्थायी होता है राष्ट्रीय हित। दोनों के ही राष्ट्रीय हित एक दूसरे को सहयोग करने में है। भारतीय तकनीकी विशेषज्ञो के बिना अमेरिका बेहाल हो सकता है। अमेरिका भारत से अच्छे सम्बन्ध बनाकर कमोडिटी, ऊर्जा और हथियारों में फायदा ले सकता है। भारत में ऊर्जा और हथियारों के क्षेत्र में बहुत सम्भावनाएँ है। इसलिए वह भारत से बेहतर सम्बन्ध बनाने पर जोर दे रहा है। भारत भी अमेरिका से रक्षा आतंकवाद-विरोधी और तकनीक अधिग्रहण जैसे मुद्दों पर फायदा ले सकता है। हमें भी अमेरिकी विदेश और तकनीक की बेहद जरूरत है। अमेरिका जैसे शक्तिशाली राष्ट्र के साथ अच्छी दोस्ती हमें जापान, दक्षिण कोरिया और

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र) भारत

यूरोप जैसे अन्य देशों के साथ भी अच्छे सम्बन्ध बनाने का मौका दे सकती है। अमेरिका की मदद से और भी कई क्षेत्रों में सुधार की सम्भावना है, वर्तमान में भारत–अमेरिका के निकट सम्बन्ध बने हुए है। दोनों देश पारस्पारिक हितों के विषय पर नियमित संवाद कर रहे है। गणतंत्र दिवस 2015 के मुख्य अतिथि के रूप में अमेरिका के राष्ट्रपति बराम ओबामा का आना दोनों देशों के सम्बन्धों को और बेहतर बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा।

2011 में कांग्रेसियल रिसर्च सर्विस की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि आने वाले दशकों में पूरी दुनिया में भारत और अमेरिका के रिश्ते सबसे महत्वपूर्ण होंगे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डॉ. बी.एल.फडिया– भारत और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध।
2. प्रभुदत्त शर्मा – अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति।
3. रहीस सिंह – विदेशी मामलों के जानकार– डी.बी. स्टार 8 अगस्त 2014।
4. वेदप्रताप वैदिक –भारतीय विदेशनीति परिषद के अध्यक्ष आर्टिकल दैनिक भास्कर 27 सितम्बर 2014।
5. इन्टरनेट से प्राप्त जानकारी के अनुसार।

****

भारतीय संविधान एवं मानव अधिकार

प्रो. वीणा बरडे *

प्रस्तावना – 'अधिकार वह मांग है, जिसे समाज स्वीकार करता हैं और राज्य लागू करता हैं।'– बोसांके

आनंदपूर्वक जीवन यापन करने के लिए कुछ अधिकारों की आवश्यकता होती हैं। इसी परिपेक्ष्य में प्रकृति के द्वारा मनुष्य विभिन्न प्रकार की शक्तियां प्रदान की गयी हैं, इन शक्तियों का अपने और समाज के हित में रूप से प्रयोग करने के लिए कुछ बाहरी सुविधाओं की आवश्यकता होती हैं। राज्य का सर्वोच्च लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हैं। मानव प्रकृति की अनमोल धरोहर हैं। उस पर किया जाने वाला हर अत्याचार अन्याय मानव जाति को नीचे गिराता हैं।

द्वितीय युद्ध में मानव अधिकारों का जो दमन हुआ था, तथा नाजी आतताईयों के अत्याचारों का दृश्य सामने आया था, उसने विश्व की मानव आत्मा को झकझोर दिया था। संयुक्त राष्ट्र की संगठन महासभा ने 1948 में मानव अधिकारों की विश्वजनीत घोषणा के अन्तर्गत नागरिक और राजनीतिक स्वतंत्रताओं का समावेश किया।

चार्टर की प्रस्तावना औंर उसके सात अनुच्छेदों में मानव अधिकारों का उल्लेख किया गया हैं। 18 फरवरी 1946 को मानव अधिकार आयोग की स्थापना की। प्रतिवर्ष 10 दिसम्बर को मानवाधिकार दिवस मनाया जाता हैं।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 15 में कहां गया हैं कि राज्य किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, वंश, जाति, लिंग, जन्म, स्थान अथवा इनमें से किसी भी आधार पर भेदभाव नहीं करेंगा।

मानव अधिकार 'पद' का प्रयोग सर्वप्रथम अमेरिकन राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने जनवरी 1941 में कांग्रेस को संबोधित संदेश में किया था, जिसमें चार मूलभूत स्वतंत्रताओं पर घोषणा की जिसमें वाक् स्वतंत्रता, धर्म, गरीबी से मुक्ति एवं भय से स्वांतंत्रय।

संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 1968 को अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया। मानव अधिकार की जड़े विभिन्न संस्कृतियों की जड़ो से निकली हैं, संपूर्ण मानवता को अपने दायरे में समेटता हैं, तथा अधिकारो का संरक्षण करता हैं। मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के अनुसार मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए प्रयास –

1. राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग। 2. राज्य मानवाधिकार आयोग।
3. मानवाधिकार न्यायालय।

सरकार की मान्यता हैं कि राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ आधार तब ही प्रदान किया जा सकता हैं जब समस्त नागरिको में भाषा, जाति, धर्म, लिंग एवं क्षेत्रियता की संकीर्णता समाप्त हो जायेगी इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सर्वप्रथम मध्यप्रदेश राज्य 06 जनवरी 1992 को (देश का पहला राज्य) मानव अधिकार आयोग गठित करने का संकल्प लिया गया।

1993 में सरकार द्वारा मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम बनाया। 13 सितम्बर 1995 को म.प्र. में मानव अधिकार आयोग का गठन किया गया, जिसका मुख्यालय भोपाल में रखा गया।

मानव अधिकार बहुत आवश्यक हैं, ये मानव की गरिमा बढ़ाकर समाज में सौहार्द का वातावरण निर्मित करते हैं, साथ ही उन्नति एवं विकास का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं। वर्तमान में प्रत्येक नागरिक अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होते जा रहे हैं। विश्व में लोकतांत्रिक सरकारो की स्थापना के लिए आंदोलन चल रहे हैं।

आधुनिक परिवेश में मानव अधिकारों के अतिक्रमण एवं हिंसात्मक घटनाओं में वृद्धि हो रही हैं। विश्व के आधे लोग किसी न किसी प्रकार से अधिकारो से वंचित हैं। महिलाओं के विरूद्ध अन्याय, अत्याचार, बलात्कार, हिंसा की गतिविधियां तेजी से बढ़ रही हैं, गरीब, लाचार, मजदूर, कमजोर को उनका हक नहीं मिलता तथा दलित आज भी सवर्णो से कटा हुआ हैं तो जनजातिय वर्ग रोजगार के लिए शहरो के चक्कर लगाकर सड़क किनारे अपने छोट–छोटे बच्चों को लेकर दयनीय स्थिति में जीने को मजबूर हैं। आज समाज का आधा हिस्सा (महिलाएं) हिंसा बलात्कार की शिकार हो रही हैं, माँ के कोख में पल रही बालिका (भ्रूण) का वध हो रहा हैं। शादी के योग्य बालिका ससुराल में आत्महत्या के लिए मजबूर हो रही हैं। ससुराल वाले जिन्दा जलाने को आतूर हैं। वृद्ध को परिवार में सम्मान नहीं मिल रहा हैं,वृद्धजन परिवार में बोझ बनकर रह गये हैं उन्हे मंदिरो, वृद्धाश्रम, तीर्थयात्री या परिक्रमावासी बनकर पवित्र नंदियों के किनारे भिक्षा मांगकर जीवन यापन करना पड़ रहा हैं। आज चाहे बालिका हो या युवा महिला हो उनके साथ बलात्कार जैसी घटनाएं हो रही हैं, महिलाओं के साथ बस में, वेन में बलात्कार जैसी घटनाएं घट रही हैं, लेकिन हमारी सरकारे और हमार समाज मौन हैं, क्यों हम इनके मानव अधिकारो की ओर ध्यान नहीं देते हैं।

मानव अधिकार की सफलता तभी संभव है, जब व्यक्ति में, समाज में समरसता का भाव सम्मिलित हो, देश से भ्रष्टाचार समाप्त हो, गरीबी का खात्मा हो, हर हाथ को रोजगार मिले। तभी मानव अधिकार (कानून) सफलता की सीढ़ी तय कर सकेगा। कानून बना देने मात्र से हमारा दायित्व समाप्त नहीं हो जाता। इसके लिए दृष्टि में परिवर्तन करना होगा, इसलिए कहा जाता हैं कि दृष्टि से ही सृष्टि बदलेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मानवाधिकार और महिला उत्पीड़न–सुधारानी श्रीवास्तव,
2. मानवाधिकार सिद्धांत एवं व्यवहार–डॉ.विनोद नारायणदास बैरागी पृष्ठ संख्या 35 से 40 एवं 120 से 127 तक
3. महिलाएं एवं मानवाधिकार–श्रीमती पूजा शर्मा (सागर पब्लिशर्स, जयपुर)
4. महिलाओं के मौलिक अधिकार–रमा शर्मा, एम.के. मिश्रा (अर्जुन पब्लिसिंग हाउस नई दिल्ली)
5. राजनीतिक सिद्धांत–डॉ. पुखराज जैन (साहित्य भवन पब्लिकेशन

भारतीय संविधान द्वारा प्रत्याभूत अधिकार संविधान के भाग 3 में मानवाधिकारों

समानता का अधिकार अनुच्छेद 14 से 18	स्वतंत्रता का अधिकार अनुच्छेद 19	शोषण के विरूद्ध अधिकार अनु.23, 24	अपराधो के लिए दोषसिद्ध के विरूद्ध अधिकार अनु. 20	प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार अनुच्छेद 22

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

एड्स के प्रति जनजागरूकता का समाज कार्य संबंधी अध्ययन (इन्दौर नगर के विशेष सदंर्भ में)

डॉ. अंतिम कुमार कलवार *

शोध सारांश –प्रस्तुत शोधपत्र में वर्तमान समय की सबसे गंभीर सामाजिक समस्या के रूप मे उभर रही एड्स के प्रति जनजागरूकता का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से शोध अध्ययन कार्य सम्पन्न किया गया है। इसके लिये इन्दौर नगर के विभिन्न शासकीय महाविद्यालयों में अध्ययनरत् युवा विद्यार्थियों का चयन दैव निर्दशन विधि से किया गया है। एड्स होने के कारण, प्रभाव, निवारण उपायों के विषय में क्रमबद्ध जानकारियॉ साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से प्राप्त की गई है। शासन द्वारा किये जा रहे विभिन्न प्रयासों से युवा विद्यार्थी कुछ ज्ञान एवं उपलब्धियॉ भी हासिल कर रहे है या नहीं। इन्ही विशेष बिन्दुओं को ध्यान में रखकर यह शोध कार्य पूर्ण किया गया है। अनेकानेक कठिनाईयों का सामना करते हुये, युवा विद्यार्थियों द्वारा इस विषय पर बात न करने की संकुचित मानसिकता के साथ ही चौकाने वाले निष्कर्ष प्राप्त हुये है जो एड्स के प्रति चलाये जो रहे जागरूकता कार्यक्रमों पर प्रश्नचिन्ह लगाते है।

"डरना नहीं संभलना होगा, अब एड्स से बचना होगा। "

(नाको –नेशनल एड्स कन्ट्रोल आर्गेनाइजेशन)

प्रस्तावना – मानव अपनी सभ्यता- संस्कृति के विकास का स्वयं की पर्याय है। मानवीय सभ्यता के इतिहास में मानव ने कई तरह की त्रासदियों को सहा है। मसलन-भूकंप, युद्ध, महामारी, ज्वालामुखी का फटना, सूखा , बाढ़, सुनामी आदि। वर्तमान में मानव इन त्रासदियों पर तो कुछ हद तक नियंत्रण पा चुका है परंतु मनुष्य ने कभी भी एड्स जैसी रहस्यमय बीमारी की कल्पना भी नहीं की थी, जिससे वर्तमान में मनुष्य अपना अस्तित्व बचाने के लिए ही प्रयासरत है। एड्स ने मनुष्य की अगली पीढ़ी के उदय पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार एड्स पर काबू नहीं पाया गया तो यह महामारी धरती से मानव जाति का अस्तित्व हमेशा हमेशा के लिए खत्म कर देगी। एड्स अर्थात एक्वायर्ड इम्यूनों डिफिशियंसी सिण्ड्रोम अर्थात रोग प्रतिरोध शक्ति में कमी के कारण उत्पन्न हुये रोगो का समूह । आज जहॉ हम विकास की प्रत्येक सीमा पार कर रहे है । शिक्षा का बढ़ता उच्च स्तर, यौन स्वंच्छदता, लीव इन रिलेशनशीप, समलैगिंक विवाह, युवाओं में सैक्स को लेकर बढ़ता आर्कषण, एड्स के विकास मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। आज ज्यादातर युवाओं में विवाह के पूर्व सैक्स संबंध स्थापित करना सामान्य बात हो गई है। देह व्यापार बड़ी सरलता एवं सहजता से फैल रहा है। यही स्थान एड्स के विकास के प्रमुख केन्द्र बिन्दु माने गये है। एड्स विकासशील देशों भारत, अफ्रीका, बांग्लादेश,थाईलेंड, इण्डोनिशिया आदि में तेजी से फैल रहा है। यहॉ का गरीब, अशिक्षित, मजदूर वर्ग अभी तक एड्स जैसी खतरनाक बीमार से पूर्णरूपेण परिचित नहीं है। इसी कारण से युवा वर्ग एड्स की चपेट में बड़ी तेजी से आ रहा है। आज समाज का उत्पादक आयु वर्ग (21-45 वर्ष) के लोग एड्स से अधिक संक्रमित हो रहे है। एड्स होने के कारण , प्रभाव एवं निवारण उपायों का विस्तृत अध्ययन इन्हीं सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए इन्दौर नगर के शासकीय महाविद्यालयों मे अध्ययनरत् विद्यार्थियों की एड्स के प्रति जनजागरूकता का समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से व्यावहारिक शोध अध्ययन कार्य सम्पन्न किया गया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य –

1. महाविद्यालयीन विद्यार्थियों की एड्स संबंधी जानकारियों का अध्ययन करना।
2. एड्स रोकने हेतु उपायों का अध्ययन करना
3. महाविद्यालयीन रेड रिबन क्लब का गठन हेतु जानकारी प्राप्त करना।
4. समस्या के समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

अध्ययन क्षेत्र– इस अध्ययन हेतु म.प्र. के इन्दौर नगर के चार शासकीय महाविद्यालयों का चयन उद्देश्य पूर्ण निदर्शन विधि से किया गया है।

अध्ययन की इकाई– अध्ययन का समग्र चयनित 4 शासकीय महाविद्यालय में पढ़ने वाले समस्त विद्यार्थी अध्ययन का समग्र है । चयनित चार शासकीय महाविद्यालयों में पढ़ने वाले कुल विद्यार्थियों में से 60 प्रतिशत विद्यार्थियों का चयन अध्ययन की इकाई के रूप में किया गया है।

शोध निदर्शन प्रकिया– शोध अध्ययन केन्द्र हेतु इन्दौर नगर के चार शासकीय महाविद्यालयों का चयन किया गया है। उददेश्यों को ध्यान में रखते हुए महाविद्यालयों में अध्ययन सभी युवा विद्यार्थियों में से 60 विद्यार्थियों का चयन दैव निदर्शन पद्धति (लाटरी विधी) से किया गया है। प्रत्येक महाविद्यालय से 15-15 विद्यार्थियों का चयन अध्ययन की ईकाई के रूप में किया गया है।

समंक संकलन के स्त्रोत– इस शोध अध्ययन के लिए समंको का संकलन प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों से किया गया है। चयनित विद्यार्थियों से साक्षात्कार अनुसूची भरकर प्राथमिक समंको का संकलन किया गया है, वही द्वितीयक समंकों का संकलन विभिन्न पत्र पत्रिकाओं, पुस्तकों, रिसर्च जर्नल्स, शोध, आलेख, रिपोर्ट्स, प्रतिवेदनों, शोध समीक्षाओं, एआरटी सेंटर, मेडिकल कॉलेज, शासकीय चिकित्सालय से प्राप्त ऑकड़ो से संग्रहण किया गया है।

अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण – उददेश्यों के अनुसार अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण निम्न बिंदुओं के अंतर्गत किया गया है। चयनित विद्यार्थियों से साक्षात्कार अनुसूची भरकर प्राथमिक संमको का संकलन किया गया है, वही द्वितीयक समंको का संकलन विभिन्न पत्र पत्रिकाओं, पुस्तकों, रिसर्च जर्नल्स, शोध आलेख, रिपोर्ट्स, प्रतिवेदनों, शोध समीक्षाओं, एआरटी. सेंटर, मेडिकल कॉलेज, शासकीय चिकित्सालय से प्राप्त ऑकडों से संग्रहण किया गया है।

* अतिथि विद्वान (समाजकार्य) शासकीय माधव कला, वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत

अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण – उद्देश्यों के अनुसार अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण निम्न बिदुओं के अंतर्गत किया गया है

1. एड्स क्या है– अध्ययनित शोध विद्यार्थियों से एड्स क्या है? इस विषय पर जानकारी प्राप्त की गई है। प्राप्त अभिमतों को तालिका में दर्शाया गया है–

तालिका क्रमांक 1

एड्स क्या है, संबंधी जानकारी दर्शाती तालिका

क्र.	प्रत्युत्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1	एक बीमारी है	42	70
2	बीमारियों का समूह है	9	15
3	रोग प्रतिरोध क्षमता में कमी	3	5
4	ज्ञात नहीं	6	10
	कुलयोग	60	100

तालिका 1 के अध्ययन से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 70 प्रतिशत विद्यार्थी एड्स को एक बीमारी मानते है जबकि वास्तव में यह रोग प्रतिरोध क्षमता में कमी के कारण उत्पन्न हुये रोगों का समूह है। निष्कर्षत: महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में एड्स संबंधी प्राथमिक जानकारी का ही अभाव है।

2. एड्स व एचआई.वी में अंतर– शोध अध्ययन के दौरान उत्तरदाता विद्यार्थियों से एड्स व एचआईव्ही.में अंतर सबंधी जानकारी प्राप्त की गई । प्राप्त निष्कर्ष तालिका 2 में दर्शाये गये है –

क्र.	अंतर	आवृत्ति	प्रतिशत
1	ज्ञात है	9	15
2	ज्ञात नहीं है	51	85
	कुल योग	60	100

तालिका 2 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 85 प्रतिशत महाविद्यालयीन युवा अध्ययनरत् विद्यार्थी एड्स व एचआईव्ही में अंतर नहीं जानते है। निष्कर्षत: विद्यार्थियों में सही जानकारी का अभाव है।

3. एड्स होने के प्रमुख कारण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में महाविद्यालयीन विद्यार्थियों से एड्स होने के प्रमुख कारणों संबंधी जानकारी को प्राप्त किया गया । इस संबंध में प्राप्त अभिमतों को निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

तालिका क्रमांक 3

एड्स होने के प्रमुख कारणों को दर्शाती तालिका

क्र.	कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	यौन संबंधो से	42	70
2	संक्रमित रक्त से	9	15
3	गर्भस्थ माता से शिशु को	0	0
4	संक्रमित सुईयों से	3	5
5	ज्ञात नहीं	6	10
	कुल योग	60	100

तालिका 3 के अध्ययन से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 70 प्रतिशत विद्यार्थी ऐसे है जो यौन संबंधो को एड्स होने का प्रमुख कारण मानते है। यह सभी भी है क्योंकि राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर भी असुरक्षित यौन संबंध को ही एड्स की बीमारी फैलाने वाला प्रमुख कारण माना गया है।

4. एड्स का मानव शरीर पर प्रभाव – महाविद्यालयीन अध्ययनरत् युवा विद्यार्थियों से एड्स का मानव शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों के विषय में आवश्यक जानकारी प्राप्त की गई। प्राप्त निष्कर्षो को नीचे तालिका में दर्शाया गया है–

तालिका क्रमांक 4

एड्स का मानव शरीर पर प्रभाव दर्शाती तालिका

क्र.	प्रभाव	आवृत्ति	प्रतिशत
1	तुरंत होता है	54	90
2	5–8 वर्ष बाद होता है	6	10
	कुल योग	60	100

तालिका में प्राप्त अभिमत से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 90 प्रतिशत युवा महाविद्यालयीन विद्यार्थियों को यह जानकारी नहीं है कि एड्स का प्रभाव तुरंत नहीं बल्कि 5 से 8 वर्षो के दौरान धीरे–धीरे होता है। यह शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता नष्ट करता जाता है जिसके परिणामस्वरूप शरीर में अन्य बिमारियों का संक्रमण तेजी से होता है। निष्कर्षत: विद्यार्थियों के पास एड्स का प्रभाव संबंधी जानकारियों का अभाव है।

5. एड्स रोकने हेतु उपाय– शोध अध्ययन के दौरान विद्यार्थियों से एड्स को रोकने हेतु उपायो के विषय में जानकारी प्राप्त की गई है। प्राप्त अभिमतों को नीचे तालिका में दर्शाया गया है–

तालिका क्रमांक 5

एड्स रोकने हेतु उपायो को दर्शाती तालिका

क्र.	उपाय	आवृत्ति	प्रतिशत
1	असुरक्षित यौन संबंधो से बचाव	48	80
2	नशीली सुईयों का प्रयोग नहीं	0	0
3	गर्भावस्था में जांच तथा उपचार	3	5
4	सुरक्षित रक्त उत्पादों का प्रयोग	3	5
5	ज्ञात नहीं	6	10
	कुल योग	60	100

तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि 80 प्रतिशत उत्तरदाता असुरक्षित यौन संबंधो से बचाव को एड्स रोकने का प्रमुख उपाय मानते है। नशीली संक्रमित सुईयों से भी एड्स फैलता है। यह तथ्य कोई विद्यार्थी नहीं जानता है। 10 प्रतिशत विद्यार्थी एड्स रोकने के किसी भी उपाय को नहीं जानते है। शिक्षित लोगों से प्राप्त एड्स संबंधी यह तथ्य एक चिंतनीय बिदुं है। निष्कर्षत: एड्स से बचाव संबंधी सुरक्षा उपायों के विषय में जानकारियों का अभाव है।

6.महाविद्यालयीन रेड रिबन क्लब गठन– अध्ययनरत शोध विद्यार्थियों से उनके महाविद्यालय में गठित रेड रिबन क्लब के विषय में जानकारी प्राप्त की गई। प्राप्त अभिमत निम्नानुसार है।

तालिका क्रमांक 6

महाविद्यालयीन रेड रिबन क्लब संबंधी तालिका

क्र.	जानकारी	आवृत्ति	प्रतिशत
1	है	15	25
2	नहीं है	45	75
	कुलयोग	60	100

तालिका में अध्ययनरत से स्पष्ट होता है कि 75 प्रतिशत महाविद्यालयीन युवा विद्यार्थियों को उनके महाविद्यालय में रेड रिबन क्लब गठन संबंधी जानकारी नहींहै। यह एक चौकानें वाला निष्कर्ष तथ्य है। शोध अध्ययन के दौरान महसूस किया गया कि विद्यार्थी एड्स विषय पर बात करने से कतराते है।

अध्ययन से प्राप्त महत्वपूर्ण निष्कर्ष –

1. महाविद्यालयीन विद्यार्थियों में एड्स क्या है संबंधी प्राथमिक जानकारी का ही अभाव है।

2. महाविद्यालयीन विद्यार्थी एड्स व एच.आई.वी. में अंतर नहींजानते है।
3. सर्वाधिक उत्तरदाताओं ने असुरक्षित यौन संबंधो को एड्स होने का प्रमुख कारण माना है।
4. 90 प्रतिशत युवा उत्तरदाता विद्यार्थियों को यह जानकारी नहीं है कि एड्स का प्रभाव मानव शरीर पर कब,कहॉ और कैसे होता है।
5. सर्वाधिक 80 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने एड्स रोकने हेतु असुरक्षित यौन संबंधो से बचाव को सबसे प्रमुख उपाय स्वीकार किया है।
6. महाविद्यालयों में अध्ययनरत् 75 प्रतिशत युवा विद्यार्थियों को उनके महाविद्यालय में रेड रिबन क्लब गठन सबंधी जानकारी नहीं है।

समस्याएँ एवं सुझाव – एड्स विषय पर प्रस्तुत इस शोध अध्ययन कार्य के दौरान शोधार्थी को अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ा है। एड्स विषय पर बात करने से युवा लड़के और लड़कियों दोनो ही कतराते है । भारतीय सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्य और प्रतिमानों की दुहाई देते विद्यार्थी खुले तौर पर यौन रोग या यौन संबंधी बीमारी, विषय पर बात नहींकरना पंसद करते है। इन समस्याओं के समाधान हेतु **प्रमुख सुझाव निम्न है–**

1. यौन शिक्षा तथा एड्स विषय संबंधी ज्ञान स्कूली स्तरों से ही युवा विद्यार्थियों को देने की परम आवश्यकता है।
2. डरना नहीं संभलना होगा, अब एड्स से बचना होगा, संबंधी जानकारियों का प्रचार प्रसार जिला तहसील एवं ग्रामीण स्तरों पर करना होगा।
3. शर्म, संकोच, लोग क्या कहेगे की मानसिकता को छोड़कर युवा विद्यार्थियों को एड्स जनजागरूकता संबंधी कार्यक्रमों मे बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेना चाहिए
4. माता–पिता, भाई–बहन अन्य रिश्तेदारों को भी अपने युवा सदस्यों में इस विषय पर सुरक्षा व बचाव संबंधी स्वस्थ चर्चा किये जाने की अविलंब शुरूआत की जानी चाहिए।
5. शासन, प्रशासन एवं गैर सरकारी संगठनों को भी एड्स संबंधी कार्यक्रमों, शिविरों, संगोष्ठी, विचार विमर्श कार्यक्रमों में युवाओं की सहभागिता को केन्द्र बिंदु बनाना चाहिए।
6. समाज की मानसिकता में परिवर्तन हेतु युवाओं को आगे आना होगा तथा एड्स से बचाव , सुरक्षा हेतु इस विषय का अत्यधिक प्रचार–प्रसार करने में अपनी सहभागिता दर्ज करानी होगी क्योंकि आने वाला राष्ट्र का भविष्य युवाओं पर ही निर्भर है।
7. केन्द्र सरकार , राज्य सरकार, जिला प्रशासन, स्कूली शिक्षा विभाग, विश्वविद्यालयों तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनो (युनिसैफ, डब्ल्यू.एच.ओ, गेटस फाउडेशन) आदि सभी को मिल जुलकर समन्वित एवं संगठित प्रयास करने की परम आवश्यकता है तभी एड्स रूपी सामाजिक समस्या का जड़ मूल से उन्मूलन संभव हो सकेगा। इसकी शुरूआत हमें व्यक्तिगत स्तर, पारिवारिक स्तर, सामुदायकि स्तर, राष्ट्रीय स्तर, एवम् अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर करनी होगी तभी हमारा मानव समाज इस सामाजिक समस्या से मुक्त होकर प्रगति पथ पर अग्रसर हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. जैन, डॉ. लाल एवं वशिष्ठ डॉ.के.सी– शिक्षण एवं शोध अभियोग्यता, उपकार प्रकाशन आगरा 2
2. सिंह, डॉ. एम.एम. एड्स तथा आधुनिक समाज, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली – 7
3. रायजादा, डॉ.अजीत – हमारा इन्दौर कार्यालय आयुक्त पुरातत्व एवं सग्रंहालय म.प्र. भोपाल
4. आपटे, श्री प्रदीप – काया और एड्स एक अंतयुद्ध – इन्दौर फाउडेशन फार एड्स रिसर्च
5. चांदेकर, डॉ.रमेश – सामाजिक अनुसंधान – सतप्रकाशन संचार केन्द्र, इन्दौर
6. रोजगार और निर्माण – 06.04.2009 से 12.04.2009 पृष्ठ क्रमांक 24
7. सिविल सर्विसेस क्रांनिकल, मार्च 2010 समसामयिकी – 2010 पृष्ठ क्रमांक 152
8. नईदुनिया समाचार पत्र – शनिवार 27 नवंबर 2010, भारत में बढता एड्स का खतरा
9. मध्यप्रदेश राज्य एड्स नियंत्रण समिति, लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग मप्र.शासन
   भोपाल से प्राप्त अध्ययन सामग्री
10. भारत में विज्ञान ओर प्रौधोगिकी – स्पेक्ट्रम प्रकाशन नई दिल्ली संस्करण 2010
11. आहूजा राम – सामाजिक समस्याएँ – एड्स पृष्ठ 456 से 470 रावत पब्लिकेशन जयपुर
12. रेड रिबन एसप्रेस विशेषांक – महानगर इन्दौर नईदुनिया विशेषांक 17092007 पृक्र.5
13. विभिन्न समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, अंतर्राष्ट्रीय तथा राज्य स्तरीय शासकीय एवं अशासकीय संगठनों की रिपोर्ट्स

****

जनजातिय महिलाओं में अनुवांशिक रोग एवं रक्तअल्पता के सामाजिक - सांस्कृतिक कारक

डॉ. राजेश कुमार सक्सेना * डॉ. विमलेन्द्र राठौर * *

प्रस्तावना – प्राचीनकाल में मानव समाज रंग एवं संस्कृति के आधार पर दो वर्गों - आर्य एवं अनार्य में विभक्त हुआ। एक वर्ग जिसकी त्वचा का रंग सफेद तथा कद लंबा और जो वैदिक संस्कृति को मानता था आर्य कहलाये तथा दूसरा वर्ग जिसकी त्वचा का रंग काला तथा कद छोटा था और जो द्रविड़ संस्कृति को मानते थे अनार्य कहलाये। आर्यो ने अपने उच्चतर कौशल, संगठन शक्ति के द्वारा अपनी सभ्यता का विकास किया तथा समाज में अग्रणी स्थान प्राप्त किया वहीं दूसरी ओर संसाधन विहीन, वन्य क्षेत्रों, दुर्गम पर्वत एंव घाटियों की ओर पलायन करने वाले अनार्यो ने विशिष्ट संस्कृति को अपनाते हुये सभ्यता का विकास किया। इन अनार्यों को अनेक विद्वानों ने अलग-अलग नामों से सम्बोधित किया। रिजले ने इन्हें 'एबोरिजिनल' शब्द से सम्बोधित किया तो हैमनडार्फ ने इनके लिये 'ट्राइब' शब्द को प्रयोग किया; श्रीकांत ने इन्हें 'आरण्यक', 'रानीपरज' व 'आदिवासी' नाम से सम्बोधित किया तो गिलिन एण्ड गिलिन ने अपनी पुस्तक कल्चरल एन्थ्रोपोजॉजी में जनजाति को परिभाषित करते हुए लिखा कि 'स्थानीय समूहों का ऐसा समुदाय जनजाति कहा जाता है जो एक सामान्य क्षेत्र में निवास करता है, एक सामान्य भाषा का प्रयोग करता है तथा जिसकी एक सामान्य संस्कृति है।' ए' आर देसाई ने जनजातीय समूहों के सामान्य लक्षणों को निम्नानुसार वर्णित किया है।

1. वे सभ्य जगत से दूर पर्वतों तथा जंगलों में दुर्गम स्थनों में निवास करते हैं।
2. वे निग्रिटोज, ऑस्ट्रोलाइड अथवा मंगोलाइड में से किसी एक प्रजातीय समूह से सम्बंध रखते हैं।
3. वे जनजातीय भाषा का प्रयोग करते हैं।
4. वे आदिम धर्म को मानते हैं जो कि सर्वजीववाद के सिद्धांतों का प्रतिपादन करता है, जिसमें भूत, प्रेत तथा आत्माओं की पूजा का महत्वपूर्ण स्थान है।
5. वे जनजातीय व्यवसायों को अपनाते हैं, जैसे प्राकृतिक उपयोग की वस्तुओं का संग्रह, शिकार, वन में उत्पन्न वस्तुओं का संग्रह करना आदि।
6. वे अधिकांशतया माँसभक्षी हैं।
7. उनकी खानाबदोशी आदतें हैं तथा मद्यपान एवं नृत्य के प्रति उनकी विशेष रूचि होती है।

भारत में लगभग 450 जनजातियॉ निवास करती हैं। वर्ष 2011 की जनगणना की अनुसार भारत में इनकी जनसंख्या 104281034 थी जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में 93819162 तथ नगरीय क्षेत्रों में कुल 10461872 व्यक्ति निवास कर रहे थे जबकि मध्य प्रदेश में कुल जनसंख्या 15316784 व्यक्ति थी जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में 14276874 व्यक्ति तथा नगरीय क्षेत्रों 1039910 व्यक्ति निवास कर रहे थे। ग्वालियर जिले के अन्तर्गत कुल 72133 जनजातीय जनसंख्या निवास करती है। यह जनजातीय समूह एक ओर जहां भौगोलिक एवं जलवायु संबंधि दवावों और तनावों का अलग - अलग ढंग से सामना करते है। वहीं दूसरी ओर सामाजिक एवं संस्कृतिक कारकों से भी प्रभावित होते हैं जिस कारण इनमें विभिन्न रोग उत्पन्न होते हैं। रोग प्रत्युपत्ति में साफ सफाई, स्वास्थ्य, परजीवी भार, विवाह पद्धति, वैवाहिक संयुग्म, पोषाहार प्रारूप, स्वास्थ्य रक्षक व्यवहार, अनुवांशिक तत्व महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। स्वास्थ्य एवं रोगों को प्रभावित करने वाले कारक एक समूह से दूसरे समूह में भिन्न हो सकते हैं परन्तु रुग्णता के प्रकार निम्नानुसार ही होते हैं - 1. संचारी रोग 2. असंचारी रोग 3. अनुवांशिक रोग

जनजातीय महिलाओं में रूग्णता को अनेक सामाजिक-सांस्कृतिक कारक यथा - परंपरागत रीतिरिवाज, व्यवहार एवं उसकी वाध्यतायें, जीवन शैली, सांस्कृतिक परंपरायें आहार, व्यवसाय, व्यक्तिगत आदतें, परंपरागत अनुष्ठान प्रभावित करते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य एवं उपकल्पना – जनजातीय महिलाओं में अनुवांशिक विकार एवं रक्त अल्पता के सामाजिक, सांस्कृतिक कारकों को जानने के लिये निम्न उद्देश्य एवं उपकल्पनाओं का निर्माण निम्नानुसार किया गया है-

उद्देश्य –

1. चयनित उत्तरदाताओं की सामान्य जानकारी प्राप्त करना।
2. महिलाओं के अनुवांशिक रोग, रक्ताल्पता को प्रभावित करने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक कारकों को ज्ञात करना

उपकल्पना –

1. जनजातीय परिवार प्रकृति के अधिक निकट होने के कारण स्वास्थ्य के प्रति सजग नहीं होते।
2. महिलाओं के अनुवांशिक रोग एवं रक्ताल्पता में सामाजिक, सांस्कृतिक कारकों में सार्थकता पाई जाती है।

अध्ययन क्षेत्र एवं निदर्शन – ग्वालियर जिले के सहरिया जनजाति बहुल्य विकासखण्ड घाटीगॉव को अध्ययन क्षेत्र के रूप में चुना गया। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार यहां की कुल जनसंख्या 27738 (12.92:) व्यक्ति थी जिसमें पुरूष जनसंख्या 14270 तथा स्त्री जनसंख्या 13568 व्यक्ति थी। अध्ययन हेतु 100 सहरिया विवाहित महिलाओं (आयु 20 से 60 वर्ष) का चयन दैव निदर्शन पद्धति द्वारा किया गया।

अनुवांशिक विकार – अनुवांशिकता से तात्पर्य हमारे शरीर की प्रत्येक विशेषता जैसे आंख, बालों का रंग, ऊंचाई, चेहरे का आकार, हीमोग्लोबिन का बनना, अनुवांशिक सामग्री जो जीन्स कहलाती है से निर्धारित होती है

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** समन्वयक, दूरस्थ शिक्षण संस्थान, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

जो हमें हमारे माता-पिता से वंशानुगत रूप से मिलती है। गर्भधारण के समय व्यक्ति को जीन्स का एक सेट उसकी माता से और एक सेट पिता से प्राप्त होता है। हमें प्रत्येक विशेषता के लिये एक-एक जीन्स प्राप्त होती है। वयस्क हीमोग्लोबिन के सामान्य प्रकार को एचबी-ए (HbA) कहा जाता है। हममें से अधिकांश लोगों में एचबी-ए के दो जीन्स होते है, इसलिए हमें एचबी-ए (HbAA) होना कहा जाता है।

प्रस्तुत अध्ययन में जनजाति जनसंख्या में अनुवांशिक विकारों की उच्च आवृत्ति घटित होना पाया गया। सिकल सेल रक्ताल्पता और जी-6 पीढ़ी लाल रक्त पर एन्जाइम अल्पता ऐसे दो अनुवांशिक विकार है जो अपेक्षाकृत उच्च आवृत्ति में इस जनजाति में पाये गये। सिकलिंग के सम्बंध में पुरूष और महिलायें सामान्य रूप से प्रभावित होती है जबकि जी-6 पीडी अल्पता से प्रभावित होने वाले रोगियों में महिलाओं की अपेक्षा पुरूष अधिक प्रभावित होते हैं। प्रभावित उत्तरदाताओं की रुग्णता की बात करें तो इन दोनों अनुवांशिक विकारों का स्वास्थ्य पर काफी प्रभाव पड़ता है।

सिकल सेल रोग (HbSS) एवं सिकल सेल ट्रेट (HbAS) -

सिकल सेल से तात्पर्य व्यक्ति में एक जीन सामान्य प्रकार के हीमोग्लोबिन का है (।) और एक हँसिया (सिकल) प्रकार का जो Hb कहलाता है। यह AS सिकल सेल ट्रेट अथवा विषमयुग्मजी हैं। जो व्यक्ति AA अथवा AS होते है, वे पूर्णत: स्वस्थ होते हैं। गर्भ में जब बच्चे का निर्माण हो रहा होता है, तो वह हीमोग्लोबिन के लिए माता और पिता प्रत्येक से एक जीन अनुवांशिक रूप से लेता है। माता/पिता में से कोई एक जो AS है तो उससे बच्चा या तो HbA की एक जीन अथवा Hb S की एक जीन प्राप्त कर सकता है। तथापि, उस लड़का/लड़की को सिकल सेल रक्ताल्पता अथवा सिकल सेल रोग (SS) होगा। इस प्रकार सिकल सेल रोग, सामान्य हीमोग्लोबिन प्रकार है जो ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में सिकल यानी हँसिए का आकार ले लेता है। रक्ताल्पता एक प्रकार की रक्तसंलायी रक्ताल्पता है जिसके कार्य गंभीर तथा जानलेवा रक्ताल्पता की दशा निर्मित होती है। इस बीमारी के कारण विभिन्न अंगों का क्षतिग्रस्त होना, प्लीहा का बढ़ जाना, मानसिक क्रिया का कम होना संक्रमण बढ़ने की संभावना के साथ-साथ रोगी के पैरों का लम्बा हो जाना और धड़ छोटा रह जाना, पैरो में छाले होना तथा रोगी के शरीर का निरन्तर कमजोर होना है। जनजातीय क्षेत्रों में इस रोग की अधिकता का कारण सगोत्रीयता महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

जी-6 फॉस्फेट लाल उक्त कण एन्जाइम अल्पता - जी-6-फास्फेट डीहाईड्राजीनेज (जी-6-पीडी) एनइम लाल कोशिकाओं में पाए जाने वाले सबसे महत्वपूर्ण एन्जाइमों में से एक है, जो लाल कोशिकाओं को ऑक्सीकरण से होने वाली क्षति से बचाता है। यह मनुष्यों में X - सम्बद्ध आनुवांशिक एन्जाइम होता है जो पुरूष इस जीन के वाहक होते है उनमें ये पूर्ण रूप से दृष्टिगत होते है। परन्तु महिला विषमयुग्मजों में अधिक भिन्नता दृष्टिगत होती है। जी-6 फॉस्फेट एन्जाइम की कमी वंशानुगत लाल रक्त कणों में आमतौर से अधिक पाया जाने वाला दोष है जिस कारण व्यक्ति में औषधी प्रेरित रक्त सलाई रक्त अल्पता होने का खतरा बढ़ जाता है। साथ ही मलेरिया रोधक दवाओं के प्रति संवेदनशीलता भी बढ़ जाती है।

रक्ताल्पता- मनुष्य के शरीर में रक्ताल्पता वह स्थिति है जब रक्त की ऑक्सीजन प्रभावित करने की क्षमता कम हो जाती है जिस कारण प्रभावित होने वाले रक्त में रक्त कणों की संख्या कम होने एवं रक्त में हीमोग्लोबीन की कमी हो जाती है। यह कमी लौह लवण, फॉलिक ऐसिड, बिटामिन बी-12 की कमी के कारण होती है। अत: आहार में इनका उचित सेवन किया जाना आवश्यक है। इस हेतु अधिक कैलोरी, अधिक प्रोटीन, मध्यम वसा मध्यम कार्बोच एवं जीवन सकुलित आहार में अंजीर, खजूर, पाक, मैथी, चुकन्दर, मूंगफली, नीबू, गाजर आदि का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में किया जाना चाहिये। निम्नलिखित तालिका में उत्तरदाताओं ने रक्ताल्पता की स्थिति को दर्शाया गया है।

महिलाओं में रक्ताल्पता

तालिका क्रमांक-1

आयु	आवृत्ति	प्रतिशत
20-30	25	25
31-40	35	35
41-50	22	22
51-60	18	18
योग	**100**	**100**

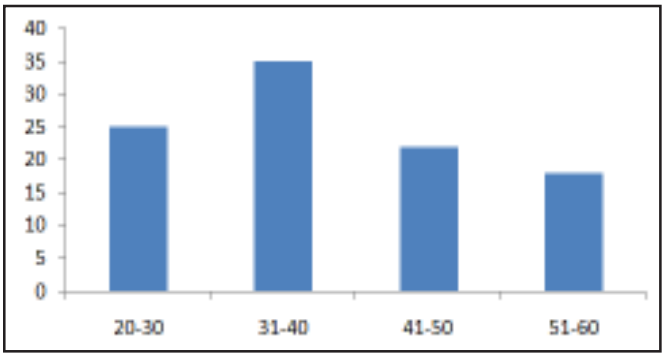

उपरोक्त तालिका का अध्ययन से स्पष्ट होता है कि चयनित उत्तरदाताओं ने सर्वाधिक 35 उत्तरदाता 31-40 आयु वर्ग की थी। ये वे उत्तरदाता थी जो बार-बार गर्भपात एवं गर्भाधान एवं अपर्याप्त कैलोरी का भोजन तथा पर्याप्त पोषण तत्व भोजन में नहीं ले रहे थी। एक ओर अधिक संतानों का होना तथा दूसरी ओर कार्य की अधिकता के कारण ये रक्ताल्पता से पीड़ित थी। जबकि 51-60 आयु वर्ग के 18 उत्तरदाता रक्ताल्पता से पीड़ित थी ये वे उत्तरदाता थी जो भोजन में पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व नहीं ले रही थी। 20-30 आयु वर्ग में 25 उत्तरदाता रक्ताल्पता से पीड़ित थी जिनका विवाह 18 वर्ष से कम आयु में हो गया था तथा संतति अंतराल न होने के कारण 30 वर्ष की आयु तक 2 से 3 संतानों को जन्म दे चुकी थी। पोषण की कमी यहां भी दृष्टिगत हुई। 41-50 आयु वर्ग में 22 उत्तरदाता अल्प पोषण के कारण रक्ताल्पता से पीड़ित थी।

सामाजिक-सांस्कृतिक कारक - भारत में प्रारंभ से ही संयुक्त परिवार की अवधारणा रही है एकल परिवार की अपेक्षा संयुक्त परिवारो में संतुलित आहार में कमी पाई जाती है। परिवार की एक स्त्री मुखिया होती है जो परिवारजनों का भोजन निर्धारित करती है। भोजन का चुनाव व्यक्ति के वृद्धि विकास पर प्रभाव डालता है जिस कारण भोजन सम्बंधी आदतें जन्म लेती हैं। भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट, लौह लवण, वसा, विटामिन का अभाव अनेक रोगों को जन्म देता है। पुत्र की कामना अधिक संतानों के जन्म का कारण बनती है; वहीं दूसरी ओर अवयस्क आयु में विवाह, कम संतति अंतराल, पुत्र की कामना में बार-बार गर्भपात या गर्भधारण, परिवार नियोजन का अभाव शिक्षा की निम्न दशा आदि महिलाओं के स्वास्थ्य को प्रभावित करती हैं जिससे रक्त अल्पता की स्थिति प्रभावित होती है। महिला की स्थिति उसी प्रकार से प्रभावित होती है जिसमें वह पलकर बड़ी हुई है। अभिव्यक्ति, व्यवहार, अंधविश्वास, परम्परायें, रीतिरिवाज महिलाओं की निम्न सामाजिक दशा ये

सभी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से महिलाओं के स्वास्थ्य को प्रभावित करते है। यदि किसी परिवार में शाकाहारी भोजन ही खाया जाता है तो वहां मांसाहारी भोजन वर्जित होगा लेकिन जहां मंसाहारी भोजन होता है वहां शाकाहार भी लिया जाता है। यद्यपि इस जनजाति में अधिकांशत: मांसाहर प्रचलन में है परन्तु पौष्टिक तत्वों का अभाव तथा निम्न आर्थिक स्थिति पर्याप्त भोजन में बाधक बनती है जिस कारण अल्प पोषण या कुपोषण की स्थिति के कारण रक्ताल्पता निर्मित होती है और शरीर कई रोगों से पीड़ित हो जाता है। चयनित उत्तरदाताओं से विभिन्न सामाजिक सांस्कृतिक कारकों के प्रभाव से स्वास्थ्य सम्बंधी जागरूकता के सम्बंध में जो तथ्य ज्ञात हुये उन्हें निम्न तालिका में दर्शाया गया है।

स्वास्थ्य सम्बंधी जागरूकता

तालिका क्रमांक-2

आयु	उच्च	मध्यम	निम्न	कुल योग
20-30	4	8	10	22
31-40	7	9	11	27
41-50	7	9	13	29
51-60	8	8	6	22
योग	**26**	**34**	**40**	**100**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में 20 से 30 आयु वर्ग में 22 उत्तरदाताओं को स्वास्थ्य के सम्बंध में जानकारी रखती थी जिनमें 4 उच्च 8 मध्यम तथा 10 निम्न श्रेणी में आती थीं। 21-40 आयु वर्ग में 27 उत्तरदाता जिनमें 7 उच्च, 9 मध्यम तथा 11 निम्न श्रेणी में आती थीं 41 से 50 आयु वर्ग में 29 उत्तरदाताओं में 7 उच्च, 9 मध्यम तथा 13 निम्न श्रेणी में आती थी जबकि 51 से 60 आयु वर्ग के 22 उत्तरदाताओं में 8 उच्च, 8 मध्यम तथा 6 निम्न श्रेणी के अन्तर्गत आती थी। अत: स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में 40 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसी थी जो स्वास्थ्य के प्रति निम्न जागरूकता रखती थी जबकि 34 प्रतिशत उत्तरदाता मध्यम एवं 26 प्रतिशत उत्तरदाता स्वास्थ्य के प्रति जागरूक थी। अत: उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जनजातिय महिलाओं में अनुवांशिक रोग एवं रक्ताल्पता को अनेक सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्य प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते है। यदि इस क्षेत्र में शिक्षा का विकास किया जाये, अनेक प्रकार के अंधविश्वासों एवं परम्पराओं को बदल दिया जाये तथा मूलभूत स्वास्थ्य सेवाओं को स्थापित कर दिया जाये तो इस समस्या का समाधान संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उप्रेती हरीशचन्द्र (1997) भारतीय जनजातियां एवं संस्थायें हिन्दी ग्रंथ अकादमी जयपुर
2. दुबे श्यामाचरण, (1960) मानव और संस्कृति राजकुमार प्रकाशन नई दिल्ली
3. हसनैन नदीम, (2001) जनजातिय भारत जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली
4. विद्यालंकार सत्यवृत (1994), भारतीय जनजातियां एवं वाणी प्रकाशन जयपुर
5. सेंसस ऑफ इंडिया वर्ष 2011
6. जिला सांख्यकीय पुस्तिका 2013 जिला ग्वालियर

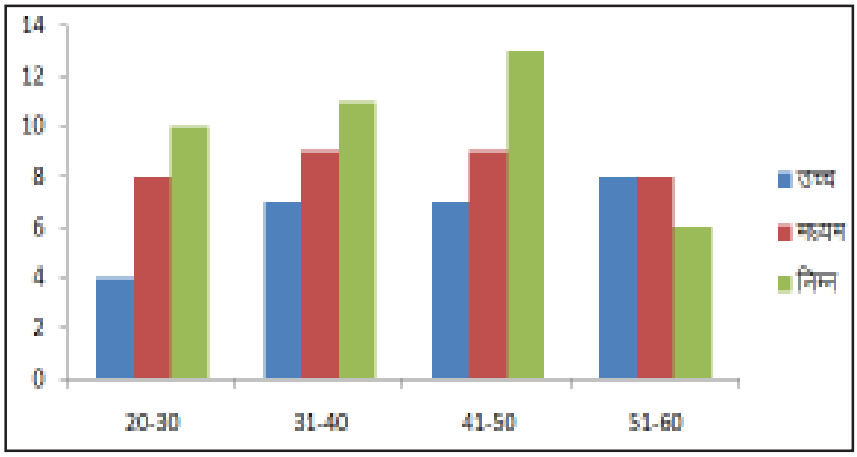

****

कामकाजी महिलाओं में भूमिका-संघर्ष : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

राकेश शिंदे *

शोध सारांश – एक प्रस्थिति धारण करने के कारण व्यक्ति जो कार्य करता है, वह उस पद की भूमिका है। समाज में कोई भी भूमिका अकेली या एकपक्षीय नहीं होती है, प्रत्येक भूमिका का महत्व अन्य प्रस्थितियों एवं भूमिकाओं के संदर्भ में ही होती है। कई बार व्यक्ति को दो भिन्न प्रस्थितियों की भूमिका एक साथ निभानी होती है और यदि उनमें विरोधाभास है तो उसे हम भूमिका संघर्ष कहते है। कठिन परिस्थितियों में कामकाजी महिलाओं की विविध भूमिका का निर्वाह उन्हें कम या अधिक भूमिका संघर्ष की स्थिति में ला देता है। जैसे उनके परिवारिक व वैवाहिक जीवन, संतान संबंधी एवं स्वास्थ्य संबंधी दायित्व, निजी नौकरी एवं कामकाज के क्षेत्र प्रभावित होते है। जब अपनी विविध भूमिका में वे असमायोजन एवं अन्तर्द्वन्द महसूस करती है तो कामकाजी महिलाओं को भूमिका संघर्ष की स्थिति से गुजरना पड़ता है।

प्रस्तावना – भूमिका को प्रस्थिति का गतिशील या व्यवहारिक पहलु माना जाता है। प्रस्थिति धारण की जाती है जबकि भूमिकाओं का निर्वाह किया जाता है। एक व्यक्ति जिस प्रकार से एक प्रस्थिति से सबंधित दायित्वो का निर्वाह और उससे सबंधित सुविधाओं एवं विशेषाधिकारो का उपभोग करता है, उसे ही भूमिका कहते है। एक प्रस्थिति धारण करने के कारण व्यक्ति जो कार्य करता है, वह उस पद की भूमिका है।

समाज में कोई भी भूमिका अकेली या एकपक्षीय नहीं होती है, प्रत्येक भूमिका का महत्व अन्य प्रस्थितियों एवं भूमिकाओं के संदर्भ में ही होती है। कई बार व्यक्ति को दो भिन्न प्रस्थितियों की भूमिका एक साथ निभानी होती है और यदि उनमें विरोधाभास है तो उसे हम भूमिका संघर्ष कहते है। भूमिका संघर्ष के लिये समाज के सांस्कृतिक मूल्य भी उत्तरदायी है। आधुनिक एवं परिवर्तनशील समाजो में भूमिका संघर्ष अधिक पाया जाता है क्योंकि यहाँ नवीन एवं पुराने मूल्य साथ-साथ चलते है। भूमिका संघर्ष मानसिक तनाव पैदा करता है। **लुण्डबर्ग** कहते है कि भूमिका संघर्ष की स्थिति में व्यक्ति प्रभावशाली भूमिका को चुन लेता है और कमजोर भूमिका को छोड़ देता है तथा जो व्यक्ति ऐसा नहीं कर पाते, उनके व्यक्तित्व का विघटन होने लगता है। भूमिका संघर्ष की स्थित समाज के विभिन्न क्षेत्रो में प्रत्येक वर्ग को प्रभावित करती है। उन्हीं में से एक वर्ग कामकाजी महिलाओं का है। कठिन परिस्थितियों में कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति होती है, व उनके परिवार प्रभावित होते है।

भारतीय सामाजिक संरचना पुरूष प्रधान है। पुरूष घर से बाहर काम करने जाते है एवं महिलाएँ अपनी गृह गृहस्थी की साज संभाल में लगी रहती है। बच्चों का पालन-पोषण एवं परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति करना उनका मुख्य कार्य है। आर्थिक उपार्जन उनका कार्य क्षेत्र नहीं है। यद्यपि इस तथ्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि प्राचीनकाल से महिलाएँ प्रकृति प्रदत्त वस्तुओं एवं कृषि कार्य में संलग्न रही हैं।

महाराजा भोज शा. स्नातकोत्तर महाविद्यालय धार (म0प्र0)– महिला शिक्षा एवं शिक्षा के बढ़ते प्रतिषत ने स्वतंत्रता के पश्चात् एवं नये महिला कानूनों ने स्त्री स्वातंत्रय को स्थापित कर बाहरी दुनिया में प्रवेश करने के सारे दरवाजे खोल दिये है। नये सामाजिक मूल्यों की स्थापना हुई है। शिक्षा ने उन्हें आत्म निर्भर कर दिया है। परिणामत: वे कामकाजी हो गयी है। विभिन्न क्षेत्रों में उनकी गतिशीलता सर्वत्र देखी जा सकती है। महिला के प्रति परंपरागत एवं रूढ़ीवादी धारणाओं में परिवर्तन आया है, वे अब पुरूषों से कंधे से कंधा मिलाकर आर्थिक उपार्जन में संलग्न है। आर्थिक उपार्जन मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन है। जिनकी पूर्ति से मनुष्य को प्रसन्नता का बोध होता है। सुख और दुख मनुष्य के जीवन के अविभाज्य अंग है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति से उसे सुख प्राप्त होता है जबकि उसके अभाव में उसे दुख होता है।

कामकाजी महिलाएँ अपने काम काज से कितनी प्रसन्न है अथवा कितनी तनावमुक्त है इस परिस्थिति का बाह्य अवलोकन संभव नहीं है। इसका गणनात्मक मूल्यांकन करना कठिन है। व्यक्ति आर्थिक उपार्जन के लिए जहाँ सेवारत होता है वहाँ के दायित्व का निर्वाह उनके लिए प्राथमिक कर्तव्य होता है। उनके अधिकारी गण एवं अन्य संबंधित कर्मचारी का आदेश उन पर जवाबदारी का जिम्मा देते है। व्यक्ति किस भूमिका का चयन करेगा व किसे छोड़ेगा, इसको तय करने के लिये समाज द्वारा प्राथमिकताओं की एक सूची बनी हुई है, उसी के अनुसार वह कम महत्पवूर्ण कार्य की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण कार्य को करता है।

आधुनिक युग में महिला शिक्षा का बढ़ता प्रतिशत एवं महिला शिक्षा के बढ़ते स्तर ने महिलाओं को कामकाजी होने की प्रेरणा दी है। फलत: उनकी प्रवृत्ति कामकाजी हो गयी है। आज वे विविध भूमिका का निर्वाह कर रही है। अपनी शैक्षणिक योग्यता का उपयोग उनके जीवन का अहम पक्ष बन गया है। आज वे सभी क्षेत्रों में पुरूषों के समान पदों पर आसीन है। राजनीतिक सत्ता का क्षेत्र हो या आय.ए.एस. आफिसर की कुर्सी, अभिनय की अभिव्यक्ति हो या नृत्यांगना का नृत्य, साहित्य का क्षेत्र हो गया ललित कलाओं का आंगन, राग-रागिनीयाँ की सरगम हो या चित्रकारी की चितेरी, चिकित्सक हो या कानूनी सलाहकार, प्रशासन का क्षेत्र हो या शिक्षिका, प्रोफेसर का दायित्व, ज्ञान विज्ञान हो या कलात्मक प्रस्तुति महिलाओं के कामकाज का विस्तार सभी क्षेत्रों में हुआ है।

कामकाजी महिलाएँ अपनी योग्यता से न केवल धन अर्जित करती है अपितु वे अर्जित धन से पारिवारिक आर्थिक संरचना में अपना योगदान

* अतिथि व्याख्याता (समाजशास्त्र) शासकीय पी.जी. महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

देकर आर्थिक संबल प्रदान करती है। महिलाओं का आर्थिक उपार्जन आर्थिक क्षेत्र में उनकी आत्मनिर्भरता को प्रदर्शित करता है।

प्राय: यह धारणा है कि आर्थिक उपार्जन करने वाली कामकाजी महिलाएँ उच्च जीवन स्तर एवं अपने जीवन से संतुष्ट होती है। उन्हें न संकट का सामना करना पडता है और ना किसी प्रकार के संघर्ष का वे मानसिक दबाव से मुक्त होती है। यह एक भ्रमपूर्ण धारणा है। जीवन के किसी भी पहलू का वर्तमान भौतिक संस्कृति में कोई न कोई स्थिति ऐसी बनती है जहाँ वे भूमिका संघर्ष का सामना करती है। थोड़ी या कम मात्रा में भूमिका संघर्ष जीवन से जुडा है। मानव जीवन का बाह्य एवं आंतरिक पहलू भिन्न होता है। उसी प्रकार जिस प्रकार मानव शरीर एवं भाव की आंतरिक शारीरिक सरंचना परस्पर भिन्न होती है। कामकाजी महिलाएँ इसी प्रकार की स्थिति में होती है। उनकी भूमिका संघर्ष का बाह्य अवलोकन संभव नहीं। कोई भी व्यक्ति परिपूर्ण नहीं अपनी भूमिका निर्वाह में। काम के दौरान कुछ न कुछ ऐसा घट ही जाता है , कुछ काम ऐसे ही आसानी से हो जाते है और कुछ उपेक्षित रह जाते है। जिन्हे पूर्ण करना भी उनके लियें आवश्यक होता है। कामकाजी संघर्ष की भी होती है। वे अपनी विभिन्न भूमिका में किसे पहले करे और किसे बाद में संघर्ष बना रहता है। यह अल्पकालीन भी हो सकता है और दीर्घकालीन भी इसका मूल्यांकन वे स्वयं कर सकती है।

पत्नि होने के नाते पति के प्रति दायित्व निर्वाह में कहीं न कहीं कमी होती है। पति-पत्नि से अपेक्षा करते है किंतु कामकाजी महिलाएँ अपने पति से सहयोग की अपेक्षा करती है। अपेक्षाओं की पूर्ति न होने पर भूमिका संघर्ष की स्थिति पैदा होती है। उनका कामकाजी होना उन पर भारी पड़ता है। कभी-कभी वे दुर्भाग्यवश घरेलु-हिंसा की शिकार होती है और पारिवारिक वैवाहिक संबंध तनावपूर्ण होते है। पति को अपनी पत्नि से अपेक्षा होती है। पूर्ण नहीं होने पर पति-पत्नि में संघर्ष उत्पन्न होता है एवं संबंधों की श्रंखलाओं की कड़ी के टूटने की संभावना रहती है।

प्राय: माना जाता है कि पद पर आसीन कामकाजी महिलाएँ सुख संपत्ति की स्वामिनी होती है। किसी भी प्रकार का विवाद उन्हें छू तक नहीं पाता। किंतु कामकाजी महिलाओं का कामकाजी होना उनके लिए सदैव प्रसन्नता का विषय नहीं होता है। कार्य - क्षेत्र का दायित्व, घर में परिवार एवं बच्चों के दायित्व के साथ कामकाजी महिलाओं पर अन्य अनेक दायित्व भी होते है। जैसे उन्हें निपुण ग्रह-प्रागंण एवं घर से बाहर के कार्यो के लिए योग्य मान लिया जाता है। घर के उपकरण खरीदना है, खराब हो गये है, वो ठीक करवाना, शॉपिंग करना जैसे कार्य उन्हीं के मान लिये जाते है, जिससे उन्हे भूमिका संघर्ष की स्थिति का हर समय सामना करना पडता है।

परिवार में बच्चों के लिए माता का स्थान अहम भूमिका का निर्वाह करती है। शैशव अवस्था से किशोरावस्था तक बच्चे माता पर आश्रित रहते है किंतु काम की व्यस्तता के कारण बच्चों पर जितना ध्यान देना चाहती है, वह चाहकर भी नहीं हो पाता। माता बच्चो के लिए सबकुछ होती है बच्चा भी अपने शेशवकाल में माँ व स्वयं में कोई अंतर नहीं समझता है क्योंकि उसकी समस्त आवश्यकता माँ ही पूरी करती है, माँ के व्यक्तित्व का प्रभाव बच्चे के सामाजीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। वह जो कुछ भी सीखता है माँ की ही देन है, वह ही उसकी प्रथम पाठशाला होती है, ग्रह प्रांगण में रहने वाली महिलाऐं बखुबी नवजात शिशु की एवं अन्य छोटे बच्चो की सुरक्षा एवं पालन पोषण करने में सिध्दहस्त होती है क्योंकि उनकी कोई अन्य भूमिका नहीं होती है। किंतु नौकरी पेशा महिलाएँ शिशु के पालन पोषण के समय माँ की भूमिका का निर्वाह करते समय भूमिका संघर्ष का सामना करना पडता है। उन्हें मानसिक द्वन्द्व का सामना करना पडता है, ना चाहकर भी एक लंबी अवधि तक उन्हें अपने शिशुओं को परहस्त को सौपना पडता है। बच्चो के प्रति एक माँ की भूमिका, पति के प्रति पत्नि की भूमिका, सास ससुर के प्रति बहु की भूमिका, कार्यक्षेत्र में एक कामकाजी महिला की भूमिका, परिवार में अन्य भूमिकाओं का निर्वाह करते-करते कामकाजी महिलाएँ भूमिका संघर्ष की स्थिति के समक्ष खडी हो जाती है।

नातेदारी भारतीय सामाजिक संरचना में जाति समूह व्यक्ति के जीवन में सामाजिक गतिशीलता एवं सामाजिक संबंधों की आधारशिला है। नातेदारों रिश्तेदारों की सामाजिक सांस्कृतिक गतिशीलता बनी रहती है। नातेदारों एवं रिश्तेदारों के विभिन्न कार्यक्रम के अवसर पर सम्मिलित होना परम आवश्यक होता है। कामकाजी महिलाएँ चाहकर भी अनेकों बार इन अवसरों पर सम्मिलित नहीं हो पाती है। उनकी नौकरी उसमें अनेकानेक कारणों से बाधा उत्पन्न करती है, अपनी अनुपस्थिति को लेकर वे विचारों के द्वन्द में फसी रहती है कि लोग उनके बारें में क्या कहेंगे। यही विचार उन्हें भूमिका संघर्ष की स्थिति में लाकर खडा कर देता है। कुछ कामकाजी महिलाएँ रात और दिन की ड्यूटी करती है जिससे उनके दैनिक जीवन की क्रियाएँ अन्य कामकाजी महिलाओं की अपेक्षा अधिक प्रभावित होती है। काम की व्यस्तता से उनकी अनेक भूमिका स्वत: उपेक्षित हो जाते है। भरसक प्रयत्न करने के बाद भी जब वे उन्हें पूरा नहीं कर पाती है तो भूमिका संघर्ष होना स्वाभाविक है। अर्जित धन इच्छानुसार खर्च न करने पाने की स्थिति में स्वयं के कामकाजी होने पर भूमिका संघर्ष को उत्पन्न करती है।

निष्कर्ष- उपरोक्त परिस्थितियों में पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं के कंधों पर दायित्वों का भार अतुल्नीय होता है। क्योंकि वे विविध भूमिका का निर्वाह करती है। परिवार के प्रति उनकी जवाबदारी के प्रति भी वे प्रतिबद्ध होती है। यही कारण है कि कामकाजी महिलाओं में भूमिका संघर्ष की स्थिति होना स्वाभाविक है। जब अपनी भूमिका में वे असमायोजन एवं अन्तर्द्वन्द महसूस करती है तब उनकी विविध भूमिका का निर्वाह उन्हें कम या अधिक भूमिका संघर्ष की स्थिति में ला देता है।

इस प्रकार यह विचारणीय एवं विश्लेषणात्मक तथ्य है कि कामकाजी महिलाओं को भूमिका संघर्ष की स्थिति से गुजरना पडता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कपूर, डॉ प्रमिला 1976 'कामकाजी भारतीय नारी' राजपाल एण्ड संस, दिल्ली।
2. यादव, रवी मई 2001 'द वर्किंग वुमन ऑफ इण्डिया, सोशल वेलफेअर नईदिल्ली, V.O.L. 48, No-2, '
3. वर्किंग वूमन एण्ड स्ट्रेस, स्वानसन एनजी (जे एम मेड वूमन्स एसोसिएशन 2000 स्प्रिंग; 55 (2) :76-9, रिव्यु)
4. 'कठिन परिस्थितियों में महिलाए' राष्ट्रीय जन संस्थान एवं बाल विकास संस्थान।
5. यादव, राजेन्द्र 'आदमी के निगाह में औरत'
6. वुमेन एम्पावरमेंट-'ए मिथ और रिएलिटी' निगम, शालु लीगल न्युज, मई 2001
7. डॉ. पी.एन.प्रभु- पारिवारिक संबंध
8. पी.एन.गुप्ता- सोसियोलाजीं

****

समाज और कानून

प्रो. ऋचा एस. मेहता *

प्रस्तावना – किसी समाज अथवा देश में सामाजिक संरचना, सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक संबंधों एवं सामाजिक मूल्यों एवं नियंत्रण को बनाये रखने में कानून की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। कानून बाध्यताकारी शक्ति के रूप में समाज के मानवीय व्यवहार एवं आचरण को नियंत्रित करता है तथा उन्हें समाज सम्मत व्यवहार एवं आचरण करने के लिए सदैव प्रेरित करता है।

प्रत्येक समाज में अपने यहाँ व्यवस्था बनाये रखने एवं अपने सदस्यों के व्यवहार एवं आचरण पर नियंत्रण करने, जिससे समाज में अपराध एवं संघर्ष की स्थिति उत्पन्न न हो, के लिए विभिन्न प्रकार के कानूनों का निर्माण करता है। कानूनों का निर्माण समाज की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाता है। प्राचीनकालीन समाज और जनजातीय समाज सरल प्रकृति थे अत: इनमें कानूनों की संख्या बहुत कम थी, लेकिन जैसे–जैसे समाज विकास करते हुए जटिल प्रकृति का हो जाता हैं तो इन प्रकार के समाजों में कानूनों की संख्या बढ़ जाती है।

आधुनिक समाजों में चाहे वह विकासशील हो अथवा विकसित, साम्यवादी हो अथवा समाजवादी लोकतांत्रिक, निरंकुशवादी पूँजीवादी हो अथवा मिश्रित अर्थव्यवस्था वाले प्रत्येक समाज में विकास एवं प्रगति के साथ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक क्षेत्र बढ़ जाता हैं जिसके परिणामस्वरूप कानूनों की संख्या भी बढ़ जाती हैं।

समाज में जिन प्रथाओं और रूढ़ियों को समाज के संचालन के लिए अत्यंत आवश्यक समझा जाता हैं और उन्हें समूचे समाज की मौन स्वीकृति प्राप्त होती हैं, तब उन्हें लिखित रूप दिया जाता है जिससे वह कानून का रूप ले लेता है। अत: कानून उन लिखित नियमों का वह संग्रह कहलाता है जिसकी घोषणा राज्य सरकार की ओर से लिखित रूप में की जाती है।

कानून को समाज में औपचारिक नियंत्रण के साधन तथा प्रतिमान अथवा मानदण्ड के रूप में माना जाता हैं। सरल एवं प्राचीन समाजों की अपेक्षा आधुनिक जटिल समाजों में कानूनों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है।

सामान्यत: समाजों में दो प्रकार के कानून पाये जाते हैं –

1. प्रथागत कानून (Costomary Law)
2. निर्मित कानून (Enacted Law)

1. प्रथागत कानून उन समाजों में पाये जाते हैं जहाँ राजनीतिक विशेषीकरण नहीं हुआ हैं तथा जहाँ न्याय का ढाँचा बहुत अधिक सरकारी नही होता, बल्कि व्यक्तियों के विशिष्ट समूहों को वे सभी अधिकार प्राप्त होते हैं जो कानूनों द्वारा न्यायाधीशों को प्राप्त होते है।

2. जटिल एवं आधुनिक समाजों में केवल जनमत औपचारिक शक्ति तथा नैतिक चेतना ही व्यवस्था बनाये रखने के लिए पर्याप्त नहीं होते, बल्कि किसी विशेष प्रकार के राजनीतिक संगठन की भी आवश्यकता होती हैं। आधुनिक समाजों में भाषा एवं लिपि तथा शिक्षा के विकास के कारण कानून का लिखित रूप पाया जाता है। लिखित कानून विधान मण्डलों द्वारा बनाये एवं पारित किए जाते हैं तथा सरकारी तंत्र द्वारा लागू किये जाते हैं और न्यायालयों द्वारा उनकी रक्षा और व्याख्या की जाती है।

निर्मित तथा पारित कानूनों को सुविधा की दृष्टि से दो भागों में बाँटा गया है –

1. **दीवानी अथवा नागरिक कानून (Civil Law)** : इसका अभिप्राय उन कानूनों से हैं, जो व्यक्ति, व्यक्ति के मध्य तथा व्यक्ति एवं संस्था के मध्य विवादों का निपटारा करते है जैसे–जैसे किसी समाज में विकास एवं गतिशीलता बढ़ती हैं वैसे–वैसे ही दीवानी कानूनों की संख्या में वृद्धि होती जाती हैं।

भारतीय समाज में दीवानी कानूनों के प्रमुख प्रकार निम्नांकित हैं –

(क) **सामाजिक कानून (Social Law)** : इसमें वे कानून है जिनके अंतर्गत समाज में रहने वाले लोगों (स्त्री, पुरूष, बच्चे) के परिवार, विवाह, प्रस्थिति, सम्पत्ति, उत्तराधिकार स्वामित्व, पालन–पोषण तथा एकल विवाह, बाल विवाह, सती पथा, विधवा विवाह दहेज आदि सामाजिक समस्याओं से संबंधित विवादों का सामान्य प्रक्रिया द्वारा निपटारा किया जाता है।

भारत में परिवार एवं विवाह संबंधी बहुत से कानून प्रचलित हैं जिनमें प्रमुख निम्नलिखित है –

- सती प्रथा निषेध अधिनियम 1929
- हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856
- भारतीय विवाह विच्छेद अधिनियम, 1869
- बाल–विवाह निरोधक अधिनियम, 1929
- हिन्दू स्त्रियों का सम्पत्ति पर अधिकार अधिनियम, 1937
- अलग रहने और भरण–पोषण हेतु स्त्रियों के अधिकार, अधिनियम 1946
- हिन्दू विवाह हेतु स्त्रियों के अधिकार अधिनियम, 1946
- हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955
- विशेष विवाह अधिनियम, 1954
- हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956
- हिन्दू नाबालिगों तथा संरक्षता अधिनियम, 1956
- स्त्रियों एवं कन्याओं का अनैतिक व्यापार निरोधक अधिनियम, 1956
- दहेज विरोधी अधिनियम 1961, 1986 (संशोधित)
- विवाह विधि (संशोधन) अधिनियम 2001 आदि

इनमें कुछ कानूनों में केवल जुर्माने का प्रावधान है, जबकि कुछ में जुर्माना और सजा दोनों का प्रावधान है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र) भारत

(ख) **आर्थिक कानून (Economic Law)** – इसमें वे कानून आते हैं जो भारत की अर्थव्यवस्था, आर्थिक क्रियाओं, आर्थिक ढाँचे आदि को किसी ना किसी गैर कानूनी कार्यों द्वारा हानि पहुँचाने से रोकते है – जैसे बैकिंग कानून, आयकर कानून, शेयर व्यवसाय कानून, उत्पाद शुल्क कानून, राजस्व कानून, आबकारी कानून, सेवा कर कानून, आयात–निर्यात कानून ऋण संबंधी कानून, सार्वजनिक सम्पत्ति क्रय विक्रय कानून, स्टॉम्प ड्यूटी कानून आदि। इन सभी आर्थिक कानूनों में गैर कानूनी आर्थिक क्रियाओं को निषिद्ध करने हेतु जुर्माना एवं सजा दोनों का प्रावधान है।

(ग) **राजनीतिक कानून (Political Law)** – राजनीतिक कानूनों में राजनीतिक गतिविधियों चुनाव प्रक्रिया, सरकार के गठन, सरकार का निलंबन, मतदाता व्यवहार, चुनाव उम्मीदवार, राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्री परिषद, राष्ट्रपति शासन संसदीय कार्यविधि, विधानसभाविधान परिषद कार्यविधि, स्थानीय निकाय, नागरिकता, संविधान संशोधन, राज्यपाल लोक सेवाएँ, सरकारी मंत्रालय विभाग गठन आयोग, समिति का गठन, आरक्षण, अल्पसंख्यक, अनुसूचित जाति, जनजाति प्रतिनिधित्व, जनप्रतिनिधियों का वेतन, भत्तो, सैन्य प्रशासन, सुरक्षा बल, न्यायपालिका व्यवस्थापिका, कार्यपालिका गठन आदि से संबंधित पक्षों को सम्मिलित किया गया है जो भारतीय राजनीतिक व्यवस्था को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

(घ) **श्रमिक कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा कानून (Labour Welfare & Social Security Law)** – भारत में संगठित एवं असंगठित क्षेत्रों में करोड़ों श्रमिक कार्यरत हैं। भारत में श्रमिकों की सुरक्षा, कल्याण वेतन, मजदूरी, औद्योगिक हड़ताल श्रमिक संघ आदि से संबंधित करीब 50 कानून लागू हैं।

(ड) **कृषि संबंधी कानून (Agriculture Law)** – इसके अंतर्गत भू–राजस्व अधिनियम 1986, भू खातेदारी कानून, कृषक बीमा कानून 1992 सहकारिता कानून 1976, जमींदारी उन्मूलन कानून एवं भूमि सीलिंग एक्ट 1971 आदि।

(ब) **पुलिस एवं यातायात संबंधित कानून (Police & Traffic related Law)** – भारत देश में शांति एवं व्यवस्था की स्थापना अपराधों की रोकथाम, अपराधियों को दण्ड देने हेतु पुलिस कानून भी कार्यरत है। इसी तरह शहरों महानगरों में बढ़ते यातायात दबाव व प्रवाह को नियंत्रित करने, यातायात प्रदूषण को रोकने, दुर्घटनाओं की कमी लाने, सुरक्षित यातायात संचालन आदि हेतु कार्यों के लिए यातायात संबंधी कानून कार्यरत है।

2. **फौजदारी अथवा आपराधिक कानून (Criminal Law)** – भारत में सामान्य कानूनों के अतिरिक्त फौजदारी अथवा आपराधिक कानून है। इन कानूनों के अंतर्गत जब एक व्यक्ति द्वारा इसके व्यक्ति को शारीरिक रूप से हानि पहुँचाने का प्रयास किया जाता है। जैसे – (हत्या करना, दुर्घटना करना, मारपीट, कत्ल अंग–भंग करना आदि) तो फौजदारी कानूनों के तहत् अपराध करने वाले पर पुलिस की सहायता से न्यायालय द्वारा कार्यवाही की जाती है और अपराधी को जुर्माना एवं सजा दी जाती है। फौजदारी कानूनों का उद्देश्य अपराध करने वाले को सख्त दण्ड देना है जिससे वह आगे अपराध न करे तथा समाज के अन्य व्यक्ति भी इससे सबक लेते हुए आपराधिक गतिविधियों में लिप्त न हो। फौजदारी कानूनों का उद्देश्य समाज में शांति एवं व्यवस्था बनाए रखना होता है। फौजदारी कानून में पुलिस न्यायालय एवं वकील तीनों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

भारत में फौजदारी कानूनों के अंतर्गत प्रमुख कानून निम्नलिखित है –

व भारतीय दण्ड विधान (IPC) 1860
- भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973
  टाडा (TADA) कानून, 1975
- पोटा (POTA) कानून, 2002

इस प्रकार उपर्युक्त कानूनों के विवरण से स्पष्ट है कि भारत में मानवीय जीवन के हर पक्ष से संबंधित कोई ना कोई कानून बना हुआ है जो प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से मानवीय जीवन को नियंत्रित करता हैं तथा उसे समाज सम्मत व्यवहार करने हेतु प्रोत्साहित करता हैं ताकि समाज रूपी संरचना एवं व्यवस्था बनी रही है।

अंत में हम सभी को इन कानूनों की जानकारी होना आवश्यक है क्योंकि हम अपने व्यवहार को नियंत्रण में रखकर समाज एवं देश को सकारात्मक विकास की ओर ले जा सकते है और अपराधों भ्रष्टाचार को भविष्य में कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Aubert - sociology of law
2. Adam Podgorecki - Law and Society.
3. Vyas & Rathore - Social Authorpology.
4. K.L. Sharma - Sociology of Law and Legal Profession.
5. कानून का समाजशास्त्र – डॉ.अजय सिंह राठौर
6. हमारे कानून – महिला एवं बाल विकास विकास

****

वैश्वीकरण के दौर में महिलायें

डॉ. कविता जैन *

शोध सारांश – प्रत्येक देश का अन्य देशों के साथ वस्तु, सेवा, पूँजी एवं बौद्धिक सम्पदा का अप्रतिबन्धित आदान-प्रदान ही वैश्वीकरण कहलाता है। वैश्वीकरण के इस दौर में पूरी दुनिया में बड़ा उथल-पुथल हो रहा है। आज पूरी दुनिया वैश्वीकरण के दौर में साँस ले रही है। हम आज वैश्वीकरण के बीच जी रहे हैं वैश्वीकरण समकालीन दुनिया की सच्चाई है। इसी संदर्भ में महात्मा गांधी के इस उद्धरण को भी देखना होगा, वे लिखते है – मैं नहीं चाहता कि मेरा मकान चारों और दीवारों से घिरा हो और मेरी खिड़कियाँ बंद हो। मैं चाहता हूँ कि सभी देश की संस्कृतियों की हवायें मेरे घर में जितनी भी आजादी से बह सके बहे, लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि उनमें से कोई हवा मुझे मेरी जड़ों से ही उखाड़ दें।

प्रस्तावना – हम दूसरे देशों में जाते है और दूसरे देशों के लोग हमारे यहॉ आते रहे हैं। व्यापारिक लेन-देन और सांस्कृतिक आदान-प्रदान भी हम हमेशा करते रहे है। इन प्रक्रियाओं में भी हम शेष विश्व से कभी कटे नहीं बल्कि पहले से भी ज्यादा जुड़ते रहे हैं अत: वैश्वीकरण हमारे लिए कोई नई या डरावनी चीज नहीं है। लेकिन हम अपना वैश्वीकरण समता, न्याय और विश्वबन्धुत्व के आधार पर चाहते है।

वैश्वीकरण के दौर में नारी की मुश्किले बढ़ी हैं। बढ़ते मशीनीकरण से नौकरियों में असुरक्षा, कम वेतन, विदेशी कम्पनियों की मनमानी शर्ते, उनके समक्ष हमारे कानूनों की असमर्थता, बढ़ता भ्रष्टाचार ये परिस्थितियां औरत को न्याय दिलाने में असमर्थ है। वैश्वीकरण के कारण विकसित देशों में महिलायें निर्धनता और भेदभाव का शिकार हो रही है। एक ही तरह के काम में पुरुष और महिला में भेदभाव किया जा रहा है। दोनों के पारिश्रमिक में भिन्नता है। आज पुरुषों की तुलना में महिलाओं का मूल्यांकन कम किया जा रहा है। आज भी महिलायें अशिक्षा, कुपोषण और निर्धनता का शिकार हो रही है।

आज महिला के लिए जरुरत है कि उसके श्रम को सीधे उत्पादन से जोड़ा जाये। हमेशा ही आजीविका कमाने में पुरुष के काम की तुलना में महिला का काम तुच्छ रहा है। उसका उत्पादन से सीधा सम्बन्ध सुनिश्चित नहीं होता जबकि परोक्षत: उसका श्रम उत्पादन में सहायक होता है।

महिलाओं की स्वतंत्रता केवल उसी समय संभव होती है जब वे बडे पैमाने पर उत्पादन में भाग लेने में समर्थ हो पाती है। वैश्वीकरण में वैश्विक पर्यावरण, वैश्विक अर्थव्यवस्था, वैश्विक ग्राम आदि का विश्लेषण करने का कार्य किया जाता है।

वैश्वीकरण से जनता के विविध क्षेत्र प्रभावित हुए है जो जीवन से जुड़े है। इसमें तमाम कम्पनियों के मध्य उत्पादन एवं सहयोग अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय बाजार का अधिकाधिक प्रयोग एवं नई बाजार व्यवस्था में स्थानीय कारकों एवं उत्पादन का प्रसार और अंतर्राष्ट्रीय बाजार का सर्वाधिक प्रयोग वैश्वीकरण की पहचान है।

महिलाओं की स्थिति और भूमिका पर वैश्वीकरण का प्रभाव पड़ा है। इसके विभिन्न पहलू महिलाओं के संदर्भ में देखे जा सकते है।

साधारणत: महिलायें दो प्रारुप में प्रभावित और शिकार होती है। मुख्यत: शोषित वर्ग का सदस्य होने के कारण द्वितीयत: महिला होने का कारण वैश्वीकरण के प्रभाव में रहती है। संप्रभु देश प्राकृतिक स्त्रोतों पर नियंत्रण रखते हुए सामाजिक, सांस्कृतिक विरासत में भिन्नता के बावजूद भी विकासोन्मुख देशों के सामने तमाम चुनौतियाँ प्रस्तुत करते है, वैश्वीकरण के चलते मानव विकास रिपोर्ट 1992 में स्पष्ट है कि वैश्वीक व्यवस्था आय भिन्नता को विस्तृत करके आर्थिक वृद्धि से जुड़ी विभिन्नता का प्रसार करके जीवनापेक्षी, पोषाहार, नवजात शिशु एवं मर्त्यता, वयस्क, साक्षरता आदि में विषमता पैदा करके निर्बल वर्ग की स्थिति को और भी बदतर बनाती है। भारत में महिलाओं का विकास देखने से यह स्पष्ट होता है कि वैश्वीकरण ने विकास एवं सुधार की तुलना में महिलाओं का पतन ही किया है। उदाहरणार्थ विश्व पटल पर भारत में यौन अनुपात एक हजार पुरुष पर 929 महिलायें विश्व में सबसे कम है। तीन पुरुषों पर एक महिला स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओ का उपयोग कर पाती है। ज्यादातर महिलायें असंगठित संस्थाओं में काम करती है और नियमहीनता के चलते शोषण का शिकार होती है। पितृ सत्तात्मक समाज ने महिलाओं पर घातक प्रभाव डाले है। आर्थिक स्वामित्व आते ही पुरुष समाज का पिता बन बैठा। पितृसत्ता ने पूरे समाज को प्रभावित किया। महिला मानव इतिहास की एक ऐसी जाति है जिसका सदियों से शोषण होता रहा है। वर्तमान सामाजिक परिदृश्य में भी पितृसत्ता के सभी दास है। कार्य करती हुयी महिलाओं का जीवन स्तर पूरी तरह खराब पोषाहार व स्वास्थ्य में गिरावट के कारण प्रभावित हुआ है। इस तरह महिलाएँ दोहरी शोषण की शिकार है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में बीजिंग में अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन हुआ था। संयुक्त राष्ट्र संघ के कार्य मंच से महिलाओं की स्थिति बेहतर बनाने के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रस्ताव पेश किए गए जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण प्रस्ताव ये है –

1. **आर्थिक विषमता :** महिलाओं को संसाधनों, रोजगार, बाजार एवं व्यापार, सूचना एवं टेक्नोलॉजी में बराबरी का हिस्सा मिले। कार्यस्थलों का यौन उत्पीड़न एवं अन्य तरह के भेदभाव को दूर किया जाय।
2. **गरीबी –** महिलाओं के प्रच्छन्न कार्यों को पहचान प्रदान करने के लिए सांख्यिकीय माध्यम प्रदान किया जाय और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उनके सहयोग को चिन्हित किया जाय। गरीब औरतों को आर्थिक अवसर प्रदान किया जाय, कम खर्चे में घर, भूमि, प्राकृतिक संसाधन उधार एवं अन्य सेवायें दी जाये।
3. **पर्यावरण –** पर्यावरण संबंधी नीतियों में निर्माण, पर्यावरणीय नीतियों

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

का औरतों पर पड़ने वाले प्रभाव का आकलन किया जाए।

4. संस्थायें – औरतों के विकास की जिम्मेदारी सरकार मे उँचे स्तर पर सौंपी जाय। सभी कानूनों जननीतियों, कार्यक्रमों में लिंग प्रभावों को दिखाने वाले आंकड़ो का संग्रह कर उनका प्रचार किया जाए।

संयुक्त राष्ट्र संघ के सर्वेक्षण के अनुसार हमारे देश में हर वर्ष डेढ़ करोड़ लड़कियां जन्म लेती है जिनमें पच्चीस लाख 15 वर्ष की उम्र से पहले की मर जाती है। इन लड़कियों की मौत का कारण समाज में महिलाओं के प्रति भेदभाव का व्यवहार है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों व संगठनों के अनुभवों से स्पष्ट होता है कि उच्च पूंजी प्रविधि के कारण उत्पादन तो प्रचुर मात्रा में होता है परन्तु उसके मुकाबले रोजगार के अवसरों में वृद्धि नहीं होती।

एक आश्चर्यजनक तथ्य यह भी है कि श्रम में भी नारीत्व का रुझान आने लगा है। रोजगार में न्यूनतम मजदूरी की अवधारणा का मूल्यांकन किया जाता है। नियति से जुड़े उद्योगों में महिलाओं को न्यूनतम मजदूरी आंशिक प्रकृति के रोजगार, अस्थाई अनुबंध पर नियुक्त किया जाता है जिससे महिलाओं में सदैव अनिश्चितता का माहौल बना रहता है। बाजार के एकाधिकार के कारण उपयोगी चीजों के प्रति जीवन के विविध पक्ष विशेष रुप से आकर्षित हुए है। इस प्रकार के रुझान से महिलाओं की गृहकार्य से संबंधित रुपरेखा प्रभावित हुई है। एक बात और महत्वपूर्ण है कि महिलाओं के घरेलू कार्यों को कार्य श्रेणी में नहीं माना जाता है। महिलाओं के कार्य को कार्य की संज्ञा तभी दी जाती है जब वे बाहर जाकर कुछ कार्य करती हो और उसके एवज में मुद्रा पाती हो ।

सामान्य प्राकृतिक स्त्रोतों की निजीकरण पर्यावरण के लगातार ह्रास के लिए जिम्मेदार है। नियति को प्रोत्साहन देने के लिए देशी स्त्रोतों का शोषण किया जा रहा है। इसके कई गंभीर परिणाम भी सामने आने लगे है। ऐसी महिलाओं को जीवन की आवश्यकताओं को भी जुटाने के लिए मेहनत करनी पड़ती है जिनका जीवन प्राकृतिक स्त्रोतों से जुड़ा है। बुनकर समुदाय मछली पकड़ने वाले जिनमें प्रमुख रुप से आते है।

भारतीय प्राकृतिक स्त्रोतों का वैश्विक शोषण के लिए मुक्त कर देना कई चुनौतियों को खड़ा कर रहा है। उपभोक्तावाद, हिंसा, व्यक्तिवाद, एवं स्वच्छंद यौनिक व्यवहार आदि का समाज व महिलाओं पर घातक प्रभाव पड़ा है। महिलाओं पर बढ़ती हिंसा घर के भीतर और बाहर बहुत ही घातक परिणाम दर्शाता है। महिलाओं के प्रति यौन अपराध उनकी स्थिति को और भी भयानक बना रहा है। पति या निकट संबंधियों द्वारा महिलाओं की हत्या होना या बलात्कार होना आम बात हो गई है। दहेज के कारण 17 महिलायें रोज मरती है। बढ़ता हुआ उपभोक्तावाद, बाजारवाद, उन्मेषित आर्थिक नीति को बढ़ावा देता है और महिलाओं को अवमूल्यन करता है।

इस तरह से वैश्विकरण जहां विकासोन्मुख देशों के अनन्तर विकास के द्वार को रेखांकित करने का प्रयास करता है वहीं समाज की आर्थिक रुप से गरीब महिलाओं को अधिक उत्पीड़ित करने का प्रयास भी करता है। इससे महिलाओं का निरन्तर ह्रास और उत्पीड़न हुआ है। वैश्विकरण के दौर में महिलायें चतुर्दिक उत्पीड़न की शिकार हुई हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र – डॉ. एम.एम. लवानिया–राशि के जैन रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर नई दिल्ली
2. भारतीय नारी : वर्तमान समस्यायें और भावी समाधान – आर. सी. तिवारी, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉरपोरेशन नई दिल्ली
3. समाजशास्त्र–डॉ. गुप्ता एवं शर्मा
4. परीक्षा मंथन
5. योजना पत्रिका
6. दैनिक भास्कर

****

जनजाति संस्कृति में शराब का प्रचलन : एक अभिशाप

डॉ. आर. सी. पान्टेल *

प्रस्तावना – भारत में जनजाति संस्कृति को प्राय आदिम एवं पिछड़ी संस्कृति प्राचीन समय से ही मानी जाती रही हैं तथा वर्तमान में जनजातिय परिवारों में अधिक सुधार दृष्टीगोचर नहीं हो रहा हैं जिसके प्रमुख कारण इन की अपनी ही संस्कृति के परम्परागत मूल्य है। पुरातन साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता हैं कि वैदिक पौराणिक मुगल राजपूतकालीन संस्कृति में शराब के अत्याधिक प्रचलन को साहित्य भरा पड़ा हैं। शराब के संबंध में कुछ विद्धानों का मत हैं कि सबसे पहले शराब से आर्थिक, पारिवारिक औंर सामाजिक विघटन प्रभावित होता हैं। 'पहले व्यक्ति शराब को पीता हैं फिर शराब स्वयं को पीती हैं और और अंतत: शराब व्यक्ति को ही पी जाती हैं।'

उपरोक्त दृष्टिकोण से शराब का सेवन व्यक्ति के जीवन में होना इसके विनाश की ओर जाना निश्चित हो जाता हैं। लेकिन प्राचीन समय में शराब का प्रयोग दवाई के रूप में किया जाता था तथा हमारे देश के मुख्य रक्षको में जोष भरने के लिये भी शराब का सेवन अच्छा माना गया हैं लेकिन वर्तमान समय में शराबियों को सड़क किनारे, नालियों के पास तथा शराब आहतों में विनाश करते देख यह प्रश्न चिन्ह होता हैं कि इन लोगों का आर्थिक नुकसान होने के साथ ही कही अधिक सामाजिक क्षति भी हो रही हैं इनकी सामाजिक प्रतिष्ठा दिन–प्रतिदिन खराब होती दिखाई दे रही हैं।

इतिहास प्रमाण देता हैं कि शराब के कारण ही कई राज्य पतन के गर्त में चले गये जमींदारिया लूट गई तथा सामाजिक विघटन की अनेक घटनाएं सुरा सुन्दरियों के कारण ही हुई हैं।

इससे स्पष्ट होता हैं कि अति प्राचीन काल से ही शराब का प्रचलन भारतीय संस्कृति में घुला मिला हैं। वर्तमान में महानगरीय सभ्यता से लेकर गांव, कस्बा, नगर तथा फाल्या तक की संस्कृति में शराब ने अपना विस्तार क्या अधिपत्य कर लिया हैं। भारतीय परम्परा के अनुसार शराब का संबंध में सुख–दुख दोनों से गहरा जुड़ा हुआ हैं।

शोधार्थी ने अपने अध्ययन में पाया कि संपूर्ण भारत के जनजातिय समाज में शराब का प्रचलन पारम्परिक रूप में अपनी जड़ तक चला गया हैं। डॉ. नेमिचंद जैन ने अपनी पुस्तक 'भील भाषा का भाषा शास्त्रीय अध्ययन' में स्पष्ट किया हैं कि भील जनजाति में आदिकाल से चली आ रही इस परम्परा को किसी भी प्रयासो से नष्ट नहीं किया जा सकता हैं। इसे किस तरह जनजातिय जीवन से विलोपित किया जाए। समाजशास्त्री, शुभ–चितंको तथा मेधावी सामाजिक विचारको द्वारा विचार करना आवश्यक होगा।

जनजातिय समाजो में शराब के सेवन का प्रचलन बढ़ते रहने से न केवल व्यक्ति का तथा पारिवारिक विघटन होगा बल्कि निर्धनता तथा विभिन्न प्रकार की बिमारियों में इनके जीवन पर विपरित प्रभाव डालेगी। म.प्र. के पश्चिम क्षेत्र जो गुजरात की सीमा को छुए हुए वहां कि जनजातिय परिवारों में शराब का अधिक सेवन हो रहा हैं जहां उनका सामाजिक, आर्थिक विकास अवरूद्ध हो गया हैं। म.प्र. का पश्चिमी क्षेत्र भीलांचल के रूप में अपनी पहचान बनाये हुए हैं।

म.प्र. के मानचित्र में खरगोन, बड़वानी, धार, झाबुआ, रतलाम जिले भील जनजाति क्षेत्र के रूप में जाने जाते हैं। इसके साथ ही राजस्थान और गुजरात भी भीलों के नाम से अपनी पहचान निर्मित करते हैं। यदि अध्ययन के अतीत की ओर देखा जाए तो ज्ञात होगा कि यह जाति क्षेत्रिय जाति के रूप में चर्चित रही हैं। विशेषकर जनजाति संदर्भ में यह वर्ग भील सरदारो, भील राजाओ और भील राज्य प्रमुख के रूप में अपनी विरासत इतिहास के पन्नों में चर्चित हैं। समयकाल एवं उत्पन्न परिस्थितियों का अध्ययन करने पर ज्ञात होता हैं कि भीलों में ही एक श्रेष्ट वर्ग ने अपनी पहचान एक अलग समुदाय के रूप में निर्मित की जिसे एतिहासिक रूप में देखा जा सकता हैं। राजपूतों के संपर्क में आने के कारण इन्ही भीलो से भिलाला, बारेला, ठाकरिया, दरबारिया, तथा तड़वी जनजाति अस्तित्व में आई तथा अपनी स्वतंत्र पहचान निर्मित की हैं। म.प्र. जनजाति वर्ग में भिलाला जनजाति अपने आपको सर्वश्रेष्ट समझ रही हैं जिसका कारण राजपूत राजाओं के संपर्क में आना हैं। राजपूतों के संपर्क में एक कुशल वर्ग ,भिलाला जो बुद्धि का प्रतिक ही नहीं था अपितु तमाम प्रकार की कुशलताऐं संस्कारगत प्राप्त हुई थी।

शिक्षा जैसी अनिवार्य योजनाओं में भी भील समुदाय पिछड़ी हुई स्थिति में हैं जिसमें जनजातिय विकास मंत्रालय के आला अफसर चिंतित हैं। वर्तमान समय में देखा जा रहा हैं कि शासन कि जनजातिय कल्याण नीतियों का सर्वाधिक लाभ भिलाला जनजाति परिवारों को ही रहा हैं। प्राय: यह कहां जाता हैं कि योजनाएं सबके हक के लिए निवेशित होती हैं लेकिन कोई एक वर्ग ही लाभांवित होता हैं और अन्य समूह की स्थिति पूर्व की भांति ही बनी रही तो यह विकास योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु एक चुनौति है।

उपरोक्त कथनों का यह तात्पर्य नहीं हैं कि अपने आप को उच्च मानने वाली जनजाति (भिलाला) शराब का सेवन नहीं करती, यह वर्ग भी परम्परागत संस्कृति अनुसार शराब का सेवन करती हैं पर सचेत होकर।

आजादी के लम्बे अन्तराल के बाद भी आज का जनजातिय वर्ग सामान्य वर्गो से बहुत पीछे छूट गया हैं। संस्कृतिक प्रतिमानों के अनुसार समय–समय पर जनजातिय समाज शराब का सेवन करते ही हैं।

सामाजिक रस्मों के अवसर पर भी जनजातियों में शराब का अत्याधिक सेवन सामान्य समझा जाता हैं जिसका प्रभाव यह होता हैं कि यह वर्ग आर्थिक उपार्जन का एक बड़ा भाग शराब पर व्यय कर देता हैं।

भील जनजाति की दूसरी जनजातियों में शराब के सेवन के उतने बुरे परिणाम देखने को नहीं मिलते हैं। जितने की भील परिवारो में देखे जाते हैं। इस क्षेत्र का भील अशिक्षा के कारण अपना अर्जित पैसा शराब पर नष्ट कर देता हैं। इसलिए उसका परिवार घोर दरिद्रता के बाहुपाश में जकड़ा दिखाई

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय धामनोद जिला –धार (म.प्र) भारत

देता हैं। शराब की बुरी लत के कारण जनजातिय परिवारो में विभिन्न प्रकार की बिमारियां जैसे टी.बी., लीवर, किडनी का विस्तार हो रहा हैं यह हैं कि गंभीर बिमारियां उनके मौत के आगोश में ले रही हैं। स्वास्थ्य विभाग की ओर से जनजातिय क्षेत्रों में नशामुक्ति हेतु बड़े पैमाने पर प्रचार-प्रसार किया जा रहा हैं। परन्तु अषिक्षा के कारण प्रचार-प्रसार की उनकी मानसिकता पर सकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ रहा हैं वैसे भी कुछ विद्धानो ने कहां हैं कि 'मनुष्य एक सामाजिक प्राणी अवश्य हैं लेकिन व्यक्ति अपनी आदतो का दास होता हैं।'

आयु वर्ग में शराब का सेवन

आयु	15-20	20-25	25-30	30-35	35-40	40-50
प्रतिशत्	20%	80%	100%	60%	30%	10%

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट हैं कि जनजातिय परिवारों में सबसे अधिक 25-30 आयु वर्ग के व्यक्ति शराब का अधिक सेवन करते हैं तथा सबसे कम आयु वर्ग 40-50 वर्ष हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूंची-

1. डॉ. जैन नेमीचंद भीली भाषा वैज्ञानिक अध्ययन। (दे.अ.वि.वि. इन्दौर)
2. डॉ. जैन नेमीचंद - भील संस्कृति। (वाणी प्रकाशन नई दिल्ली)
3. डॉ. निकुंज- भीलों की सामाजिक व्यवस्था। (राधा प्रकाशन नई दिल्ली)
4. डॉ. पाटील-म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल
5. शर्मा डी एण्ड बहादुर-जनजातिय अध्ययन। (आदिवासी अनुसंधान भोपाल)
6. डॉ. वर्मा एम.एल-भीलों की सामाजिक व्यवस्था। (क्लासिकल पब्लिकेशन नई दिल्ली)
7. दास सिवतोश-भारत के आदिवासी। (जनता प्रेस आगरा)
8. जनजातिय क्षेत्र का निवासी होने के नाते स्वयं का अनुभव।

****

समाज के उच्च शिक्षित युवा वर्ग में सूचना के अधिकार के संदर्भ में जागरुकता: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. संजय जोशी *

प्रस्तावना – भारतीय संविधान के भाग-3 में नागरिकों के मूल अधिकारों- समता, स्वांतत्र, धर्म की स्वतंत्रता, शिक्षा शोषण के विरुद्ध अधिकार का उल्लेख किया गया है। किसी भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था में उल्लेखित ये अधिकार न सिर्फ महत्वपूर्ण है बल्कि प्रजातंत्र के लिये प्राणवायु का काम करते है। इन अधिकारो में सूचना का अधिकार भी सम्मिलित है। भारतीय संविधान 19(1)(ए) के अन्तर्गत घोषित रूप से बोलने व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार की रक्षा करता है। सर्वोच्च न्यायलय ने स्पष्ट रूप से व्याख्या की है कि जानने का अधिकार, बोलने व अभिव्यक्ति को स्वतंत्रता के अधिकार में ही शामिल है। सूचना या जानकारी के अभाव में किसी भी व्यक्ति के लिये सार्थक ढ़ंग से अपनी राय बनाना या अभिव्यक्त करना संभव नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ने जानने के अधिकार को संविधान के ए 21 के अंतर्गत प्रदत्त जीवन के अधिकार से भी जोड़ा है। जानने के अधिकार के बिना जीवन का अधिकार स्वयं ही अधूरा रह जाता है।

अत: सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 की मूल भावना संविधान द्वारा प्रदत्त इन अधिकारों का नागरिकों द्वारा प्रभावी उपयोग किये जाने से है। शासन को पारदर्शी एवं उत्तरदायी बनाना भी इस अधिनियम के उद्देश्यों में से एक है।

सूचना का अधिकार अधिनियम का उद्देश्य – अधिनियम के प्रावधानों के अधीन ''सूचना से तात्पर्य उन समस्त विधियों एवं प्रक्रियाओं से है जो किसी संस्था के प्रशासन, कार्य संचालन एवं निर्णय लेने की प्रक्रिया से संबंधित हो तथा उसे लोकहित की भावना से मांगा गया हो। इस परिभाषा के अंतर्गत सूचना रिकार्ड, नक्शे, नस्ती, पूंजी, रजिस्टर्ड, आँकड़े, रेखाचित्र, नमूने इत्यादि किसी भी रुप में हो सकते है। इस अधिनियम की धारा 27 के अंतर्गत विभिन्न राज्य सरकारों को अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु नियम बनाने के निर्देश दिये गये है।''

सूचना का अधिकार क्यों महत्वपूर्ण है ? –लोकतंत्र में शासन, जनता का, जनता के लिये जनता के द्वारा संचालित किया जाता है। भारतीय संविधान सहभागी लोकतंत्र के सिद्धांत पर आधारित है। शासन व्यवस्था में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करने के लिये नागरिकों द्वारा चुनाव के माध्यम से अपने प्रतिनिधि का चयन किया जाता है। परंतु पिछले काफी समय से नागरिकों की सहभागिता केवल मताधिकार का प्रयोग तक ही सामित होकर रह गई है। इसके पीछे आवश्यक सूचनाओं के अभाव में नागरिकों को निष्क्रियता एक कारण रहा है। सूचना के अभाव में लोग यही नहीं जान पाते है कि सरकार क्या कर रही है ? सरकारी योजनाओं की प्रक्रिया क्या है ? उनमें कैसे भागीदारी की जा सकती हैं ?

संविधान की यह मान्यता है कि जनता के चुने हुए प्रतिनिधि जनता की इच्छा व आंकाक्षा के अनुरुप संविधान सम्मत शासन व्यवस्था का संचालन तथा नीतियों का निर्धारण इस प्रकार करें कि प्रत्येक व्यक्ति को उसका अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके। इस प्रकार शासन को ग्राम स्तर से लकर केंद्र स्तर तक जवाबदेह होना आवश्यक होता है ताकि सार्वजनिक धन के माध्यम से जन-कल्याण का उद्देश्य प्राप्त किया जा सके। परंतु वर्तमान समय में सार्वजनिक धन के दुरुपयोग, गबन और लापरवाह उपयोग के चलते यह धारणा बहुत हद तक झूठी पड़ गई है। इस पर रोक लगाने के लिये आवश्यक है कि सार्वजनिक मामलों में संपूर्ण पारदर्शिता बरती जाए। इससे सार्वजनिक धन को सावधानी से प्रयोग करने का दबाव बनेगा।

सूचना के अधिकार के संबंध में कानूनी प्रावधान क्या हैं ? – संविधान के भाग 3 में नागरिको को प्रदत्त मौलिक अधिकारों की घोषणा की गई है। अनुच्छेद 19 (क) में अभिव्यक्ति स्वातंत्रय तथा वाक् स्वातंत्रय का अधिकार नागरिकों को प्रदान किया गया है। इसी प्रकार अनुच्छेद 39 (क) नागरिकों को सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार देता है। उच्चतम न्यायालय ने भी अनेक मामलों में यह स्पष्ट किया है कि सूचना प्राप्ति का अधिकार अपने आप में पारदर्शी एवं सक्षम शासन व्यवस्था को चलाने के लिये आवश्यक और सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार का ही अभिन्न अंग है तथा यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में निहित है।

सूचना का अधिकार प्राप्त होने से क्या होगा ? – सूचना का अधिकार प्राप्त होने से नागरिक न केवल शासन में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकते है बल्कि शासन में पारदर्शिता, खुलापन और जवाबदेहिता लाकर अपने सुशासन की परिकल्पना को भी साकार कर सकते हैं। शासन व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को कम करने, शासकीय योजनाओं को सही समय पर तथा वास्तविक लाभार्थी तक पहुंचाने के लिये शासकीय प्रक्रियाओं के अनावश्यक बोझ से बचने में सूचना का अधिकार एक कारगार अस्त्र है।

मध्यप्रदेश में सूचना का अधिकार – मध्यप्रदेश में 1997 में सूचना के अधिकार के संबंध में कानून का मसौदा तैयार किया गया। विधानसभा में पास होने के बाद यह विधेयक राज्यपाल की सहमति ना मिल पाने से वापस हो गया। इस तरह सूचना का अधिकार का यह पहला विधेयक कानून का रुप नहीं ले सका। परिणामस्वरुप सरकार ने एक शासकीय आदेश के द्वारा प्रदेश सरकार के 38 विभागों में सूचना का अधिकार नागरिकों को प्रदान किया। ये आदेश बहुत ज्यादा स्पष्ट नहीं थे और इनमें कई तकनीकी खामियां थी। 1998 में प्रदेश सरकार के 47 विभागों में एक अन्य आदेश के द्वारा सिटीजन चार्टर लागू किया गया जिसके तहत विभागों को अपने कार्य-कलापों के बारे में नागरिकों को सूचना देने के लिये सारी आवश्यक जानकारी सूचना पट्ट पर प्रदर्शित करना आवश्यक किया गया। पुन: 2002 में प्रदेश सरकार विधानसभा के शीतकालीन सत्र में सूचना के अधिकार के संबंध में एक अधिनियम मध्यप्रदेश जानकारी की स्वतंत्रता अधिनियम 2002 लाई। विधानसभा में पास होने और राज्यपाल को मंजूरी मिलने के बाद यह अधिनियम कानून तो बन गया परंतु इसके नियम नही बन पाने के कारण यह प्रभावी नहीं हो पाया।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

अध्ययन का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य समाज के युवा वर्ग में सूचना के अधिकार के अधिनियम के बारे में जागरुकता को तलाशना था इसलिये महाविद्यालय में अध्ययनरत् युवक युवतियों से इस अधिकार के बारे में विभिन्न तथ्यों पर आधारित प्रश्न पूछे गये।

समाज का युवा वर्ग जानने के अधिकार का कितना प्रयोग कर रहा है। यह जानना भी इस शोध का एक प्रमुख लक्ष्य है।

अध्ययन पद्धति एवं प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र सौउद्देशीय होने के कारण कोटा निदर्शन पद्धति एवं देव निदर्शन की एकान्तर पद्धति के निदर्शन के द्वारा सूचनादाताओं को चयनित किया गया। औपचारिक बातचीत एवं सकेन्द्रित साक्षात्कार के द्वारा तथ्यों का संकलन किया गया।

सूचना के अधिकार के संदर्भ में हमने अनुभाविक तथ्यों के आधार पर स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय नीमच के 50 छात्रों का साक्षात्कार अनुसूची, प्रत्यक्ष अवलोकन एवं अनौपचारिक बातचीत के आधार पर यह शोध पत्र तैयार किया है। इसमें चयनित 50 विद्यार्थियों की संकायवार स्थिति

तालिका क्र. – 1 – विद्यार्थियों का संकाय के आधार पर वर्गीकरण

क्रं.	संकाय	विद्यार्थीयों की संख्या
1	कला संकाय या मनावीकीय	25
2	विज्ञान	12
3	वाणिज्य	10
4	प्रबंधन	3
	योग	50

तालिका क्र. – 2 – विद्यार्थियों की आयु को प्रदर्शित करने वालीतालिका

क्रं.	संकाय	विद्यार्थीयों की संख्या
1	16 से 18	15
2	19 से 21	22
3	21 से अधिक	13
	कुल योग	**50**

अध्ययन हेतु चयनित विद्यार्थियों की आयु का विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि सर्वाधिक विद्यार्थी 19 से 21 आयु समूह के है। इसके पश्चात् 15 सूचनादाता 16 से 18 वर्ष की आयु समूह के है। शेष 13 विद्यार्थी 21 वर्ष से अधिक आयु समूह के है।

इन 50 सूचनादाताओं से जब यह पूछा गया कि आपको सूचना के अधिकार के बारे में जानकारी है तो इनमें से 46 सूचनादाताओं ने कहा कि हाँ हमें सूचना के अधिकार के बारे में मालूम है। 4 सूचनादाता ऐसे पाए गये जिन्हें इसके बारे में जानकारी नहीं है।

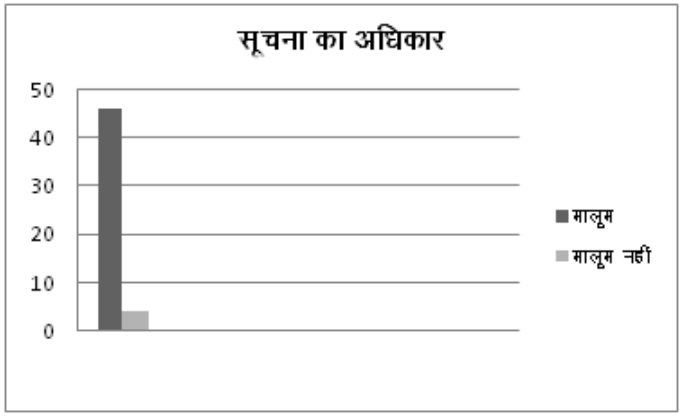

जब उनसे पूछा गया कि यह किस प्रकार उपयोगी है तो 40 सूचनादाताओं ने कहा कि भ्रष्टाचार को दूर करने में 3 सूचनादाताओं ने कहा कि कार्यो में पारदर्शिता लाने हेतु व इसी प्रकार 3 सूचनादाताओं ने कहा कि निर्माण कार्यो में ईमानदारी के साथ राशि का उपयोग करने में उपयोगी होगा।

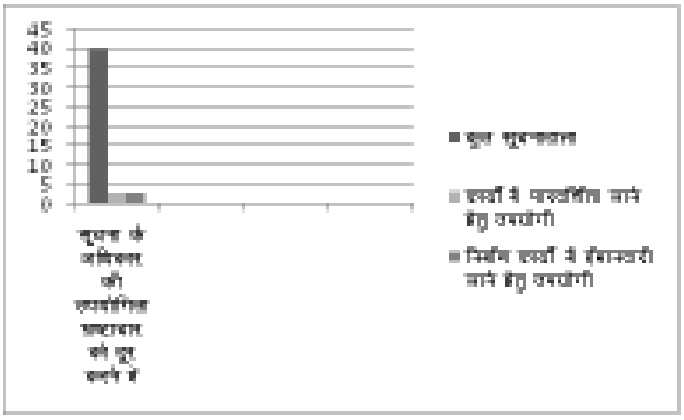

जब इनसे पूछा गया कि क्या कभी आपने इस अधिकार का उपयोग किया है तो इनमें से 48 विद्यार्थियों ने नहीं में उत्तर दिया तथा 2 विद्यार्थियों में ऐसे पाये गये जिन्होनें इस अधिकार का उपयोग करते हुए शासन से सूचना प्राप्त की थी साथ ही इनसे पूछा गया कि प्राप्त सूचना से आप संतुष्ट थे तो उनका उत्तर हाँ में था।

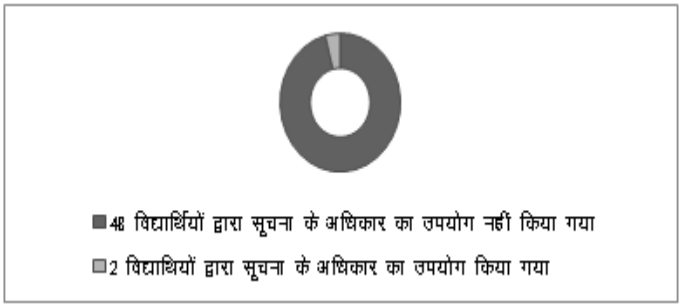

निष्कर्ष– प्रस्तुत शोधपत्र के तथ्य इस बात को प्रतिपादित कर रहे हैं कि समाज के युवा वर्ग में इस अधिकार के सन्दर्भ में पर्याप्त जागरूकता उजागर हो रही है लगभग 92 प्रतिशत युवा इस अधिनियम के बारे में जानकारी रखते है।

इस अधिकार के उद्देश्य एवं सरकार द्वारा इसे लागु करने की मंशा के संदर्भ में युवा वर्ग में संतोषपूर्ण जानकारी एवं ज्ञान प्रदर्शित हो रहा है। लगभग शत प्रतिशत युवा वर्ग को इस अधिकार के उपयोग के सन्दर्भ में जानकारी पायी गयी।

शोध पत्र के द्वारा प्राप्त तथ्यों से यह स्पष्ट होता है कि भविष्य में शिक्षित युवा वर्ग ज्यों-ज्यों बढेगा त्यों-त्यों इस अधिकार के उपयोग में वृद्धि होगी और आशा की जा सकती है कि भविष्य का भारत भ्रष्टाचार को दूर करने पर सफलता प्राप्त कर सकेगा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सूचना का अधिकार 2005 दिशा-निर्देशक नरोन्हा प्रशासन एवं प्रबन्धकीय अकादमी म.प्र. भोपाल 2006।
2. लोक सूचना अधिकारी : शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय नीमच से प्राप्त प्राथमिक समंक।

प्राचीन समाज में भ्रष्टाचार निवारण एवं कानून की व्यवस्था : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. संजय जोशी *

प्रस्तावना – वर्तमान काल में एक बहुत बड़ी मानवीय एवं सामाजिक समस्या के रुप में भ्रष्टाचार अपनी जड़ें जमा चुका है। यह कानूनविदों, समाजशास्त्रीयों, नीति निर्धारकों व प्रशासकों के लिये एक चुनौती बनकर उभरा है। विश्व के अधिकांश देश इस समस्या से ग्रस्त है। कुछ ही ऐसे देश है जो विश्व के सबसे कम या ना के बराबर भ्रष्टाचार वाले है। इनमें फिनलैण्ड, न्यूजीलैण्ड, आइसलैण्ड, स्वीट्जरलैण्ड एवं जर्मनी सम्मिलित है। विश्व के सबसे भ्रष्टाचारी देशों की सूची में यह बताते हुए अत्यंत दुख होता है कि पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, अफगानिस्तान, अर्जेन्टीना, मैक्सिकों के पश्चात् भारत विश्व का सातवां सबसे अधिक भ्रष्ट देश है। जो निश्चित ही हम सभी के लिये लज्जाजनक, शर्मनाक एवं चिंतनीय बात है। हमें विचार करना होगा कि नए–नए कानून एवं विधान बनाए जाने के उपरांत भी हम इस समस्या को नियंत्रित नहीं कर पा रहे है। हमें देखना होगा कि जब भारत अपने प्राचीन समय में विश्व का गुरु एवं समृद्ध व सुशासन वाला देश था तो उसके पीछे उस समय की तात्कालीन सामाजिक व्यवस्था किस प्रकार की थी जिससे हमारा समाज, खुशहाल, सुशासित व विश्व के दूसरे देशों के लिये अनुकरणीय था।

इस सदंर्भ में एक तात्कालिन सामाजिक व्यवस्था का समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में अवलोकन करना जरुरी होगा। प्राचीन समाज में न तो हमारे गांवों, कुलो, जनपदों में पुलिस, सेना व न्यायालय उपलब्ध थे किंतु उसके पश्चात भी हमारा समाज अपराध विहिन होता था। इसके कुछ प्रमुख तत्व जो उभर कर सामने आते है उसमें पंच परमेश्वर की व्यवस्था लगभग प्रत्येक गांव स्तर पर उपलब्ध हुआ करती थी जहाँ व्यक्तियों को तत्काल बिना भ्रष्टाचार के बिना समय की बर्बादी किये हुए या 'बिना विलंब के' सही व निष्पक्ष न्याय मिलता था जो दोनो पक्षों के द्वारा बिना किसी जिरह के तुरंत स्वीकार कर लिया जाता था। प्रत्येक गांव का एक मुखिया, तडवी या पटेल होता था जो पुलिस की भूमिका में ग्रामीण अनुशासन एवं सामाजिक व्यवस्था व सुविधाऐं उपलब्ध कराने का महत्वपूर्ण कार्य करता था। आज भी यदि हम दूरस्थ स्थित आदिवासी गाँव का अवलोकन करें तो वहाँ इस प्राचीन व्यवस्था के तत्व हमें कहीं कहीं नजर आते है। मेरा झाबुआ जिले की भील जनजाजि के एक रिमोट एरिये में बसे आदिवासी गाँव के अध्ययन का सौभाग्य प्राप्त हुआ है जहाँ मुझे इसी प्रकार की एक अनूठी विशेषता देखने को मिली। गाँव के एक आदिवासी ने बताया कि जंगल में जाते हुए भी यदि दो व्यक्तियों में किसी बात को लेकर लड़ाई हो जाती है तो वह वहाँ उपलब्ध सबसे प्रथम पाँच व्यक्तियों को एकत्रित करके अपना पक्ष व दूसरा प्रतिवादी व्यक्ति अपना पक्ष रखता है। इन दोनों के तथ्य को सुनकर वे पाँच व्यक्ति जो उस समय न्यायाधीश की भूमिका में होते हैं उनके न्याय को दोनों स्वीकार कर लेते है। सामान्यत: उनकी लड़ाई पशु जिनमें मुर्गा–मुर्गी, बकरें, बकरी, जमीन या स्त्री को लेकर होती है वे वहीं उसका निपटारा बिना किसी भ्रष्टाचार के किये कर देते है।

इसका एक प्रमुख कारण यह भी था कि तात्कालिन समाज जनसंख्यात्मक दृष्टि से छोटा होता था। प्रत्यक्ष सम्पर्क होता था। प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक को पहचानता था। यहाँ तक कि भैसों का रंग एक समान होने पर भी गाँव का एक छोटा बालक भी यह बता देता था कि यह भैंस किस व्यक्ति की है। गलत व्यवहार या सामाजिक नियमों या मूल्यों के विपरीत किये गये आचरण या व्यवहार का तुरंत गाँव में पता चल जाता था एवं उसके लिये दण्ड की व्यवस्था होती थी।

सरल समाजों में धर्म का अत्यंत महत्व पाया जाता था। परम्परा, जनरीति, प्रथाओ, रीतियों एवं लोकाचार का अत्यंत महत्व व सबके द्वारा उनका पालन होता था। सरल व्यक्ति होने से वह इनको बिना किसी औपचारिक नियंत्रण के साधनों के अभाव में भी स्वाभवत: पालन करता था। इसी के साथ प्रत्येक जाति समाज की अपनी जाति पंचायतें होती थी वहाँ से भी व्यक्ति के जाति के नियमों एवं मूल्यों व अनुशासन के खिलाफ किये गये कार्यो की निंदा होती थी व उसे आर्थिक, शारीरिक या जाति बहिस्कृत कर दण्डित किया जाता था।

आज का मानव बहुत जटिल हो गया है। धर्म में उसका विश्वास लगातार कम होता जा रहा है। इसी तरह प्राचीन समाजों में मनोरंजन के आधुनिक दूषित, दुस्कृत साधनों जैसे आपराधिक, मारधाड़, सैक्स अपराध इत्यादि पर बनी हुई फिल्मों, धारावाहिकों, नेट, कम्प्यूटर, स्मार्ट फोन, चेटिंग का अभाव था। इनके स्थान पर भागवत कथा, सुंदरकाण्ड, सत्यनारायण की कथा, विभिन्न 16 संस्कार तथा यज्ञों का प्रावधान था। स्वस्थ मनोरंजन हेतु रामलीला व रासलीला का आयोजन होता था जो सभी संस्कार प्रदान करने वाले होते थे। जीवन में सामाजिक मूल्यों की स्थापना करने वाले होते थे। इसी कारण तात्कालीन सामाजिक व्यवस्था अपराधविहीन व भ्रष्टाचार मुक्त थी। व्यक्ति सदाचारी था व सदाचार का आचरण करता था। आजकल की तरह भीड़–भाड़ वाले आधुनिक नगरों का अभाव था जहाँ अनजाने पन का लाभ लेकर तथा पुलिस व न्यायालय में भ्रष्टाचार करके वह अपराध करने के बावजूद भी दण्ड से बच जाता है। आवश्यकता है आज इस बात कि उन पुरानी सामाजिक व्यवस्था के अच्छे तत्वों को, मूल्यो को व संस्कारों को पुनः वर्तमान समय में स्थापित करके एक अच्छे शालीन सदाचारी, अनुशासित, अपराधमुक्त व भ्रष्टाचार मुक्त समाज की स्थापना की जाए। व्यक्ति के स्वभाव को परिवर्तित करने में योग, ध्यान, प्राणायाम व प्रार्थना पूजा का भी अपना अद्धितीय स्थान है। इनको भी धर्म के वैज्ञानिक स्वभाव के साथ समाज में लागू कर एक उन्नत व समृद्ध व बेहतरीन देशों की विश्व सूची में अपने देश को सम्मिलित कराने में हम सबकी जिम्मेदारी अत्यंत महत्व की है तभी हम एक स्वस्थ समाज की स्थापना करने में कामयाब हो सकेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Mukerjee,R.N. 2006,Social Idiology from comptee to Mukerjee,New Delhi: Vivek Prakash PP-168-172.
2. Agrawal,G.K. 1986,Rural Sociology,Agra:Agra book Store PP,503-505.
3. Mukerjee,R.N. 2006,Indian Society & Culture,Dekhi : Vivek Prakashan,PP 501-512.
4. Mittal,A.k. 2006, History for B.A. I[st] year,Agra : Sahitya Bhavan Punlication PP 33-44.
5. Mahajan & Mahajan,2006, Criminology,Delhi:Vivek Prakashan,PP 249-252.

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

मुगलकालीन सरकारी पत्र और मोहरें

प्रो. आकाश ताहिर *

प्रस्तावना – मुगल सम्राटों के पास एक अत्यन्त विस्तृत सचिवालय अथवा पत्रों का विभाग(दारूल-इंशा) था और इस विभाग के कागज-पत्र, जो इस समय उपलब्ध हैं, मुगल इतिहास के आधुनिक छात्रों के लिए इतने उपयोगी हैं कि उसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता हैं। सम्राट के दरबार अथवा शिविर से, सामन्त राजकुमारों अथवा प्रान्तीय वायसरायों के पास, उसके दरबार में उनके रोके हुए एजेण्टों द्वारा भेजे गये अखबार अथवा किसी घटना के सम्बन्ध में संक्षिप्त मुद्रित विवरण पत्र तथा औरंगजेब और उसके उत्तराधिकारियों के शासनकाल के सुरक्षित बहुत से पत्र इतिहासवेत्ताओं के लिए निसन्देह बड़े महत्व के हैं। किन्तु औरंगजेब से सम्बन्धित ऐतिहासिक सूचनाओं का मुख्य भण्डार समकालीन पत्रों में निहित है जो उपर्युक्त अखबारों के साथ-साथ उसके शासनकाल के इतिहास के लिए अत्यन्त कच्ची सामग्री अथवा अत्यन्त प्रामाणिक स्रोत है।

पत्रों के भेद और उनके नाम – मुगल साम्राज्य के सरकारी पत्र कई प्रकार के थे और उनमें से प्रत्येक का अपना अलग-अलग नाम था। उनके नाम निम्नलिखित हैं-

1. **फरमान, शुक्का, अहकाम और औरंगजेब के पत्रों के बाद के एक संग्रह में, रम्ज-व-इशारा-** इन नामों का तात्पर्य किसी भी ऐसे पत्र से था जो सम्राट द्वारा स्वयं अथवा व्यक्तिगत रूप से किसी दूसरे व्यक्ति के पास लिखा गया था चाहे वह उसके वंश का राजकुमार, प्रजा अथवा विदेशी शासक हो।
2. **निशान-** किसी शाहजादे द्वारा, सम्राट को छोड़कर, किसी को भी लिखा गया पत्र।
3. **अर्जदाश्त-** सम्राट अथवा किसी शाहजादे को प्रजा द्वारा तथा सम्राट को किसी शाहजादे द्वारा लिखा गया पत्र। विजय-पत्र को पारिभाषिक रूप से 'फतहनामा' कहते थे।
4. **हश-उल-हुक्म-** सम्राट के संकेत पर उसके आदेशों के सूचनार्थ किसी मन्त्री द्वारा व्यक्तिगत रूप से लिखा गया पत्र।
5. **अहकाम तथा रम्ज-** इन शब्दों को आशय की बातों तथा काल्पनिक और धार्मिक पुस्तकों से सम्बन्धित उदाहरणों तक ही सीमित रखना चाहिए जिन्हें सम्राट अपने सचिव को, सरकारी पत्रों की सामग्री के निमित्त, बोल दिया करता था और जिन्हें बाद में रूढ़िगत विधियों के अनुसार पूर्ण रूप से लिख लिया जाता था। औरंगजेब के अन्तिम वर्षो के ये लेख तो सुरक्षित हैं किन्तु पूर्ण पत्र सुरक्षित नहीं है।
6. **सनद-** किन्तु वायसरायों को नियुक्त करने में फरमान शब्द का प्रयोग किया जाता था।
7. **परवाना-** किसी अधीनस्थ अधिकारी के लिए एक शासकीय आज्ञा अथवा निर्णय, साधारणतया कचहरी के किसी मुकदमे का परिणाम।
8. **दस्तक-** विशेष रूप से सामान को लाने और ले जाने अथवा शिविर या दरबार में किसी व्यक्ति के प्रवेश के लिए एक छोटा सा सरकारी आज्ञापत्र अथवा अनुमति पत्र।
9. **रूक्का-** एक व्यक्तिगत पत्र, अथवा दो मित्रों के बीच का पत्र।[1]

फरमानों को लिखने तथा उन पर हस्ताक्षर करने की सरकारी विधि- शाहजहां के सरकारी इतिहास-लेखक अब्दुल हमीद लाहौरी ने उसकी शैली का इस प्रकार वर्णन किया है:

'दीवाने-खास में सम्राट स्वयं अपने हाथों से कुछ महत्वपूर्ण पत्रों का उत्तर लिखा करता था। अमीरों के दरबारी एजेण्टों (वकीलों), वजीरों अथवा सूबेदारों के पत्रों को पढ़ने के लिए नियुक्त अधिकारियों (अरीजाख्वां) द्वारा सम्राट को दिये गये दूसरे पत्रों के उत्तर में वह मौखिक रूप से अपनी इच्छा प्रकट कर देता था और उसी के अनुसार सचिव लोग फरमान लिखते थे। इसके पश्चात् उनके लेखों को उसके समक्ष प्रस्तुत किया जाता था।

वह शाहजादा, जिसे रिसाल का अधिकार दिया गया था। फरमान के पीछे अपना रसालतून लिखा करता था और इस पर अपनी मोहर से सील लगाया करता था। रिसाल के नीचे दीवान अपना मारफत अथवा तथ्य के सम्बन्ध में अपना नोट लिखता था कि फरमान उसी के हाथों से भिजवाया गया था। इसके पश्चात् फरमान को 'औजक' मोहर से सीलबन्द करने के लिए अन्त:पुर में भेज दिया जाता था। सम्राज्ञी इस मोहर की रक्षा करती थी।[2]

स्वर्ण-रेणु छिड़के हुए कागज पर बड़े-बड़े और सुन्दर अक्षरों में लिखी हुई फरमान की शुध्द प्रति पर मोहर लगायी जाती थी। तदुपरान्त उसे लपेट कर सोने के बेलबुटे कढ़े हुए कपड़े के एक लम्बे तथा पतले थैले में रखा जाता था। इस थैले का मुंह रंगीन डोरियों से बांधा जाता था। और इस पर वजीर की मोहर से चपड़ा लगाकर सील लगा दी जाती थी। ऐसे थैलों को 'खरीता' कहते थे। इनमें से बहुत-से अब भी जयपुर के प्रासाद में सुरक्षित है।[3]

मोहरें – केवल सम्राट का नाम धारण करने वाली एक छोटी सी गोल मोहर को औजक कहते थे और यह 'फरमाने सिब्ती' के लिए प्रयोग में लायी जाती थी।[4] इसके अलावा एक बड़ी गोल मोहर और थी। इसके केन्द्र में एक वृत्त में सम्राट का नाम होता था तथा केन्द्र के चारों ओर घेरों में तैमूर तक के उसके पूर्वजों का नाम अंकित होता था। प्रारम्भ में इसका प्रयोग केवल विदेशी राजाओं के यहां भेजे जाने वाले पत्रों के लिए किया जाता था किन्तु बाद में यह सभी प्रकार के फरमानों पर लगायी जाने लगी थी।[5] अत्यावश्यक अथवा गोपनीय आदेशों पर केवल शाही मोहर लगायी जाती थी। ऐसे आदेशों को फरमाने-बयाजी कहते थे। दूसरे सभी फरमानों, परवानों तथा बरातों पर वजीर के नीचे के अधिकारियों का एक दल मोहर लगाता था।[6]

अठारहवीं शताब्दी के पतनोन्मुख काल के बहुत से पत्र संग्रहों के अन्त में विशेष अवसरों के लिए उपयुक्त 'आदेश पत्र' एवं 'रिक्त प्रपत्र' दिये हुए हैं-

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र) भारत

यथा, सम्राट अथवा नवाब के राज्यारोहण, जन्मदिवस, विजय, पुत्र जन्मदिवस अथवा ईद के अवसर पर बधाई देने वाले पत्र अथवा किसी व्यक्ति के पास उसकी किसी पद पर नियुक्ति अथवा पदोन्नति, किसी प्रिय की मृत्यु पर शोक पत्र आदि। (इनमें बीच-बीच में परिचित पद्यों के उदाहरण दिये रहते थे। इनका प्रयोग करते समय केवल रिक्त स्थानों में दूल्हा अथवा मृत्त व्यक्ति का नाम और सम्बन्ध अंकित कर देना होता था।) विभिन्न पदों से सम्बन्धित नियुक्ति पत्रों के रिक्त प्रपत्र भी इनमें दिये हुए हैं। इनमें इन पदों से सम्बन्धित कर्तव्यों का भी उल्लेख रहता है। निगार नाम-ए-मुंशी और इंशा-ए-हरकरन इस प्रकार के पत्रों के उदाहरण हैं। इनके अन्त में प्राय: उपाधियों तथा विभिन्न पदों और कार्यालयों के सम्बोधन के उचित प्रकारों की सूची दी हुई होती हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. आईने अकबरी, पृ. 148
2. आलमगीरनामा, पृ. 1101
3. आईने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 263, पर्चे, जिल्द 9, पृ. 50
4. आईने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 260
5. आईने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 52,
6. आईने अकबरी, जिल्द 1, पृ. 263-264.

****

सार्वजनिक ऊष्णता एवं जलवायु परिवर्तन

सुनीता मेश्राम *

प्रस्तावना – विभिन्न गैसों की लगातार बढ़ रही सांद्रता के कारण पृथ्वी के वायुमण्डल का तापमान बढ़ने से संपूर्ण विश्व में जो प्रभाव उत्पन्न हुआ है। वही सार्वत्रिक ऊष्णता (Global Warming) है। वायुमण्डलीय हरित गृह गैस पृथ्वी के ऊपर एक कंबल की तरह काम करता है। पृथ्वी का औसत वार्षिक तापमान 15 ^{0}cg है। यदि हरित ग्रह गैस न हो तो पृथ्वी का तापमान गिरकर लगभग –20 ^{0}cg हो जायेगा। पृथ्वी को गर्म रखने की वायुमण्डल की यह क्षमता हरित गृह गैसो की उपस्थिति पर निर्भर करती है।

सार्वजनिक उष्णता के लिए मानवीय गतिविधियॉ भी जिम्मेदार है जिनके कारण हमारी पृथ्वी का स्वरुप बदलता जा रहा है। तीव्र औद्योगिक विकास, नगरीकरण, जीवाष्म ईधन के द्वारा ऊर्जा उत्पादन,कोयले पर आधारित विद्युत तापग्रह, तकनीकी तथा परिवहन क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन कोयला खनन, मानव जीवन के रहन–सहन में परिवर्तन एयरकंडीष्नर, रेफ्रिजेरेटर, फरफ्यूम आदि का अधिक मात्रा में उपयोग आधुनिक कृषि में रसायनिक खादों का अंधाधुंध प्रयोग, धान की खेती के क्षेत्रफल में वृद्धि, शाकभक्षी पशुओं की जनसंख्या में वृद्धि, भूमि उपयोग का बदलता स्वरुप तथा जंगलों के कृषि योग्य भूमि में बदलने के कारण विश्वव्यापी कार्बन चक्र प्रभावित हो रहा हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न मानवीय गतिविधियों के कारण अत्याधिक मात्रा में मीथेन, क्लोफ्लोरो कार्बन, नाइट्रस आक्साइड, हाइड्रोफ्लोरो कार्बन आदि वायुमण्डल में जमा हो रही हैं। वायुमण्डल ग्रीन हाउस गैसों में वृद्धि के कारण वैश्विक जलवायु परिवर्तन हो रहा है।

वैश्विक तापमान का प्रभाव – बढ़ता तापमान प्रकति के अस्तित्व पर खतरा बनकर खड़ा है। तापमान में हर 10बह की बढ़ोतरी पर्यावरण केा नुकसान पहुंचायेगी।

1. 1 ^{0}cg तापमान बढ़ने से मलेरिया, कुपोषण और वातावरण जनित अन्य परेशानियों के कारण हर साल 3% लोग मरेंगें। ऊंचाई पर रहने वाले लोगों के ठण्ड से मरने वाले की संख्या में बढ़ोतरी 5 करोड़ लोगों का जीवन तुरंत प्रभाव में आ जायेगा। 80 प्रतिशत मूंगे की चट्टाने नष्ट हो जायेगी।
2. 2 ^{0}cgबह तापमान बढ़ने पर –फसलों की पैदावार 5 से 10 प्रतिशत तक गिर जायेगी। मलेरिया प्रभावितो की संख्या 10 लाख तक पहुॅच जायेगी। जीव जंतु और वनस्पति की 15 से 40 प्रतिशत तक प्रजातियों का अस्तित्व खतरे में आ जायेगा।
3. 3 ^{0}cg तापमान बढ़ने पर भयानक सूखे की मार पड़ सकती है। दुनिया में 4 अरब से ज्यादा लोग पानी की किल्लत झेल रहे होंगे। खाद्यान्न उत्पादन में कमी। कुपोषण से मरने वालो की संख्या 30 लाख तक बढ़ सकती है।
4. 4 ^{0}cg तापमान पर–बड़े ग्लेशियर नष्ट हो सकते है। दुनिया की बड़ी आबादी नष्ट हो सकती है। समुद्र तल बढ़ने से उंचाई पर बसे दीप नष्ट हो सकते है।

ग्लोबल वार्मिंग में विभिन्न देशों का योगदान

	देष	प्रतिशत योगदान
1.	स.रा.अमेरिका	30.3
2.	यूरोप	27.7
3.	सोवियम रुस	13.7
4.	भारत,चीन और विकासशील एशिया	12.2
5.	दक्षिणी और मध्य अमेरिका	3.8
6.	जापान	2.6
7.	पश्चिम एशिया	2.5
8.	अफ्रीका	2.1
9.	आस्ट्रेलिया	1.1
10.	कनाडा	2.3

सार्वत्रिक उष्णता का प्रभाव – हाल के दशको में हरित ग्रह प्रभाव के चलते अनेक क्षेत्रों में औसत तापमान में बढ़ोतरी वर्ष 2020 ई. तक पूरी दुनिया का तापमान पिछले 1000 वर्षो की तुलना में सर्वाधिक होगा। आईपीसीसी ने वर्ष 1995 ई. में भविष्यवाणी की थी। कि 21वी सदी में औसत तापमान में 3.5 से 10 ^{0}cg तक वृद्धि होगी। वैश्विक स्तर पर वर्ष 1998 ई. सबसे गर्म वर्ष था और 1990 का दशक सबसे गर्म दशक था।

20वी सदी में औसत तापमान लगभग 0.6 ^{0}cg बढ़ गया है एवं 21वी सदी के अंत तक पृथ्वी का तापमान लगभग 6 ^{0}cg तक बढ़ जायेगा। जिसके कारण औद्योगिक नगरों में अम्लीय वर्षा भी हो सकती है। जिससे जल, भूमि वनस्पति और भवनों का स्वरुप प्रभावित हो सकता है। मथुरा तेलशोधक कारखाने के कारण ही विश्व प्रसिद्ध ताजमहल का रंग पीला पड़ता जा रहा है। आने वाले कुछेक वर्षो में विश्व का तापमान 1/2 ^{0}cg बढेग़ा। परिणाम स्वरुप गर्म हवाऍ चलेगी और समुद्री तूफानों का रुप विकराल हो जायेगा एवं मानसून भी प्रभावित होगा।

ग्लोबल वार्मिंग ग्लोबल वार्निंग है।

वनस्पति पर प्रभाव – वायुमण्डल में कार्बन डाईआक्साइड की मात्रा में वृद्धि के परिणाम स्वरुप ग्लोबल वार्मिंग का प्रभाव पेड़–पौधो के विकास पर पड़ेगा विशेषकर कार्बन तीन (C_3) प्रजाति के पौधो पर कार्बन डाइआक्साइड के बढ़ने से प्रकाष–संश्लेषण की दर बढ़ने से बहुत कम समय में पौधो की संख्या और उसके आकार में 25% तक वृद्धि संभव हो सकती है। कार्बन डाइआक्साइड के बढ़ने से ग्लोबल वार्मिंग के कारण इस पर अंतत: हानिकारक प्रभाव ही पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव जैव विविधता पर भी पड़ेगा। जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक प्रभाव समुद्रतटीय क्षेत्रों में पायी जाने वाली दलदली क्षेत्र की वनस्पतियों पर पड़ेगा।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

समुद्र के स्तर में परिवर्तन – 20 वीं शताब्दी में प्रतिवर्ष 2 मि.मी. की दर से समुद्र के जली स्तर में वृद्धि हुई और अनुमान है कि 21वी शताब्दी के अंत तक समुद्र का जल स्तर लगभग 88 मीटर से 3 मीटर तक बढ़ जायेगा। अण्टार्कटिका, ग्रीनलैण्ड के हिमचादरो के पिघलने के कारण समुद्र का जल स्तर काफी बढ़ जायेगा। जो मनुष्य के साथ–साथ समस्त जीव–जगत को प्रभावित करेगा। बहुत से नगर और तटीय क्षेत्र बाढ़ के खतरे के अंदर आ जायेंगें, बहुत से छोटे–छोटे द्वीप डूब जायेंगे। बांग्लादेश का गंगा ब्रम्हपुत्र डेल्टा, मिश्र का नील नदी डेल्ट तथा मार्शल द्वीप और मालद्वीप सहित अनेक छोटे द्वीपों का अस्तित्व 2100 तक समाप्त हो जायेगा। प्रशांत महासागर का सोलोमन द्वीप जलस्तर में वृद्धि के कारण डूबने के कगार पर है।

जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरुप भारत के उड़ीसा, आंध्रप्रदेष, तमिलनाडू, केरल, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गोवा, गुजरात तथा पष्चिम बंगाल के तटीय क्षेत्र जलमग्नता के शिकार होंगे। जिसके कारण आस–पास के गांवो व शहरों में 10 करोड़ से भी अधिक लोग विस्थापित होंगे। समुद्र में जलस्तर में वृद्धि के परिणामस्वरुप भारत के लक्षद्वीप तथा अण्डमान निकोबार द्वीपों का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। समुद्र का जलस्तर बढ़ने से मीठे जल के स्त्रोत दूषित होंगे। परिणाम स्वरुप पीने के पानी की समस्या होगी।

वैश्विक जलवायु परिवर्तन का प्रभाव समुद्र में पाये जाने वाली जैव विविधता प्रवाल भित्तियों पर पड़ेगा। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी की लगभग 10% प्रवाल भित्तियों की मृत्यु हो चुकी है, 30% गंभीर रुप से प्रभावित हुई है। तथा 30% का क्षरण हुआ। समुद्र के जलस्तर में वृद्धि का मानव अधिवास, पर्यटन, शुद्ध जलापूर्ति समुद्री संसाधन, कृषिभूमि, वनभूमि तथा आधारभूत संरचना पर नकारत्मक प्रभाव पड़ेगा।

विभिन्न प्रजातियों के वितरण पर प्रभाव – बहुत से पेड़–पौधो तथा जीव–जंतु एक तापमान विशेष पर ही पाये जाते है। सार्वजनिक उष्णता के कारण इन जीव–जंतुओं की लगभग 40 % प्रजातियॉ नष्ट हो सकती है या अपने मूल स्थान से स्थानांतरित हो सकती है। 21वी सदी में 2.5 ^{0}cg तापमान में वृद्धि से उष्णकटिबंधीय प्रदेशों में पाये जाने वाली वनस्पति 250 से 500 कि.मी. तक ध्रुवीय प्रदेशों की तरफ खिसक सकती है। भारत जैसे उष्णकटिबंधीय देश में जलवायु परिवर्तन के फलस्वरुप पुष्पीय पौधो के पोयेसी, साइप्रेसी, फैक्वेसी, यूफोर्वियोसी, अमरेथसी तथा एस्केलपिडेसी कुलों से संबद्ध खर–पतवारों की संख्या में वृद्धि होगी जिससे फसलों की उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा।

खाद्यान उत्पादन पर प्रभाव – तापमान में वृद्धि के फलस्वरुप उत्पन्न ग्लोबल वार्मिंग के कारण पौधों में विभिन्न प्रकार की बीमारियों का प्रकोप बढ़ेगा। तापमान में थोड़ी वृद्धि से समषीतोष्ण प्रदेषों में अल्पवृद्धि होगी परंतु तीव्र वृद्धि से उष्ण तथा उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में फसलों की उत्पादकता में हानिकारक प्रभाव पड़ेगा। दक्षिण पूर्वी एशिया में प्रति 1 ^{0}cg तापमान में वृद्धि से उत्पादकता में 5% की कमी हो सकती है।

भारत में जलवायु परिवर्तन के परिणाम स्वरुप गन्ना, मक्का, ज्वार, बाजरा तथा रागी जैसे फसलों के उत्पादन में वृद्धि होगी जबकि गेंहूँ, जौ, धान की उपज में कमी आयेगी।

एक अनुमान के अनुसार वैश्विक तापवृद्धि से भारत में वर्ष सिंचित क्षेत्रों में 12.5 करोड़ टन खाद्याान उत्पादन में कमी आयेगी। शीत ऋतु में 0.50 ^{0}cg तापमान वृद्धि से पंजाब में 20% तक की कमी आ सकती है।

स्वास्थ्य पर प्रभाव – वैश्विक जलवायु परिवर्तन का प्रभाव स्वास्थ्य पर पड़ेगा। जलवायु में उष्णता से श्वांस तथा हृदय संबंधी बीमारियों में वृद्धि होगी। दुनिया के विकासशील देशों में दस्त पेचिस, हैजा, क्षयरोग, पीत ज्वार तथा मियादी बुखार जैसी संक्रामक बीमारियॉ बढ़ेगी।

सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों पर प्रभाव – जलवायु परिवर्तन का सर्वाधिक दुष्प्रभाव सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों पर पड़ेगा। आर्थिक क्षेत्र का भौतिक मूल ढॉचा जलवायु परिवर्तन द्वारा प्रभावित होगा। बाढ़, सूखा, भूस्खलन तथा समुद्री जलस्तर में वृद्धि के परिणाम स्वरुप मानव प्रवजन होगा।

ओजोन परत का क्षतिग्रस्त होना – नवीन प्रौद्योगिकी के फलस्वरुप मानवीय क्रियाकलापों के कारण ओजोन मण्डल में लगातार रिक्तीकरण हो रहा है। 1956 से 1970 के बीच अंटार्कटिक के ऊपर ओजोन परत की मोटाई 300 डोबसन ईकाई रही यह मोटाई 1979 में कम होकर 225 डोबसन ईकाई हो गयी। 1985 में यह 136, 1994 में 94 तथा 2005 में 83 डोबसन ईकाई पर का गई है। ओजोन परत में 5 की क्षति 10 अल्ट्रावॉयलेट रेडिएषन में वृद्धि करती है। जिससे जीवों में कैंसर, मोतियाबिन्द, पाचनतंत्र और तंत्रिका तंत्र से संबंधित रोग हो सकते है। तथा प्रकाष संषलेषण की क्रिया भी प्रभावित हो सकती हैं। ओजोन परत में छेद पहली बार अन्टार्कटिका के ऊपर 1985 में देखा गया है। इसका क्षेत्रफल लगभग 1 करोड़ 60 लाख वर्ग कि.मी. के बराबर होगा। 2001 तक ओजोन की मोटाई में 3 वार्षिक की दर कमी दर्ज की गई है।

सार्वजिक उष्णता कम करने के उपाय – आर्थिक विकास की दौड़ में हमारा पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़ चुका है। विश्व में आज खाद्यान संकट, ऊर्जा की कमी, आर्थिक भेदी आदि समस्याए खड़ी है। इन सबका संबंध जलवायु परिवर्तन से है। प्राकृतिक संसाधनों के दोहन से कई प्रकृति जन्य संकट सामने खड़े है। पृथ्वी का तापमान बढ़ने से ग्लेशियर पिघल रहे है। समुद्री जल स्तर बढ़ने से कई द्वीप विलुप्त हो चुके है। एवं गंगा नदी प्रदूषित हो गयी है। ओजोन परत में छेद हो जाने के कारण इसकी सूर्य की पराबैंगनी किरणों को रोकने की क्षमता घट रही है। प्रकृति के निर्भम संहार के चलते उत्पन्न जलवायु परिवर्तन आज विश्व के समक्ष ज्वलंत और सुखट चुनौती बन गई है। जलवायु परिवर्तन पर चिंतन करने और इससे निपटने के लिए अन्तराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर कई प्रयास किए जा रहे है। ग्रीन हाऊस गैसों की मात्रा को कम करने की 1987 ई. में औधोगिक देशों ने माण्ट्रियल शहर में एक अन्तराट्रीय समझौता हुआ जिसमे गैसे ओजोन परत में हुए छेद के लिए जिम्मेदार गैसो की उत्पत्ति करे कम किया जाये और विकासशील देशों को क्लोरोफ्लोरो कार्बन के विकल्प के इस्तेमाल पर सहायता ली जाये।

सार्वजिक उष्णता संकेत प्रभाव एवं कर करने के उपाय – सन् 1977 में जापान के क्योटो में जलवायु परिवर्तन पर संबंधित देश ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को 5 प्रतिशत कम करते हुए 2008 – 2012 तक की समय सीमा में वर्ष 1990 के स्तर पर लायेगें।

1. जीवाश्म ईंधन का न्यूनतम उपभोग करना ताकि ग्रीन गैसों का उत्सर्जन कम हो।
2. धरती पर वन भूमि का विस्तार करना जिससे अधिक से अधिक मात्रा मे कार्बन डायआक्साइड का उत्सर्जन कम हो। इसके स्थान पर जैविक खाद के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करना।
3. क्लोरोफ्लोरोकार्बन के विकल्प का विकास हो।

4. मोटर वाहन उद्योग में पेट्रोल एवं डीजल के स्थान पर वैकल्पिक ईंधन का प्रयोग करना जैसे बायोडीजल, सौर ऊर्जा, सी एन जी, विद्युत और बैटरी चालित वाहनों का विकास करना। वाहनों मे बोरियम मिश्रित ईधन का प्रयोग भी किया जा सकता है ताकि धुंए की मात्रा कम हो।
5. नगरों मे उद्योगों के एक ही स्थान पर केन्द्रीकरण की प्रवृति कम करने का प्रयास हो।
6. सभी प्रकार के उद्योगों में धुआं संवर्धन संयंत्र की स्थापना करना एवं ग्रीन टेक्नालाजी के विकास पर जोर देना।
7. ऊर्जा के परंपरागत स्रोतों पर निर्भरता कम करना और इसके विकल्प पर अधिक ध्यान देना जैसे सौर उर्जा , पवन उर्जा, ज्वार शक्ति जैसे भू तापीय शक्ति, जल शक्ति आदि का विकास करना।

निष्कर्ष– जलवायु परिवर्तन के कारणों और प्रभावों का विश्लेषण करके इसके खतरे की गंभीरता का अनुमान लगाया जा सकता है। पर्यावरण से संबद्ध होने के कारण जलवायु परिवर्तन किसी एक देश का संकट न होकर पूरे विश्व का संकट है। और इस संकट का मुकाबला पूरे विश्व को मिलकर करना होगा। वैश्विक जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को देखते हुए समय की सबसे बड़ी आवश्यकता यह कि हरित ग्रह प्रभाव के उत्तरदायी गैसों के उत्सर्जन पर रोक लगाई जाये जिससे वैश्विक ताप वृद्धि का प्रभावी नियंत्रण हो सके और विश्व की जलवायु परिवर्तन के संभावित खतरों से बचाया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सिंहसविन्द (1991)–पर्यावरण भूगोल – प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद ।
2. कुमार संजीव (2012) – पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण लूसेन्ट पब्लिकेशन डी.एन.दास लाने बंगाली अखरा लेंगेरटोली पटना ।
3. गुप्ता आ.के एवं जाट बी.सी. (2001) – पर्यावरण भूगोल पंचशील प्रकाशन जयपुर ।
4. श्रीवास्तव के.वी. (1990) – पर्यावरण पारिस्थितिकी, वसुंधरा प्रकाशन गोरखपुर ।

सार्वजिक उष्णता संकेत प्रभाव एवं कर करने के उपाय –

	संकेत	कम करने के उपाय	प्रभाव
1.	फैलती बीमारियां ।	1. कार्बनडायऑक्साइड का स्तर कम किया जाये ।	1. तापमान में बढ़ोत्तरी
2.	ऋतुओं का समय पूर्व आगमन ।	2. विभिन्न माध्यमों से कूड़ा करकट कम करें ।	2. समुद्री जल स्तर में वृद्धि
3.	वनस्पति और जीवों के क्रियाकलापों में परिवर्तन ।	3. विद्युत उपकरणों के अनावश्यक प्रयोग से बचे ।	3. पहाड़ी से पिघलते ग्लेशियर
4.	पानी के ताप में वृद्धि से मूंगा भित्ती संकट में ।	4. वनो का संरक्षण करें।	4. जल संकट
5.	भारी बारिश, बाढ़ बर्फबारी सूख आदि ।	5. आम बल्बों के स्थान पर सी.एफ.एल का प्रयोग	
		6. वृक्षारोपण कार्यक्रम चलाया जाये ।	
		7. ऑक्सीजन के लिये वनों का बचाव आवश्यक ।	

****

भारत में आर्थिक विकास - कृषि व पशुपालन (कृषि में सब्जी उत्पादन एवं पशुपालन)

डॉ. सुभानसिंह बघेल *

प्रस्तावना – भारत की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में सब्जी उत्पादन एवं पशुपालन आर्थिक विकास का अत्यन्त महत्वपूर्णघटक है। भूमि की उपयोग का वर्गीकरण, भूमि क्षमता एवं भूमि उपयोग, कृषि नवाचार, हरितक्रांति, खाद्यान्न एवं अखाद्यान्न फसलों, कृषि आधारित औद्योगिकरण एवं पशुपालन के लघु व मध्यम, वृहद उद्योग आदि का भौगोलिक विस्तार तथा सम्पूर्ण भारत में आर्थिक विकास एवं पशुपालन मुख्य अवस्था हैं। हमारे देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गांव में निवास करती है और इसमें भी आधे से अधिक कृषि व पशुपालन में संलग्न है। भारत में आर्थिक विकास में कृषि एवं पशुपालन मुख्य व्यवस्था है किन्तु देश की सकल घरेलू उत्पादन में इसकी भागीदारी 20 प्रतिशत से भी कम है। कृषि क्षेत्र के लिये नई सदी की चुनौतियां पिछले दशकों से भिन्न हैं। ऐसे समय में जब औद्योगिकरण तथा शहरीकरण (नगरीय क्षेत्र) से उपलब्ध कृषि योग्य भूमि में कमी आ रही है वही बढ़ती आबादी (जनसंख्या) को खाद्यान्न उपलब्ध एंव पशुपालन से दुग्ध, पनीर आदि के लिए अधिक उत्पादन करने का दबाव कृषि क्षेत्र में है। कृषि क्षेत्र में वृद्धि को गति देने के लिए भूमि गुणवत्ता, सिंचाई स्त्रोत बीज, खाद, कीट नियंत्रण एवं आपूर्ति श्रृंखला में वैज्ञानिक एवं आर्थिक मूल्यांकन की आवश्यकता महत्वपूर्ण है। कृषि विश्व में अनेकानेक देशों के रीढ़ की हड्डी है। कृषि के बिना विकास संभव नहीं है परन्तु वर्तमान में संसार के कई देश विभिन्न कृषि समस्यों से ग्रस्त है लैटिन अमेरिका, अफ्रीका, दक्षिण-पूर्वी एशिया जहाँ पर अभाव, गरीब, भूखमरी और बीमारी की समस्या भंयकर हो गई हैं।

आर्थिक विकास - कृषि विकास सब्जी, फल, दुध उत्पादन –भारत आर्थिक विकास में कृषि विकास एवं सब्जियों आदि के भौगोलिक कारक प्राकृतिक कारक, जलवायु, मिट्टियों, वनस्पतियों, अपवाहतल (नदियों) तथा मानव व आर्थिक कारक, प्राथमिक, द्वितीय, तृतीय व चतुर्थ आदि कारक मानव कृषि भूगोल, औद्योगिक भूगोल व्यापारिक (वाणिज्य) भूगोल, परिवहन भूगोल और राजनीति भूगोल आवासीय भूगोल, प्राकृतिक भूगोल, जलवायु एवं मौसम भू-आकृति विज्ञान से साधन भूगोल, वनस्पति भूगोल, जीवजन्तु आदि भौगोलिक कारक प्रभावित करते है। भारत की कृषि विकास - कृषि, सब्जी, फल व दुध आधारित अर्थव्यवस्था के उत्पादन महत्वपूर्ण भौगोलिक कारक प्राकृति व आर्थिक कारक करती है।

भारत में कृषि नियोजन प्रदेश – कृषि विकास हेतु कृषि नियोजन आवश्यक कृषि की विशेषताओं यथा वर्तमान उत्पादकता की दशायें, उत्पादकता के कारक तथा कृषि उत्पादकता की संभाव्यता जिसके अन्तर्गत विभिन्न कृषि पारिस्थतिकी तथा जैविक भौतिक दशायें आदि अनुकूलतम कृषि पद्धति को प्रभावित करती है कृषि नियोजन हेतु आवश्यक होता है। भारत में कृषि जलवायु के संबंधों के अध्ययन को प्रसिद्ध वैज्ञानिक कोपेन तथा थानवेट के जलवायु विभाजन का महत्वपूर्ण योगदान है जिसमें सामान्य वाष्पन, वाष्पोत्सर्जन, औसत वर्षा, आर्द्रता घातांक, तापीय दक्षता आदि का उपयोग किया गया था। 1976 में राष्ट्रीय कृषि आयोग ने वर्षा की त्रैमासिक मात्रा के आधार पर प्रमुख शस्यों (फसल) का निर्धारण किया गया जिसमें (1) 30से.मी. से अधिक प्रति माह तीन माह तक वर्षा के क्षेत्र को धान प्रधान (2) 20 से 30से.मी. वर्षा में क्षेत्र को मक्का, उड़द प्रधान, (3) 10 से 20से.मी. वर्षा के क्षेत्र को घास व चारा प्रधान, (4) 5से.मी. 10 से.मी. से कम वर्षा क्षेत्र को शस्योत्पादन के लिए अनुपयुक्त माना है।

म.प्र. में कृषि विकास व सब्जी का उत्पादन – म.प्र. की कृषि जलवायु सब्जी उत्पादन एवं आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। पिछले दशक में म.प्र. ने सब्जी उत्पादन के क्षेत्र में तेजी से कदम बढ़ाया है। भूमिगत की उपयोगिता बढ़ाने से फसल विविधता को बढ़ावा देने, रोजगार के अवसर बढ़ाने तथा देश की अर्थव्यवस्था में योगदान तथा जनता को खाद्य एवं पोषण सुरक्षा प्रदान करने में सब्जियों की अपनी अलग उपयोगिता हैं। इसके अतिरिक्त यह आमदनी बढ़ाने का महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ है।

हमारे प्रदेश में 30 विभिन्न प्रकार से अधिक सब्जियों का उत्पादन किया जाता है। म.प्र. में सब्जी उत्पादन की अपार संभावनायें है। वर्तमान में म.प्र. में लगभग 2 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में सब्जियों का उत्पादन किया जाता है। इसमें प्रमुख रूप से बैगन, आलू, प्याज, लहसून, फूलगोभी, पत्तागोभी, धनिया एवं मिर्च है। इनमें से आलू, धनिया, मिर्च एवं लहसून को विशेष फसल का दर्जा दिया गया है। यद्यपि खाद्यान्न उत्पादन में हमारे देश ने आत्माविश्वास हासिल कर दिया है। परन्तु अभी भी हम अपनी पूरी आबादी को पोषण हेतु सब्जियों की संतुलित मात्रा 300 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध कराने में सक्षम नही हो सके। म.प्र. के लगभग 85 ग्राम सब्जी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन की औसत खपत हैं।

सब्जी उत्पादन मुख्य स्त्रोत – व्यावसायिक स्तर पर सब्जियां शहर के पास वाले क्षेत्रों में उगाई जाती है। नगरीय क्षेत्रों में अहम पैसा मिल जाने की वजह से यह कार्य महत्वपूर्ण है।

भोजन विशेषतों के अनुसार हमें अपने भोजन को पौष्टक एवं संतुलित बनाने के लिए 300 ग्राम सब्जी प्रतिदिन खाना चाहिए। व्यावसायिक स्तर पर जो सब्जियों उगाई जाती है इसमें उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग किया जाता है तथा सिंचाई व खाद की संतुलित मात्रा पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

जैविक सब्जी उत्पादन – दैनिक आहार में सब्जियों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है सब्जियों में विभिन्न पोषक तत्व, विटामिन्स, प्रोटिन आदि पाये जाते है, जो मानव स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद है। सब्जियों की खेती में रसायनों (रासायनिक उर्वरक व कीटनाशकों)का बहुतायत से उपयोग होता है। भारतीय ग्रामीण परिवार प्रतिवर्ष 5 से 10 हजार रूपये स्वास्थ्य पर खर्च करता है। यह खर्च हर वर्ष बढ़ रहा है। वही नगरीय जनता कर खर्च और अधिक की सब्जी उत्पादन तथा उपभोक्ता दोनों ही को इस विषय में जागरूक करने की आवश्यकता है। हमारे राष्ट्र को बीमार राष्ट्र बनने से बचने हेतु

* विभागाध्यक्ष (भूगोल) महाराजा भोज शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.) भारत

जैविक पद्धति से सब्जी उत्पादन की निंतात आवश्यकता है। यह समय की मांग की ग्राम आधारित संसाधन जैसे गोबर, गोमूत्र, जैविक खाद, जैविक नियंत्रण आदि का उपयोग किया जाता है।

हमारे देश में जैविक सब्जी विपणन की भी अपार संभावनाऐं पूना, इन्दौर अन्य शहरों में कुछ किसान समूह उपभोक्ताओं को सीधे जैविक सब्जी उपलब्ध करवा रहे है। इस प्रकार किसानों को सीधे उपभोक्ता से जुड़ने से विपणन मूल्य अच्छा मिल जाता है साथ ही उपभोक्ता को शुद्ध (स्वास्थ्य कर सब्जियां मिल जाती है सब्जियों से लाभ कम समय से अधिक उत्पादन कम क्षेत्र का अधिक उत्पादन दैनिक आमदनी का स्तोत्र, वर्ष भर रोजगार की सुलभता, विभिन्न पोषक तत्वों का सुलभ स्त्रोत औषधीय गुणों से भरपूर। सब्जियों का वर्गीकरण –

1. पत्तेदार सब्जियों – पालक, धनिया, मैथी,
2. फलदार सब्जिया – भिण्डी, टमाटर, बैंगन, मिर्च
3. बीजयुक्त सब्जियां – मटर, फ्रेंचबीन, बरबरी, ग्वारफली,
4. भूमिगत सब्जियां – आलू, प्याज, लहसून, शलजम, मूली, गाजर
5. कंदवर्गीय सब्जियां – कद्दू, सोरई खीरा, लौकी, गोभी
6. वर्गी सब्जिया – पत्तागोभी, फूलगोभी।

मानव स्वास्थ एवं सब्जियों का महत्व – मस्तिष्क के लिए – हरी पत्तेदार सब्जियां, मसूड़ों एवं दांतो हेतु – फूलगोभी, करेला, हरीमिर्च, आंखो के लिए – गाजर, मूली टमाटर, हृदय के लिए – लहसून, मैथी, प्याज, पेट के लिए – कच्ची बंद गोभी, मैथी हरी पत्तेदार सब्जियां, खून के लिये – हरी पत्तेदार सब्जियां, पत्तागोभी, गाजर चुकंदर, हड्डियों के लिये– पालन, मैथी, परवाल, हरीमिर्च, धनिया, आदि, शरीर निर्माण एवं मरम्मत के लिये – मटर, बरबरी, फ्रेंचबीन।

टिकाऊ जैविक खेती की आवश्यकता – प्राचीनकाल में सभी पौधें प्राकृतिक अवस्था में उगते थे। मनुष्य को जो अच्छा लगता उसे अपने नियंत्रण में उगाना चालू किया, जिसे कृषि कहा गया। अधिक उत्पादन के लक्ष्य में प्रकृति के मूलभूत सिद्धांतों को ध्यान में नहीं रखा गया। कृषि में रासायनिक उर्वरकों कीटनाशकों, शाकनायिया, अधिक पानी, ट्रेक्टर आदि का उपयोग किया जाने लगा। विकास को इस त्वरित लाभ देने वाली पद्धति के दुरूपयोग के दूरगामी परिणाम क्या होगे।

वर्तमान कृषि पद्धति – रासायनिक खाद, ट्रेक्टर, बीज, खनिज (प्रेट्रोल, डीजल) व्यापारी, परिवहन साधन, रासायनिक कीटनाशक। आज इसके गंभीर परिणाम कृषक समाज को देखने पड़ रहे है। दिन प्रतिदिन पानी की कमी हो रही है एवं वातावरण में उष्णता बैठ रही है। कृषि पद्धति पर्यावरण न होने से कृषि उत्पादन प्रभावित हो रहा है। जिस देश में रासायनिक कृषि पद्धति की नीवे रखी थी उन्हीं देशों में आज जैविक खेती की लहर तेजी से चल रही हैं।

टिकाऊ कृषि में विविध घटक – जैविक कृषि एक ऐसा विषय है जिसमें हमारा संबंध प्रकृति के समस्त घटकों से होता है। इसमें प्रमुख स्थान जल, वायु, वृक्ष, पौधे, गाय, बैल, कीटो एवं भूमि में रहने वाले असंख्य सूक्ष्म जीव–जन्तु से सीधे जुड़े रहते है। 1. वृक्ष प्रंबधन, 2. फसल प्रबंधन, 3. जल प्रबंधन, 4. भूमि प्रबंधन, 5. बीज प्रबंधन, 6. पशुपालन, 7. पौध संरक्षण, 8. पौध पोषण प्रबंधन, 9. कृषि विपणन आदि।

वर्तमान में कृषि का बदलता स्वरूप – प्रथम व द्वितीय युद्ध के बाद कृषि करने के प्राचीन पद्धति में आमूलचूल परिवर्तन हुआ है। छोटे–2 खेतों की जगह बड़े–बड़े फार्मो ने स्थान ले लिया है। हल, हेरो, स्प्रेयर तथा थ्रेशिंग मशीने फसल उत्पादन के काम में लायी जा रही है, उसी प्रकार हल जोतना उर्वरक डालना, कीटनाशकों का छिड़काव करना, फसल काटना आदि कार्य भी अब मशीनों द्वारा किए जा रहे है। अर्थात कृषि करने की पद्धति में मानव श्रम की जगह मशीनों ने स्थान ले लिया है। आधुनिक युग कृषि आज हमारे देश के अर्थव्यवस्था की आधार स्तम्भ है। कृषि उत्पादन के बाद ही देश की अर्थव्यवस्था का ढ़ांचा बनाया जाता है। देश की वित्त व्यवस्था भी कृषि पर ही निर्भर है। इस प्रकार कृषि के स्वरूप में परिवर्तन आ रहा है।

खोज के महान युग –

1. कृषि भूगोल की पहली रचना आर्थर यंग की जिसकी महान स्मरणीय कृषि " इग्लैण्ड में पर्यावरण एवं फसल स्वरूप " सन् 1770 में प्रकाशित की गई।
2. हम्बोल्ट ने सन् 1807 में अपनी कृषि " कासमोस " दक्षिणी अमेरिका व क्यूबा में भूमि उपयोग प्रकाशित की।
3. फान थ्यूनेन (वान थ्यूनेन ऐसा पहला विद्धान था जिसने कृषि भूमि उपयोग और फसल गहनता पर स्थानिक माण्डल तैयार किया। (कृषि पेटियां)
4. कोस्टोविकी 1964 विश्व में कृषि रूपो को विज्ञान प्रकाशित।
5. जसबीर सिंह 1974 ने हरियाणा की कृषि एटलस प्रस्तुत की।
6. मोहम्मद शफी " उत्तरप्रदेश की कृषि विकास एवं योजनाऐं तथा भूमि उपयोग "1961।
7. वीवा 1954 मध्यपश्चिम में फसल संयोजन।

निष्कर्ष – महात्मा गांधी के अनुसार " गाय लाखों करोड़ों भारतवासियों के भरण पोषण करने वाली माता है। हिन्दुस्तान में गाय है। मनुष्य की सच्चा साथी एवं संबसे बड़ा आधार है। वह सिर्फ दुध ही नही देती बल्कि सारी खेती का आधार स्तंभ है।"

गाय से पल रहे सात कारखाने – 1. दुग्ध, 2. गोबर, 3. चमड़ा, 4. गोमूत्र, 5. गोबर गैस व ऊर्जा, 6. बैल, 7. गोश्त।

यह गरीबी सीमांत व लघु कृषकों के लिये आय बढ़ाने हेतु अच्छा अवसर है किन्तु बहुत से ऐसा नहीं कर पाते हैं। कम साक्षरता स्तर एवं तकनीकी ज्ञान की कमी इन कृषकों के लिये प्रभावी कृषि एवं विपणन व्यवस्था में बाधक बन रही है। ग्रामीण क्षैत्र में कृषक अपने पुराने ज्ञान व तकनीकी के आधार पर सब्जी उत्पादन एवं दुग्ध उत्पादन कर रहे है। ऐसे कार्यक्रम की कमी है जो सब्जी उत्पादन व दुग्ध उत्पादन को लाभकारी बनाने के लिए वैज्ञानिक तकनीकी को प्रचार करने की आवश्यकता है। इन दोनों क्षेत्रों में सब्जी व दुग्ध उत्पादन विशेष कर ग्रामीण उद्यमी महिलाओं तथा पुरूषों को प्रशिक्षित व प्रेरित करने की आवश्यकता है। जिससे लघु व्यवसाय को बढ़ावा दिया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय सब्जी अनुसंधान पोस्ट बाक्स नं. 01 जखानी शहशुर, वाराणसी 221305(उ.प्र.)
2. केन्द्रीय वागानी फसल अनुसंधान संस्थान कासरगौड, केरल, 670124।
3. केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान शिमला, हिमाचल प्रदेश 171 001
4. राष्ट्रीय प्याज और लहसून अनुसंधान केन्द्र एम.एफ. 37 सुन्दरवन कालोनी, नासिक महाराष्ट्र 422 004।
5. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान पूसा गेट, नईदिल्ली 110012।
6. राष्ट्रीय कृषि वानकी अनुसंधान केन्द्र आई.जी.एफ.आर. आदि परीक्षा पहुच मार्ग, झांसी रोड, ग्वालियर (म.प्र.)
7. भारतीय कृषि आजादी के बाद प्रो. जी.एस. भल्ला, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया।
8. कृषि भूगोल डॉ. माजिद हुसैन जयपूर प्रकाशन।
9. सब्जी उत्पादन समय की मांग डॉ. कल्पना शंकर मुख्य कार्यकारी अधिकारी हैण्ड इन हैण्ड इण्डिया।

जनजाति उपयोजना में ग्रामीण विकास एवं गरीबी निवारण एक भौगोलिक विश्लेषण

अम्बालाल कटारा * प्रो. एल.सी. खत्री **

शोध सारांश – गरीबी निवारण एवं ग्रामीण विकास दोनों एक दूसरे से काफी घनिष्ठ रूप से सम्बन्ध है। ग्रामीण विकास तभी सम्भव है जबकि गरीबी निवारण की दिशा में उचित पहल की जाए, लेकिन राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बडा राज्य होते हुए भी राज्य में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत करवाये गये सभी प्रकार के विकास कार्यो के बावजूद आज भी यह स्थिति है कि राजस्थान के क्षेत्रफल, जनसंख्या, कृषि, उद्योग आधारभूत ढांचे की सरंचना, खनिज सम्पदा व प्रति व्यक्ति आय आदि की स्थिति का अध्ययन भारतीय परिप्रेक्ष्य व अन्य राज्यों की तुलना से पता चलता है कि राज्य काफी पिछड़ रहा है लेकिन उपयोजना क्षेत्र के द्वारा विशेष क्षेत्रीय विकास कार्यक्रमों के लाभ भी उन लोगों को अधिक मिला जिसके पास सक्षम संसाधन परिपूर्ण हो व योजनाओं की जानकारी थी। इसलिए समाज कमजोर पिछड़े गरीब जो ग्रामीण दूर दराज जगंलों, पहाडी भागों में बसे निरक्षर आदिवासी जनजाति जो उन योजनओं के उद्देश्यों व लाभ को लेने में शिक्षा एक बाधा बनी हुई है, जो अशिक्षित है शिक्षा के दौर में समय के साथ परिवर्तन व कार्यक्रमों के प्रचार प्रसार से धीरे धीरे गांवों में रोजगार के साधनों व चिकित्सा सुविधा, शिक्षा, पेयजल, खादबीज वितरण, कौशल विकास कार्यक्रम कृषि उद्यमिता प्रशिक्षण स्वरोजगार प्रशिक्षण के माध्यम से रोजगार के अवसर बढ़े रहे है।

शब्द कुंजी – टी.एस.पी, उपयोजना क्षेत्र, जनजाति, विकास।

प्रस्तावना – ग्रामीण विकास कार्यक्रम का इतिहास काफी पुराना है फिर भी नियोजित ढ़ग से ये कार्यक्रम भारत में योजना युग के प्रारम्भ से शुरू किये गए हैं और विगत वर्षो में अनेक नामों से इन कार्यक्रमों को तैयार किया गया कि ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोगों विशेषकर निर्धन वर्ग के लोगों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को उन्नत किया जा सके। इन कार्यक्रमों के क्षेत्र को काफी विस्तृत रखा गया है। जिनके अन्तर्गत प्रमुख: उत्पादन, रोजगार, स्वास्थ्य एवं शिक्षा, यातायात एवं संवेदनावाहन, व्यापार, विद्युत एवं जलपूर्ति का नियन्त्रण सामाजिक एवं राजनीतिक जनचेतना आदि को शामिल किया गया है।

निर्धनता एक साधारण बीमारी नहीं है इसका अर्थ है सांसारिक वस्तुओं से इतना वंचित होना जिसकी अमीर राष्ट्रों के निवासी बिना देखे कल्पना भी नहीं कर सकते है। लगभग खाली उदर, अर्द्धनग्न शरीर, नंगे पॉव सुखे हुए पेट सिकुडे अंग, व्यापक बीमारी तथा निर्बलता आदि सामान्य गरीबी के लक्षण है। सरकार ने राज्य प्रचलित योजनाओं नीतियों और कार्यक्रमों का केन्द्र बिन्दु बनाकर कल्याणकारी कार्यक्रमों का निर्धारण कर उनका क्रियान्वयन प्रारम्भ किया, जिससे इन वर्गो के जीवन में उत्साह के साथ बदलाव लाया जाए। टी.एस.पी. क्षेत्र में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए प्रोत्साहन के रूप में राशि, छात्रावास निर्माण, आवासीय विद्यालय, मॉ बाडी केन्द्र, स्कॉलरशिप योजना रोजगार के लिए महानरेगा योजना, मुख्यमंत्री आवास योजना, नि:शुल्क चिकित्सा सेवा, आदि योजनाओं के द्वारा जनजाति क्षेत्रों में ग्रामीण विकास होने लगा है। आज भी गांवों में रोजगार की अपार संभावनाऐं है बस जरूरत है थोड़े से प्रयास की जिन लोगों के पास कृषि आधारित कारोबार शुरू करने के लिए पैसा नहीं है, उनके लिए समस्या है क्योंकि अशिक्षा की वजह से योजना के लाभ हकदार बनने से पिछड़ रहे है।

उद्देश्य – जनजाति उपयोजना के माध्यम से जनजाति के लोगों की आर्थिक व सामाजिक स्थिति सुधारने में विकास की सम्भावनाओं पर ध्यान केन्द्रित करना।

1. उपयोजना क्षेत्र में जनजातिओं के युवक युवतियों के रोजगारोन्मुखी प्रशिक्षण के द्वारा लाभान्वित करना।
2. जनजाति उपयोजना क्षेत्रों में सरकार की कल्याण कारी योजनाओं के माध्यम से आधारभुत सुविधाओं के विस्तार कर विकास की और ध्यान केन्द्रित करना।

तथ्यात्मक विश्लेषण –

1. राजस्थान जनजाति क्षेत्र की जनसंख्या 9.39 लाख व्यक्ति (कुल जनसंख्या का 13.5 प्रतिशत)
2. दक्षिणी राजस्थान के जिलो बांसवाडा, डूंगरपुर, उदयपुर प्रतापगढ़ एवं सिरीकी में जनजाति लाख व्यक्ति कुल जनसंख्या का 73.17 प्रतिशत।
3. बांसवाडा जिला सर्वाधिक जनजाति आधारित क्षेत्र 76.38 प्रतिशत एवं डूंगरपुर जिले में 70.8 प्रतिशत है।
4. डूंगरपुर जिला सर्वाधिक ग्रामीण जनसंख्या अनुपात 93.6 प्रतिशत 2011 में

अध्ययन क्षेत्र –

जनजाति उपयोजना क्षेत्र – प्रशासनिक दृष्टि से जनजाति उपयोजना क्षेत्र दक्षिणी राजस्थान के सम्पूर्ण बांसवाडा, डूंगरपुर प्रतापगढ़ (छोटी सादडी, छोडकर) सिरोही जिले के आबुरोड उपखण्ड तथा उदयपुर जिले की खेरवाड़ा, कोटड़ा, झाड़ोल, सलुम्बर, सराडा, तथा गिर्वा तहसील के 81 गांवा की समाहित करता है। 23 पंचायत समितियों तथा 19 तहसीलों के 4409 गांवों का 19770 वर्ग इस क्षेत्र सम्मिलित किया गया है। 2001 की जनगणना के अनुसार राजस्व गाँव उपयोजना क्षेत्र $23^{0}1'$ उत्तरी अंक्षाश से

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) भारत
** प्राध्यापक (भूगोल विभाग) सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) भारत

25°45' 30' अक्षांश तथा 73° पूर्वी देशान्तर से 74°45' पूर्वी देशान्तर तक उच्चावच की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र को तीन भागों में विभक्त है

अ) दक्षिणी अरावली।

ब) छप्पन का मैदान।

स) माही बेसिन का लगभग 40 प्रतिशत भूभाग पहाड़ी तथा पठारी है।

राजस्थान का प्रसिद्ध पर्वतीय पर्यटन स्थल माउण्ट आबू तथा सबसे ऊँचा पर्वत शिखर 'गुरू शिखर' (1722 मी.) सामाजिक व धार्मिक पर्यटन स्थल बेणेश्वर धाम जो आदिवासियों का 'महाकुंभ' एवं मानगढ धाम, घोटिया आम्बा, इसी क्षेत्र में स्थित है माही, सोम, जाखम, साबरवमली, नदीयों का उद्गम भी इसी क्षेत्र से है।

अध्ययन की आधार सामग्री – इस शोध पत्र में द्वितीय आंकड़ो का संकलन के द्वारा किया गया है–द्वितीयक आंकड़ो का संकलन भारत के जनगणना 2011 द्वारा प्रकाशित आंकड़े विभाग द्वारा व उपयोजना कार्यालय जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग द्वारा उपलब्ध निम्न सामग्री द्वारा किया गया है।

जनजाति क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम – 2011 की जनगणन के अनुसार राजस्थान में 92.39 लाख जनजाति के लोग है जो राज्य की कुल जनसंख्या का 13.48 प्रतिशत है जिससे जनजाति उपयोजना में 2001 के अनुसार 69.85 ग्रामीण 12.63 प्रतिशत नगरीय अनुसुचित जनजाति जनंसख्या निवास करती है। सन् 2011 में अनुसूचित जनजाति व 73.17 प्रतिशत जनजाति जनसंख्या निवास करती है। उपयोजना क्षेत्र में भील, मीणा, डामोर, गरासिया, कथौड़ी, व सहरिया आदि जनजाति के व्यक्ति निवास करते है। राज्य की जनजातिओं के आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक तथा ग्रामीण विकास हेतु राज्य में जनजाति क्षेत्र विकास की स्थापना 1975 में की गई। राज्य की सभी जनजातिओं का संर्वागीण विकास हो सके। जिसमें राज्य सरकार ने राज्य के अलग अलग क्षेत्रों के अनुसार योजना व उनके विकास हेतु क्षेत्रों का निर्धारण किया गया। राज्य में अलग–अलग क्षेत्रों अनुसार विभिन्न क्षेत्रों निम्न नामो से पहचाना जाता है।

जनजाति क्षेत्र	जनजाति जनसंख्या	जनजाति प्रतिशत	राज्य में प्रतिशत
जनजाति उपयोजना क्षेत्र टी.एस.पी.	4188056	45.33	6.10
माडा क्षेत्र योजना	1830253	19.81	2.67
माडा कलस्टर क्षेत्र योजना	67451	0.73	0.09
सहरिया विकास क्षेत्र	102124	1.10	0.14
बिखरी हुई जाति विकास	3050650	33.02	4.45
कुल योग	**9238534**	**100**	**13.48**

उपरोक्त सभी जनजाति क्षेत्र विकास की जनसंख्या अनुपात 20.01 प्रतिशत है। अकेले उपयोजना जनजाति क्षेत्र टी.एस.पी. में 45.33 प्रतिशत जनसंख्या है। साथ ही जनजाति उपयोजना में अजजा जनसंख्या 73.17 प्रतिशत है। उपयोजना में अजा की जनसंख्या का अनुपात 5 प्रतिशत से अधिक है।

जनजाति उपयोजना द्वारा विकास के कार्यक्रम – विकास की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अभाव ग्रस्त व रोजगारमुखी कृषि वनो आधारित या सरकारी नौकरी पेशा में आरक्षण पद्धति द्वारा कमजोर लोगों को मुख्य धारा में लाने के निम्न योजना या कार्यक्रमों को संचालित किया जाता है।

1. **मानव ससाधन –** शिक्षा की गुणात्मक परिवर्तन, व्यवसायिक शिक्षा के लिए मार्गदर्शन केन्द्र औद्योगिक प्रशिक्षण, शिक्षा के लिए आर्थिक सहायता, रोजगार प्रशिक्षण का संचालन, आश्रम, स्कूल, मॉ बाडी केन्द्र आवासीय विद्यालय, खेल छात्रावास, खेल प्रशिक्षण एवं छात्रावास व्यवस्था उच्च शिक्षा एवं राज्य सेवाएं व सिविल सर्विस PMT, PET, IIT, IIM हेतु प्रोत्साहन राशि की व्यवस्था

2. **कृषि क्षेत्र की उत्पादकता –** कृषि जनजाति क्षेत्र का मुख्य रोजगार है इसमें न्यून क्षेत्र एवं अधिक उत्पादकता तकनीक का प्रयोग किया गया जिसमें (1) गहन कृषि (2) सब्जियों व फलों के पौधों का रोपण (3) कृषि शिक्षा एवं अनुसन्धान केन्द्र महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के अधीन संचालित कृषि विज्ञान केन्द्र (4) कृषि में आधुनिक यन्त्रों, बीज व तकनीकी का प्रयोग बढाना (5) कृषि प्रदर्शनियां (6) जल संसाधन का प्रयोग (7) गोल्डन मक्का बीज, खाद 50 किलों नि:शुल्क वितरण करना।

3. **वृक्षारोपण व वानिकी –** (1) पर्यावरण सुधार के लिए वनों का विस्तार, विकास की अति आवश्कता है। (2) व्यर्थ भूमि का विकास एवं प्रयोग, पहाडी क्षेत्र में विकास कार्य (3) सरकारी वृक्षारोपण एवं सामाजिक सुरक्षा का लक्ष्य पूर्ण करना। (4) जनजाति क्षेत्र में पौधशालाओं (नर्सरी) का विकास, बागवानी प्रशिक्षण।

4. **पशु सम्पदा का विकास –** पशु सम्पदा को आय एवं रोजगार से सम्बन्धित करने के लिए निम्नलिखित प्रयास किये गये– (1) मत्स्य व कुक्कुट शलाओं का विकास प्रशिक्षण (2) पशु चिकित्सालय का विस्तार एवं शंकर नस्ल का विस्तार, (3) खरगोश पालन योजना व बकरी पालन योजना

5. **पेयजल व बकरी पालन योजना –** उपयोजना क्षेत्र में सिंचाई सुविधाऐं उपलब्ध करने के लिए माही बहुउद्देशीय परियोजना जाखम, सोम कमला, आम्बा परियोजना पूर्ण की गई। फलस्वरूप इस क्षेत्र सिंचाई सुविधाओं में विस्तार हुआ है।

6. **पेयजल सुविधा** में माही लिफ्ट परियोजना ढेबर, जाखम, सोम कमला आम्बा व अन्य पम्पसेट, ट्यूबवेल द्वारा जनजाति क्षेत्रों में पेयजल समस्या की कमी हुई है।

7. **आधारभूत सुविधिाओं का विकास –** इन सुविधाओं को सन्तुलित आधार पर विकसित करना ताकि विकास गति त्वरित हो सके। आधार सुविधा होती है लेकिन इनके शोषण व विदोहन की आवश्कता अति तीव्र है। अत: बेरोजगारी एवं गरीबी निवारण में प्राकृतिक संसाधनों का विकास अति आवश्यक है।

8. **शोषण के विरूद्ध सुरक्षा –** जनजाति क्षेत्र को शोषण से मुक्त कराने की गहन आवश्कता आज भी है। यह वर्ग अशिक्षा एवं गरीबी के दुश्चक्र के कारण शोषित होता रहा है। अत: इस क्षेत्र के आरक्षण का लाभ यहां के जनजातियों को नहीं मिल पाया है, जो आज भी द्वितीयक श्रेणी नौकरियों तक की देय है जिनका लाभा माडा जनजातियों व अन्य जिलों के मीणा जनजाति वर्ग के लोग पहले से लाभ उठारहे है। राज्य सरकार में इस वजह से टी.एस.पी. उपयोजना क्षेत्र में निवास सामान्य व अन्य पिछडा वर्ग को भी इस योजना में शामिल किया गया है साथ ही एक अलग क्षेत्र मानकर स्थानिय युवाओं को रोजगार दिया जाएगा ताकि उस क्षेत्र का विकास बढेगा।

9. **योजनाओं व कार्यक्रमों का प्रसार व प्रसार से विकास –** इस क्षेत्र में अधिकांश जनसंख्या दूर दराज सीमावर्ती क्षेत्रों में जंगलों पहाडी क्षेत्रों

में निवास करने वाली जनसंख्या को योजनाओं का पता नही रहता है, जिसकी जिम्मेदारी ग्राम स्तर व ब्लॉक स्तर के कर्मचारियों की जिम्मेदारी व दायित्व से कर्तव्यों पालन कर ग्राम सभा या अन्य माध्यम से उचित प्रावधान किया

जाए ताकि वास्तविक हकदार को लाभ प्राप्त हो सके।

गरीबी निवारण के कार्यक्रम – प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर आठवीं योजना के अन्त तक सरकार ने अनेक निर्धनता निवारण कार्यक्रमों को अपनाया है जिनमें मुख्यतया सामुदायिक विकास योजना, पंचायती राज, लघु किसान विकास अभिकरण, सीमान्त कृषक एवं कृषि श्रमिक विकास अभिकरण, काम के बदले अनाज, एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम जवाहर रोजगार आदि प्रमुख है। भारतीय अर्थव्यवस्था से गरीबी को हटाने के लिए ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देना अनिवार्य आवश्यकता है। इसके साथ ही ग्रामीण विकास हेतु निम्न उपायों को अपनाया होगा–

1. ग्रामीण सामाजिक सेवाओं जैसे – शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास आदि प्रमुख सुविधाओं का विकास करना।
2. व्यावहारिक लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास।
3. स्थानीय पूँजी विनिर्माण परियोजनाओं विशेष रूप से ऐसी परियोजनाएँ जिनके द्वारा कृषि उत्पादकता में शीघ्र वृद्धि हो सके, जैसे – लघु एवं मध्यम सिंचाई परियोजनाये, नालियों का निर्माण, संग्रहण की सुविधा का विकास, स्थानीय परिवहन एवं सडकों का विकास आदि।
4. भूमि का कुशल वितरण, उसका विकास एवं व्यवस्थापन करना।

ग्रामीण विकास में कठिनाई के रूप में गरीबी एक अत्यधिक प्रभावी टूल का कार्य कर रही है। इसे दूर कर ग्रामीण विकास के लिए सरकार को प्रभावक नीति की घोषणा करना आवश्यक है।

निष्कर्ष – जनजाति उपयोजना क्षेत्र में जनसंख्या का जीवन वनों से जुडा होता है। इनके क्षेत्रों में भू–जोतो का आकार 2 हेक्टर से भी कम होता है। कभी–कभी हैक्टर से भी कम होता है। परिवहन की जटिलता, सिंचाई व पेयजल की कमी, अशिक्षा, कुपोषण सामाजिक कुरितियों, अन्तधविश्वास, आर्थिक शोषण, बेरोजगारी आदि समस्याओं से ग्रस्त है। आज भी इन लोगों को ऊपर उठाना भी एक धीमी प्रक्रिया है।

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में 50 प्रतिशत से भी ज्यादा (73.17 प्रतिशत) जनसंख्या जनजाति के लोगों की है लेकिन इन क्षेत्रों में भी इनके लिए आरक्षण का 12 प्रतिशत है, जो प्रथम श्रेणी कॉलेज व्याख्याता व राज्य सेवा में टी.एस.पी. के लिए देय नही है। इनके लिए इस क्षेत्र 45 प्रतिशत अजजा व 5 प्रतिशत अजा व 50 प्रतिशत आरक्षण अन्य जातियों के लिए प्रावधान है। अजजा की जनसंख्या अधिक होने पर भी इनका वास्तविक हक नही दिया जा रहा जो 12 प्रतिशत में से 5.5 प्रतिशत लाभ उपयोजना के लिए लाभ दिया जाना चाहिए। जिसकी यहाँ के बेरोजगार युवकों को रोजगार में अवसर मिले।

उपयोजना क्षेत्र में जिन खण्डों में 75 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासियों की पाई जाए वे जनजाति के विकास खण्ड घोषित किए जाए और वहा की भूमि पर आदिवासियों का अधिकार हो जाए और वे उन क्षेत्रों में उद्योग, व्यापार, सेवा के सारे अवसर प्राप्त करे।

उपयोजना में केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा प्राप्त आवटन योजना की राशि का प्रक्रिया व कागजों में उलजने से 50 प्रतिशत से अधिक राशि लेप्पस् हो जाती है जिससे इस क्षेत्र में समुचित उपयोग ना कर पाने से समस्याएँ रहती है।

आधारभुत संरचना, संसाधनों की अपर्याप्तता– विद्युत, प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग, परिवहन, सडक, शिक्षा व अन्य सरकारी कार्यालयों में रिक्त पदों की समस्या, पेयजल, स्वास्थ्य सुविधा आवश्यकता के अनुपात में कम। जल सिंचाई, बीमा, बैंक, माल गोदाम, संवहन आदि सुविधाओं की स्थिति संतोषप्रद नही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भल्ला, एल.आर., 'राजस्थान का भूगोल', कुलदीप पब्लिकेशन, हाउस, जयपुर, 2014
2. राजस्थान सरकार, 'अनुसूचित जनजाति के लिए कल्याणकारी योजनाऐं', टी.आर.आई, 2011–12
3. डॉ. वर्मा, सावलिया बिहारी, 'ग्रामीण गरीबी उन्मुलन' यूनिवरर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली 2011
4. सिह, शिवशंकर 'भारत में समन्वित ग्रामीण विकास एव नियोजन', नई दिल्ली 2008
5. शर्मा, रेखा 'ग्रामीण विकास एवं नियोजन' रावत पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2012
6. आशुतोष ठाकुर, ट्राईबल डेवलपमेन्ट एण्ड ईट्स पेराडोक्स 2001
7. जनगणना सेन्सस, 2011
8. राजस्थान सरकार, बजट घोषणा मार्च 2014

****

The Effect Of Contingent,Non-Contingent Feedback And Task Difficulty On Intrinsic Motivation

Dr. Asha Ojha *

Introduction - The present investigation attempts to study the phenomenon of intrinsic motivation in the context of contingency of feedback. It has been hypothesized that effects on intrinsic motivation are modified by personality factor and task difficulty i.e. contingency of feedback affects intrinsic motivation differently for easy and difficult tasks and this feedback effect is different high-low need for cognition individuals. The most important point made in the present study is that intrinsic motivation is influenced firstly by contingency of the feedback and secondly by, the interaction of contingency and the person's need for cognition and contingency as well by the difficulty levels of the task. As such, intrinsic motivation has been assessed by task appraisal, task persistence and perceived competence.

These issues have been addressed in the form of the following questions, which may be formulated as the objectives of the study :

(a) Does feedback affect intrinsic motivation similar to reward effects ?
(b) Does the contingency of feedback have any difference in affecting this motivation in comparison to non-contingency ?
(c) Are these feedback effects sensitive to task differences specifically in terms of difficulty ?
(d) Do personality differences modify these contingency effects upon intrinsic motivation ?

The problem thus has the objective of studying these interacting factors together in understanding their influences on intrinsic motivation.

1. Variables - the main **variables** of the study are as follows :

1) Intrinsic Motivation - intrinsic motivation is the innate, natural propensity to engage one's interest and exercise one's capacities and in so doing to seek and conquer optimal challenges. Such motivation emerges spontaneously from internal tendencies can motivate behaviors even without the aid for extrinsic rewards or environmental controls. Thus motivation that is aroused through personal factors is known as intrinsic motivation. The present study has used **task appraisal, task persistence and perceived competence** as measures for intrinsic motivation.

(a) **Task Appraisal –** How the subject is feeling about the task. The higher the rating of the positive qualities he finds in the task the more intrinsically motivated he is.

(b) **Task Persistence –** a willingness to return for another set of similar tasks for some time. The more willingness the subject shows the more intrinsically motivated he is.

(c) **Perceived Competence –** how much is the subject feeling competent or capable of doing a task or incapable of doing it. The more capable or competent he feels the more intrinsically motivated he is.

(2) Attribution – the cognitive explanation of motivation has been called attribution. The process of attribution is an individual's understanding of the reasons behind people's behavior or his own behavior. In other words cognitive explanation of motivation is called attribution. Attributional motivation describes how the individual's explanation, justification an excuses influence motivation. Weiner's view, attribution of internality, externality and of stability, instability of the performance are the crucial determinants in attributions of causation for success and failure.

(3) Contingent and Non-Contingent feedback – feedback is a process by which information is given about the correctness of previous performance under one's control. In the present investigation one set of independent variable is contingency effects and positive negative effects of feedback. Feedback contingency will be presented as results for prior task performance with manipulation of the scores being congruent with the reported effort ratings (contingent) or the scores being incongruent with the reported effort ratings (non-contingent).

(4) Need for Cognition - need for cognition implies a need to structure relevant situations in meaningful integrated ways, a need to understand and make reasonable the experimental world.

(5) Task Difficulty – in the present investigation difficult and easy tasks has been given to the subjects and effect of task difficulty is to be seen. Difficult tasks have been conceptualized as involving more effort that easy task and this has been determined by an initial try-out of the task.

Intrinsic motivation is perceived source of energy for responding in a given context coming from within the person; doing something for its "own sake" (Zimbardo 1979)

According to Deci and Ryan (1990) "Intrinsic motivation is the innate, natural propensity to engage one's interest and exercise one's capacities and in so doing, to seek and

* Asst. Professor (Psychology) Govt. M.L.B. Girls P.G. College, Kila Bhavan, Indore (M.P.) INDIA

conquer optimal challenges". Such motivation emerges spontaneously from internal tendencies can motivate behavior even without the aid of extrinsic rewards or environmental controls. According to these theorists, intrinsic motivation is also an important motivator of the learning, adaptation and growth in competencies.

Deci& Ryan's (1985 a) cognitive evaluation theory posits that self-determination and competence are the hallmarks of intrinsic motivation. Other theorists have proposed the affective components of interest and excitement, (**Izard** 1977) elation and the "flow" of deep task involvement (Csikszentmibalji 1975, 1978) and happiness, surprise and fun (**Pretty & Seligman** (1983) **ReeneCale&Olsam**(1986). Similarly conceptions of intrinsic motivation include challenge, enjoyment, personal enrichment, interest and self-determination.

When individuals are intrinsically motivated they engage in an activity because they are interested in and enjoy the activity (**Sansane&harackiewicz**(2000)). According to **Deci& Ryan** (1985) extrinsic incentives and pressures can undermine motivation to perform even inherently interesting activities. **Deci** and his associates provide the major research utilized by the present study.

Hypotheses - the major **hypotheses** of the study are as follows :

1. Contingency of feedback will have differential effects on intrinsic motivation in terms of positive negative feedback of performance.

(a) Positive contingent feedback will increase intrinsic motivation (i.e. task appraisal, task persistence and perceived competence) and will result in more internal attributions while negative contingent feedback will decrease intrinsic motivation.

(b) There will more difference between positive contingent non-contingent feedback effects than between negative contingents – non- contingent feedback in these effects.

2. Difficult task will show more differences of contingent-non-contingent feedback effects, than easy tasks.

3. High need for cognition persons will be more affected by non-contingent feedback in their intrinsic motivation than low need for cognition persons.

These hypotheses have been formulated on the basis of the **Cognitive evaluation theory** by Deci and Ryan (1985). They had proposed that monitory **rewards** (i.e. external reasons for doing the activity) reduced the enjoyment in an activity and this was further extended to other kind of rewards by Lepper, Greene and Nisbett (1973), Harackiewicz (1979) and Ross (1975). However, when **feedback effects** are introduced as verbal rewards positive feedback, intrinsic motivation increases especially when the feedback is self-administered and negative feedback that implies incompetence decreases intrinsic motivation.

The theory proposed by Deci (1975) provides three basic propositions:

1. Events that promote a more external perceived locus of causality will undermine intrinsic motivation whereas those that promote a more internal perceived locus of causality will enhance intrinsic motivation.

2. Events that promote greater perceived competence will enhance Intrinsic motivation, whereas those that diminish perceived competence will decrease intrinsic motivation.

3. Events relevant to initiation and regulation of behavior have three potential aspects – the informational aspect facilitates intrinsic motivation, the controlling aspect undermines intrinsic motivation and the amotivating aspect also undermines intrinsic motivation by facilitating perceived incompetence.

It is being proposed in the present context, the positive-negative feedback would work like information but the contingency manipulation providing non-contingent feedback would bring forth the amotivating aspect of the information in the sense of the outcome being out of control of the intentions or efforts of the person. The basic question put forth is – does positive feedback increase intrinsic motivation even when it is non-contingent upon the performance of the person ?

Then the issue of easy versus difficult task has also taken up in the present study for which the personality variable of need for cognition has also been studied in relation to feedback effects. Cohen (1955) found that high need for cognition subjects showed greater persistence for difficulty task.

Thus, the present study attempts to add to the basic issue of intrinsic motivation that is a function of positive-negative feedback, of contingent-non-contingent feedback conditions of these feedback, of easy-difficult task, of high-low need for cognition. Most importantly, it is expected that these variables will show interesting interactional effects rather than simple main effects alone.

Method - A preliminary tryout for the contingency manipulation was carried out before the actual study was done. The basic design for the study is as follows :

Firstly, subjects were assigned randomly to contingent and non-contingent positive/ negative feedback after an easy or difficult task and measures on task appraisal, task persistence and perceived competence were obtained, followed by attributions. In the next study, high-low need for cognition persons were formed as extreme groups (on the basis of Cohen's need for cognition inventory) and the contingency manipulation was carried on for these groups.

The essential process of the contingency manipulation was of providing feedback in the form of scores for performance on a series of tasks (matrices, paragraph, general reasoning, mathematical tasks, association and sentence, similarity and differences) after getting an effort rating and the contingent feedback was high scores for high effort (backed up with higher actual performance) and low scores for low effort (backed up with lower actual performance). Non-contingent feedback was given by providing low scores for high efforts (higher actual performance and high scores for low efforts (and lower actual performance). A total of 740 subjects with 265 males and 375 females were thus assessed for the feedback effects

as part of 3 studies.

Tools - the tools of the study included Cohen's need for cognition questionnaire (1955) and a series of self constructed measures for task appraisals (semantic differential scales), task persistence (7 point rating scale), perceived competence (7 point adjective scales for ratings) and an attribution questionnaire. Besides, questions for efforts and manipulation checks were also edit.

Sample - the sample included class 11th and 12th students and college students of the under graduate level comprising of both boys and girls. These students were assessed over a period of 3 years for study total time of 4-5 hours was to be taken to manipulate contingency effects. Total 4 sessions of task were given. Two sessions were given on first day that it practice session and first session, after the first session subjects were asked to estimate efforts and marks. According to effort and estimation contingent and non-contingent feedback was given on next day and other two sessions of task were also given.

After the initial tryout, the first study was done for contingency effects, the second study added the easy-difficult task differences, the third study added high-low need for cognition differences.

Results – the results support some of the hypotheses and provide suggestive findings for the others.

Summary of Tables Table 1 & Table 2 (see in last page) Firstly, contingency of feedback had significant effects on task persistence and perceived competence but not on task appraisal. If the feedback of the performance is consistent with one's perceived efforts only some of the intrinsic motivation measures are affected and one may show more persistence of efforts and also increase one's sense of competence.

Tripathi and Agrawal (1985), Karnial and Ross (1977), Boggino and Ruble (1979) have all found intrinsic motivation higher for positive verbal feedback. Deci (1971) was found that subjects who received positive verbal feedback from the experimenter for working on puzzles where more intrinsically motivated then subjects who received no feedback. However the present study does not support this for all the measures of intrinsic motivation and it is been proposed that perceived competence and task persistence are related more to contingency of feedback then task appraisal.

With task appraisal as one of the major intrinsic motivation measure, difficult tasks have shown an unexpected finding that non-contingent feedback has enhanced the appraisal of the task, probably; the impression that the outcome of the task is unrelated to one's efforts allows one to relax the effort and thus increase the liking towards the task. In the difficult task perceived competence has also been found to be greater in the non-contingent conditions. It is clear that contingency may not always lead to higher intrinsic motivation and similar to rewards based on performance, may actually reduce the liking for the task.

With attribution, it has been found that contingent feedback generates more effort attribution as expected but also task difficulty attribution while non-contingent feedback enhances ability attribution. Thus, specific attributions have to be taken into account rather than internal or external attributions.

Positive –negative feedback has led somewhat expected results. Yet, they have revealed significant affects only with difficult tasks and a surprising finding of negative feedback providing higher perceived competence has been obtained. Further, this aspect to feedback has shown more effects with attributions and also with task persistence.

Positive feedback has led to higher task persistence as well as to higher ability and effort attribution. However, higher task difficulty attributions have also been found along with these outcomes. Taken together with contingent feedback effects it shows that positive feedback obtained for performance which has been considered actually based on high effort results in the cognition that the task was quite difficult, requiring high ability as well as effort and thus reflects a sense of achievement.

Black Reis, and Jackson (1984) found that subjects who received positive verbal feedback were more intrinsically motivated than subjects who received no feedback. Russell, Studstill and Grant (1979) found not just that positive feedback was facilitative of intrinsic motivation, but that positive feedback that was self-administered by virtue of being inherent in the task led to an even higher level of intrinsic motivation than positive feedback that was administered by the experimenter. Backerman (1994) found that subjects assigned to random feedback of success and failure displayed increases in intrinsic motivation with success and decreases with failure feedback. Harackiewicz (1979) found that positive feedback increased intrinsic motivation.

Personality variables have also affected these influences. Firstly, need for cognition has no led so much effect. Only on the difficult task, high need for cognition subjects have shown higher task persistence and perceived competence as hypothesized but the low needs for cognition subjects have presented higher levels of task appraisal.

It appears that the low need for cognition subjects were also competent enough to appreciate the difficult task or the high need for cognition subjects probably desired more challenging task requiring more organization. Cohen (1955) found high need for cognition subjects had a greater tendency to structure and organized the information or tasks at hand which may indirectly be related to intrinsic motivation. However, it has not been found that high need for cognition subjects have greater liking for the tasks rather there is lower appraisal for the tasks but more persistence.

Most of the analyses reveals significant contingency X positive negative feedback interactions for both task appraisal and task persistence, contigent positive feedback has resulted in higher scores while non-contingent negative feedback has lead to higher scores. Moreover, contingency of feedback also provides significant interactions for some attributions in the same directions.

Ability attributions has been the most sensitive attribution; it is highest for the negative non-contingent feedback (easy

task) especially for the high achievement orientation subjects and lowest for the contingent negative conditions for both the high an low achievement orientation subjects. But for the difficult task it is highest for contingent positive (high achievement oriented) and lowest for non-contingent negative (high achievement oriented).

Effort Attributions have shown less interactional effects – more differences between positive-negative feedback for the low achievement oriented subjects then for the high achievement oriented subjects and similarly luck attributions have shown more differences for the low achievement oriented between positive-negative feedback especially for the non-contingent condition.

Differences between easy and difficult tasks have also been very clearly obtained. The chi-square analysis reveals that there is significantly higher task persistence in difficult task, but greater perceived competence only for contingent conditions. Besides, higher ability and effort (internal) attributions were found for the easy task especially in the contingent conditions while higher task difficulty and luck attributions (external) were found for the difficult rask. Overall differences do show greater task as had been hypothesized. Yet, task appraisal as a major intrinsic motivation measure has not been affected by the easy difficult differences.

Inter co-relations among the intrinsic motivation measures have also been found. Significant correlations have been found but the relationship is somewhat low. The measures of intrinsic motivation thus may not be highly consistent and may have to be treated as independent manifestations of motivation.

The summary of these findings are as follows:

1. Contingent feedback results in greater task persistence and higher perceived competence but not in more positive task appraisal. It could b that contingency leads to persistence because of perceived competence.
2. Difficult tasks have shown more positive appraisal of task in the non-contingent conditions along with higher perceived competence. It may be that non-contingent feedback makes the difficult task more positively appraised with the mediating factor of perceived competence.
3. Positive feedback has led to higher task persistence while negative feedback in difficult task in one study has resulted in higher perceived competence.
4. Attributions show that contingent negative feedback lowers ability attributions but non-contingent negative feedback increases it. Efforts attributions are more affected by positive-negative feedback than by contingency manipulations.
5. Need for cognition has been found to be related to intrinsic motivation only for the difficult task and low need for cognition subjects have shown more positive appraisal for the difficult task but lower persistence and lower perceived competence.
6. Easy tasks show more internal attributions while difficult task have shown more external attributions and more differences are present for difficult task across contingent-non-contingent conditions.

References :-

1. Backerman, N.D., 1994, The effects of random success of failure feedback &perceived competence on intrinsic motivation of collegiate elite & non elite athletes. Dissertation Abstracts International, 54, 04, 1230A.
2. Boggians, A.K. & Ruble, D.N., 1979, Perceptions of competence and the over justification effect. A Development Study, Journal of Personality & Social Psychology, 37, 1462-1468.
3. Cohen A.R., 1955 An experimental investigation of the need for cognition. Journal of Abnormal and Social Psychology 51, 291-294.
4. Csikszentimihalyi, M., 1975, Beyond boredom and anxiety. San Francisco :Jossey-Bass.
5. Csikszentimihalyi, M., 1978, Attention and the holistic approach to behavior. In K.S. Pope & J.L. Singer (Eds.). The Stream of Consciousness, (pp 335-358), New Your :Plenium Press.
6. Deci, E.L., 1975, *Intrinsic Motivation*. New York : Plenum.
7. Deci, E.L. & Ryan, R.M., 1990, Motivational approach to self integration in personality. In R. Dientsbier (Ed.) Nebraska Symposium on Motivation (Vol 38, PP 237-288) Lincoln University of Nebraska Press.
8. Deci, E.L. & Ryan, R.M., 1985a, Intrinsic motivation and self determination in human behavior. New York :Plenium.
9. Deci, E.L., 1971, Effects of externally mediated rewards on intrinsic motivation. Journal of Personality & Social Psychology, 1971, 18, 105-115.
10. Harackiewicz, J.M. (1979) The effects of reward contingency and performance feedback on intrinsic motivation. Journal of Personality & Social Psychology, 37, 1352-1363.
11. Izard. C., 1977, Human Emotions, New York : Plenum.
12. Karniol, R. & Ross, M., 1977, The effects of performance relevant and performance irrelevant rewards on children's intrinsic motivation. Child Development, 1977, 48, 482-487.
13. Lepper, M. & Greene, D. &Hisbett, R.E., 1973, Undermining children's instrinsicinterest with extrinsic reward. A test of the over justification hypothesis. Journal of Personality and Social Psychology, 28, 129-137.
14. Pretty, G.H. & Seligman, M.E.P., 1983, Affect and the over justification effect. Journal of Personality and Social Psychology, 46, 1241-1253.
15. Reene, J., Cole, S.G. &Olsaon, B.C., 1986, Adding excitement to intrinsic motivation research. Journal of Social behavior and personality, 1, 349-363.
16. Ross, M., 1975, Salience of reward and intrinsic motivation. Journal of Personality and Social Psychology, 1975, 32, 245-254.

17. Sansone,C. &Harackiewicz, J.M. 2000, Intrinsic and extrinsic motivation: The search for optimal motivation and performance. New York : academic.
18. Stipek, 1998, Motivation to learn : From theory to practice. Boston :Allyn Bacon.
19. Tripathi, K.N., Agrawal, A., 1985, Effects of verbal and tangible rewards on intrinsic motivation in males and females. Psychological studies, 30, 1.
20. Weiner, B. &Kukla, A. (1970) Anattributional analysis of achievement motivation. Journal of Personality & Social Psychology, 1970, 15, 11-20.

Summary of Tables

Summary of the mean differences and ratios

Table 1: Showing mean differences and F ratios of contingency & positive negative effects for difficult task.

Variables	Feedback		F1			F2	InteractionF3
	Contin	Non-contin		Positive	Negative		
Task Appraisal	**55.92**	**60.42**	**8.27****	**57.40**	**58.94**	**.97**	**29.78****
Task Persistence	**21.58**	**22.25**	**0.94**	**22.13**	**21.71**	**.37**	**10.75****
Perceived Competence	**54.69**	**59.83**	**10.37****	**54.79**	**59.73**	**9.54****	**6.20****
Ability Attribution	**4.14**	**5.06**	**23.68****	**5.67**	**3.54**	**40.44****	**.77**
Effort Attribution	**5.63**	**4.19**	**21.38****	**5.6**	**3.94**	**38.84****	**.11**
Task Difficulty Attribution	**5.17**	**4.29**	**5.95****	**5.92**	**3.54**	**43.81****	**.12**
Luck attribution	**4.12**	**3.71**	**1.33**	**4.44**	**3.4**	**8.35****	**7.06****

Table 2: Showing mean differences and F ratios of need of cognition for difficult task.

Variables	Need for High	Cognition Low	Interaction	
			F1	F2
Task Appraisal	41.05	20.1	74.65**	2.20
Task Persistence	24.2	21.8	6.04*	2.10
Perceived Competence	57.8	50.05	21.99**	.55
Ability Attribution	4.5	5.5	3.92	.49
Effort Attribution	4.7	5.55	2.17	.32
Task Difficulty Attribution	4.45	5.65	3.78	0.05
Luck Attribution	3.15	4.9	14.58**	1.38

Variables	Chi Square for Easy and difficult task
Task Appraisal	2.91
Task Persistence	7.86*
Perceived Competence	12.12**
Ability Attribution	18.38**
Effort Attribution	11.37*
Task Difficulty Attribution	17.28**
Luck Attribution	7.65*

*Significant at .05 levels
**Significant at .01 level

वर्तमान में संस्कृत की उपयोगिता एवं चुनौतियाँ

डॉ. बी.एस.बामनिया *

शोध सारांश – संस्कृत शब्द 'सम्' उपसर्गपूर्वक 'कृ' धातु से 'क्त' प्रत्यय करने पर निश्पन्न होता है, जिसका अर्थ है– संस्कारित भाषा जब भारत की संस्कृति का जन्म हुआ और मानव बोलने लगा। उसने भाषा सीखी। उसकी वाणी प्रखर होती गई। विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न वाणियों का जन्म हुआ। नई–नई भाषाएँ निकली तब भाषा का जो परिष्कृत रूप सामने आया वह 'संस्कृत' है– सम्यक् कृतं परिष्कृतं इति संस्कृतम्। अनेक भावों को समाये हुए यह संस्कृत शब्द संस्कृति का भी बोध कराता है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने कहा है– 'भारतीय संस्कृति का प्राण आध्यात्मिक भावना है। त्याग से अनुप्रमाणित तपस्या ये पोशित तथा तपोवन में संवर्धित भारतीय संस्कृति का रमणीय आध्यात्मिक रूप संस्कृत भाशा कें ग्रंथों में अपनी सुन्दर झाँकी दिखलाता हुआ सहृदयों के हृदय को बरबस खींचता है'।[1]

प्रस्तावना – संस्कृत आज आम लोगों की बालचाल की भाषा नहीं है। प्राचीनकाल में यह जनसामान्य की भाषा थी, ऐसा विद्धानों का मत है। संस्कृत का साहित्य भी उच्चकोटि का है। संस्कृत साहित्य ने अक्षय संस्कृति और सभ्यता को जन्म दिया है। भारतीय संस्कृति का दायरा पूरे विश्व और मानव जाति को छूता है। मानव जाति के इतिहास में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की परिकल्पना जो कि सम्पूर्ण विश्व को एक सूत्र में बाँधने का कार्य करती है, सर्वप्रथम संस्कृत में ही शब्दबद्ध हुई है।

भारतीय मनीषियों का सम्पूर्ण चिन्तन, मनन, गवेषण तथा लौकिक–अलौकिक सभी अनुभूति इसी संस्कृत वाड.मय में निहित है। भारतीय संस्कृति में वेदों का स्थान गौरवपूर्ण है। जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त जीवन के समस्त संस्कार वेद विहित है। मनुस्मृति में कहा गया है– सर्वज्ञानमयों हि स:2। वेद आप्तवचन में सर्वज्ञानमय है। जीवन में ऐसे कई पहलू है जिसका बोध हमें प्रत्यक्ष अथवा अनुमान के द्वारा नहीं हो सकता है जैसे– पाप–पुण्य, धर्म–अधर्म, मोक्ष, आत्मा का स्वरूप, पुनर्जन्म आदि इनका बोध वेदो से ही होता है। वेद के संबंध मे कहा गया है–

प्रत्यक्षं चानुमानं च शास्त्रं च विविधागमम्।
त्रयं सुविदितं कार्यं धर्मशुद्धिमभीत्सता।।[3]

संस्कृत भाषा समृद्धशाली, विकसित, सबसे प्राचीन, क्लासिकल और विचारों का वहन करने वाली भाषा है। संस्कृत में जो ज्ञान है, वह सागर की तरह गहन और व्यापक है। संस्कृत भाषा में वेदो, ब्राह्मणों, आरण्यकों और उपनिषदों के साथ ही साथ कल्पसूत्र, कामसूत्र, व्याकरण, गणित, विज्ञान, ज्योतिष, खगोल, अर्थशास्त्र, ज्योतिष, युद्धशास्त्र, नाट्यशास्त्र, काव्यशास्त्र, योगशास्त्र, नीतिशास्त्र, वास्तुशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद, राजनीतिशास्त्र, भाषाशास्त्र, दर्शनशास्त्र और अलंकारशास्त्र आदि सभी विषयों का ज्ञान समाहित है। गणित, विज्ञान, ज्योतिष आदि के विभिन्न प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में प्रस्तुत किये गये सिद्धांतो की वैज्ञानिकता एवं प्रमाणिमता को आज पूरा संसार स्वीकार कर चुका है। संस्कृत की लिपि देवनागरी है जो पूर्णत: वैज्ञानिक है। जैसी ध्वनि वैसी लिपि अर्थात् जैसी बोली जाती है वैसे ही लिखि जाती है। अंग्रेजी आदि भाषाओं में यह गुण नहीं है जैसे BUT (बट) PUT (पुट) आदि।

पाणिनी (500 ई.पू.) की अष्टाध्यायी के संबंध में– पाश्चात्य भाषा वैज्ञानिकों ने Best Creation oF human intelligence कहा है। पुरी के पूर्व शंकराचार्य श्री निरंजन देव तीर्थपाद द्धारा लिखित 'वैदिक मेथेमेटिक्स' नामक पुस्तक में 16 सूत्र प्रतिपादित किये गये है, जिसके माध्यम से कम्प्यूटर यंत्र अधिक अच्छी तरह कार्य कर सकता है ऐसा कम्प्यूटर विशेषज्ञों का मत है।

समाज में प्रबुद्ध वर्ग को संस्कृत वाड्.मय से अधिक अपेक्षाएँ है क्योंकि जीवन का सार इसी वाड्.मय में निहित है। हमारे ऋषि मुनियों ने जीवन के किसी भी पक्ष को अछूता नहीं रहने दिया। मनुष्य के प्राप्तव्य चारो लक्ष्यों– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों पुरूषार्थो का सम्यक विवेचन इस साहित्य में मिलता है। महाभारत आदिपर्व में तो स्पष्ट रूप से यह उद्घोषण की गई है–

धर्मे चार्थे च कामें च मोक्षे च भारतर्शभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।[4]

अर्थात जो इसमें है वही अन्यत्र है और जो इसमें नहीं है वह कहीं भी नहीं है। आधुनिक विज्ञान को संस्कृत की देन –

1. चरक – संहिता (700ई.पू.) औषधिविज्ञान का विश्व मे पहला ग्रंथ है।
2. सुश्रूत – संहिता (500ई.पू.) संसार में शल्य चिकित्सा का प्रथम ग्रन्थ है।
3. ज्यामिति का प्रारंभिक विकास बोधायान शुल्व – सूत्र (600ई.पू.) में वर्णित है।
4. शून्य की अवधारणा संस्कृत की देन है।
5. अनन्त की आवधारणा का मूल वृहदारण्यकोपनिशद् है।
   पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात पूर्णमुदच्यते।
   पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावषिश्यते।।[5]
6. आर्यभट्ट (5 वीं शताब्दी) ने अपने आर्यभटीयम् में 'पाइ' की वेल्यू (परिधिव्यास– अनुपात का मूल्य) निर्धारित किया और उन्होने पृथ्वी अपने कक्ष पर घूमती है, सूर्य नहीं। इसे हजारो वर्षो बाद कोपर्निकस एवं केपलर आदि आधुनिक वैज्ञानिक ने उसी रूप में प्रस्तुत किया।
7. कणाद (600ई.पू.) के वैशेषिक सूत्र में परमाणुवाद का सिद्धांत सर्वप्रथम प्रतिपादित है।

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र) भारत

8. वराहमिहिर (500ई.) के वृहत संहिता में भूगोल, वनस्पति, कृशि विज्ञान अभियान्त्रिकी, जन्तु विज्ञान आदि वर्णित है।

संस्कृत विश्वबन्धुत्व का प्रबल संदेशवाहक है इसमें जो जीवन मूल्य उपनिबद्ध है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। समाज में व्यक्तिगत भिन्नता समाप्त कर सम्पूर्ण विश्व को परिवार समझना, यह संस्कृत का ही एक संदेश है–

'वसुधैव कुटुम्बकम'।
कृण्वन्तो विष्मार्यम'।
माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या।

भारत के प्राचीन ज्ञान – वैभव का सरंक्षण एवं राष्ट्रीय एकता की स्थापना में संस्कृत के विशिष्ट योगदान को ध्यान में रखते हुए हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था– 'प्रत्येक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी को संस्कृत अवश्य पढ़नी चाहिए'।

संस्कृत सम्पूर्ण भारत की भाषा है। अन्य भाषाओं का प्रयोग किसी क्षेत्र विशेष में होता है जैसे मलयालम का प्रयोग केरल में, तमिल का प्रयोग तमिलनाडू में इत्यादि। किन्तु संस्कृत का प्रयोग सम्पूर्ण भारत में कश्मीर से कन्याकुमारी तक होता है। सम्पूर्ण भारत में इसके आचार्य, लेखक, कवि आदि है। इतना ही नहीं जर्मनी, इंग्लैण्ड, इण्डोनेशिया, चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका आदि देशों में भी संस्कृत पढ़ी और पढ़ाई जाती है। नेपाल के काठमाण्डू में एक संस्कृत विश्वविद्यालय भी है।

चुनौतियाँ –

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार विद्यालय स्तर पर त्रिभाषा सूत्र का क्रियान्वयन भाषा शिक्षण के लिए अनिवार्य है। उसके अनुसार तीन भाषाओं को पढ़ाया जाना है– हिन्दी, अंग्रेजी एवं एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा। इसमें संस्कृत को स्थान नहीं दिया गया।
2. दिनांक 4 अक्टूबर 1994 को उच्चतम न्यायालय ने निर्णय देते हुए कहा कि तीन माह के अंदर सीबीएसई के पाठ्यक्रम में संशोधन कर संस्कृत को एक एच्छिक विषय के रूप में समावेश किया जाये। किंतु सीबीएसई के द्वारा इसका क्रियान्वयन नहीं किया गया।
3. शासकीय विद्याालयो में कक्षा दशम् तक संस्कृत विषय का पठन पाठन किया जाता है किंतु केन्द्रीय विद्यालयों में कक्षा छठीं से आठवीं तक ही सीमित कर दिया गया है। कक्षा नौवीं एवं दसवी के छात्रो को संस्कृत के अध्ययन से वंचित कर दिये गये है। मेरी दृष्टि में कम से कम कक्षा छठीं से बारहवीं तक संस्कृत को एक अनिवार्य विषय के रूप में पाठ्यक्रम में शमिल करना चाहिए। इसका क्रियान्वयन सभी केन्द्रीय विद्यालयों, नवोदय, राज्य बोर्ड के सभी शासकीय और अशासकीय विद्यालयों में होना चाहिए।
4. रोजगार परक न होने के कारण संस्कृत विषय के प्रति छात्रो का रूझान नगण्य है। इसके लिए ज्योतिष, कर्मकाण्ड आदि व्यावसायिक विषयों में डिप्लोमा पाठ्यक्रम चलाया जाना चाहिए। आवश्यकता को देखते हुए अनुवाद पाठ्यक्रम चलाया जाना चाहिए। योग में भी अंशकालिक डिप्लोमा पाठ्यक्रम होना चाहिए जिससे संस्कृत छात्रों को जीविका के अवसर सुलभ हो सके।
5. अधिकांशत: शासकीय विद्यालयों में संस्कृत शिक्षक का पद स्वीकृत तो किया जाता है परंतु लंबे अरसे से पद भरा नहीं जाता है। ऐसी स्थिति में अन्य विषय के शिक्षक द्वारा संस्कृत का अध्यापन कार्य किया जाता है। फलस्वरूप ज्ञान की जो गुणवत्ता होनी चाहिए वह नहीं हो पाती है।
6. महाविद्याालयों में भी संस्कृत विषय के छात्रो की संख्या अपेक्षाकृत अन्य विषयों से कम होती जा रही है।

परिणामत: यह कहा जा सकता है कि संस्कृत भाषा का जैसा उत्थान होना चाहिए वैसा नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. संस्कृत साहित्य का इतिहास पृष्ठ–2
2. मनुस्मृति 2.7
3. मनुस्मृति 12.105
4. महाभारत– आदिपर्व
5. वृहदारण्यकोपनिशद् 5.1

****

उपनिषद् और वैदिक दर्शन

डॉ. यशवन्त सिंह निंगवाल *

प्रस्तावना – शंकराचार्य ने उपनिषद् को ब्रह्मविद्या माना है। उपनिषद् शब्द उप + नि + सिद् + क्विप् उपनिषद् अर्थ है तत्व ज्ञान के लिए गुरु के पास सविनिय, निष्ठापूर्वक बैठना। शंकराचार्य ने इसके अर्थ बताये है। (1) विशरण- नाश होना, अर्थात् संसार की मूलभूत अविद्या का नाश होना। (2) गति- पाना या जानना, जिसमें ब्रह्म प्राप्ति होती है या उसका ज्ञान होना। (3) अवसादन-शिथिल होना, जिससे मनुष्य के दु:ख या बन्धन शिथिल होते है। इस प्रकार शंकराचार्य ने अविद्या का नाश, ब्रह्म प्राप्ति और उसका ज्ञान तथा दु:ख-निरोध, इन तीनों अर्थों को लेकर उपनिषद् को ब्रह्मविद्या का द्योतक माना है। [1]

उपनिषदों की संख्या के संबंध में विवाद है। इनमें पर्याप्त मतभेद है। साधारणतया उनकी संख्या 108 मानी जाती हैं, जिनमें शंकराचार्य प्रतीण 10 उपनिषद है और द्यूम ने 3 विशेष उपनिषद् माने है, इस प्रकार सामान्यतया 10 से 12 या 13 तक उपनिषदों की संख्या मानी है। कुल 108 उपनिषदों के आधार पर 10 उपनिषदों का संबंध ऋग्वेद से, 19 शुक्ल यजुर्वेद, 12 कृष्ण यजुर्वेद से, 16 सामवेद से तथा 13 अथर्ववेद से हैं। गुजराती प्रिंटिंग प्रेस से बंबई से प्रकाशित उपनिषद्-वाक्य-महाकोश में 223 उपनिषदों के नाम है। शंकराचार्य है- ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्ड, माण्डूक्य, तैतरीय, ऐतरेय, छन्दोग्य एवं वृहदारण्यक ने माने है। [2]

इसी प्रकार उपनिषदों के कार्यकाल के संबंध में भी भिन्न-भिन्न मत है। डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार जो इनमें से प्रारंभिक उपनिषद् थी, वे निश्चित रूप से बौद्धकाल के पहले की है। कुछ उपनिषद् बौद्धकाल के पश्चात् की है। यह संभव है कि उनका निर्माण वैदिक सूक्तों की समाप्ति और बौद्ध धर्म के अविर्भाव के मध्यवर्ती काल में हुआ है। अर्थात् ईसा की छठीं शताब्दी के पूर्व इनका कार्यकाल माना जाता है। प्रारंभिक उपनिषदों का रचनाकाल 1000 ई.पू. से लेकर 300 ईसा पूर्व का माना गया है। कुछ उपनिषदों का भाष्य बुद्ध युग के परवर्ती काल में हुआ है। उनका निर्माण काल 400 से 300 ईसा पूर्व हुआ है। सबसे प्राचीन उपनिषदों में गद्य रचना हुई है। उनमें एतरेय, कौषीतकी, तैतरीय, छन्दोग्य, बृहदारण्यक और केन कतिपय अंश हैं। कठोपनिषद् की रचना परवर्तीकाल में हुई हैं, क्योंकि इस पर योग और सांख्य का प्रभाव दिखाई देता है। माण्डूक्य प्राय: सबसे अर्वाचिन है, जो साम्पदायवादी उपनिषद् माना जाता है, जिसका अर्थ है कि ये उपनिषद् विशिष्ट सम्प्रदाय के अंतर्गत मानी जाती है। मैत्रायणी और श्वेताश्वतर भी परवर्ती काल के है।

उपनिषदों की प्राचीनता के संबंध में अत: साक्ष्य के आधार पर उपनिषदों के कार्यकाल के संबंध में पता लगाया जा सकता है। ईसवीं सन् पूर्व छठीं शताब्दी में पाणिनि का अष्टाध्यायी की रचना की गई थी, जिसमें उपनिषद् का प्रयोग किया गया है।

'जीविकोपनिषदावौम्ये।' [3]

(पाणिनि 1.4.79)

'लुविग' के अनुसार उपनिषदों की रचना आज से तीन सहस्त्र वर्ष पूर्व हुई थी। तिलकजी 'गीता रहस्य' में ईसा से पूर्व 1600 वर्ष उपनिषदों का रचनाकाल माना है।[4]

औरंगजेब के भाई दाराशिकोह द्वारा 1656 में 50 उपनिषदों का फारसी में अनुवाद कराया था, जो 'सिर्रे अकबर' के नाम से लिखा गया था। इस ग्रंथ का हिन्दी में अनुवाद सन् 1720 में किया गया था। सुप्रसिद्ध फ्रेंच यात्री एंक्वेटिल डयूरेन फ्रेंच और लेटिन ने अनुवाद किये थे। ओपनेखत में लेप्टिन में अनुवाद 1801-2 में किया था। राजा राममोहन राय ने मूल ग्रंथों के साथ कुछ उपनिषदों के अंग्रेजी अनुवाद 2816-19 ई. में प्रकाशित किया था। जे.डी. लुंजुईना नामक फ्रेंच विद्धान ने फारसी अनुवाद के आधार पर लेटिन के आधार पर फ्रेंच में रूपांतर किया था। वेबर साहब ने 'इण्डिस्केनस्तुप्टिनल' नामक पुस्तक 17 भागों में लिखी है। सन् 1850 में 14 उपनिषदों का अनुवाद प्रकाशित हुआ है। द्वितीय भाग में 15 से 39 उपनिषद् प्रकाशित हुए है तथा 9 भाग में सिर्रेअकबर के 40-50 उपनिषद् लिपजिक से प्रकाशित हुई। सन् 1882 में इनका जर्मन अनुवाद ड्रेस्डेन से प्रकाशित हुआ है। पंडित मैक्समूलर ने 'सिक्रेड बुक्स ऑफ द ईस्ट' नामक ग्रंथमाला में 12 उपनिषदों का अंग्रेजी अनुवाद सन् 1879 से 84 के बीच प्रकाशित किया। अन्य दो जर्मन विद्धानों ने- एफ.मिशेल ने 1882 म तथा बोट लिंग न 1889 ई. में उपनिषदों के जर्मन अनुवाद किये थे। भारतीय विद्धान 1898 से 1910 के बीच सीताराम शास्त्री तथा गंगानाथ झा ने आठ प्रमुख उपनिषदों का अंग्रेजी अनुवाद किया था। डॉ. राधाकृष्णन् ने रोमन अक्षरों में प्रमुख उपनिषदों का मूल एवं अंग्रेजी अनुवाद किया था, जिसे प्रिंसपल उपनिषदस के नाम से प्रकाशित हुआ था।

उपनिषदों के रचयिताओं के जीवन के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है। उनके वक्ताओं या संगृहीतों के विचार मात्र उपस्थित हैं, जिनमें महिदास, ऐतरेय, रैक्व, शांडिल्य, सत्यकाम, जैवलिख श्वेतकेतु, भारद्धाज, गार्याय्रण, प्रत्तर्दन, बालाकि, अजातशत्रु, वरुण, याज्ञवक्ल्य, गार्गी तथा मैत्रेयी। अनेक विचारकों ने उपनिषदों पर भाष्य लिखे हैं, जिनमें शंकर, रामानुज, मध्व, आदि।

उपनिषद्-दर्शन – प्रो. जे.एस. मैकेंजी के अनुसार पहले पहले विश्व-निर्माण की संबधीं सिद्धान्त का सर्वप्रथम उपक्रम है। सत्यान्वेषण ही उद्निषदों की लक्ष्य है। शिष्य पूछना चाहता है कि 'किसकी इच्छा से प्रेरित होकर मन अपने अभिलषित' प्रयोजन की ओर बढ़ता है ? किस आज्ञा से

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र) भारत

प्रथम प्राण बाहर आता है? उसकी इच्छा से हम वाणी बोलते है? कौन देव आँख या कान को प्रेरणा देता है ?

कठोपनिषद् कहता है कि आत्मा की सत्ता इसी जीवन तक रहती है या जीवन के बाद भी उसका अस्तित्व बना रहता है ? आदि का विवेचन किया गया है। आत्मा नित्य है। वह न मरता है न अवस्थादि कृत दोषों को प्राप्त करता है। यह शरीरधर्मा मृत्यु के वश में है, किन्तु वह अविनाशी है।

ब्रह्म तत्व सगुण और निगुर्ण दोनों रहता है। प्राकृतिक जगत् की सारी शक्तियों को यथार्थ रूप में ब्रह्म की ही शक्ति कहा गया है। ब्रह्म सत्य तथा ज्ञान स्वरूप है। वह रसरूप है। ब्रह्म ही से प्राणी उत्पन्न होते हैं, जीवित रहते है तथा अंत में उसमें प्रविष्ट हो जाते है। ब्रह्म को अक्षर, अविनाशी और मूलतत्व कहा गया है। वह आनंदस्वरूप, अजर, अमर और प्रकाशमान है।

बृहदारण्क कहता है कि आत्मा ही ब्रह्म है, वह अजन्मा है, अजर, अमर, अमृत और अभय है।

उपनिषद् नेति नेति (अर्थात् यह नहीं) कह कर ब्रह्म का स्वरूप प्रकट करने में असमर्थ है। वह अवाड्गमनसोगोचर है। ब्रह्म सर्वव्यापी है, सचराचर वप्त है। समस्त जीवों में वह विद्यमान है। वह कर्मो का साक्षी है। चेतन, अद्धिती और निराकार है। ब्रह्म सभी इन्द्रियों की पहुँच से परे हैं। उसकी सत्ता में ही मन और इन्द्रियाँ कार्य करती हैं।

'एकोऽवर्णो बहुधा शक्तियोगाद्।
वर्णान् अनेकान् निहातार्थो दधाति ।।'[5]
(श्वेता.4.1)

'अविद्यया मृत्युं तीत्वा विद्याऽमृतश्नुते ।' [6]
(ईश.11)

भारती दर्शन पुनर्जन्म को स्वीकार करता है। मनुष्य कर्मो के अनुसार विभिन्न योनियों में जन्म लेता है।

'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य चा ।'[7]
(गीता 2.27)

जिसका जन्म निश्चित है उसकी मृत्यु भी निश्चित है।

उपनिषदों ने माना है कि मोक्ष ही मानव जीवन का लक्ष्य है। संसार के बंधनों से छूट कर मोक्ष पाना ही जीवन का परम लक्ष्य है। ज्ञानाग्नि से ही सारे कर्म नष्ट होते हैं।

'ज्ञानाग्नि: सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा ।' [8]
(गीता 4.57)

वेदों में ब्रह्म को ही सृष्टि का कर्ता, धर्ता और संहर्ता बताया गया है। विश्व की सर्वोच्च सत्ता ब्रह्म ही है। वह सारे संसार में ओतप्रोत होकर विद्यमान है।

यजुर्वेद के अनुसार ब्रह्म ही सृष्टि की सर्वप्रथ सत्ता है वह सत् और असत् का कारण है।

'ब्रह्मजज्ञानं प्रथमम्।
सत्तश्च योनिम् असतश्च वि ब: ।।'[9]
(यजु. 13.3)

ब्रह्म ही चर और अचर सब में विद्यमान है।

कठोपनिषद् के अनुसार संसार अनित्य है। संसार के भोग विलास क्षणिक है। धन से आत्मिक शांति नहीं मिलती।

'न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्य ।' [10]
(कठो. 1.1.27)

आत्मा अजर और अमर है। न कभी उत्पन्न होता है और न कभी मरता है। यह सूक्ष्म और विराट् से विराट् है।

'न जायते म्रियते वा कश्चित्' [11]
(कठो.1.2.18)

'अणोरणीयान महतो महीयान्।' [12]
(कठो. 1.2.20)

वह आत्मा ज्ञान-विज्ञान-मेघा आदि से प्राप्त नहीं है। आत्मसमर्पण से ही प्राप्त है। भक्त पर उसकी कृपा होती हैं, उसे आत्मदर्शन होता है।

'नायमात्मा प्रवचेन लभ्य्.. यमेवैषे वृणुते ते लभ्य:।'[13]
(कठो. 1.2.22)

जैसे मकड़ी अपना जाल बनाती है और फिर खा लेती है। उसी प्रकार परमात्मा से सृष्टि होती है और फिर उसी में लीन हो जाती है।

'यथोर्णनाभि: सृजते गृह्नते च।।' [14]
(मुण्डको. 1.1.70)

ब्रह्म की ज्योति से ही सूर्य आदि में प्रकाश होता है। सूर्य चंद्र, तारा आदि में अपना प्रकाश नहीं हैं। उसी ब्रह्म के प्रकाश से सब में प्रकाश है।

'तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति।'[15]
(यमुण्डको 2.2.10)

'सर्वं खल्विदं ब्रह्म।' [16]
(छान्दोग्य 3.14.1)

ज्ञानवल्क्य ने मैत्रेत्री संवाद द्धारा स्पष्ट रूप से कहा था कि मुझे भौतिक सम्पत्ति नहीं चाहिए। सारी सम्पत्ति भी मिल जाए तो भी मैं अमर नहीं हो सकूंगी। धन से अमरत्व नहीं मिलेगा अत: मुझे ब्रह्मज्ञान दीजिए।

'अमृतत्वस्य तु नाऽऽशास्ति वित्तेन।।' [17]
(बृहद्. 4.5.3)

सर्वोत्तम उपदेशों में यह तथ्य है कि- हे परमात्मा ! हमें सत्य से असत्य की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलो।

'असतो मा सद् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतं गमय।।' [18]
(बृहद्. 1.3.28)

आत्मा ही ब्रह्म है और ही सब कुछ है।

इस प्रकार इस लेख में उपनिषद् की जानकारी के साथ सार रूप में उपनिषदों का सार ग्रहण भी किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कठोउपनिषद, शाड्करभाष्य की प्रस्तावना।
2. डॉ. कपिलदेव द्धिवेदी- वैदिक साहित्य एवं संस्कृति।
3. पाणिनि 1.4.79
4. तिलक/गीतारहस्य/550-52
5. श्वेता.4.1
6. ईश.11
7. गीता 2.27
8. गीता 4.57
9. यजु. 13.3
10. कठो. 1.1.27
11. कठो. 1.2.18
12. कठो. 1.2.20
13. कठो. 1.2.22
14. मुण्डको. 1.1.70
15. मुण्डको 2.2.10
16. छान्दोग्य 3.14.1
17. बृहद्. 4.5.3
18. बृहद्. 1.3.28

श्रीमद्भागवत में 'माया' की अवधारणा

डॉ. यशवन्त सिंह निंगवाल *

प्रस्तावना – श्रीमद्भागवत में 'माया' के स्वरूप की चर्चा करते हुए राजा निमि ने स्वयं भगवान् विष्णु से 'माया' के संबंध में पूछा था कि माया स्वयं मायावियों को मोहित कर देती है। उसे कोई भी पहचान नहीं सकता। उत्तर में योगीश्वर अन्तरिक्ष जी ने कहा था कि 'माया' स्वरूपत: अनिर्वचनीय है। अत: जब कोई घटित होता है तब उसके द्वारा ही उसका निरूपण किया जा सकता है। भगवान् इस 'माया' को परिभाषित करते हुए कहते है कि– आदि पुरुष परमात्मा जिस शक्ति से संपूर्ण भूतों के कारण बनते है और उनके विषय भोग तथा मोक्ष की सिद्धि के लिए अथवा अपने उपासकों को उत्कृष्ट सिद्धि के लिए स्वनिर्मित पंचभूतों के द्वारा नाना प्रकार से देव, मनुष्य आदि के शरीरों की सृष्टि करते है, उसी को माया कहते है।

उक्त परिभाषा से स्पष्ट होता है कि परमेश्वर स्वयं जिस शक्ति से संपूर्ण भूतों का परिचालन करता है, वही विषय भोग और मोक्ष का कारण है। पंचमहाभूतों के द्वारा देव और मनुष्य की सृष्टि करते है।

एभिर्भूतानि भूतात्मा महाभूतैर्महानुज। ससर्जेच्चावचान्या द्य: स्वमार्तात्मप्रसिध्ये।।[1]

(भाग. 11.3.3)

परमात्मा की इस निज शक्ति से पंचभूतों द्वारा बनाये प्राणी शरीरों में प्रवेश करके मन रूप में पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कर्मेन्द्रियों से विषयों का भोग करते है। तब स्वयं आत्मा के रूप में ही अपना स्वरूप मानकर आसक्त हो जाता है। इस प्रकार वह आत्मा ही स्वयं अपने में आसक्त होकर शुभाशुभ कर्म के फल को भोगने लगता है और शरीरधारी होकर इस संसार में भटकने लगता है। इसे ही भगवान् की माया कहते है। इस प्रकार स्वयं परमात्मा ही अपने पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कर्मेन्द्रियों के द्वारा दस भागों में विभक्त होकर अपने ही शरीर में स्थित आत्मा से आसक्त हो जाता है। वह परमात्मा ही अपने ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के द्वारा शुभ और अशुभ कर्म का फल भोगता है। स्वनिर्मित पंचभूतों से ही भिन्न–भिन्न शरीरों की सृष्टि करता है।

इस प्रकार यह परमात्मा ही अपनी शक्ति से परिचालित होकर अनेक रूपों में स्वयं को ही प्रकट करता है। अपने ही स्वरूपों का विस्तार करता है और प्रलय तक वह जन्म और फिर मृत्यु को विलीन भी कर देता है।

कर्माणि कर्मभि: कुर्वन् सनिमित्तानि देहभृत्। तत्तत् कर्मफलं गृह्नन् भ्रमतीह सुखेतरम्।। 2 (भाग.11.3.6)

अब वह कर्मन्द्रियों से सकाम कर्म करता है और उसके अनुसार शुभ कर्मफल सुख और अशुभ कर्म का फल दु:ख भोग करने लगता है और शरीरधारी होकर इस संसार में भटकने लगता है। यह भगवान् की माया है।

पंचमहाभूतों के प्रलय का जब समय आता है तब 100 वर्षों का भयानक सूखा पड़ता है। वर्षा नहीं होती। उष्मा बढ़ जाती है तीनों लोक तप जाते है। शेष भाग से आग की लपटे लगती हैं। बाद में विराट् ब्रह्माण्ड डूब जाता है। वायु पृथ्वी की गंध खीच लेती है। जल जाता है। तमस अहंकार के लीन होता है। इन्द्रियाँ और बुद्धि, राजस अहंकार में लीन होते है।

यह सृष्टि प्रलय का प्रसंग है। तब परमात्मा पुन: सब कुछ वस्तु जगत् में विलीन हो जाता है।

ऋग्वेद में 'माया' का वर्णन भिन्न–दृष्टि से किया जाता है। माया के द्वारा उसकी विभिन्न शक्तियों का वर्णन किया है। माया शब्द प्रयोग शक्ति या सामर्थ्य के लिए हुआ है।

भागवतकार ने भी माया को शक्ति के रूप में ही सर्वप्रथम जाना है। आदि–पुरुष परमात्मा ने जिस शक्ति के संपूर्ण भूतों का कारण होता है। अर्थात् परमात्मा की शक्ति ही माया है। ऋग्वेद में मित्र और वरुण की बड़ी माया है।

मही मित्रस्य तरुणस्य माया। 3

(ऋग्वेद 3.67.7)

माया शब्द का प्रयोग छल–कपट के अर्थ मेंभी हुआ है। इन्द्र ने असुरों के छल–प्रयोगों को न किया।

अदे वीरसहित माया:। 4

(ऋग्वेद 7.95.5)

हस्त–शिल्प एवं कला–कौशल के अर्थ में भी माया शब्द का प्रयोग मिलता है। श्रेष्ठ–शिल्पी त्वा अनेक हस्तशिल्प जानता है। **त्वा माया वेत्** (ऋग्वेद 10.53.9) नकली स्वरूप बनाने आदि को भी माया कहा गया है। इन्द्र के विभिन्न रूप–धारण को माया नाम दिया गया है।

मायेत् सा ते.। 5

(ऋग्वेद 10.54.2)

अविद्या या अज्ञान के आवरण को भी माया माना गया है। मनुष्य इस अज्ञान आवरण के कारण परमात्मा के स्वरूप का दर्शन नहीं कर पाता है। तत्व ज्ञान के द्वारा जब यह अविद्या का आवरण हट जाता है तभी ईश्वर का साक्षात्कार होता है। यजुर्वेद में इस अविद्या के आवरण को सुनहरी ढक्कन बताते हुए रूपक के वर्णन में किया गया है कि ईश्वर रूपी सत्य का मुख भौतिक चकाचौंध रूपी सुनहरी आवरण से ढका हुआ है। जब तक अज्ञान रूपी सुनहरी आवरण हट जाता है, जब सत्य–स्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार हो पाता है।

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र) भारत

हिरण्मयेन पात्रेण सत्य स्या पिहितं मुखम्। 6
(यजु. 40.17)

ऋग्वेद में इस अविद्या के आवरण को ही सब पापों का मूल बताया गया है और कहा गया है कि मनुष्य इसी के कारण दुर्व्यसनों में फँसता है। सुरापान आदि करता है, झूठ बोलता है और अपनी इच्छा के विरुद्ध अनेक दुष्कर्म करता है।

न स स्वो दक्षो अनृतस्य प्रयोता। 7 (ऋग्वेद 9.86.6)

अतएव कठ-उपनिषद् में स्वरूप से कहा गया है कि ईश्वर के साक्षात्कार के लिए आवश्यक है कि अविद्या या माया का आवरण हटाया जाये। जो दुष्कर्म करने वाले है, जो अशांत चित्त है और जिनका मन नियंत्रण में नहीं है, वे ईश्वर का साक्षात्कार नहीं कर सकते है।

नाविरतो दुश्चरितात्। 8
(कठ उप. 1.2.23)

अद्वैत-विदान्त दर्शन माया के संबंध में अलग विवरण उपलब्ध होता है। यहाँ वेदान्त दर्शन ने सर्वप्रथम कुछ प्रश्न उपस्थित किये गये है। जैसे कहा गया है कि निर्विशेष निर्लक्षण ब्रह्म से सविशेष लक्षण जगत् की उपत्ति क्यों कर हुई? एक ब्रह्म से नानात्मक जगत् की सृष्टि कब से हुई? इस हेतु वेदान्त दर्शन ने 'माया' के स्वरूप को जानने की आवश्यकता पर बल दिया है। शंकराचार्य ने माया तथा अविद्या शब्दों का प्रयोग समानार्थक रूप में किया है, परन्तु परवर्ती दार्शनिकों ने इन दोनों शब्दों में सूक्ष्म अर्थ भेद की कल्पना की है। परमेश्वर में प्रवृत्ति नहीं होती और न वह जगत् की सृष्टि करता है। न अविद्यात्मिका बीज शक्ति अव्यक्त कहीं जाती है। यह परमेश्वर में आश्रित होने वाली महासुप्तिरूपिणी है जिसमें अपने स्वरूप को न जानने वाले संसारी जीव शयन किया करते है।

शंकराचार्य के अद्वैतदर्शन के अन्तर्गत 'माया' के स्वरूप का विवेचन भागवत्कार से मिलता-जुलता है, जिसे भागवत्कार आदि-पुरुष परमात्मा जिस शक्ति से संपूर्ण भूतों के लक्षण बनते है। स्वनिर्मित पंचभूतों के द्वारा नाना प्रकार के देव, मनुष्य आदि शरीरों की सृष्टि करते है। उसी को माया कहते है। अर्थात् परमात्मा की शक्ति ही 'माया' के स्वरूप में व्यक्त होती है। यह बात अलग है शंकराचार्य कहते है- माया रहित होने पर परमेश्वर में प्रवृत्ति नहीं होती और न वह जगत् की सृष्टि करता है और न ही वह बीजशक्ति अव्यक्त कही जाती है। यह परमेश्वर में आश्रित होने वाली महासुप्तिरूपिणी है, जिसमेंअपने स्वरूप को न जानने वाले संसारी जीव शयन करते है।

त्रिगुणात्मिका माया ज्ञान विरोधी भाव रूप पदार्थ है। माया न सत् है न असत् है। इन दोनों से विलक्षण होने के कारण उसे अनिर्वचनीय कहा गया है। भागवत्कार ने भी कहा है कि भगवान् की माया स्वरूपता अनिर्वचनीय है। जगत् के पदार्थों का रूप दो प्रकार का होता है-सत् या असत्।

ब्रह्म का ज्ञान होने पर माया ज्ञान बाधित हो जाता है। ब्रह्मज्ञानी को माया कभी नहीं होती। केवल अज्ञानी ही माया के पचड़े में फिरता रहता है।

माया की विभिन्न कल्पनाएँ - शंकर तथा रामानुज दोनों आचार्यों के द्वारा माया व्याख्यात है, किन्तु दोनों की माया विषयक कल्पना नितान्त भिन्न है। रामानुज के अनुसार सृष्टि वास्तविक और सच्ची है। इसीलिए वे माया को ईश्वर की वास्तविक सृष्टि करने की शक्ति मानते है। ईश्वर की शक्ति माया है। ईश्वर की 'माया' शक्ति के कारण आकाश, जल, पृथ्वी आदि पदार्थ उत्पन्न होने की धारणा उपस्थित होती है। इस प्रकार माया के विस्तार से भौतिक जगत् का ही विस्तार होता है। यह सब कुछ माया का विलास है।

ब्रह्म के शुद्ध स्वरूप को माया अपने आवरण से ढक लेती है। उसकी विशेष शक्ति के कारण ही आकाशादि तत्वों का प्रपंच व्याप्त होता है, जिस प्रकाश रस्सी के उत्पन्न होने के भ्रम ही साँप पैदा होने का भ्रम बलवती हो जाता है। ठीक उसी प्रकार माया भी आच्छादित आत्मा में इस शक्ति के बल पर आकाशादि जगत् प्रपंच को उत्पन्न करती हैं।

अद्वैत सिद्धान्त में आवरण और विक्षेप के संबंध में यह तथ्य है कि आवरण याने असली स्वरूप पर पर्दा डालना और विक्षेप याने उस पर दूसरी वस्तु का आरोप करना। इन दोनों शक्तियों के कारण ही माया ही ब्रह्म से जगत् की उत्पत्ति का कारण बनती है। ईश्वर के लिए माया केवल इच्छा मात्र है। वह इससे प्रभावित नहीं होता, किन्तु माया के कारण ईश्वर भिन्न-भिन्न रूपों में परिलक्षित होता है। इस प्रकार भ्रम के कारण ही नाना रूप सृष्टि प्रतीत होती है। इसलिए शंकराचार्य ने इसे ही अविद्या कहा है।

श्रीमद्भागवत में ही ईश्वर भी शक्ति के कारण दृश्यमान् जगत् की कल्पना की गई है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. भागवत 11.3.3
2. भागवत 11.3.6
3. ऋग्वेद 3.67.7
4. ऋग्वेद 7.95.5
5. ऋग्वेद 10.54.2
6. यजु. 40.17
7. ऋग्वेद 9.86.6
8. कठ उप. 1.2.23

****

चम्पू काव्य का उद्‌भव और विकास

डॉ. मुकाम सिंह भंवर *

शोध सारांश – सामान्यतया माना जाता है कि संस्कृत साहित्य में चम्पूकाव्य की धारा के विकीर्ण–विन्यस्त वीज विभक्त रूप से विकसित होते रहे है। उनकी सुदीर्घ पूर्व परम्परा है, परन्तु जिसे आज चम्पूकाव्यधारा स्वीकार किया जाता है। उसे उत्कृष्ट रूप के समान एक प्रबन्धात्मक दशा दसवीं शताब्दी के पूर्व तक प्राप्त नहीं हो सकी थी परन्तु संस्कृत साहित्य में सर्वप्रथम उपलब्ध चम्पूकाव्य – नलचम्पू है। इस परम्परा में 15 वीं शताब्दी से लेकर 18 वीं शताब्दी तक चम्पूकाव्यों का सर्वाधिक सृजन हुआ और आज भी चम्पूकाव्यों की रचना निर्बाध रूप से हो रही है।

प्रस्तावना – संस्कृत साहित्य के मुख्य रूप से तीन विधाओं में विभाजित किया गया है जिससे पद्यकाव्य, गद्यकाव्य, चम्पूकाव्य। उक्त विधाओं में चम्पूकाव्य का संस्कृत साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है एवं इसका उद्‌भव वैदिक काल से हो चुका था।

चम्पू शब्द का उद्‌भव – स्त्री प्रत्यन्त चुरादिगण की चपिगत्यर्थक धातु से 'उ, प्रत्यय लगाकर चम्पू शब्द की निष्पत्ति होती है। जिसके आधार पर 'चम्पतीति इति चम्पू'। चम्पूयति सदैव गमयति योजयति गद्य–पद्ये इति चम्पू: अर्थात् जिस रचना में गद्य तथा पद्य सहायोगपूर्व प्रयुक्त हो, वह चम्पू है। हरिदास भट्टाचार्य के अनुसार गद्य–पद्य मिश्रित जो शैली सहृदय पाठकों के हृदय को चमत्कृत करते हुए उन्हें विस्मित करने के साथ–साथ पवित्र और प्रसन्न करने की अद्‌भुत क्षमता से परिपूर्ण होती है, वह चम्पू के नाम से जानी जाती है –

'चमत्कृत्य पुनाति सहृदयान विस्मयीकृत्य प्रसादयति इति चम्पू: ।'

चम्पूकाव्य का उल्लेख करने वाले सर्वप्रथम आचार्यदण्डी है, जिन्होंने इस काव्य विद्या के गद्य– पद्यमय वैशिष्ट्य की ओर संकेत करते हुए कहा –

मिश्राणि नाटकादीनि तेषामन्त्रय विस्तर: ।
गद्यपद्यमयी काचिच्चम्पूरित्यपि विद्यते ।।

बारहवी शताब्दी के हेमचन्द्राचार्य ने अपने काव्यानुशासन नामक लक्षण ग्रन्थ में अंक तथा उच्छ्वास होना अनिवार्य है। परन्तु कतिपय चम्पूकाव्य ऐसे भी प्राप्त हुए है जिसमें अंक तथा उच्छ्वास नहीं है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य दर्पण के षष्ठ परिच्छेद में कहा है –

गद्य पद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते।
गद्य पद्यमयी वाणी चम्पूरित्यभिधीयते ।।

गद्य–पद्य तथा मिश्र तीन शैलियों में रचनाओं का आरम्भ मैत्रायणी तथा कठ तीनो संहिताओं में यह शैलियाँ मुक्त रूप से प्रयोग की गई है। ऐतरेय ब्राह्मण का 'हरिश्चचन्द्रोपाख्यान' मिश्रित शैली का उत्कृष्टतम उदाहरण है

'हरिशचन्द्रो ह वैधस, ऐक्ष्वाको राजऽपुत्र आस। अस्त्र ह शतं जाया वभूव। तासु पुत्रं न लेभे। तस्यह पर्वतनारदौ ग्रह ऊषतु:। स ह नारदं पप्रच्छ इति।'

मिश्र शैली की उपर्युक्त तीन विधाओं से सर्वधा स्वतन्त्र एक चम्पूकाव्य धारा विकसित हुई है। हरिशेण समुद्रगुप्त प्रशस्ति में मिश्रकाव्य के इस काव्य भव्य रूप का दर्शन होता है। न केवल शैली, अपितु वर्णन विस्तार की दृष्टि से भी यह प्रशस्ति चम्पूकाव्य से लेकर प्रथम एवं भव्यतम उदाहरण प्रस्तुत करती है। द्वितीय शताब्दी से षष्ठी शताब्दी तक गद्य साहित्य को गाढबद्ध एवं अलंकृत बनाने की प्रवृत्ति उत्तरोतर विकसित हुई और इस प्रकृति का दर्शन उस समय के प्राप्त शिलालेखों में भी होता है। यद्यपि बाणभट्टकृत कादम्बरी आदि सर्वोत्तम गद्यकावय इस समय तक प्रकाश में आ चुके थे।

ईसा की दशम शताब्दी के पूर्वार्द्ध से पूर्व तक यद्यपि कालिदास, सुबन्धु, अश्वघोष, भारवि, दण्डी, माघ तथा रत्नाकर आदि सुप्रसिद्ध कवि तथा अन्य नाटककार अपनी रचनाएँ कर चुके थे, परन्तु चम्पूकाव्य का कोई उत्कृष्ट ग्रन्थ सामने न आ सका था। विविध दान–पत्र शिलालेख आदि मिश्रशैली के मुक्तक रूप को ही अधिक स्पष्ट करत रहे। सप्तमी शताब्दी के चन्द्रगिरि का शिलालेख चम्पूकाव्य के उस पूर्णरूप को उपस्थित करता है जिसका जैन चम्पूकाव्यों जीवन्धरचम्पू, पुरूदेव आदि में अपनाया गया है।

चम्पूकाव्य का सबसे प्राचीन उपलब्ध चम्पू त्रिविक्रमभट्ट द्वारा विरचित 'नलचम्पू' है। अत: इसे प्रथम सुमन कहा जा सकता है। चम्पूकाव्य के मूल स्त्रोत रामायण, महाभारत, भागवत, पुराणों आदि रहे है। कुछ किंवदन्तियों अथवा काल्पनिक कथाओं पर निर्भर है। इस विवेचन से स्पष्ट ज्ञात होता है कि चम्पूकाव्य परम्परा सदियों जनमानस कों प्रभावित करती रही है। उसका विपुल साहित्य अनेकरूपता भी उद्घाटित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. काव्यादर्श – आचार्यदण्डी
2. साहित्यदर्पण – आडचार्य विश्वनाथ
3. चम्पूकाव्य का आलोचनात्मक एवं ऐतिहासिक अध्ययन

****

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

हिन्दी – उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचन्द का योगदान

डॉ. शाजिया खान *

प्रस्तावना – गांधीजी ने भारतीय समाज को सुधारने के लिये जो कुछ कहा उसे सत्यं–शिवं–सुन्दरं के रूप में हिन्दी गद्य साहित्य में साकार रूप प्रदान करने वाला, गांधीजी को जैसी भाषा प्रिय थी उसी भाषा को लिखने वाला यदि कोई साहित्यकार हुआ तो वे प्रेमचन्द ही हैं। नि:संदेह वे गांधीवादी विचारधारा के अनन्य उपासक थे। गांधीजी की भाँति प्रेमचन्द ने भी भारत की जनता को हृदय के नेत्रों से देखा था। गांधीजी ने भी राजनीति और समाज सुधारों का गठबन्धन कर दलित जातियों के उद्धार, मादक द्रव्यों के निषेध, अस्पृश्यता निवारण, स्त्रियों की उन्नति, प्रौढ़ शिक्षा आदि पर बल देते हुए अपना अठारह सूत्रीय रचनात्मक कार्यक्रम प्रस्तुत किया। प्रेमचन्द पर उनका भी प्रभाव पड़ा। भारतीय नारी को घर की कारा से निकालने का श्रेय गांधीजी के आन्दोलनों को ही है। प्रेमचन्द के नारी पात्र भी इसी जागृति के प्रतीक है। प्रेमचन्द का उपन्यास साहित्य अपने युग की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक प्रवृत्तियों का पूर्ण प्रतिनिधित्व करता है; वह युग का दर्पण है। इसीलिए कहा गया है कि यदि प्रेमचन्द युग के भारत का इतिहास नष्ट भी हो जाय, तो भी प्रेमचन्द साहित्य द्वारा उसका पुनर्निर्माण हो सकता है।

प्रेमचन्द को केन्द्र मानकर हिन्दी उपन्यास के विकास को निम्न युगों में विभाजित किया जा सकता है– 1. प्रेमचन्द के पूर्ववर्ती उपन्यास, 2. प्रेमचन्द युगीन उपन्यास, 3. प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास।

प्रेमचन्द के पूर्ववर्ती उपन्यास – जासूसी, तिलिस्मी, ऐय्यासी उपन्यास –

प्रेमचन्द के पूर्व का उपन्यास साहित्य जासूसी, तिलस्मी, ऐय्यारी और काल्पनिक रोमांस से युक्त होने के कारण मानव के यथार्थ जीवन से बहुत दूर था। ये उपन्यास कौतूहल की सृष्टि कर केवल मनोरंजन के साधन थे। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों के द्वारा युगान्तर उपस्थित किया। यदि उपन्यास को मानव जीवन का महाकाव्य और मानव चरित्र का चित्रण माना जाये, तो प्रेमचन्द के पूर्व का हिन्दी–उपन्यास इससे दूर था। इस दृष्टि से प्रेमचन्द को ही हिन्दी का मौलिक उपन्यासकार माना जा सकता है। प्रेमचन्द से पूर्व हिन्दी का उपन्यास साहित्य अपनी शैशवास्था में था और वह विकास की दिशा खोज रहा था। प्रेमचन्द उपन्यास साहित्य में युगान्तर लेकर अवतरित हुए। प्रेमचन्द के परवर्ती उपन्यासकारों ने किसी न किसी रूप में प्रेमचन्द को अनुकरण किया।

आज हिन्दी उपन्यास साहित्य विकसित होकर पुष्ट हो चुका है। उसमें शैली–शिल्पा और विषम वस्तु की दृष्टि से नये–नये प्रयोग हुए है और असंख्य उपन्यास लिखे गये हैं, परन्तु हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में प्रेमचन्द जैसा युग दृष्टा उपन्यासकार नहीं हुआ। प्रांरभ से लेकर अब तक हिन्दी उपन्यास–जगत में प्रेमचन्दजी उपन्यास सम्राट का पद पाने के अधिकारी है।

प्रेमचन्दयुगीन उपन्यास एवं प्रेमचन्द का उपन्यास क्षेत्र में स्थान, महत्व और **योगदान–** प्रेमचन्द के उपन्यास भारत के राजनीतिक और सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं। उनके उपन्यासों में आदर्शोन्मुख यथार्थ के चित्रण द्वारा जीवन संघर्ष और चेतन जगत का सुन्दर चित्रण हुआ है। उनका 'गोदान' भारत के समाज का यथार्थ और पूर्ण चित्र उपस्थित करने वाला महाकाव्यात्मक उपन्यास है। प्रेमचन्द का महत्व स्पष्ट करते हुए कहा गया है –

'गोदान' के रचयिता प्रेमचन्दजी हिन्दी के वर्तमान और भविष्य के निर्देशक हैं।'

'प्रेमचन्द उस शिखर के समान है, जिसके दोनों और पर्वत के दोनों भागों के उतार–चढ़ाव है।'

प्रेमचन्द और उनके समकालीन अन्य उपन्यासकारों का मुख्य लक्ष्य मानव जीवन का चित्रण करना था। प्रेमचन्द के यसेवा सदन', यप्रेमाश्र', 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि', 'गबन', 'गोदान', आदि मौलिक उपन्यासों में जीवन और समाज की अभिव्यक्ति बड़ी सफलता के साथ हुई है। इन उपन्यासों में वस्तुचित्रण, कथोपकथन आदि के प्रौढ़तम रूप में दर्शन होते हैं। इनके माध्यम से निम्न और मध्यम वर्ग के सुन्दर चित्र सामने आये और साथ ही राष्ट्रीय भावना को भी बल मिला आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने प्रेमचन्द के महत्व को व्यक्त करते हुए लिखा है।

'प्रेमचन्द शताब्दियों से पददलित, अपमानित उपेक्षित कृषकों की आवाज थे। पर्दे में कैद पग–पग पर लांछित और असहाय नारी जाति की महिमा के जबर्दस्त वकील थे। गरीबों और बेबसो के प्रचारक थे। अगर आप समस्त उत्तर भारत को चाहते हैं तो प्रेमचन्द से उत्तम परिचायक आपको नहीं मिल सकता। 'झोपड़ियों से लेकर महलों तक आपको इतने ही कौशलपूर्ण और प्रामाणिक भाव से कोई नहीं ले जा सकता।'

प्रेमचन्दोत्तर उपन्यास – प्रेमचन्द ने जिस क्षेत्र में कार्य किया था, उसमें उनके उत्तराधिकारी क्रम का आरंभ हुआ। प्रकाशचन्द्र गुप्त ने प्रेमचन्द के उत्तराधिकारी उपन्यासकारों की स्थिति को स्पष्ट करते हुए लिखा है – प्रेमचन्द की किसान परम्परा को तजकर हिन्दी उपन्यास अनेक नई दिशाओं की ओर बढ़ा, तत्व और रूप दोनों की दृष्टि से एकधारा निम्नवर्ग के जीवन, उसकी निराशाओं और असफताओं को अपनाती है। इसके प्रमुख परिचायक जैनेन्द्र, भगवती प्रसाद बाजपेयी, 'अश्क' आदि हैं। दूसरी धारा व्यक्तिवादी, अहंवादी आदि नाशवादी दृष्टिकोण को अपनाती है। इसके प्रतिनिधि भगवतीचरण वर्मा 'अज्ञे' आदि हैं। एक धारा मनोविश्लेषणशास्त्र के प्रभाव से कुण्ठित अतृप्त वासनाओं की अभिव्यक्ति करती है। इसके प्रमुख प्रतिनिधि पण्डित इलाचन्द जोशी है। एक अन्य धारा भारतीय श्रमजीवी वर्ग की छिपी शक्तियों से सम्बन्ध जोड़ती है और भविष्य की धरती को संजोती है। इसके प्रमुख प्रतिनिधि यशपाल, रांगेय राधव, पहाड़ी, भगवतशरण उपाध्याय नागार्जुन आदि हैं।

प्रेमचन्द की उपन्यास जगत को देन – प्रेमचन्द का उपन्यास सृजन सन् 1902 में प्रांरभ हो जाता है। इस समय आपकी आयु केवल 20 वर्ष की थी। आपके टैगोर की कहानियों के अनुवाद उर्दू पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए।

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, पंढाना, जिला– खण्डवा (म.प्र.) भारत

आपकी सबसे पहली कहानी 'संसार का सबसे अनमोल रत्न' सन् 1900 में 'जमाना' पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी थी। इसी वर्ष आपने 'कृष्ण' नामक उपन्यास की भी रचना की। सन् 1902 में यवरदान' तथा सन् 1902 में ही 'प्रेमा' और 1906 में प्रतिज्ञा उपन्यास की रचना की सन् 1908 में जमाना प्रेम से 'सोजे वतन' के नाम से पाँच कहानियों का एक संग्रह प्रकाशित हुआ जो सरकार द्वारा जप्त कर लिया गया। सन् 1954 तक आप नवाबराय के नाम से कथा साहित्य की रचना करते रहे। 'सोजे वतन' की जप्ती के पश्चात् प्रेमचन्द के नाम से लिखने लगे और उर्दू से हिन्दी की ओर आ गये। 'सेवासदन' प्रेमचन्द का प्रथम उपन्यास है। यह सन् 1916 में प्रकाशित हुआ इससे पूर्व आप यवरदान', 'प्रतिज्ञा' या 'प्रेमा' और 'रूठी रानी', उपन्यास लिख चुके थे।

'रूठी रानी' एक छोटा-सा ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमें राजपूती वीरता के साथ परस्पर की उस फूट का चित्रण किया गया, जिसके कारण देश पराधीन हुआ। सन् 1901 में आपने 'प्रतापचन्द' नामक उपन्यास लिखा जिसे सन् 1902 में 'वरदान' नाम से प्रकाशित किया। सन् 1903 में प्रकाशित 'प्रेम' उपन्यास पहले उर्दू में 'हमखुमाँ' और 'हम कबाव' के नाम से प्रकाशित हो चुका था। बाद में प्रेमचन्द्र ने 'प्रेमा' में बहुत अधिक परिवर्तन कर दिया और वह हिन्दी में 'प्रतिज्ञा' और 'उर्दू' में 'बेवफा' नाम से प्रकाशित हुआ। प्रेमचन्द ने इन उपन्यासों का कला की दृष्टि से कोई महत्व नहीं है। 'सेवा सदन' ही आपका महत्वपूर्ण उपन्यास है। इसके पश्चात् प्रेमचन्द के निम्नलिखित उपन्यास प्रकाशित हुए - प्रेमाश्रम (सन् 1922), निर्मला (सन् 1923), रंगभूमि (सन् 1924-25), कायाकल्प (सन् 1928), गबन (सन् 1931), कर्मभूमि (सन् 1932), गोदान (सन् 1936)।

प्रेमचन्दजी ने अपने जीवन के प्रत्येक पहलू को सच्चाई के साथ वर्णन करके उपन्यास साहित्य को जीवन की पूर्णकृति बनाने का अनुपम प्रयास किया है। तत्कालीन सच्ची परिस्थितियों का चित्रण आपके उपन्यासों में मिलता है।

प्रेमचन्द-कर्मभूमि- 'कर्मभूमि' की कथावस्तु भारत के स्वाधीनता आन्दोलन की कहानी का एक अंश है। यही कारण है कि केवल युगीन घटनाओं का विवरण मात्र नहीं है। उसमें रोचकता भी पूर्णत: विद्यमान है। प्रस्तुत उपन्यास की कथावस्तु जहाँ राजनीति समाज, धर्म एवं शिक्षा के विशाल क्षेत्र का चित्र प्रस्तुत करती है। वही यथार्थ की भूमि पर चित्रित हुई ये घटनाएँ उनको सूत्रबद्ध करने की क्षमता भी रखती है। जिससे वे असंगठित न जान पड़े।

'कर्मभूमि' उपन्यास का कलेवर दो अंचल की कथाओं का मिश्रण है। एक काशी नगरी की और दूसरी हरिद्वार के समीपस्थ गाँव की। दोनों कथाओं के सूत्र अमर के माध्यम से जुड़ते हैं। नगर की कथा अछूतोद्धार एवं श्रमिकों तथा मजदूरों की आवासी व्यवस्था से संबधित है। अछूतों के मन्दिर प्रवेश के लिए प्रो. शान्तिकुमार एवं सुखदा द्वारा सत्याग्रह किया जाता है, गोली चलती है और अन्त में उन्हें मंदिर प्रवेश का अधिकार मिल जाता है। मजदूरों की आवास की व्यवस्था के लिए बोर्ड में प्रस्ताव रखा जाता है। अमर की पत्नी सुखदा हड़ताल कराती है, सरकारी दमनचक्र चलता है और सुखदा, शान्तिकुमार, अमरकान्त, सकीना आदि सभी जेल जाते हैं।

ग्राम की कथा अछूत किसानों की दुरावस्था से संबंधित है। अमर की प्रेरणा पाकर किसान लगान बन्दी आन्दोलन करते हैं। सरकार निर्ममतापूर्वक उसे कुचलने की चेष्टा करती है। अमर किसानों को भड़काने के अपराध में पकड़ा जाता है और जेल भेज दिया जाता है। 'गोदान' उपन्यास की तरह इस उपन्यास की नगर और गाँव की कथा अलग-अलग प्रतीत नहीं होती। 'गोदान' की भांति प्रेमचन्द के इस उपन्यास में भी गाँव और नगर की कथा वर्णित है। इतने विशाल कथाचित्र फलक को लेकर सुसंगठित रूप में प्रस्तुत करने की प्रेमचन्द की प्रतिमा अनुपम है।

प्रेमचन्द-रंगभूमि- 'रंगभूमि' की आधिकारिक कथा काशी के बाहरी भाग में बसे पांडेपुर गाँव की है। गरीबों की बस्ती है - ग्वाले, मजदूर, गाड़ीवान और खोमचे वालों की बस्ती। इन्हीं में एक गरीब और अंधा चमार रहता है - सूरदास। भिखारी है और पुरखो की 10 बीघा धरती भी उसके पास है, जिसमें गाँव के ढ़ोर चरते-विचरते हैं। सामने ही एक खाल का गोदाम है, जिसका आढ़ती है जानसेवक - सिगरा मुहल्ले का निवासी एक ईसाई इस जमीन पर उसकी बहुत दिनों से निगाह है सिगरेट का कारखाना खोलने के लिए सूरदास किसी भी तरह अपने पुरखो की निशानी उस धरती को बेचने के लिए जब राजी नहीं होता है तो जानसेवक अधिकारियों से मेलजोल का सहारा लेकर उसे हथियाना चाहता है अपनी बेटी सोफिया के माध्यम से राजा भरतसिंह और उनके परिवार के जानसेवक का परिचय संबंध स्थापित होता है।

राजासाहब के परिवार में चार प्राणी है - पत्नी रानी जाह्नवी, पुत्री इन्दु और पुत्र विनय। आधिकारिक कथा के साथ जुड़ने वाला प्रथम प्रबलतम कथासूत्र सोफिया और विनय का परस्पर हृदय दान है। विनय को जनता के लिए बलिदान करना पड़ता है और सोफिया गंगा में समा जाती है। आधिकारिक कथा और सहायक कथाओं के साथ प्रांसगिक कथाएँ भी सुभागी और भैरो की उपकथा पांडेपुर में उपजती है तथा ग्रामीणजनों की स्वार्थपरता, पारस्परिक कलह, ईर्ष्या-द्वेष, सहयोग एवं सहानुभूति आदि के रूप में गाँव के सामूहिक जीवन का चित्र उभारकर विलीन हो जाता है। ग्रामीण जीवन, राव-राजे, किसान-नागरिक, पूँजीपति और उनके अधीनस्थ मजदूर आदि की मानसिक विचार धारणाएँ प्रकट करना रंगभूमि का उद्धेश्य है। भारतीय समाज जो सदियों से रूढ़िग्रस्त, अन्धविश्वासी और ग्रस्त होने के कारण मूक था, प्रेमचन्द ने उसके मौन को तोड़कर 'रंगभूमि' में उसे वाचाल बना दिया है।

'यदि हिन्दी उपन्यास पर सरसरी नजर भी डाली जाये तो लगता है कि आधुनिकता के जीवन की शुरूआत 'गोदाम' (1934-36) में मानी जा सकती है। इसके आसपास कथाकारों की संवेदना में अंतर आने लगा था।

प्रेमचन्द - गोदान- 'गोदान' में अनेक परिवारों की कथा है, जो मिलकर एक विराट एवं सामाजिक परिवेश का निर्माण करती हैं। होरी का परिवार इसमें सर्वप्रमुख है। वह बिलारी गाँव का किसान है जहाँ के जमीदांर रायसाहब अमरपालसिंह है। होरी राय साहब के यहाँ अक्सर जाता है और उनका मुँह लगा है। कथानक का प्रांरभ होरी की गाय पालने की इच्छा से होता है। पड़ौस गाँव के ग्वाले भोला से उसकी भेंट हो जाती है। भोला की अनेक गायें थी, उनमें से एक पर होरी का मन ललच उठता है। भोला के सामने भूसे की कठिनाई थी। होरी के पास भूसा प्रचुर मात्रा में था। होरी का पुत्र गोबर राय साहब को ढोंगी ओर सियार बताता है। बीच में होरी भोला से गाय प्राप्त करने, उसे भूसा देने और भोला का विवाह करा देने के आश्वासन का उल्लेख करता है। गाय आ जाने से घर में प्रसन्नता की लहर छाई हुई है। गाँव का साहूकार झिंगुरसिंह की दृष्टि होरी की गाय पर है। होरी के दो भाई शोभा और हीरा है। हीरा गाय को जहर देता है। गाय मर जाती है। होरी की आर्थिक स्थिति दिन पर दिन बिगड़ती जाती है। होरी गोबर के बच्चे के दूध के लिए गाय लेने का प्रयत्न करता है। उसके लिए वह अपी पत्नी धनिया सहित एक ठेकेदार के यहाँ कंकड खोदने का काम करता है। कंकड़ खोदते हुए होरी को लू लग जाती है। उसे घर लाया जाता है। वह धनिया से कहता है कि - 'गोदान करा दो,

अब यही समय है।'धनिया ने आज सुतली बेचकर बीस रूपये प्राप्त किये थे। वह उनको होरी के हाथों पर रखकर सामने खड़े दातादीन से कहती है – 'महाराज घर में गाय है न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है।' होरी की मृत्यु और धनिया के पछाड़ खाकर गिरने के साथ कथानक समाप्त हो जाता है।

जीवन के कुछ अनुभवों से प्रेमचन्द इस परिणाम पर पहुँचते है कि सामन्ती एवं पूँजीवादी दोनों प्रकार के शोषण से मुक्ति मिलने पर ही भारतीय जनता का उद्धार हो सकता है। इसलिए 'गोदान' में उन्होंने एक साथ सामन्ती और पूँजीवादी शोषण की प्रतारणाओं का चित्रण किया है।

प्रताड़नाओं का अंत होने पर ही समानता के आधार पर जो वर्गहीन समाज स्थापित होगा, उसमें ही होरी का स्वप्न साकार होगा ओर सभी सुखी होगें।

'गोदान' का प्रकाशन सन् 1936 में हुआ था, उसमें प्रेमचन्द की विचारधारा और 'गोदान' का उद्धेश्य संदेश स्पष्ट हो जाता है।

प्रेमचन्द– गबन– 'गबन' उपन्यास की कथावस्तु में एक सामाजिक समस्या नारियों की आभूषण प्रियता और मध्यमवर्गीय परिवार या समाज की शेखी या झूठी मान प्रतिष्ठा के प्रदर्शन के कुपरिणामों का उल्लेख है। इस उपन्यास की मुख्य कथा में कई उपकथाएँ आकार मिल गई हैं। मुख्य कथा है कि रमानाथ एक मध्यमवर्गीय परिवार का लापरवाह और उत्तर दायित्वहीन व्यक्ति है जो अपनी पत्नी को खुश करने के लिए झूठी शान शौकत का बखान करके अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखना चाहता हैं। इसके लिए वह सर्राफों से उधार और कर्ज लेकर अपनी डींगें मारने में नहीं चूकता है। वह बहुत ही भीरू और कायर भी है। उसकी पत्नी जालपा किसी भी बात से बढ़कर आभूषणों को ही महत्व देती है। लेकिन रमानाथ चूँगी की नौकरी से पैसे लेकर कर्ज देने के कारण उसको अदा नहीं कर सकता है। वह भागकर कलकत्ता चोर की तरह एक देवीदीन नामक खटीक के यहाँ गुजरकर लेना कबूल कर लेता है। पुलिस के पंजे में आकर के क्रांतिकारियों के विरूद्ध झूठी सहायता करना मंजूर कर लेता है। फिर भी अपनी वास्तविकता को दिलो के साथ न तो अपनी पत्नी जालपा को और न घरवालों को ही सूचित करता है। कभी तो बयान बदलना चाहता है कभी पुलिस के डर से बयान दे देता है। उसकी कायरता का नकाब तब उतरता है जब जालपा और देवीदीन उसे घृणा की ठोकरें मारते हैं। इससे वह अंत में अपने बयान को बदलकर क्रांतिकारियों को सजा से बरी कराकर के स्वयंबरी हो जाता हैं।

प्रेमचन्द ने इस उपन्यास में नारी की आभूषण प्रियता से उत्पन्न दुष्परिणामों झूठी मानमर्यादा के प्रदर्शन के परिणामों अनमेल विवाह के परिणामों आदि का चित्रण करके इससे दूर रहने का सुझाव और बोध दिया है। तत्कालीन समस्याओं का चित्रण करके इनसे सावधान या दूर रहने का उन्यासकार ने सुझाव अप्रत्यक्ष रूप से दिया है यही इस रचना का उद्धेश्य है। प्रेमचन्द–सेवादन– 'सेवासदन' एक सामाजिक उपन्यास है। इसमें समाज में प्रचलित विभिन्न जातियों अनेकानेक विचार पद्धतियों मान्यताओं एवं मर्यादाओं का पूर्णरूप से ध्यान रखा गया है। साथ ही पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं का बड़ा ही मनोहारी वर्णन है। कथावस्तु आर्थिक विपन्नता, रिश्वतखोरी, दहेज प्रथा, अनमोल विवाह, नारी जीवन की समस्या एवं सम्मानित लोगों पर करारे व्यंग्यों से परिपूर्ण है। घटनाएँ काल्पनिक न होकर यथार्थ धरातल पर अवस्थित है। यथार्थपरकता एवं अनुभूति की सच्चाई के कारण इस उपन्यास में जीवन का वास्तविक चित्र मिलता है। अन्त में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष में से मोक्ष अर्थात नि:स्वार्थ भावना का मार्ग प्रशस्त कर सामाजिकों को एक सूत्र में बाँधने की कोशिश की गई है। इसमें मानव की उदस्त भावनाओं एवं सामाजिक कल्याण की भावना पर विशेष बल दिया गया हैं।

निष्कर्ष – हिन्दी उपन्यास जगत में प्रेमचन्द का स्थान सर्वोच्च है। मानवता का व्यापक संदेश, युग का सजीव चित्रण, कथा शिल्प की कलात्मकता, चरित्र–चित्रण की कला, भाषा में लोकभाषा और साहित्यिक सौष्ठव का समन्वय सभी के कारण उपन्यास साहित्य में उनकी कृतियों का महत्वपूर्ण स्थान है।

उन्होंने हिन्दी उपन्यास को नई प्राणधारा प्रदान की हैं। वे उपन्यास क्षेत्र में मिल के पत्थर हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. आर.एन. गौड़, राजहंस प्रकाशन मन्दिर, मेरठ।
2. शान्ति स्वरूप गुप्ता रीडर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
3. डा. महाराजसिंह परिहार अभय प्रकाशन मन्दिर, 15/256 चारसू दरवाजा, आगरा–3
4. हिन्दी उपन्यास एक नयी दृष्टि, इन्द्रनाथ मदान।
5. गोदान: बारहवाँ संस्करण पृष्ठ 364।

****

स्त्री आत्मकथाओं का अंतर्द्वन्द

नंदिनी जोशी *

शोध सारांश – आत्मकथा व्यक्ति के मन का एक ऐसा दस्तावेज है जो अपने व्यक्ति मन को समष्टि मन के समकक्ष रखकर अपने भाव व्यक्त करता है। आत्मकथा ऐसा अत:साक्ष्य है जो अपने भीतर झांकने का अवसर देती है और पाठक इस यात्रा में शामिल रहता है। स्वयं को 'स्व' से मुक्त करने की आकांक्षा, अपने उलझे अहं और स्व को सुलझाने की तीव्र झटपटाहट, अपने व्यक्तित्व के रेशे-रेशे को खोलकर अपने अहं को संतुष्ट और सशक्त बनाने की एषणा आत्मकथा लेखन की महत्वपूर्ण प्रेरणाएँ है।

प्रस्तावना – स्त्री को स्वतंत्र पहचान अथवा 'स्त्री व्यक्ति' को भले ही संसार स्वीकार न कर सके। पर ये आत्मकथाएँ चीख-चीखकर कभी घटनाओं में, कभी अपनी बेबाकी से अपने प्रति होने वाले अन्याय, अत्याचार को सामने रखती हैं। भले ही उनमें प्रतिकार की शक्ति न हो फिर भी सच को सामने रखने का दुस्साहस तो उनमें है ही। यह तो स्वीकार करना पड़ेगा कि इन आत्मकथाओं ने पहली बार स्त्री होने के सच को उजागर किया है। यह सच 'मेरी जीवन यात्रा का है'.....'अन्या से अनन्या' होने की पीड़ा का है कभी यह 'पिंजरें की मैना' बन नि:स्वार्थ भाव से सृजन में विश्वास करने का है। 'आहों की बैसाखियों' की पीड़ा कितनी घनीभूत है। अन्दर से घुटती यह आह केवल बैसाखी में तब्दील हो जाती है। कभी अपने शब्द जब तार-तार कर देते है तो 'मुझे माफ कर देने' के अलावा और क्या हो सकता है? और आखिर 'सूरज को डूबना ही है'। कभी जीवन का सच 'चंद सतरें' और 'सतरें और सतरें में तब्दील हो जाता है। जब 'और.....और.....औरत', अपनी राह बदलती है, तो 'गुड़िया भीतर गुड़िया' और 'लगता नहीं दिल मेरा' का कटु यथार्थ अनावृत होता है जो कभी प्रिय नहीं हो सकता इसलिए लेखिका जीवन से उकताकर अंत में लिखती है लगता नहीं दिल मेरा उजड़े दयार में..... किन्तु सच तो यही है ना। भले ही आत्मकथाओं की लेखिकाओं को बोल्ड लेखन एवं खुलेपन के लिए भद्र समाज कोस ले, पर इस सच को स्वीकारना तो पड़ेगा ही। आत्मकथाओं के माध्यम से स्त्री ने अपने संसार के अनुभूत को अभिव्यक्ति दी है और अपने होने को सिद्ध किया है।

आत्मकथा व्यक्ति के मन का एक ऐसा दस्तावेज है जो अपने व्यक्ति मन को समष्टि मन के समकक्ष रखकर अपने भाव व्यक्त करता है। आत्मकथा लेखन की परम्परा में लेखिकाओं ने भी अपना योगदान है। जिनमें रमादेवी चौधरी, विजया नरवणे, रत्नकुमारी, जानकी देवी बजाज, अनीता राकेश, दुर्गा खोटे, शिवानी, दिनेश नंदिनी डालमिया, मन्नू भण्डारी, चंद्रकिरण सोनरेक्सा, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्णा अग्निहोत्री आदि प्रमुख है।

आत्मकथा लेखन के प्रारंभिक दौर में जब स्त्री द्वारा आत्मकथाएँ लिखी गई। तब आत्मकथा के रूप में वह अपने छोटे-से घर-संसार को ही व्यक्त कर पायी। आत्मकथा के विकास क्रम में धीरे-धीरे स्त्रियों ने घर की दहलीज़ के बाहर कदम रखकर लिखना शुरू किया। कुछ स्त्री आत्मकथाकारों ने स्वयं का भोगा हुआ सत्य व्यक्त करते हुए अपने लेखन में अत्यधिक पारदर्शिता का प्रयोग किया। आज की स्त्री आत्मकथाकार समाज को सच का आईना दिखाने की क्षमता रखती है। वह अब वैसी स्त्री नहीं रही जिसे या तो सिर्फ भोग्या या दुनिया के समक्ष पूज्या ही माना जाता था। पुरूष प्रधान समाज में जब महिलाओं द्वारा आत्मकथा जैसी गंभीर विधा पर लेखनी चलाई गई, तब उनके लेखन को बोल्ड लेखन की संज्ञा दी गई। अपने जीवन की व्यथा को व्यक्त करने के लिए स्त्री आत्मकथाकारों ने जीवन की यथार्थ अनुभूतियों को, संवेदना के धरातल पर रखकर आत्मकथाएँ लिखी है। स्त्री आत्मकथाकार अपनी घुटन, पीड़ा और संत्रास के दौर से गुजरते हुए, अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती रही। एक ओर जहाँ वह अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु संघर्षरत है तो दूसरी ओर वह समाज की कुरीतियों का खुलकर विरोध करती है।

जानकी देवी बजाज की आत्मकथा 'मेरी जीवन यात्रा' में देशप्रेम ही नहीं प्राणीमात्र से प्रेम, सर्मपण, त्याग, स्त्री-पुरूष समानता की भावना को दर्शाती है। रमादेवी के विचार भी देशभक्ति के भावों से परिपूर्ण है, जो पाठकों को देश के बारे में सोचने के लिए विवश करते है। महादेवी स्त्री मुक्ति और उसके विकास के लिए आवाज उठाती है। 'प्रेमचंद घर में' की शिवरानी स्वतंत्रता संग्राम में अपना प्रत्यक्ष योगदान देती है और अपने पति (प्रेमचंद) का अनुकरण कर साहित्य सेवा की ओर अग्रसर होती है। स्त्री विमर्ष की शुरूआत करने वाली 'अन्या से अनन्या' की प्रभा खेतान स्वयं से विद्रोह करती है। स्त्री विमर्ष को उनकी आत्मकथा से धरातल मिलता दिखाई देता है। प्रभा खेतान ने अपनी आत्मकथा में एक ऐसी स्त्री का चित्र उभारा है जिसने सीमोन द बोउवार से प्रभावित हो पाश्चात्य संस्कृति की तर्ज पर लिव इन रिलेशनशिप को स्वीकार किया।

शिवरानी अपने पति (प्रेमचंद) के साहित्य से प्रभावित होकर स्वयं भी लेखन की ओर आकर्षित होकर, कहानियाँ लिखती है। 'अन्या से अनन्या' की प्रभा खेतान एक मारवाड़ी समाज की घरेलू लड़की होने के बावजूद, अपने सगे भाई द्वारा किये गये व्यभिचार का जिक्र करने का साहस दिखाती है। उनका सबसे बड़ा विद्रोह समाज से तब होता है जब वह 'लिव इन रिलेशानशिप' जैसी धारणा को व्यक्तिगत जीवन में भी लागू करती है और डॉ. सर्राफ के साथ जीवनभर बिना ब्याह के ही रिश्तें निभाती है। 'सतरें और सतरें' की अनीता राकेश बचपन से ही बेटे-बेटी को लेकर किये जा रहे भेदभाव से व्याकुल है। 'पिंजरे की मैना' की चन्द्रकिरण सौनरेक्सा अपने पति का हर तरह से सहयोग करती है।

'गुड़िया भी गुड़िया' की मैत्रेयी जीवन में आये विभिन्न उतार-चढ़ावों को सत्यता, स्पष्टता, निडरता के साथ सामने लाती है। मैत्रेयी ने राजेन्द्र यादव, संपादकों व अन्य प्रकाशकों के साथ अपने संबंधों को आत्महंता बेबाकी के साथ प्रस्तुत किया है। राजेन्द्र यादव के साथ ही उन्होंने लेखन

* सहायक प्राध्यापक, क्रिश्चियन एमीनेंट महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जगत के पाखण्ड और उसके निर्मम प्रहारों से उपजी कराहों को भी अपने लेखन में स्थान दिया है।

इन सभी आत्मकथाओं का अनुशीलन करने के पश्चात् ऐसा लगता है कि जानकी देवी बजाज, चंद्रकिरण सौनरेक्सा एवं मन्नू भंडारी की आत्मकथा समाज को दिशा देती है। इन्होंने अपने जीवन की पीड़ा को अपनी आत्मकथा में व्यक्त तो किया है, किन्तु विद्रोह नहीं। बल्कि आत्मकथा समाज को सोचने पर मजबूर करती हैं। स्त्री अस्मिता के लिए नवीन भूमि खोजती हैं। मैत्रेयी पुष्पा की आत्मकथा में रूढ़िवादी समाज की विकृत मानसिकता से उपजा लेखन झलकता है। इनकी आत्मकथा समाज को दर्पण दिखाती है। इस दर्पण में उजले और काले दोनों चेहरे नज़र आते हैं। कृष्णा जी ने अपनी आत्मकथा में अपने बचपन से लेकर अब तक के जीवन को व्यक्त किया है। इनकी आत्मकथा में अतिश्योक्ति पूर्ण वर्णन कई जगह भ्रम की स्थिति निर्मित करता है। कभी लगता है यह कैसा एकालाप है?

स्त्री आत्मकथाकारों ने अपने आत्मकथात्मक साहित्य के जरिए स्त्री की दुनिया को, भीतरी बाहरी सभी तकलीफों को, छटपटाहटों को अभिव्यक्ति दी है तथा स्त्री के सन्दर्भ में नई सोच परिलक्षित करने की कोशिश की है। मन्नू जी ख्यात साहित्यकार राजेन्द्र यादव से विवाह करती है, ताकि उनके लेखन को एक नई पहचान मिल सके। पर विवाह के पश्चात् स्थिति उनकी सोच से परे हो जाती है। वे अपने पति के साथ एक ही छत के नीचे रहने बावजूद एक अजनबी की तरह जीवन व्यतीत करती है। घर की जिम्मेदारियों के साथ ही नौकरी भी करती हैं। कई विषम परिस्थितियों का सामना करती हैं, पर अपना लेखन कर्म जारी रखती है। उनकी आत्मकथा हर परिस्थिति में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। मन्नू भंडारी की आत्मकथा में एक ऐसी स्त्री की छवि दिखायी देती है, जो अपने जीवन की चुनौतियों को स्वीकार कर जीवन के हर मोड़ पर समाज से टक्कर लेने का सामर्थ्य रखती है। वह निर्दोष होने पर भी एक भारतीय स्त्री की तरह सहनशीलता का परिचय देती है, जीवन के पैंतीस वर्ष पार करने के बाद भी पति द्वारा दी गई मानसिक व भावनात्मक प्रताड़ना को हँसते-हँसते झेलती है, सिर्फ इस आशा से कि एक न एक दिन उसका पति जो ख्यात लेखक है, उसका स्वभाव परिवर्तित होगा और वह सुखी जीवन जी पाएगी। लेकिन उसकी सोच से परे उसके सारे सपने यथार्थ के धरातल पर टूट जाते है, परन्तु इतनी विषम परिस्थितियों में वह अपनी सकारात्मक सोच के परिणामस्वरूप अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए भरसक प्रयास करती हैं और उसमें सफल भी होती है। इस आत्मकथा के माध्यम से उन्होंने अपनी पीड़ा, संवेदनाओं, भावनाओं, त्रासदी, संबंधों को बहुत ही सहजता एवं बेबाकी से व्यक्त किया हैं। जीवन की विषम परिस्थितियों के बावजूद मन्नूजी ने अपनी सकारात्मक सोच के परिणामस्वरूप जीने की चाह और महान उपलब्धियों के लिए ललकता, आस-पास का साहित्यिक वातावरण, ऐसे कई विरोधाभासों के बीच से गुजरते हुए, अगर कुछ टूटने नहीं देती, तो वह है उनकी जिजीविषा, सादगी और रचना संकल्प। इसी रचनात्मक शक्ति ने उन्हें एक स्थाई संबल प्रदान किया, जिसने पैतीस साल के अकेलेपन को भरने में मन्नू जी सहायता की। मन्नूजी ने अपनी सकारात्मक सोच, बुलंद हौसलों की बनिस्बत अपने अंदर के लेखक को हमेशा जिन्दा रखा और इसी सकारात्मक सोच की बदौलत उनका लेखन कार्य आज तक जारी है। यह आत्मकथा एक तरह से राजेन्द्र यादव की आत्मकथा का जवाब भी मानी जा सकता है और मन्नूजी का अपने पति के प्रति विरोध भी। जिसमें उन्होंने अपने जीवन की अंत:पीड़ा तथा टूटे-बिखरे सूत्रों और कटु अनुभवों को समेटने का प्रयास किया है।

इस प्रकार ये आत्मकथाएँ अपनी समग्रता में समाज में स्त्री की स्थिति का सच प्रस्तुत करती हैं। यह सच बहुत कड़वा है, इस कड़वे सच को स्त्री अनुभूति का लघु एवं संकीर्ण रूप भले ही दिया जाए पर इसे नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। स्त्री को स्वतंत्र पहचान अथवा 'स्त्री व्यक्ति' को भले ही संसार स्वीकार न कर सके। पर ये आत्मकथाएँ चीख-चीखकर कभी घटनाओं में, कभी अपनी बेबाकी से अपने प्रति होने वाले अन्याय, अत्याचार को सामने रखती हैं। भले ही उनमें प्रतिकार की शक्ति न हो फिर भी सच को सामने रखने का दुस्साहस तो उनमें है ही। यह तो स्वीकार करना पड़ेगा कि इन आत्मकथाओं ने पहली बार स्त्री होने के सच को उजागर किया है। यह सच 'मेरी जीवन यात्रा का है'.....'अन्या से अनन्या' होने की पीड़ा का है कभी यह 'पिंजरें की मैना' बन नि:स्वार्थ भाव से सृजन में विश्वास करने का है। 'आहों की बैसाखियों' की पीड़ा कितनी घनीभूत है। अन्दर से घुटती यह आह केवल बैसाखी में तब्दील हो जाती है। कभी अपने शब्द जब तार-तार कर देते है तो 'मुझे माफ कर देनेय के अलावा और क्या हो सकता है? और आखिर 'सूरज को डूबना ही है'। कभी जीवन का सच 'चंद सतरें' और 'सतरें और सतरें में तब्दील हो जाता है। जब 'और.....और.....औरत', अपनी राह बदलती है, तो 'गुड़िया भीतर गुड़िया' और 'लगता नहीं दिल मेरा' का कटु यथार्थ अनावृत होता है जो कभी प्रिय नहीं हो सकता इसलिए लेखिका जीवन से उकताकर अंत में लिखती है लगता नहीं दिल मेरा उजड़े दयार में..... किन्तु सच तो यही है ना। भले ही आत्मकथाओं की लेखिकाओं को बोल्ड लेखन एवं खुलेपन के लिए भद्र समाज कोस ले, पर इस सच को स्वीकारना तो पड़ेगा ही। आत्मकथाओं के माध्यम से स्त्री ने अपने संसार के अनुभूत को अभिव्यक्ति दी है और अपने होने को सिद्ध किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुड़िया भीतर गुड़िया - मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पेज नं. 9
2. प्रेमचंद घर में - शिवरानी देवी प्रेमचंद, 1932
3. मेरी जीवन यात्रा -जानकी देवी बजाज, सस्ता साहित्य मण्डल 1956
4. सतरें और सतरें - अनीता राकेष, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली 2002
5. कस्तूरी कुण्डल बसै - मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 2002
6. अन्या से अनन्या - प्रभा खेतान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली 2007
7. एक कहानी यह भी - मन्नू भण्डारी, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली 2008
8. लगता नहीं दिल मेरा - डॉ. कृष्ण अग्निहोत्री, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली 2010
9. पिंजरे की मैना - चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली 2010

****

फिरदौसी का शहनामा – मानवीय पहलू

डॉ. प्रतिभा जोशी *

शोध सारांश –फिरदौसी विश्व के एक महान साहित्यकार है उनकी कृति 'शहनामा' अपने नाम के अनुरूप शाहों के किस्सों, जनरंजन के साथ ही युगीन सच और तात्कालीन लोकवृत्ति को बखूबी प्रस्तुत करती है। 'फारसी में रचित इस कृति का हिन्दी अनुवाद किया गया है। 'शाहनामा' पृष्ठों में बिखरा गपलोक साहित्य का उत्कृष्ट नमूना है। जिसे इस शोध पत्र में प्रस्तुत किया गया है।

फिरादौसी का पूरा नाम 'अबू अल कासिम बिन अलतूसी था। कहते हैं कि जब फिरदौसी का जन्म हुआ तो उनके पिता 'मौलाना अहमद फखरूद्दीन ने स्वप्न में देखा कि फिरदौसी छत पर खड़े होकर किसी एक दिशा में कुछ बोलते हैं तो उनके स्वर की प्रतिध्वनि लौटकर पुन: उसी दिशा में आ रही है। ऐसा उन्होंने फिरदौसी को सभी दिशाओं में करते देखा। सुबह उन्होंने अपने इस विचित्र स्वप्न के बारे में ज्योतिषियों को बताया तो ज्योतिषियों के अनुसार इस स्वप्न का अर्थ यह निकाला गया कि फिरदौसी बड़े होकर एक महान् शायर के रूप में संपूर्ण विश्व में अपनी पहचान बनाएगें।

प्रस्तावना – 'शहनामा' के रचनाकार फिरदौसी ने चालीस वर्ष की उम्र में 'शाहनामा की रचना प्रारंभ की। शाहनामा लगभग एक हजार वर्ष पूर्व लिखा गया था। इसमें लेखक ने लोक साहित्य, लोक कलाओं आदर्श जीवन का सकारात्मक पक्ष प्रस्तुत किया है। शाहनामा की रचना तीस वर्ष में हुई, इसमें फिरदौसी ने साठ हजार शेरों की रचना की है। शाहनामा में फारसी भाषा का प्रयोग किया गया है। कहते हैं, कि जब शाहनामा की रचना की गई तब अरबी भाषा का प्रभुत्व था।

फिरदौसी का शाहनामा वास्तव में ईरान के इतिहास का साक्षी है। इसके प्रारंभ में वे खुदा की प्रशंसा करते हैं, एवं सूर्य, चंद्रमा का भी जिक्र करते हैं। वे लिखते हैं कि उन्हें 'शाहनामा' की रचना का विचार क्यूँ आया? इसकी व्याख्या में उन्होंने लिखा है कि शाहनामा प्रारंभ में कवि दक़ीकी द्वारा 'गश्तासब' नाम से लिखा जा रहा था। लेकिन उनके ही गुलाम द्वारा उनका कत्ल किए जाने पर यह रचना पूरी नहीं हो पाई। फिरदौसी ने जब इस रचना को पढ़ा तब उन्होंने इसे पूरा करने का संकल्प किया। उनका यह संकल्प तीस वर्ष में पूर्ण हुआ।

शाहनामा को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है –

1. लोक साहित्य
2. कल्पना लोक या कपोल कल्पित घटनाएँ
3. ईरान का संपूर्ण इतिहास

विशाल स्वरूप एवं व्यापकता की दृष्टि से 'शाहनामा' की तुलना 'होमर' के 'इलियड' और 'महर्षि व्यास' की रचना महाभारत से की जा सकती है। इन तीनों ग्रंथ में जो पंचभाव विद्यमान हैं वही मानवीय उच्च भाव को जगाने में और साहित्य को अमरत्व प्रदान करने में सहयोगी होते हैं। शाहनामा फिरदौसी को संपूर्ण विश्व में अमर बनाने वाली कालजयी रचना है। इस रचना में फिरदौसी ने जिन कथाओं का वर्णन किया है उसमें दास्तान ए बीजन व मनीजा, रूदाबे व जालजर, रूस्तम सोहराब, सियाबुष व रूदाबे, शतरंज की पैदाइष, शाह बहराम के किस्से, सिकन्दर व कैद, ज़हाक व कावेह आहंगर प्रमुख है।

फरीदुन व कावेह आहंगर –

शाहनामा के प्रारंभ में फिरदौसी ने ईरान के पहले बादशाह क्यूमर्स का जिक्र किया है। क्यूमर्स अपनी शक्ति एवं न्यायप्रियता के कारण प्रसिद्ध था। ईरान के अंतिम शासक जमशेद के शासन काल के अंतिम दिनों में ज़हाक जालिम बादशाह ने ईरान पर अपना एकाधिकार कर लिया था। ज़हाक अपनी प्रजा में जितने भी फरीदुन नाम के सभी बच्चों को खत्म करने का आदेश देता है। इस तरह उसकी यह जालिम बादशाहत एक हजार वर्ष तक चलती रही –

चु ज़हाक पर तख़्त शुद शहरयार
वर उ सालियान अंजुमन शुद हजार

ईरान के इतिहास की यह गाथा जनहित के लिए प्राणों का बलिदान करने वाले बालक एवं उसकी वीरता की है। यही सहयोग की भावना का विकास है।

एक समय रूस्तम शिकार खेलते हुए तूरान की सीमा में प्रवेश कर जाता है। अत्यधिक थकान के कारण अपने घोड़े रख्श को पेड़ से बाँधकर वह आराम करने लगता है, कुछ तूरानियों द्वारा उसका घोड़ा चुरा लिया जाता है। नींद से जागने पर अपने रख्श को न पाकर वह उसके पैरों की निशानदेही पर तूरान में प्रवेश कर जाता है दूसरी ओर तूरान के बादशाह रूस्तम जैसे पहलवाने के आने की खबर सुनते ही उसके स्वागत की तैयारी करते हैं। रुस्तम जैसे ही समनगान शहर के समीप पहुँचता है उसे देखने के लिए भीड़ एकत्रित हो जाती है।

हमी गुफ्त हर कस कि इन रुस्तम अस्त
व या आफताब सपीदेह दम अस्त

हर कोई कह रहा था कि यह रुस्तम पहलवान है या सुबह का उगता सूरज है। फिरदौसी शाहनामा के माध्यम से केवल उपदेश ही नहीं देते बल्कि परिवेश और कठिन समय में भी इंसान की कमजोरी को बड़ी बारीकि से प्रस्तुत करते हैं व उसके तर्क भी बताते हैं। शाहनामा इंसान को इंसान से प्रेम करना सिखाता है। जब शाहनामा की रचना की गई थी तब ईरान व तूरान में दुश्मनी थी। ये शत्रुता सिर्फ बादशाहों तक ही सीमित रही। आम ईरानी व तूरानी जब मिलते हैं तो दुश्मनी नहीं प्रेम उपजता है। इसी क्रम में रूस्तम और सोहराब की कहानी 'शहनामा' की विशेषता है जिसका विस्तृत वर्णन

* सहायक प्राध्यापक, क्रिश्चियन एमीनेंट महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शाहनामा में मिलता है। रूस्तम और तहमीना अपनी वैवाहिक जिंदगी में खुश थे, तभी रूस्तम को अपने मुल्क जाबुलिस्तान लौटने का मन हुआ। जब वह जाने लगा तब तहमीना ने उससे निशानी के रूप में उसकी बाजू पर बंधा बाजूबंध मांगा तब रूस्तम अपनी इस निशानी को यह कहते हुए तहमीना को दिया कि यदि हमारे यहाँ बेटी का जन्म हो तो उसके बालों में इसे सजा देना और यदि बेटे का जन्म हो तो उसके बाजू में बाँध देना और कहना कि वह साम नरीमान और जालजर जैसे पहलवानों का वंशज है। जिनके नाम से पूरी दुनिया भयभीत हो जाती है। नौ माह बाद तहमीना एक पुत्र को जन्म देती है जिसका नाम सोहराब रखा जाता है।

शाहनामा में प्रेम, घृणा, निष्ठा, ईर्ष्या एवं बलिदान का समन्वय है। शाहनामा में मानवीय सरोकारों, भावनाओं और उसकी टकराहट स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। यह एक ऐसी युद्ध गाथा है जिसमें हालात के गलियारों से गुजरते इंसान को कई रूप -रंगों में वर्णित किया गया है। शाहनामा की महिला पात्र अपने साथ होने वाले घुटन, अत्याचार और अंकुश का विरोध कर अपने अधिकार को प्राप्त करना चाहती है। ऐसी ही एक कहानी है सियावुष व सुदाबे की, जिसमें अपनी इच्छाओं और अधिकार को पाने के लिए सुदाबे खलनायिका के रूप में दर्शायी गई है।

सियावुश व सुदाबे की संतान शाह खुसरू भी अपने पिता की तरह बलशाली व साहसी था, उसने ईरान पर कई वर्षों तक राज्य किया। बीजन वीरता के साथ आगे आया और शाह की चुनौति को स्वीकार कर जंगली सुअरों का खात्मा करने निकल पड़ा। अपने इस अभियान में उसने अपने मित्र गुरगीन को भी साथ लिया। बीजन राह में आने वाली हर परेशानियों से लड़ता हुआ आगे बढ़ रहा था। यह सब देखकर गुरगीन को उससे ईर्ष्या होने लगी। उसने ईष्यावश बीज़न को आफ़रासियाब के क्रोध का भाजन बनाने के लिए उसकी पुत्री मनीज़ा से मिलने को कहा। उसने तुर्की लड़कियों की सुंदरता का बखान करते हुए कहा -

हमे दुख्ते तुर्कान पोशीदेह रुइ
हमे सर व क़द व हमें मुश्क बुइ
हमे रुख़ पुर अज़ गुल, हमे चश्म ख़्वाब
हमे लब पुर अज़ मेइ, बे बुए गुलाब

हर तुर्की लड़की का चेहरा नक़ाब से ढ़ँका रहता है, उनका तन इत्र से गमकता रहता है। उनके कपोलों पर फूल खिले होते हैं और होंठों से गुलाब की गन्ध भरी मदिरा टपकती रहती है। उनकी आँखों में मस्त खुमार छाया रहता है। इस तरह वह बीजन के समक्ष मनीजा की सुंदरता का वर्णन कर उसे अपने लक्ष्य से भटकाने में कामयाब हो जाता है। गुरगीन ईरान पहुँचकर बीजन की मौत की खबर देता है। बीजन और मनीज़ा एक दूसरे की चाहत में गिरफ्त हो जाते हैं। यह बात आफरासियब को ज्ञात होती है तो वह बीजन को अंधेरे कुँए में कैद कर देता है। कुँए के मुहाने को बड़े पत्थरों से ढँक दिया गया। मनीज़ा को जब ये पता चलता है तो वह भेष बदलकर कुँए से बड़े पत्थरों को थोड़ा हटाने में कामयाब हो जाती है। उसकी इस कामायाबी से बीजन को जीवनदान मिलता है। वह छोटे छिद्र से रोजना बीजन को खाने-पीने का सामान देती है। इस तरह बीजन व मनीज़ा एक दूसरे के लिए जीते रहे। एक दिन खुसरु बादशाह के दरबार में नौरोज का जश्न मनाया जा रहा था। ज्योतिषियों ने बादशाह को रिझाने के लिए एक जाम में पूरे विश्व का दृश्य दिखाया। एक दृष्य में तूरान की सीमा पर बने कुँए के समीप एक लड़की बैठी विलाप कर रही है। उसे ज्ञात होता है कि कुँए में बीजन है। इस तरह वह यह खुशी गिव पहलवान को देता है कि तुम्हारा पुत्र जीवित है। गिव पहलवान, रुस्तम पहलवान को साथ लेकर तूरान के शासक व पहलवानों से युद्ध कर बीजन व मनीज़ा के प्रेम को अमरता प्रदान करते हैं।

सिक़न्दर और कैद-ए-हिन्दी - हिन्दुस्तान में किसी समय कैद नाम का बादशाह था। अपने अजीबोगरीब सपनों के कारण वह हमेशा परेशान रहता है। एक बार कुछ ऐसे ही सपनों का जिक्र वह मेहरान नामक ज्योतिषी से करता है कि उसके इन बुरे सपनों के क्या दुष्प्रभाव होंगे? मेहरान ने उसे बताया कि यूनान का शासक सिकंदर बड़ी सेना लेकर हिन्दुस्तान की ओर आ रहा है। लेकिन तुम्हारी सेना उसका मुकाबला नहीं कर पाएगी। तुम अपनी बुद्धिमानी से ही उसे परास्त कर सकते हो। तुम्हें सिकंदर की प्रशंसा कर उसका हृदय जीतना होगा। कैद ने सिकंदर के आने के बाद उसे अपने दरबार में बुलवाया और कहा कि उसके पास ऐसी चार वस्तुएँ हैं जो अनमोल हैं और संसार में ये वस्तुएँ किसी के पास नहीं है। मैं ये वस्तुएँ सिकंदर को भेंट करना चाहता हूँ। सिकंदर ने कैद के इस बुलावे के रूप में अपने संदेशवाहक को भेजा और कहा कि वह जानकारी लेकर आए कि वे चार वस्तुएँ कौनसी है।

बादशाह ने सिकंदर के संदेशवाहक को बताया कि -

अगर बी न दशआफ़ताबे बुलन्द
शबद तीराह अज़ रु-ऐ-अरज़ुमन्द
कमन्द अस्त गेसूअश हम रंग-ए-कीर
हमी आयद अज़ दो लवश बू-ए-शीर
ख़म आरद बाला-ए-उ सर व बन
दर अफ़शान कुनद चुन सर आयद सुखन

कैद ने कहा कि मेरी बेटी के चेहरे की आभा देखकर सूर्य भी शर्मिंदा हो जाता है। उसके बाल कमन्द के समान लम्बे बल खाए हुए हैं, उसमें इतनी खूबियाँ है कि संसार में उसके समान कोई नहीं है।

एक ऐसा प्याला है जिसमें ठंडा पानी या मदिरा डाल दी जाए तो वह दस वर्षों तक खाली नहीं होगा, एक ऐसा वैद्य भी है जो रोगी के आंसुओं से उसका रोग पहचान लेता है, और अंत में एक ऐसा ज्ञानी व्यक्ति है जो संसार में होने वाली भावी घटनाओं की जानकारी पहले ही दे देगा जिससे सिकंदर को कभी कष्ट नहीं होगा। सिकंदर बादशाह कैद की बातों से प्रभावित होकर उसी हर वस्तुओं की परख करता है और उसकी बेटी से विवाह कर लौट आता है।

शाहनामा में शासकों का इतिहास तो है ही, पहलवानों के किस्से भी भरपूर हैं। साहस है तो प्रेम भी शाहनामा को महान् बनाता है। शाहनामा एक युद्ध गाथा है लेकिन इसमें प्रेम भी सर्वोपरि है। शाहनामा के सभी पात्र मानवीय संवेदनाओं और गुणों के धरातल पर खड़े दिखाई देते हैं। शाहनामा को महाकाव्य कहने के संदर्भ में फिरदौसी ने इन पंक्तियों को लिखा जो आज भी उन्हें शाहनामा के माध्यम से जीवित बनाए रखे है -

हर आन कस की दारद हूश व राइ व दीन
पस अज मर्ग बर मन कुनद आफ़रीन

हर वह शख्श जो साहित्य परखने की दृष्टि रखता है, वह मेरे मरणोपरांत भी मेरी इस रचना की प्रशंसा अवश्य करेगा।

शाहनामें में आई प्रमुख कथाओं का संक्षिप्त परिचय देकर उनमें सहेजे गए मानवीय मूल्यों को तलाशने की कोशिश की है। कही इनमें गल्प उभरता है, तो कहीं अनावृत्ता सत्य की कठोर बानगी है। इसमें आई विविध कथाएं कुछ ऐसा सच छोड़ जाती है जिनका प्रकाश मानवता की राह प्रशस्त करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फिरदौसी - शाहनामा (जीवन एवं चिंतन - नासिरा शर्मा)

मालवी कहावतों में लोक संस्कृति

डॉ. वन्दना जैन * रचना जैन **

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश अपनी आंचलिक संस्कृति, साहित्य और कला के लिए विश्व विख्यात है। मध्यप्रदेश में स्थित मालवांचल की संस्कृति सुहावनी और आकर्षक है। यहाँ के निवासियों को बाबा महाकाल को तिलक लगाने का सुनहरा अवसर सदैव मिलता रहता है। यहाँ के कण–कण में उनकी गूँज का स्वर सुनाई देता है। प्रकृति से हरे भरे एवं सुरम्य प्रदेश की भूमि का वर्णन करते हुए मालवी कवि 'हरीश निगम' ने कहा है –

'अन्न धन लक्ष्मी सभी मिलेगी, होगा देश निहारवो ।
भारत माता का हिरदा में, जइयो रतन सो मालवो ।।'

अत: भारत की हृदय स्थली और भारतीय अस्मिता के प्रतीक मालवा के नाम में ही ऐसा जादू है जिसे सुनकर हृदय में उमंग की लहर दौड़ जाती है। यहाँ की बोली अत्यन्त मधुर एवं कर्णप्रिय है। अपनी इसी कोमलता के कारण यह दूर–दूर तक लोकप्रिय बनी हुई है। इस भाव को व्यक्त करती एक प्रसिद्ध कहावत दृष्टव्य है–

'मीठी बोली मालवी मन का मीठा लोग ।
चले मीठो वायरो मीठा रस की ओग ।।'

मालवी लोक साहित्य बहुमुखी साहित्य है। यहाँ के साहित्य में मालवा की मिट्टी की सौधी सुगंध, जलवायु तथा सांस्कृतिक संवेदना के स्वर सुनाई देते है। यह अलिखित साहित्य पीढ़ी दर पीढ़ी इस गाँव से पालकी में बैठकर दुल्हन के साथ ससुराल जाता है और दूल्हे के साथ घोड़ी पर बैठकर इस गाँव या शहर में आता है। इस प्रकार लोक साहित्य अतीत से जोड़कर हमारे वर्तमान को आनन्दित बनाता है। मूलत: इसकी अभिव्यक्ति लोकगीत, लोककथा, लोक नाट्य, लोकगाथा, लोकोक्तियों (कहावतो) आदि के द्वारा होती है। जिसमें मालवी कहावतों का विशेष महत्व है।

कहावते प्राचीनतम पुस्तकों से भी प्राचीन है। जब लेखन कला का श्री गणेश नहीं हुआ था तब से नर–नारी अपने तथा अपने पूर्वजों के अनुभवों के द्वारा बनाई गई कहावतों का प्रयोग करते थे। जिनमें अनेक कहावतें जनश्रुतियों, अशिक्षित समुदायों, कृषकों के अनुभवों पर आधारित होती थी। मालवा परिक्षेत्र में प्रचलित कुछ कहावतें ऐसी है जो इसी भू–भाग में जन्मी है और आधुनिक समय में भी यथा समय प्रयुक्त की जाती है–

'**बोली ने भलाई हांते जाय।'**

ख़अर्थात् विनम्र व्यवहार से सभी लोग मृत्यु के बाद भी स्मरण रखते हैं। अत: हमेशा उचित आचरण करना चाहिए।)

'जी की दुखे पांखू, वणी के आवे आंसू ।'

(अर्थात् जिसको दर्द होता है, वही पीड़ा का अनुभव करता है।)

आदि अनेक कहावतें लोक प्रचलित हैं कहने का तात्पर्य यह है कि मालवी कहावतों में जीवन के हर क्षेत्र में कहावतें खरी उतरी है। कहावतें जहाँ एक ओर बोलचाल का अनिवार्य उपकरण है, वही साहित्य के लिये भी अत्यन्त उपयोगी है।

मानव ही विश्व में एक ऐसा प्राणी है जो अपनी शारीरिक एवं बौद्धिक विशेषताओं के कारण संस्कृति का निर्माण कर पाया है। मालवा की संस्कृति विविध रंगी है। मालवी संस्कृति में मालवी भोजन का उल्लेख न हो तो अधूरापन लगता है क्योंकि मालवी भोजन में दाल–बाफले, लड्डू का स्वाद तो प्रत्येक व्यक्ति लेना चाहता है। सुप्रसिद्ध है –

'चूरे सूं बाटी मिले और उड़दा की दाल ।
ऊपर सूं नीबूं पड़े, बरफी कांई माल ।।'

यहाँ की वेशभूषा की अलग तरह की है। सामान्य रूप से पुरूष वर्ग धोती, कुर्ता, साफा आदि पहनते है। वहीं महिलाएँ ओढ़नी, लुगड़ा, घाघरा आदि पारम्परिक वस्त्र धारण करती है। पुरातन समय में इन्हें अत्यधिक सुन्दर बनाने के लिए उनकी किनारी में गोटा लगाया जाता था। लेकिन वर्तमान परिवेश में भी इसका प्रभाव कम नहीं हुआ किन्तु आधुनिक युग का प्रभाव पड़ने से कढ़ाई का प्रचलन बढ़ा है। मालवांचल के नागरिकों की इस परम्परा को व्यक्त करने वाली जनश्रुति लोगों के कण्ठ का हार बनी हुई है–

'एक नूर आदमी सेस नूर कपड़ो ।
हजार नूर गेणों मतो लाख नूर नखरो ।।'

अत: स्वयं को सजाने–संवारने की अभिलाषा मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है । ग्रामीणांचलो के नर–नारी इससे अछूते नहीं है, उनमें भी सौन्दर्य वृद्धि की इच्छा रहती है । वे लोक में प्रचलित गिलट व चाँदी के विभिन्न आभूषण, टीका, कुण्डल हार, अंगूठी, कन्दौस, कंगन, पायल, बिछियां आदि को धारण कर अपने नख–शिख सौन्दर्य में वृद्धि करती है । आभूषणों के संबंधन में एक प्रसिद्ध जनश्रुति है ।

'गेहणा थाप्यां का सिणगार ने भूखां का आधार ।'

(अर्थात आभूषण शरीर का श्रृंगार तो है लेकिन विपरीत परिस्थितियों में यह भूख का आधार भी बनता है ।

इसके साथ ही मालवा क्षेत्र के रीति– रिवाज में यहाँ की लोक संस्कृति के मनोहरी चित्र दिखाई देते है । परम्परागत रूप में जवारें (यह नवरात्रि के आखरी दिन उठती है) विद्या के उत्सव(बसन्त पंचमी), दशहरा, दीपावली, होली आदि पर्व धूमधाम से मनाये जाते है इसके अतिरिक्त कुछ त्यौहार कन्याओं द्वारा सम्पन्न किये जाते है । उनमें संजाबाई और उनके लोकगीत, कन्याओं द्वार चैती नवरात्रि पर फुलपाती का पर्व मनाना, दीपावली के दूसरे दिन सुहाग पड़वा पर सुहागिन नारियाँ बड़े–बुजुर्ग के पैर छूकर आशीर्वाद लेती है । आदि अनेक विशिष्ट रिवाज प्रचलित है ।

लोक संस्कृति के प्रमुख पक्ष रीति रिवाज पर आधारित एक मालवी

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी (हिन्दी) अध्ययनशाला , विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कहावत जिसमें दिवाली के अवसर पर गायें जाने वाले लोकगीत का उल्लेख किया गया है जो केवल दीपावली के अवसर पर ही गाया जाता है ।

'गई दिवारी गावे हीड़ ।'

मालवा सांस्कृतिक दृष्टि से समृद्ध है तभी तो यह कहावत यहाँ प्रचलित है –

'सात वार ने नौ त्योहार ।'

प्रत्येक पर्व या त्यौहार के अन्तर्गत कुछ किवदन्तियों प्रचलित होती है। अत: मालवा के निवासियों के हृदय में ईश्वर के अस्तित्व के प्रति अटल श्रद्धा, विश्वास और आस्था दिखाई देती है । इस संदर्भ की सूक्ति प्रसिद्ध है

'प्रात: उठिके नित कीजै प्रभु को ध्यान ।,
जाते जग में होय सुख ने उपजै कल्याण ।।'

सभी अंचलो की अपनी मान्यताएँ और लोकविश्वास होते है । यही लोकविश्वास व्यवहारिक जीवन में दिखाई देते है । लोक विश्वासों में कुछ शकुन, कुछ अपशकुन लोक कहावतों के रूप में प्रचलित है । मालवा के सामन्य जन कितने ही पढ़े लिखे क्यों न हो, वह भी इन विश्वासों को अनुभव कर उनको मानने लगते है । जैसे– जाते समय छींक का आना, बिल्ली का रास्ता काट कर जाना आदि अशुभ के प्रतीक माने जाते है वही दूसरी ओर गाय बछड़े का साथ दिखाई देना, भरे कलश ले जाती सौभाग्यवती नारी, शुभ कार्य के लिए दही खा कर जाना आदि अनेक मांगलिक शुभ शकुन माने जाते है । इस सम्बंध में एक लोक कहावत जन– समाज में प्रचलित है –

'नारी सुहागिन जल–भर लावै ।
दहि मछली जो सनमुख आवै ।।'

निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि मालवी कहावतों में मालवी लोक संस्कृति के दर्शन होते है । मालवी संस्कृति के दर्शन होते है । मालवी संस्कृति जन–जन में लोकप्रिय और आकर्षक है तभी तो ग्रामीणजन हो या नगरवासी सभी संस्कृति में रचे–बसे दिखाई देते है । अत: थोड़े शब्दों में व्यापक अर्थ को अभिव्यक्त करने में संमर्थ कहावते मालवी भाषा की अमूल्य निधि है ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1 तुलनात्मक लोकोक्ति साहित्य – डॉ.मिथिला प्रसाद त्रिपाठी ।
2 मालवा और उपबोलियों का व्याकरण –डॉ.प्रहलादचन्द जोशी ।
3 मालवी संस्कृति और साहित्य – डॉ.भगवतीलाल राजपुरोहित ।
4 लोकोक्ति कोश भूमिका – हरिवंशराय शर्मा ।

****

समकालीन परिप्रेक्ष्य और कला संदर्भों में लोकसाहित्य की उपादेयता

डॉ. अशोक कुमार *

प्रस्तावना – लोकसाहित्य किसी ख़ास जाति या वर्ग, सम्प्रदाय तथा देश से बंधा हुआ नहीं रहता, इसलिए आज के इस प्रजातांत्रिक और अन्तरराष्ट्रीय सद्भावना के दौर में उसे महत्वपूर्ण स्थान मिलना स्वाभाविक है। लोकसाहित्य लोकजीवन की बहुआयामी अभिव्यक्ति है, अत: समाज तथा मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा में इनका बहुत महत्व है। किसी समाज में प्रचलित प्रथाओं, विश्वासों, परम्पराओं तथा समाज में घटित होने वाली विभिन्न परिघटनाओं एवं व्यवहारों का सजीव एवं सरल चित्र अंकित रहता है। हमारे जीवन व्यवहारों एवं संस्कारों में अनेक अवसर पर लोकगीतों से ही पूर्णता आती है। ग्राम्य जीवन तो बिना लोकगीतों तथा लोकगाथाओं के अधूरा ही रहता है। लोकगीत तो किसी भी देश-प्रदेश के सहेजे गए लोक विश्वासों की बेशकीमती धरोहर होते हैं। जीवन का कोई ऐसा प्रसंग नहीं जहां लोकसाहित्य की सुनहली फसलें न लहलहाती हों । हृदय का प्रत्येक स्पंदन लोक की भावभूमि को नई ज्योति प्रदान करता है। लोकजीवन की कड़वी और मीठी सच्चाई इनमें सामने आ जाती है। इंसान के सुख-दुख, हास्य-रुदन, प्रेम और वैमनस्यता की रोचक दास्तान और गांव की जनता का दर्द लोकसाहित्य में अभिव्यक्त हुआ है। लोकगीतों के सम्बंध में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है-'भाई से विछिन्न बहन की करूण कथा, सौत के, ननद के और सास के अकारण निक्षिप्त वाक्य-बाणों से विद्ध बहू की मर्म कहानी, साहूकार, जमींदार और महाजन के सताए गरीबों की करूण पुकार, आन पर कुर्बान हो जाने वाले विस्मृत वीरों की शौर्य गाथा, अपहार्यमाण सती का वीरत्वपूर्ण आत्मघात, नई जवानी के प्रेम के प्रतिघात, प्रियतम के मिलन, विरह और मातृप्रेम के अकृत्रिम भाव इन गीतों में भरे पड़े हैं। जन्म से लेकर मरण तक के काल में और सोहाग-शयन से लेकर रणक्षेत्र तक फैले हुए विशाल स्थान में सर्वत्र इन गीतों का गमन है।'[1]

जीवन की वह अनुभूति जिससे जीवन को रंग-तरंग और सुगंध मिलती है लोकसाहित्य में मौजूद है। इसमें रक्त का लोहित, हरिद्रा की बेडौल गांठ का पीत और नवपल्लव की हरीतिमा का रंग मिलता है। कौए का काला और तोते का हरा पंख यहां नई चमक-दमक के साथ आंखों को सुहाते हैं। मोर का सतरंगी उजास लोक के कंठ में जलतंरग का कंपन भर देता है। मिट्टी का मटमैलापन आंखों की शीतलता का सबब बन जाता है। बलभद्र लिखते हैं-'लोकसाहित्य की परम्परा जन-जीवन से जुड़ी हुई हैं। जनता की सांस्कृतिक छवियां इसमें संचित होती हैं। यहां 'मइया' नीम की डाल पर स्वयं हिलोरा लगाती हैं तब जाकर झूलती हैं। प्यास लगने पर किसी बड़े घर की नहीं, मालिन के घर जाती हैं जिसका सम्बंध बाग-बगीचे से होता है। मालिन से वह पानी के लिए निहोरा करती है और मालिन भी सब छोड़कर-धधाकर दौड़ नहीं जाती कि मइया आई हुई हैं। ढोल, झाल की थापों पर यहां जीवन थिरकता है। बाढ़ आई तो भी गीत, सुखाड़ है तो भी गीत, विवाह है तो भी गीत। खेती-खलिहानी है तो भी। जीवन संघर्षो की अमिट छाप है इस पर। जीवनधर्मी संकल्पों की विरासत है लोकसाहित्य। इस विरासत को गति देना ही लोकहित में है। हमें स्मृति-सम्पन्न बने रहना होगा। भगत सिंह और ऐसे तमाम शहीद हमारी स्मृतियों के अंग हैं। 'इन्हीं स्मृतियों से उपजेगा साम्राज्यवाद के नाश का संकल्प।'[2]

सामाजिक स्तरभेद को मिटाने के लिए लोकगीतों की अहम भूमिका रही है। पर्वों-त्यौहारों, घरेलु संस्कारों, उत्सवों तथा ऋतुओं में लोककंठ से निकली स्वर लहरियों की मिठास में लोग जातिभेद, उँच-नीच, अमीर-गरीब की मानसिकता को भूल जाते हैं। लोकसाहित्य में सार्वभौमिकता का गुण होता है। वह किसी एक देश या जाति या धर्म की चीज नहीं होता है। डॉ. गुप्त का मत है कि 'लोकसाहित्य जनपदों की अपनी-अपनी लोकभाषाओं में होते हुए और जनपदीय संस्कृतियों को अपनाकर भी केवल अपने जनपदों तक सीमित नहीं रहता, वरन् क्षेत्रीयता की दीवारें लांघकर सर्वदेशीय हो जाता है। असल में, लोकसाहित्य उन मानवीय लोकभावों और लोकानुभूतियों का साहित्य है, जो सार्वभौमिक है। भाई-बहन, ननद, भौजी, माता-पुत्री, पति-पत्नी, सास-बहू, पिता-पुत्र, प्रेमिका-प्रेमी, आदि के सम्बंधों और खासतौर पर उनमें निहित भावनाओं का चित्रण सब जगह एक-सा है। इसी प्रकार हर जनपद के गीतों के विषय, बिंब या चित्र, प्रतीक और शैलियां भी एक समान हैं।'[3]

जीवन के उदात्त प्रेरक रूप में – लोकसाहित्य जीवन के शिल्प और सौन्दर्य का प्रस्तुतीकरण है। आजादी की लड़ाई के दौरान लोक साहित्य की ऐतिहासिकता के सम्बंध में के. एन. पणिक्कर लिखते हैं-'औपनिवेशिक स्रोत के पूर्वाग्रह एवं विकृत रूप के कारण, उनके सहारे विद्रोह की असली आवाज को पहचाना नहीं जा सकता। इसके लिए एकमात्र रास्ता लोक संस्कृति के विभिन्न रूपों में इस ऐतिहासिक घटना के बारे में मौजूद मौखिक परम्परा का इस्तेमाल ही है। ये रचनाऐं अधिकतर जनपदीय बोलियों में हैं। अनेक कारणों से शिष्ट कहे जाने वाले साहित्य में 1857 के सशस्त्र स्वाधीनता अभियान की नोटिस नहीं ली गई है किंतु लोकमन ने इसे जीवित रखा। लोक बोलियों में उसका गौरवपूर्ण स्मरण है और उसमें शरीक होने वाले स्वाधीनता सेनानियों और सेनानायकों की प्रशस्ति।' बहरहाल ये ऐतिहासिक महत्व की रचनाएं हैं, 'साधारण जनों द्वारा रचित।'[4]

सामाजिक अध्ययन के अहम स्रोत के रूप में – समाज की युगीन परम्पराओं, विचारधारा, मान्यताओं, रूढ़ियों और बदलते हुए परिवेश का अध्ययन करने में लोकसाहित्य सहायक हो सकता है। लोकसाहित्य में उपलब्ध विभिन्न तथ्यों और वर्णनों का उपयोग अब समाज और व्यक्ति के मनोविज्ञान के आंकलन में प्रयोग हो रहा है। समाज और लोकसाहित्य एक-दूसरे के पूरक हैं। समाज की दशा और दिशा का वास्तविक ज्ञान लोकगीतों और लोककथाओं में मिलता है। लोकसाहित्य के महत्व पर पाश्चात्य विद्धानों ने अपने विचार व्यक्त किए हैं। मानवशास्त्री डॉ. वैरियर एलविन के अनुसार-'लोकगीत केवल अपने संगीत, स्वरूप तथा वर्ण्य विषयों के कारण ही अहम नहीं हैं वरन् उनका महत्व उससे कहीं बढ़कर है। इन गीतों में मानव जीवन का ब्यौरा ही नहीं है बल्कि यह वो स्थापित और अनुभूत दस्तावेज है जो हमें मानवशास्त्र की प्रामाणिक जानकारी प्रदान करते हैं। मानवशास्त्री को अपने सिद्धान्तों की परख के लिए लोकगीतों की बनिस्बत

* भाषा अध्ययनशाला, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

कोई बेहतरीन गवाह नहीं मिल सकता है।'[5] एन्ड्रयू फ्लेचर का मत है कि यदि किसी आदमी को सभी लोकगाथाओं की रचना करने की अनुमति मिल जाती है तो उसे इस बात की फिक्र करने की जरूरत नहीं कि उस देश के कानून कौन बनाता है।[6] एवलिन मार्टिनेगो लिखती हैं–'लोककाव्य व्यक्तिगत या सामूहिक तीव्र भावों के प्रकाशन हैं। लोक कविता और कथाओं का स्रोत राष्ट्रीय जीवन के अन्तरतम से नि:सृत होता है। जनता का हृदय इन गीतों और गाथाओं में ओत–प्रोत रहता है। ऐसा भी समय आता है जब कि जाति या राष्ट्रीयता की अतिशय भावना ने पूरे देश को लोककवि के रूप में परिणत कर दिया है।'[7]

लोक मनोविज्ञान को समझने के लिए लोकसाहित्य मददगार सिद्ध होता है। ग्रामीण समुदायों में झाड़–फूंक, जादू–टोना और अन्य अंधविश्वासों या रिवाजों को लोकसाहित्य में देखा जा सकता है। लोकविद् देवेन्द्र सत्यार्थी मानते हैं कि 'भारत वर्ष का कोई भी चित्र भारतीय प्रथाओं, रीति–रिवाजों और हमारे आंतरिक जीवन की मनोवैज्ञानिक गहराई को इतने स्पष्ट तथा सशक्त ढंग से व्यक्त नहीं कर सकता, जितना कि लोकगीत कर सकते हैं। लोकगीत तो उस निर्मल दर्पण के समान हैं जिसमें जनता जनार्दन का समग्र मन, लोक भाव दिखाई देता है। लोकजीवन की अच्छाई, बुराई, सबलता–दुर्बलता, उठावट–गिरावट, स्वस्थता–अस्वस्थता, सदाचार–कदाचार, निर्भीकता–भीस्ता, मानवता–दानवता आदि मानसिक अवस्थाओं के दर्शन लोकगीतों के अतिरिक्त और कहां सम्भव हैं?'

लोकसाहित्य को इतिहास के अध्ययन में भी उपयोगी होता है। लोकसाहित्य में वर्णित गीत, गाथा, कथा और मुहावरों में तत्कालीन समाज की प्रवृत्तियों का चित्रण मिलता है। डॉ. गुप्त लिखते हैं–'लोकसाहित्य और इतिहास का सम्बंध बहुत निकट और घनिष्ठ है। लोकसाहित्य में एक युग के लोक की तस्वीर रहती है, जबकि इतिहास में व्यक्तियों, विशिष्ट घटनाओं, सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों के समन्वित एकत्व से लोक का चित्र खड़ा होता है। कथापरक लोकगीतों और लोकगाथाओं में जनपद की उन महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन और पात्रों का चित्रण मिलता है, जिनका इतिहास तक में उल्लेख नहीं है। यदि किसी जनपद के लोक की संस्कृति और सामाजिक स्थिति की वास्तविकता का पता लगाना हो, तो लोकसाहित्य पक्षपातविहीन होने के कारण अनुशीलन का मुख्य विषय है। इसलिए किसी भी युग का लोकसाहित्य उस युग के सामाजिक इतिहास का मौखिक दस्तावेज है।'[8]

'आज का युग कृत्रिम है। हमारी भाषा, हमारा रिवाज, हमारा विवेक, हमारा हेतु, हमारी नीतिमत्ता, हमारा जीवन, सभी कृत्रिम हो गए हैं। खुली हवा में चलना, फिरना या सोना हमारे लिए भय और लज्जा का विषय बन गए हैं। इसी प्रकार सामाजिक और कौटुम्बिक व्यवहारों में स्वाभाविक होने के लिए इसमें कुछ दम नहीं, जैसे स्वाभाविकता में मौत या सर्वनाश की आशंका हो। लोकसाहित्य के अध्ययन से तथा इसके उद्धार से हम अपनी कृत्रिमता का कवच तोड़ सकेंगे और स्वाभाविकता कह शुद्ध हवा में चल–फिरकर रूपशक्ति–सम्पन्न हो सकेंगे।'[9]

भाषा अध्ययन के क्षेत्र में महत्व – हिन्दी के विकास में जनपदीय भाषा एवं बोलियों का विशिष्ट योगदान रहा है। बिना लोक बोलियों के हिन्दी शब्दों की शास्त्रीय परम्परा पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकती थी। शब्दों की ऐतिहासिक विरासत के ज्ञान के लिए लोकसाहित्य एक महत्वपूर्ण स्रोत होता है। समाज में रहने वाली विभिन्न जातियों तथा कामगारों जैसे लुहार, बढई, कुम्हार, गडरिया, अहीर और मछुवारे आदि जिस पारिभाषिक शब्दों का इस्तेमाल करते हैं उनके विषय में पूरी जानकारी लोकगीत तथा लोकगाथा जैसी निधियां ही दे सकती हैं। मुहावरे, लोकोक्ति तथा कहावतों का खजाना भी लोक साहित्य में हैं। विभिन्न शब्दों के विश्लेषण से समाज और भाषा के अन्तर्सम्बंधों का भी ज्ञान होता है। डॉ. गियर्सन ने अपनी पुस्तक 'बिहार पीजेन्ट लाइफ' में अनेक जनपदीय और ग्रामीण शब्दों का संग्रह किया है। समय के साथ समाज और संस्कृति बदल जाया करती है लेकिन शब्दों का महत्व कम नहीं होता। आज ऐसे बहुत सारे शब्द इस प्रकार के मिल जाते हैं जो समाज व्यवहार में प्रचलन में नहीं हैं लेकिन उनसे एक समय विशेष में समाज के मानसिक दशा का पता चलता ही है। लोकसाहित्य का अध्ययन विभिन्न प्रकार की शास्त्रों के अध्ययन में सहायक सिद्ध होता है। भाषा विज्ञान के लिए तो लोकसाहित्य एक अनिवार्य उपकरण के रूप में है।

किसी क्षेत्र विशेष की भाषा के अध्ययन के लिए उस क्षेत्र की लोक परम्परा और लोकसाहित्य का अध्ययन बहुत जरूरी हो जाता है। लोकसाहित्य के द्वारा ही किसी क्षेत्र विशेष की भाषा एवं बोली की स्वाभाविकता, उपयोगिता और संरचना का प्रमाण मिलता है। 'लोक साहित्य लोक भाषा में निर्मित होने के कारण उसकी भाषा परिमार्जित भले ही हो, किन्तु भाषा के शब्दों का कुछ न कुछ आधार अवश्य होता है। इसी आधार पर लोक भाषा के अनेक शब्दों का अर्थ (जिन्हें सभ्य समाज द्वारा निरर्थक समझ लिया जाता है) लोक साहित्य के माध्यम से ढूंढा जा सकता है। 'शब्दों के ऐतिहासिक विकास, ध्वनि परिवर्तन आदि का अध्ययन लोकभाषा के अध्ययन के आधार पर सम्भव है और लोकभाषा का वास्तविक स्वरूप लोकसाहित्य में उपलब्ध होता है।'[10]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि लोकसाहित्य हमारे जीवन और मौलिक संस्कृति का आधार तत्व रहा है। आज देश में विकास और उत्थान के नाम पर मानवता के पोषक तत्वों के साथ जो खिलवाड़ की जा रही है वह मार्ग अशांति और विनाश का है और देर–सवेर यह बात हम समझ जाएंगे। लोकसाहित्य केवल गांव या कृषि चेतना का विषय नहीं है बल्कि उसके जरिए हम अपनी जीवन शैली और सामाजिक–आर्थिक ढांचे को और ज्यादा उदार और समतावादी रूप दे सकते हैं। भौतिक विज्ञान की सार्थकता इसी बात में निहित होती है जब हम अनुभूतियों को भी महत्व प्रदान करें और लोकसाहित्य हमारी अनुभूतियों को उभारने में सक्षम है और जीवन में कोमलता, प्रेम और पारिवारिकता के लिए लोकसाहित्य को अंगीकार करना आवश्यक है जिससे मानव अपने मूल गुणों को विस्मृत न कर बैठे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा, डॉ. पूर्णचन्द्र, हरियाणवी साहित्य और संस्कृति, हरियाणा साहित्य अकादमी, चण्डीगढ, पृ. 85 से उद्धृत
2. इतिहासबोध, इतिहास निर्माण के लिए, फरवरी 2008 अंक, सं. लाल बहादुर वर्मा, इलाहाबाद, पृ. 46
3. गुप्त, डॉ. नर्मदाप्रसाद, बुन्देली लोक साहित्य, परम्परा और इतिहास, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल, प्रथम, 2001, पृ. 39
4. समकालीन जनमत, पटना, अंक 2, जुलाई 2007, प्रधान संपादक रामजी राय, पृ. 31
5. The folk songs are important not only because the music, form and the content of verse but is itself part of a peoples life even more because in songs, in charms, in actually fixed and established documents, we have the most authentic and unshakable witness to ethnographic fact…In mailing up his (ethnologists) mind he can have no better evidence than songs. - Dr. V. Elwin, Folk Songs of Maikal Hills, Introduction, O.U.P. Bombay, 1944
6. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव, लोकसाहित्य की भूमिका, पृ. 271 से उद्धृत
7. उपाध्याय, डॉ. कृष्णदेव, लोकसाहित्य की भूमिका, पृ. 271–272 से उद्धृत
8. गुप्त, डॉ. नर्मदाप्रसाद, बुन्देली लोकसाहित्य, परम्परा और इतिहास, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल, प्रथम, वर्ष 2001, पृ. 44
9. सत्यार्थी, देवेन्द्र, बेला फूले आधी रात, पृ. 98 से उद्धृत
10. गुप्त, डॉ. महेश, लोकसाहित्य का शास्त्रीय अनुशीलन, नेहा प्रकाशन, दिल्ली, 2008 पृ. 26–27

समकालीन कविता में विश्व संस्कृति

डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला *

शोध सारांश – अब आदमी को सनसनीखेज खबर सुनने की आदत हो गई है, चकाचौंध में जीने का आदि हो गया है तथा ग्लैमरयुक्त बनावटी वस्तुओं को इस्तेमाल करना रोजमर्रा में शामिल हो गया है। वह जिस भी कार्य में संलग्न होता है उसमें अपनी भूमंडलीय संस्कृति की कुछ झलक पाने की कोशिश करता है, लालायित रहता है, ऐन-केन प्रकारेण पा ही लेता है। यह कोई अचरज की बात नहीं, यह तो समय की धारा है, समय की लय है और मांग भी। बाजार और विज्ञापन, विज्ञान और तकनीकी, उद्योग और संचार-माध्यम सबके सब मानव जीवन पर, मानवीय सोच पर हावी हो गए हैं। मानव के रिष्ते भी अब बाजार, विज्ञापन, उद्योग और तकनीकी ही तय कर रहे हैं। सचांर माध्यमों ने भी मनुष्य को ज्यादा सोचने के बजाए केवल देखने, जानने और सुनने की सुविधा प्रदान की है तथा हर सामग्री को सरलाता से उपलब्ध कराने की संस्कृति अपना ली है। ऐसे अप्रिय अनुशासनों को देख समकालीन कविता ने मानव को मानव होने की, मानव को मानवता की संस्कृति से अवगत कराने की ठानी है। समकालीन कविता पूरी मजबूती से विश्वमानवीय सरोकरों को रेखांकित करते हैं। साहित्य के बुनियादी सरोकार भी तो यही है।

प्रस्तावना – साहित्य और संस्कृति ये दोनों शब्द बहुत व्यापक हैं। दोनों का सरोकार भी व्यापक मानव जीवन से है, मानव चेतना से है। इन दोनों की स्थिति अत्यंत जटिल और अपरिमित है। साहित्य का सरोकार यदि संस्कृति का संरक्षण और संवर्धन है तो संस्कृति का सरोकार मानव को मानव बनाने का है, मानव को मानव ही नहीं नव मानव बनाने का भी है तथा उसकी अस्मिता के प्रति भी चेतनता की है। समकालीन कविता में अभिव्यक्त संस्कृति ऐसी है।

साहित्य का उद्देश्य या सरोकार केवल भूख, रोटी, सौन्दर्य आदि को ही चित्रित और संरक्षित करने का नहीं; अपितु संस्कृति का संरक्षण भी मूल्याधारित करना है। मैंनेजर पांडेय कहते हैं- 'संस्कृति और उसके विभिन्न रूपों की मूलगामी ऐतिहासिक मीमांसा का उद्देश्य केवल विचार के लिए विचार करना या आत्मसंतोष के लिए चिंतन करना नहीं है, बल्कि समाज-व्यवस्था और सामाजिक संबंधों के बुनियादी बदलाव के लिए आवश्यक चेतना जगाना है।'[1] संस्कृति गौरवान्वित और हस्तांतरित तभी होती है जब उसमें जीवन के, विश्व जीवन के कुछ तत्त्व मौजूद रहते हैं। हर युग, हर काल, हर समाज, हर जीवन की संस्कृति चाहती है कि वह हस्तांतरित होती रहे। समकालीन कवि विजेन्द्र की कविता में संस्कृति की अजस्र धाराएँ और विश्व-संस्कृति की परिकल्पना के सौपान हमें प्राप्त होते हैं-

'पथ से पथ फूटे हैं
शाखाओं से शाखें
कल से आशाओं ने आँखें खोली हैं
कठिन तलों में
काँटें गड़ने से सोई आँहें बोली हैं
तल में धाराएँ फूटी हैं।'[2]

यह तभी संभव है जब उसमें जीवन-विकास के, जीवन-संरक्षण के, जीवन-चेतना के अंश मौजूद हो। संस्कृति से भी एक नयी संस्कृति जन्म लेती है, संस्कृति के अंदर भी कई संस्कृतियाँ मौजूद रहती हैं। तभी तो वह मानव जीवन को युग और काल सापेक्ष संस्कारित करती है। उसमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना निहित होती है। हम सब 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की संस्कृति को जानते हैं, 'वसुधैव कुटुम्बकम्' कहने वाले भी इसी धरती और संस्कृति के हैं यदि ऐसा कहूँ तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। आशय क्या है यह सब जानते हैं। पूरी वसुधा में कुटुम्ब की कल्पना का दृश्य, संस्कृति ही देती है। मानव-संस्कृति, सामाजिक संस्कृति, पारिवारिक संस्कृति, वैयक्तिक संस्कृति, देशीय संस्कृति, लोक और नगरीय संस्कृति ये सब हमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की संस्कृति का दृश्य दिखाते हैं। और ये सब अब विश्व संस्कृति के आधारभूत अंग हो गए है। कवि की कल्पना भी इसी परिप्रेक्ष्य में है। श्यामसिंह शशि की कविता 'मेरे बच्चे' में वसुधैव कुटुम्बकम् की संस्कृति की अंतर्ध्वनि व स्वामी विवेकानंद का सपना साकार सा प्रतीत होता है-

'मेरे बच्चे!
तुम हँसते हो
तो सारा विश्व हँसने लगता है
... .
तुम्हारी किलकारी में मुझे
वसुधैव कुटुम्बकम् की ध्वनि
सुनाई पड़ती है
इसे मद्धम न होने देना
मेरे नन्हे-मुन्ने।'[3]

ऐसे ही नयी विश्व-संस्कृति और विश्व-मानवीयता की परिकल्पना कवि 'त्रिलोचन' की कविता में दिखाई देती है तथा विश्व-संस्कृति की संरचना का पहल स्वयं अपने को करने का संदेश भी देती है-

एकांत श्रीवास्तव समकालीन कविता में सांस्कृतिक विश्वजनीनता की परिकल्पना को इस तरह रेखांकित करते हैं- 'एक कवि स्थानीयता और विश्वजनीनता के दो ध्रुवों के बीच संतुलन साधने का प्रयत्न करता है। हिन्दी में ऐसे हुनरमंद कवियों की कमी नहीं है जो स्थानीय हुए बगैर विश्वजनीन बने हों।'[5]

विश्व-संस्कृति का सपना तो सब देखते हैं, विश्व-संस्कृति का विजन कई रूपों में देखते हैं, अपने आपको विश्व-संस्कृति में सराबोर भी पाते हैं पर विश्व-संस्कृति का वास्तविक पैमाना क्या है यह आज भी अस्पष्ट है। कहीं हम भूमंडलीकरण, सार्वभौमिकरण, बाजारीकरण, कम्प्यूटरीकरण, औद्योगिकीकरण, इंटरनेट को तो विश्व-संस्कृति नहीं मानते। ये विश्व-संस्कृति का एक पक्ष या पहलू हो सकता है पर विश्व-संस्कृति की संपूर्णता इतने में ही पूरी नहीं हो जाती। अभी विश्व-संस्कृति के ये-ये तत्त्व हैं कह

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र) भारत

पाना कठिन हैं, जिनका प्रयास किया जाना चाहिए या किया जा रहा है। ऐसा इसलिए क्योंकि बाजार और विज्ञापन, विज्ञान और तकनीकी, उद्योग और संचार-माध्यम सबके सब मानव जीवन पर, मानवीय सोच पर हावी हो गए हैं। मानव के रिश्ते भी अब बाजार, विज्ञापन, उद्योग और तकनीकी ही तय कर रहे हैं। तो मानव के संस्कार कौन तय करता होगा यह अंदाजा स्वमेव लगाया जा सकता है। सचांर माध्यमों ने भी मनुष्य को ज्यादा सोचने के बजाए केवल देखने, जानने और सुनने की सुविधा प्रदान की है तथा हर सामग्री को सरलता से उपलब्ध कराने की संस्कृति अपना ली है। ऐसे अप्रिय अनुशासनों को देख समकालीन कविता ने मानव को मानव होने की, मानव को मानवता की संस्कृति से अवगत कराने की ठानी है। इसका एक दृश्य अमेरिका प्रवासी 'अर्चना पंडा' की कविता में अभिव्यक्त है जो अपनी संस्कृति को भूल नहीं पाती इस सच्चाई के साथ भारतीय संस्कृति में विश्व-मानवीय संस्कृति के तत्त्व मौजूद हैं(ये सब जानते हैं कि मिस्र और मोसोपोटोमिया की संस्कृति मिट गयी मगर भारतीय संस्कृति आज भी अमिट है)-

'जब आना इस ओर तो थोड़ी माँ की खुशबू ले आना
बाँध सको तो गली मुहल्लों की आवाजें ले आना
संस्कृति इतनी लाना कि आखिरी वक्त तक साथ रहे
हो पाये तो मुट्टी भर देश-प्रेम भी ले आना।'

मैंने एक पक्ष संस्कृति का सरोकार मानव को मानव बनाने, मानव को नव मानव बनाने को दृष्टिगत रखते हुए उठाया है। क्योंकि जब व्यक्ति या जीवन एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में प्रवेश करता है, दूसरी संस्कृति को आत्मसात् करता है तो कुछ-न-कुछ परिवर्तन अवश्य होता है। आज के मानव जीवन में ये कुछ परिवर्तन दिखाई भी दे रहे हैं और नहीं भी। पूर्ण परिवर्तन का प्रयास हमें सबको मिलकर करना चाहिए। समकालीन कविता में इसका एक साहसिक प्रयास है या समकालीन कविता का प्रयास जारी है। बीसवीं सदी भी मानव और संस्कृति के लिए अच्छे अनुभव के रूप में नहीं कह सकते, इस दूषित परम्परा का एक चित्र प्रभाकर माचवे की कविता में देख सकते हैं-

'बीसवीं सदी ने यही किया?
मानव को मानव का भक्षण
मानव को निज संरक्षण का
परवाना सबको बाँट दिया-
जीवन संघर्ष बढ़ा यों तक
उस हाथ दिया, इस हाथ लिया,
देख न पुण्य अथवा पातक
जिसने मारा बस वही जिया।'[6]

सचमुच विश्व-संस्कृति का जो नक्शा बनाया जा रहा है उसमें दया, धर्म, सदाचार, संयम, शील, शांति का समावेश होना चाहिए।

रमेश पाण्डेय की कविता 'समय बाढ़ की नदी की तरह प्रवेश कर रहा है' की पंक्तियाँ जिसमें 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की संस्कृति को अलग संदर्भो में व्यक्त किया है। परिवार के सदस्यों के कट-कटकर अलग होते जाने की संस्कृति पर चिंता जाहिर की है कि कहीं ये विश्व-संस्कृति का दुष्परिणाम तो नहीं, सांस्कृतिक परिवर्तन परिवार के विघटन का कारण तो नहीं-

'समय बाढ़ की नदी की तरह प्रवेश कर रहा है
किसान के खड़े खेत की तरह
कट-कटकर अलग हो रहे हैं
परिवार के सदस्य
घर का हृदय
अरार की तरह धसक रहा है।'[7]

विश्व-संस्कृति की पूर्ण स्वीकृति के पहले इस बिंदु पर भी विचार करना होगा। विश्व-संस्कृति की दुहाई देने से पहले परिवार की संस्कृति को संरक्षित व इतनी प्रगाढ़ बनाना होगा कि वह विघटित न होकर जस-की-तस हस्तांतरित होती रहे। जो वतन और देश के आधार पर संस्कृतियाँ बँट रहीं हो तब तो विश्व-संस्कृति के मायने और वायदे झूठे हैं। तो हमें विश्व-संस्कृति की संरचना से पहले आत्ममूल्यांकन की ईमानदार स्वीकृति जरूरी है। तब तो यह प्रश्न सताना लाजिमी है कि विश्व-संस्कृति किसे कहेंगे। जबकि संस्कृति का इतिहास बहुत व्यापक और विशाल है। गजेन्द्र पाठक अपने लेख 'नवजागरण विमर्ष का सांस्कृतिक पक्ष : आधी आबादी अधूरे प्रश्न' में एडवर्ड सईद के विचारों को उद्धृत करते हुए लिखा है कि- 'दुनिया में तरह-तरह की बहुरंगी संस्कृतियाँ, परम्पराएँ और पहचानें हैं। उनके बीच संघर्ष के बावजूद एक आवाजाही की प्रक्रिया भी है। इस आवाजाही को उन्होंने न केवल स्वीकार करने की जरूरत समझी थी बल्कि इसको विभिन्न सभ्यताओं के बीच संवाद की प्रक्रिया के रूप में आधार बनाने पर बल दिया था।'[8]

उन्होंने इस चिंता को भी जाहिर की थी कि- 'अपनी परम्परा और संस्कृति के इतिहास के साथ-साथ भूगोल तय करने की चुनौती ने यह सोचने पर विवश किया कि वर्चस्व और प्रतिरोध की संस्कृति के प्रश्न किन आधारों पर सुलझाये जायेंगे।'[9] (एडवर्ड सईद की चिंता) संस्कृति के इस प्रश्न को सुलझाने का नायाब तरीका कवि गोरख पांडेय की इस कविता में प्रतीत होता है-

'ये आँखें हैं तुम्हारी
तकलीफ का उमड़ता हुआ समुन्दर
इस दुनिया को
जितनी जल्दी हो
बदल देना चाहिए।'[10] (आँखें देखकर)

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि संस्कृति एक सच्चाई है जिसे झुठलाकर न जीवन को ठीक से समझा जा सकता और न कला को। किसी भी संस्कृति को विश्व-शांति का पयार्य होना चाहिए, मानव-जीवन के सापेक्ष होना चाहिए, जीवन को शाश्वत मानते हुए। समकालीन कविता में ऐसी ही विश्व-संस्कृति की, विश्व-मानवीयता की संकल्पना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मैनेजर पांडेय : शब्द और कर्म, वाणी प्रकाशन, 21ए दरियागंज नई दिल्ली-110002, पृष्ठ-31
2. ज्ञानरंजन : पहल-37, वर्ष 1988-89 (हिन्दी की समकालीनकविता पर केन्द्रित), 101 रामनगर, आधारताल, जबलपुर-482004, पृ.74
3. बलदेव सिंह मदान : आजकल, अप्रैल 2003, अंक 12, पूर्णांक 702,वर्ष 59, आजकल प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली110001, पृ. 27
4. त्रिलोचन शास्त्री : तुम्हें सौंपता हूँ, पृ. 42
5. एकांत श्रीवास्त : कविता का आत्म-पक्ष, प्रकाशन संस्थान 4715/21, दयानंद मार्ग, दरियागंज नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2006, पृष्ठ-161
6. बी.के.अब्दुल जलील : आधुनिक हिन्दी साहित्य विविध आयाम, वाणी प्रकाशन, 21ए दरियागंज नई दिल्ली, प्रथम सं. 2000 पृ.35 से साभार
7. ज्ञानरंजन : पहल-79, फरवरी-मार्च 2005, 101 रामनगर, आधारताल, जबलपुर -482004, पृष्ठ-126
8. ज्ञानरंजन : पहल-79, फरवरी-मार्च 2005, 101 रामनगर, आधारताल, जबलपुर -482004, पृष्ठ-205
9. ज्ञानरंजन : पहल-79, फरवरी-मार्च 2005, 101 रामनगर, आधारताल, जबलपुर -482004, पृष्ठ-205
10. गोरख पांडेय : जागते रहो, सोने वालो, पृ. 29

छायावादी काव्य में वेदना

डॉ. गुलाब सोलंकी *

प्रस्तावना – परमात्मा की छाया आत्मा में पढ़ने लगती है और आत्मा की परमात्मा में यही छायावाद हैं। (डॉ. रामकुमार वर्मा)

छायावादी कवियों ने प्रणय की अनुभूति को विविध मानसिक अवस्थाओं के माध्यम से चित्रित किया, जिसमें आशा, आकूलता, आवेग, तल्लीनता, निराशा, पीड़ा, अतृप्ति, स्मृति, विशाद आदि का अभिनव एवं मार्मिक चित्रण किया हैं।

अवसाद, वेदना और निराशा छायावाद के प्रमुख प्रतिपाध हैं किन्तु उन्होंने अपनी वेदना को अंह की परिधि से निकालकर व्यापक बना दिया हैं। पंत के अनुसार वेदना को चित्रित किया –

'वेदना! कैसा करूण उद्गार हैं, वेदना ही है, अखिल ब्रहाण्ड यह।'

छायावाद का समय सन् 1936 से 1938 का समय माना जाता हैं। छायावाद के चार आधार स्तंभ माने जाते हैं, जिनमें प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी वर्मा सम्मिलित हैं।

वेदना के मनोवैज्ञानिक आधार के संबंध में कहां जाता हैं कि हृदय पर आघात पहुंचने से उत्पन्न भाव से कष्ट और पीड़ा की अनुभूति होती हैं। यह अनुभूति ही वेदना हैं।

छायावादी कवियों का मानना है, कि वेदना ही मनुष्य को मनुष्य के निकट लाती हैं। सुख में तो मनुष्य अपनो को भी छोड़कर भोग करना चाहता हैं।

'उस सोने से सपने को देखे कितने युग बीते।'
यामा (निहार)

जयशंकर प्रसाद ने आंसू का आरंभ विरह वेदना की निम्न पंक्तियों से किया–

'इस करूणा कलित हृदय में, अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरो में वेदना असीम गरजती।'

छायावादी कवियों की व्यक्तिगत निराशा ही करूणा और विश्व प्रेम का रूप ग्रहण कर लेता हैं जहां कवि सारे संसार की वेदना को खुद स्वीकार करके विश्व जीवन को सुखमय बनाना चाहता हैं। छायावादी कवियों ने अपनी सुख, दुखमयी अनुभूति को ही मुखर किया हैं, और काव्य में मनोजगत की गहराई को वाणी में संजोने का प्रयत्न किया हैं।

आंसू काव्य में प्रसाद की अनुभूति व्यक्तिगत निराशा के गर्त से निकलकर विश्व वेदना के साथ तादात्मय स्थापित करती हुई, मानव जीवन को सुखी बनाने के लिए व्याकुल हो उठती हैं।

प्रेम की लौकिक और आध्यात्मिक मधुर वेदना में तपकर छायावाद का कवि एक कुशल चिंतक के रूप में दर्शन की ऊंचाईयों को पा लेता हैं और दार्शनिक के रूप में विश्व कल्याण को दृष्टि में रखकर मानव जगत को संदेश देता हैं।

'विश्व वेदना में तप प्रतिपाल, जग जीवन की ज्वाला में गल।' (पंत– गुंजन)

पंत की काव्य दृष्टि, सृष्टि में व्याप्त, मूल अक्षर सत्य का उद्घाटन करती हैं।

अपने भाववादी दृष्टिकोण और अतीतोन्मुख अनुराग के बावजुद छायावादी कवियों ने न सामाजिक यथार्थ से आंखे मूंदी हैं, न धर्म वैषम्य को ही अपने दृष्टिपथ से ओझल होने दिया हैं। सौन्दर्य के प्रति अपने तीव्र आकर्षण और वस्तुगत सौन्दर्य के सूक्ष्म स्तरो की खोज के बावजूद छायावादी काव्य न तो युग यथार्थ से पूरी तरह विछिन्न हैं, न तत्कालीन चिंतन धाराओं और आंदोलनों के प्रभाव से मुक्त।

मानवतावादी विचारधारा से सम्प्रक्त इस काव्य में कल्पना और यथार्थ, व्यष्टि और समष्टि, अनुराग और विराग, हर्ष और विषाद, प्रणय और पीड़ा प्रकृति और विकृति आदि का मणिकांचन योग हैं।

महादेवी वर्मा निराकार, सर्वव्यापक प्रिय की भावना को ही काव्य का प्राण मानती हैं। उनके गीत भावप्रधान है, गीतों में व्यथा, पीड़ा आशा, अज्ञान प्रिय के प्रति प्रणय निवेदन और साधना की विविध अनुभूतियों के स्वर मुखरित हुए हैं साथ ही अज्ञात प्रियतम के प्रति प्रणय निवेदन किया हैं, किन्तु उनका प्रणय दुखप्रधान हैं, वे प्रिय से मिलने की कामना नही करती, क्योंकि मिलन में तो व्यक्तित्व का ही नाश हो जाता हैं वे कहती हैं–

मिलन का मत नाम लो, मैं विरह मे चिर हूँ।

महादेवी स्वयं साधना की आग में जलकर सामाजिक जीवन को अधिक सुखद और मंगलमय बनाना चाहती हैं और अपने जीवन की तुलना कुछ इस तरह करती हैं–

'मैं नीर भरी दुख की बदली'

छायावादी काव्य में अनुभूति और सौन्दर्य के स्तर पर प्राय: मानव और प्रकृति के भावों और रूपों का तादात्म्य दिखायी देता हैं। प्रसाद की अनुभूति शैव दर्शन में परिणत होती चली जाती हैं, निराला अद्वैत और भक्ति के क्षेत्र में साधना करते दिखायी देते हैं, पन्त की काव्य दृष्टि सृष्टि में व्याप्त मूल अक्षर सत्य का उद्घाटन करती हैं और महादेवी निराकार सर्वव्यापक प्रिय की भावना को ही काव्य का प्राण मानती है।

छायावाद में प्रेम सौन्दर्य आदि भावनाओं को स्वीकार कर अव्यक्त निराकार प्रिय के प्रति प्रणय निवेदन को रहस्यवाद की मूल विशेषता मानता हैं, कवियों की व्यक्तिगत निराशा करूणा विश्व प्रेम का रूप ग्रहण कर सारे संसार की वेदना को खुद स्वीकार करके विश्व जीवन को सुखमय बनाना चाहता हैं।

छायावादी काव्य में अनुभूति की प्रधानता हैं तो कवि अपनी प्रतिभा द्धारा ऐसे सौन्दर्य रूप व्यक्त करता हैं, जो सभी को अपनी ओर आसक्त कर लेता है।

छायावादी नवीनता के समर्थक थे वे नवीनता चाहते थे, प्रकृति को जड़ न मानकर चेतन सत्ता स्वीकार करते हैं।

* प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत

'कनक छाया में जबकि सकाज खोलती कलिका डर के द्धार।'

साहित्य जगत में जितने विरोधों और मतभेदो का सामना छायावाद को करना पड़ा उतना अभी तक किसी भी साहित्यिक वाद को नहीं। सर्वप्रथम आविर्भाव को लेकर तो कभी विषयवस्तु को लेकर। छायावादी कवियों के व्यक्तिगत जीवन, परिस्थितियों आदि का अध्ययन करने से ज्ञात होता हैं, कि उनके साहित्य में व्यक्तिगत दुख, दर्द अभाव आदि के साथ विश्व कल्याण की भावन भी सम्मिलित हैं जो साहित्य की अमूल्य निधि मानी जा सकती हैं। साथ ही छायावाद जिस उद्देश्य को लेकर चला उसमें छायावादी कवियों को सफलता मिलती हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यामा (निहार महादेवी)
2. कामायनी - प्रसाद
3. गुंजन - पंत
4. पंत और उनका रश्मिबंध - देशरासिंह भाटी
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र

****

पुरूष सत्तात्मक समाज में शोषित नारी : माधवी के संदर्भ में

डॉ. भारती एक. चौधरी *

शोध सारांश – प्रदेश के लोकप्रिय एवं यशस्वी मुख्यमंत्री माननीय श्री शिवराजसिंह जी चौहान द्वारा लोक सेवाओं के गारंटी अधिनियम 2010 पारित कर नागरिकों के अधिकारों को सशक्त बनाकर अभिनव कार्य किया हैं। आमजन को याचनाभाव से मुक्त कर सशक्त बना दिया हैं एवं लोक सेवा में कोताही
शब्द कुंजी – लोक सेवा, अधिसूचित, हितग्राहियों, पदाभिहित, शास्ति ।

प्रस्तावना – स्वातंत्र्योत्तार हिन्दी नाटककारों में भीष्म साहनी का नाटक 'माधवी', 'हानूष' और 'कबीरा खड़ा बाजार में' के बाद तीसरा नाटक है।

भीष्म साहनी का तीसरा नाटक 'माधवी' की रचना का मूल आधारसूत्र महाभारत के उद्योगपर्व में आए (106 से 120 वें अध्यायों में वर्णित) माधवी –गालब की कथा है जो भारतीय पितृसत्ता के विद्रुप और विसंगति को अभिव्यक्त करता हुआ है। स्त्री के स्वत्वहरध की यात्रा दान में दिये जाने से शुरु होती है और आगे भी सबकुछ छिनता जाता है।

कथासूत्र के रुप में देखे तो ऋषि विश्वामित्र ने रुष्ट होकर गुरुदक्षिणा में आठ सौ श्यामवर्ण अश्वमेधी घोडो की असंभव मांग कर, गालब को त्रस्त कर दिया। वह विष्णु की सहायता से ययाति के पास याक बनकर जाता है। सर्वस्व दान कर चुके 'ाति गालब को अपनी बेटी माध्वी दे देते है, जो उसे गुरु दक्षिणा के उऋण कर सहेगी। माधवी को चिरयौवना रहने का वरदान प्राप्त है। माधवी गालब से प्रेम करने लगती है, पर शेष दक्षिणा चुकाने के लिये उसे गुरु विश्वामित्र क पास भी रहना पड़ता है। गालब के उऋण होने पर के बाद माधवी स्वयंवर में गालब को वरण करना चाहतीर है गालब गुरु के आश्रम में रह चुकी स्त्री को गुरुमाता मानकर पत्नी बनाने के लिये तैयार नहीं होता। विभिन्न राजाओं (अयोध्या, नरेश हर्यश्च, काशी नरेश दीवोदास और भोजनगर के राजा उशीनगर) के पास रहकर उनके लिये चक्रवर्ती पुत्र पैदा करने और उनसे बिछुड़ती जाने वाली माता अतंत: अपने प्रेमी से भी बिछुड़ जाते है और अकेली रह जाती है और हमें प्रश्न उठता है – अहों ! नर्यास्तु पूजयन्ते ?

यह नाटक नायक की फलप्राप्ति की कहानी न होकर स्त्री के प्रति उदासीनता और असंवेदना का गहरा तमस लोक है। जैसे कि माधवी की कथा नायक की ठिन यात्रा का माध्यम एवं साधन है। यानी पुरुष सत्ता की भौंडी और पाश्वविक हिंसाओं के बजाय नैतिक चेतनाओं के छत्र को भेदता है। धर्म, त्याग, बलिदान की बदौलत उसके पीछे छिपी वासनाओं, निर्वैयक्तिक, बेहनद ठंडी और सिद्धांतों पर आधारित हिंसा को दिखाता है। पात्र, घटनाक्रम कुछ भी नहीं बदला, सिफ नाटककार की दृष्टि बदली हैं, जो अतीत के रहस्यों को सामायिक संदर्भो में पकड़ने का प्रयास है।

'माधवी' को पढ़ते हुए अभिज्ञान शांकुतलम् की शंकुतला, प्रसाद के नाटक फलक पर पुरुषों की तुच्छताओं में घिरी ध्रुवस्वामिनी उभरती है तो समकालीन धरातल पर सुरेन्द्र वर्मा के नाटक 'सेतुबंध' में चन्द्रगुप्त की महत्वाकांक्षा का माध्यम पुत्री प्रभावती बनती है।

डॉ. रमेश गौतम 'हिन्दी नाटयकर्म' : दृष्टि और सृष्टि' के मतानुसार –

माधवी की त्रासदीय त्रिकोण में उभरती है। उसका भाग्य नियति का त्रिकोण बनता है। पिता–ययाति, तथाकथित प्रेमी गालब और उसके गर्भ को किराये पर लेने वाले पतियों ..... इन सभी पुरुषों के लिये माधवी एक चीज है, उपकरण है, आकांक्षा पूर्ति का साधन है ..... उत्सर्ग और आज्ञापालन के बाद भी जिसका कोई पिता नहीं, पूर्ण समर्पण के बाद भी जिसका कोई प्रेमी नही, संतान उत्पन्न करने के बाद भी उसका कोई पुत्र नहीं और वह किसी की जननी–माँ नहीं ।

माधवी के ब्याज से पितृसत्ता में कर्तव्यपालन, धर्मपालन, आस्था, पाप–पुण्य, दान के अंतिमसूत्रों का छत्र और कहर खुलता है। नाटक के प्रारंभ में गालब की ऋण मुक्ति में सहायक होने वाले विष्णु माधवी के प्रति विपरीत क्यों ? 'ाति भी माधवी को 'भाग्य' के सहारे छोड़ हाथ झाड लेते है। यकीनल नहीं होता कि कोई पिता अमर होने के कामना–यज्ञ में पुत्री की आहुति दे सकता है। यानी पिता भी निर्बन्ध और निस्पृह! उतना ही नहीं वे हरिशचंद्र और कर्ण के स्थापित साम्राज्य को जीतना चाहते है, तभी तो उनके काज श्लाघा संगीत सुनने को प्यासे है .... वे आश्रमवासियों से बार बार पूछते है कि उनके दान–दाक्षिण्य के बारे में क्या चर्चाएं हो रही है। इस प्रकार दान–दाक्षिण्य के खेल में महनीय, धर्मधारी एवं सत्तावान पुरुष के बीच माधवी अकेली है। साहनी जी ने जानबूझकर स्त्री पात्रों को कथ्य से बाहर रखा है और हम देखते है कि माधवी पुरुषों से घिर गई है। वैसे भी धर्म, शास्त्र, समाज एवं नैतिकता के वृहत्तर कथानक से स्त्रियों खारिज ही है।

यद्यपि सत्ता के सोयानक्रम में प्रति–वन्दित तमाम पुरुष माधवी का जमकर दोहन करते है और स्त्री के स्त्री के प्रति असंवेदना के सभी शिकार है। जैसे गालब पर दाक्षिण्य–ऋण का हठ सवार है, ययाति पर दानवीरता का, राजवर्ग अपने चक्रवर्ती पुत्र की लालसा में माधवी की देह और मातृत्व को घोडों के बदले खरीदते है।

चूंकि सबसे घातक और अंतिम वार तो पिता ययाति ने कर दिया – मानो माधवी को उसी से छिनकर। पिता होकर गालब को पुत्री के चिर कौमार्य के वर और चक्रवर्ती सम्राटों को धारण करने वाली गर्भ का मूल्य समझाते है। यहां माधवी की इच्छाएँ, स्वप्न, स्वत्व सब दान के खड्ग से हत हो चुके है।

माधवी के घोड़ों के बदले बिकने में वस्तु विनिमयवाली व्यापार पूर्ण अवस्था मूर्त होती है। प्रसादजी की ध्रुवस्वामिनी भी कहते है .....

* हिन्दी विभाग, एस.बी. महिला आर्ट्स कॉलेज, हिम्मतनगर, साबरकांठा (गुजरात) भारत

'पुरुषों ने स्त्रियों को अपनी पशे सम्पत्ति समझकर उन पर अत्याचार का अभ्यास बना लिया है '।

घोड़े मानो पुरुष के बल के मिथक है। घोडा पुरुष की एतासीकृत कामशक्ति (काम और युद्ध) का सबसे उदग्र संप माना जाता है। इनके खुरों के नीचे रौंदी जाती भूमि है – स्त्री। ये घोडे विजयोन्माद के प्रतीक बनकर विष्वामित्र एवं ययाति के अहंकार से भी जुड़ जाते है। गालब भी अपने आत्मकेन्द्रित लक्ष्य की ओर हयदल में शामिल हो जाता है।

विश्वामित्र की मांग में भी कथावाचक पुरुषचिति के अंधकार को प्येलता हुआ कहता है .....

'कहीं उेसा तो नहीं कि इन घोड़ों की बदौलत आर्यावर्त के सभी राजे–महाराजे, अश्वमेघी घोडो के लिये उनके प्रार्थी बनेंगे, उनका अधिकार बढ़ेगा .....। '' अर्थात घोड़ों की दाये और हिनहिनाट आत्मरति और आत्मश्लाषा का पौरुषेय संगीत है। भागते हुए घोड़ों की उड़ती हुई अचालेक मानो पुरुष के 'भव्यता के व्यामोह' का प्रतीक बन जाती है। साहनीजी ने इसे काशी नरेश दिवोदास के चरित्र में बखूबी उभारा है। माधवी के स्थान में यही पुरुष समाज सफेद भव्य घोडों के यूथ के रुप में दिखता है। जैसे .....

' मैनें देखा, घना जंगल है ..... पेडों की घनी छाँव मे से एक घोडा निकलकर आता है – सफेद रंग का, फिर दो। फिर तीन, फिर चार।

वस्तुत: इस अष्वकथा के माध्यम से शक्ति के मानसिक रोग को अंकित किया गया है। वैसे भी धर्मग्रंथों में स्त्री की तुलना पृथ्वी से की गई है यानी पृथ्वी और स्त्री पुरुष की है जितनी पैर के नीचे आ जाये।

जब माधवी तमाम पुरुषों की पूरे नाटक में अलापी धर्मपरायणता की नकली खाल उधेड़तरी है तो भूसा गिरने लगता है – 'अेक कर्तव्य मेरे पिता काघ अेक कर्तव्य मुनिकुमार लालक का, दोनों के कर्तव्य मेरे माध्यम से पूरे हो रहे हैं ..... अेक दानवीर बन गया और आदर्श शिष्य । और माधवी ? माह की मारी माधवी कर्तव्य से गिर गई '

गालब के लिये माधवी 'भाग्य' है तो माधवी के लिये गालब 'नियति'। वरदान भी उसके लिये अभिशाप है, जिसके कारण वह घर, स्वत्व, देह, मन और मातृत्व से विलग हो जाती है। राजाओं के व्यवहार के बारे में गालब से पूछने पर माधवी हँसती है – दैहिक अनुभव की निरर्थकता, संवेदनहीनता और राजप्रसाद के वातावरण पर। दु:खी है – कुछ भी अपना न होने के कारण। 'माधवी' का मातृत्व हनन का पक्ष अत्यंत हृदय द्रावक है – वह गालब से कहती है ..... 'उन दीवारो से पीछे मेरा नन्हा बादल मुँह खोले स्तन ढूँढ रहा है और तुम कहते हो मैं स्वतंत्र हूँ। '' फिर वह दूसरे राजा के पास जाने से पहले गालब से कहती है .....।

'मैं अपने आने वाले बच्चे का रोना सुन रही थी'। जाग्रतावस्था में यथार्थ और नींद में दु:स्वप्न उसका पीछा करते है, जिसमें कभी घोडो के बीच में अश्वमेघ का घोडा (संतान ?) दिखता है। अंत में गालब द्धारा युवती माधवी की इच्छा करने पर वह कहती है –

'शरीर से युवती बनकर भी वह हृदय से जर्ज हो चुकी है – संतान धारण कर खोने की पीड़ा से'।

माधवी की खामोश अर्भ्यना । 'अर्धे कर्तव्य पथ से मानवीय पथ पर मुड़ अपना (गालब से शादी)। पर गालब की आत्मकेंद्रित धर्मप्राण जड़ परतो से टकराकर मूर्च्छित हो जाती है। अंत में पुरुष समान के प्रति अभिज्ञान पूर्ण होता है और वह अंत में गालब से कहती है – मैं तुम्हारे लिये केवल निमित्त मात्र थी। ..... तुमने केवल एक ही व्यक्ति से प्रेम किया है और वह अपने आपसे।' इस प्रकार माधवी गालब के स्वार्थ, उदासीनता, आत्मश्लाषा और आत्मषक्ति को पहचानती है और विशाल पृथ्वी के प्रसार में अपने लिये जगह खोजने निकल पड़ती है। जैसे सीता और शंकुतला ने पृथ्वी के भीतर लौटना चाहा था।

निष्कर्षत: भारतीय पुरुष प्रधान समान व्यवस्था में नारी एक उपकरण, एक आकांक्षापूर्ति की मशीन बनकर ही रह जाती है। माधवी का चरित्र नारी अधिकारों के प्रति पाठकों का ध्यान आकर्षित करता है।

:: अस्तु ::

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. माधवी – 'भीष्मसाहनी'
2. हिन्दी नाटयकर्म : 'दृष्टि और सृष्टि' – डॉ. रमेश गौतम
3. 'ध्रुवस्वामिनी – श्री जयशंकर प्रसाद
4. नया हिन्दी नाटक: 'संवेदना और शिल्प' – इन्दुबाला पारीक

****

William Dalrymple as a Travel Writer

Dr. Ajay Bhargava * Manju Sharma **

Abstract - This research paper is an attempt to throw light on the personal and professional life of William Dalrymple. It also introduces Dalrymple as a travel writer who portrays the picture of real world through his fiction, nonfiction, articles, reviews and essays. He is a specialized travel writer because he concentrates on one particular area of interest that is India. Though he is not an Indian by birth, but his understanding of the country is second to none. He is the chief arbiters of literary taste in India. His writings are full of poignant feelings and picturesque Indian imagery.

Introduction - William Dalrymple is a fellow traveler talking to people on several topics. He placed with them, he tells them but never as a superior. He possesses alert and methodical minds often recorded his experience and observations in the form of writing which eventually led to the development of the genre known today as "travel writing". He is a travel writer and wrote travel books which serve as the documents of religious, political, cultural and history on India, world and continents of those times. He is one of Britain's finest and most popular travel writers. He is a dashing figure of a rambling adventure as well as being a hawk- eyed observer and authoritative historian of the 'intimate' relationship between the British and Indian empires. He is a fast superstar in travel writing. He is also an astute recorder of conversations. He is a very engaging way of writing about things. His work show amazing ability of him to write travel writing with an extreme sensitive depth of perception for Indian social practices.

He was born in Scotland in 1965, and brought up on the shores of the Firth of forth. His father, Sir Hew Hamilton-Dalrymple was 10th baronet and cousin of Virginia Woolf. He is married to the artist Olivia Fraser and lives in a farmhouse on the outskirts of New Delhi with his wife, and their three children. He was educated at Ample Forth and Trinity College, Cambridge where he was first History Exhibitioner then Senior History scholar. He started his career as a travel writer since his childhood; he had a longing for travel. He is also behind the 'stones of the Raj and Indian journeys (channel 4, Nov.2005), the three part Indian journeys', six part television series (BBC, Aug. 2002) and Sufi soul (channel 4, Nov.2005) is the Best Documentary Series at BAFTA in 2002. He has also done a six –part history series. He is one of ten authors to have contributed to Ox Travels. "Ox Travels" is a collection of travel writing, which will act as a focus for the Oxfam Book fest in 2011 donated by world class travel writers. He is a regular contributor to The New York Review of Books, The Guardian and the Statesman. He has also written many articles for Time magazine. He has been the South Asia correspondent of The New Statesman since 2004. He is a fellow of The Royal Asiatic Society and The Royal Society of Literature. He is also the founder and Co-director with Namita Gokhale of the Jaipur Literature festival.

Methodology - I have used primary and secondary sources to collect information regarding this paper. Other relevant critical materials as articles, reviews, interviews and critiques have been examined in a bid not to just appreciate the vision of this writer but also to view in the right perspective in his works.

A Profile of William Dalrymple's Literary works - Dalrymple is a multi-media figure who makes use of television, radio, newspapers, magazines and public appearances to great effect. He has achieved a particular kind of literary travelling celebrity status. His works are in hybridized ways in which travel is conceived. This can be seen in his self-positioning against academic and postcolonial "orthodoxy" instead of his individualistic views. He also wrote one anthology of acute journalism about South Asia. In 1998, he wrote his first travel book and throughout his career, he wrote four books of travel. In 1999, he changed genres and concentrated on the writing of history. He wrote two narrative histories in 2002 and in 2006. He has published many different prestigious magazines and journals also His oeuvre is interesting because of the ways in which all of its components function together. His shift between genres, modes and media is complex and continuing. The move from travel writing to narrative history, for example, is not simply chronological. He participates in the two genres simultaneously, as they run parallel to and intersect with each other in complex ways.

His first success as a writer came with his renowned maiden work In Xanadu (1989) which he had written in the young age of twenty- two. In contrast to many travel writers following in the wake of earlier travelers, he does not reverse or fetishes the original text. He follows his own advice about writing an interesting travel account. It can be seen as improved versions of Polo's Travels-the same route with more

* Professor and Head, Deptt. of English, Govt. College, Barnagar,Ujjain (M.P.) INDIA
** Guest Faculty, Govt. Girls College, Chachoda, Distt. Guna (M.P.) INDIA

entertaining observations. He calls his journey a 'quest' rather than a 'vacation'. It allows the reader to experience and almost makes tangible some of the remotest parts of the globe that they are not likely to ever visit and that is its greatest achievement. It lends a perspective that renders travel indispensable to life, lessons and above all to love. The structure provides many benefits to the travel writers, including a ready-made route, structure and an indication of the work's subject. City of Djinns (1994) is a city based travel book. In this book he gives travel writing a new and refreshing twist. Most books try to tell the story in an ascending chronological order but this book breaks from this and does the exact opposite. It is an encyclopedia for all common Delhiwala and any Indian even slightly interested in knowing about Delhi and ancient India. This is what we can call "The Discovery of Delhi" partly a travelogue, partly a history book and overall a pleasurable book.

From the Holy Mountain (1997) is study of the demise of Christianity in its Middle Eastern homeland. He not only retraces the steps of the late antiquity travelogue but also gives us a sense of world through which these earlier travelers were passing. He combines this with modern- day travel writing; what things look like now, the political and social climate. The essays of his collection range from travel writing to interviews to cultural journalism. The Age of Kali (1998) and Nine Lives (2009) illustrates the ways in which his travel, history and journalistic writing work together to reinforce his self-fashioning as an authority and to carry his arguments about past and contemporary relationship between India and Britain into the public sphere. It is about how corrupt the country is now and how wonderfully it was before it was westernized. He is able to convey the diversity of cultural identity in every page, making the chronicling of political corruption, ethnic violence and social disintegration ever more. White Mughal (2002) is his first narrative history which confirms his status as one of the most important nonfiction writers of his time. It represents Britain, India and their imperial relationship as well as the individual historical figures through the character of James Kirkpatrick and the young, elite Muslim woman Khair un-Nissa. His second narrative history The Last Mughals: The Fall of a Dynasty, Delhi, 1857(2006) is his masterpiece. It describes a biographical focus on Bhadur Shah Zafar, the Mughal Emperor.

The idea mentioned in his trilogy deals with different ideologies with different attitudes. In White Mughal, he represents positive relationship between British and Indian who attempt to bridge these two worlds while in The Last Mughal, he represents negative relationship between British and India which show clash of rival fundamentalism. The Return of King provides a remarkable story of military and political incompetence and a disregard of an ancient civilization which still echoes today. He has a number of honors and awards for his published works as an author and commentator. He awarded for his 'outstanding contribution to travel literature', for Religious Broadcasting, to understanding contemporary Islam, for Asian Literature, for his service to literature and international relations, to broadcasting and understanding. He won Media Citizen Puraskar by the Indian confederation of NGOS 'for emphasizing as an author issue of global importance and concern'. He also awarded for best work in English non-fiction in 2007 for 'The Last Mugal.

Distinctions between Dalrymple's Early and Later works - Dalyrmple's early works are travelogue while later works are historical writings. He does an excellent job of combining historical and travel writings, comparing the cities of the past with their present day incarnations. He continues weaving a rich, rare and real rendition. His stories intermingle with the stories of the ages, the stories of the people, and the stories of a formidable world that survives God and his subjects. In his historical writings he is able to present for the first time the Indian perspective on the Mutiny and its bloody repression in The Last Mughal. He has given an English speaking reader a new perspective on part of history. His books can be divided into three distinct areas: travel writing, narrative history and collection of his journalism. His interests in religion, politics and history merge with his foreign correspondent skills and produce a provocative read. His books have been translated into more than forty languages.

Differences between Dalrymple's Fiction and Nonfiction works - Dalrymple's writing is classified as non-fiction which connotes truth for general reader. The rhetorical advantage and authenticity gained from the generalized categorization of his writing as non-fiction is significant. His passion for travel writing expanded to include TV documentary shows. His monographs serve as particularly resonant examples of his non-fiction middlebrow market. There is not a single line of fiction he has written except a couple of novels. In the infancy of his career he attempted to join the league of fiction writers, but soon realized that the genre was not his cup of tea. His popularity and engagement with colonial history and discourse, as well as the way his work spans multiple genres, make his texts particularly interesting examples of the ways in which popular non-fiction functions rhetorically in the public sphere.

Dalrymple's Articles, Reviews, Interviews and Journalism - Dalyrmple's participation in the public sphere is not limited to his books. As well as his regular monograph publications, he has also, over the course of his career, published a multitude of newspaper articles, reviews and commentaries and hosted television and radio documentaries. In his articles and interviews he emphasizes what he represents as his changed approach to travel writing. He moves beyond the position of author to that of "expert" through his reviews. He uses his numerous reviews to position himself and maintain the arguments developed in his monographs. He employs reviews of histories as platforms to advance his own arguments about imperial historiography. Thus, through his articles and reviews, in combination with his monographs, he functions as a gatekeeper figure.

Conclusion - I reached to the conclusion that he is an outstanding travel writer who is benign with the great art of writing. He is a born-travel writer with a healthy skepticism. He writes superlatively and he's got entire civilization to himself. His travel writings serve a variety of purposes because he not only provide valuable information about place but also give us an insight into the history and culture of a people. Before independent most travel writer of western countries wrote own magic, rope, trick, serpent, tiger and other wild animal and backward people of India and there was good demand of these kinds of books in west. Now travel writer such as William Dalrymple change his subject but tone of his writing is same. Travel writing is considered as a genre of literature. Through his Nine Lives travel writing can once again build on its traditional role, linking our culture to another, sharing wonders, telling stories that create bridges of understanding and respect between people. He is the best travel writer of his generation, both in his ability to evoke a sense of time and place, and his skill for shedding light on history in an engaging and accessible way. He has tips for budding travel writers that travel writing should have decent, simple, full notes and full of everything. As a travelogue, it generally makes good reading, with an excellent balance between keeping the pace moving and covering people and places in enough depth. He basically writes for a general audience rather than an academic writing. Travel literature is slowly but steadily turning into an area which produces books rich in research insight and imagination. No one can match Dalrymple in travel writing as now.

Refereances :-

Primary Sources -

1. Dalrymple,William.In Xanadu:A Quest.1990 New Delhi: Penguin,2004.
2. City of Djinns: A Year in Delhi 1993.New Delhi: Penguin, 2004.
3. Nine Lives: In Search of the Sacred in Modern India.London: Bloomsbury, 2009.
4. The Last Mugal: The Fall of a Dynasty, Delhi 1857 New Delhi: Viking, 2006.
5. White Mughal: Love & Betrayal in Eighteen-Century India.2002, New Delhi: Penguin, 2002.
6. The Age of Kali: Indian Travels& Encounters New Delhi: Penguin2004.

Secondary Sources -

1. Holland, Patrick and Graham Huggan.Tourists with Typewriters: Critical Reflections Contemporary Travel Writing, 1998.Michigan: U of MichiganP, 2000.
2. Moran, Joe. Stars Authors: Literary Celebrity in America.London: Pluto, 2000.

****

Caste Prejudices In R.K.Narayan's Novels

Dr. Kiran Sitole *

Introduction - R.K. Narayan's greathess as a novelist is beyond question. He is the brightest star of the luminous constellation of Indain –English writers. He occupies central position in the "Trinity" of Indian English novelists; the other two being Mulk Raj Anand and Raja Rao. Through his mighty creative pen has flowed the spirit coloured by Indian Concsiousness. His works offer rare insight into the complexities of Indian middle-class society .

Narayan's novel represent the cast prejudices prevelant at the time whenthey were written .The people of an older generation stick to the caste even to day and those of the new generation consider it altogether irrelevant.

This duel status of caste Is well represented it Narayan's novels. He does not, however, champion the cause of the untouchables in his novels like Mulk Raj Anad. He is an observer of life. He tells us what he has actually seen, or to be more precise, what is actually going on in the society today.

Narayan mention caste when a marriage is to be settled. All his major characters are Hindus. Among Hindus inter-caste marriage is strictly prohibited. While rumination over the possibility of his marriage with the girl he had fallen in love with, Chandran think's "suppose though un-married, she belonged to some other caste? A marriage would not br tolerated even between the sub sects of the same caste. If India was to attain salvation, these watertight divisions. Must go – community, caste, sects, sub sects and still further divisions he felt very indignant. He would set an Example himself by marrying this girl whatever her caste or sect might be". this passage has three points which are noteworthy. First, it tells the significance of caste in setting a marriage.

As a rule, the bride and the bridegroom must belong to the same caste, or the sub sect of the caste.

Secondly, it brings out narayan's opinion that caste, community and such other social divisions have created obstacles in the way of the nation's progress and freedom. Thirdly, young Chandran denounces the caste and is prepared to marry a girl form like to be divided into water-tight compartments of caste. Later on when chandran learns that his sweetheart's father "was of the same caste and subcaste" as he, he feels very glad and thanks the good for saving him form the complications he would have had to face face if she had belonged to another caste or sub-caste. He knew that "his father would certainly cast him off if he tried to marry out of caste". In the end he marries Sushila, the daughter of Mr. Jayarama lyyer who belonged to the same caste and subcaste.

The Vendor of Sweets presents the picture from another angle. On his return from the United States of America, mali introduces the girl at his side, "The is Grace.We are married." Marriage with a foreign girl brings complete confusion in the mind of Jagan, Mali's father. He avoids their company. "He began to avoid people. His anxiety was lest the lawyer or the printer or anyone else should stop him in the street to enquire about his daughter-in-law". mali, too, is conscious of people's opinion about him. "He seldom went out: if he did, he waited for darkness to descend on the town". Grace had knowledge of the Indian caste system while she was in America. She tells Jagan afterwards: " I had heard so much about the caste system in this country, I was afraid to come here, and when I first saw you all at the railway station, I shook with fear. I thought I migh not be accepted".
Jagan, a true disciple of Mahatma Gandhi, tells her, "Well, we don't belive in caste nowadays, you know", "Gandhi fought for its abolition". When his son married outside the caste.

There is another example of inter-caste marriage in The Guide Marco is a man of academic interests and does not belive in caste. His advertisement for marriage reads like this: "Wanted: an an educated, good looking girl to marry a rich bachelor of academic interests. No caste restrictions; good looks and university degree essential".

Knowing fully well that Rosie came of a family of temple-dancers who were viewed as public women; Marco married her for her good looks and university degree. Though Marco was bold enough to marry her, the marriage did not prove to be a happy one. Was it not due to the inter-caste marriage? However, it shows that the caste- system was vanishing from among the educated people. Raju's uncle in the same novel belives in caste. He would not allow Rosie to say in Raju's house because she did not belong to there family, clan or caste. He tells Rosie clearly: "After all , you are a dancing girl. We do not admit them in our families." Raju's mother walks out of the house because she cannot tolerate woman of another caste living in the same house.

The above description shows how caste-consideration in respected of marriages is undergoing a change. The public opinion is yet strongly against inter-caste to be sinners and people hate them. The spell of Gandhi is, no doubt, working but the speed of changes is very slow. Caste plays an important role in determining whom to eat with and whom

* Asst. Prof. , Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) INDIA

not eat with. The persons belonging to upper castes, particularly Brahamanas cannot accept food cooked by persons born in lower castes. So far as food is concerned, every man or women is untouchable for those born in a higher caste.

The wife of Srinivas in Mr. sampath shudders at the very thought of eating hotel food because the caste of persons who cook it is not known. Srinivas does not like these orthodox ways. "What foolish nonsense is this?" Srinivas cried. He stood looking at her for a moment as if she were an embodiment of knotty problems. He knew what it was: rigrous upbringing, fear of pollution of touch by another caste, orthodox idiocies-all the rigorous compartmenting of humar beings. He looked at her in despair, "look here, I don't like all this. You eat that stuff. What does it matter who has prepared it, as long as it is clean and agreeable? It is clean and the sort of thing you eat. We have all been eating it, and I assure you, we have neither felt poisoned in this life nor lost a claim for a place in heave. You should share the same fate with us, I think". He pressed a plate into her hand and complled her to accepted it.

The passage brings out the face that there are two kinds of attitudes towards the pollution of food by the touch of a person belongin to another caste. The wife of Srinivas represents the orthodox people who beliveve that food is polluted if it is cooked or touched by lower caste. Villagers, in generals, and village women, in particular, do have such notions. Then there are educated people living in cities who have have freed themselves from the notion of pollution by touch. Srinivas, Mr. Sampath and several others belong to the second group.

The lower caste people know the orthodox rules about the pollution of food and try to observe them by all means. In The Dark Room Savitri refused to eat anything in Ponni's house. Savitri was a Brahaman woman and Ponni was a blacksmith's wife. Ponni things that the refusal is due to caste-feelings. She therefore, brings coconut and plantains and requests Savitri to accept them : "Only fruits and coconut. I knew that you wouldn't take anything else touched by me, so I have brought only fruits and coconut". Anything that is cooked suffers pollution but fruits do not.

Jagan in The vendor of sweets is a widower. He has been cooking his food with his own hands since his wife's death. He continues this habit even when Mail, his son, returns from America with Grace. He does not eat with Mail and Grace. The following dialogue shows Jagan's fellings: One day Grace said, ' I wish you would let me cook for you.' 'Oh, that is impossible. I'm under a vow about that.'
He explained how he ate to live only on what he could cook with his own hands.

Truly speaking, Jagan novels reveals that though many educated people do not care to know the caste of the person who has cooked the food they are to eat, there are still a good number of those who would rather fast than eat what is polluted by the touch of a man born in an inferior caste.

Caste has been a deciding factor in the choice of occupation among Hindus. Under the impact of western civillzation caste-considerations have lost their previous hold. Educated people now take up any profession of their choice. This change came about very fast in urban settlements while the rural population remained unaffected for a long time. Even today people mostly adopt the profession of their forefathers. In cities, too, many professions are still hereditary. It is a Brahmana who presides over the religious ceremonies and works as astrologer. The Harijans are still in charge of sweeping the streets and performing lowly duties. Barbers, of others follow the parental professions. People of other castes are also adopting some of these professions. For example, shoe making was done by Harijans but now a days there are famous shoe companies which employ people of all castes. Previously washer men only washed clothes. Now there are dry cleaners who are not necessarily washer men. This is how a change is coming in people's attitude towards occupations with reference to caste.

Narayan's Novels centre round the town of Malgudi. As already mentioned, in towns the caste plays a minor role in the choice of profession. Still there are certain professions which are hereditary in Malgudi. Astrologers and priest scattered all over his novels are all Brahmans. All the barbers, sweepers, washer men, shoe- makers, tailors and even public women are born with a profession which they do not and cannot change in their life time.

An example of how caste and profession are being separated from each other can be cited from The Dark Room . While looking for a job for Savitri, Mari went ot the part of the village inhabited by Brahmans. Their professions are described in the following words:

He crossed some of the lanes and cross paths and
Went into the Brahmin street…There was the big landlord
in whose house Ponni had, during certain
Seasons, done odd jobs; there was the teacher with
whom Mari was familiar, having repaired the
Pulley over his well a number of times and soldered
a leaky pot an equal number of times; then there
was the other landlord, the Youngman with a
violent temper; and his brother-in-law in the
opposite house; and the police inspector; and the
man who had married the big landlord's second
daughter; and the village accountant.

This reveals that Brahamanas are not working only as priests and teachers, but are also landlords, police inspectors and village accountants. Thus a change has obviously come in the life of the community both in cities and in villages. People are choosing professions which have no relation with their caste and family. But for a few professions like those of sweepers, barbers, washer men etc., all others have become open to all. This is true picture of the present Hindu social order with reference to caste.
Untouchability – A considerable portion of the population among Hindu has been regarded as untouchable. It seems

that the concept of untouchability was a scientific one in the beginning but later on it was related to the castes. Some castes have been called untouchable irrespective of their personal merits and demerits. Their condition in the society is pitiable. They perform the lowliest duties but receive only humiliation in return. They are mostly sweepers, shoe-makers, artisans and menial servants. They are very poor and live in unhygienic conditions. It was Mahatma Gandhi who took up their cause and fought for them. He called them 'Harijans' (men of God) and met them on equal terms. His efforts for improving the lot of Harijans and abolishing untouchability took the forms of a social movement. Though R.K. Narayan has no ambitions to shine as a social reformer, he has dealt with the condition of Harijans and Gandhi's efforts in his novels.

Srinivas in Mr. Sampath relates the outline of story of a film in the following manner: "The hero of the story was one Ram Gopal, who had devoted his life to the abolition of the caste system and other evils of the society …He was a disciple of Gandhi's philosophy".

It shows how Gandhi's efforts for the abolition of the caste system had grappled the minds of the intellectuals. Again, when Srinivas's wife tells him about Sampath's relations with Shanti, she informs him that they are not cousins because 'they are of different castes'. "What if they are? "Srinivas asked, thinking what an evil system caste was.Jangan in The Vendor of Sweets is a staunch follower of Gandhi. He tells Grace, " Well, we don't believe in caste these days, you know. Gandhi fought for its abolition".

Rosie in The Guide Comes of a family of temple dancers who were considered public women and untouchable. Marco's advertisement for a bride with "No caste restrictions" and later on his marriage with Rosie is a rare and bold step that shows how caste-feelings are changing . Raju, too declared, " I don't believe in class or caste". Waiting for the Mahatma deals with untouchables at some greater length. Mahatma Gandhi, during his visit to Malgudi, beckoned a dirty untouchable boy whose father swept the streets. The untouchable boy is very vividly described :The boy stood aloof from the rest, on the very edge of the crowd. His face was covered with mud, his feet were dirty, and he had stuck his fingers into his mouth and was watching the proceedings on the verandah keenly, his eyes bulging with wonder and desire. He had not dared to come up the steps, though attracted by the oranges. He was trying to edge his way thorugh.

Gandhiji prefers the huts of sweepers to the Chairman's palacial building for his stay. As Gandhiji occupied a hut in the sweepers' colony, authorities did everything to transform the place. Men, women and children of the colony made themselves presentable. Gandhi's decision made sweepers better men:

The men of the colony tied round their heads theirs whitest turbans and the women wore theire best saris, dragged their children to the river and rubbed them till they yelled, and decorated theire coiffures with yellow chrysanthemum flowers. The men left off fighting, did their best to keep away from the drink shops and even the few confirmed topers had their drinks on the sly, and suppressed their impulse to beat their wives or break their house-hold pots.

This passage is like a hole through which one can peep into the lives of sweepers. It also reveals that it is affection, not rejection that can bring about some improvement in their way of living . Gandhiji loved th untouchables in spite of their dirty living and low status.

References :-

1. Graham Greene, Introduction to Bachelor of Arts, London : Pocket Book Edition, 1951,p.vii.
2. R.K. Narayan, Swami and Friends, Mysore : Indian Thought Publications, 1977,p. 79.
3. P.S. Sundaram, R.K. Narayan, New Delhi :Arnold Heinemann, 1973, p 27.
4. H.M. Williams, Precarious Innocence: patterns in the novels of R. K. Narayan, Perspective on R.K. Narayan, ed. Atma Ram ,Ghaziabad, Vimal Prakashan, 1981, p.3.
5. R.K. Narayan, Reluctant Guru, New Delhi : Hind Pocket Books, 1974, p. 28.
6. Narayan, R.K.,The Bachelor of Arts,p.56.
7. Narayan, R.K., The Bachelor of Arts,p.57.
8. Narayan,R.K.,The Vendor of Sweets,p.59.
9. Narayan,R.K.,The Vendor of Sweets,p.66
10. Narayan,R.K.,The Guide,p.85
11. Narayan,R.K.,Mr.Sampath,p35.
12. Narayan,R.K.,The Dark Room,p.136.
13. Narayan,R.K.,The vendor of sweets, pp.62-63.
14. Narayan,R.K.,The Dark Room,p.126.
15. 10.Narayan,R.K,.The Mr.sampath,p.98.
16. 11.Narayan,R.K.,The Vendor of sweets,p.66.
17. 12.Narayan, R.K,.The Guide,pp.85-86.
18. 13.Narayan,R.K.,TheWaiting for the mahatma,p.48.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Female Subjugation to The Male

Dr. Vandana Bakshi *

Abstract - Women are an integral part of human civilization. No society or country can ever progress without an active participation of women in its general development. Although the place of women in society has differed from culture to culture and from age to age, yet one fact common to all most all societies is that woman has never been considered the equal of man. This paper attenpts to show how since time immemorial woman has been the victim of male domination.

Keywords - inequality, dominance, perception, passivity, self assertion.

Introduction - Gender and literature are very closely related to each other in the sense that neither can be conceived apart from society and culture. Gender, as differentiated from sex, has nothing to do with biology. Unlike sex, which is given- a biological given, gender is a social and cultural construct, It is a straight jacket in which men and women dance their unequal dance. No wonder, men and women are biologically different from each other, but they are just different. The sex differences do not imply sexual inequality and male dominance. Yet in a patriarchal social setup masculinity is associated with superiority whereas feminity is linked with inferiority. Sex is the creation of God and sexual differences are essential for procreation, but gender is not God's creation. Women have played a vital role in the creation of society. The Bible tells the women:

"Wives, be subject to your husbands, as to the Lord. For the husband is the head of the wife, as C hrist is the Head of the Church, his body, and is himself its Saviour. As the Church is subject to Christ, so let wives also be subject in everything to their husbands"(1)

The subordination of women to men is believed to be older than civilization itself. The usage of woman was created by man. It was what he wanted her to be and he never wanted her to be an equal, a co-sharer of all the privileges he was enjoying. Because the image of woman was created not by women or by men and women jointly but by men alone and the standard of womanhood was set for women by men, women could not have a clear perception of themselves. According to Mary Caruthers, "Traditionally women's lives have been imagined in relation to men's lives as the daughters, mothers, mistresses, wives of men. They have in consequence been imagined either in terms of a single role psychologically important to men (Virgin,temptress, goddess) or in terms of their single social and biological function in male society (preparing for marriage, or married)"(2) Literature is closely related to society. It reflects social reality, it not only reflects but also shapes the complex ways in which men and women organize themselves their interpersonal relationships and their perception of the socio-cultural reality. The attitude of the male author towards men and women depicted by him in his works and the attitudes of the characters, male and female to one another highlight the gender relationships as well as the author's attitude towards these relationships. Literature, thus, offers the best possibility of exposing the politics of gender.

The depiction of women in literature has been according to the social status enjoyed by women, but the status of women has not been the same at all times and in all the societies. As St. Paul says, "Let a woman learn in silence with full submissiveness. I permit no woman to teach or to have authority over man, she is to keep silent"(3) Therefore, it is difficult to make generalized statements which would be universally valid. Yet by and large women all over the world have always enjoyed a secondary status. The Koran says, "Men are superior to women on account of the qualities with which God hath gifted the one above the other, and on account of the outlay they make their substance for them".[4]

The images of women in literature, have been of the slaves who could be easily sold or bought by men who were their masters. It was not inconvenient for Hardy, for example, to show Henchard selling his wife and daughter at a country fair and that too for an insignificant price. But the descriptions like this did not shock the victorian readers, most of whom, being male, shared with the author the patriarchal notion of male monopoly over women. In fact, it was difficult for men to read literary works which portrayed women as self-actualizing beings who rejected the angel in the house image and refused to be female stereotypes. Literature could provide pleasure to the readers by depicting women as passive, docile, dependent, helpless victims at the mercy of men. The inner experiences of women were rendered invisible because these were considered to be trivial and not worth

* **Asst. Prof. (English) Institute of Excellence in Higher Education, Kolar Road, Bhopal (M.P.) INDIA**

considering. The roles of women were restricted by their womanhood and, therefore, the experiences of the muted female half of the society were not reflected by literature.

Literature now portrays without any hesetation the New Woman, who refuses to be a toy in the hands of men. Change in the socio-economic condition has changed our patriarchal attitudes to gender and contemporary change is being reflected in literature. For a woman to indulge in creative writing was considered a kind of abnormality, subversive function of imagination, a neurotic act. A woman who wanted to write was designated as devioant. In fact, creative writing was almost a taboo to a woman who wanted to be considered a perfect woman because to write it meant insubordination which was intolerable to the male dominated society.

".....Let husbands know
Their wives have sense like them,
They see and smell,
And have their palates
Both for sweet and sour
As husbands have
.....And have we not affections
Desires for sport, and frailty,
As men have?
Then let them use us well,
Else let them know
This ills we do their ills instruct us so"[5]

References :-

1. Ephesians, 5 The Bible (William B. Eerdamans Pub. Company 1984), pg.22.
2. Caruthers Mary, Imaging women: Notes Towards a Feminist poetry (Massachusetts Review 2004) pg. 20.
3. St. Paul, Timothy, 2 (Moody Pub U.S. 2001) pg, 11-12.
4. The Koran, J.M., (Dent and Sons Ltd, London) pg, 415.
5. Shakespeare William, Othello (Wiley Publishing Ine Hoboken New Jersey 2008) Act IV.

****

Conjugal Relationships in Merchant of Venice and Abhijanashakuntalam : A Comparative Study

Dr. Laxman Singh Gorasya *

Introduction - Shakespeare's Plays display a staggering variety of husband-wife relationships. There are many types of husbands and wives in his plays. We find a meek wife and a dictatorial husband in Julius Caesar and a dominating wife in Macbeth who controls her husband by force. On the other hand, we see an unfaithful wife and a loyal husband in Hamlet. Count Romei in his book **The Counters Academic,** defines, "honour feminine", as a quality "is preserved by not failing only in one of their proper particular virtue, which is honestie",[1] Woman's fidelity was very important in Shakespeare's time and that's why he chose the theme of feminine infidelity in his many plays. He also glorified woman fidelity in his plays and the notable example of such kind is 'Merchant of Venice".

"The glory of being the best couple of Shakespearean plays goes to Portia and Bassanio"[2]. Portia in **Merchant of Venice** is Shakespeare's ideal wife. She has all the virtues of an ideal wife. Shakespeare has created this Character to present an example of a perfect life partner before the audience. Her trust love and fidelity to her husband are excellent. The Victorians viewed her as a perfect woman."

She exemplifies an Elizabethan ideal when she submits her all to Bassanio, "her lord, her governor, her king."[3] and wishes to partake of his problems. Through the ring episode, she educates her husband to an understanding of how the bond of love and the bond of real friendship can exist harmoniously. She starts her marriage as a conventionally submissive wife. She guards her husband secretly. She submits her all to Bassanio, her wealth, her mansion, her servants and herself. In the Venetian world money is the medium of relationship, but where as in Venice Shylock has his ducats in a sealed bag, not intended for use even by his own daughter, Portia without any hesitation gives all her wealth to Bassanio. Then Portia makes her union strong by a ring which becomes the symbolic bond of their love. For Portia the ring symbolizes their love, but in his zeal Bassanio carries it further," When this ring parts from this finger, then parts life from hence : then be bold to say Bassanio's dead"[4]

Portia is an extremely dedicated wife. We can see her dedication in the help she is willing to give to Antonio. Bassanio is disturbed after reading the letter which contains the nerves of Antonio bankruptcy. But being an ideal wife Portia is eager to share her husband's problem.

"With leave Bassanio, I am half yourself, and I must freely have the half of any thing."[5]

Bassanio's openness of confiding in his wife together with Portia's concern for helping his friend Antonio shows what an ideal relationship they share.

On the other hand Kalidasa's **Abhijanasakuntalam** is a play of seven acts, based on the well known conjugal love story of king Dushyanta and the maiden Shakuntala, as given in the ancient Indian epic, **The Mahabharata**. Dushyanta, a king of the lunar race, in the course of his hunting excursion, reached the hermitage of Kanva, whose adopted daughter Shakuntala, being alone in the house had to entertain the king. The king was fascinated by the matchless beauty of the sage's daughter, from whom he learnt the story of her birth and parentage which made it possible for him to marry her. Without much ceremony the king wedded her by the Gandharva form of marriage on his promise to appoint her son his successor. After having stayed for sometime the king returned to the capital. In course of time, Shakuntala delivered a son and reached to the capital but the king discarded her. A heavenly voice enjoined him to receive his wife. Thus relieved from his anxiety he welcomed his wife and son, and Shakuntala was soon raised to the dignity of the chief of crowned queen.

The most important point to be noted in Dushyanta's character is his extreme nobility of love. Let us first point it out in regards to his love for Shakuntala. He was youthful and had in his favour the royal custom, which sanctioned polygamy in the case of kings. It is true that he was not a rigid monogamist, but it must be conceded to his honour that he was not a reckless libertine. He is fully concerned with the high principles of moral conduct and never manifests any illicit passion. It was quite natural for him to be struck with the fascinating youth and superb charms of Shakuntala but as a man of honour, he wished to ascertain whether she was married or not. He checked his first burst of love till that time, though he was so confident of his nobility that he was pretty surely convinced of the legality of the connection. It is only after ascertaining the real parentage of Shakuntala and further, that she was unmarried. He allows himself to harbour the feelings of love. The king's love for Shakuntala is deeply rooted and permanent.

* Asst. Professor (English) Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.) INDIA

As for as Shakuntala is concerned, she is the daughter of the sage Visvamitra and the heavenly nymph Menaka. Shakuntala was a beautiful woman of womanly modesty peculiar to Hindu woman. When wedded with the king by the legal form of marriage. She represents an interesting side of Hindu womanhood. Though openly discarded by the king and though for a time justly angry with him, she does not in the least lose her affection for her lord and does not forget her duties as a married woman towards him. She leads an ascetic's life during her separation, ever keeping the image of her beloved husband in her heart.

If we compare Portia with Shakuntala, we find a great similarity, between them. Both of them are dedicated to their husband. Their bond of love and marriage is similar. And the most important symbol which is used in both the plays is ring that shows the loving relationship of Portia and Bassanio and Shakuntala and Dushyanta. Portia guards the problems of her husband while Shakuntala on missing the ring suffers alone but have great faith in destiny. Finally she also meets with her destiny. Therefore in the end we can say that both the plays are having the theme of conjugal relationships.

References :-

1. Cited in C.B. Watson, Shakespeare and the Renaissance Concept of Honour, (Princeton; Princeton University Press, 1960), P. 159.
2. Achala Sharma, Family Relationships in the Plays of Shakespeare, (Delhi; Balaji Publication, 1993), P. 56.
3. Shakespeare, Merchant of Venice, Act-III, Scene II, P. 165
4. Ibid, P. 183-185.
5. Ibid, P. 247-249.

****

Vocationalisation of Higher Education in India Current Scenario, Key Challenges and New directions

Aparna Ray *

Abstract - The greatest challenge in Indian education system today is to provide skill based education to the youth. This is exacerbated by a mismatch in demand and supply for the skilled workforce. The penetration of vocational education and training remains poor not only in rural areas, but also in urban regions where there is a higher installed capacity to impart the same. This post is an attempt to make the readers understand the need of vocational education in India. Also, this is an attempt to summarise a few recommendations on the same.

The objective of this note is to assess and describe the need for introducing Vocational education at higher and tertiary levels and for establishing a Vocational University. The note also summarizes the present Indian and International Vocational Education scenario and its problems. The note also puts up recommendation for policies with the need for implementation at State and National Level and suggests possible models to introduce Vocational Education at the higher / tertiary levels.

Introduction - "Every handicraft has to be taught not merely mechanically as is done today, but scientifically. This is to say, the child should learn the why and wherefore of every process." - Gandhi's Philosophy of Education

Vocational Education and Training (VET) is an important element of the nation's education initiative. In order for Vocational Education to play its part effectively in the changing national context and for India to enjoy the fruits of the demographic dividend, there is an urgent need to redefine the critical elements of imparting vocational education and training to make them flexible, contemporary, relevant, inclusive and creative. The Government is well aware of the important role of Vocational education and has already taken a number of important initiatives in this area.

Current Scenario and key challenges - Skills in India are largely acquired through two main sources: formal training centres and the informal or hereditary mode of passing on cascading skill sets from one generation to the next. Nowadays, vocational courses are becoming quite popular among youth because it is believed that taking these courses would provide more and better employment opportunities than those provided by conventional academic courses. While there remains a requirement for skilled professionals in the industry, the supply for the same is hampered by:

1. High dropout rate at Secondary level: Vocational Education is presently offered at senior secondary level but the students at this level aspire for higher education
2. At present, the vocational system doesn't put much emphasis on the academic skills, resulting in lower incidences of vertical mobility
3. There is a lack of participation by private players in the field of vocational education
4. Vocationalisation of education is not in line with industry needs
5. There is a lack of opportunities for continuous skill up-gradation
6. There is no clear provision of certifications and degrees for the unorganised/informal sector
7. Challenges faced by ITCs and ITIs are poor quality trainers, lack of flexibility and outdated infrastructure

Status of Vocational Training received: The World Bank report of 2006, shows that among persons of age 15-29 only about 2 per cent reported to have received formal vocational training and another 8 per cent reported to have received non formal vocational training. The proportion of persons (15-29 years) who received formal vocational training was the highest among the unemployed. The proportion was around 3 per cent for the employed, 11 percent for the unemployed and 2 per cent for persons not in the labour force. The activity of persons receiving vocational education is as shown below-

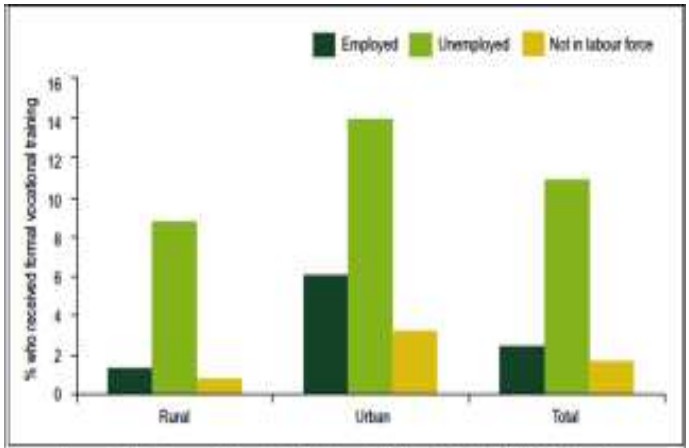

Source: Status of Education and Vocational Training in India, 2004-05, NSS 61st Round

* Asstt. (English) Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

Problem Areas in present Vocational Education and Training System:-

Through, the study of the prevalent Vocational Education System in India the following problem areas have been identified -

1. There is a high drop out rate at Secondary level. There are 220 million children who go to school in India. Of these only around 12% students reach university. A large part of the 18-24 years age group in India has never been able to reach college. Comparing India to countries with similar income levels – India does not under perform in primary education but has a comparative deficit in secondary education.
2. Vocational Education is presently offered at Grade 11, 12th – however students reaching this Grade aspire for higher education. Since the present system does not allow vertical mobility, skills obtained are lost. Enrollment in 11th & 12th Grade of vocational education is only 3% of students at upper secondary level. About 6800 schools enroll 400,000 students in vocational education schemes utilizing only 40% of the available student capacity in these schools.
3. International experience suggests that what employers mostly want are young workers with strong basic academic skills and not just vocational skills. The present system does not emphasize general academic skills. The relative wages of workers with secondary education are increasing.
4. Private & Industry Participation is lacking. There are no incentives for private players to enter the field of vocational education.
5. Present regulations are very rigid. In-Service Training is required but not prevalent today. There is no opportunity for continuous skill up-gradation.
6. There is a lack of experienced and qualified teachers to train students on vocational skills. In foreign countries Bachelors of Vocational Education (BVE) is often a mandatory qualification for teachers. However, in India no specific qualifications are being imparted for Vocational Education teachers.
7. Vocationalization at all levels has not been successful. Poor quality of training is not in line withindustryneeds.
8. There is no definite path for vocational students to move from one level / sector to another level / sector. Mobility is not defined and hence students do not have a clear path in vocational education.
9. No clear policy or system of vocational education leading to certification / degrees presently available for the unorganized / informal sector. No Credit System has been formulated for the same. Over 90% of employment in India is in the Informal sector. JSS offers 255 types of vocational courses to 1.5 million people, Community Polytechnics train about 450,000 people within communities annually and NIOS offers 85 courses through 700 providers. None of these programs have been rigorously evaluated, till date.
10. Expansion of vocational sector is happening without consideration for present problems.

New directions - Vocationalisation should not be attempted in an unsystematic or haphazard manner. The need of the hour is to understand the trainees' apprehensions and challenges regarding Vocational Education and training (VET). Thus there is a huge opportunity for a vocational training institute that can address these challenges. This will favour the organisations willing to enter the vocational education market as well as the students wanting to take up vocational courses to increase their employability. In summation, it is critical to redefine the essential elements of VET so that it becomes more flexible, inclusive, relevant and contemporary.

Recommendations regarding Vocational Education National Board for VocationalEducation -

1. A national level Board for vocational education should be established, called as National Board for Vocational Education. For Example, In Australia, there is a similar authority established by the state and federal government called Australian National Training Authority (structure may vary) which plays a major role in :-

a) Developing a national TVET system and national strategies with respect to vocational education

b) Ensuring close interaction between industries and TVET providers

c) Developing effective training market for public and private needs

d) Enhancing efficiency and productivity of TVET providers

Conclusion - The industrial and labour market trends clearly indicate the necessity of strengthening of vocational education in India. The introduction of vocational education at secondary level through bivalent schools and SSC (vocational) will enable us to broaden the vocational education base at secondary level of education. A clear pathway for vocational students to enter higher education streams is the way to move forward. Through this concept note we have made an endeavour to provide some of the possible solutions to address these issues. Framing of vocational qualification framework, introduction of vocational degrees and setting up of a Vocational University with polytechnics, community colleges, CPs and other VEPs as affiliated colleges are some of the recommendations which require further deliberation at National and State level.

References :-

1. Abdul Kalam A P J (1998), 'Vision for the Nation', University News, Vol.36 (9), March 2, 1998, AIU Publn., New Delhi;
2. Abdul Kareem S. (1999), 'Information Technology and Knowledge', University News, Vol.37 (42), Oct.18, 1999, AIU Publn., New Delhi;
3. Aggarwal J C (1984), Landmarks in the History of Modern Indian Education, Vani Publn., New Delhi;
4. Aggarwal J C (1990), Development and Planning of Modern Education, Vikas Publn., New Delhi;
5. AIU Campus News (1992), 'Equality in Educational Opportunities', University News, Vol. XXX(18), May 4, 1992, AIU Publn., New Delhi;
6. AIU, (1993), Excellence Achieving Social Relevance in Higher Education, AIU Publn., New Delhi;

भारत में शिक्षा का अधिकार और कठिन चुनौतियाँ

डॉ. अर्चना रांका *

शोध सारांश – 'शिक्षा' संपूर्ण जीवन पर्यन्त एक विशेष प्रक्रिया है। अत: समाज गतिशील रहता है और उचित पुनर्निर्माण को प्रभावशील किया जा सकता हैं। भव्य भूतकाल को हम संरक्षित रख सकते है और बुराईयों का उन्मूलन कर सकते है। यह अज्ञानता ही ज्ञान की दिशा में एक आरोही यात्रा है। अरस्तु कहता है, इसीलिए 'जीवन शिक्षा है और शिक्षा ही जीवन है।' वह यह भी कहता है कि न्याय के बिना विधि नहीं और विधि के बिना न्याय नहीं।

प्रस्तावना – अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने कहा था (दि. 26 अप्रेल 1936 को) चौथी व्हाईट हाउस सभा के समक्ष 'हम यहां सफल प्रंजातंत्र और शिशुओं के बीच सम्बंधो के उद्देश्य के विषय में प्रमुखत: चर्चा हेतु एकत्रित हुए है, वे शिशु जो प्रजातंत्र के अभिन्न अंग है। एक पृथक समूह के रूप में आज उन्हें हम अलग नही रखते है प्रजातंत्र के वे एक अटूट भाग है क्योंकि वे प्रजातंत्र पर निर्भर है और प्रजातंत्र स्वयं उन पर आश्रित है।'[1]

नागरिक पैदा नहीं होते बनाए जाते हैं। एकाधिकारवादी राज्य में नागरिकता की शिक्षा तुलनात्मक रूप से अधिक सरल होती है क्योंकि ऐसे राज्यों के नेता के अपने स्वयं के जो ख्यालात होते हैं, उन विचारों को कार्य में या सच्चाई में परिवर्तित करने के तरीकों को वे अच्छी तरह से जानते हैं। व्यक्तियों को तो मशीनों के पुर्जो की तरह ही माना जाता है या राज्य के वे साधन मात्र होते हैं। वे उद्देश्यों या लक्ष्यों का पाने का साधन या जरिया मात्र होते है, न कि स्वयं में लक्ष्य होते है। उन्हें आसानी से आदेश देकर काम करवाया जा सकता है और उन्हें नेताओं और शासकों द्वारा अपने अनुकूल बना दिया जाता है। प्रजातंत्र में यही अच्छे काम अत्यंत कठिन एवं पेंचीदगीपूर्ण होते है। शासकीय विद्यालय अब अधिक स्वतंत्र और सुविधाजनक क्षेत्र में आ गए है और बेहतर परिणाम दे रहे है। निजी क्षेत्र के विद्यालय में प्रतिष्ठान अपनी सशक्त बाहुएँ/भुजाएँ आजमा रही है। 87 प्रतिशत शिक्षक आज ईमानदारी से अध्ययन सेवा प्रदान कर रहें है।

एनुअल स्टेटस ऑफ एज्युकेशन रिपोर्ट सेन्टर की 2005 से 2011 की कालअवधी में निरन्तर शोध सर्वेक्षण की रिपोर्ट के अनुसार जो 16000 ग्रामो में किया गया है, 3 लाख लोगों पर 25000 युवकों द्वारा किए गये सर्वेक्षण के परिणाम से ज्ञात हुआ है कि बालक विद्यालय में उपस्थित होने के लिए इच्छुक है जो 6–14 वर्ष के है 97 प्रतिशत। पहला सशक्त कदम बालिकाओ का है, इनमें से 25 प्रतिशत बालक निजी विद्यालयो में अध्ययन प्राप्त कर रहे है जिसका श्रेय शिक्षा के अधिकार अधिनियम 2009 को जाता है।

प्रजातंत्र में शिक्षा की शुरुआत ही परिवार से होती है जो अच्छे नागरिक को उत्पन्न करने वाले एक उद्यान की तरह एक बगीचा (नर्सरी) होता है। सहनशीलता, सहभागिता, स्वार्थत्याग, इत्यादि से परिवार में बच्चों को बचपन से ही संबंधित तथ अनुभव करवाया जाता है, जहाँ प्रजातंत्र का अंकुरण होता है। व्यक्ति की आवश्यकताओं तथा सामाजिक समूह की मांग के बीच संतुलन स्थापित करवाया जाता है। हर व्यक्ति, सामंजस्य और संतुलन करना सीखता है अत: इन गुणों की नींव को विद्यालयों में मजबूत किया जाना चाहिए, उन्हें सामूहिक रूप देना चाहिए। पारिवारिक जीवन की संकीर्ण विचारधारा को व्यापक रूप, व्यापक–समाज हेतु देना ही होगा। व्यक्ति और समाज के बीच संघर्ष की स्थितियाँ तो पैदा हमेशा होगी। संतुलन पाने के लिए, परंतु बालक तो आवश्यक समायोजन और सामंजस्य परिवार से ही सीखता है। कुछ पाने के लिए कुछ खोना पड़ता है यह सीख परिवार से प्राप्त होती है। नागरिकता, किसी पाठशाला के विषय की तरह सिखाया या पढ़ाया जाने वाला विषय नहीं है। बौद्धिक स्तर से इसका संचयन या संव्यवहार संचालित नहीं होता हैं। इसमें तो उचित कौशल, दृष्टिकोण और हितों की जरूरत, ज्ञान तथा समझ के अलावा होती है। इसीलिए प्रजातंत्र के लिए शिक्षा को नागरिक शास्त्र की शिक्षा के सदृश्य, समान रूप से पहचान नहीं की जा सकती है। आज सूचना शक्ति के विस्फोट के फलस्वरुप तकनीकी ज्ञान की दिशा में शब्दो की ध्वनि की गति से भी तेज सही प्रकृति का भी निश्चायक माना जाता है।

सर रिचर्ड लिविंगस्टोन ने कहा था, कि नागरिकता केवल जानकारी या सूचना मात्र नहीं है, यह तो आचरण और कृत्य है न कि सिद्धांत या ज्ञान मात्र है। बिना अच्छा नागरिक बने कोई व्यक्ति समाज विज्ञान के विषयों से सुपरिचित भली भांति हो सकता हैं। केवल अधिकारों और दायित्वों का सैद्धांतिक ज्ञान ही किसी बालक को अच्छा नागरिक नहीं बनाता हैं।[3]

2. विधिक संदर्भ – नए भारत के स्वप्न दृष्टाओं ने जब भारत का संविधान बनाने की कल्पना की थी उन्होंने प्रजातांत्रिक जीवन को सर्वोत्तम प्राथमिकता दी थी। 1976 में संशोधित, संविधान की प्रस्तावना व्यक्त भी यही करती हैं – अनुच्छेद 21–ए तथा 51–ए ने शिक्षा के अधिकार को मानवाधिकार के रुप में जीवन और देह की स्वतंत्रता के द्वारा निष्पादित किया जा रहा है।

'हम भारत के लोग, भारत को सर्वसंप्रभुता संपन्न, समाजवादी, पंथ–निरपेक्ष, प्रजातांत्रिक गणराज्य निर्मित करने का संकल्प लेकर, और समाज के समस्त नागरिकों को

न्याय – सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक

समानता – स्तरों और अवसरों की

स्वतंत्रता – विचार करने, उन्हें अभिव्यक्त करने, विश्वास करने एवं आराधना करने की तथा, व्यक्तियों को गरिमा पूर्ण जीवन, भ्रातृत्व, तथा देश की एकता, अखंडता एंव सुदृढ़ता विश्वास दिलाते हुए यह संविधान आज दिनांक 26 जनवरी 1949 को अंगीकार करते है एंव आत्मार्पित करते है।[4] अनु 21 अ तथा अनु 51 A के अन्तर्गत शिक्षा के मौलिक अधिकार को मानवाधिकार के रुप में जीवन और देह की स्वतंत्रता के द्वारा निष्पादित किया जा रहा है।

* विभागाध्यक्ष (विधि) अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

वर्ष 1953 में माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट 1953 (पृ.20) में यह कहा गया था हर नागरिक की प्रजातांत्रिक भावना विकसित करना हमारी नीति का एक मात्र अंग है। प्रजातंत्र में नागरिकता तथा ठोस और चुनौतीपूर्ण दायित्व हर नागरिक का होता है जिसके लिए उसको सावधानी से प्रशिक्षित करना है। इसमें बौद्धिक, सामाजिक एंव नैतिक गुणों की अनिवार्यता होगी जिससे कि, वे अपने स्वयं के अनुरूप विकसित हो सकें।[5]

हमारे देश में विरोधों में एकता है। कई जातियाँ, कई धर्म, कई समुदायों से मिलकर हमारा देश बना है। प्रजातांत्रिक शिक्षा का स्वस्थ विकास हमारी कठिनाइयों और विभेद या असमानता से हमें छुटकारा और मुक्ति दिलवाएगा। कोई सी भी शिक्षा अपने 'नाम', के लिए सार्थक नहीं होगी जो संतुलन से कुशलता से एंव उदारता पूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक गुणों का विकास व्यक्तियों में नहीं करती है। 'व्यक्तित्व के मानवीकरण/ हयूमनाइजेशन (Humanisation) करने और सामाजिककरण/ सोशियलाइजेशन (Socialisation) करने में अनुशासन, सहकारिता, सामाजिक संवेदनशीलता की प्रत्येक व्यक्ति की विशिष्ट एंव अत्याज्य भूमिका होती है'।[6] मा. शिक्षा आयोग पृ. 21 की माननीय राजीव गांधी की 1986 की शिक्षा नीति ने भी पूरे राष्ट्र के लिए एक जैसा समान पाठ्यक्रम निर्धारित करने एंव लागू करने का निश्चय किया था।[7]

वर्ष 1996 के शिक्षा आयोग ने भी यह सुझाया था कि विशाल हृदय, सहनशीलता, पारस्परिक आदान-प्रदान, भिन्न जीवन शैली की मन से प्रशंसा करना जिनके लोग अभ्यस्त होते है, उसका सम्मान करना जैसे गुणों का हमें विकास करना होगा।[8] समस्त नीतिनिर्देशक तत्व इन्ही गुणों को अनुप्रमाणित करने हेतु संविधान में समाविष्ट किये गए हैं। विशेषत: अनु. 51 तथा 51(क) में मौलिक कर्तव्यों के प्रावधान उपबंधित किए गए हैं।

3. मानवाधिकार परिप्रेक्ष्य – मानवाधिकारों की 1948 में अन्तर्राष्ट्रीयसार्वभौम घोषणा में संयुक्त राष्ट्र संघ ने यह उद्घोष किया था कि 'प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचारों की अभिव्यक्ति एंव विचार प्रकाशन की मौलिक शाक्ति प्राप्त इस अधिकार में बिना हस्तक्षेप के सूचना खोजने, प्राप्त करने, सूचना प्रदान करने और भौगोलिक सीमाओं के संदर्भ के बिना ही किसी भी प्रकार से संचार माध्यमों से विचारों को संचालित एंव प्रसारित करने की स्वतंत्रता सम्मिलित है। अर्थात यह स्वतंत्रा यदि स्वीकृत नहीं की गई होती तो लोक संचार/जन संचार का कोई अवशेष इस दुनिया में नहीं होता। संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य देशों ने इस घोषणा को अनुमोदित किया है, तथा भारत ने भी अपनी उद्घोषणा संविधान के अनुच्छेद 19(1)क में की है। जन संचार माध्यम अब एक राष्ट्रीय विशाल उद्यम बन चुका है एंव सच ही उसे शासन का चौथा अंग, 'खबर पालिका' माना जाने लगा हैं। अखबारों ने भारत में भी परिदृश्य पर अपना मजबूत आधिपत्य, ब्रिटिशकाल से ही रखा था। अत: रेडियो, दूरदर्शन, उपग्रह, टेलेक्स, फेक्स भी इसमें जुड़ गए हैं। आज तो सारा विश्व ही एक अत्यन्त छोटा (परंतु विशाल) सा परिवार बन गया है। लोक-संचार/जनसंचार को भारत में पूर्ण स्वतंत्रता हर कीमत पर मिलनी ही चाहिए। हमें भावी भय और आतंक के विरूद्ध सतर्क रहना होगा जो इस स्वतंत्र का क्षय एंव विनाश करने पर उतारू हो गए है। प्रजातंत्रीय समाज के कुशल संचालन हेतु मीडिया की भूमिका अद्वितीय एंव विलक्षण है। जहाँ प्रेस की स्वतंत्रता नहीं हो, वहाँ प्रजातंत्र अस्तित्व में जरा भी नहीं होता है।

अरस्तू ने कहा था कि मनुष्य, प्रकृति से, समाजिक प्राणी है, यह आवश्यकता का ही परिणाम भी था। 'जीवन' केवल जिन्दा रहने का नाम नहीं है बल्कि सुखपूर्वक जीने का नाम है।[9]

बोसांक्वेत कहता है – सार्वजनिक हित में ही अपना हित है इस अर्थ में यदि हम समझे तो, अधिकार, 'सामजिक कल्याण' की अनिवार्यता शर्त होती है। जब अधिकारों की बात चले और बेन्थम का नाम न आये, यह तो हो ही नहीं सकता है। वह कहता है राज्य के बिना हम जी नहीं सकते है, हमारे लिए राज्य अनिवार्य है। सुरक्षा, समानता, स्वतंत्रता और प्रचुरता के लिए ही राज्य, और कानून की उपयोगिता है। इसमें से सुरक्षा का तत्व सर्वोच्च महत्व का होता है।[10] थामस हिलग्रीन कहता है कि मानव चेतना स्वतंत्रता का पूर्वानुमान करती है जिसमें अधिकार अन्तर्निहित तो होते ही है और अधिकारों के लिए ही राज्य की मांग भी होती है।[11] बेन्थम के अनुसार 'यदि 'राज्य', जैसा जनक या अभिभावक (पिता) कोई यदि नहीं है तो यह अधिकार संक्षेप में पितृविहिन (Bastard) होंगे।' लास्की कहता है कि राज्य वह है या उसे जाना जाता है या कहा जाता है या माना जाता है जो राज्य के व्यक्तियों के अधिकारों की शाश्वतता हेतु लगातार प्रयत्नशील है। उन स्वीकृत अधिकारों में शाश्वतता प्रदान करे जो नागरिकों को मानव होने के कारण प्राप्त है।

लास्की के अनुसार 'शिक्षा का अधिकार' मौलिक अधिकार या 'आधारभूत' अधिकार होता हैं।[12] 'ये सभी मौलिक अधिकार राज्य का उपहार (Gift) या दया के परिणाम नहीं है। ये स्वंय स्फूर्त है' – डॉ. अमर्त्य सेन।[13] अत: शिक्षा की नवीनतम परिभाषा यह है – 'मनुष्य अनुकरण से सीखता हैं। शिक्षा, प्रकृतिक संतुलन करके भारत, की आंतरिक शक्तियों के निरंतर-प्रभावशील-विकास को कहते है। अरस्तू ने मनुष्य और जानवर में भेद किया था मनुष्य के पास 'तर्क' है, जानवर के पास नही है इसलिए चातुर्य, बुद्धिमत्ता और सोच मनुष्य के पास है।'[14] मनुष्य गतिशीलता विकसित करने में समर्थ है। विभेदीकरण और संरचनात्मकता के गुण उसमें सहायक होते है। जानवर में यह सब नहीं होता। जानवरों की प्रतिक्रिया या प्रत्युत्तर तात्कालिक और आलोचनात्मक होता है। मनुष्य दीर्घकालीन विचारक होता है। संक्षेप में शिक्षा से अभिप्राय एक प्रयास, एक कोशिश, मनुष्य को विकसित करने की है। यह शिक्षा, यह आचरण या संव्यवहार का संशोधन या समाशोधन होती है।

यह हमें संवेदनात्मकता को मानवीय आचरण में परिवर्तित करने के लिए प्रोत्साहित करती है। उत्पीड़न, धमकी, अपमान, भय पर विजय पाना ही होगा। 'शिक्षा' संपूर्ण जीवन पर्यन्त एक विशेष प्रक्रिया है। अत: समाज गतिशील रहता है और उचित पुनर्निर्माण को प्रभावशील किया जा सकता हैं। भव्य भूतकाल को हम संरक्षित रख सकते है और बुराईयों का उन्मूलन कर सकते है। यह अज्ञानता ही ज्ञान की दिशा में एक आरोही यात्रा है। अरस्तु कहता है, इसीलिए 'जीवन शिक्षा है और शिक्षा ही जीवन है।' [15] वह यह भी कहता है कि न्याय के बिना विधि नहीं और विधि के बिना न्याय नहीं।

एनुअल स्टेटस ऑफ एजुकेशन रिपोर्ट [16] में 2005 से 2011 में लगातार सर्वेक्षण किए है जिनकी रिपोर्ट कुछ दिनों पूर्व प्रकाशित की गई है। इस संगठन में 3.00 लाख व्यक्तियों के परिवारों का जो 16,000 गांवो में फैले है (पूरे भारत में) उनका 25,000 युवाओं ने स्वयं सेवक बनकर विशालतम सर्वेक्षण किया एक अशासकीय संगठन के अंतर्गत रहते हुए। इस शोध की प्रमुख विषय वस्तु 'आधारभूत पठन और संख्यागणन' रही है। क्योंकि किसी भी असरदार नीति को क्रियन्वित करने के लिए सबूतों के अनिवार्य आवश्यकता होती है यह रिपोर्ट 2 मूलभूत लक्ष्यो पर केन्द्रित है –

1. विधार्थियों की विद्यालयों में कितनी संख्या तथा भर्ती (Enroll) की गई और वे किस किस्म के विद्यालय थे ?

2. क्या ये समस्त विधार्थी पठन के आधारभूत विषय को सीख रहे है तथा संख्या की संगणना पद्धति को सीख रहे है ? सर्वेक्षण की रिपोर्ट में ग्रामीण भारत की वास्तविक स्थिति निम्नानुसार है –

(i) भारत में 6–14 वर्ष आयु समूह से 97% बालक है जो विद्यालय से जुड गए है और पूर्व की तुलना में यह अद्‌भुत रिकार्ड पहली बार हासिल हुआ है। नियमित उपस्थित होने का जोश अतुलनीय है।

(ii) सबसे कठिन 11–14 वर्ष की आयु समूह की बालिका का स्कूल में नियमित पढ़ाई के लिए भर्ती और उपस्थिति, कुछ ऐसी अकल्पनीय सफलता है, और वह 90% बढ़ कर 95% तक के शिखर को छू गई है। बालिकाओं के अध्ययन में अनेक बाधाएं रही है, उन्हें स्वतंत्र छोडना जोखिम है परंतु संविधान के अनुच्छेद 21ए और शिक्षा के मौलिक अधिकार अधिनियम 2009 (2010 से लागू) में क्रांतिकारी परिणामों से पुरूस्कृत किया है। इन बालिकाओं ने, भारत की, स्वतंत्रता के 62 वर्ष पश्चात् लंबी लड़ाई में सफलता प्राप्त की।

(iii) सही शिक्षा की दिशा में यह अमिट उपलब्धि है और पहला सशक्त कदम बालिकाओं का है। (First powerful Step of girl children)

(iv) 25% बालक निजी विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण कर रहे है। जिसका श्रेय भी नई शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 को जाता है ।

(v) शासकीय विद्यालय अब अधिक स्वतंत्र एंव सुविधा जनक हो गए है और बेहतर परिणाम दे रहे है। निजी विद्यालय भी मशरूम की तरह फैलते जा रहे है। जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि शासकीय विद्यालयों में सुलभ्यता (Accessibility) अभी भी नहीं मिल पाई है।

(vi) 87% अध्यापक लगातार नियमित उपस्थिति द्धारा अध्यापन कर रहे है, एंव 10 राज्यों में 90% शिक्षक और गुजरात में 96% शिक्षक अध्यापन हेतु प्रतिबद्ध है।

(vii) छात्रों की उपस्थिति अभी भी बढ़ी नहीं है अपेक्षा अनुसार, अभी यह समंक 71% पर ठिठका हुआ हैं।

(viii) पिछले चार वर्षो में स्कूल त्यागने/छोडने वाले बालकों की संख्या बढ़ी भी है। जिसके पीछे कारण निर्धनता, परिवार की आर्थिक सहायता करना, भूख (starvation) एंव निरूत्साही होना है। बालिकाएँ भी इससे अप्रभावित नहीं है।

(ix) माध्यम भी एक बड़ी बाधा है, स्कूल की भाषा पृथक है और परिवार की मातृभाषा अलग है।

(x) सबसे कड़वा सत्य है कि विद्यालयों में 50% से अधिक में शौचालय का अभाव हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में यह समस्या अधिक है। 25% ऐसे विद्यालय है जिनमें बालिकाओं के लिए शौचालयों की पृथक व्यवस्था नहीं है। इसी समस्या का दूसरा पहलू शुद्ध पेयजल की सुविधा का अभाव है।

मध्यप्रदेश की स्थिति निम्नानुसार है [17] –

प्राथमिक विद्यालय	वर्ष		निष्कर्ष
	2007	2011	
1. छात्रो की उपस्थिति	67%	54.5	गिरता हुआ ग्राफ
2. शिक्षकों की उपस्थिति	91.3	87.7	गिरता हुआ ग्राफ
3. बहु विधि ग्रेड के कक्ष	61.8	70.8	उत्साहजनक
4. पेयजल का प्रावधान एंव संचालित	78.5	69.1	पीड़ा जनक पहलू
5. निजी विद्यालयों में भर्ती	13.0	19.0	उत्साहवर्धक

मध्यप्रदेश वर्ष 2008 तक अध्यापन की प्रभावोत्पादकता में सुधार हुआ है जिसके बाद से सीखने के स्तर में औधे मुंह गिरती हुई उतावली गिरावट दर्ज की गई है। [18]

4. भारत में शिक्षा संबंधी संवैधानिक प्रावधान – वर्ष 1935 से 1976 तक शिक्षा राज्यों (States) का विधायी विषय रहा है, 1909, 1919, 1935 के ब्रिटिश शासन अधिनियमों में भी शिक्षा को केन्द्र शक्ति के अधीन नहीं माना गया था। दिनांक 11, नवंबर 1976 को संविधान में 44 वें संशोधन ने, इसे समवर्ती सूची का विधायी विषय एंव शक्ति को घोषित कर दिया। 1960 तक प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण करने का एक ऐसा विशाल लक्ष्य था, और एक तरफ विरोधी लहर अनियमित तेज गति से बढ़ती गई। 56 सालो में आबादी जो वर्ष 2000 में एक सौ करोड़ को पार कर गई है, परन्तु वह स्वप्न और यह लक्ष्य आज तक अप्राप्त है। बाधाऐं अनेक हैं आर्थिक, राजनीतिक एंव सामाजिक, जिनका उन्मूलन शीघ्र गति से करना ही होगा जैसा की केरल राज्य ने कर दिखाया है ।

मूलत: संविधान का अनुच्छेद 45 [19] कहता है कि राज्य 10 वर्षो की अवधि में (1950) अनिवार्य और नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा अपने बच्चों को देने का अथक प्रयास करेगा ही, जब तक कि वे बच्चे 14 वर्षो की उम्र प्राप्त न कर लें। यहाँ अनुच्छेद 45 में प्रयुक्त शब्द 'राज्य' का अर्थ यह है जो अनुच्छेद 12 में है। अनुच्छेद 12 मूल अधिकार है और राज्यों के विरूद्ध जनता के अधिकार का यह विषय नाभिक है (न्युक्लीयस) या केन्द्रीय लक्ष्य है। राज्य में सभी विधायी, कार्यपालिक, एंव न्यायिक संस्थाए, स्थानीय शासन सम्मिलित है चाहे संसद हो या विधान मंडल या अन्य वे सब जो भारत शासन के अधीन है जिसमें संचार (मीडिया) माध्यम भी सम्मिलित है, भले ही वह प्रिन्ट मीडिया हो या इलेक्ट्रानिक मीडिया क्यों न है । यहाँ तक कि न्यायपालिका स्वतंत्र होते हुए भी 'राज्य' का ही अंग है ।

इग्लान्टाइन वह सर्वप्रथम व्यक्ति था जिसने इंग्लेंड में बच्चों को अन्तर्राष्ट्रीय प्रस्थिति प्रदान करने का आंदोलन चलाया था। जो विवाद (डिबेट) उसने प्रारंभ किया, उसमें 26 सितम्बर 1925 को लीग ऑफ नेशन्स में ऊँचाइयाँ की हदें छू लेने में उसकी कोशिशें सफल हुई। संयुक्त राष्ट्र के महासचिव ने दिनांक 20 अगस्त 1959 महासभा ने (सं. रा. संगठन) भी सर्वानुमति से आम सत्र में पुन: घोषणा की थी, क्योंकि लीग ऑफ नेशन्स [20] तो दो महायुद्धों की ज्वाला में भस्म हो गया। इस घोषणा ने 10 अधिकार घोषित किए थे बच्चों के लिए। जो सुसंगत है उनकी शिक्षा के संप्रेक्ष में वे निम्नानुसार उल्लिखित है [21] –

1. .....
2. .....
3. संरक्षण एंव उपचार पाने में बालक सभी परिस्थितियों में प्रथम स्थान पर रहेगा। उसे उच्चतम शीर्ष प्राथमिकता दी जावेगी।
4. बालक को नि:शुल्क एंव अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा पाने का अधिकार है। यह उसके सर्वोत्तम हित में है। जिसके लिये उसके अभिभावक उत्तरदायी होंगे।
5. .....
6. शारीरिक, मानसिक अथवा सामाजिक रूप से शिथिलांग बालकों को विशेष उपचार, शिक्षा एंव देखभाल प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त होगा अक्सर।
7. .....
8. .....

9. .....
10. बाल अधिकार कन्वेशन (सी.आर.सी.) ने इन्हीं को एक बार पुन: दोहराया गया है।

(ब) भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 52 वर्षो की कठिन प्रतीक्षा के बाद कितना दुख एवं दुर्भाग्य रहा है कि संविधान भारत में बनने के बाद भी वर्ष 2002 तक भारतीय जनता को एवं भारतीय शिशुओ को 'शिक्षा के लिए मौलिक अधिकार', से वंचित रहना पड़ा। अब संविधान में अनु 21 (ए) जोड़ा गया है, जो प्राण एवं राज्य सभी उन बालको को 6 से 14 वर्ष की उम्र के है उन्हे नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा जिसका तरीका राज्य, विधि द्वारा अभिनिश्चित किया जावेगा।

जे.पी. उन्नीकृष्णन विरूद्ध आंध्रप्रदेश राज्य 22 तथा टी.एम.ए. पाई फाउन्डेशन बनाम कर्नाटक राज्य 23 के वादों में उच्चतम न्यायालय ने जो देश का शीर्षस्थ अग्रिम न्यायदायक संस्थान है उसने राष्ट्र की बहुप्रतिक्षित मांगो को पूरा करने के लिए भारत शासन को प्रोत्साहित एंव साहस पूर्ण निर्देश, प्रेरणा प्रदान की है। इसी संदर्भ में, साथ ही भारतीय संविधान का अनु. 39 भी महत्वपूर्ण है जो राज्य को नीति निर्देश, के अंतर्गत बालक एंव महिला स्वास्थ्य आदि की व्यवस्था प्रदान करने के प्रावधान बनाने का आदेश करता है। अनुच्छेद 51 (ए) (के) अनुसार यह बालक के अभिभावक या संरक्षक का मूल कर्तव्य होगा कि अपने बालक को (6-14 वर्ष की उम्र के) शिक्षा का उचित अवसर उपलब्ध करवाए।

जहां तक कि मीडिया का सवाल है, संविधान द्वारा उन्हें कोई पृथक से स्वतंत्रता का प्रावधान नहीं है परन्तु अनुच्छेद 19(1) में यह प्रावधान है कि समस्त नागरिको को - भाषण एवं अभिव्यक्ति स्वतंत्रता होगी। ब्रजभूषण, सकाल पेपर, बेनेट कोल मेन एन्ड कम्पनी, तमस, चाणक्य आदि अनेकों विवादों के निर्णयों मे उच्चतम न्यायालय के निर्णय में संचार माध्यमो को इस स्वतंत्रता हेतु अन्य आम नागरिकों के अधिकारो के तुल्य अधिकारी माना गया है।[24]

5. निष्कर्ष एंव सुझाव -

i. बालका के शैक्षणीक एवं गुणात्मक विकास के लिए बेहतर योजनाएं आरम्भ की जावे।
ii. बाल शिक्षा का कार्य बाल विशेषज्ञ रिपोर्टरों, मनोवैज्ञानिकों को उन विषयो का जिसमें, बालक स्वयं भागीदारी करें। प्रोत्साहित करना होगा।
iii. अश्लीलता का उन्मूलन कठोरता से कानून द्वारा किया जावे।
vi. पर्यावरण शिक्षा, मानवाधिकार शिक्षा, यौन शिक्षा, रोजगार परक शिक्षा को प्रोत्साहित करें गैर शासकीय संगठन से निधियों ग्रहण करें उनका सदुपयोग करें।
v. अब शिशु मौलिक अधिकार धारक इकाई भी है मानव होने के साथ साथ तथा शिक्षको का भी पुर्नश्चेतना करना अधिकार है बालको के समान।

भारत में 1980 के बाल अधिकार अभी समय और यूनीसेफ योजनाओ 25 को लागु करने के लिए अर्न्तराष्ट्रीय मानदण्ड लागु करना ही होंगे इसलिए सभ्यता-संस्कृति को प्रशासित करने में मानवाधिकारो की रक्षा के लिए प्रिन्ट व विधुत मीडिया की बाल मित्र योजना की व्यापक एवं एहम भूमिका है।

दिनांक 1 अक्टूबर वर्ष 1996 को इग्लैंड मे श्रमिक दल की सभा में टोनी ब्लेयर 26 ने कहा था कि मुझसे आप तीन प्राथमिकताऐं शासन की यदि पुछोगे तो मेरे उत्तर होगा शिक्षा, शिक्षा और शिक्षा। भारत में तो बालको के नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा के अधिकार का विषय अपार मात्रा में है। प्रधानमंत्री मोदी जी ने घोषणा की है कि बालको को विद्यालय में पेयजल और पक्के शोचालय हेतु सर्वाधिक धन राशि आवंटित की जाना है। शिक्षा के विचार के पीछे भारत की जनता आज भी अनभिज्ञ है। इसलिए Right of children to Free and Compulsory Education Act 2009 (35 of 2008) संसद 27 द्वारा पारित हुआ तथा दिनांक 1 अप्रैल 2010 से प्रवर्तित हुआ है। इसका मुख्य उद्देश्य समानता, समाजिक न्याय, प्रजातंत्र व न्यायिक एवं मानवीय समाज के मुल्यों के स्थापना के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके।

किशोर अपचारिता, दत्तक एवं बालिका विवाह को बालिकाओं के मामलो में किशोर न्याय अधिनियम 2000 जो 2006 से संशोधित हुआ उसमें अभी भी संशोधन किए जावें।

श्रीमति मैनका गॉधी ने किशोर न्याय अधिनियम वर्ष 2014 में संशोधन हेतु दबाव बनाया है, जिसमें किशोर अपराधी को कठोर दंड से दंडित किये जाने का प्रस्ताव रखा है। शिक्षा का यह आयाम भी कम महत्वपूर्ण नही है। चुनौतिया तो अनेक है। हम 'भारत के लोग' कैसे इस चुनोती को शिक्षा के माध्यम से निराकृत करे यह सवाल आज भी ललकार रहा है 2014 में।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. रूजवेल्ट - चौथी व्हाइट हाउस सभा 26 अप्रैल 1936
2. एनुअल स्टेटस ऑफ एज्युकेशन रिपोर्ट 2011
3. सर रिचर्ड लिविंगस्टोन 1934 पेज 144(2)।
4. भारतीय संविधान
5. माध्यमिक शिक्षा आयोग प्रतिवेदन पृ. 20(1953)
6. माध्यमिक शिक्षा आयोग प्रतिवेदन पृ. 21(1953)
7. 1986 शिक्षा नीति, राजीव गाँधीं
8. शिक्षा आयोग प्रतिवेदन 1996 पृ.17
9. अरस्तु (रिपब्लिक)
10. थ्योरी ऑफ लेजिस्लेशन पृ.3 बेंथम (एन.एम.त्रिपाठी प्रा.लि., बम्बई)
11. थामस हिल ग्रीन - राजनीति विज्ञान
12. लास्की - ग्रामर ऑफ पोलिटिक्स
13. डॉ. अर्मत्य सेन - गरीबी का अर्थशास्त्र
14. अरस्तु दि लॉज
15. अरस्तु दि लॉज
16. तदैव 2
17. तदैव 2
18. तदैव 2
19. भारतीय संविधान (पृ.57) डॉ.पी.एम. बक्षी (यूनिवर्सल) 5 संस्करण 2003
20. लीग ऑफ नेषन्स
21. संयुक्त राष्ट्र महासभा के सचिव की घोषणा
22. ए. आय. आर. 1993 एस. सी. 2178
23. ए. आय. आर. 2003 एस. सी. 355
24. प्रेस की स्वतंत्रता अनु. 19 (1) (अ)
25. युनिसेफ योजना
26. टोनी ब्लेयर का भाषण दिनांक 1 अक्टूबर 1996
27. Right of children to Free and Compulsory Education Act 2009

धारा 125 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अधीन न्यायिक कार्यवाहियों का प्रायोजन एवं विश्लेषण

आरिफ खान पटेल *

शोध सारांश – यह शोध पत्र इस बात का अनुसंधान करने के लिए उत्सुक एवं संकल्पित है कि भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 125 की यथार्थ: विधिक प्रकृति क्या है, जाना जावे, भविष्य में होने वाले प्रक्रियात्मक विवादो से बचा जा सकें, तथा न्याय प्रदान करने की कार्यवाही में तेजगति एवं सक्षिप्तता निर्मित की जा सके। जिससे कि परित्यक्त पत्नी एवं संतानों या अभिभावकों को भूख से मरने की समस्या से शीघ्र उपचार मिल सके।

प्रस्तावना – धारा 125 दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 को अध्याय IX में उपबंधित विधायिका द्वारा किया गया है, जो कि दंड प्रक्रिया संहिता 1898 की धारा 488 को प्रतिस्थापित करती है तथा यह एक सामाजिक न्याय का उपचारात्मक प्रावधान है। यह उपबंध आपदा एवं आकस्मिक संकट से व्यथित महिला, बच्चों एवं अभिभावकों के संरक्षणार्थ विशेषत: अधिनियमित किया गया है। किन्तु ये कार्यवाहियाँ दाण्डिक (Punitive) प्रकृति की नहीं होती है। इन प्रावधानों का उद्देश्य किसी व्यक्ति को दण्डित करना नहीं है जिसने उन व्यक्तियों के भरणपोषण में उपेक्षा की हो, तथा जिनके भरण पोषण के लिए वह बाध्य है। विधायिका का आशय, इस प्रावधान के पीछे परित्यक्त पत्नी बच्चों एवं मातापिता को भूख से पीड़ित होने की व्यथा के विरूद्ध शीघ्रतर उपाय प्रदान करना रहा है और एक संक्षिप्त प्रक्रिया, दायित्व को प्रवर्तित करवाने हेतु उपलब्ध करवाना है जिससे कि आवारागर्दी से बचा जा सके। धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता एक पुरूष के प्राकृतिक और मौलिक कर्तव्य को प्रभाव में लाती है जिसके द्वारा कि वह अपनी पत्नी, बच्चों एवं अभिभावकों को परिपोषित तब तक करे जब तक वे स्वयं का भरण पोषण करने में असमर्थ रहते हैं।

डेनियल लतीफी विरूद्ध भारत संघ[1] के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने तलाक प्रदत्त स्त्री के अंधकारमय भविष्य के मद्देनजर युक्तियुक्त और उचित (Just) प्रावधानों की आवश्यकता/अनिवार्यतता पर हृदय को हिला देने वाली बहस का निर्णय सुनाते हुए कहा था कि 'इदत' काल के समाप्त हो जाने के बाद भी पति द्वारा अपनी पत्नी/बच्चों का भरण पोषण किए जाने की बाध्यता जारी रहेगी (मुस्लिम महिला–तलाक पर अधिकारों के संरक्षण अधिनियम 1986 की धारा 3(1) के तथा 4 में यह प्रावधान किए गए हैं। ये प्रावधान भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15 एवं 21 के विरूद्ध एवं उल्लंघनकारी (Offending) नहीं है।

उक्त निर्णय (न्यायिक विधायन) के आधार हेतु माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायदृष्टांत **केप्टन रमेशचन्द्र कौशल विरूद्ध वीणा कौशल**[2] के निर्णय पर निर्भरता व्यक्त की थी और धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के निहित उद्देश्य को रेखांकित किया था और यह विधिक सिद्धांत स्थापित किया था कि धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता का प्रावधान सामाजिक न्याय का उपचारात्मक उपबंध है तथा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39 जिसमें अनुच्छेद 15(3) पुर्न स्थापित किया है दंड प्रक्रिया संहिता 1973 सामान्य प्रक्रियात्मक अधिनियम है तथा मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम, 1986 एक ही योजना के परस्पर सहयोगी अंग है तथा इससे आगे बढकर न्यायदृष्टांत **मोहम्मद अहमद खान विरूद्ध शाहबानू बेगम**[3] के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह विधि प्रतिपादित की थी कि यदि तलाकशुदा पत्नी स्वयं का पालनपोषण करने में असमर्थ है तो इद्दत की अवधि के बीतने के बाद भी धारा 125 भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता की सहायता (Recourse) लेने की सशक्त अधिकारिणी (Entitled) है क्योंकि माननीय उच्चतम न्यायालय ने ऐसा ही अभिमत न्यायदृष्टांत **बाई ताहिरा विरूद्ध अली फिसदअली चौथिया**[4] के वाद में प्रतिपादित किया था और माननीय मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय ने भी न्यायदृष्टांत **नन्ही बाई विरूद्ध नेतराम**[5] में भी प्रतिपादित किया है।

कार्यवाहियों की प्रकृति – व्यवहार प्रकृति का उपचार वह उपचार होता है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति उपयुक्त उपचार (Relief) द्वारा अधिकार प्रवर्तित करवाता है जबकि आपराधिक प्रकृति का उपचार वह उपचार होता है, जिसमें कोई व्यक्ति कथित अपराध के लिए दण्डित किया जा सके।

यदि आपराधिक कार्यवाही को अपने अंतिम बिन्दु तक पहुँचाने हेतु जारी रखा जावे तो परिणाम सजा के रूप में हो सकता है। कार्यवाही की प्रकृति या विशेषता इस बात पर निर्भर नहीं करती है कि न्यायाधिकरण (Tribunal) की प्रकृति क्या है जिसे उपचार स्वीकृत करने के प्राधिकार/विवेकाधिकार से वेष्ठित किया गया है। ठीक इसके विपरित इस बात पर निर्भर करती है कि हनन किया गया अधिकार तथा उपयुक्त उपचार जिसका दावा किया जा सकता है वह क्या है। इस अभिप्राय के लिए माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षण को संदर्भित किया जाना अनिवार्य है जो उसने **एस.ए.एन. नारायण रॉव विरूद्ध ईश्वरलाल भगवान दास**[6] के निर्णय में प्रतिपादित किया था।

माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **नन्दलाल मिश्रा विरूद्ध कन्हैयालाल मिश्रा**[7] के वाद में यह अभिनिर्धारित किया था कि धारा 488 (जो अब 125 वीं धारा बन गयी है) पुरानी दंड प्रक्रिया संहिता 1898 के अधीन उपबंधित उपचार, 'व्यवहार प्रकृति का है अत: धारा 200 से 203 दप्रस के प्रावधान लागू नहीं होते हैं। धारा 488 के प्रयोजन की कार्यवाही में फलत: किसी भी प्रकार की प्रारंभिक जांच की प्रत्याशा (Contemplates) नहीं करता है।

सावित्री विरूद्ध गोविंद सिंह[8] के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अपने युगान्तर कारी निर्णय में यह विधि प्रतिपादित की थी कि दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के अध्याय IX में पारित किए जाने वाले किसी आदेश जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को उसकी पत्नी, बच्चों या अभिभावकों के भरण पोषण करने की बाध्यता की जा रही है, मजिस्ट्रेट उस व्यक्ति पर किसी भी

* शोधार्थी (विधि) अध्ययन शाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रकार का दण्ड किसी अपराध कारित करने के बदले अधिरोपित नहीं कर रहा होता है।

शैल कुमारी देवी विरूद्ध कृष्ण भगवान पाठक[9] के निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह विधि प्रतिपादित की है कि मजिस्ट्रेट को यह अन्तर्निहित शक्ति वेष्ठित थी कि वह परित्यक्ता और साधन हीन पत्नियो, उपेक्षित और घर से बाहर फेंक दिए बालकों और असहाय–अभिभावकों को उपचारो को प्राप्त करवाए तथा यह सुनिश्चित करें कि कोई भी पत्नी, सन्तान या अभिभावक को भिखारी और संसाधन विहीन व्यक्ति के रूप में समाज के कूड़ेकचरे के ढेर पर बेसहारा/लाचार नहीं छोड़ दिया जावे जिससे के ये संपीड़ित अपराध कारित करने की दिशा में लालायित/ आकर्षित हो जावे अथवा दूसरे लोगों के हाथों में उन पर अपराध कारित करने के मौके या अवसर और आकर्षण थमा दिए जावे दं.प्र.सं., 1973 के अध्याय नौंवे के अधीन मजिस्ट्रेट के क्षेत्राधिकार की प्रवृत्ति कठोरत: अपराधिक/दाण्डिक प्रकृति की बिल्कुल भी नहीं है। माननीय उच्च न्यायालय ने न्यायदृष्टांत **एज़ाज हुसैन विरूद्ध शमा परवीन**[10] मे यह विधि प्रतिपादित की थी कि दण्ड प्रक्रिया के अधीन भरण पोषण के आवेदन पत्र संस्थित करने पर प्रस्थापित कार्यवाही व्यवहार प्रकृति की होती है एवं भविष्य में होगी।

क्या व्यवहार प्रक्रिया संहिता लागू होगी ?

पंढरीनाथ सखाराम थुबे (Thube) विरूद्ध कुमारी सुरेखा पंढरीनाथ थुबे[11] के निर्णय में माननीय बम्बई उच्च न्यायालय ने प्रतिपादित किया था कि धारा 125 दं.प्र.सं. 1973 के अधीन कार्यवाहियाँ पूरी तरह से दप्रस की प्रक्रिया द्वारा अधिशासित (Governed) होती है वे वास्तव में व्यवहार प्रकृति ही होती है लेकिन उन्हें संक्षिप्तीकरण करके प्रयोग किया जाता है आपराधिक न्यायालयों का इसके पीछे प्रायोजन यह होता है कि सामाजिक उत्थान और सुविधा के आधार पर शीघ्रगति से निराकरण किया जा सके।

पेड़ियाला सुशेकुमार विरूद्ध सोपाल्ली अरूण बिन्दु[12] के निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यह प्रतिपादित किया था कि 'श्रेष्ठतम साक्ष्य' का नियम भरण पोषण की कार्यवाहियों पर लागू नहीं होता हैं, क्योंकि भरण पोषण की कार्यवाहियाँ, अर्द्ध सिविल प्रकृति की कार्यवाहियाँ होती है।

राजेश शुक्ला (तदैव/Supra) के प्रकरण में माननीय म.प्र. उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि, अध्याय IX दं.प्र.सं. 1973 अपनी स्वयं की प्रक्रिया का विधायन करता है एवं उपबंधित करता है। दं.प्र.सं. 1973 की धारा 125 का सरोकार पत्नियों, बच्चों एवं अभिभावकों के भरण पोषण के आदेशों से है।

दं.प्र.सं. की धारा 126 ऐसी प्रक्रिया उपबंधित करती है जो कि उसी के प्रयुक्तिकरण से संव्यवहार करती है। दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973, आदेश के पुनरीक्षण या परिवर्तन हेतु कोई भी उपबंध नहीं करती है यदि एक बार दं.प्र.सं.1973 की धारा 362 के आधीन भरणपोषण का आदेश न्यायालय अंतिम रूप से पारित कर देता है। तथापि धारा 362 दं.प्र.सं. के ठीक विपरीत द.प्र.सं. 1973 की धारा 127 के अधीन न्यायालय को भरण पोषण के आदेश को संशोधित करने की शक्ति प्रदत्त की गई है। धारा 126 में एक पक्षीय आदेश को निरस्त करने की शक्ति प्रदान की गई है, जबकि दं.प्र.सं. 1973 की धारा 128 के अधीन शक्ति मजिस्ट्रेट द्वारा पारित भरण पोषण के आदेश के निष्पादन या तामीली से संबंधित है। फलत: यह स्पष्टत: विधायी आशय है कि अध्याय IX स्वयमेव ही भरण पोषण स्वीकृत करने की अपनी प्रक्रिया का विधायन करता है।

वाद मित्र के बिना अवयस्क पत्नियों के द्वारा कार्यवाही – न्यायदृष्टांत **गुलाम मुस्तफा विरूद्ध ताहारा बेगम**[14] के निर्णय में माननीय आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने यह विधि प्रतिपादित की थी कि 15 वर्षीय किशोरी / बालिका बिना वाद मित्र की सहायता लिए भरण पोषण के आवेदन की न्यायालय में प्रस्तुति हेतु वैधत: पूर्णत: हकदार है, परन्तु विधायिका का आशय एक पत्नी जो 18 वर्ष से कम उम्र की है, उसे अपने पति के विरूद्ध धारा 125 दं.प्र.सं. 1973 के अंतर्गत कार्यवाही आरंभ करने की अनुमति बिल्कुल नहीं दी जानी चाहिए का था, तब जब प्रावधान निर्मित किया गया था और यह भी ध्यान देना होगा कि धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के अधीन मामलों पर व्यवहार प्रक्रिया संहिता 1908 के प्रावधान लागू नहीं हो सकते हैं एवं प्रयोज्यनीय (Applicable) नहीं है इसलिए अल्पवयस्क पत्नी स्वंय हकदार है कि भरण पोषण के आवेदन हेतु, बिना आदेश 32 (XXXII) व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अधीन वादमित्र के माध्यम से प्रतिनिधित्व करवाए।

अभिवचनो में संशोधन – धारा 125 दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के अधीन भरण पोषण के लिए आवेदन पर संस्थित कार्यवाही चूंकि सिविल प्रकृति की होती है, अत: उनमें अभिवचनों की कठोर तकनीकों को परित्याग करते हुए उससे बचना होगा। न्यायदृष्टांत **गिरीशचन्द्र बनाम सुशील**[15] के निर्णय में माननीय म.प्र. उच्च न्यायालय ने यह विधि प्रतिपादित की थी कि सिविल मामलों के अंतर्गत अभिवचनों के नियम, धारा 125 दं.प्र.सं. 1973 के अंतर्गत कार्यवाही में आकर्षित नहीं होते हैं किन्तु पक्षकारों के बीच विवाद के सही निराकरण हेतु और विधि के उद्देश्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से अभिवचनों को संशोधित करना बाध्यकारी होता है।

न्यायदृष्टांत **साइनुलाबुद्दीन विरूद्ध बीना**[16] के निर्णय में माननीय केरला उच्च न्यायालय ने यह विधि प्रतिपादित की है कि मुंस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों के संरक्षता अधिनियम 1986) के अधीन भरण पोषण के आवेदन में संशोधन की अनुमति दं.प्र.संहिता 1973 के अध्याय IX के अधीन वैधत: प्रदान की जा सकती है यह मानते हुए कि दं.प्र.सं. में कोई विशेष प्रतिबंध/प्रतिषेध आवेदन में संशोधन पर निर्दिष्ट नहीं है।

एक पक्षीय कार्यवाही को खारिज करना – धारा 126(2) दंण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 न्यायालय को यह शक्ति प्रदान करता हैं कि अच्छे वाद कारण का अनावेदक द्वारा दर्शाये जाने पर, मजिस्ट्रेट पूर्व में पारित किसी भी एक पक्षीय आदेश (कार्यवाही को) खारीज कर सकता है।

न्यायदृष्टांत **सूर्यकान्त विरूद्ध श्रीमती अल्लामा प्रभु (उपनाम) अल्लावा**[18] के निर्णय में माननीय कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा यह प्रतिपादित किया है कि, एक पक्षीय आदेश धारा 126(2) के अंतर्गत खारिज किया जा सकता है। अध्याय ix दं.प्र.सं. 1973 स्वयं एक पक्षीय कार्यवाही करने एवं उसे निरस्त करने की शक्ति प्रदान करने का प्रावधान उपबंधित करता है।

समझौता – एक मजिस्ट्रेट न्यायालयीन भरण पोषण के मामले में पक्षकारों के बीच हुए समझौते के आधार पर भरण पोषण के आवेदन का निराकरण कर सकता है। अध्याय IX दप्रस में यद्यपि प्रावधान नहीं है लेकिन व्यवहार प्रक्रिया संहिता 1908 के आदेश XXIII के अधीन सुलह समझौता यदि उभय पक्ष करने को सहमत हो तो मजिस्ट्रेट वैध आदेश पारित कर सकेंगे। ऐसा ही मत न्यायदृष्टांत पद्मनाभन बनाम बामा[19] में प्रतिपादित किया गया है तथा समझौता कार्यवाही को, आदेश का ही भाग माना जावेगा ऐसा मत व्यक्त किया गया है।

शैलेश प्रधान विरूद्ध हाराबाती प्रधान[20] के निर्णय में माननीय उड़ीसा उच्च न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया है कि धारा 125 (दं.प्र.सं.) के तहत समझौता आदेश यदि पारित किया जाता है तो वह विधि विरूद्ध नहीं है।

न्यायदृष्टांत **शैलकुमारी देवी विरूद्ध कृष्णभगवान पाठक**[21] के निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि धारा 125 दं.प्र.सं.1973 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन पत्र के निराकरण करते समय मजिस्ट्रेट से यह अपेक्षा की जाती है कि भरण पोषण प्रदान करने या भरण पोषण प्रदान नही करने के कारणों को लेखबद्ध करें और भरण पोषण का भुगतान करने से संबंधित आवेदन की दिनांक से अथवा आदेश की दिनांक सें भुगतान किया जाए।

निष्कर्ष – न्यायदृष्टांत **शबनम विरूद्ध जमीला खान**[22] के निर्णय में माननीय उच्च न्यायलय ने यह अभिमत प्रतिपादित किया था कि विगत 12 महीनों की भरण पोषण की राशि की वसूली हेतु आवेदन पत्र प्रस्तुत होने पर उसे व्यतिक्रम अर्थात भरण पोषण देने में उपेक्षा करने पर केवल एक माह का कारावास दिया जा सकेगा, परन्तु उक्त निर्णय के पूर्व नागपुर उच्च न्यायालय द्वारा **किंग एमपरर विरूद्ध बुद्धोमण्डल गोड**[23] एआईआर (36) 1949 नागपुर 269 में यह विधि प्रतिपादित की जा चुकी है कि यदि अनावेदक ने एक माह से अधिक के भरण पोषण की राशि अवशेष होने पर भुगतान नहीं किया है तो उसे एक माह से अधिक का करावास भी दिया जा सकता है। चुकि उक्त नागपुर माननीय उच्च न्यायालय के निर्णय को माननीय म.प्र. उच्च न्यायालय द्वारा उपरोक्त शबनम के मामले मे विचार में नही लिया गया है इस कारण किंग एमपरर के उक्त निर्णय में पारित विधि मान्य होगी और अनावेदक को एक माह से अधिक कारावास में भेजा जा सकता है।

न्यायदृष्टांत **कुलदीप कोर विरूद्ध सुरेन्दरसिंह**[24] एआईआर 1990 एससी 232 में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह विधि प्रतिपादित की है कि यदि अनावेदक ने कारावास भुगत लिया है तो भी उसकी जंगम या स्थावर संपति या दोनों की कुर्की करने हेतु वसुली वारंट जारी किया जा सकता है।

इस प्रकार उपरोक्त संपूर्ण चरणो में दिये गये न्यायदृष्टातों तथा दंड प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 125 की कि गई समीक्षा से यह निष्कर्ष प्रकट होता है कि परित्यक्त पत्नी एवं संतानो या अभिभावको के भरण पोषण के लिये प्रस्तुत किये जाने वाले आवेदन को संक्षिप्त प्रक्रिया द्वारा शीघ्रता से निराकृत किया जाने का प्रावधान है तथा यदि आवेदक द्वारा प्रस्तुत आवेदन में कोई तकनीकी त्रुटि है तो उसे सिविल कार्यवाहियो की भांति उक्त त्रुटि को संशोधन के द्वारा ठीक किया जा सकता है तथा मजिस्ट्रेट भरण पोषण की राशि आवेदन दिनांक से देने का आदेश कर सकता है और धारा 125 दप्रस की कार्यवाही पर सिविल प्रक्रिया संहिता भी लागु होती है और यदि अनावेदक प्रकरण में जान बुझकर अनुपस्थित होता है तो उसके विरूद्ध एक पक्षीय आदेश किया जा सकता है। अनावेदक भरण पोषण की कार्यवाही अपने कृत्य द्वारा बांधित नही कर सकता है और यदि आवेदक एवं अनावेदक चाहे तो समझोता प्रस्तुत कर सकते है और मजिस्ट्रेट समझोते के संबध में आदेश पारित कर सकता है।

इस प्रकार यदि उपरोक्त प्रक्रियाओ के संबध में ईमानदारी से कार्य किया जावें तो परित्यक्त पत्नी एवं संतान या अभिभावको को भूख से मरने की या अपने स्तर का सामान्य जीवन जीने की समस्या से शीघ्र उपचार दिलाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पीटीसन क्रमांक 868/1986 निर्णय दिनांक 28.09.2001 (पॉच न्यायमूर्तिगण की पीठ का निर्णय)
2. एआईआर 1978 एससी 1807
3. 1985 एससी आर. (3) 844
4. 1979 एससीआर (2) 75
5. 2001 वाल्यूम-तीन एम पी एल जे 170
6. एआईआर 1965 एससी 1818
7. एआईआर 1960 एससी 882
8. एआईआर 1986 एससी 984
9. एआईआर 2008 एससी 3006
10. 1986 वाल्यूम-दो एम पी डब्ल्यू एन 91
11. 1999 सीआर.एलजे 2919
12. 2005 सीआर एल जे 1455
13. 2005 सीआर.एल जे 3800
14. 1991 सीआर.एल.आर. एम पी 340
15. 1980 सीआर.एल जे 124
16. 1987 एम पी डब्ल्यूएन वाल्यूम-दो पेज 214
17. दंड प्रक्रिया संहिता 1973 खेत्रपाल लॉ पब्लिकेशन
18. 2004 सीआर एल जे 2351
19. 2000 सी आर.एल जे 120
20. 1988 सीआरएल जे 1386
21. 1989 सीआरएलजे 1661
22. एआई आर 2008 एससी 3006
23. 2007 वाल्यूम-दो एम पी एल जे 111
24. एआईआर (36) 1949 नागपुर 269
25. एआईआर 1989 एससी 232

****

भ्रष्टाचार नियन्त्रण में कानून की भूमिका

डॉ. देवी लाल अहीर * डॉ. आर.पी. सहारिया **

शोध सारांश – अन्ततोगत्वा भारत आकण्ड भ्रष्टाचार में डूब रहा है। भारत में भ्रष्टाचार की घटनाओं का तांता लग रहा है। बोफोर्स दलाली के उपरांत बैंकिंग घोटाला, चीनी घोटाला, हवाला घोटाला, चारा घोटाला, तांसी भूमि घोटाला, रक्षा सोदा घोटाला, जूदेव टेप काण्ड, ताबूत घोटाला, राष्ट्रमण्डल खेल घोटाला, 2 जी स्पेक्ट्रम घोटाला, संसद में वोट के बदले नोट व कर्नाटक के रेड्डी बन्धुओं का खुला भ्रष्टाचार आदि भ्रष्टाचार के कुछ उदाहरण है। इतना ही नहीं, रिश्वत लेकर संसद में सवाल पूछने की घटना तो हमारे राजनेताओं के चारित्रिक पतन की पराकाष्ठा ही कही जाएगी। आईपीएस अधिकारी जसवीर सिंह का कथन इसी बात की पुष्टि करता है– 'जयप्रकाश नारायण ने कहा था कि भ्रष्ट राजनेताओं को चुनाव लड़ने के लिए पैसा चाहिए। नौकरशाही राजनेताओं को, उनके भ्रष्टचार में साथ देकर उपकृत होता है। इस पूरी कवायद में अगर किसी को खामियाजा भुगतना पड़ता है तो वह है ईमानदार 'करदाता' या 'आम आदमी'।..... हमारी संसद में आपराधिक मामलों के आरोपी 162 सांसदों की उपस्थिति ने अधिकांश लोगों की नजर में संसद को 'हॉल ऑफ शेम' बना दिया है।' स्थिति इतनी गिर चुकी है कि पूर्व सांसद एवं उच्चायुक्त कुलदीप नैयर ने भी अपनी पीड़ा जाहिर करते हुए कहा कि 'मौजूदा दौर में उन्हें हिन्दुस्तानी होने पर नाज नहीं, बल्कि शर्म आती है। देश के राजनीतिज्ञों से अब कोई आशा ही नहीं की जा सकती।' राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार पर टिप्पणी करते हुए सन् 2004 में लिंगदोह ने कहा था कि 'राजनेता कैंसर की तरह लाइलाज बीमारी है..... यदि कैंसर का इलाज मिल भी गया, तो हमें राजनेताओं के लिए कोई और नाम तलाशना होगा। यह एक दुर्भाग्यपूर्ण सच्चाई है कि कथनी और करनी में अन्तर ने आम जनता की निगाहों में नेतृत्व का कद छोटा ही किया है। राजनीति आज देश में भ्रष्टाचार की जननी हो गयी है।'

भ्रष्टाचार से शायद ही कोई विभाग बचा हो। स्थिति यह है कि भ्रष्टाचार की किसी घटना के सामने आते ही जब तक जांच एजेंसी उस घोटाले की तह तक नहीं पहुंच पाती, कि तभी कोई नया घोटाला सामने आ जाता है। ऐसे में सवाल उठता है कि 'क्या सभी भ्रष्टाचार के आगोश में सिमट चुके हैं। सुविधाभोगी होते समाज को भ्रष्टाचार का दानव निगल रहा है।'

प्रस्तावना – लोकतन्त्र एक सर्वश्रेष्ठ, लोकप्रिय एवं लोक कल्याणकारी व्यवस्था है। यह एक सामाजिक शक्ति तथा नैतिक अवधारणा हैं। लोकतंत्र एक राजनीतिक आदर्श तथा समाज का एक प्रकार भी हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति की सहभागिता होती हैं। सभी का इसमें समान महत्व होता हैं। आजादी के पश्चात् हमारें संविधान निर्माताओं ने एक आदर्श संसदीय लोकतंत्र की कल्पना की थी जिसमें लोकतंत्र की मूलभावना के साथ ही समाजवाद राष्ट्रीय एकता, अखण्डता, धर्मनिपेक्षता सामाजिक समरसता जैसे आदर्शो की प्राप्ति के लिये कदम बढ़ाया। यही आदर्श लम्बे समय तक हमारे लोकतंत्र की प्राण वायु रहे। भारतीय लोकतंत्र के इन्हीं लक्षणों के कारण डॉ वेद प्रकाश वैदिक ने कहा था कि भारतीय गणतंत्र की स्वस्थ्य परम्पराओं के कारण भारत संपूर्ण एशिया का आदर्श बनता जा रहा हैं। ऐसा कौन सा देश हैं जो नहीं चाहता कि उनका लोकतंत्र भारत के तर्ज पर चले। किन्तु जिस लोकतंत्र पर हम गर्व करते थे उसके मूल्य आज तिरोहित हो चुके हैं। हमारा प्रजातंत्र लूटतंत्र, धनिकतंत्र और भ्रष्टतंत्र में परिवर्तित हो चुका हैं। स्वतंत्रता को हमने स्वच्छन्दता समझा और मौलिक अधिकारों के नाम पर खूब लूट खसोट मचाई। मौलिक अधिकारों के साथ–साथ कर्तव्य आम जीवन से ओझल हो चुके। जिनको देश की शासन की बागडोर सौपी गई थी वही नियम कानून और व्यवस्था भंग करने में शान समझने लगे हैं, जिसका परिणाम देश अवनति की ओर जा रहा हैं। जनता की हालत दयनीय, सोचनीय और चिन्तनीय हैं। लोकतंत्र से जनता का विश्वास उठता नजर आ रहा हैं और वह ऐसे सोचने लगी है कि देश में लोकतांत्रिक व्यवस्था के स्थान पर सैनिक शासन हो जाये तो बेहतर हैं। एक–एक कर जिस प्रकार से लाखों करोड़ों रूपये के घोटाले हर क्षेत्र में उजागर हो रहें उससे आम नागरिक का विश्वास ही इस व्यवस्था और प्रणाली से उठ गया हैं। इस सबके के मूल में निहित हैं भ्रष्टाचार जो कि शासन के हर स्तर पर व्याप्त हैं।

भ्रष्टाचार से अभिप्राय – भ्रष्टाचार का शाब्दिक अर्थ हैं 'भ्रष्ट अथवा बिगड़ा हुआ आचरण'। यहाँ भ्रष्टाचार का संबंध शासकीय सेवकों से जुड़ें हुयें भ्रष्टाचार से लोक सेवकों से यह अपेक्षा की जाती हैं कि वे अपनी शक्ति, सत्ता और स्थिति का प्रयोग जनता की भलाई के लिये करें लेकिन जब वे इनका उपयोग स्वहित, अपने परिवार, भाई भतीजों, सगे सम्बन्धियों के लिये करने लगे तो उनका यह आचरण भ्रष्ट आचरण माना जायेगा। भ्रष्टाचार से तात्पर्य हैं कि किसी शासकीय सेवक द्वारा अपने शासकीय पद अथवा स्थिति का दुरूपयोग करते हुयें किसी प्रकार का आर्थिक या अन्य प्रकार लाभ लेना। यह ऐसा व्यवहार हैं जिसमें शासकीय सेवक आर्थिक लाभ लेने हेतु सार्वजनिक कर्तव्यों से विचलित होता है अथवा नियमों की ऐसी अवहेलना करता हैं ताकि उसे कुछ खास निजी लाभ अर्जित हो सके। ये भ्रष्ट आचरण अनेक प्रकार के होते हैं – जैसे रिश्वत लेना, बेईमानी, गबन, किसी व्यक्ति का वांछित कार्य कर देने अथवा न करने पर घूस अथवा अन्य प्रकार का आर्थिक लाभ लेना या देना, अपने सगे सम्बन्धियों को गलत तरीके से नौकरियाँ दिलाना, गैर कानूनी तरीके से पैसा लेना, व्यापारिक संस्थाओं को लाभ पहुँ चाना तथा उनसे अप्रत्यक्ष लाभ कमाना, अपने पद का दुरूपयोग आदि भ्रष्ट आचरण की श्रेणी में आते हैं।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, जावद (म. प्र.) भारत
** विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र विभाग) शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय, तखतपुर (छ.ग.) भारत

भारतीय लोकतन्त्र और भ्रष्टाचार – भारत में भ्रष्टाचार की जड़े अतीत से जुडी हैं। हर समय किसी न किसी रूप में भ्रष्टाचार होता रहा हैं। लेकिन प्राचीन एवं मध्य काल में लोकप्रशासन का क्षेत्र अत्यन्त सीमित था इसलिये भ्रष्टाचार की कम गुंजाइस थी। लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा का चलन होने के कारण आज लोकप्रशासन का क्षेत्र बढ़ गया हैं जिसमें जनता के हित से जुड़े भी कार्यो के सम्पादन की जिम्मेदारी शासन की हो गई हैं। खासतौर से आर्थिक क्षेत्र में राज्य के कार्यो में वृद्धि होने से नियम नियंत्रण लाईसेंस, परमिट का युग प्रारम्भ हुआ और भ्रष्टाचार के नये आयाम प्रकट हुयें। विभिन्न स्तरों पर राजनैतिक सत्ता हासिल करने की होड़ में इस रोग को कैंसर का रूप दे दिया। राज्य तथा केन्द्रीय स्तर के मंत्री भ्रष्ट लोकसेवकों के साथ मिल गये। लम्बे समय तक एक ही दल के शासन ने भी भ्रष्टाचार बढ़ाने में सहायता की। समाचारों के अनुसार भ्रष्टाचार के दंश से आम जनता बेहाल हो चुकी है। स्विस बैंक में देश के 66 हजार अरब रूपये जमा है। इस जमा काले धन के मामले में दुनिया के सभी देशों में अव्वल है। आजादी के बाद से अब तक अवैध तरीकों से लाखों करोड़ रूपये की रकम विदेश भेजी गयी। ग्लोबल फाइनेशियल इंटीग्रिटी के अनुसार वर्तमान में उक्त धनराशि 21 लाख करोड़ रूपये होती है। इस काले धन को वर्तमान में केन्द्र में सत्तारूढ़ भारतीय जनता पार्टी के सरकार ने इस काले धन को 100 दिन में लाने का वादा किया है।

आजादी के बाद भारत में एक के बाद एक घोटाले उजागर हुयें जिनमें शासकीय कर्मचारियों के अतिरिक्त नेताओं, मंत्रियों के गड़बड़ घोटाले जनता के सामने आए। इन घोटालों में पंजाब के मुख्य मंत्री प्रतापसिंह कैरो, तमिलनाडू के मुख्यमंत्री करूणानिधि, महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री ए. आर. अन्तुल, उड़ीसा के मुख्यमंत्री बीजू पटनायक, जम्मू कश्मीर के मुख्यमंत्री बी.पी.गुलाम मोहम्मद, बिहार के मुख्यमंत्री कृष्णवलल्भ सहाय आदि के घोंटालें उल्लेखनीय हैं।

भ्रष्टाचार नियंत्रण में कानून की भूमिका – भारत के भ्रष्टाचार नियंत्रण हेतु कई संस्थाओं का गठन किया गया है, जिसमें केन्द्रीय सतर्कता आयोग, केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरों, लोकायुक्त एवं लोकपाल प्रमुख है। अभी हाल ही में जन लोकपाल की मॉग उठी हैं जिसके दायरे में प्रधानमंत्री तक को लाने की बात की जा रही हैं। यह जनलोकपाल समाज सेवा मंत्री अन्ना हजारे के कई दिनों के अनसन की देन है जो शीघ्र ही मूर्त रूप लेने जा रहा है । भारतीय दण्ड संहिता की धारा 161 में भ्रष्टाचार हेतु दण्ड का उल्लेख किया गया हैं। जो व्यक्ति शासकीय सेवक होते हुए या होने की आशा में अपने या अन्य किसी व्यक्ति के लिये कानूनी परिश्रमिक से अधिक कोई रिश्वत ले रहा या स्वीकार करता है अथवा लेने के लिये तैयार हो जाता है या लेने का प्रयास करता है या कार्य को करने के लिए उपहार स्वरूप या अपने शासकीय कार्य को करने में किसी व्यक्ति के प्रति पक्षपात या उपेक्षा या किसी व्यक्ति की कोई सेवा या कुसेवा का प्रयास, केन्द्रीय या अन्य राज्य सरकार या संसद या विधान मण्डल या किसी लोक सेवा के संदर्भ में करता हैं तो उसे तीन वर्ष तक के कारावास या अर्थदण्ड या दोनो दिए जा सकेंगे।

आजादी प्राप्ति के साथ ही भारत में भ्रष्टाचार नियंत्रण के प्रयास आरंभ हो गये। भारत सरकार ने जून 1962 में भ्रष्टाचार नियंत्रण हेतु के संथानम की अध्यक्षता में एक समिति गठित की जिसे सतर्कता विभाग के कार्यो की जांच तथा सरकारी विभागों में भ्रष्टाचार बंद करने के उपाय सुझाने का कार्य सौपा गया था।

11 फरवरी 1964 को संथानम समिति की अनुसंशा को ध्यान में रखकर शासकीय सेवकों के विरूद्ध लगाये गये आरोपों की जांच करने के लिये भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय सतर्कता आयोग की स्थापना की गई। केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की स्थापना अप्रैल 1963 में हुई जिसका कार्य भ्रष्टाचार विरोधी मामलों की छानवीन करना था इस संस्था को राज्य की सुरक्षा के साथ–साथ राष्ट्रीय महत्व के मामलों की जांच का काम सौपा गया। वर्तमान में अन्ना हजारे द्वारा सुझाया गया जन लोकपाल का विधेयक संसद में पास कराने का प्रयास जारी हैं।

भारत में भ्रष्टाचार हर क्षेत्र में बढ़ा हैं आम आदमी नि:संकोच यह कह रहा हैं कि काम तो पैसे से होता है इसका आशय यह है कि भ्रष्ट आचरण हमारे जीवन का अपरिहार्य अंग बन चुका हैं राजनेता,अधिकारी, कर्मचारी सभी किसी न किसी रूप में भ्रष्टाचार में लिप्त पाये गयें। 1950 से अब तक सैकडों घोटालें उजार हुए तथा भ्रष्टाचारियों को क्या सजा मिली यह किसी को नही पता।

सर्वत्र व्यापप्त भ्रष्टाचार के कारण आज न केवल मौलिक अधिकारों की गरिमा प्रभावित हुई है बल्कि हम सामंतवाद की स्थापना नही कर सके और ना ही समाजिकता ला पाये। आज संसद के गलियारे चिंतन और प्रबुद्ध राजनीति से रहित कलुशित सौदेबाजी और धटिया समझौतो के स्थल बन गये हे। भ्रष्टाचार के सम्बंध में अपने सर्वेक्षण में अन्तर्राष्ट्रीय संस्था ट्रांसपेरेसी इन्टरनेशनल ने 2011 में अपना सर्वेक्षण जारी किया इस सर्वे में भारत को जहॉ, 2005 में 97 वें स्थान पर रखा था, वहीं 2011 के सर्वे में 95वे स्थान पर रखा है। एन्टी करप्शन ग्रुप द्वारा करप्शन परसेप्शन इंडेक्स में भी भारत ने पिछले सालों के मुकाबले गिरावट दर्ज की है। विगत वर्षो में एक के बाद एक जो घोटाले उजागर हुये वे भ्रष्टाचार रूपी कीडे की देन है जो हमारे देश की विकास रूपी फसल को नष्ट कर रहे है, इससे निपटने कि लिये दण्डात्मक कार्यवाही व संवेदानात्मक दोनो रूप मे सोचना होगा।

निष्कर्ष– भ्रष्टाचार रोकने के लिये निर्मित कानून तथा संस्थाये कारगर साबित नही हई फिर भी भ्रष्टाचार रोकने के लिये प्रयास जारी रखने चाहिये। जनता को शिक्षित एवं जागरूक होना भी आवश्यक है। यह सत्य है कि भ्रष्टाचार की पूरी तरह समाप्ति सम्भव नही है फिर भी कुछ सीमा तक रोक अवश्य लग सकती है। इसे समाप्त करने के साझा प्रयास अति आवश्यक है। देश की अर्थ व्यवस्था को पटरी पर लाने के लिये यह जरूरी है कि आरोप प्रत्यारोपो के बजाय भ्रष्टाचार का प्रभावी हल खोजा जाये ताकि धनवान समाजिक सरोकरो के साथ अपने धन का उपयोग कर सके। जन समान्य को भ्रष्टाचार के प्रति जागरूक होना होगा। जागरूक और संगठित जन शक्ति ही भ्रष्ट राज्य व्यवस्था पर अंकुश लगा सकती है। यदि जन सामान्य जागृत हो गया तो न्यायिक प्रक्रिया स्वत: तीव्र हो जायेगी। दण्डविधान स्वत: नवीन होने लगेगे एवं मुट्ठी भर लोग जो कि भ्रष्ट है भ्रष्टाचार से कतराने लगेगे तभी भ्रष्टाचार से मुक्त सच्चा लोक तंत्र स्थापित हो सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. दैनिक भास्कर, 25 जनवरी 2004, पृष्ठ 8
2. जैन पुखराज, संसदीय व्यवस्था पुनर्विचार की आवश्यकता।
3. मूल प्रश्न, जून अगस्त 2002 पृष्ठ 12
4. क्रानिकल सिविल सर्विसेज मासिक पत्रिका जनवरी 2012
5. कृतिका वर्ष 6 संयुक्तांक जनवरी दिसम्बर 2013 पृष्ठ 9
6. अमर उजाला 10 जुलाई 2012

****

Analysis Of Researchers Based On Advanced Organizer Model

Dr. Archana Shrivastava * Sonali Surye **

Introduction - Models of teaching is recent, advanced and fast growing area of educational research .models of teaching like plans, patterns or blue prints presents the steps necessary environment, which facilitates the teaching learning process. There are many powerful kinds of learning and to help students to learn more effectively .This review discussed the 'Advanced Organizer model (AOM) used by different researchers to study their effectiveness in the teaching different subjects.

Almost all the studies on models of teaching have used experimental design. Most of these studies have been short term studies with a limited treatment. Some studies have not even specified duration of treatment, number of exposure, number of demonstration, practice, feedback session etc. Many studies have conducted to compare the efficacy of various models of teaching. In most of the comparative studies, the against any of other models of teaching or against of traditional methods other model of teaching in relation many criterion variables .

Sources –

Following sources have been scanned to write this review –

1. American journal of education science.
2. Elixir International Journal
3. International journal of social science and inter disciplinary research
4. fourth survey of education, India
5. Fifth survey of education, India.

Classification –

This reviews have been classified on the basis of teaching science subjects through advanced organizer models (AOM) as under –

1. Teaching chemistry through AOM
2. Teaching Physics through AOM
3. Teaching Mathematics through AOM
4. Teaching Biology through AOM
5. Teaching Social Science through AOM

1. Teaching chemistry through AOM –Jamini (1991) Investigated the relative effectiveness AOM and CAM on conceptual learning efficient and retention of chemistry concepts in relation to divergent thinking which indicated that although both AOM and CAM were effective in fostering concept learning, AOM was more beneficial to pupils with low divergent thinking.

Daniel (2008) Conducted a study to address the effectiveness of using an advanced organizer as the sensitization technique within an undergraduate content based first ear chemistry laboratory activity in order to improve student's conceptualizations of the role creativity plays in the scientific process. The major findings of this study is that using an advanced organizer pertaining to creativity, When Implemented as an introduction to a problem based, laboratory activity, can lead a statically significant percentage of students constructing more informed views.

Domin (2008) Used an advance organizer pertaining to the nature science (NOS) aspect of the role creativity plays in science, incorporated in to a problem based laboratory activity of an undergraduate first year chemistry curriculum. The result of this study indicate that the different versions of the advance organizer differ with respect to altering students conceptualization of creativity ; specifically only the indefinite explication of the intended learning outcome led to a significant change in the percentage of students holding more informed views, This finding suggests that a relatively small change in instructional design can advance improvement in achieving NOS learning outcomes within a large scale content based science course.

Wachange,W.Samuel; Arimba,Mugiira Antony & Mbugua,K.Zachariah (2013) Determine the effect of advance organizer teaching approach (AOTA) on secondary school student's achievement in chemistry in Maara district. They compare it with regular teaching method (RTM) and saw the effect of gender on achievement. The result of this study indicate that students who are taught through RTM and gender has no effect on student's achievement.

2. Teaching Physics Through AOM – Sidhu and singh (2005) Compared the effect of concept attainment model, advance organizer model and conventional method in teaching of physics in relation to intelligence and there was no significant effect between various teaching techniques, Intelligence and achievement motivation on scholastic achievement of student for learning of concept in physics.

Vandana and Jodhav (2011) Compared an experiment to

* Assistant Professor, B.C.G. College Of Education, Dewas (M.P.) INDIA
** Research Scholar, B.C.G. College Of Education, Dewas (M.P.) INDIA

examine the effectiveness of AOM over traditional model in the teaching of physics of 9th grade students. They found that AOM strategy is more effective than conventional strategy

3. Teaching Mathematics Through AOM – Chitrive (1983) compared the concept attainment model to advance organizer model and tradition model in terms of performance on concept knowledge. The major findings were (i) both strategies were superior to traditional strategies for teaching mathematical concept to XI grade students. (ii) both strategies are equally effective.(iii) conceptual style preferences of students seemed to have different effect their acquisition of mathematical concepts when taught b Ausubek strategy.

Bharambe (1997) Conducted a study to compare the effectiveness of the three different procedures namely, advance organizer model, analytic – synthetic method and traditional method of teaching in the teaching of logical geometry to the students of secondary school front he points of view of school differences, area differences ,sex difference and potentiality difference pertaining to the conceptual dissemination process discrimination and analytical synthetic skills .He found that AOM was more effective than ASM of teaching in every case of comparison and ASM was found more effective that traditional method. From the point of view of the development of the three mental processes, it was found that, for the development o conceptual discrimination ,AOM is more effective than ASM; for the same process, the comparison between ASM and TM,ASM is more effective the TM.

Githua and Nyabwa (2008) Examined how the use of advance organizer during instruction affect students achievement in commercial arithmetical. The results indicated that students taught using advance organizers had significantly higher scores in MAT (Mathematics Achievement Test) than those taught in the conventional way. Gender did not affect achievement.

Pachpande (2012) Conducted a study to check the effect of advanced organize model on achievement of student's in mathematics teaching at school level. From this study it was found that advanced organizer model effective than traditional method on achievement of students in mathematics teaching.

Sanjaya(2013) Examine the effectiveness of various models of teaching (AOM & CAM) on achievement levels of ninth grade students in mathematics. Following conclusions were found achievement level of the children in mathematics taught through concept attainment model is found to be superior than traditional method & achievement level of the children in mathematics taught through advance organizer model is found to be superior than traditional method.

4. Teaching Biology Through AOM – Dennis (1984) Investigated the effect of advance organizer and repetition on achievements in a high school biology class. The findings showed that there was no significant interaction between treatments on the two depended variables, However there was a significant gain in achievement by students in all groups from pre-test to post-test.

Lewis (1986) Compared the effectiveness of Ausubelian advance organizer and simplified readability of science content when used together or separately in the biology laboratory. The findings showed that either the advance organizer or simplified reading material was significantly better that no treatment but the two together were significantly better than either alone.

Kaushik (1988) Conducted a study to study the long term effect of advance organizers upon achievement in biology in relation to reading ability ,intelligence and scientific attitude. The major findings were (i) Advance organizers facilited immediate and delayed learning in biology,(ii) A general introduction generally proceeding the learning metrical in the lectures, lessons was of little value as compared to the advanced organizer (iii) Pupils with high intelligence, reading comprehension and scientific attitude derived the greatest advantage from the presentation of an advance organizer,(iv) General students were also benefitted by advance organizer and (v) The achievement of the learners in biology was found to be highly positively correlated with their intelligence, reading comprehension and scientific attitude.

Bugget (1993) Compared the relative effectiveness of using different concept map presentations as advance organizer in teaching photosynthesis to community college science student. Teaching through concept map as advance organizer was found to be superior than that of control group.

Raina (1994) Compared advance organizer model and biological inquiry model in teaching of biology. The major findings were(i) Advance organizer model is significantly effective in teaching of biology in terms of pupils achievement.(ii) Biological science inquiry model is significantly effective in teaching of biology in term of pupil's achievement.(iii) Advance organizer model is significantly more effective as compared to biological science inquiry model in term of pupil's scholastic achievement (iv) Biological science inquiry model is significantly more effective as compared to advance organizer model in term of pupil's interest in inquiry activities (v) Biological science inquiry model is significantly more effective than advance organizer model in term of pupil's reaction towards model of teaching.

Sahoo(2001) Conducted an experiment to compare the relative effectiveness of computer assisted instruction and instruction with advance organizers in the teaching of life science in relation to cognitive style of learners. The major findings of the study was that there is real difference between two treatments.

5. Teaching Social Science through AOM – Panday,S.N. (1986) Conducted study to know effectiveness of advance organizer an inquiry training models for teaching social studies to class VIII students. The findings were (i) The treatment had different effects on the Pupils's achievement,(ii) The difference in mean of gain scores in achievement due to advance organizer and conventional teaching was significant,(iii) Difference due to ITM and

conventional teaching was significant and the difference due to AOM and ITM was not significant,(iv) There was no significant difference between the AOM and ITM,AOM and conventional teaching in terms of pupils attitude towards social studies and (V) pupils reacted favorably towards the ITM and AOM.

Kaur,Rajinder (1991) Compare the effectiveness of the Bruner and Ausubel models for teaching concepts of economics to students having different levels of achievement and creativity. Major findings were (i) The result revealed a statistically significant difference between students who had been caught through CAM,AOM and CT with respect to the scores on attainment of concepts in economics; also AOM was more effective than CT, whereas no statistically significant difference was found in the effectiveness of the two experimental groups (ii) statistically significant difference was found between the three teaching approaches where AOM was found to be more effective than CAM;CAM was more effective than CT and AOM was more effective than CT (iii)Neither academic achievement nor creativity affected the gain scores of subject pertaining to the attainment of concepts in economics (iv) The interactions between teaching approaches and academic achievement between teaching approaches and creativity and between academic achievement and creativity were not significant (v) the interaction between teaching approaches , intelligence and creativity was not significant.

6. Other than above head – Tanthai (1982) Conducted a study to determine the facilitation effects of a pictorial diagrammatic advance organizer on science learning achievement .The findings were (i) Advance organizer model had no facilitating effect on male student who were field independent (ii) There exist a relationship between dependent, Independent cognitive style and science learning achievement.

Rajoria(1987) Studied the effectiveness of AOM and the traditional method for teaching science at VIII grade students. It was found that the AOM was significantly superior to TM in term of achievement in science of class VIII students when the groups were matched separately in respect of intelligence and previous year achievement in science.

Grewal and Kaur (1987) Conducted a study to compare the outcomes of three approaches to teaching namely the CAM,AOM and TM, quantified on the basis of achievement scores. The findings reveals that there was a difference in the efficacy of CAM,AOM and TM for learning concepts of science. It also reveals that CAM was more effective than AOM and there is no difference in the efficacy of AOM and TM.

Mahajan ,Jyotsna (199) Compared the effectiveness of two models of teaching CAM and AOM on the teaching abilities of student teachers and on achievement of students in various schools. Major findings were (i) The group which was taught by the CAM was found to be superior to the group which was taught by the AOM and the group which was taught by routine method, So far as the teaching ability of the students teacher was concerned (ii) The achievement of students who were taught by the CAM were found to be better than those of the students taught by AOM and the routine method.

Summary of findings – Many studies have conducted to compare the efficacy of various models of teaching. In most of the comparative studies, the effectiveness of advance organizer model against other models of teaching and against that of traditional methods of teaching in relation to many criterion variables such as intelligence (Rajoria 1987,Koushik1988; Sidhu and Singh 2000: scientific attitude (Koushik 1988; creativity (Daniel 2008; Domin 2008;
In many experimental studies the effectiveness of two models were compared and the design comprised of two experimental group only.

One thing evident from all these researches is that approach of models of teaching has been found to be superior to the traditional methods. A few have tried to move to two models & comparing their effects with that of traditional method. However most of the researches have accepted that models of teaching could prove to have a promising effect on the academic achievement of the students taught trough them.

Conclusion – On the basis of the above literature it may be said that the conventional method of teaching different subject at various levels was fond to be less effective than various innovative teaching patterns like Programmed instructions, Instructional strategies and models of teaching in term of achievement of students. The thorough rewiew of the reported studies of related literature showed that that though very important work has been done in instructional theory, leading to models of teaching including advanced organizer model. Ausubel's advanced organizer model focuses on meaningful learning. According to this theory , to learn meaningfully, individuals must relate new knowledge to relevant concepts they already know. New knowledge must interact with the learner's knowledge structure. It is found in these studies advanced organizer model is a effective way of teaching in many aspects.

References :–

1. Bharambe,I.T(1997) : A comparative study of teaching geometry by using advance organizer model, analytic – synthetic method and traditional method. Ph.D Dissertation, University of Poona.
2. Baggett,J.L.(1993) : A comparison between the use of different concept maps of advanced organizers to supplement a unit on photosynthesis in a community college biology course, Dissertation Abstract International ,54(8),2969 A.
3. Chitrive U.G.(1983):The effectiveness of ausubel and Bruner strategies for acquisition of concepts in mathematics, Ph.D. Dissertation ,Nagpur University.
4. Dennis F.H.(1984):The effects if advance organizer and repetition on achievement in a high school biology class, Ph.D. Dissertation Abstract international Vol 45,No.7,p2056 ,1985

5. Daniel S.D (2008): Using an advance organizer to facilitate change in students conceptualization of the role of creativity in science .Chem.Edu.Res.Pract.Vol9 pp291-300.
6. Domin(2008): Using an advance organizer to facilitate change in students conceptualization of the role of creativity in science .Chem.Edu.Res.Pract.Vol9 pp291-300.
7. Githua,B.N and Nyabwa,R.A.(2008): Effects of advance organize strategy during instruction on secondary school students' Mathematics achievement in Kenya's Nakuru dist. International Journal of science & mathematics Edu.6(3) 439-457.
8. Grewal S.S & Kaur R.P (1987) : A comparison between Bruner and Ausubel model of learning of concepts in science, Perspectives of Edu.3(3),118-185.
9. Jamini ,N (1991) : Effect of teaching strategies on conceptual learning efficiency and retention in relation to divergent thinking Ph.D. Dissertation University of Delhi.
10- Koushik,N.K(1988) : The long term effect of advance organizers upon achievement in biology in relation to reading ability ,Intelligence and scientific attitude ,Ph.D in Dissertation ,Devi Ahillya Vishwavidyalaya.
11. Lewis,E.H. (1986) : A comparison of the effect of an advance organizer and simplified readability if science material on science achievement in the biology lab.D.ED Dissertation temple Unive ,Dissertation Abstract International Vol47 No.9.p3388-1987
12. Mahajan .J(1992) : A comparative study of the effectiveness of two models of teavhing ,Viz Bruner,s concept attainment model and Ausubel advance organizer model on the teaching ability of students teachers and on achievement of students in various school, Ph.d Dissertation Shreemati Nathibai damodar thackersy Women University.
13. Pachpande,N.G (2012) : Study of effect of advanced organizer model on achievement of students in mathematics teaching at school level, India streams research journal V.II issue VI.
14. Panday,S.N (1986) : Effectiveness of advance organizer and Inquiry training models for teaching social studies to class VIII students, Ph.D Education Bhu.
15. Rajoriya R.(1987) : Comparison of advance organizer model with traditional method for teaching science to class VIII students with different residential background. Department of education. Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore.
16. Sahoo (2001) : An experimentation on the relative effectiveness of computer assisted instructional and instruction with advance organizers in the teaching of life science in relation to cognitive style of learners.
17. Sanjane(2013) : Effectiveness of concept attainment model and advance organizer model in mathematics achievement among ninth grade students in Roop nagar district of Punjab.
18. Siddhu R.K.singh.P(2005) : Comparative study of concept attainment model, advance organizer model and conventional method in teaching of physics in relation to =intelligence and achievement motivation of class IX students, Journal of All India Association for Education research Vol17;pp89-92.
19. Teamthai,P.P.(1982) : The effect of advance organizer on science learning achievement of eight grade Thai demonstration school students with average academic ability ,Ph.D Dissertation, Indian University Dissertation abstract International,Vol.42 No.12,p5098,1982.
20. Vandana & Jadhav V(2011) Effect of advance organizer model on Pupil,s achievement in physics – A study, Indian Streams Research Journal Vol.No.10.
21. Wachange,W.Samuel,Mugiira Antony Arimba,Mbugua K.Zacharia (2013) : Effect of advance organizer teaching approach on secondary school student's achievement in chemistry in Maara District , Kenya.

****

A Co-Relational Study Of Positive Mental Health Between National Level Male And Female Basketball Players Of Chhattisgarh State

Sudhir Rajpal * Dilip Singh ** B. John ***

Abstract - The main aim of the present study is find out the relationship of positive mental health between male and female Basketballer of Chhattisgarh state .To conduct the study 36 male and 36 female Basketballer were selected as sample . The sample for the present study was randomly selected and they are represent Chhattisgarh state team in various national level competition . To measure Positive Mental Health of the selected subjects three dimensional PMH (namely Self acceptance, Ego strength and Philosophy of life) Inventory prepared by Agashe and Helode (2007) was used it consist of 36 questions and the questionnaire is highly reliable and valid . To find out the relationship Pearson correlation cofficient was used .

Key words – Positive Mental Health, Self acceptance, Ego strength, Philosophy of life.

Introduction - Mental health has been accepted as an enduring state of psychological well being and/or state of sound mind in sound body that makes an individual useful for himself and effective for his fellow being within the framework of given socio-cultural environment of which he is a valuable member .

There are two models of mental health i.e. negative and positive are prevalling since long ago . While negative aspect deals with mental disorders, the positive approach deals with psychological well being .

WHO expert committee report 1951 emphasised the concept of positive mental health and said that " just has physical health means more than the absence of disturbing symptoms, Mental Health also have a positive aspect . Where physical health implies energy, stamina, and adequate strength or resources for the requirements of the work, Mental health indicates strength of purpose, co-ordination of effort, steady pursuit of well chosen goals and a high degree of mental organisation and integration . Hence the present study was planned explore the relationship of Positive mental health between the male and female Basketballer .

Hypothesis - Significant relatioship will be observed between male and female Basketballer respect to their Positive mental health .

Methodology - To test the above mention hypothesis following procedure was adopted :

Sample - To conduct the study, 36 male and 36 female national level Basketballer were selected as sample .The sample for the present study was randomly selected .

Tools - To measure Positive Mental Health of the selected subjects three dimensional PMH (namely Self acceptance, Ego strength and Philosophy of life) Inventory prepared by Agashe and Helode (2007) was used it consist of 36 questions and the questionnaire is highly reliable and valid . To find out the relationship Pearson correlation cofficient was used .

Table No. 1 : Correlation between national level male and female Basketballer of Chhattisgarh state (N = 72)

Variable	Pearson Cofficient Of Correlation	Level Of Significant
PMH	-.1129	0.05

Result - The value of R = - .1129 a negative Correlation, the relationship of PMH between male and female player is not significant at $p < 0.05$.

Cunclusion - On the basis of result, it was conclded that the relationship of PMH between male and female player is not significant, it means hypothesis is rejected .

References :-

1. Agashe, C.D. Helode, R.D. Positive Mental Health Inventory, 2007, Psychoscan, Wardha.
2. Brossnahan, J. Steffen. L.M. Patterson, J. & Boostorm, A(2004). The relationship between physical activity and mental health among Hispanic white adolescents. Arch Pediator Adolesc-Mes 158(8) : 813-823.
3. Morris, J. (2004a). "One town for my body, another for my mind" : Services for people with physical impairments and mental health support needs. York; Joseph Rowntree Foundation.

* **H.O.D Deptt. (Physical Edu.) & NIS Basketball Coach, Dr. C.V. Raman University,Kota, Bilaspur (C.G) INDIA**
** **Deptt. Coach Sports & Youth Walefare (BCCI level I coach), Bilaspur (C.G) INDIA**
*** **Asst. Professor (Physical Edu.) Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur,(C.G) INDIA**

पर्यावरण संरक्षण में आम आदमी की भूमिका

डॉ. राजीव शर्मा * डॉ. आर.पी.सहारिया **

शोध सारांश – पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ पृथ्वी के अस्तित्व को बनाये रखने के लिये प्रकृति एवं मानव के मध्य दोस्ती का संबंध होना आवश्यक है। प्रकृति से प्रेम पूर्ण व्यवहार से ही संरक्षण की मानसिकता का जन्म होता हैं, पर्यावरण संरक्षण मानव समाज एवं प्रकृति के बीच के संबंधो को अनुकुलतम बनाने के लिये आवश्यक है। इस प्रकार की अनुकूलता के लक्ष्य को प्राकृतिक संसाधनों के विवेक पूर्ण उपयोग तथा नवीनीकरण द्वारा पर्यावरण को संरक्षित एवं विकसित करके प्राप्त किया जा सकता है। पर्यावरण संरक्षण प्राकृति संसाधनों का ऐसा विवेक पूर्ण प्रयोग जिसमें नवीनीकरण बांधित न हो, उनका अधिकतम उपयोग हो, साथ ही दूसरे कारक कुप्रभावित न हो।

प्रस्तावना – पर्यावरण 'शब्द परि एवं 'आवरण' शब्दो से मिलकर बना है। चारों ओर के 'आवरण' को पर्यावरण कहा जा सकता है चारों ओर के आवरण के भीतर जो कुछ भी सम्मिलित रहता है, पर्यावरण के अंतर्गत आता है। जिन विषयो की सहायता से इस 'आवरण' के अध्ययन का प्रयत्न संभव हो सकता है, वे सभी पर्यावरण विज्ञान के अंतर्गत आते है।

पर्यावरण का नाम आते ही भूपटल के बृहद् पक्षों-जल, मृदा, मरूस्थल, पहाड़, आदि की कल्पना मन में आ जाती है। पर्यावरण के इन प्रकारो की और भी अधिक सटीक अभिव्यक्ति, भौतिक प्रभावों-नमी, ताप, पदार्थो के गठन इत्यादि की विभिन्नताओं तथा जैवीय प्रभावों के रूप में की जा सकती है। मृदा तथा चट्टानों के समान ही दूसरे जीव भी पर्यावरण के ही अंग है। इस प्रकार प्रकृति में जो कुछ भी हमें परिलक्षित होता है वायु, जल, मृदा, पादप तथा प्राणी- सभी सम्मिलित रूप में पर्यावरण की रचना करते है।

पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। पर्यावरण का तात्पर्य समूचे भौतिक एवं जैविक विश्व से है, जिसमें जीवधारी रहते है, बढ़ते है, पनपते है और अपनी स्वाभाविक प्रकृतियों का विकास करते है।

परिभाषित रूप में पर्यावरण शब्द जीवों की अनुक्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त 'भौतिक' (Physical) तथा 'जीवीय' (Biotic) परिस्थितियों का योग है। दूसरे शब्दों में, इसे हम 'जीव मंण्डल' (Biosphere) भी कह सकते है, जो 'जलमंडल' (Hydrophere) 'स्थलमंडल' (Lithosphere) तथा 'वायुमंडल' (Atmosphere) के जीवनयुक्त भागों का योग होता है।

क्षेत्र – सामान्यत: पर्यावरण का अभिप्राय मात्र भौतिक या प्रकृति प्रदत्त कारक, जैसे-भूमि, जल, जलवायु, वनस्पति, खनिज, मृदा और जीव जन्तुओं से लगा लिया जाता है, लेकिन पर्यावरण एक व्यापक शब्द है, जिसमें भौतिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक सभी प्रभावशील कारक सम्मिलित हैं इस प्रकार पर्यावरण को दो बृहद् वर्गो में विभक्त किया जा सकता है- 1. प्राकृतिक पर्यावरण 2. सांस्कृतिक पर्यावरण अथवा भौतिक पर्यावरण एवं अभौतिक या मानवीय पर्यावरण। कभी-कभी इसे जैविक और अजैविक पर्यावरण में भी विभक्त किया जाता है, किन्तु भौगौलिक पर्यावरण से आशय भौतिक और सांस्कृतिक दोनों के सम्मिलित स्वरूप से है।

पर्यावरण विज्ञान एक अपेक्षाकृत नया विषय है। इसके प्रति जनरूचि एंव उत्सुकता दोनों ही दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। विषय की व्यापकता ही इसका प्रमुख कारण है। ध्वनि-प्रदूषण (शोर) से भौतिक शास्त्र जुड़ा हुआ है तो जल-प्रदूषण का संबंध जल- विज्ञान, जनस्वास्थ्य एंव आरोग्य यांत्रिकी से है। मृदा के प्रदूषण का संबध मृदा-विज्ञान, कृषि-विज्ञान एंव भूगर्भ-शास्त्र से है तो औषधि-विज्ञान एंव विष शास्त्र से प्रदूषकों का स्वभाव जुड़ा हुआ है। वनस्पति शास्त्र एंव जीव शास्त्र की सहायता से पर्यावरण की परिस्थितिकी का अध्ययन किया जा सकता है। पर्यावरण से होने वाली लाभ-हानि, 'ईकोमार्किंग' पर्यावरण-बजट एंव ऑडिट, अर्थशास्त्र एंव वाणिज्य से जुड़े है तो जनसंख्या- वृद्धि की गति की 'डेमोग्राफी' के अंतर्गत रखी जा सकती है। अंतर्राष्ट्रीय मंच पर जब पर्यावरण के प्रदूषण एंव संरक्षण की चर्चा होती है तो राजनीतिशास्त्र के सिद्धांत उसे संचालित करते है। प्रदूषकों और विषैले-पदार्थ के संबंध में बने राष्ट्रीय एंव अंतर्राष्ट्रीय कानून विधिशास्त्र के अंतर्गत आते है। मानव-मात्र का स्वभाव एंव व्यवहार इस अध्ययन का एक महत्वपूर्ण अंग है। अत: समाजशास्त्र का योगदान भी इसमें कम नहीं कहा जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पर्यावरण का क्षेत्र एक अत्यंत व्यापक क्षेत्र है।

महत्व – पर्यावरण जीवन-स्तोत्र है जो अनादिकाल से पृथ्वी पर मानव एंव सम्पूर्ण जीव जगत को न केवल प्रश्रय देता रहा है, अपितु उसे विकास के प्रारंभिक काल से वर्तमान तक आस्तित्व में बनाए रखने का आधार रहा है। भविष्य का जीवन भी इसी पर निर्भर करता है। वायु, जल, मृदा, जीव जंतु तथा वनस्पति पर्यावरणीय मूल घटक है, जिनकी पारस्परिक क्रिया-प्रतिक्रिया से सम्पूर्ण जीवमंडल परिचालित होता है। जीवमंडल में जीवन का उद्भव, विकास एंव विलुप्त होना इस तथ्य पर निर्भर करता है कि प्रकृति अथवा प्राकृतिक वातावरण के साथ उसका कितना समन्वय एंव सामंजस्य है।

कोई भी जीव सर्वथा एकल(solitary) या विगलित (Isolated) जीवन व्यतीत नहीं करता है। पृथ्वी पर विविध जीव इतनी अधिक संख्या में है कि किसी भी स्थान पर निवास करने वाले किसी भी जीव का, दूसरे अनेक जीवों के साथ सहवासित होना एक अनिवार्यता होती है। इस प्रकार के सहवासों का जीव के अस्तित्व के प्रकार की दिशा पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है। इस दृष्टि से भौतिक पर्यावरण का भी बहुत महत्व होता है, क्योंकि जीव की अधिकांश ऊर्जा अपने पर्यावरण की भौतिक स्थितियों के प्रति अनुकूलित होने में ही व्यय होती है। इस प्रकार पर्यावरण तथा जीव एक दूसरे से जुड़े होते

* विभागाध्यक्ष (इतिहास) शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय, तखतपुर, जिला-बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय, तखतपुर, जिला-बिलासपुर (छ.ग.) भारत

हैं। पर्यावरण से पृथक किसी जीव की कल्पना भी असम्भव है। समस्त प्राणी भोजन के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में हरे पादपों पर निर्भर करते है। अनेक पादप भी प्राणियों पर निर्भर करते हैं। उदाहरणार्थ, वे पादव जिन्हें परागण (pollnation) के लिए कीटों (insects) की आवश्कता होती है। यद्यपि कुछ हरे पादप सूर्य से प्राप्त ऊर्जा तथा मृदा में प्राण पोषक तत्वों के सहारे कुछ समय स्वतंत्र रूप में जीवित रह सकते है पर जैसे ही बीजांकुर की वृद्धि आरम्भ होती है, उनमें प्रतिस्पर्धात्मक संबंध प्रकट होने लगते है। इस प्रकार प्रत्येक जीव के पर्यावरण में अन्य जीव भी आवश्यक तथा अपरिवर्तनीय अंग के रूप में उपस्थित रहते हैं। कोई भी जीव अन्य सहवासी जीवों की उपेक्षा कर जीवित नहीं रह सकता है। अत: पर्यावरण पर मानव के प्रभाव का अध्ययन करता है, क्योंकि परिभाषित रूप में पर्यावरण जीवों की क्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त जैविक और अजैविक परिस्थितियों का योग होता है।

सच तो यह है, जीवन का अस्तित्व मूलत: पर्यावरण पर निर्भर है। मनुष्य एवं समस्त जीवधारी पर्यावरण से ही अपने जीवन के लिए उपयोगी वस्तुएं प्राप्त करते हैं। सुनियोजित पर्यावरण के अभाव में अनेक प्रतिकूल एवं हानिकार प्रभाव परिलक्षित होने लगे है और आज विश्व के अनेक देश पर्यावरण प्रदूषण की चपेट में आ चुके है। अत: संसाधनों के अनियंत्रित दोहन, विकास की प्रतिस्पर्धा से हटकर समन्वित उपाय ढूंढने और संपूर्ण जाति का अस्तित्व बचाने की दृष्टि से पर्यावरण संरक्षण आवश्यक है।

जन-जागरूकता की आवश्यकता – प्रकृति स्वत: पर्यावरणीय घटकों का निश्चित अनुपात सदैव बनाए रखने का प्रयास करती है, किन्तु मानव की प्रकृति विरोधी गतिविधियों से इसकी मूल संरचना में अभूतपूर्व परिर्वन आ रहे है। फलस्वरूप, पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति को देखकर सम्पूर्ण मानव समाज इसके प्रति चिंतन-मनन कर रहा है।

विज्ञान की सहायता से मानव प्रकृति पर विजय पाने के अपने प्रयत्नों में जितना सफल होता जा रहा है, पर्यावरण-प्रदूषण का संकट उतना ही गहराता जा रहा है एंव हमारा भविष्य असुक्षित होता जा रहा है। पर्यावरण के प्रति 'चिंता एंव चितंन' में वृद्धि होती जा रही है, किन्तु पर्यावरण का स्वरूप बिगड़ता ही जा रहा है। पर्यावरण-प्रदूषण के लिए विकसित एंव विकासशील देश, दोनों ने सुख-सुविधा एंव विलास के प्राकृतिक स्रोत्र दोहन में अपना आंशिक योगदान दिया है। विकासशील देश अपने वन काट रहे है, पशु चरा रहे हैं, ईधन जला रहे है, चाँवल की खेती कर रहे हैं और पर्यावरण को दूषित कर रहे हैं, दूसरी ओर विकसित देशों में उद्योग से विषैली गैसों का रिसाव हो रहा है पट्रोल एंव डीजल से चलने वाले वाहन धुआँ छोड़ रहे है। फ्रिजो और वातानुकूलन यत्रों से सीएफसी (क्लोरोफ्लोरो कार्बन) का रिसाव हो रहा है और पर्यावरण प्रदूषित होता जा रहा है। प्रतियोगिता की अंधी दौड़ में सभी पक्ष यह भूल जाते हे कि इन सब मानवीय क्रियाओं का मानव-स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ता है ? वर्तमान पीढ़ी तो दुष्प्रभाव भोग रही है, किन्तु आने वाली पीढ़ी भी कुप्रभाव से बचेगी नहीं और इसके प्रति सभी का सम्मिलित उत्तरदायित्व होगा।

पर्यावरण प्रदूषित होने का सबसे बड़ा करण है जनसंख्या में होने वाली असीमित या अनियंत्रित वृद्धि। भूमि, जल, वायु, जंगल सभी सीमित है। जनसंख्या बढ़ती जा रही है और इसकी वृद्धि की तुलना में प्राकृतिक संसाधन घटते प्रतीत हो रहे हैं। संसाधन के प्रति समग्र दृष्टिकोण अपनाना अत्यंत आवश्यक है। उदाहरण के लिये, वनों की कीमत आज भी सही संदर्भो में नहीं लगाई जाती। मूल्य के दृष्टिकोण से वनोपज एंव लकड़ी तो मात्र एक प्रतिशत है जबकि वनों की पर्यावरण संबधी सेवाओं को निन्यानवे प्रतिशत कहा जा सकता है। इनके अंतर्गत आते हैं-भूमि और जल का संरक्षण, वायु प्रदूषण का नियंत्रण, वानस्पतिक एवं जैविकीय विविधता को आश्रय की उपलब्धता एवं मनोरंजन-स्थलों की आवश्यकता की पूर्ति। इन सेवाओं का मूल्य आर्थिक संदर्भो में आंका जाय तो सहज ही स्पष्ट हो सकता है कि किस प्रकार हम आज भी एक रूपये के लालच में निन्यानबे रूपये खो रहे हैं। शुद्ध हवा की कीमत हमें तभी पता चलती है जब हम अस्पताल में आक्सीजन सिलिन्डर का मूल्य चुकाते है।

आज हमारे पर्यावरण की स्थिति को 'दयनीय' कहा जा सकता है मिट्टी की उर्वरकता समाप्त होती जा रही है, जल की जीवन देने की शक्ति समाप्त हो रही है व जीवन लेने की शक्ति बढ़ रही है, हवा को स्फूर्ति प्रदान करने वाली ताजगी को अम्लीय वर्षा और कार्बन-यौगिकों के उत्सर्जन ने कुप्रभावित कर दिया है। वन कटते जा रहे है। ओजोन की सुरक्षा-छतरी में छेद होते जा रहे है एवं अंतरिक्ष तक में टूटे और खराब यानों का कथाकथित 'कचरा' एकत्रित होता जा रहा है ऐसा कोई स्थान नहीं बचा है जहां हम अपने को सुरक्षित कह सकें। वास्तविकता यह है कि मानव मस्तिष्क ही प्रदूषित हो गया है। प्रकृति रूपी द्रौपदी का मानव मस्तिष्क रूपी दुर्योधन विनाश रूपी 'चीरहरण' करता जा रहा है। इससे पलायन भी संभव नहीं है किन्तु भीष्म बनकर चुपचाप सहन करते रहने से 'महाभारत' टलने वाला नहीं। आवश्यकता है मानव-मस्तिष्क को प्रदूषित करने से बचाने की। **कौटिल्य द्वारा रचित अर्थशास्त्र में पर्यावरण का जागरूकता उदाहरण प्रस्तुत किया गया है इस रचना में तत्कालीन समाज व्यवस्था में पर्यावरण को स्वच्छ रखने के लिये प्रभावी नियम व पर्यावरण के प्रति जागरूक जन मानस का उल्लेख मिलता है जो निम्न प्रसंग से स्पष्ट है – 'व्यक्ति जिसने शहर के अंदर बिल्ली, कुत्ता, नेवला और सांप जैसे जीव के लोथ (कंकाल) फेंका तो उसे तीन पाना का दण्ड दिया गया था; गधा, ऊंट, खच्चर और नर कंकाल फेंकने वाले को पचास पाना का जुर्माना दिया गया था।' (कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 2 – 145)'**

प्रदूषण की समस्या से लड़ने की रणनीति बनाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में अनेक सम्मेलन हुए है। 1972 में स्टॉकहोम में, 1985 में वियना में, 1987 में मॉट्रियल में और 1992 में रियोडिजेनेरो, ब्राजील में। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र संघ की 'पायलेट एनालिसिस ऑफ ग्लोबल इकोसिस्टम' यानि 'पेज' परियोजना के लिये , सं. रा. पर्यावरण कार्यक्रम, 'विश्व बैंक' और विश्व संसाधन संस्थान के सहयोग से, विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के 175 वैज्ञानिकों ने सहस्त्रादि अधिवेशन 2000-2001 में प्रस्तुति के लिये एक रिपोर्ट तैयार की है। इस रिपोर्ट में पर्यावरण विनाश के लिये स्वयं मानव को जिम्मेदार मानते हुए, भूमि, वन, जलस्त्रोतों तथा प्राकृतिक सम्पदा की बेहद बिगड़ती हालत पर गहरी चिंता व्यक्त की गयी है। सिफारिश की गयी है कि विनाशकारी प्रक्रियाओं पर तुरन्त रोक लगाीय जाये। इस रिपोर्ट का मूल दर्शन है, 'हमें धरती को केवल सौंदर्य बोध या नैतिक कारणों से ही संरक्षित नहीं करना है, धरती हमारी, सभी जीव धारियों की आश्रय, भोजन और रक्षा-कवच छतरी है। इसलिये इसे हरा भरा, जीवंत बनाये रखना हमारा आवश्यक दायित्व है।' राष्ट्रीय स्तर पर शासन ने इस संबंध में कुछ' किया है, किन्तु अभी 'बहुत कुछ' करना बाकी हैं, व्यक्तिगत स्तर पर भी इस संबंध में प्रयत्न प्रारंभ करना है। कभी नहीं से देर भली। शिक्षित नागरिक से इस संदर्भ में रचनात्मक योगदान की अपेक्षा की जा सकती है। अत: शिक्षा का प्रसार एवं अशिक्षा की समाप्ति आवश्यक है। उसके भी पूर्व जनसंख्या वृद्धि की रोकथाम प्राथमिकता के स्तर पर नितान्त आवश्यक है ताकि उपलब्ध

साधनों एवं किये गये प्रयत्नों का अधिकतम लाभ मिल सके। इस दिशा में जितनी अधिक 'उपलब्धि' होगी, पर्यावरण उतना ही सहज एवं अधिक हो सकेगा।

विश्व वन-दिवस, विश्व जल-दिवस, विश्व पर्यावरण-दिवस आदि दिवसों के आयोजन स्वस्थ पर्यावरण बनाने के प्रति शासकीय चिंता को रेखांकित करते है। इस चिंता से सही मुक्ति तभी संभव है जब आम जनता में प्रदूषण और उसके दुष्परिणामों के संबंध में पूर्ण जागरूकता पैदा हो जाये और हममें से प्रत्येक पर्यावरण प्रदूषण रोकने में अपनी सक्रिय जिम्मेदारी निभाये। केवल शासकीय प्रयासों के भरोसे नहीं बैठा जा सकता, क्योंकि प्रदूषण का कारक और शिकार हम में से प्रत्येक व्यक्ति है।

पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता – पर्यावरण का निर्माण हमारे चारों तरफ विद्यमान जीवित एवं अजीवित वस्तुओं के द्वारा होता है। इन घटकों में पारस्परिक सम्बंध एवं संतुलन होता है जो कि एक स्वच्छ एवं संतुलित पर्यावरण का निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। पृथ्वी ही सौरमण्डल का एकमात्र ऐसा ग्रह है जहां का पर्यावरण जीवन को संजोये हुये है। इसी पर्यावरण में समस्त पौधे, जीवधारी एवं मानव श्वास लेते है और अपनी जैविक क्रियाओं के द्वारा अपना जीवन पूर्ण करते है। प्रकृति का निर्माण मुख्यत: पंच तत्वों से मिलकर हुआ है, ये तत्व है -जल, वायु, आकाश, पृथ्वी एवं अग्नि। ये समस्त तत्व मिलकर पर्यावरण का मूलभूत ढांचा निर्मित करते है। पर्यावरणीय घटकों का आपसी तालमेल ही पृथ्वी पर जीवन की आधारशिला को मजबूत किये हुए है।

पर्यावरण प्रकृति की सहज गति है, परन्तु मानव की उच्च महत्वाकांक्षाओं, उनकी निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या, पारिवारिक जरूरतों, औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुन्ध दोहन ने प्रकृति एवं उसके घटकों के मध्य स्थापित सामंजस्य में हस्तक्षेप किया और प्रदूषण को जन्म दिया। वर्तमान में वैभवयुक्त एवं विलासी जीवन शैली ने इन परिस्थितियों को और भी गम्भीर बना दिया है। जिसके कारण प्रदूषण की विभाषिका और अधिक खतरनाक होती जा रही है। जिसके परिणामस्वरूप मानव को नई-नई बीमारियों, संक्रामक रोगों, मानसिक तनाव, स्वच्छ जल, वायु एवं स्वच्छ वातावरण, आदि के लिये संघर्ष करना पड़ रहा है।

पर्यावरण ही प्राकृति संसाधनों, ऊर्जा, वायु, जल, मृदा, खनिज तत्वों एवं जीवन के अन्य आवश्यक घटकों का स्त्रोत है। पर्यावरण ह्यास उस वक्त से ही प्रारम्भ हो गया था जब मनुष्य ने सभ्यता के युग में अपना पहला कदम, आग की खोज के रूप में रखा था जैसे-जैसे मानवीय सभ्यता विकसित होती गई प्रकृति एवं पर्यावरण का अपघटन भी उतनी ही तेजी से होने लगा। आज मानव सभ्यता की उस उचांई पर बैठा है कि उसने चांद को छू लिया है, परन्तु सभ्यता एवं आधुनिकता की इस अन्धी दौड़ में वह इतना प्रदूषण पैदा कर चुका है कि यदि पर्यावरण संरक्षण की तरफ समय रहते ध्यान न दिया गया तो सौरमण्डल की एकमात्र जीवनदायी स्थितियों की आधार पृथ्वी भी अन्य ग्रहों की भांति निर्जीव हो जाएगी। वर्तमान में मानव के लिये पर्यावरण मात्र तीन प्रमुख क्रियाओं का साधन है। ये क्रियाएं है, प्रथम-मानव मनोरंजन, द्वितीय प्राकृतिक सम्पदा, कृषि, वनों, खनिजों एवं मानव के प्रयोग में आने वाले संसाधनों का अन्धा धुन्ध दोहन तथा तृतीय - मानवीय सभ्यता के विकास से उपजा प्रदूषण रूपी वह कचरा है, जिसे पर्यावरण अपने में किसी न किसी रूप में समाहित कर रहा है।

प्राचीन काल में प्रदूषण इतना कम था कि प्रकृति स्वयं उसको दूर करने में सक्षम थी, परन्तु वर्तमान में प्रदूषण की मात्रा विभिन्न पारिस्थितिक घटकों में इतनी अधिक हो गई है कि प्रकृति उसका बोझ उठाने में स्वयं को असमर्थ महसूस कर रही है। जिसका प्रमुख कारण है जनसंख्या का लगातार तीव्र गति से बढ़ना, अनियोजित ढंग से उद्योगों का विकास एवं नगरों का निर्माण, प्राकृतिक संसाधनों का अन्धाधुन्ध दोहन, वाहनों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि तथा वनों की अन्धाधुन्ध कटाई, इत्यादि के कारण प्रकृति इसको दूर करने में असमर्थ है और अपना संतुलन कायम रख पाने में भी असमर्थ हो रही है। इसलिए पर्यावरणीय समस्याएं जो मानव निर्मित है का निदान भी मानव को समय रहते करना पडेगा, क्योंकि वर्तमान में स्वच्छ एवं सुन्दर पर्यावरण की अत्यंत आवश्यकता है ताकि हमारी वर्तमान एवं भावी पीढ़ियां सुखमय जीवन की कल्पना कर सकें।

पर्यावरण की जो समस्याएं वर्तमान में दिखाई पड़ रही है उसके दो प्रमुख कारण है, पहला कारण है अत्यधिक विकास के कार्यो का नकारात्मक प्रभाव, दूसरा गरीबी, कुपोषण एवं बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए संसाधनों की कमी के कारण प्राकृतिक संसाधनों का जरूरत से ज्यादा दोहन होना। वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता क्यों महसूस हो रही है, क्योंकि सभी पेड़ पौधों व जीव जन्तुओं का अस्तित्व बना रहे, प्राकृतिक संसाधन दीर्घ काल तक मानव के काम आ सकें, विकासीय कार्य सभी मानव तक पर्यावरण को क्षरण पहुंचाए बिना दीर्घावधि हो, वर्तमान एवं भावी मानव एवं जीव जन्तुओं व पौधों की पीढ़ियों को स्वच्छ एवं समृद्ध वातावरण से मानव की रक्षा की जा सके। पृथ्वी के अस्तित्व एवं उस पर जीवन की समस्त भौतिक दशाओं को चिर स्थायी बनाए रखने के लिये पर्यावरण संरक्षण अत्यंत आवश्यक है।

पर्यावरण संरक्षण में भारतीय संविधान की भूमिका – किसी भी देश का संविधान उसकी आत्मा माना जाता है। देश में नागरिकों की अपने देश के संविधान में अटूट आस्था एवं विश्वास होता है यही कारण है कि पर्यावरण संरक्षण के लिये जनमानस एवं राज्यों के अधिकारों को हमारे देश के संविधान में वर्णित किया गया है।

पर्यावरण संरक्षण के लिए भारतीय संविधान में राज्यों एवं नागरिकों को कुछ अधिकार प्रदान किए गए है जिनका इस्तेमाल करके वह पर्यावरण संरक्षण में आने वाली बाधाओं को दूर कर सकेगा। सन् 1976 में संविधान के 42वें संविधान संशोधन के द्वारा स्पष्ट किया गया कि 'राज्य पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्द्धन का प्रयास करेगा और साथ ही वनों एवं वन्य जीव जन्तुओं की सुरक्षा की व्यवस्था करेगा। संविधान के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की सुरक्षा एवं उसका संवर्द्धन करे। इसके अंतर्गत समस्त वनों, झीलों, नदियों एवं वन्य जीवों के जीवन की सुरक्षा भी निहित है। साथ ही प्रत्येक नागरिक का यह भी कर्तव्य होगा कि वह सभी जीवित प्राणियों के प्रति दया का भाव रखें।भारत के संविधान में पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण के सम्बंध में वर्ष 1976 में संविधान के 42वें अनुच्छेद में राज्य एवं नागरिकों को राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अंतर्गत अधिकार प्रदान किए गए है। यह अधिकार संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में निम्न प्रकार वर्णित है :-

अनुच्छेद 47- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 47के अंतर्गत स्पष्ट किया गया है कि 'राज्य पौष्टिकता एवं नागरिकों के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा।

अनुच्छेद 48 (क)- 'राज्य पर्यावरण की रक्षा करने उसमें सुधार लाने का प्रयास करेगा और देश के वनों एवं वन्य जीवन-जन्तुओं के जीवन की रक्षा करने का प्रयास करेगा।'' इसमें राज्यों पर पर्यावरण को परिष्कृत एवं

समृद्ध करने का दायित्व सौंपा गया है।

अनुच्छेद 48 'क'(छ) – हमारे संविधान में राज्यों को नीति के निर्देशक सिद्धांतों के अन्तर्गत रखा गया है। जिसके प्रावधान के अनुसार, राज्य के उद्देश्य एवं प्रयोजन निर्धारित होते हैं। यद्यपि इन प्रावधानों को न्यायालय द्वारा लागू नहीं कराया जा सकता, किन्तु राज्य सरकार का यह कर्त्तव्य है कि समस्त विधायी और प्रशासनिक क्रियाकलापों के कार्यान्वयन को ही इसका आधार माना जाए।

अनुच्छेद 51'क' –' भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य होगा कि वनों, झीलों ,नदियों और वन्य जीवन सहित प्राकृतिक पार्यावरण की रक्षा करें और उसमें सुधार करें तथा जीवों के प्रति प्रेम भाव रखें।'

अनुच्छेद 51'क' (छ)–इसके अन्तर्गत मौलिक कर्तव्यों को शीर्ष में रखा गया है, जो संविधान में सर्वप्रथम सन् 1977 में जोड़ा गया किन्तु यह प्रावधान भी न्यायालय द्वारा लागू नहीं कराए जा सकते हैं। जनमानस में पर्यावरण के प्रति जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से मौलिक कर्त्तव्यों को शिक्षा के एक अंग के रूप में लिया जाना चाहिए।

इस अनुच्छेद के माध्यम से देश के प्रत्येक नागरिक को यह मूलभूत दायित्व सौंपा गया है कि वह समस्त जैव विविधता के प्रति दया भाव रखते हुए प्राकृतिक पर्यावरण की सुरक्षा एंव संवर्द्धन के लिए प्रयत्नशील रहे। पर्यावरण संगत विकास ही सही विकास की प्रक्रिया है। सरकार ने पर्यावरण संरक्षण की दिशा में अधारभूत सफलता प्राप्त हुई है। सरकार द्वारा अधिनियमों का निर्माण एंव उन्हें लागू करने के लिए देश में लगभग 200 केन्द्रीय एंव राज्य स्तरीय कानून पूर्ववत् हैं जो किसी-न-किसी रूप मे पर्यावरण की सुरक्षा एंव संरक्षा से जुड़े हुए हैं। भारत सरकार द्वारा निर्मित पर्यावरण संरक्षण के लिए नीति अधिनियम जिसमें से प्रमुख है –

- वन्य जीवन (सुरक्षा)अधिनियम – 1977
- जल (प्रदूषण निवारण और नियत्रंण)अधिनियम 1974 ,# संशेधित जल प्रदूषण निवारण तथा नियन्त्रण अधिनियम– 1988
- वायु (प्रदूषण निवारण और नियन्त्रण)अधिनियम 1981, # संशोधित वायु प्रदूषण ,निवारण ओर नियन्त्रण अधिनियम– 1988
- वन संरक्षण अधिनियम 1980 ,# राष्ट्रीय वनस्पति अधिनियम– 1988
- पर्यावरण (सुरक्षा)अधिनियम 1986 # भारतीय संशोधित वन नीति – 1998
- राष्ट्रीय पर्यावरण प्राधिकरण अधिनियम– 1995

इसके अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण हेतु राष्ट्रीय एंव राज्य स्तरीय नीतियों का निर्धारण करना पर्यावरण की सुरक्षा एंव सुधार हेतु योजनाओं का क्रियान्वयन जल,वायु,मृदा एंव ध्वनि प्रदूषण का अनुश्रवण करना, प्राकृतिक संसाधनों का उचित दोहन एंव उनका संरक्षण पर्यावरण की दृष्टिकोण से संवेदनशील एंव प्रदूषित क्षेत्रों को सुधारने के लिए योजनाओ का क्रियान्वयन, खतरनाक रासायनिक बनाने वाले कारखानों में सुरक्षा एंव दुर्घटनाओं से बचाव के उचित साधनों का प्रयोग औद्योगिक कारखानों से निष्कासित अपशिष्ट पदार्थों का निस्तारण एंव प्रबंधन पर्यावरणीय दृष्टिकोण से करना, राष्ट्रीय एंव राज्य स्तर पर पर्यावरणीय स्थिति का आंकलन कर रिपोर्ट तैयार करना, औद्यौगिक इकाइयों से निकले अपशिष्ट पदार्थों का पुन: इस्तेमाल कर प्रदूषण को कम करना एंव विकास के लिए राष्ट्रीय एंव राज्य स्तरीय योजनाओं का मूल्याकंन पर्यावरणीय दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर करने से हमें पर्यावरण के संरक्षण में महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हो सकती है। इसके बिना जनमानस की भागीदारी से पर्यावरण संरक्षण कानूनों को वृहत् स्तर पर क्रियान्वित नहीं किया जा सकता है।

पर्यावरण संरक्षण में आम आदमी की भूमिका – पर्यावरण के संरक्षण के लिए संविधान में प्रावधानों, अधिनियमों एंव कानून निर्माण के अलावा जो सबसे महत्वपूर्ण तथ्य है, वह है पर्यावरण संरक्षण के प्रति लोगों में जागरूकता पैदा करना लोगों को पर्यावरणीय प्रदूषणों से हो रहे हानिकारक प्रभावों की सम्पूर्ण एंव विस्तृत जानकारी देना। पर्यावरण संरक्षण के लिए जागरूकता कर उसे अभियान के रूप में क्रियान्वित करना होगा, जिसके विभिन्न पक्ष होने चाहिए, जैसे–सेमिनार, संगोष्ठी, प्रशिक्षण कार्यक्रम, प्रदर्शनी, प्रतियोगिताओं का आयोजन, शिक्षण संस्थाओं गैर सरकारी संस्थाओं एंव समाज सेवी संगठनों द्वारा पर्यावरण जागरूकता के विभिन्न कार्यक्रम का आयोजन, पर्यावरण संरक्षण की आववश्यकता एंव पर्यावरण जागरूकता के संदर्भ में प्रचार–प्रसार सामग्री का निर्माण एंव वितरण इसके अलावा प्रदूषण के हानिकारक प्रभावों, पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता पर लघु वृत्तचित्र नाटक एव फिल्मों का निर्माण करना। शहरों एंव नगरों में मुख्य स्थलों पर बड़ी–बड़ी होर्डिंग्स लगाना सामाचार–पत्रों मे पर्यावरणीय लेखों का प्रकाशन, दूरदर्शन एंव आकाशवाणी के माध्यम से पर्यावरण जागरूकता एंव संरक्षण से संबधित विषय पर ज्ञानवर्द्धक एंव रोचक जानकारी का प्रसारण करना ये समस्त कार्य निश्चित रूप से पर्यावरण संरक्षण में अपनी अहम् भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं और भावी पीढ़ी को एक सुन्दर स्वच्छ वातावरण प्रदान कर सकते हैं।

आम आदमी – पर्यावरण को संदूषित करने वाले कारक कौन है यह प्रश्न उतना जरूरी नहीं है जितना जरूरी है कि आम आदमी कैसे पर्यावरण संरक्षण में अपना सहयोग दे सकता है, क्योंकि पर्यावरण संरक्षण के लिए सरकारी प्रयासों के बावजूद भी आम आदमी की सहभागिता अत्यन्त आवश्यक है तभी सही मायने में हम पर्यावरण संरक्षण के लिए चलाए जा रहे अभियान को सफल मानेगें। पर्यावरण संरक्षण से संबधित कुछ तथ्य वार्णित है जिनका पालन प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिए। ऐसा करके हम अपने पर्यावरण का प्रदूषण से होने वाली असीम क्षति से बचा सकेंगे एवं भविष्य की पीढ़ी के लिए सुदंर एंव स्वच्छ पर्यावरण को संरक्षित रख सकेगें। पर्यावरण संरक्षण में आमआदमी को निम्नलिखित तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए जिससें वह पर्यावरण के प्रति अपनी भूमिका का निर्वाह कर सकेंगे साथ ही **पर्यावरण संरक्षण में योगदान भी दे सके –**

- जल स्रोत को प्रदूषण से बचाएं पीने के लिए शुद्ध जल का प्रयोग करें।
- औद्योगिक विकास एवं नगरीकरण के लिए वनो का विनाश रोकें।
- ऊर्जा के लिए पेट्रोलियम पदार्थो एवं लकडी के विकल्प तलाशे, जैसे– ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ताप ऊर्जा, जल ऊर्जा एवं प्राकृतिक गैस इत्यादि जो सस्ते एवं पर्यावरण दृष्टिकोण से दीर्घकालिक है।
- खाली स्थानों मकानों सड़कों के किनारो पर अधिक से अधिक वृक्षारोपण करें।
- अपने घर, मुहल्लों नगर गांव एवं शहर का वातावरण स्वच्छ एवं सुन्दर रखें।
- ध्वनि प्रदूषण न करें उसे वार्तालाप का माध्यम रहने दें।
- लाउडस्पीकर व हॉर्न का अधिक आवश्यकता पर ही प्रयोग करें।
- वाहनों की नियमित चैकिंग एवं उचित रखरखाव कर वायु प्रदुषण को कम करें।
- उद्योगों को प्रदुषण रहित संयन्त्रों की स्थापना के लिए प्रोत्साहित करें।

- जनसंख्या वृद्धि मे कमी करें क्योंकि जनसंख्या वृद्धि का हमारे प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरण पर सीधा प्रभाव पडता हैं।
- शहरी करण पर रोक में सहयोग करें।
- समस्त जीव जन्तुओ की सुंरक्षा एवं संरक्षा में सहयोग दे।
- रासायनिक खादों एवं रासायनिक कीटनाशक पदार्थो एवं फसलों के कीटनाशकों के प्रयोग से बचें।
- जैविक खाद एवं जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करें।
- घरों का कूड़ा करकट एवं गंदगी पानी में न मिलाएं।
- जानवरो एवं कपडो को नदी में न धोएं।
- वनो की रक्षा करे।
- लोंगो में पर्यावरण के प्रति जागरूकता फैलाएं एवं प्रदुषण से होने वाले पर्यावरण के प्रभावो के प्रति सचेत रहे।

इस प्रकार एक आम आदमी पर्यावरण संरक्षरण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता है। पर्यावरण संरक्षण के लिए पर्यावरण अधिनियम '1986 की स्थापना की गई। इस अधिनियम प्रावधानों के उल्लंघन होने की स्थिति में दण्ड़ का प्रावधान किया गया है। प्रथम बार उल्लघंन पर पांच वर्ष की सजा अथवा एक लाख रूपया का जुर्माना अथवा दोनों ही किया जा सकता है। इस अधिनियम के अंतर्गत केंद्र राज्य सरकार को पर्यावरण सुरक्षा हेतु किसी भी ऐसे उद्योग या इकाई को जिसकी गतिविधि पर्यावरण सुरक्षा के लिए खतरा बन गई हो को बन्द करने, नियमित करने अथवा प्रतिबन्धित करने का अधिकार दिया गया है। इसके अंतर्गत उस उद्योग की बिजली, पानी एवं अन्य सेवाओं को तत्काल प्रभाव से बंद किया जा सकता है। इस अधिनियम के अंतर्गत समान्य नागरिक को भी यह अधिकार दिया गया है कि वह अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत उल्लघंन करने वाले की शिकायत माननीय न्यायालय में कर सकता है।

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा पर्यावरणीय जागरूकता उत्पन्न करने के उद्देश्य से पर्यावरण, वन तथा वन्य जीवों के परिरक्षण के लिए लोगों को शामिल करने हेतु एक अभियान के रूप में 'पर्यावरण वाहिनी' का गठन किया गया है। राष्ट्र स्तर पर पर्यावरणीय जागरूकता उत्पन्न करने के उद्देश्य से भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा वर्ष 1980 से राष्ट्रीय पर्यावरण जागरूकता अभियान नामक योजना का संचालन किया जा रहा है।

निष्कर्ष – पर्यावरण के संरक्षण का बुनियादी लक्ष्य प्राकृतिक संसाधनों के मानवीय उपयोग के प्रबंधन से है ताकि वर्तमान पीढ़ी के लिए दीर्घकालीन लाभ प्राप्त हो सकें एवं भावी पीढ़ी की आकांक्षाओं को पूरा किया जा सके। इसमें सरकारी भागीदारी, कानून के अलावा मानव की भागीदारी एवं पर्यावरण जागरूकता का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान होगा तभी पर्यावरण संरक्षण किया जा सकता है, क्योंकि पर्यावरण प्रदूषित भी किया गया है मानव द्वारा इसका समाधान एवं संरक्षण भी मानव ही कर सकता है। मानव को प्रकृति के साथ तारतम्य बनाकर चलना होगा तभी पृथ्वी पर जीवन की अवधारणाएं सही रूप में फलीभूत हो सकेंगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Keller,E.A. : company, A Bell and Howel company, Columbus, 1982
2. Brew, D.A.: Environmental Impact Analysis, U.S. Geological Survey Circular, 695,1974
3. Detwayler, T.R.: Man"s Impact on Environment, Mc Graw Hill Newyourk 1989
4. Dassman, R.F. : Conservation, Counter Culture and Separate Human Ecology, 1937
5. Kant"E. : Physiche Geographile, Rinks Edition, 1803.
5. Kuma, V.K. : Kanpur City: A Study in Environmental Pollution, Tara Book Agency, Varansi, 1982
6. Nicholson, M. : The Environmental Revolution, Penguin Harmondsworth, 1972
7. Rao,B.P.and :पर्यावरण और पारिस्थितिकी,वसुन्धरा प्रकाशन,गोरखपुर, 2006
8. Shrivastava, V.K.,Saxena, N.M.:पर्यावरण अध्ययन, साहित्य, भवन, आगरा, 2006
9. Thomas W.L.: Man]s Role in the Changing Face of the Earth, The University of Chicago Press, 1974

****

भारत सरकार की महिला सशक्तिकरण नीति में परिवर्तन - आवश्यकता, कठिनाइयाँ एवं सुझाव

डॉ. एम. चन्द्रशेखर *

प्रस्तावना – प्रकृति के यहाँ स्त्री-पुरूष दोनों बराबर हैं। अन्तर है तो केवल विचारों का, जहाँ मातृसत्तात्मक परिवार है वहाँ माँ का बड़ा महत्व है जबकि, पुरूष प्रधान समाज स्त्री पुरूष के बीच भेद कर अपने अस्तित्व को कम कर रहा है।

श्रीमती कुन्ती अपनी कविता 'बीज और धरती' में लिखती हैं।

'बीज स्व शक्ति से गर्मित हो
धरती से बोला, अरे मैं न होता
तो तुम बंजर ही कहलाती, धरती बोली,
रे अज्ञानी न होती मैं

तो अकेले तुम क्या करते, अधर में लटक व्यर्थ ही हो जाती, तुम्हारी शक्ति।'

सृष्टि का संचालक स्त्री-पुरूष के संयोग से ही होता है। सृष्टि सृजन में स्त्री-पुरूष का कहीं कोई भेद नहीं है। परन्तु पुरूष प्रधान समाज में मानव की सोच में बदलाव लाना जरूरी है।

'बार-बार भ्रूण हत्या से घटता स्त्री पुरूष अनुपात समाज के लिये चिन्तनीय विषय है। 'सृजन' कविता में श्रीमती कुन्ती कहतीं हैं।

'जन्म लेने के पहले
क्यों मार रहे हो
उस निरीह नारी को
क्यों बिगाड़ रहो हो ?
प्रकृति संतुलन को।'

नारी के प्रति अन्तर्मन वैसा बनाना होगा सोच में बदलाव लाना होगा। तभी नारी के प्रति पुरूष की सच्ची सोच या सच्ची श्रद्धा मानी जायेगी। समाज में घटता लिंगानुपात एक दिन विकराल रूप धारणा कर समाज को समूल नष्ट कर देगा। नारी सशक्तीकरण के अनेक निहितार्थ हैं। वस्तुत: नारी सशक्तीकरण का प्रश्न बहुआयामी अधिकारों का प्रश्न है। लोकतांत्रिक मानकों के अनुरूप यह महिलाओं के मूल लोकतांत्रिक अधिकारों का भी प्रश्न है। साथ ही, यह मात्र विधिक सुरक्षा नहीं, प्रदत्त अधिकारों की प्राप्ति के लिए अवसरों की उपलब्धता का प्रश्न है-सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक, वैयक्तिक, सामूहिक, वैश्विक सभी क्षेत्रों में सभी स्तरों पर। वर्तमान भारत में गत कुछ वर्षों में अनेक मंचों से यह प्रश्न इसलिए उठा है कि विगत पाँच दशकों देश में लोकतंत्र की अनेकानेक उपलब्धियों के बावजूद आधी जन आबादी को जो दर्जा मिलना चाहिए था, वह उससे वंचित है। समाज में आज दहेज प्रथा ने न जाने कितनी महिलाओं के घर बर्बाद कर दिये, कितनो ने आत्महत्याएँ कर ली, कितनो को पति एवं सास-ससुर ने बहुओं को जला कर मार डाला है। पहले कन्या को वस्त्रादि सहित कुछ सामान दे दिया जाता था ताकि उसका जीवन सुविधा पूर्वक चलता रहे, क्योंकि कन्या भी घर में भाइयों के समान भागीदार है। परन्तु आज ये स्वरूप ही बदल गया है, दहेज लोभी झूठी कसमें खा जायेंगे पर दहेज की मांग जरूर करेंगे इसे समूल नष्ट करना होगा तभी महिलाओं में सशक्तिकरण आ पायेगा।

आज हम महिला सशक्तिकरण की बात तो करते हैं, लेकिन विभिन्न अधिनियम, अधिकार, योजनायें होने के बावजूद महिलाओं की दशा और उनकी स्थिति वही बनी हुई है। आज भी भ्रूण हत्याएँ हो रही हैं। महिलाओं के साथ गैंगरेप, घरेलू हिंसा, जैसी घटनायें महिला 'सशक्तिकरण' पर प्रश्न चिन्ह लगा रही है। महिलाओं को आरक्षण और लोकतंत्र में व्यापकता उन्हें समानता तथा सशक्तिकरण का रूप दे सकती है।

आज के समय में गिरता हुआ लिंगानुपात भी एक चिन्ता जनक प्रश्न है अगर इस पर सरकार द्वारा कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया तो आने वाले भविष्य में भयामय की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

आँकड़ों के अनुसार स्पष्ट है कि बाल लिंगानुपात में 1961 से ही क्रमिक रूप से गिरावट दर्ज की जा रही है। 1961 में जहाँ 1000 लड़कों के पीछे 976 लड़कियाँ थीं, वहीं कमी आते हुए 2011 में 1000 लड़कों पर 914 लड़कियाँ ही रह गई है। अगर इस ट्रेंड को नहीं रोका गया तो अगले 10 वर्ष में पूरे देश की स्थिति हरियाणा व पंजाब जैसी हो जाएगी, लड़कियों का अनुपात 900 से भी कम हो जायेगा। केवल केरल, पांडिचेरी एवं तमिलनाडु तीन राज्य ऐसे हैं जहाँ स्त्रियों का अनुपात अधिक हैं इस बढ़ते असन्तुलन का कारण गर्भ में पल रहे बच्चे को कन्या जानकर गर्भपात कराना प्रमुख कारण है। सबसे ज्यादा कटु सत्य जो सामने आया है जिसकी जानकारी अभी तक शायद आम आदमी को नहीं थी वो यह कि इस जघन्य अपराध की शुरूआत जीवन रक्षक कहे जाने वाले डॉक्टरों द्वारा ही की गई थी। यह 70 के दशक की बात है जब देश में जनसंख्या को रोकने के उपाय ढूंढे जा रहे थे तब यह सुझाव 'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान चिकित्सालय एम्स (नई दिल्ली) के डॉक्टरों ने दिया कि अगर जन्म से पहले ही गर्भ में ही लिंग की जांच कर ली जाए तो जिन्हें बेटी की चाह नहीं है वो गर्भ को गिरा सकते हैं, इस तरह बेतहाशा जनसंख्या की वृद्धि पर काबू पाया जा सकेगा। लेकिन शायद तब वो इसके दूरगामी परिणामों से रूबरू नहीं थे और इसी सोच के चलते भारत में पिछले 20 सालों में कम से कम सवा करोड़ बच्चियों की भ्रूण हत्या की गई।

यह सत्य है कि एक ओर जहाँ हमारे देश की उच्च एवं मध्य वर्ग की सुशिक्षित करोड़ों महिलाएँ अपने अधिकारों एवं उनकी सुरक्षा के लिए सोशल मीडिया के माध्यम से विचार विमर्श करती, विरोध दर्शाती एवं कडे तेवर अपनाती, लड़ती नजर आती हैं, वहीं दूसरी ओर भारत की करोड़ों गरीब एवं निम्न वर्ग की महिलाएँ अपने अधिकार और सुरक्षा की बात करना तो दूर

* अतिथि विद्वान (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय,खनियाँ, जिला– शिवपुरी (म.प्र) भारत

अपने शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक शोषण के विरूद्ध अपनी चुप्पी तोड़ने में पूरी तरह असमर्थ रह कर जीवन जीने के लिए विवश हैं। हमारे देश में नाबालिग लड़कियों को भी अपने अस्तित्व की महत्ता एवं अपने स्वाभिमान पूर्ण जीवन जीने के अधिकार का रंचमात्र भी ज्ञान नहीं है। गरीबी एवं माता-पिता के प्यार से वंचित, उद्देश्य रहित, दिशाहीन जीवन जीने के लिए दूसरे के घरों में काम करने के लिए जाती हैं जिन्हें पग-पग पर अपमान सहने के लिए मजबूर होना पड़ता है। अन्याय को सहन करना उन्हें अपने जीवन की नियति एवं दुर्भाग्य ही समझ जाता है। जबकि सत्य इसके विपरीत है। शोषक वर्ग सदैव ही अपने धन बाहुल्य एवं शासकीय सत्ता में अपना महत्वपूर्ण दखल रखने के कारण आर्थिक रूप से विपन्न एवं निम्न सामाजिक स्तर की लड़कियों का शोषण करने से नहीं चूकते। यह लिखने में मुझे कोई संकोच नहीं है कि धनाढ्य पुरूषों के साथ-साथ धनाढ्य एवं उच्च पदों पर आसीन महिलाएं भी अपन घरों में झाड़ू पोंछा बर्तन मांजने आ रही छोटी उम्र की नाबालिग लड़कियों से कोल्हू के बैल की तरह काम करवाने से नहीं हिचकिचाती हैं।

महिला सशक्तिकरण का आशय महिलाओं को भी पुरूष के बराबर हक मिले। महिला सशक्तिकरण पर विचार 1985 में महिला अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के समय आया। क्योंकि हमारे देश में महिला-पुरूष में काफी भेद है। महिला को पुरूषों के समान महत्व देने के लिए वर्ष 2001 में महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में मनाया गया, इसमें महिलाओं की क्षमता, कौशल, स्वाभिमान जागृत करना, बन्धुआ मजदूरी, शोषण अन्याय, बाल-विवाह, चूल्हा चौका, खेत खलिहान एवं विभिन्न रूढ़िवादी परम्पराओं से बाहर निकालना ताकि नारी में पुरूषों की तरह मजबूती आ सके और कठिन से कठिन क्षेत्रों में अपना उत्साह दिखा सके। यद्यपि सरकार द्वारा भारतीय संविधान में असीम अधिकार देकर भी असहाय बनी हुई है। कानूनों का कितना पालन होता है ये तो समाज ही जानता, जहाँ नारी की पूजा होती है वहीं पुरूष वर्ग को अपनी सोच बदलनी होगी। नारी शोषण एवं नारी सशक्तीकरण की ज्वलंत समस्या एवं उनकी सुरक्षा के प्रश्न को श्रीमती प्रभा पांडे 'पुरनम' ने अपने 'गीत' काम करने निकली घर से' में बड़े ही सशक्त ढंग से प्रदर्शित किया है-

'काम करने निकली घर से किन्तु क्या इन्सान नहीं
पत्थर की तो बनी नहीं है, क्या उसमें कोई जान नहीं
उसकी मजबूरी है फिर भी तुझको ये अधिकार नहीं
पशु के जैसा किसी भी कारण कर सके व्यवहार नहीं
गाली और अपशब्द सदा तुम उसे सुनाते जाओगे
फिर भी तो कोने में आँसू बहा सके दो चार नहीं
उसकी पीर भरी सिसकी की जरा तुम्हें पहचान नहीं
काम करने निकली घर से किन्तु क्या इन्सान नहीं
झाड़ू पोंछा करती घर का, बर्तन भी वो साफ करे
फिसल के हाथ से प्याला टूटा ऐसी भूल का माफ करें
उसको भी सर्दी, खांसी या ज्वर की पीड़ा हो सकती
स्वास्थ्य लाभ उसको करने दे दवा दिला इन्सान बनें
पास पड़ोस के लोग भला क्यों देते बिल्कुल ध्यान नहीं
काम करने निकली घर से किन्तु क्या इन्सान नहीं
जो भी अत्याचार करे उसे सजा दिलाने बने नियम
अपने मन की करते जायेंगे ये तोड़ा जाए भ्रम
किसी हाल न बख्शें जायेंगे ये उन्हें याद रहे
ऐसे क्रूर, निर्दयी, जन पर निर्णायक हो ठोस कदम
ज्वलंत प्रश्न सुरक्षा इनकी फेरे आंख कान नहीं
काम करने निकली घर से किन्तु क्या इन्सान नहीं

महिला सशक्तीकरण में परिवर्तन की आवश्यकता -

1. आज भी समाज पुरूष प्रधान है। समाज में पुरूषों को ज्यादा महत्व दिया जाता है।
2. महिला को आज भी अबला एवं कमजोर समझा जाता है। अत: महिलाओं को जागृत करना अति आवश्यक है।
3. समाज में महिला आज भी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक क्षेत्र में पिछड़ी हुई है।
4. समाज में आज भी महिलायें घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा यौन उत्पीड़ ने एवं भ्रूण हत्या जैसी समस्याओं से जूझ रही हैं।
5. महिला पुरूष का घटता लिंगानुपात।
6. महिला संबंधी कानूनों की जानकारी का अभाव।

कठिनाइयाँ -

1. महिलायें आज भी अपने हक की लड़ाई लड़ने में अपने को असमर्थ पाती हैं।
2. अपनी और अपने परिवार की अस्मिता के खातिर कानून का सहारा नहीं लेती।
3. आर्थिक तंगी का अभाव।
4. गवाह सबूत के अभाव में दोषी को दण्ड न मिलना।
5. कानून का लचीलापन।
6. महिला संबंधी कानूनों एवं अधिकारों का ज्ञान न होना।
7. ग्रामीण अंचल में जागरूकता का अभाव।

सुझाव -

1. कानून में बदलाव की आवश्यकता।
2. न्याय दिलाने में विलम्ब न किया जाए।
3. स्त्री-पुरूष के घटते लिंगानुपात का संतुलन बनाना।
4. भ्रूण हत्या के खिलाफ सख्त कानून बनाया जाए।
5. इन्टरनेट, स्त्री आंदोलन, स्त्री विमर्श जैसे बिन्दुओं की जानकारी दी जाए ताकि उनकी बुद्धि, योग्यता कुशलता में वृद्धि हो सके।
6. महिलाओं की सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाए।
7. ग्रामीण अंचल में बाल-विवाह पर नियंत्रण।
8. महिलाओं के क्षेत्र में काम करने वाली संस्थायें, एन.जी.ओ. को ग्रामीण क्षेत्र में विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि वे अन्धविश्वास और रूढ़िवादी परम्पराओं से बाहर निकल सकें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अन्धेरे में कन्दील-श्रीमती कन्ती शिल्पायन बुक नई दिल्ली
2. नारी सशक्तीकरण (विमर्श एवं यथार्थ) आशा कौशिक पोइन्टर पब्लिशर्स जयपुर (राज.)
3. नवीन शोध संसार जनवरी-मार्च 2014
4. नारी अस्मिता-दिसम्बर 2013-फरवरी 2014 बड़ोदरा (गुजरात)

****

लोकसभा 2014 (गठन) में भारत निर्वाचन आयोग की भूमिका व चुनौतियां तथा भारतीय महिलाओं की बढ़ती भागीदारी

कु. सुरेखा यादव *

प्रस्तावना – विश्व के सबसे बडे लोकतंत्र भारत में शांतिपूर्ण एवं निष्पक्ष तरीके से राज्य विधानमण्डलों, संसद, उपराष्ट्रपति तथा राष्ट्रपति पद के लिए निर्वाचन सम्पन्न कराने में भारत निर्वाचन आयोग विगत 6 दशकों से उल्लेखित भूमिका निभाता चला आ रहा है। भारतीय संविधान 324 में निर्वाचन आयोग के गठन का प्रावधान है।

भारतीय संविधान में निर्वाचन आयोग का गठन – तालिका क्रमांक–1

अनुच्छेद	निहित तथ्य
अनुच्छेद 324	निर्वाचनों के अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण का निर्वाचन आयोग में निहित होना।
अनुच्छेद 324(1)	निर्वाचन हेतु नामावली तैयार करना और निर्वाचन के संचालन का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण आयोग में निहित है।
अनुच्छेद 324(2)	निर्वाचन आयोग बहुसदस्यीय होगा, जिसमें आयुक्त सहित अन्य निर्वाचन आयुक्त होते हैं।

स्त्रोत – भारत का संविधान

वर्ष 2014 के 16वीं लोकसभा के चुनाव में निर्वाचन के समक्ष कई चुनौतियां आई, जिनसे विभिन्न तरीकों से निपटा गया। चुनाव किसी भी लोकतंत्र के लिए एक सर्वाधिक सशक्त तत्व है तथा जब तक चुनाव स्वतंत्र और निष्पक्ष तरीके से होते रहते हैं, तब तक राष्ट्र में ईमानदार जनप्रतिनिधित्व की बुनियादी आवश्यकता पूर्ण होती रहती है।

शोध पत्र के उद्देश्य – शोधपत्र में निम्न उद्देश्य आधारित है –

1. भारतीय निर्वाचन आयोग के कार्य एवं भूमिका की समीक्षा करना।
2. भारतीय निर्वाचन आयोग की चुनौतियों का अध्ययन करना।
3. पिछले पॉच भारतीय लोकसभा चुनाव में मतदान की स्थिति का अध्ययन करना।
4. पिछले पॉच भारतीय लोकसभा चुनाव में महिलाओं की भागीदारी ज्ञात करना।

शोध विधि –प्रस्तुत शोध पत्र में शोधकर्ता द्वारा भारत में लोकसभा निर्वाचन प्रणाली व निर्वाचन आयोग की स्थिति का अध्ययन किया है। तथा अध्ययन हेतु शोधकर्ता ने द्वितीयक समंकों का संग्रहण किया है। द्वितीयक समंकों को सारणीकृत एवं वर्गीकृत कर अध्ययन कार्य संपूर्ण किया गया है।

भारतीय निर्वाचन आयोग के कार्य एवं अधिकार –संवैधानिक संस्था होने के कारण निर्वाचन आयोग के कार्य संविधान में ही निर्धारित किये गये हैं जो अग्रलिखित है –

1. संसद एवं राज्य विधानमण्डलों के सामान्य निर्वाचन से पहले तथा प्रत्येक जनगणना के बाद मतदाता सूचियों को संशोधित करते हुये उन्हें तैयार करना।
2. प्रत्येक मतदाता को फोटोयुक्त मतदाता पहचान–पत्र जारी करना।
3. निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन करना।
4. निष्पक्ष एवं स्वतंत्र तरीके से चुनाव कराने के लिए संपूर्ण चुनाव मशीनरी का पर्यवेक्षण करना।
5. स्वतंत्र, निष्पक्ष चुनाव संपन्न कराने के लिए सामान्य चुनाव अधिकारियों के अतिरिक्त पर्यवेक्षक तथा सूक्ष्म अवलोकनकर्ता तैनात करना।
6. चुनाव व्यवस्थाओं से संबंधित विवादों का निपटारा करने के लिए अधिकारियों, की नियुक्ति करना।
7. बड़े पैमाने पर धांधली, बूथों पर कब्जा करने या किसी वर्ग को मतदान करने से रोकने की शिकायत सही पाये जाने पर आंशिक या पूर्ण रूप से किसी क्षेत्र के मतदान को रद्द करना।
8. राजनीतिक दलों को मान्यता देना तथा चुनाव चिन्ह आवंटित करना।
9. लोकसभा एवं राज्य विधान सभाओं के निर्वाचन हेतु उम्मीदवार द्वारा किये जाने वाले खर्च की सीमा निर्धारित करना।

भारतीय चुनाव प्रणाली की कतिपय चुनौतियां – भारतीय निर्वाचन आयोग को 16वीं लोकसभा चुनाव में निम्नलिखित चुनौतियों का सामना करना पड़ा था –

1. मतदान का कम प्रतिशत – मतदान का औसत 55–65 प्रतिशत पिछले चुनावों में होने से 16वीं लोकसभा चुनाव में सबसे बड़ी चुनौती मतदान प्रतिशत में वृद्धि करने की थी। ये चुनौति का परिणाम अच्छा था। यह 2014 में 66.6 प्रतिशत मतदान हुआ जो अभी तक में सर्वाधिक था।

2. राजनीतिक दलों एवं राजनीतिज्ञों पर से जनता के विश्वास में कमी – एसोशियेशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफार्म्स तथा नेशनल इलेक्शन वाच द्वारा सन् 2004 और उसके बाद निर्वाचनों में विजयी सांसदो विधायको की संपत्तियों तथा उनके विरूद्ध न्यायलयों में लंबित अपराधिक मामलों का जो विश्लेषण प्रस्तुत किया है। जिसमें 8790 सांसदो विधायको में से 25 प्रतिशत के विरूद्ध न्यायलयों में अपराधिक वाद लंबित है। अपराधी होने के साथ उनके पास उतनी ही अधिक संपत्ति भी होती है।

3. राजनीति का अपराधिकरण तथा अपराधियों का राजनीतिकरण– भारतीय राजनीति का विद्रुप युक्त चेहरा यह बताता है कि अपराधियों के चुनाव न लड़ने पर कोई रोक न होने का कारण हत्या, अपहरण, आगजनी, सार्वजनिक धन के दुरुपयोग, बलात्कार जैसे जघन्य अपराधों में संलिप्त लोग भी केवल इस आधार पर चुनाव लड़ने और जीतने में सफल हो जाते हैं कि मामला न्यायालय में लंबित है। भारतीय न्यायप्रणाली की धीमी प्रक्रिया के कारण वे 20–30 साल तक मामला निपटान से बच जाते हैं। इससे निपटन भी भारतीय निर्वाचन आयोग की एक चुनौती है।

4. खर्चीली चुनाव प्रणाली – भारत की निर्वाचन प्रणाली को सर्वाधिक खर्चीला माना जाता है। लोकसभा के उम्मीदवारों को 2 से 10 करोड़ तक का खर्चा उठाना पड़ता है। चुनाव में कालेधन के उपयोग को रोकना भी भारतीय

* प्राध्यापक (अर्थशास्त्र),सरोजनी नायडू, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, शिवाजी नगर, भोपाल(म.प्र.) भारत

निर्वाचन आयोग के सामने चुनौती है।

5. राजनीतिक दलों को दिये जाने वाले चन्दे में अपारदर्शिता – सोशियेशन ऑफ डेमोक्रेटिक रिफार्म्स (ऐ.डी.आर) के एक विश्लेषण के अनुसार राजनीतिक दलों को ज्ञात स्त्रोतों से प्राप्त होने वाले चन्दे का 87 प्रतिशत उद्योगपतियों एवं व्यवसायियों से आता है जो स्पष्ट करते है राजनीतियों एवं व्यवसायियों के बीच सॉठ–गॉठ है। इससे देश की राजनीतिक व्यवस्था पर एवं अन्य नीतियों पर औद्योगिक जगत का प्रभाव दिखाई देता है। अत: निर्वाचन आयोग को इस अपारदर्शिता में बदलना भी एक चुनौति है।

6. मतदाता सूचियों में बड़े पैमाने की हेराफेरी – राज्यों में सत्तारूढ़ राजनीतिक दल की शहर पर जिला निर्वाचन अधिकारी के स्तर पर मतदाता सूचियों में बड़े पैमाने पर हेरा–फेरी होती है। जिसे रोकना भी एक चुनौति है।

निर्वाचन आयोग के सुधारवादी कदम – उपरोक्त चुनौतियों से निपटने हेतु भारत निर्वाचन आयोग ने विभिन्न कदम उठाए है, निशक्त प्रभाव 16वीं लोकसभा निर्वाचन में दृष्टित हुआ है –

(i) सभी उम्मीदवारों को नकारने का मुद्दा –

भारतीय निर्वाचन प्रणाली में यह नवप्रयोग था जो समाजसेवी अन्ना हजारे और उनके समर्थकों के प्रयास का परिणाम था। इसके अंतर्गत कोई भी पसंद नहीं का भी विकल्प जनता को प्राप्त हुआ। इससे राजनीति से अपराधिकरण को कम किया जा सकता है।

(ii) उम्मीदवारों को अपनी संपत्ति का लेखा–जोखे का प्रस्तुतीकरण– इससे निर्वाचन प्रणाली में काले धन के उपयोग को रोका जा सकता है।

7. मतदान के प्रतिशत में वृद्धि –भारतीय निर्वाचन में सबसे बड़ा सकारात्मक बिन्दु यही था कि 2014 में हुऐ लोकसभा चुनाव में कुल मतदान 66.38 प्रतिशत हुआ जो लोकतंत्र की सफलता का परिचायक है। एवं जनता में जागरूकता का परिणाम था।

पिछले पांच लोकसभा निर्वाचन में मतदान की स्थिति का विश्लेषण–

तालिका क्रमांक–2

लोकसभा निर्वाचन में मतदान की स्थिति

वर्ष	कुल मतदान
1998	61.97
1999	59.99
2004	57.65
2009	58.19
2014	66.378

स्त्रोत – निर्वाचन आयोग की प्रकाशित रिपोर्ट

नोट – आकड़े प्रतिशत में दर्शाये गये हैं।

उपरोक्त तालिका क्रमांक से स्पष्ट है कि वर्ष 2004 में सबसे कम 57ध्5 प्रतिशत मतदान हुआ है, जबकि उसके बाद वर्ष 2009 में 58ध्19 प्रतिशत रहा और उसकी तुलना में वर्ष 2014 में सबसे अधिक 66.38 प्रतिशत मतदान हुआ है जो यह तथ्य स्पष्ट करता हैं कि भारत में जनता में शासन की नीतियों व कार्यो के प्रति जागरुकता बढ़ रही है

भारत के राज्यों में लोक सभा 2014 के मतदान में महिलाओं की भागीदारी –भारत में कुल 8 राज्य केन्द्रशासित प्रदेश ऐसे हैं जहॉ महिलाओं ने अधिक मतदान किया है, इसका विवरण निम्न तालिका में प्रस्तुत है –

तालिका क्रमांक–3

महिला मतदाताओं की संख्या पुरूषों से अधिक

क्र.	राज्यो के नाम	पुरूष मतदाता	महिला मतदाता
1.	केरल	48.1	51.9
2.	मणिपुर	49.0	51.0
3.	मिजोरम	49.1	50.9
4.	मेघालय	49.6	50.4
5.	दमन–द्धीप	49.5	50.5
6.	अरूणाचल प्रदेश	49.5	50.1
7.	गोआ	49.9	50.1
8.	पाण्डिचेरी	48.0	52.0

स्त्रोत – प्रतियोगिता दर्पण हिन्दी मासिक

नोट – आकड़े प्रतिशत में दर्शाये गये हैं।

उपरोक्त तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि पूरे 8 राज्यों में महिला मतदाता का प्रतिशत पुरूषों की तुलना में ज्यादा है। यह अंतर सर्वाधिक पाण्डिचेरी व केरल में था। यहां महिलाऐं शिक्षित व अपने अधिकारों के प्रति जागरूक भी है

भारतीय निर्वाचन आयोग की समस्याऍं –

- भारत जनसंख्या की दृष्टि से बहुत बड़ा देश है, अत: पूर्णत: निष्पक्ष निर्वाचन संभव नहीं हो पाता।
- भारत में महिलाओं में जागरूकता पुरूषों की तुलना में कम है।
- भारतीय समाज पुरूष प्रधान है अत: महिलायें अशिक्षित होने के कारण भी राजनीतिक अधिकारों के प्रयोग में पीछे हैं।

निर्वाचन आयोग की भावी चुनौतियां व उनके लिये सुझाव –

भावी चुनौतियॉं –

- वर्ष 2014 के लोकसभा चुनाव में कुल 6638 प्रतिशत मतदान हुआ है, अर्थात लगभग 34 प्रतिशत जनता अभी लोकतंत्र में भागीदार नहीं निभा रही हैं, इसे जोड़ना है।
- वर्ष 2014 में पुरूष मतदान 52.38 प्रतिशत व महिला मतदान 4761 प्रतिशत रहा है, इस अंतर को पाटना भी एक भावी चुनौती है।

सुझाव –

- बढ़ती जनसंख्या को दृष्टिगत रखते हुये प्रबंधकीय, वित्तीय, भौतिक तथा सामग्री संसाधनों की आवश्यकता हेतु अभी से आयोजना बनाना चाहिए।
- वैज्ञानिक प्रष्ठिानों, प्रौद्योगिकीय संस्थानों एवं प्रबंधकीय विशेषज्ञों की अभिनव व सृजनात्मक बौद्धिकताओं की सेवाएं लेने पर विचार करना चाहिए।
- मतदाताओं की संख्या में होने वाली भारी वृद्धि के प्रबंधन हेतु एक संभावित विकल्प आनलाईन मतदान है।

निष्कर्ष – विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र जहॉ (वर्ष 2014 के निर्वाचन) में कुल 81.46 करोड़ पंजीकृत मतदाता थे। कुल सामान्य भूल–चूको के साथ इतने शांतिपूर्ण ढंग से चुनाव का संपन्न करवाना, भारतीय निर्वाचन आयोग की बड़ी उपलब्धि है, ऐसा विश्व में कहीं भी दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। सारे भारत के लिए एक साथ निर्वाचन को बिना खून खराबे के संपन्न कराना, विश्व के आठवें आश्चर्य से कम नहीं है, इसे बनाये रखने के लिये आवश्यक है, कि भावी चुनौतियों व समस्याओं से निपटने हेतु वर्तमान से ही आयोजना पर विचार शुरू कर दिया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. 'भारत का संविधान' सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, 30–डी1, मोतीलाल नेहरू रोड, इलाहाबाद
2. प्रतियोगिता दर्पण हिन्दी मासिक (जून 2014) 430वां अंक, पेज नं.18
3. प्रतियोगिता दर्पणहिन्दी मासिक (अप्रेल 2014) 428वां अंक, पेज नं.90

जलवायु परिवर्तन- बढ़ते तापमान की समस्या एवं निदान

डॉ. अनिल कुमार *

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में जलवायु परिवर्तन के कारण होने वाले तापमान में वृद्धि से हमारे ऊपर संकट के बादल मंडरा रहे है। पर्यावरणविद, वैज्ञानिक, विशेषज्ञ तथा आम नागरिक गर्मी को लेकर काफी चिन्तित है। तापमान बढ़ने से हमें कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। ध्रुवों की बर्फ पिघलने से समुद्र जल स्तर बढ़ेगा और कई समुद्रतटीय क्षेत्र जलमग्न हो जायेगें, मौसम तथा जलवायु का चक्र टूट जायेगा जिससे खाद्यान्न की समस्या बढ़ेगी। हिमालय क्षेत्रों की बर्फ पिघलने से सिंचाई, पेयजल एवं जल विद्युत उत्पादन की समस्या विकराल रूप लें लेगी, अनेक जीव जन्तु एवं वनस्पतियाँ विलुप्त हो जायेगी। प्रदूषण, तापमान में वृद्धि, अम्लीय वर्षा तथा अनियमित मौसम चक्र के कारण कई परम्परागत रोगों में वृद्धि एवं नये रोग उत्पत्र हो जायेगे। इसके अलावा पूरे विश्व में ऊर्जा संकट पैदा हो जायेगा। जलवायु परिवर्तन का भयंकर दृश्य हमारे सामने वर्तमान में उपस्थित हो रहा है। आज आवश्यकता है कि हम जलवायु परिवर्तन को संरक्षण एवं सम्बर्धन के माध्यम से व्यक्तिगत एवं सामूहिक तौर पर प्रयास करे।

प्रस्तावना – आज मानव अति भौतिकवादी तथा व्यक्तिगत स्वार्थो की इतनी निकृष्ट पराकाष्ठाओं पर पहुँच गया है कि वह स्वयं अपनी जाति तथा अन्य प्राणियों का शोषण करने के बाद प्रकृति का शोषण करने पर उतारू है। प्रकृति के अनुचित दोहन तथा शोषण के चलते पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्याएँ विकराल रूप धारण करती जा रही है, कई विशेषज्ञों, वैज्ञानिक एवं पर्यावरणविदों की राय है कि अगर प्रदूषण इसी तरह बढ़ता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब पृथ्वी समय से पूर्व ही जीवन विहीन हो जाएगी।

संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव बान की मून ने विश्व समुदाय को आगाह करते हुए कहा कि– 'ग्लोबल वार्मिग के कारण पूरी दुनिया विनाश के कगार पर जा पहुँची है, महासचिव ने सचेत करते हुए कहा कि अब भी समय है चेत जाएँ कहीं ऐसा न हो कि वापसी के सारे रास्ते ही बन्द हो जाए।'

उद्देश्य –

1. ग्लोबल वार्मिग के कारण जलवायु परिवर्तन का अध्ययन करना।
2. जलवायु परिवर्तन का पर्यावरण एवं समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
3. ग्लोबल परिवर्तन के लिये उत्तरदायी कारणों का विश्लेषण करना।
4. जलवायु परिवर्तन के लिये उत्तरदायी कारणों का विश्लेषण करना।
5. जलवायु परिवर्तन से होने वाले पर्यावरणीय असन्तुलन को दूर करने के तरीकों का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र द्वितीयक समंको पर आधारित है। इसके अन्तर्गत सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा तैयार किये गये शोध आलेख, पत्र-पत्रिकाओं एवं व्यक्तिगत अनुसंधान, प्रकाशित प्रलेख, अनुसंधानकर्ताओं के प्रतिवेदन आदि को सम्मिलित किया गया है।

बढ़ते तापमान की समस्या – सम्पूर्ण विश्व बढ़ते हुये तापमान तथा औसत गर्मी की तपिश से जल रहा है पर्यावरणविद्, वैज्ञानिक तथा आम नागरिक इस बढ़ती गर्मी को लेकर चिन्तित है।

मार्क लायनास ने अपनी पुस्तक – 'सिक्स डिग्रीजअवर फयूचर ऑन ए हॉटर प्लेट में' कल्पना की है कि यदि पृथ्वी का तापमान 2^{0}C बढ़ जाये तो आर्कटिक समुद्र विलुप्त हो जायेगा। उप-उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में भंयकर सूखा पड़ेगी, लू के थपेड़े झेलने पडेंगे तथा जंगलों में आग लग जायेगी, जंगल लगभग समाप्त हो जायेगे। जंगल साफ होने में औद्योगीकरण एवं शहरीकरणो का भी प्रमुख योगदान रहता है। चारों ओर रेगिस्तान हो जायेगा। चारों ओर फेक्ट्रियों से निकलने वाले धूँए में कार्बन की मात्रा अधिक होने एवं वनों के साफ होने से धरती का तापमान बढ़ जायेगा। हमें शुध्द वायु मिलना भी मुश्किल हो जायेगी।

3^{0}C से 4^{0}C तापमान बढ़ने से बर्फ पिघलकर समुद्र में विलीन हो जायेगी जिससे पेय योग्य जल एवं कृषि योग्य जल की कमी हो जायेगी। समुद्रतटीय क्षेत्रों के जल मग्न होने से लोगों के बसने एवं कृषि योग्य भूमि की कमी हो जायेगी। कृषिभूमि के कम होने से खाद्यान्न समस्या विकराल रूप ले लगी। तापमान में 5^{0}C से 6^{0}C तक वृद्धि से विश्व के अधिकांश मानव एवं जीवजन्तु विलुप्त होने के कगार पर जा पहुँचेगे।

बढ़ते तापमान के कारण – यह प्रश्न हर किसी मन में उठता है कि तापमान में वृद्धि का क्या कारण है? विकास प्रक्रिया के दौर में औद्यौगीकरण बढ़ा जिससे जंगलों का सफाया किया गया एवं प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन होने लगा। प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन से पर्यावरण असंतुलन बढ़ा और ग्लोबल वार्मिग जैसी समस्याओं ने जलवायु का स्वरूप ही बदल दिया। जलवायु परिवर्तन से फसल चक्र परिवर्तित हो गया और खाद्यान्न जैसी समस्यायें हमारे सामने उपस्थित हो रही है। विकास प्रक्रिया में सबसे ज्यादा योगदान ऊर्जा का माना जाता है। जीवश्म ईधन, लकड़ी, कोयला, पेट्रोल, डीजल, मिट्टी का तेल आदि ऊर्जा के प्रमुख स्त्रोत है। इनको जलाने से ऊर्जा तो प्राप्त होती है लेकिन साथ ही बड़ी मात्रा में कार्बन कण, कार्बनडाईऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड जैसी ग्रीन हाउस गैसे उत्सर्जित होती है। वैज्ञानिकों का मानना है कि औद्योगिक क्रान्ति आने के बाद से अब तक लगभग 0.5 मिलियन टन कार्बन का उपयोग किया जा चुका है। आने वाले 40 वर्षो में इससे अधिक कार्बन का उपयोग कर लिया जायेगा। पृथ्वी की गर्मी बढ़ाने मे जहाँ कार्बन डाईआक्साइड जैसी ग्रीन हाउस गैसों का योगदान 40 प्रतिशत के लगभग है। वही काले कार्बन कणों का योगदान 12 प्रतिशत है।

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, पथरिया, मुंगेली (छ.ग.) भारत

विश्व स्तर पर 217 देशों का 1980 से 2009 तक अध्ययन करने के उपरान्त पाया कि सभी देशों का काबर्न डॉईआक्साइड उत्सर्जन करने मे योगदान है लेकिन इनमें से दस देश ऐसे हे जो कार्बन डाई ऑक्साइड उत्सर्जन की मात्रा में सबसे आगे है।

चीन 2008 एवं 2009 में प्रथम स्थान पर रहा जो कार्बन डाईआक्साइड उर्त्सजन करता है। द्वितीय स्थान पर यू.एस.ए संयुक्त राज्य अमेरिका। भारत की स्थिति 2008 में चौथे स्थान पर थी 2009 में भारत तीसरे स्थान पर आ गया है। इससे स्पष्ट हे कि भारत में भी कार्बन डाईआक्साइड उत्सर्जन की मात्रा 2008 की तुलना में 2009 बढ़ी है। शेष देशों का तालिका में स्पष्ट उल्लेख किया गया है।

आज उद्योगों तथा घरेलू उपकरणों के लिये तेजी से ऊर्जा की जरूरते बढ़ रही है। आज विश्व के अधिकांश देश ऊर्जा की जरूरतों को पूरा करने के लिये कोयला, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैसों पर ही निर्भर है।

पर्यावरण की सुरक्षा के लिये विभिन्न सम्मेलनों का आयोजन – 1972– संयुक्त राष्ट्र संघ ने – स्टॉक होम में पर्यावरण सुरक्षा से सम्बन्धित– इसके बाद ही पर्यावरण विश्वव्यापी बना।

1. जून 1992 रियो–डी जनेरियो (ब्राजील) में सम्मेलन।
2. जून 1997– पृथ्वी सम्मेलन।
3. 11 जून 2004 'स्टॉक होम' में 12 खतरनाक जैव कीटनाश्को एवं औद्योगिक प्रदूषण पर रोक का निर्णय।
4. क्योटो प्रोटोकॉल–ग्लोबल वार्मिंग पर नियंत्रण जापान में क्योटो में 11 दिसम्बर 1997 को हस्तांतरित– 'क्योटोसंधि' इस संधि में कार्बन उर्त्सजन करने वाली 6 प्रमुख गैसो–कार्बन डाई आक्साइड, मीथेन, नाइट्रसऑक्साइड, हाइड्राफलोरो कार्बन, परफलोरो कार्बन तथा सल्फर हेक्साफलोराइड के उत्सर्जन को कम करने सम्बन्धी 16 फरवरी 2005 से प्रभावी हो गया।
6. 28 नवम्बर –9 दिसम्बर 2005 मॉट्रियल (कनाडा) में संयुक्त राष्ट्र संघ का 11 वाँ जलवायु परिवर्तन सम्मेलन। इस सम्मेलन में विकसित देशों द्वारा 2012 तक अपने यहॉ ग्रीन हाऊस गैसों में 25– 40 फीसदी कटौती करने, एक पर्यावरण कोष बनाने तथा विकसित तकनीकी हस्तांतरण पर सहमति बनी।
7. 3–14 दिसम्बर 2007 ग्रीन हाउस गैसों से तापमान में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन पर गम्भीर चिन्ता से निपटने के उपायों का प्रयास।
8. 7–18 दिसम्बर 2009– बाली रोडमैप– 2007 कोपेनहेगन8 (डेनमार्क) में जलवायु परिवर्तन पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन। जलवायु परिवर्तन की चुनौती हमारे सामने एक जटिल समस्या के रूप में उपस्थित है। इस पर हम सभी अपने–अपने स्तर से प्रयासरत है। जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिये भारत में 8 मिशन बनाये गये है।

ये मिशन निम्नानुसार हैं –

1. राष्ट्रीय सौर ऊर्जा मिशन–भारत में सौर बिजली सस्ती बनाने पर जोर दिया गया। क्योंकि यहाँ वर्ष भर में 250–300 दिन धूप खिलती है।
2. ऊर्जा क्षमता बढ़ाने से सम्बध्द मिशन–घरों में 13 फीसदी ऊर्जा पैदा की जाएगी।
4. जल संरक्षण मिशन–वर्षा के पानी का संरक्षण कर तथा जरूरी तकनीकी के विकास पर बल दिया जायेगा। रेन वाटर हार्वेस्टिग, एकत्रित आदि के द्वारा जल संरक्षण का प्रयास।
5. हिमालय के लिए मिशन–नदियों की खातिर ग्लेशियरों को पिघलने से बचाना।
6. ग्रीन हाउस मिशन–वनों के विकास पर जोर दिया जायेगा। राष्ट्रीय वन नीतियाँ 33 प्रतिशत भू–भाग को वनाच्छादित होने का लक्ष्य एवं जैव विविधता को बढ़ावा देना।
7. टिकाऊ कृषि मिशन–जलवायु परिवर्तन का सबसे ज्यादा कुप्रभाव कृषि पर ही जनसंख्या का अत्यधिक भार निर्भर है। इससे लगभग 60 प्रतिशत लोगों को रोजगार मिला है।इसलिए मिशन में टिकाऊ कृषि पर जोर दिया गया है।
8. ज्ञान का रणनीति मिशन–जलवायु परिवर्तन के प्रभावों पर उनके खतरों का आंकलन किया जाएगा। इसकी सूचना आम लोगों तक पहुँचाने के लिये तंत्र की स्थापना की जाएगी।

निष्कर्ष – नि:सन्देह दिन प्रतिदिन गर्म होती जा रही धरती खतरे में है और इसी कारण मानव सभ्यता के लिये गम्भीर खतरा पैदा हो गया है। जलवायु परिवर्तन का लोगों , जन्तुओं पशु–पक्षियों के अस्तित्व पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव की अनदेखी नहीं की जा सकती है। जलवायु परिवर्तन सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय पेनल (आई.पी.सी.सी.) की रिपोर्ट का ऑकलन है कि इस सदी में धरती की गर्मी तेजी से परिवर्तन होंगें, ग्लेशियर पिघलने से बाढ़, तूफान एवं शहर डूबेगें। कई जिन्दगियां तबाह होगी। उत्तरी गोलार्द्ध में जहां बाढ़ आएगी वहीं दक्षिणी गोलार्द्ध मे सूखे का प्रकोप होगा। यदि समय हरते इस समस्या पर काबू नहीं पाया गया तो जलवायु परिवर्तन का खतरा बहुयामी होकर हमारे सामने आयेगा जलवायु परिवर्तन सम्बन्धी शिखर सम्मेलनों के आयोजन के साथ साथ हमे इस मुद्दे को सुलझाने का प्रयास गम्भीरता से करना होगा। सरकार को कृषि वन तथा जल सम्बन्धी कार्यो में उचित सामंजस्य स्थापित करना होगा जिससे भौतिकवादी युग में विलासप्रिय वस्तुओं के प्रति बढ़ते आकर्षण और पेड़ पौधों एंव जीवों के प्रति घटते भावनात्मक लगाव के बीच संतुलन स्थापित करना होगा ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. घोरपडे अभिजित–ग्लोबल वार्मिंग, राजेन्द्र प्रकाशन, दिल्ली ।
2. डॉ. उषा मिश्रा–पर्यावरण शिक्षा, न्यू कैलाश प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2008 ।
3. www.globalwaarming-विलीयम यटमन– ग्लोबन वार्मिंग ।
4. Ahuja D.R 1989 Environment Protection Agency Washing ton DC.
5. प्रतियोगिता दर्पण ।
6. दैनिक समाचार पत्र ।

****

पर्यावरण संरक्षण में विद्यार्थियों की सहभागिता

डॉ. दिलीप सिंह मण्डलोई *

प्रस्तावना – मानव सभ्यता के प्रारम्भिक काल में मनीषी, धर्मात्मा, एवं विद्वान, शिक्षक सभी प्रकृति के अधिक पास थे इन विद्वानों ने मनुष्यों को उपदेशों के द्वारा समझाया कि, प्रकृति में प्राप्त संसाधनों का बुद्धिमानी एवं मितव्ययित से उपयोग करों, संरक्षण करों तथा संसाधनों को प्रदूषित मत करो। यह उपदेश अधिक बुद्धिमान थे कि, इन्होंने अपने वैज्ञानिक अवलोकनों को धार्मिक चर्चाओं के द्वारा समझाया। वह समझते थे कि, मानव प्रकृति के प्रति कमजोर है,धर्म ही इनको परिस्थितिकीय तंत्र की स्थिरता को नष्ट करने से बचा जा सकता है यह स्थिति एक लम्बी अवधि तक ठीक चलती रहीं, परन्तु वैज्ञानिक, तकनीकि ज्ञान के विकास के साथ मनुष्य स्वयं के लाभ को इतना महत्व देने लगा कि, धार्मिक भावनाऐं, उपदेश उसके लिए तुच्छ हो गये। पर्यावरण का अधिक दोहन एवं प्रदूषण में इतनी वृद्धि हुई कि, संजीवों की उत्तरजीविता एवं अस्तित्व अधिक संकटमय हो गया।

प्रत्येक व्यक्ति, विधार्थी, सामाजिक कार्यक्रताओं, वैज्ञानिक एवं अनेक संगठनों ने अपने स्तर पर पर्यावरण अवनयन एवं प्रदूषण की समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया जा रहा है।

शोध क्षेत्र का निरुपण – हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से लगभग एक किलोमीटर की परिधि में आने वाले कुल 05 शैक्षिणिक संस्थाओं में अध्ययनत छात्र एवं छात्राएं है जबकि प्राथमिक स्कूल की शैक्षिणिक संस्थाए सम्मिलित नहीं है जो निम्नलिखित है।

1. एच.पी.यूनिर्वसिटी माड़ल स्कूल, समरहील
2. शासकीय मिड़िल, हाई, हायर सैकण्डरी स्कूल, समरहील
3. शासकीय मिड़िल, हाई, हायर सैकण्डरी स्कूल चौड़ा मैदान
4. बैचलर ऑफ टूरीज्म एकेड़मी विश्वविद्यालय कैम्पस, समरहील
5. समस्त स्नातकोत्तर विभाग, एच.पी. विश्वविद्याल, समरहील

शोध अध्ययन की इकाई –

शैक्षणिक संस्थाओं में अध्ययनरत विधार्थी अध्ययन की इकाई है।

अध्ययन का उद्देश्य –

1. पर्यावरण संरक्षण में विधार्थियों के योगदान का अध्ययन करना।
2. पर्यावरण संरक्षण में विधार्थियों द्वारा किये गये कार्यो में आने वाली बाधाओं का अध्ययन करना।
3. पर्यावरण संरक्षण में विधार्थियों द्वारा सकारात्मक एवं नकारात्मक कार्यो का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि –

अनुपाति स्तरित निदर्शन (proportionate stratified sampling) विधि का उपयोग किया गया।

तालिका क्र. 1: विधार्थियों का चयन

क्र.	शैक्षणिक स्तर	संस्था की संख्या	विधार्थियों की संख्या	चयनीत विधार्थी
1	मिड़िल स्कूल	02	450	04
2	हाईस्कूल	02	392	07
3	हायर सै.स्कूल	02	354	10
4	स्नातक	01	330	13
5	स्नातकोत्तर	01	200	12
	योग	08	1696	46

शैक्षणिक स्तर के कुल 08 संस्थाओं में कुल 1696 विधार्थियों की संख्या के अनुसार अनुपातिक प्रतिशत क्रमश: मिड़िलस्कूल 1 प्रतिशत, हाई स्कूल 02 प्रतिशत, हायर सेकण्ड़री स्कूल 03 प्रतिशत, स्नातक 04 प्रतिशत और स्नातकोत्तर 05 प्रतिशत उक्त विधि से कुल 46 विधार्थियों का चयन किया गया।

विश्लेषण- तालिका क्र.2 : पर्यावरण संरक्षरण में योगदान

क्र.	योगदान	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	30	6750
2	नहीं	16	3250
	योग	46	100

उक्त तालिका का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि, 67.50 प्रतिशत विधार्थियों ने पर्यावरण संरक्षण में योगदान दिया है। इनके अनुसार वृक्ष को काटने से बचान, अधिक से अधिक वृक्षारोपण, पौलिथिन उपयोग पर, पानी का सदुपयोग, खेतों में जैविक खाद का उपयोग, वाहन का कम से कम उपयोग आदि पर विशेष बल दिया है। जबकि, 32.50 प्रतिशत विधार्थियों ने जवाब देने में रूचि नहीं दिखाई तथा जानबुझकर उल्टे सीधे जवाब दे रहे थे अर्थात पर्यावरण संरक्षण के संबंध में जागरूक नहीं है।

तालिका क्र. 3 : हाँ तो योगदान के प्रकार

क्र.	योगदान के प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	वृक्ष को काटने से बचाना	10	33.30
2	अधिक से अधिक वृक्षारोपण	09	30.00
3	पानी का सदुपयोग	04	13.33
4	जैविक खाद का उपयोग	03	10.00
5	वाहन का कम से कम उपयोग	02	6.60
6	कुड़ादान का उपयोग	01	3.30
7	पौलिथिन उपयोग प्रतिबंध	01	3.30
	योग	30	100.00

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र) भारत

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि, 33.30 प्रतिशत वृक्ष को काटने से बचाना, 30 प्रतिशत विधार्थियों ने अधिक से अधिक वृक्षारोपण करके उनकी सुरेक्षा भी करना, 13.33 प्रतिशत पानी कासदुपयोग एवं रेन वाटर हारवैस्टिंग लगाकर पानी बड़े-बड़े टैंको में जमा करना, 10 प्रतिशत जैविक खाद का उपयोग खेतों में करना एवं कीटनाशक दवाइयों पर प्रतिबंध लगाना ताकि खेत खलिहान दुरपयोग से बचा जा सके, 6.60 प्रतिशत वाहन का कम से कम उपयोग करना तथा इसके स्थान पर बाइसिकल का प्रयोग करना जिससे व्यक्ति विशेष पर स्वास्थ्य का सकारात्मक प्रभाव भी पड़ेगा, कूडादान का उपयोग एवं पौलिथिन उपयोग पर प्रतिबंध का क्रमश: 3.33, 3.33 प्रतिशत है जो बहुत कम है।

निष्कर्ष-

- पर्यावरण संरक्षण में 67.50 प्रतिशत विधार्थियों ने योगदान दिया है जिसके अनुसार वृक्ष को काटने से बचाना, अधिक से अधिक वृक्षारोपण करना, पानी का सदुपयोग, जैविक खाद का उपयोग, वाहन का कम से कम उपयोग कूड़ादान का उपयोग पौलिथिन उपयोग पर प्रतिबंध आदि दृष्टिकोण व्यक्त किये किये।
- 32 प्रतिशत विधार्थियों ने जवाब देने से रूचि नहीं दिखाई तथा अरूचिपूर्ण उल्टे-सीधे जवाब दे रहे थे अर्थात पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक नहीं है।
- वाहन के स्थान पर साइकिल का प्रयोग करने से व्यक्ति विशेष के स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।
- किटनाशक दवाईयों एवं यूरिया खाद के स्थान पर जैविक खाद का प्रयोग करे ताकि खेत-खलिहान में उर्वरक शक्ति बनी रहै।

सुझाव -

- शैक्षणिक संस्थाओं में रेन वाटर हारवैस्टिंग सिस्टम लगाकर पानी बडे -2 टैंको में एकत्रित करके उसका सदुपयोग करना चाहिए। ऐसा ही प्रयोग के लिए समाज के नागरिको को करके बतलाना चाहिऐं।
- शैक्षणिक संस्थाओं में समय-समय पर शिक्षकों व वैज्ञानिकों द्वारा पर्यावरण संरक्षण पर सेमिनार एवं प्रदर्शनी का आयोजन करते रहना चाहिएं।
- विश्व पर्यावरण दिवस एवं अन्य दिवसों पर वृक्षारोपण करवाना चाहिऐं तथा इसके सम्पूर्ण देखभाल की जिम्मेदारी संबंधित विधार्थियों को दी जानी चाहिए।
- शैक्षणिक संस्थाओं के विधार्थी द्वारा पर्यावरण संरक्षण हेतु समय-समय पर समाज जागरूकता रैलिया आयोजित करते रहना चाहिएं।
- सौर ऊर्जा का अधिक से अधिक उपयोग के लिए प्रोत्साहन एवं बढावा दिया जाना चाहिएं।
- वायु, जल एवं ध्वनी प्रदूषण आदि से होने वालि भयंकर बीमारी एवं नुकसान के प्रति जनजाग्रति फैलाते रहना चाहिएं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाजशास्त्र 2004 (प्रो.ए.एल.गुप्ता एवं डॉ.डी.डी.शर्मा) साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।
2. स्पेक्ट्रम भूगोल 2003 (राजीव अहीर।PS) स्पेक्ट्रम बुक्स प्रा.लि.सी. 3-332 ए, जनकपुरी नई दिल्ली।
3. पर्यावरण अध्ययन तथा पर्यावरण प्रबंधन 2013 (डॉ. शिवानंद गौतम) राम प्रसाद एण्ड संस बाल विहार, हमीदिया रोड़, भोपाल।
4. Environmental planning and management 2005 (D.B.N. Murthy) Deep and Deep Publications PVT LTD F-159 Rajouri Garden New Delhi - 110027

****

महिला सशक्तिकरण एवं मानव अधिकार

डॉ. अभय मुंगी *

प्रस्तावना – जहाँ एक तरफ महिलाओं के अधिकार, समानता और न्याय की लड़ाई में पुरूषों को भागीदार बनाने की कोशिश हो रही है। वहीं भारतीय पुरूषों में रूढ़ीवादी सोच का बढ़ना बहुत चिंताजनक तथ्य है। भारत में स्त्री को देवी का दर्जा दिया जाता है, तथा उसे घर में लक्ष्मी कहा जाता है। यहां तक कि आज भी बिना स्त्री के कोई भी सामाजिक या धार्मिक कार्य पूर्ण नहीं माना जाता। यदि हम पुराण ग्रन्थों की बात करे तो नारायण के पहले लक्ष्मी, शिव के साथ पार्वती, राम के साथ सीता को सिंहासन पर समान अधिकार से बैठाया गया है।

समय आगे बढ़ा कई राष्ट्र साम्राज्यवादी शक्तियों से स्वतंत्र हुए। कई राष्ट्रो ने अपने विकास के लिए वैश्वीकरण और भूमण्डलीकरण को अपनाया। शिक्षित लोगों ने अपनी स्थिति मजबुत बना ली और भौतिक सुख सुविधाओं के लिए हमने महिलाओं की बलि चढ़ाकर उन्हें घर की चार दिवारी में रहने को मजबुर कर दिया।

आज 21 वीं सदी में प्रत्येक राष्ट्र सभ्य होने का दावा कर रहा है अधिकतर राष्ट्र लगभग सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक दृष्टि से स्वतंत्र हो चुके है। किंतु स्त्री का शोषण आज भी जारी है। न केवल जारी है अपितु लगातार बढ़ता जा रहा है। हम और हमारा समाज आधुनिकता की और बढ़ रहा है, इसी आधुनिकता की अंधी दौड़ में महिलाओं की इज्जत तार – तार होती जा रही है। भारत में महिलाओं की स्थिति की बात की जाए तो विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि लोग अब लड़कियों को आगे बढ़ाना चाहते है, आज स्कूल, कालेजों में लड़कियों की संख्या पहले की अपेक्षा बढ़ी है।

किंतु अपराध भी उस अनुपात में और ज्यादा बढ़ रहे है। और तो और महिलाओं के साथ हो रहे दुष्कर्म में 94 प्रतिशत उनके सगे संबंधी, मित्र, पड़ोसी ही होते है। विश्व की गरीब 7 अरब जनसंख्या में आधी आबादी महिलाओं की है। यहाँ हर तीन में से एक महिला हिंसा का शिकार होती है। कुल मिला कर हिंसा का शिकार होने वाली महिलाओं की संख्या 2 अरब से अधिक है। इस संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष और इन्टरनेशनल सेन्टर फार्म रिसर्च ऑन वुमन द्वारा हाल ही में जारी एक सर्वे के मुताबिक दस में से छ: पुरूषों ने माना की वे अपना दबदबा कायम रखने के लिये अपनी पत्नी या पार्टनर के साथ हिंसा करते हैं। उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, हरियाणा, उडीसा, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के 9200 पुरूषों तथा 3200 महिलाओं पर हुए सर्वे के अनुसार 52 प्रतिशत महिलाओं ने माना कि उनके साथ कभी न कभी हिंसा हुई है। प्रत्येक तीन में से एक पुरूष अपनी पत्नी को उसकी इच्छा के कपड़े पहनने की इजाजत नहीं देता। जबकि तीन में से दो पुरूषों ने माना कि महत्वपूर्ण फैसलों में उनकी राय पत्नी से अधिक महत्व रखती है। सर्वे में पंजाब में ऐसे युवक मिले जो बुजुर्ग पुरूषों की तुलना में अपने बर्ताव में महिलाओं के प्रति अधिक कठोर थे।

अब सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि जब महिला पुरूष के साथ कंधे से कधां मिलाकर समाज निर्माण का कार्य कर सकती है तो फिर वह किसी भी हवस का शिकार क्यो हो ? आधुनिकीकरण का दौरा महिलाओं की अस्मिता के लिए खतरा है। यदि हम अपने संस्कार और संस्कृति को पीछे छोड़ेंगे तो आगे कभी नहीं बढ़ पाएंगे।

ऐसा स्थिति में वह असहाय और दयनीय क्यों नजर आती है ? इसलिए आवश्यकता है महिलाओं को सशक्त बनाने की, उसके सशक्तिकरण की दिशा में ठोस कोशिश, करने की आवश्यक है कि महिलाओं के मानव अधिकारों को कठोरता से पालन करवाया जाये।

महिला सशक्तिकरण एवं मानव अधिकार – 10 दिसम्बर 1948 को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों की घोषणा की गई। स्त्री पुरूष दोनों के लिए 30 से अधिक प्रकार के अधिकारों की विवेचना की गई। अर्थात 66 वर्ष पूर्व पुरूषों के साथ साथ महिलाओं को भी कुछ अधिकार दिये गये थे, फिर भी इनका शोषण जारी है। इन्हें दिये गये अधिकार व्यवहारिक रूप से निष्क्रिय रहें। क्योंकि इन अधिकारों का कानून का दृष्टि से सशक्त रूप से लागु न किया जाना है।

UNO के संविधान में मानवाधिकारों की चर्चा तथा स्त्री पुरूषो को समान अधिकार प्रदान करने की बात कही गई है।

सन 1948 के घोषणा पत्र के अनुच्छेद 2, 16(1) , 26(1) में महिलाओं के प्रति अधिकार प्रदान करने की कोशिश की गई है।

UNO की महासभा में 1975 को अर्न्तराष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया ताकि महिलाओ के विकास तथ उत्थान के प्रति चेतना जाग्रत हो सके। 1975 से 1995 तक विश्व महिला सम्मेलन कार्यक्रम की शुरूआत की। ताकि महिलाऐं अपने अधिकारों के प्रति सजग और जाग्रत हो सके। किन्तु इनका पालन कितना हुआ है यह देखने और समझने की बात है। उन्हें यदि सशक्त बनाना है। तो महिलाओं को अपनी आत्मशक्ति को पहचानना होगा। केवल कानुन बना दिये जाने से और कागज पर लिख देने मात्र से महिलाए सशक्त नही होगी। जरूरी है, समाज में नारी को उनके अधिकारों के लिए पुरूष प्रधान समाज उनको प्राप्त कराने में वैसी संस्थाओं का निर्माण करें। महिलाओं की समस्याओं का तुरन्त समाधान करें कह सकते है कि महिलाऐं तभी सशक्त हो सकेगी जब उन्हे आत्म निर्भर बनाकर जीने का अवसर दिया जाएगा और जब महिलाऐं अपने स्वयं के मन से स्वतंत्र होगी। यानी महिलओं का सशक्तिकरण कौन करेगा? क्या कोई ओर आकर करेगा? नहीं यह काम स्वयं नारी शक्ति को ही करना होगा। पिछले दिनों विश्व के 94 देशों के करीब 1000 मानवाधिकार कार्यकर्ता, इस बात पर सहमत थे कि पुरूष और महिलाओं को अब पितृ सत्ता को खत्म कर ऐसे पुरूषत्व को अपनाना होगा, जो महिला और पुरूष को साथ चलने और उन्हें एक–दूसरे का पूरक बनाने में मदद करे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योजना
2. कुरूक्षेत्र
3. नारी सशक्तिकरण विमर्श व यथार्थ
4. प्रतियोगिता दर्पण
5. विभिन्न समाचार पत्र पत्रिकाए
6. विभिन्न इंटरनेट वेबसाइट

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत

Water Management in GhateraBabaji Minor Irrigation Project

Rakeshkumar Turkar* R.K. Nema R.N. Shrivastava*** Y.K. Tiwari******

Introduction - Considering the importance of irrigation management and the water user's participation in increasing water productivity and the development of existing irrigation command area, this study was carried out to assess the present irrigation system of command area and to perform diagnostic study for the possible improvement in command area of Ghatera Babaji tank canal situated in Betwa River basin.

The project has a gross command area of 147 ha out of which CCA is 127 ha. Irrigation is supplied during Rabi season in about 121 ha. Main canal is 1360 m long with a slope of 1 in 1000. The command area has 101 land holdings. The major crop of the area is Wheat followed by small area under Gram and Vegetable during Rabi, whereas, Soybean is grown during Kharif season. Discharge measured in main canal varies from 0.066 m^3/sec at head reach to 0.013 m^3/sec at tail reach. Discharge reaching to farmer's field is changing from 3.82 to 5.36 lps. Seepage losses in main canal are measured to be 38.83 m^3/ Mm^2 to 16.04 m^3/ Mm^2 wetted area. Overall irrigation efficiency is computed to be 35 per cent. Depending on the soil, crop, water resources, water users and climatic conditions improvements were suggested to change irrigation method, replacement of crop varieties, better working of water user association, irrigation scheduling, drainage planning, maintenance of canal, operation of canal, and adopting full package for crop practices. Response of all 71 farmers was registered on the improvements proposed and adaptive planning was prepared for improving water productivity of the GBT command. Results obtained in the study area.

Materials and Method

Study area - The study has been undertaken in the command area of GhateraBabaji tank canal, a minor irrigation project located at Ganjbasoda, Vidisha district, Madhya Pradesh. The dam is situated on local nalla, a tributary to Betwa River. The GhateraBabaji dam can be approached from Basoda city, a tehsil head quarter and is located about 22 km of Basoda town. The site is approachable from Basoda-Sagar road. Command area of GhateraBabaji Tank canal lies between 23°48'00"N and 78°07'00"E respectively . Canal is 1360 m long.

The climate of study area is characterized by a hot summer and general dryness except during southwest monsoon season. The normal maximum temperature received during the month of May is 41.7°C and minimum during the month of December is 8.9°C. The relative humidity generally exceeds 94% (August month). In rest of the year it is drier. The wind velocity is higher during the pre-monsoon period as compare to post monsoon period. The maximum wind velocity is 11.2 km/hr as observed during the month of June and is minimum of 1.5 km/hr during the month of December. Average annual normal wind velocity of study area is 5.3 km/hr. The average annual rainfall of vidisha district is 1375 mm.

Ghatera Babaji Tank - This project was constructed in year 1970 to irrigate 65 hectares of Rabi crop through unlined canal structure but it is providing irrigation to 110 ha of land with 100 ha during Rabi and 10 ha during kharif season. Table 1 presents the general features of the project.

* M.Tech Student, Soil and Water Engineering department, CAE, JNKVV, Jabalpur (M.P.) INDIA
** Professor, College of Agricultural Engineering, JNKVV, Jabalpur (M.P.) INDIA
*** Associate Professor, College of Agriculture JNKVV, Ganjbasoda (M.P.) INDIA
**** Associate Professor, College of Agricultural Engineering, JNKVV, Jabalpur (M.P.) INDIA

Fig. 1 Location map of study area under Ghatera Babaji minor tank irrigation project

Table 1 Salient features of Ghatera Babaji minor tank project

S.	Features	
	Location of dam site	
1	Longitude	78°07'00"
2	Latitude	23°48'00"
	Reservoir details	
1	Catchment area	1.165 sq. km.
2	Gross storage capacity	0.650 M cum
3	Live storage capacity	0.605 M cum
4	Dead storage capacity	0.043 M cum
5	Full tank level	30.175 m
	Dam	
1	Length	1380 m
2	Height	4.22 m
3	Top width	3.0 m
4	Length of waste-weir	74.5 m
5	Design discharge of waste-weir	21.7 cumec
	Canal	
1	Length of main canal	1360 m
2	Highest elevation	440 m
3	Lowest elevation	431 m
4	Sluice gate type	well type sluice
	Area commanded	
1	Gross command area	147 ha
2	Culturable command area	120 ha
3	Forest area	7 ha

Crops - The major crops grown in the command area during Rabi season are wheat, gram, mustard and some vegetables. In Kharif season the main crop is soybean. Information of sowing and harvesting of different crops, their duration, crop stage which need irrigation, root zone depth of crop of the study area were collected from the different source including contacts with the local farmers and revenue records of the village.

Soils - The command area has black soil with high clay content having patches of loam near streams.

Water resources - Tank or reservoir was designed to irrigate 65 ha command area of Ghatera Babaji. But at present 121 ha area is irrigated with 2-3 irrigation.

Soil properties - The common soil found in the area is clay loam (black cotton soil) with plots of loamy texture. Physical properties such as texture, bulk density, moisture status of the soil were determined by taking appropriate soil sample from the GhateraBabaji minor command.

Irrigation Water availability - Irrigation water availability at canal was determined. Volume of water available at head, middle and tail reach of canal was computed. Availability of water through well was also determined.

Irrigation method - Irrigation in almost entire command is done by the surface method. Irrigation water is applied by flooding from a channel located at the upper reach of a field. Farmers of Ghatera Babaji minor command use free flooding.

Table 2 List of outlets of main canal

S.	No. of outlets	R.D. (m)	Area in command (ha)
1	Right side	6	39
2	Right side	420	2
3	Right side	460	4
4	Right side	620	5
5	Left side	655	9
6	Right side	717	6
7	Left side	927	6
8	Right side	1037	10
9	Left side	1097	12
10	Right side	1217	8
11	Left side	1320	9
12	Right side	1335	6
13	Right side	1360	5

Plate.1 Free flooding surface irrigation in the GBT irrigation project

Discharge measurement - Discharge of canal was estimated by velocity area method. Cross sectional area, velocity of flow and depth of flow were measured at head, middle and tail reach. Velocity of flow was measured with the help of current meter in main canal, where as float area method was applied in field channels**.** meter was submerged in canal at 1/3 rd position. Velocity was measured at different depth and different section of main canal.

Plate.2 Measurement of canal water flow velocity in head reach

Results And Discussion - Characteristics of present irrigation system including the water users, irrigation demand and supply scenario, production and productivity of crops, water productivity in different reaches of canal and farmers or water user's attitude toward farming practices are presented here along with possible improvements in the irrigation system to increase water productivity.

Soil characteristics - Soil sample were collected from three locations situated at (head, middle and tail) reach of project area. Mechanical analysis was performed for textural classification. From the U.S.D.A. textural classification of the soil, the surface texture of majority of areas varied from clay to clay loam. The analysis showed that the clay content of the soils ranged from 39.52 to 43.25% (Table 3).

Table 3 - Soil texture in command Area

S.	Location	% clay	% silt	% sand	Classif-ication	Bulk density, g/cm^3
1.	Head	39.52	27.82	32.65	Sandy clay loam	1.21
2.	Middle	40.82	35.21	28.65	Silty clay loam	1.17
3.	Tail	43.25	25.32	33.21	Clay loam	1.20

The values of bulk density obtained at different reach vary from 1.21 g/cm^3 at head reach and 1.17 g/cm^3 at middle reach.

Crops grown - Wheat is the major Rabi crop grown in the command. Table 4 gives the area under different crops, irrigated area and their coverages in the command of GBT project. All the cultivated area is under irrigation during Rabi season, whereas, only 8.3 percent of the Soybean area receives irrigation during Kharif season.

Table 4 (see in last page)

Present irrigation system

Water resource assessment - Table 5 shows the cross section and velocity in main canal in the tank irrigated area. This is 1360 m long with a slope of 1 in 1000 and having a velocity of flow as 0.63 m/s on an average.

Table 5 (see in last page)

Water availability - Discharge was measured at different reach of the main canal and is presented in Table 6. Average discharge measured in head, middle and tail reach of GhateraBabaji tank outlet main canal was observed as 0.066 m^3/s which decreases to 0.013 m^3/ sec in tail reach. It also presents the total volume of water available.

Table 6 (see in last page)

Considering that canal is operating for 10 hr/day for 110 days. It was observed that the water availability through main canal decreases in tail reaches. The deficit of irrigation water is supplemented by the well water at tail end. The farmers are using well water mainly in the Rabi season. Total 475200 m^3 water is available at different reaches of canal. Canal operates 110 days in 4 month. Monthly water releases are presented in Table 7. The volume of water available at each field was assessed by measuring discharge near the field and observing time to irrigate the area under crop.

Table 7 - Monthly water releases to canal

S.	Month	Volume released, m^3
1	November	47520
2	December	95040
3	January	91080
4	February	86328
	Total	321968

Seepage losses from main canal - A seepage loss from various section of canal was measured and is presented in Table 8**.** The observed seepage rate from main canal is 38.33 m^3/ M m^2 at head reach, 32.72 m^3/ M m^2 at middle reach and 16.04 m^3/ M m^2 wetted area at tail reach. The depth of flow varies from 0.28 to 0.32 m in different reach of main canal. The velocity of flow varies from 0.63 to 0.34 m/sec at various sections of main canal. (The wetted area varies from 498.57 to 652.15 m^2).

Table 8 (see in last page)

Suggestive irrigation plan for GBT irrigation project - There is need to improve the irrigation system of GBT command area by improving the physical status of system and crop water management. Following are the suggestive majors to improve the irrigation system.

1. Compaction of earth work at optimum moisture content by light roller.
2. Collection, stacking and spreading hard moorum on earth embankment.
3. Increase reservoir storage capacity and decreased water logging problem near tank.
4. Cleaning the silt for approach to sluice.
5. Proper delivery of water from reservoir to canal and operation of gate in full mode.
6. Adoption of border irrigation to get higher efficiency as compare to free flooding.
7. Reducing loss of water through improved management.
8. Increase water conveyance efficiency of canal.

Conclusions - Based on the diagnostic analysis of GBT

irrigation project, possibility of improvements and adoptability of farmers following conclusions may be drawn for the study.

1. The overall irrigation efficiency of 35 per cent needs to be improved.
2. Improved irrigation methods namely border and sprinkler are to be adopted to improve application efficiency from 66% to 80%.

Survey Performa used at GB minor project

1. Name of water user association-
2. Name of farmer
3. Situation of farm at canal- Head reach, Middle reach, Tail reach
4. Size of land holding
5. Crops and cultivation practices :

Crop	Rabi crops	Kharif crops
Variety		
Date of sowing		
Seed rate		
Yield		
No. of irrigation		
Source of irrigation		
Method of irrigation		

6. Irrigation details

Irrigation	Day	Hours	Discharge	Depth
First				
Second				
Third				
Fourth				

7. Power source for irrigation- Diesel / Electricity
8. Source of water - Well/ tube well/pond
9. Distribution of water: - a) full b) half c) 1/3
10. Irrigation interval - 20 Days/ 15 days/ 7 days/ 4 days
11. In canal irrigation:

a) Do you pay irrigation charges- yes/No

b) How much amount paid per year -

12. Income of the farmer- Low/ medium/ high
13. Education of farmer- Primary/ middle/ high school/ graduation
14. Charge of electricity paid –
15. Depth of water in nearest well:-

After irrigation	First	Second	Third	Fourth
Depth (m)				

16. Do you collect canal water at different place- yes / no
    If yes, so where Pond/ farm lower/ region
17. Age of the farmer-
18. Khasra no. ——————————————————

Table 4 - Crops in GBT irrigation project

S.	Crops	Area cultivated, ha	% of cultivated area	Area irrigated, ha	% of cultivated area irrigated
1.	Wheat	117.1	79.7	117.1	100.0
2.	Gram	2.7	1.8	2.7	100.0
3.	Vegetables	1.0	0.6	1.0	100.0
4.	Soybean	119.2	0.8	10.0	8.3

Table 5 - Details of main canal in GhateraBabaji tank command area

Length, m	BedWidth, m	Slope	Side slope (H:V)	Depth of flow, m	Velocity of flow, m/s	Lowest Elevation, m	Highest Elevation, m
1360	0.30	1:1000	1.5:1	0.31	0.63	431	440

Table 6 - Water availability in different reach of main canal under GhateraBabaji Tank command

Reach	Velocity of flow, m/sec	Measured discharge, m^3/s	Designed discharge, m^3/s	Volume available, m^3
Head	0.63	0.066	0.071	261360
Middle	0.60	0.041	0.043	162160
Tail	0.34	0.013	0.014	51480
Total				475200

Table 8 - Measurement of seepage rate from various section of canal

S.	Location	Bed width, m	Flow depth, m	Side slope H:V	Wetted area, sq. m.	Seepage rate, m^3/ M. sq. m.
1	Head	0.3	0.31	1.5:1	652.15	38.33
2	Middle	0.3	0.28	1.5:1	550.01	32.72
3	Tail	0.3	0.25	1.5:1	498.57	16.04

****

भारत में म्यूचुअल फंड में विनियोग के अवसर और उपयोगिता

डॉ. बालमुकुन्द बघेल*

शोध सारांश – भारत में आज के समय में निवेशकों के पास अपनी बचत में अच्छा रिटर्न हासिल करने के लिए म्यूच्यूअल फंड एक बढ़िया विकल्प बनकर उभरा है क्योंकि इक्विटी और डेब्ट दोनो प्रकार के साधन उपलब्ध है। हालाकि आज भी विदेशी खुदरा निवेशकों की तुलना में म्युच्यूअल फंड में पैसा लगाने वाले व्यक्तियों की सॅख्या कम है इसका मूल कारण सही जानकारी की कमी है। देश के ज्यादातर निवेशक अभी भी फिक्सड डिपॉजिट को ही चुनते है यदि धीरे धीरे आम ग्रामीण जन को इसकी उपयोगिता और मौजूद अवसरों से अवगत कराया जाए तो निश्चित रूप से निवेशकों की रूचि बढ़ेगी ओर भारत देश के ज्यादा से ज्यादा निवेशकों के इस उपकरण का फायदा ले पाऐगे। इस शोध पत्र में अध्ययन के दौरान लेखक ने विभिन्न अध्ययन किए है। लेखक स्वॅय पिछले कई वर्षो से एक खुदरा निवेशक के रूप में पूॅजी बाजार ओर शेयर बाजार एनएसई और बीएससी से जुड़ा हुआ है तथा स्वयं का निवेश भी म्यूच्यूअल फंड की विभिन्न स्कीमों में किया हुआ हे ओर इस विषय पर लगातार अध्ययन/अध्यापन कर रहे है। इसलिए इसमें अपने पूरे अनुभव को साझा करने का प्रयास किया गया है।

शब्द कुॅजी – फंड, इक्विटी, डेब्ट, स्टॉक मार्केट, रिटर्न, निवेश, निवेशक, प्रबंधक, पोर्टफालियों शेयरधारक।

प्रस्तावना – तेजी से बढ़ती भारतीय अर्थव्यवस्था म्यूच्यूअल फंड उद्योगों के लिए अपार संभावनाऐं प्रदान करती है। विकसित दुनिया और अन्य उभरते बाजारों के अनुभव से पता चला है कि जीडीपी/बचत में म्यूच्यूअल फंड निवेशका हिस्सा पिछले कुछ वर्षो में काफी बढ़ा है। यह विभिन्न कारकों के संयोजन के माध्यम से संभव हुआ है जिसमें निवेशक जागरूकता,उत्पाद नवाचार, वितरण की मजबूती ओर बाजार के बुनियादी ढॉचे की गुणवत्ता शामिल है।

म्यूच्यूअल फंड क्या है – म्यूच्यूअल फंड एक प्रकार का वित्तीय वाहन है जो कई निवेशकों से स्टॉक, बॉण्ड, मनी मार्केट इंस्ट्रूमेंट्स ओर अन्य परिसंपत्तियों में निवेश करने के लिए एकत्र किए गये धन के एक पूल से बना होता है। म्यूच्यूअल फंड के पोर्टफोलियों को इसके प्रॉस्पेक्टस में बताए गये निवेश उद्देश्यों से मेल खाने के लिए संरचित और बनाए रखा जाता है। म्यूच्यूअल फंड छोटे या व्यक्तिगत निवेशकों को इक्विटी फंड और अन्य प्रतिभूतियों के पेशेवर रूप से प्रबंधित पोर्टफोलियों तक पहुॅच प्रदान करते है। इसलिए प्रत्येक शेयरधारक फंड के लाभ या हानि में आनुपातिक रूप से भाग लेता है। म्यूच्यूअल फंड बडी सॅख्या में प्रतिभूतियों में निवेश करते है, और प्रदर्शन को आमतौर पर फंड के कुल मार्केट कैप में बदलाव के रूप में ट्रेक किया जाता है – जो अंतर्निहित निवेश के समग्र प्रदर्शन से प्राप्त होता है।

म्यूच्यूअल फंड की उपयोगिता एवॅ अवसर – म्यूच्यूअल फंड निवेशकों के बीच एक लोकप्रिय विकल्प है क्योंकि वे आमतौर पर निम्नलिखित विशेषताऐं प्रदान करते है :–

1. **व्यावसायिक प्रबंधन –** फंड मैनेजर आपके लिए रिसच करते है। वे प्रतिभूतियों का चयन करते है ओर प्रदर्शन की निगरानी करते है।
2. विविधीकरण या अपने सभी अंडे एक टोकरी में रखे। म्यूच्यूअल फंड आमतौर पर कई कंपनियों ओर उद्योगों में निवेश करते है। यह आपके जोखिम को कम करने में मदद करता है यदि एक कंपनी विफल हो जाती है।
3. **वहनीयता –** अधिकांश म्यूच्यूअल फंड प्रारंभिक निवेश ओर बाद की खरीद के लिए अपेक्षाकृत कम राशि निर्धारित करते है मात्र 500 रूपये से व्यक्ति निवेश की शुरूआत कर सकता है।
4. म्यूच्यूअल फंड निवेशक अपने शेयरों को किसी भी समय,मौजूदार नेट एसेट वैल्यू (एनएवी) और आसानी से भुना सकते है। इसके लिए उन्हे नाममात्र का शुल्क या फीस चुकानी होती है।
5. **कर दक्षता –** ईएलएसएस नाम टैक्स–सेविंग म्यूच्यूअल फंड में निवेश कर सकते है जो आयकर अधिनियम 1961 की धारा 80 सी के तहत् प्रति वर्ष 1.5 लाख रूपये तक कर कटौती के लिए योग्य है।
6. विभिन्न म्यूच्यूअल फंडों के व्यय अनुपात की जॉच कर सकते है और सबसे कम व्यय अनुपात वाला एक चुन सकते है। एक्सपेंस रेश्यों म्यूच्यूअल फंड को मैनेज करने का शुल्क है।
7. **स्वचलित भुगतान –** एसआईपी में देरी या किसी कारण से निवेशस्थगित करना आम बात है। आप एसआईपी मैडेंट जमा करके अपने फंड हाउस या एजेंट के साथ पेपरलेस ऑटोमेशन का विकल्प चुन सकते है, जहॉ अपने बैंक खाते को देय होने पर स्वचलित रूप से एसआईपी राशि काटने का निर्देश देते है।
8. **आपके वित्तीय लक्ष्यों के अनुकूल है –** भारत में कई प्रकार के म्यूच्यूअल फंड उपलब्ध है, जो जीवन के सभी क्षेत्रों के निवेशको की जरूरतों को पूरा करते है। कोई फर्क नही पड़ता है कि आपकी आय कितनी है, आपको निवेश करने के लिए कुछ राशि (हालॉकि छोटी) अलग रखने की आदत बनानी चाहिए। आय,समय,सीमा,निवेश लक्ष्यों ओर जोखिम उठाने की क्षमता से मेल खाने वाला म्यूच्यूअल फंड ढूढ़ना।
9. **पूॅजी बाजार का समर्थन –** म्यूच्यूअल फंड से जुटाया गया पैसा पूॅजी बाजार के विभिन्न इंस्ट्रूमेंट्स जैसे बॉण्डस, शेयर,प्रतिभूति में लगता है जिससे पूॅजी बाजार को समर्थन मिलता है।
10. **सुरक्षा –** एक सामान्य धारणा है कि म्यूच्यूअल फंड बैंक उत्पादों की तरह सुरक्षित नही है। यह एक मिथक है क्योंकि फंड हाउस सख्ती से सेबी ओर

* वरिष्ठ व्याख्याता (एम0ओ0एम) शासकीय पॉलीटेक्निक महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

एएमएफआई जैसे वैधानिक सरकारी निकायों के दायरें में है। सेबी से फंड हाउस ओर एसेट मैनेजर की साख को आसानी से सत्यापित किया जा सकता है। उनके पास एक निष्पक्ष शिकायत निवारण मंच भी है जो निवेशकों के हित में काम करता है।

म्यूच्यूअल फंड के प्रकार – भारत में सबसे लोकप्रिय प्रकार के म्यूच्यूअल फंड नीचे सूचीबद्ध है :-

1. इक्विटी फंड
2. ऋण निधि
3. मुद्रा बाजार फंड
4. इंडेक्स फंड
5. बैलेंस्ड फंड
6. आय निधि
7. निधि का कोष
8. स्पेषलिटी फंड

देश की परिसंपत्ति प्रबंधन कंपनियों द्वारा कई अन्य प्रकार के फंड की पेशकश की जाती है। हमने इसे नीचे के अनुभागों में संरचना,परिसंपत्ति वर्ग, निवेश उद्देश्य, विशेषता और जोखिम के आधार पर अलग किया है।

संरचना के आधार पर म्यूच्यूअल फंड के प्रकार –

1. Open –Ended Funds – ये वे फंड है जिनमें इकाईयॉ साल भर खरीद या मोचन के लिए खुली रहती है। इन फंड यूनिटों की सभी खरीद/मोचन मौजूदा एनएवी पर किए जाते है। मूल रूप से ये फंड निवेशकों को जब तक चाहें निवेश करने की अनुमति देगे। फंड में कितना निवेशें किया जा सकता है इसकी कोई सीमा नही है। इसका मतलब यह है कि निवेशक जब चाहें अपने फंड को निकाल सकते है और इस तरह उन्हें अपनी जरूरत की लिक्विडिटी दे सकते है।

2. Close –Ended Funds – ये वे फंड है जिनमें यूनिट्स को शुरूआती ऑफर पीरियड के दौरान ही खरीदा जा सकता है। इकाइयों को एक निर्दिष्ट परिपक्वता तिथि पर भुनाया जा सकता है। तरलता प्रदान करने के लिए, इन योजनाओं को अक्सर स्टॉक एक्सचेंज में व्यापार के लिए सूचीबद्ध किया जाता है। ओपन एंडेड म्यूच्यूअल फंड के विपरीत, एक बार यूनिट या स्टॉक खरादे जाने के बाद,उन्हें म्यूच्यूअल फंड को वापस नहीं बेचा जा सकता है, इसमे बजाए उन्हें निवेशकों निवेशकों शेयर बाजार के माध्यम से शेयरों की मौजूदा कीमत पर बेचा जाना चाहिए।

3. इंटरवल फंड – ये ऐसे फंड होते है जिनमें ओपन-एंडेड और क्लोज एंडेड फंड की विशेषताऐं होती है, जो फंड की अवधि के दौरान अलग-अलग अंतराल पर शेयरों की पुनर्खरीद के लिए खोले जाते है। फंड प्रबंधन कंपनी इन अंतरालों के दौरान मौजूदा यूनिटधारको से इकाईयॉ को पुनर्खरीद करने की पेशकश करती है। यदि यूनिट धारक चाहें तो फंड के पक्ष में शेयरों को बेच सकते है।

परिसंपत्ति वर्ग के आधार पर म्यूच्यूअल फंड के प्रकार :

1. इक्विटी फंड – ये ऐसे फंड होते है जो कंपनियों के इक्विटी शेयरों/ श्शेयरों में निवेशकरते है। ये उच्च जोखिम वाले फंड माने जाते है लेकिन उच्च रिटर्न भी प्रदान करते है। इक्विटी फंड में कुछ नाम रखने के लिए इंफ्रास्ट्रक्चर,फास्ट मूविंग कंज्यूमर गुड्स और बैंकिग जैसे स्पेशलिटी फंड शामिल हो सकते है।

2. डेट फंड – ये ऐसे फंड है जो डेट इंस्ट्रूमेंट्स में निवेश करते है। कंपनी डिबेंचर, सरकारी बॉण्ड और अन्य निश्चित आय संपत्ति । उन्हें सुरक्षित निवेश माना जाता है और सुरक्षित निवेश माना जाता है और निश्चित रिटर्न प्रदान करते है। ये फंड स्त्रोत पर कर नही काटते है, इसलिए यदि निवेश से कमाई 10000 रूपये से अधिक है तो निवेशक स्वॅय उस पर कर का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है।

3. मनी मार्केट फंड – ये ऐसे फंड है जो लिक्विड इंस्ट्रूमेंट्स में निवेश करते है- उदाहरण टी बिल, सीपी आदि। मुद्रा बाजारों को नकद बाजार के रूप में भी जाना जाता है और ब्याज जोखिम, पुनर्निवेश जोखिम और क्रेडिट जोखिम के संदर्भ में जोखिम के साथ आते है। उन्हें सुरक्षित निवेशमाना जाता है।

4. बैलेन्स्ड या हाइब्रिड फंड – ये ऐसे फंड होते है जो कई तरह से एसेट क्लॉस में निवेश करते है। कुछ मामलों में, इक्विटी का अनुपात ऋण की तुलना में अधिक होता है जबकि अन्य में यह विपरीत होता है। इस तरह से जोखिम और रिटर्न को संतुलित किया जाता है।

सही म्यूच्यूअल फंड कैसे चुनें – बाजार में कई अलग-अलग प्रकार के म्यूच्यूअल फंड उपलब्ध होने के कारण, विशिष्ट निवेश आवश्यकताओं के लिए सबसे उपयुक्त किसी एक को चुनना आसान काम नही है। इस संबंध में सबसे सरल सलाह दी जा सकती है कि पहले अपनी जरूरतों को समझें। अगला कदम यह पता लगाना होगा कि आपका लक्ष्य क्या है? क्या यह धन का निर्माण जल्दी,मध्यम गति से या धीमी गति से करना है। एक बार यह तय हो जाने के बाद अंतिम मुख्य बात जिस पर विचार करना है वह जोखिम है जिसे व्यक्ति लेने को तैयार है। सबसे अधिक जोखिम वाले फंडो से आने वाले उच्चतम रिटर्न को सामान्य रूप से देखा जाता है। इसलिए यदि निवेशक जल्दी से रिटर्न चाहतें है और जोखिम लेने को तैयार है तो इसके लिए निवेशक को ऐसे फंड चुनना चाहिए। यदि आपका उद्देश्य धीरे-धीरे धन का निर्माण करना है तो मध्यम या निम्न जोखिम वाले म्यूच्यूअल फंड में जाना आर्दश है। चूकि म्यूच्यूअल फंड हमेशा उनके साथ जुडे जोखिम के कारक के साथ आते है, चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो, यह जरूरी है कि निवेशकों निवेश करने से पहले अपने पॉलिसी दस्तावेंजो को ध्यान से पढ़ें। यह सुनिश्चित करने के लिए दस्तावेज को पढ़ना भी एक अच्छा विचार होगा कि वे निवेशक, ठीक-ठीक समझ गये है कि उन्होंने क्या निवेश किया है और वे सभी सुविधाऐं जो उस निवेश के साथ उन्हें उपलब्ध है।

निष्कर्ष – यह बात महत्वपूर्ण है कि आर्थिक उदारीकरण की नीति 1991 में अपनाने के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था को गति मिली है। जिसका प्रभाव धीरे धीरे पूॅजी बाजार में रिटर्न के रूप में नजर आता है। म्यूच्यूअल फंड निवेश का बेहतर विकल्प है और इसमें अनेक अवसर और मौजूद है। फंडो के अनेक प्रकार निवेशक के अनुसार प्रचलित और डिजाईन किए जाते है। फंड मैनेजर का हमेशा प्रयास रहता है कि वह अपने निवेशकों को ज्यादा से ज्यादा रिटर्न दिलाऐं क्योंकि इससे उसके फंड के साख में भी वृद्धि होती है। विशेषज्ञ की सलाह लेकर म्यूच्यूअल फंड में विनियोग एक बेहतर विकल्प आम निवेशकों के लिए उपलब्ध है। एक बात जरूर ध्यान देने योग्य है कि निवेश दीर्घकालिक अवधि के लिए किए जाने ज्यादा से ज्यादा रिटर्न मिलने की गुजाईश रहती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Money Bhasker: https://money.bhaskar.com
2. The Economic Times: https://economictimes.india

times.com/hindi
3. Moneycontrol: https://www.moneycontrol.com
4. Business Standard: https://www.business-standard.com
5. Wikipedia: https://en.wikipedia.org/wiki/Capital_market
6. Securities and Exchange Board of India: https:/// www.sebi.gov.in
7. NSE: https://www.nseindia.com
8. BSE: https://www.bseindia.com

****

Analysis of Mental Toughness (Fortitude) of International Badminton Players from Different Countries

Dr. D.C. Maurya*

Abstract - The purpose of the study was to analyse the Mental toughness (Fortitude) of international Badminton players from different countries. The study was restricted to 42 international badminton players from different countries. All were international level players from various countries i.e. India, Denmark, Russia, Malaysia, Indonesia and Thailand. The data collected of Mental toughness (Fortitude) of international badminton players from Yonex - Sunrise India Open 1-6 April 2014 and Mental toughness (Fortitude) was assessed with help of Alan Goldberg's questionnaire of Mental toughness (Fortitude) . In order to computed data one- way analysis was employed, the level of significance was chosen at 0.05. The result from the data revealed that there was not significant difference in Mental toughness (Fortitude) of international players from different countries. This might be due to their lack of interest and seriousness to play in competition.
Keywords- Mental toughness (Fortitude), International Players.

Introduction - Mental toughness (Fortitude) is a term commonly used by coaches, sports psychologist, sports Commentatorsand business leaders generally describes a collection of attributes that allow a person to persevere through difficult circumstances and emerge without losing confidence. Many Badminton players are good in the physical aspect but not tough enough mentally. A badminton player can have all the fitness, power, agility and skills but without the presence of Mental toughness (Fortitude), he or she can be affected mentally anytime, anywhere.

This spiral of pressure not only makes demands on the mind, It means the body is often asked to do more- and sometimes too much. Injuries are a greater problem than they used to be, and there is a greater temptation to play through them. Some players can be lured by ambition or cash into playing too much. Mental toughness (Fortitude) is needed to overcome all the fear with a 'nothing to lose', 'give everything you got' mentality. When fear is overcome, the confidence will be there to win the game. You need to keep thinking positively in the game, no matter what happens.

Badminton players should be equally strong, physically and mentally. Mental toughness (Fortitude) will determine your success as a badminton playerand will help you attain consistent achievements.

Methodology - Forty two (42) international badminton players from different countries from Yonex - Sunrise India Open Super 1-6 April 2014 were taken as subjects for this study. The subjects were from the countries i.e. India, Denmark, Russia, Malaysia, Indonesia and Thailand. The data was collected through Mental toughnessquestionnaire created by Alan Goldberg. Researcher had clearly explained the intention of the study and the subjects were voluntarily prepared to take part in the research study. To determine the Mental toughness (Fortitude) of international badminton players one – way analysis was used and significance was chosen at 0.05 level. All players had their world ranking and fill the questionnaire before or after the match.

Result - To assess the Mental toughness (Fortitude) of international badminton players from different countries the means and F-ratio were computed and data pertaining to this has been presented as follows.

Table-1: Mean and Standard Deviation of International Badminton Players from Different Countries on Mental toughness (Fortitude)

Country	S.D	Mean
India	5.740	40.22
Denmark	3.498	44.29
Russia	5.529	40.71
Malaysia	2.673	43.14
Indonesia	2.066	39.67
Thailand	4.262	38.83

Table-1 shows that the mean and standard deviation of Mental toughness(Fortitude) of international badminton players i.e. India, Denmark, Russia, Malaysia, Indonesia, Thailand 40±5.74, 44.29±3.498, 40.71±5.529, 43.14±2.673, 39.67±2.066, 38.83±4.262 respectively. To find out significance between different countries of Mental toughness(Fortitude) 't'-ratio applied.

Figure-1 : Mean of Badminton Players from Different Countries on Mental toughness(Fortitude)

***Associate Professor & HOD (Physical Education and Sports) D.J. (P.G.) College, Baraut (U.P.) INDIA**

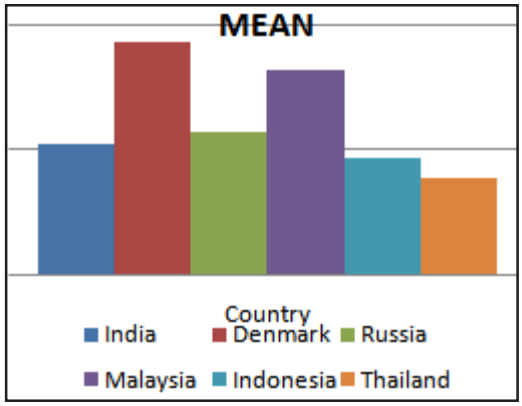

Table -2: Analysis of Variance of Badminton Players from Different Countries on Mental toughness(Fortitude)

Source of Variance	DF	Sum of Square	Mean Square	F-ratio	Tab F
Between the groups	5	151.04	30.208	1.610	2.48
Within the groups	36	675.44	18.762		
Total	41				

No significant at 0.05 level
Tab F (5, 36) = 2.48

It is evident in the table-2 that there is no significant difference between all six countries badminton players i.e. India, Denmark, Russia, Malaysia, Indonesia, Thailand on Mental toughness(Fortitude), as obtained F-value is equal to 1.610 is less than tabulated F0.05(5,36) = 2.48.

Discussion- The primary goal of this research was to evaluate the Mental toughness (Fortitude) of international badminton players from various countries. The findings revealed no significant differences in the Mental toughness (Fortitude) of international badminton players. The finding could be attributed to the fact that Mental toughness(Fortitude) is a mental state that allows a person to persevere through difficult circumstances and emerge without losing confidence due to persistently low mood, loss of pleasure, and interest. The higher Mental toughness (Fortitude) score could be attributed to the international players chosen for the study having already achieved their highest level of achievement. Furthermore, the mean score of Mental toughness (Fortitude) was found to be comparable. Their living conditions, diet, seriousness, and different training schedules all had an impact on the study.

References:-

1. Kevin Lamar Burke, "The Effect of a Perceptual Cognitive Training Program an Attention/Concentration Style and Performance of the Tennis Service," Dissertation AbstractsInternational49:12 (June, 1989): 3654-A
2. Alan Goldberg, "Just How Tough Are You ?" Swimming Technique (November- December, 1995): 20
3. Richard Eaton,"It's All in the Mind" World Badminton Vol. 25,No.4(Nov.-Dec.,1997):5-9.
4. Jones, G., Hanton, S., &Connaughaton, D. (2002). What is This Thing Called Mental toughness(Fortitude)? An analysis of Elite Sport Performers. Journal of Applied Sport Psychology, 14(3),209.
5. Sheard," A cross National Analysis on Mental toughness(Fortitude) and Hardness in Elite University Rugby League Team" Preceptual Motor Skill ,2003, April : 96 (2) :455-462.
6. Rajeev Sareen "An analysis into Mental toughness(Fortitude) and Psychological Status of Pain Management among Indian Athletes" Abstract of Doctor ofPhylosophy, L.N.U.P.E. Gwalior (M.P.) ,2008
7. Boga, Steve (2008). Badminton. Paw Prints. ISBN 1439504784
8. Dr. Jim Loehr of the Human Performance Institute, in his book The New Toughness Training for Sports.
9. Yukelson David, Ph.D., Coordinator of Sport Psychology Services Morgan Academic Support Center for Student-Athletes, Penn State University.

****

Influence on Consumer Behaviour by Properly Match Between Attributes of Product and Celebrity Endorsement

Sharad Maheshwari *

Abstract - Frequently, things that appear to be comparable sell for different prices, indicating that the utility-maximizing customer has distinguished the products and will pay a variety of prices depending on how effectively he believes the product will meet his wants. The product and consumer belief and perception phenomenon has been studied by marketing scholars, who have shown that there are symbolic variations that primarily result from data gleaned from advertising. A celebrity endorsement that is well-matched to the product attributes might increase consumer acceptance.
Keyword- Consumer Behaviour, Celebrity attributes and Product attributes.

Introduction - Conviction that something is true can be used to characterize a belief. For a utility-maximizing consumer in this situation, it is the faith that the product will function at least as expected in meeting the desired need.Here, it is hypothesized that a correctly matched endorser will give the customer more reliable and pertinent information prior to making a purchase.

There is a lot of evidence in the literature to suggest that businesses are able to communicate quality to customers through advertising in markets for experiential products where consumers are unsure about product quality prior to the purchase. Consumers rationally equate expensive advertising with high-quality goods. Therefore, the buyer develops specific views about the product's quality and qualities based on the search process and the information obtained as a result. This causes the consumer to develop a certain perspective of how the product will perform in comparison to alternative options.

The next part introduces the hypotheses that will be investigated in this study and is based on the consumer perception model.

Data Collection: The participants received 600 questionnaires altogether. For each of the six treatments, this amounted to 100 questionnaires per treatment. A packet of materials with either four or six pages was given for each subject. The six-page package containing questions about the endorsement was distributed to two-thirds of the subjects, whereas the remaining one-third received the same questions but without the pages mentioning the endorser.

For the Hair Shampoo, the three attributes that are critical to the perception of its quality are (i) hair appearance, (ii) impact upon hairs, and (iii) effect on personality.

Breakfast cereal attributes that are critical to the perception of its quality are (i)effect on mental growth, (ii) impact on daily life and (iii)taste.

Hypothesis development: Taken into account two brand-new items that consumers are unsure of the quality of: hair shampoo and breakfast cereal. Due of the nature of these experience items, buyers cannot accurately judge quality by visual inspection. However, there are characteristics of the goods that customers will look for to assess overall quality. This leads to the first hypothesis,

H(1): Consumer assessments of at least three distinct product features are strongly linked with perceived choice.

Three characteristics can be identified as crucial to the consumer when they buy breakfast cereal and hair shampoo, according to pre-testing. Because buyers typically select one key element along with one or two additional criteria to judge the quality of a product, three attributes were chosen. Therefore, the majority of the difference in perceived product purchase decision may be explained by three attributes. This leads to the following hypothesis because the credibility, relevance, and efficacy of the indirect information in the advertisements determine how well the consumer perceives the features of the product before utilizing it.,

H(2): The efficacy, relevance, and credibility of indirect information are increased by using properly matched endorsers.

Giving consumers information is one of advertising's roles. This information may be of a direct nature or it may be inferred by consumers from the advertisement. These conclusions ought to be based on who is mentioned in the advertisement and how the indirect information is presented. By asking the responder to assess the reliability and applicability of indirect knowledge regarding product qualities, this hypothesis will be put to the test.

Empirical Results

Evaluation of the endorser: As can be seen, Vishwanath

*Associate Professor, Government Engineering College, Jhalawar (Raj.) INDIA

anand (mean 7.03) was viewed more favorably than Hrithik Roshan (mean 6.97) . As a result, the expectation is that Vishwanath anand will have a greater impact on consumer perception than Hrithik Roshan will have. Also Vishwanath anand matched-up much better with the three attributes of the Breakfast cereal (7.99, 7.72, 7.70 respectively) than Hrithik Roshan and Hrithik Roshan matched up better with the three attributes of the Hair shampoo (7.41,7.29, 7.65respectively) than Vishwanath Anand.

Additionally the subjects were asked to rate the appropriateness of using Vishwanath anand with Breakfast cereal and Hrithik Roshan with Hair shampoo. The result was 7.31 for Vishwanath anand and 7.36 for Hrithik Roshan. This difference was marginally significant.

Table 1:**View of celebrity endorser**

	HrithikRoshan		Vishwanath Anand	
	Mean	Standard Dev.	Mean	Standard Dev.
Favorable Impression	6.97	0.8692	7.03	0.9545
Appropriate and Effective	7.36	1.2481	7.31	1.0714
Attribute Matchup				
Revita hair shampoo				
Appeal/Shine	7.41	1.678	6.72	1.450
Protected/Smooth	7.29	1.561	6.73	1.092
Trendy/Smooth	7.65	1.683	6.26	1.543
Brain@Grain Breakfast Cereal				
Intelligent/Sharp	6.81	1.652	7.99	1.286
Consistent/Longlasting	6.78	1.511	7.72	1.566
Unique/Superior	7.13	1.495	7.7.	1.385

Hypothesis 1 : As a result, a variety of external factors will have a role in how consumers perceive the quality of a product. This study made an effort to quantify the variation in perceived quality brought on by the influence of product endorsers on particular product features. The idea was that a lot of the variances in how people perceive a product's quality can be attributed to differences in how people perceive the characteristics for which a product was purchased.

The percentage of the variation in quality perception due to variations in the ratings of the attributes in summarized in Table 2.

Table 2 (see in next page)

Although the results here suggest that changes in the perception of three particular traits can account for the variation in quality perception, consumer behavior theory suggests that quality perception is affected by a number of factors.

This hypothesis appears to be correct. The majority of the variance in quality perception in five of the six treatments could be attributed to variations in how the chosen qualities were perceived to function. Inferring that the indirect information in the advertisement is more believable and pertinent to the customer when the endorser is employed in the advertisement is necessary given the evidence of explanatory power and the significant differences based on endorser manipulation. This leads to the testing of hypothesis 2.

Hypothesis 2 : To test this hypothesis, the subjects were asked to rate the credibility and relevance of the information received from the ad on a nine point scale. The means were calculated and then a single factor ANOVA was used to test for significant differences. In Table 3 the summary results are presented.

Table 3 (see in next page)

For the pairing of Vishwanath Anand and the Breakfast cereal, the subjects viewed the information in the ad to be significantly more credible (7.55 v. 5.24,) and significantly more relevant (7.40 v. 5.18) and more effective (7.49 v. 5.11). This information supports the hypothesis.The results were same for the Hrithik Roshan and the Hair shampoo pairing. There was also significant difference in the credibility of the information with the endorser (7.6v.5.52).and significantly more relevant (7.52 v. 5.44) and more effective (7.68 v. 5.46). It proves that the endorsers chosen for the products are really a good match-up.

Conclusion: Producers can manipulate indirect information, which is typically delivered throughadvertising, to affect consumer attitudes. This study has demonstrated that consumerperception can be greatly and positively changed by using a well-liked and well-matched celebrity endorsement in the advertisement. Customers are led to believe, as a result of this view, that products are distinguished and will function better to meet the requirement for which they were purchased. The indirect information in the advertisement is perceived by the consumer as being more believable and relevant when the endorser is appropriately matched and well-liked.

References:-

1. Aaker, D. A., Batra, R. and Myers, J.G. (1992), Advertising management, 4th Ed. London: Prentice Hall International.
2. Agrawal, J. and Kamakura, W. A. (1995), "The economic worth of celebrity endorsers: An event study analysis", Journal of Marketing, Vol. 59, Iss. 3 pp. 56-62.
3. Atkin, C., and Block, M. (1983), "Effectiveness of celebrity endorsers", Journal of Advertising Research, 23 (Feb/Mar), pp. 57-61.
4. Buck, R. (1993), "Celebrity endorsers: rewards and risks", Brandweek, Sep 13, 34, 37. p. 16.
5. Dean, D.H and Biswas, A. (2001), "Third-party organization endorsement of products: an advertising cue affecting consumer prepurchase evaluation of goods and services", Journal of Advertising, Vol. 30, Iss. 4, pp. 41-57.
6. Erdogan, B. Z. (1999), "Celebrity endorsement: a literature review", Journal of Marketing Management, Vol. 15, Iss. 4, pp. 291-314.
7. Friedman, H., Termini, S. and Washington, R. (1976), "The effectiveness of advertisements utilizing four types of endorsers", Journal of Advertising, Vol. 5, Iss 3, pp. 21-24.

Table 2: Correlation Coefficient-quality perception and three attributes

	Revita Hair shampoo			Brain@Grain Breakfast Cereal		
	None	**H.Roshan**	**V.Anand**	**None**	**H.Roshan**	**V.Anand**
Attribute 1	.1505	.4586	.2916	.2701	.3757	.5485
P value	0.1351	0.0032	0.0000	0.0066	0.0000	0.0001
Attribute 2	.1351	.5836	.7317	.2197	.5624	.6042
P value	0.0235	0.0000	0.0000	0.0281	0.0000	0.0000
attribute 3	.2412	.7583	.7341	.4349	.6673	.7324
P value	0.0156	0.0000	0.0000	0.0000	0.0000	0.0000

Table 3: Credibility, Relevance and Effectiveness Measures

Variable	Revita Hair shampoo			Brain @ Grain Breakfast Cereal		
	None	**H.Roshan**	**V.Anand**	**None**	**H.Roshan**	**V.Anand**
Credibility	5.52	7.6	6.53	5.24	6.43	7.55
Relevance	5.44	7.52	6.39	5.18	6.49	7.40
Effectiveness	5.46	7.68	6.36	5.11	6.55	7.49

****

मनोरक्षात्मक युक्तियों समायोजन में कितनी सहायक

डॉ. सरिता माथुर*

प्रस्तावना – सबसे बड़ा रण क्षेत्र मनुष्य के अंतर्मन में ही है अगर कोई न कोई भयानक युद्ध चलता रहता है हमारा व्यवहार से बाहर दिखता है वह सब तो हमारे अंतर्मन की मूल भावना है कुंठा है और सोच ही है । संसार में जन्म से मृत्यु तक का झील के सफर में अनेक संघर्षो के साथ जीना पड़ता है और इस लंबे सफर को न्यूनतम कष्टों के साथ जिया जाए इसका प्रति भी हम लगातार घर परिवार समाज एवं वातावरण के साथ समायोजन करते रहते हैं।

समायोजन का अर्थ हमारी आवश्यकता और वातावरण के मध्य पर्याप्त संतुलन का होना है यदि आवश्यकता है व्यक्ति के नियंत्रण से बाहर है अथवा हमारी सामाजिक सांस्कृतिक नैतिक मूल्यों से मेल नहीं खाती है हमारे समायोजन की प्रतिक्रिया शिथिल पड़ जाती है व्यक्ति जो अपने लक्ष्य प्राप्ति में किसी अवरोध को पाता है तो उसमें कुंठा उत्पन्न हो जाती है । इन कुंठा के कई कारण होते हैं। जैसे प्रतिस्पर्धा उच्च आकांक्षा, स्तर, जन्मजात एवं अर्जित विकलांगता है तथा अयोग्यताएं हैं। यह कुंठाएं हमारे समायोजन में बाधक, असहनीय और अस्वीकार है क्योंकि इनसे हमारा जीवन कष्टप्रद और दुभर हो जाता है। फल स्वरुप इनके समाधान समायोजन के लिए हम यथाशीघ्र कुछ न कुछ चेतन या अवचेतन क्रियान्यें करते रहते हैं ।

सकारात्मक प्रतिक्रियाएं हमारी कुंठाओ को तो कम करती ही है, साथ ही हमारे अहम की रक्षा करके समायोजन में भी मदद करती है। अर्थात हम लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रयासों को तीव्र करते हैं या अपने वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करने पर उनमें संशोधन करके भी संतुष्ट रह सकते है। इसके अतिरिक्त क्षतिपूर्ति व्यवहार भी हमारी कुंठाओं को कम करके समायोजन करने में सहायक होते हैं जैसे हमारी किसी भी तरह की शारीरिक मानसिक कमियों की क्षतिपूर्ति हेतु किसी अन्य क्षेत्र में उन्नति करके कमियों को दबाया जा सकता है, इसे प्रसिद्ध शायर दुष्यंत कुमार के लफ्ज़ों में 'एक बाजू उखड़ गया जब से और ज्यादा वजन उठाता हूँ, समायोजन' का सार्थक उदाहरण दिखाई पड़ता है।

सकारात्मक युक्तियों का सारा बहुत कम लोग ही लेते हैं चिंता का विषय भी यही है , हम अपनी अहम की रक्षा के लिए नकारात्मक युक्तियों की सहायता से समायोजन करने का प्रयास करते हैं और यही हमारी मानसिक अवस्था का द्योतक है, इस में विशेषकर दमन की प्रतिक्रिया हैं। जिनमें हम हमारी इच्छाओं, विचारों का दमन कर के अपनी कुंठा को बढ़ाते रहते हैं , इसी तरह तदात्मीकरण भी हमारी समायोजन की प्रक्रिया है, जिसमें हम अपने अहम अथवा व्यक्तित्व का तदात्मीकरण दूसरे के साथ कर लेते हैं। स्वतंत्रता से पूर्व कुछ भारतीयों ने अंग्रेजों से तादात्म्य स्थापित किया था फल स्वरुप यही वही वेशभूषा रहन–सहन बातचीत जो स्वतंत्रता के पश्चात सभी को खलने लगी थी । इसी तरह यदि हम उच्च पद को प्राप्त न कर सके तो अपने बच्चों से अपेक्षा करते हैं कि वह उच्च पद प्राप्त कर सके और इसके लिए जाने अनजाने हम अपनी अपेक्षाएं बच्चों पर थोपते हैं ।

दोषारोपण भी समायोजन की अस्वस्थ मनोरक्षात्मक युक्ति है । साधरणतया तो हम सभी अपने कार्यों को न करके और अपनी कमजोरियों को छुपाने के लिए दूसरों को आरोपित करते हैं जैसे नाच ना जाने आंगन टेढ़ा, जैसे मुहावरे से अच्छी तरह समझा जा सकता है । अपनी गलती के लिए दूसरों को दोषी ठहराने अपने एवं भावना की सुरक्षा का सरलतम उपाय है।

इसके अतिरिक्त कभी–कभी हम अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कई तरह की युक्तिकरण, न्याय संगत और तर्कसंगत कारणों को गढ़ लेते हैं जैसे इसे नौकरी न मिलने का कारण वहां वेतन कम था या कार्य अरुचिकर था आदि। इस तरह के तर्क देकर झूठी प्रतिष्ठा को बचाने में अस्थाई रूप से तो सफल हो जाते हैं परंतु स्वय को धोखा देकर अपनी मानसिक ऊर्जा को खोते रहते हैं।

प्रतिकरण भी रक्षात्मक युक्तियों का प्रकार है । जिसका आधुनिक युग में बहुतायत रूप से उपयोग हो रहा है, इसमें व्यक्ति अंतर्निहित अचेतन इच्छा के ठीक विपरीत व्यवहार प्रदर्शित करता है यदि किसी व्यक्ति के प्रति हमारे मन की गहराइयों में घृणा और रोष है तब उससे मिलते समय हम अनावश्यक मजाक मधुर भाषा में बातचीत करते हैं अर्थात उसको धोखा देकर हम स्वयं को अधिक सुरक्षित कर लेते हैं । किसी के प्रति अधिक स्नेह प्रदर्शित करना या अधिक दान पुण्य करने वालों पर बरबस ही संदेह करना इसी के अंतर्गत आता है ।

कभी–कभी हम किसी का क्रोध किसी अन्य निरीह पर उतारते हैं, इसे मनोविज्ञान की भाषा में विस्थापन कहा जाता है। क्योंकि क्रोध की उर्जा शांत ना होने पर मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है, जैसे बॉस पर अपना गुस्सा न निकाल पाने की स्थिति में छोटे पद वाले कर्मचारियों पर क्रोध उतरना ।

* व्याख्याता (मनोविज्ञान) राजकीय एसएमएम महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

वातावरण में समायोजन के लिए लोगों में विभिन्न तरह के रोगों को पालने की प्रवृत्ति भी बढ़ जाती है, क्योंकि इससे कार्यभार से मुक्ति मिलने के साथ लोगों की सहानुभूति भी प्राप्त होती है।

कहने का तात्पर्य यही है कि हमारे सामने जीने के लिए लंबा व संघर्ष में जीवन है, जहां कि कदम कदम पर सीमित परिवार से लेकर विस्तृत समाज जैसे वातावरण से हमें समायोजन करना पड़ता है किंतु आवश्यकता इस बात की है कि मानसिक स्वास्थ्य और संपूर्ण व्यक्तित्व को बनाए रखने के लिए इन झूठे युक्तियों और दोहरे व्यक्तित्व का सहारा न लेकर आपसी सहयोग सौहार्दपूर्ण संबंधों और विश्वास से सच्चाई की पहचान करके स्वस्थ सुखी और सफलतम जीवन बिताया जा सकता है और अपने व्यक्तित्व को उत्कृष्ट बनाने के लिए यथासंभव नकारात्मक मनोविकृतियों का सहारा ना लेवे तभी आपके व्यक्तित्व में निखार आएगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान: Modern Abnormal Psychology, Year 2012
2. https://www.apa.org >topics >trauma

****

राजस्थान की हिन्दी-कहानी : विकास यात्रा भाग - 1

डॉ. राजकुमार चौधरी *

प्रस्तावना - कथा-लेखन परम्परा

शौर्य, पराक्रम, त्याग व बलिदान के कीर्तिमान स्थापित करने वाले राजस्थान की एक महत्ती विशेषता यह रही है कि इस वीरभूमि में तलवारों की झनझनाहटों, युद्ध के कोलाहल और संघर्ष की गर्जनाओं के बीच साहित्य, कला और संगीत की त्रिवेणी भी पूर्ण उन्मुक्तता से प्रवाहित होती रही है। रेतीले राजस्थान में कला अपने लगभग सभी आयामों में खुलकर मुखरित हुई है। जैसलमेर की कलात्मक हवेलियाँ, आबू की चमत्कृत कर देने वाली सूक्ष्म और तरल नक्काशी लोक जीवन में सर्वत्र बिखरी रंगीनियाँ, चन्दबरदायी व सूर्यमल्ल मिश्रण जैसे ओज के उदात्त गायक, भक्त शिरोमणि मीरां की शान्त स्निग्ध वाणी- ये हैं इस राजस्थान के कुछ परस्पर विरोधी आयाम।

जिस समय अपभ्रंश से हिन्दी का स्वरुप उभर रहा था, लगभग उसी समय से राजस्थान में हिन्दी-साहित्य रचा जा रहा था। 'अपभ्रंश भाषा का अधिकांश तथा वीर-गाथाओं का प्राय: सारा साहित्य इसी प्रदेश की देन है और 10वीं शती में रचित रासो-साहित्य जिसमें शौर्य और पराक्रम की परम्परा के दर्शन होते हैं, इसी प्रान्त के गौरव को उजलाने वाला साहित्य है।'[1]

राजस्थान प्रदेश में सुदीर्घकल से कथा-लेखन की समृद्ध परम्परा निरन्तर प्रवाहमान रही है। राजस्थान जूझता रहा है - अकाल की विभीषिका से, सामन्ती दबावों से, राजनीतिक घात-प्रतिघातों से, और न जाने किससे-किससे.....। यही वे परिस्थितियाँ हैं जो कथा-रचना के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करती हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि जीवन यथार्थ से गहन, कहानी का शाश्वत गुण धर्म है। युगीन परिस्थितियों के अनुरुप यह यथार्थ प्रत्येक युग में अलग-अलग रुपों में अभिव्यक्त होता रहा है।

आज की कहानी की प्रकृति प्राचीन युग के कथा-साहित्य से नितान्त भिन्न हो, तथापि मानवीय संवेदनाओं का अप्रतिम निदर्शन प्राचीन युग से लेकर अब तक के कथा-साहित्य में अक्षुण्ण मिलता है। राजस्थान की समकालीन हिन्दी-कहानी का मूल्यांकन करते समय यह अवश्य विचारणीय है कि अधुनातन उसका स्वरुप अपनी पूर्ववर्ती कथा-परम्परा का ऋणी है या नहीं। प्रमुख कथाकार स्वयंप्रकाश भटनागर ने लेखन परम्परा पर टिप्पणी प्रस्तुत करते हुए कहा है :- 'आज जिसे हम कहानी कहते हैं, उसका सीधे इस विरासत से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस नयी सामाजिक यथार्थवादी कहानी का आरम्भ भारतीय इतिहास में पाश्चात्य-साहित्य के संसर्ग से हुआ है।'[2] लेकिन यह सम्भव नहीं है कि साहित्य का मूल्यांकन उसे अपनी परम्परा से सर्वथा विचित्र करके किया जा सके। अत: आज के राजस्थान की हिन्दी-कहानी भी अपनी परम्परा की यह किंचित ऋणी है, यह हमें स्वीकारना ही होगा। यहाँ इसी दृष्टि से पूर्ववर्ती कथन परम्परा का सिंहावलोकन करना समीचीन होगा।

राजस्थान की हिन्दी-कहानी विभिन्न दौर (पड़ाव) से गुजरती हुई वर्तमान रवरुप को प्राप्त हुई है। सुचारु अध्ययन की दृष्टि से इसे निम्नलिखित काल खण्डों में विभाजित किया जा सकता है :-

(क) राजस्थानी भाषा में रचित- कथा साहित्य
(ख) राजस्थान की हिन्दी-कहानी : विकास परम्परा,
(1) प्रथम चरण - (आरम्भिक काल सन् 1910-1915 तक)
(2) द्वितीय चरण - (स्वतंत्रता पूर्व काल सन् 1916-1947 तक)
(3) तृतीय चरण - (स्वातंत्र्योत्तर काल सन् 1948-1959)
(4) चतुर्थ चरण - (साठोत्तरी कहानी सन् 1960-969)
(5) पंचम चरण - (सातवें व आठवें दशक की कहानी सन् 1970-1980)
(6) छठा चरण - (नवें दशक की कहानी सन् 1981-1999)
(ग) पत्र-पत्रिकाओं का योगदान

(क)राजस्थानी भाषा में रचित- कथा साहित्य -राजस्थानी भाषा में रचित साहित्य की समृद्ध परम्परा रही है। यहाँ के जन-जीवन एवं संस्कृति को रात्रिकालीन मजलिसों एवं चौपालों पर होने वाली 'वातों' एवं कहानियों के माध्यम से उभारा गया है। राजस्थान के कथा-साहित्य का इतिहास 'वात-साहित्य' से प्रारम्भ माना जाता है। 'पाबूजी', 'तेजाजी', 'निहालदे-सुलमान', 'देवनारायण बगड़ावत', 'ढोलामारू' आदि इस श्रृंखला में उल्लेखनीय हैं। 'राजस्थानी वात-साहित्य' का इतिहास लगभग छ सौ वर्ष पुराना है।[3] कथा-तत्त्वों का सम्यक निर्वाह और नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठा इन लोक गाथाओं में सुष्ठु रूप से हुई है। मनोरंजन के साथ-साथ आदर्शात्मक एवं उपदेशात्मक भावनाओं की अभिव्यक्ति भी इसमें सहजता से हुई। प्रेम और श्रृंगार का निरूपण भी इन लोक-गाथाओं में उदात्त स्तर पर हुआ है। वहीं ऐतिहासिक चरित्र-नायकों के शौर्य की सुन्दर-व्यंजना ने इन लोक-गाथाओं को अत्यन्त संप्रेषणीय बना दिया है। युगीन-बोध की यथार्थ अभिव्यक्ति राजस्थान की प्राचीन कथा-साहित्य की मौलिक विशेषता रही है।

राजस्थान में लोक-कथा परम्परा अत्यन्त समृद्ध रही है, उसे लिपिबद्ध करने का गुरूतर कार्य श्री विजयदान देथा ने किया है। रघुवर दयाल ने टिप्पणी करते हुए लिखा है:- 'राजस्थान की लोक-संस्कृति अत्यन्त समृद्ध है। इस देश में लोक-कथाओं और लोक वार्ताओं का अक्षय भण्डार है। इस

* एसोसिएट प्रोफेसर, राजकीय महाविद्यालय, राजसमंद (राज.) भारत

प्रान्त की लोक-कथाओं को आधुनिक सन्दर्भों में भी कितनी सफलता से प्रस्तुत किया जा सकता है। इसका प्रमाण विजयदान देथा ने दिया है। उन्होंने 'वाताँ री फुलवाड़ी' में राजस्थान की लोक-कहानियों को संकलित कर ऐतिहासिक काम किया है।[4] अभी तक 'वाताँ री फुलवाड़ी' के 14 अंक प्रकाशित हो चुकें, जिनमें राजस्थानी कथा-साहित्य की बहुमूल्य निधि सुरक्षित है। 'मुहणोत नैणसी री ख्यात' राजस्थान के उन प्रारम्भिक ग्रंथों में से है जिन्होंने केवल हिन्दी ही नहीं अपितु अनेक भारतीय भाषाओं के कथा-साहित्य को प्रेरित किया है। यह ग्रंथ भी राजस्थानी भाषा में रचित ग्रंथों में मील के पत्थर जैसा प्रतीत होता है।

(ख)राजस्थान की हिन्दी-कहानी : विकास परम्परा- इस कथा-परम्परा को निम्नलिखित छ: चरणों में प्रस्तुत किया जा सकता है :-

(1) प्रथम चरण - (आरम्भिक काल) - राजस्थान की हिन्दी-कहानी का रिश्ता लगभग छ: सौ वर्ष पहले के 'राजस्थानी वात् साहित्य'' से जुड़ा है। प्राचीन राजस्थानी साहित्य से कहानी की मिलती-जुलती अनेक रचनाएँ मिलती हैं जिनमें से कुछ का विषय प्रेम-श्रृंगार है, तो कुछ का शौर्य-पराक्रम। उनमें से कुछ लोक प्रिय जननायकों के बारे में है तो कुछ इतिहास पुरुषों के बारे में है।

डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल ने राजस्थान की हिन्दी-कहानी पर टिप्पणी करते हुए लिखा है:- '..... राजस्थान के कथाकार ने लगभग वे सारी मंजिलें तय की हैं। जिनसे हिन्दी का कथाकार गुजरा है। वैसे तो राजस्थान के अपने लोक-साहित्य में कथा की एक सुदीर्घ परम्परा रही है और हिन्दी-कहानी की विकास यात्रा में राजस्थान का कहानीकार सदैव कदम से कदम मिलाकर चला है; और उसने राग-रंग, उपदेश-सिखावन और संगीन साफ बयानी से लेकर लडाकू तेवर तक की कहानियाँ लिखी है।'[5]

राजस्थान की हिन्दी-कहानी के विकास का प्रथम-चरण आरम्भिक काल के नाम से जाना जाता है, जिसमें प्रेमचन्द और प्रसाद से पूर्व ही कथा-लेखन का श्री गणेश हो गया था। राजस्थान की आधुनिक हिन्दी-कहानी के आरम्भिक कहानीकारों में पं. चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' का नाम सर्वोपरी है। इनकी प्रथम कहानी 'सुखमय जीवन' का प्रकाशन 'भारत मित्र' में सन् 1911 में हुआ था। जून 1915 में इनकी दूसरी कहानी 'उसने कहा था' सरस्वती पत्रिका में छपी थी। अपने शिल्पगत वैशिष्ठ्य के कारण ही वह हिन्दी की श्रेष्ठतम कहानियों में गिनी जाती है। नि:स्सन्देह इसे हम राजस्थान की प्रथम आधुनिक हिन्दी-कहानी स्वीकार कर सकते हैं। प्रेम-भावना की अभिव्यंजना इस कहानी में अत्यन्त उद्दात्ता स्तर पर हुई है। अपने स्वल्प जीवन काल में मात्र तीन कहानियाँ लिखकर 'गुलेरी' जी अमर हो गए। उनकी प्रसिद्धि का आधार 'उसने कहा था' कहानी ही है- 'आज भी यह एक श्रेष्ठ कहानी है तथा हिन्दी-कहानी के विकास में मील का पत्थर है। उस युग में गुलेरी जी इतनी सशक्त कहानी लिख सकें, यह देखकर आश्चर्य होता है।'[6] 'बुद्धू का कांटा' इनकी तीसरी और अन्तिम कहानी है।

गुलेरी जी के बाद इसी युग के (पुरानी पीढ़ी के कथाकार) कथाकारों पर प्रसाद की परम्परा का प्रभाव अधिक रहा है। इनमें शम्भुदयाल सक्सेना, औंकारनाथ 'दिनकर', माधवप्रसाद शर्मा, विष्णु अम्बालाल जोशी, जयनारायण जोशी, सुन्दरलाल गर्ग, जगदीश प्रसाद 'दीपक', पं. जनार्दन राय नागर, विजयसिंह 'पथिक' आदि के नाम परिगणित किये जा सकते हैं।[7] इन कथाकारों की कहानियों में घटनाओं का नाटकीय संघटक तथा चरित्रों का वायवी आदर्शीकरण मिलता है।[8]

राजस्थान में स्वाधीनता-आन्दोलन के समय किसानों को अपने अधिकारों के लिए प्रेरित करने वाले और स्वर संग्राम में अनेक यातनाएँ झेलने वाले श्री विजयसिंह 'पथिक' अन्य अनेक साहित्यकारों की भांति कारावास में रहकर काव्य, कहानियाँ, निबन्ध लिखते रहे, जिनमें देश की तत्कालीन परिस्थिति, वर्ग-भेद, शासकों के अत्याचारों आदि का प्रत्यक्ष चित्रण किया गया है।

'पथिक जी' की कहानियों का संग्रह 'पथिक प्रमोद' नाम से प्रकाशित हुआ है। इसमें अधिकांश कहानियाँ ऐसी हैं, जिनसें सामाजिक कुरीतियों का पर्दाफाश होता है। उच्चता बनाम नीचता' कुम्हार जाति में उत्पन्न हीरालाल के महत्त्वाकांक्षी जीवन और जागीरदारों की खुशामदी, नौकरों के संदर्भ की कहानी है। 'विवाह या व्यापार' में सामाजिक कुप्रथा, कन्या का रुपये के बदले विक्रय पर व्यंग्य है।

'पथिक' जी की कहानियाँ वर्णन-प्रधान है और उनमें विचार भी बहुत अधिक है। एक के साथ दूसरी घटनाएँ जुड़ती चली जाती है; किन्तु सामाजिक बुराइयों की व्यंजना ठीक बन पड़ी हैं; भाषा व शिल्प अत्यन्त साधारण है। उनकी कहानियाँ तत्कालीन युग-चित्रण की दृष्टि से सजीव है।

शम्भूदयाल सक्सेना - राजस्थान की हिन्दी-कहानी के प्रारम्भिक दौर के महत्त्वपूर्ण कहानीकारों मे से एक हैं। उनके पांच कहानी-संग्रह निम्नलिखित है- 'सलाइयाँ', 'बन्दनवार', 'चित्रपट-धूप छाँह', 'मन की रानी' और 'मिट्टी का घड़ा' इनकी कहानियों पर टिप्पणी करते हुए राजेन्द्र शर्मा ने लिखा है- 'उनकी कहानियों का विषय-समाज, शैली-भावनात्मक, शिल्प-पुराना और विवरणात्मक है। सरसता, रोचकता, कथानक का विस्तार तथा नाटकीयता उनकी कहानियों के प्राण हैं। 'धूप छाँह' नामक कथा-संग्रह की कहानियाँ इस तथ्य की पुष्टि करती है।[9]

पारिवारिक जीवन को, कहानी के माध्यम से अभिव्यक्ति करने में शम्भूदयाल सक्सेना को बहुत सफलता मिली है। परिवारों तथा गृहस्थी में होने वाली घटनाओं, जीवन की विविधता और बहुलता, समाज की समस्याओं और भावनाओं को यहाँ आकर्षण का विषय बनाया है। भारतीय समाज के बहुत से पहलूओं का सफल चित्रण सक्सेना जी ने प्रस्तुत किया है। उनका कहानी रचना काल सन् 1923-1924 के आस-पास प्रारम्भ होता है। इनकी रचनाओं का आधार निजी अनुभव, यथार्थ जीवन की कटु-मधुर अनुभूतियाँ और समाज के मूल्यों सम्बन्धी निष्कर्ष थे। इन्होंने जैसा-देखा-सुना, अनुभव किया, वैसा ही कहानी में कहा। कपोल कल्पना या गगन विहार से वे सदा बचे रहे हैं।'[10]

इनकी कहानियों में शिल्प पर प्रसाद का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है और कथ्य-चयन के बारे में यर्थायवादी रूझान थी। कथ्य के बारे में टिप्पणी देते हुए स्वयं ने लिखा है : 'हम जब किसी लेखक का ग्रंथ उठाते हैं तो बहुधा जीवन का ऐसा मनोहर, सुसम्पन्न और आकर्षक चित्र पाते हैं कि उसमें लेखक के निजी जीवन तथा आस-पास के वातावरण से जरा भी परिचय नहीं पाते . . . . . जब तक बाहर-भीतर एक-सा न हो, तब-तक लेखनी में विद्युत-संचार कैसे हो।'[11]

शम्भूदयाल सक्सेना के पश्चात् **औंकारनाथ 'दिनकर'** राजस्थान की हिन्दी-कहानी के दौर में सन् 1933 से आए। इनका 'समस्या और उसका समाधान' नामक कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ। बाईस पृष्ठों में छपी कहानी 'समस्या और उसका समाधान' में पहले चार पृष्ठों में समस्या है, शेष अठारह पृष्ठों में उसका समाधान। 'अपने-अपने दायरे' कहानी

का कथ्य बढ़िया है। इनकी ये कहानियाँ नयी हैं, जिनमें सृजन का नयापन एवं शिल्पगत वैशिष्ठ्य भी नया है।

'कवि का स्वप्न' और 'गुमटी वाला' कथा-संग्रहों में **विष्णु अम्बालाल जोशी** की कहानियाँ प्रकाशित हुई। 'कवि का स्वप्न' कथा-संग्रह की भूमिका में जोशी जी ने कहा कि 'हिन्दी-कहानी युगबोध के नाम पर बहुत आगे बढ़ गयी है, (ऐसा कहा जाता है), पर पाठक पहले की तरह आज भी धरती पर जी रहा है।' 'गुमटीवाला' जोशी की एक सशक्त कहानी है जिसकी गणना हिन्दी की अच्छी कहानियों में की जा सकती है। इनकी 'करणी' तथा 'गणेश' भी अच्छी कहानियाँ हैं। 'करणी' कहानी में जीवन के संघर्षों में जूझती एक स्वाभिमानी लड़की का प्रभावशाली चित्रण है और 'गणेश' आर्थिक विषमता से बने जीवन स्तरों पर एक मासूम लेकिन पुरअसर व्यंग्य है।

माधवप्रसाद शर्मा - भी 'प्रसाद स्कूल' के ही कथाकार हैं, जिनके कथा-संग्रह, 'भगिनी का भाग्य' की अधिकांश कहानियाँ आदर्शवादी और निष्कर्मवादी हैं। कथाकार का आग्रह घटनाओं के अप्रत्याशित प्रवर्तन द्वारा नाटकीय कौतूहल पैदा करने की ओर है। और वह अपना सारा जोर कहानी के अन्त पर लगा देता है। 'भगिनी का भाग्य', 'मानवता का पूजारी' तथा 'ऐश्वर्य का त्याग' तीनों ही ऐतिहासिक कहानियाँ बड़ी मार्मिक हैं। मानवीय संवेदनाओं की तीव्र अभिव्यक्ति इनमें दर्शनीय है।

पंडित जनार्दनराय नागर भी इस युग के एक महत्तवपूर्ण कहानीकार हैं। आपकी कहानियों का कथ्य उम्दा है 'माधुरी' 'हँस' 'सुधा' आदि पत्रिकाओं में कई कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। राजस्थान साहित्य अकादमी ने दो भागों में आपकी कहानियों को संकलित-प्रकाशित किया है। इनके समकालीन कथाकार **जयनारायण व्यास** हैं जिन्होंने राजनीति से समय निकाल कर कहानियाँ लिखी हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. 'मधुमती' - दिसम्बर 989 - पृष्ठ 32
2. 'राजस्थान की समकालीन हिन्दी-कहानी' - स्वयंप्रकाश भटनागर - पृष्ठ 6, (शोध प्रबन्ध) भूमिका से उद्धृत
3. 'राजस्थान के कहानीकार' भाग-1 (हिन्दी) - डॉ. रामचरण महेन्द्र एवं यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' - पृष्ठ 01
4. 'मधुमती' : समकालीन हिन्दी कहानी-अंक-नवम्बर-दिसम्बर 1987 - पृष्ठ 111
5. 'राजस्थान के कहानीकार' (भाग-2) - डॉ. आलमशाह खान - पृष्ठ 02
6. 'वातायन' - श्री होतीलाल भारद्धाज - फरवरी-मार्च 1968 - पृष्ठ 11
7. 'राजस्थान में हिन्दी कथा व नाटक साहित्य के सौ वर्ष' - डॉ. नवलकिशोर एवं डॉ. रामचरण महेन्द्र - पृष्ठ 6
8. 'तपती धरती का पेड़' - डॉ. हेतु भारद्धाज - पृष्ठ 9-10
9. 'स्वातंत्र्योत्तर राजस्थान का हिन्दी-साहित्य' - सं. राजेन्द्र शर्मा - पृष्ठ 105
10. 'राजस्थान के कहानीकार' (भाग-1) - डॉ. रामचरण महेन्द्र एवं यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' - भूमिका से उद्धृत
11. 'चित्रपट'' - शम्भूदयाल सक्सेना - भूमिका

****

मातृका पूजा का इतिहास

डॉ. अमित मेहता*

प्रस्तावना – भारत में शक्तिपूजा का उद्भम, उसकी प्राचीनता और प्रसार को लक्ष्य में रखकर लगता है कि नूतन पाषाण युग में मातृदेवी की पूजा का आरंभ हुआ फिर हडप्पा की संस्कृति में उसका व्यापक प्रचार दृष्टिगोचर होता है। इस सभ्यता के स्थानों में मिली पकाई गयी मिट्टी की नारी मूर्तियों का उपासना में प्रयोग होता था। ऐसा लगता है कि मुद्रांकों पर भी मातृदेवी का अंकन मिलता है। [1]

ईसा पूर्व चौथी और तीसरी सहस्राब्दी (हडप्पायुग) में जो मूर्तियाँ मिली हैं उनमें से कुछ बगल में बालक को लिए हुए हैं। इन मूर्तियों में और भी कई विशेषताएँ, जैसे कि पूर्ण नग्न अवस्था, जननेन्द्रिय का विशेष प्रदर्शन, योनि के ऊपर मेखला का अंकन, समुन्नत स्तनभाग, पैरों के नीचे पूर्ण विकसित कमल का आलेखन आदि हैं।[2] इस प्रकार की नग्नावस्था तथा बालक को गोद में लिए हुए मूर्तियाँ ईसा पूर्व पांचवीं सदी की मिट्टी की पकायी हुई मुद्राओं पर या स्वतंत्र रूप में दिखायी देती हैं।

कुषाणकाल में विशेष रूप से व्रजमंडल में मातृपूजा का व्यापक प्रचार था । परंतु अन्यत्र वे लोकधर्म की देवियाँ बन गई ऐसी मान्यता है ।

कुषाणकाल की मूर्तियों में बालक सहित बैठी हुई माताएँ, बालक रहित परंतु एक पंक्ति में बैठी माताएँ एवं स्वतंत्र या पंक्तिबद्ध खड़ी हुई माताएँ जो कभी गोद में बालक को भी लिए खड़ी हुई हैं मिलती हैं। सामान्यत: माता के बायें हाथ में पेट के सहारे टिकी छबरिया अथवा पलने में छोटा बच्चा बैठा या सोता दिखायी देता है। कुछ प्रतिमाओं में बालक माँ की गोद में बैठा माँ के स्तन या लटों से खेलता हुआ दिखायी देता है। कहीं माता बालक को हाथ पर झुलाती या दोनों पैरों की खोल में खड़ा रखकर खिला रही होती है। अधिकांश मातृका स्वरूप लोकदेवी हारिती से समानता रखते हैं।

उत्तरकाल में ऐसे वैविध्य की जगह मुख्य रूप से बैठी मूर्ति में बालक को बाईं जांघ पर बैठा और खड़ी मूर्तियों में बायीं गोद में धारण किया दिखाया जाता है। गुजरात में अधिकांश प्रतिमाओं में इस प्रकार का स्वरूप दृष्टिगोचर होता है। ऐसा लगता है कि इन मातृकाओं का धीरे–धीरे प्रचलित देवताओं के साथ संबंध स्थापित करके सप्तमातृकाओं की परिकल्पना दृढ़ हुई है। अपने समय के उपास्य देवों के साथ उनकी एकता स्थापित हो जाने पर निर्धारित सप्तमातृकाएँ इस प्रकार हैं[3]–

मुख्य देव	**मातृका स्वरूप**	**वाहन**
ब्रह्मा	ब्राह्मी या ब्रह्माणी	हंस
महेश्वर (शिव)	माहेश्वरी	वृषभ
कुमार (कार्त्तिकेय)	कौमारी	मयूर
विष्णु	वैष्णवी	गरूड़
वराह	वाराही	महिष या वराह
इन्द्र	ऐन्द्री	हाथी
भैरव	चामुंडा	शव

मातृकाओं की संख्या के बारे में शास्त्रों में मतभेद भी देखा जाता है।

साहित्य में मातृकाएँ – मातृकाएँ दो प्रकार की हैं। एक मातृदेवी और दूसरी ब्राह्मी आदि सप्तमातृकाएँ । मातृदेवी का स्वतंत्र निरूपण पुराणकारों और मूर्ति – शास्त्रकारों ने नहीं किया है परंतु सप्तमातृकाओं का वर्णन किया है, उनका मूर्तिविधान भी दिया है ।

वैदिक साहित्य में ऋग्वेद के अंतर्गत सोमनिर्माण के प्रसंग में सात मातृकाओं का उल्लेख है।[4] हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र में बारह आहुतियों की चर्चा है जो चार मातृकाओं को, चार अनुमति को, दो राका और दो सिनीवाली को दी जाती हैं।[5] गोभिल स्मृति में चौदह मातृकाओं का उल्लेख है।[6] सप्तमातृकाओं के पौराणिक संदर्भो और अनुश्रुतियों में पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। उनकी पूजा और उत्पत्ति के बारे में भी अलग–अलग आख्यायिकाएँ पुराणकारों ने दी हैं। रामायण[7] और महाभारत[8] में सर्व प्रथम अग्नि की सात कृतिकाओं या सप्तर्षि – पत्नियों के रूप में सप्तमातृकाओं के के रूप में कार्तिकेय का उनके साथ संबंध दरसाती कथा मिलती है। मार्कंडेय पुराण के 'देवी माहात्म्य' में असुरों के संहार के लिए देवों की सहायता करने उनकी शक्तियों के रूप में सप्तमातृकाओं का उल्लेख मिलता है।[9] इसी ग्रन्थ के ग्यारहवें अध्याय में सप्तमातृकाओं के दृष्टांत, शिवदूती और नारसिंही को मिलाकर नव मातृकाओं का वर्णन है।[10] मत्स्यपुराण[11], अग्निपुराण[12], स्कंदपुराण[13], ब्रह्मवैवर्तपुराण[14], वराहपुराण[15], देवीभागवत[16], कालिकापुराण[17], लिंगपुराण[18] और वामनपुराण[19] में शिव द्वारा अंधकासुर वध एवं सप्तमातृकाओं की उत्पत्ति की आख्यायिकाएँ दी हुई हैं। बृहत्संहिता में नाम के अनुरूप देवचित्तवाले मातृगण की परिकल्पना की गयी है।[20] द्वाश्रय काव्य में भी सप्तमातृका गृह (मंदिर) का उल्लेख है।[21] मृच्छकटिक में मातृकाओं को बलि देने का प्रसंग है।[22] कादम्बरी में दो जगह मातृकाओं का उल्लेख मिलता है। महाराणी विलासवती विविध देवों की पूजा करती थी। उसी संदर्भ में मातृका – भवनों का उल्लेख हुआ है ।[23] सूतिका गृह के वर्णन में मातृकापट की पूजा का निर्देश है।[24]

शिल्पशास्त्र के ग्रंथों में देखा जाय तो अभिलषितार्थ चिंतामणी में ब्राह्मी, वैष्णवी, माहेश्वरी, कौमारी, वाराही और नारसिंही की गणना है। प्रत्येक मातृका का तत्ताद देव स्वरूप, आयुध व वाहन है और उनके आगे वीरेश्वर को खड़ा किया गया है।[25] देवतामूर्तिप्रकरण[26], शिल्परन[27], मानसार[28], श्रीतत्त्वनिधि[29], अपराजितपृच्छा[30], रूपमंडन[31], अंशुमद्भेदागम[32], पूर्वकारणागम[33], श्री विद्यार्णवतंत्र[34] आदि ग्रंथों में मातृकाओं का विस्तृत वर्णन है । सुप्रभेदागम में ब्रह्माणी, महेशी, वैष्णवी,

* व्याख्याता (इतिहास) श्री कल्याण राजकीय महाविद्यालय, सीकर (राज.) भारत

शक्राणी, (इन्द्राणी) वाराही और चामुंडा को तत्तद देव स्वरूप जैसी पद्मपीठ पर विराजमान, दोनों हाथ वरद और अभयमुद्रा में, शेष दो हाथों में उन उन देवों के आयुध ग्रहण करने, उन्हीं देवताओं जैसे वर्ण और उनके वाहन रखने का विधान है।[35] प्रपंचसारतंत्र में ब्रह्माणी, माहेशी, वैष्णवी, कौमारी, इन्द्राणी, चामुंडा और महालक्ष्मी ये सात नाम गिनाये हैं।[36]वामकेश्वरतंत्र के अंतर्गत नित्यशोधशिकार्णव में अष्टमातृकाओं का उल्लेख है।[37] मंत्रमहोदधि में अष्टमातृकाएँ हैं।[38]

उपर्युक्त पुराणों और शिल्पशास्त्रों में वर्णित मातृकाओं के नामों में और क्रम में थोड़ा फर्क है। वस्तुतः समग्ररूप में ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, ऐन्द्री, चामुंडा, नारसिंही, योगेश्वरी, महालक्ष्मी, शिवदूती, रौद्री (रुद्राणी), आग्नेयिका, यमदंडधरा, वासवी इस प्रकार सोलह मातृकाओं का समावेश होता है। मत्स्यपुराण, मार्कण्डेयपुराण, वराहपुराण, देवीभागवत, देवीमाहात्म्य, ब्रह्मवैवर्तपुराण, लिंगपुराण, मानसार, देवतामूर्तिप्रकरण, श्री तत्त्वनिधि, श्री विद्यार्णवतंत्र, प्रपंचसारतंत्र, योगिनीहृदय इन तेरह ग्रंथों में अष्टमातृकाओं का निरूपण हुआ है। जबकि बाकी 11 ग्रंथों में सप्तमातृका का वर्णन है। इस प्रकार सप्तमातृका और अष्टमातृका इन दोनों परंपराओं का प्रचार देखा जाता है।

पुरावशेषों में मातृकाएँ – विश्ववर्मा गंगाधर (झालावाड़ राजस्थान) लेख (मालव सं. 48., सन् 423–24) में विश्ववर्मा के मंत्री मयूराक्ष द्वारा बनवाये मातृका भवन का उल्लेख मिलता है।[39] स्कंदगुप्त के बिहार स्तंभलेख (पांचवीं सदी) में मातृका– गृह बनाने का उल्लेख है।[40] कदम्ब और चालुक्यों के अभिलेखों में भी स्वामी महासेन (कार्त्तिकेय) के साथ मातृकाओं का निर्देश मिलता है।[41]

मातृका – शिल्पों का निर्माण बहुत प्राचीन है। मथुरा से प्राप्त शिलापट्ट पर मातृकाओं की आकृतियाँ कुषाणकाल जितनी प्राचीन हैं। इन सप्त मातृकाओं में क्रमशः ब्रह्माणी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और चामुंडा दृष्टिगोचर होती हैं। उनके मस्तकों के आसपास प्रभामंडल है। प्रत्येक मातृका ने अपने बायें हाथ में बालक धारण किया है। ब्रह्माणी के तीन मुख हैं, दाहिने हाथ में सुवा है। देवी का वाहन हंस है। माहेश्वरी अपने वाहन वृषभ के आगे त्रिशूल धारण किये खड़ी है। कौमारी मयूर वाहन के समीप हाथ में माला लिए हुए है। वैष्णवी ने गदा धारण की है, उनका वाहन गरुड़ है। वाराही के हाथ में भग्नदंड है, वाहन महिष है। इन्द्राणी का वज्र खंडित है परंतु हाथी (ऐरावत) स्पष्ट दिखायी दे रहा है। इस समूह की अंतिम देवी चामुंडा का वाहन शव है। गले में मुंडमाल है, पीठ से चिपका हुआ पेट है, स्नायु दिखायी दे रही हैं। इन सप्त मातृकाओं के साथ वीणा बजाते वीरभद्र की जटामुकुटधारी मूर्ति दाहिनी ओर तथा लम्बोदर गणपति की परशु और मोदकपात्रधारी मूर्ति बायीं ओर दिखायी गयी है। सिंहवाहिनी देवी का आलेखन भी है ।[42]

पढारी देवगढ के पास राजघाटी, नाहरघाटी, बेसनगर, मंदसोर (म.प्र.), तमेश्वर, आमझरा, आबानेरी (राजस्थान), धोरल (उड़ीसा), ऐहोल आदि स्थानों से मातृका शिल्प मिले हैं। ये तीसरी सदी से पांचवीं सदी मध्य के । गुजरात में अमरेली से प्राप्त षष्ठीदेवी–तीसरी सदी व शामलाजी से प्राप्त चौथी सदी के मातृका शिल्प प्राचीनतम हैं ।[43] अमरेली से अंकधात्री[44] व शामलाजी से माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, ऐन्द्री और चामुंडा की प्रतिमाएँ चौथी सदी की हैं।[45] इनमें ब्राह्मी की प्रतिमा नहीं है। फिर भी मातृका समूह में इसके होने का अनुमान किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. B- P- Sinha, `Evaluation of Sakti Worship in India'The Sakti Cult- and Tara' pp-45&47
2. नी. पु. जोशी, प्राचीन भारतीय मूर्तिविज्ञान, पृ. 115
3. एजन, पृ. 126–38, 139
4. ऋग्वेद
5. शिवशंकर अवस्थी, मंत्र और मातृकाओं का रहस्य, पृ. 283
6. गोभिलस्मृति, प्रथम पाठक, 11–16
7. रामायण 1, 37, 28
8. महाभारत 9, 43, 46
9. मार्कण्डेयपुराण, अ. 88, 11–12 देवीमाहात्म्य, अ. 8
10. देवीमाहात्म्य अ. 11, 19–2.
11. मत्स्यपुराण, अ. 179, 9–11
12. अग्निपुराण, अ. 5.
13. स्कंदपुराण, काशी खण्ड (उत्तरार्द्ध), अ. 7.
14. ब्रह्मवैवर्त प्रकृतिखंड, अ. 64, 87–88
15. वराहपुराण, अ. 27, 3.–37
16. देवीभागवत, स्कंध 12, अ. 11, 56–58
17. कालिकापुराण, अ. 61
18. लिंगपुराण, पूर्वार्ध, अ. 82
19. वामनपुराण, अ. 56
20. बृहसहिता
21. द्व्याश्रय काव्य,सर्ग
22. मृच्छकटिक, अंक 1–15
23. कादम्बरी, अनुच्छेद, 56, पृ. 2.8–5
24. एजन, अनुच्छेद, 64, पृ. 225
25. अभिलषितार्थचिंतामणि, पृ. 3, अ. 1, 835–37
26. देवतामूर्तिप्रकरण, अ. 8
27. शिल्परत्न, अ. 24
28. मानसार, अ. 54
29. श्रीतत्त्वनिधि, पाठ 43–5.
30. अपराजितपृच्छा, सूत्रांक, 223
31. रूपमंडन, अ. 5
32. अंशुमभेदागम, पटल 87
33. पूर्वकारणागम, पटल 12
34. श्री विद्यार्णवतंत्र, श्वास– 32
35. सुप्रभेदागम, पटल 42
36. प्रपंचसारतंत्र, पटल 4
37. नित्यशोधशिकार्णव, 8 पृ. 126; Bhagwant Sahai Iconography of minor Hindu and Buddhist deties 207
38. मंत्रमहोदधि, 3, 17, 18
39. D-C- Sircar, Select Inscriptions, Vol- I, P- 405; Fleet, Corp- Inscription of India, Vol- III, P- 7455
40. D- C- Sircar, Ibid; P- 326,
41. Ibid; P- 326, F-N- No- 3
42. Bhagwant Sahai, Op- Cit; P- 211
43. S R Rao, Excavation at Amreli, P- 48 pl-30, Fig- 5
44. Ibid,pp-101-102p.l 36 fig.2 -3
45. U.P Shah,'Sculptures From Samlaji and Roda, fig 26,32-36

Analysis Radio and Television as Mass Media in Knowledge Gain by Rural Women

Dr. Govind Prakash Acharya*

Introduction - It is well known that different mass media have its own impact for communication of message. No systematic study has been so far conducted on mother and child health message conveyed through radio and T.V. Show. Hence it was worthwhile to study the impact of the selected mass media i.e. radio and T.V. Programme. The findings of this study wil be useful for those persons who are working in educating the rural masses.

Specific Objectives Of Study :

1. To find out the gain in knowledge of rural women about mother and child health message communicated through radio and T.V. Programme.
2. To find out the technological gap with respect to the message conveyed through different media.

Methodology: The study was undertaken in purposively selected Piragan Panchayat Samiti block of Ajmer district of the state of Rajasthan. For selection of Radio Group Listeners, a list of Anganwari centres where radio sets provided was obtained from the Women and Child Development officer (WCDO). From these centres a list of respondents who were listening radio at Anganwari Centres was obtained. Out of the list, 40 responents were randomly selected. Similarly 40 respondents were selected randomly which were viewing T.V. programme shows regularly. Thirty respondents were also selected randomly under media-mix i.e. radio + T.V. from the selected villages. Thus, total 110 respondents constituded sample for the present study.

A communicable disease is one that spreads from one person or animal to another or from a surface to a person. They include colds and flu. Pathogens such as virous bacteria and fungi cause these diseases. Communicable disease can transmit through contact with bodily fluids, insect bites, contaminated surface, water and foods or through the air.

A communicable disease is any disease that passes between people or animals. People sometimes refer to communicable disease as infections or transmissible disease. Pathogens, includes bacteria, viruses, fungi and protozoa cause communicable diseases.

The message namely- “Communicable Diseases- Prevention and Treatment”- was selected for the purpose of this study. Before- after experimental design was adopted to measure the gain in knowledge (change), of respondents through media exposure. To find out gain in knowledge. Respondents were interviewed twice, once before exposure and again just after exposure to media.

The statistical methods used for the analysis of data were mean, percentage, efficiency index and ANOVA (‘F’ test).

Results And Discussion :

Table-1 shows the gain in knowledge of the respondents in terms of mean score and percentage for the selected media i.e. radio (R), Television (T) and radio + television (R+T). It indicates that the respondents exposed to the media-mix i.e. radio and Television, gained the highest knowledge (42.53%) followed by where gain in knowledge was 33.81 percent. Least gain was found in case of exposure to radio (21.68%).

Table - 1 : Gain in knowledge through different media :

Media	Max score	Gain in Knowledge		
		Mean Score	%	‘F’ Value
Radio (R) + Television (T)	80	34.03	42.53	35.07**
Television (T)	80	27.05	33.81	
Radio (R)	80	17.35	21.68	

** Significant at 1% level CV 32.05%

F-tab (2.107) = 3.09 at 5% and 4.82 at 1%

The calculated ‘F’ value presented in table-1, with respect to media, was higher that the table value and was significant at 0.01 level. This shows that all the three selected media deffered significantly from each other in their effectiveness in gain in knowledge.

Table-2 show the least gain in knowledge occured in case of radio and, therefore, it was considered to be the least effective medium in comparison to other media under reference. Considering this as the base, other media were compared for their relative effectiveness. In order of ascendency, next effective medium was Television and finally the combination of radio and television. The most effective media turned out to be radio + television which was 1.96

*Lecturer (Agricultural-Extension) Govt. College, Uniara, Distt. Tonk (Raj.) INDIA

times more effective than radio alone.

Table - 2 : Relative effectiveness index of media in gain knowledge :

S.	Media	Mean Score (X)	Reletive efficiency	Rank
1.	Radio	17.35	1.00	III
2.	Television	27.05	1.55	II
3.	Radio+ Television	34.03	1.96	I

Table-3 indicates that highest technological gap with respect to the message was in the group of respondents exposed to radio (28.43%). The television ranked nubmer two (27.56%) followed by the media-mix (Radio + Television) i.e. 23.17 % in order of descendecy.

Table -3 : Technological gap with respect to "Communicable Diseases Prevention and Treatment" under diffrent media:

S.	Media	Max. Score	Mean scores obtained after exposure	Difference	% gap
1	Radio	80	57.25	22.75	28.43
2	Television	80	57.95	22.05	27.56
3	Radio+ Television	80	61.46	18.54	23.17

Conclusion : The findings of the present study lead to following conclusion :-

1. When radio and television were used singularly, television was more effective than radio with respect to gain in knowledge. Further, it was concluded that the media-mix of radio and television (R+T) had been the most effective media as compared to any of these media used singly for imparting knowledge.
2. Radio, Television and the media-mix of radio and television deffered significantly with respect to gain in knowledge of the respondents.
3. The highest technological gap with respect to the "communicable diseases - prevention and treatment." was left by the radio listeners whereas the respondents exposed to radio + television left the least gap. The television ranked at second place.

References :-

1. Bhardwaj, D.P. (1966), "Farm broadcasting in agricultural extension" - A brief not Ind. Jr. Extn. Edu. 1 (4) 315-317
2. Bharati, C.L. (1983), "Effectiveness of selected traditional adis in gain and retention of knowledge in nutrition". M.Sc. Thesis in Home Science Extn. Edu. Sukhadia University, Udaipur
3. Bhatnagar, S. (1977), "Effectiveness of selected audio-visual aids in gain and retention of knowledge in home making practises". Ph.D. Thesis, Gujarat Univesity
4. Pathak, M and Shah, A. (1984), "Effectiveness of puppetry in the education of rural adult women". Ind Jr. Ad. Edu. Vol. 45 No. 9
5. Bhatnagar, S. Mathur, S.L. and Kantikar (1984), "effetiveness of puppetry in the education of rural adult women". Indian Journal of Adult Education Sept.
6. Bunker, R. (1980), "Puppet Pass on your words". Intensive Agriculture, October pp.13
7. Dube. V.K., Chaturvedi, J. and Sharma. I. (1973). "Effectiveness of visual aids in relation to agrarian practices". Indian J. Extn. Edu. Vol. 9 pp. 78.
8. Lahari, S.L. and Bhatt D.C. (1984), "Low cost Audio-visual aids to aid progress". Intensive Agriculture, October pp. 19.
9. Mathur, V. (1983). " Impact of short duration training course on gain in knowledge of farm women." A thesis submitted for M.Sc. Programme to Sukhadia University, Udaipur, Rajashtan.
10. Panday and Roy (1978)." Factors associated with effectiveness of Farm Broadcast." Indian Journal of Ext. Edu. Vol. 14, p. 55

****

Urdu Words Often Used in Urdu Poetry: A Comprehensive Study

Dr. Arshad Siraj*

Abstract - Learning a language is always a great way to enhance one's creativity and expressiveness. To learn Urdu, there are many resources available online and offline. You can start by finding a good Urdu language course, either online or in-person. One can understand the Urdu poetry by reading Urdu poetry, listening to Urdu music, and watching Urdu movies and TV shows. Urdu is the most easy language for those who have good sense of humor and an interest in literature.

Urdu poetry is renowned for its beauty and depth. Here are some classic examples of Urdu poetry that you might enjoy:

"Deedar-e-Yaar" by Faiz Ahmed Faiz
"Ghazal" by MirzaGhalib
"Nuskha-e-Wafa" by AllamaIqbal
"Nazm" by Faiz Ahmed Faiz
"Nazm" by Mir Taqi Mir

Like Elizabethan English which is complete with social and regional realities, Urdu holds a remarkable wealth of the conventions of many cultures and languages. This element got a great boost in the 18th century as there was no media to convey information to the public. This is where Urdu poetry became a more intimate form of communication among people even through social tribulations. Musha'era was a specific type of Urdu poetry that was used as a means of communication. As the culture penetrated India, musha'eras developed warmth and intensity mainly through the poets in Delhi. This popularized Urdu poetry in the Mughal Empire. Gradually this poetic language became a thing for royalty and a way to convey reverence to the emperor.

Today a significant part of Indian culture, just like other languages, the history of Urdu poetry also shares origin and its influences with other linguistic traditions within the Urdu-Hindi-Hindustani mix. Urdu poetry gained immense popularity in the 18th century when Urdu replaced Persian as a major language of the region. In the 18th there was a scarcity of newspapers. Urdu poetry's history is an amazing journey that is replete with intrigue for the curious onlookers. However, the amazing intensity with which it continues to thrive amidst the hurly burly of the cotemporary age bears the testimony of its presence.

Keywords- Glossary, Urdu, Poetry, Ghazals, Shayri, Literature.

Introduction - Urdu poetry is known for its romantic themes, and there are many famous lines that express the beauty and power of love. Here are a few examples in Roman English:

"Tum meri zeest ka hissa ho, phir har baat ko qubool karo" - "You are a part of my life, so accept everything that comes with it."

"Tumhi ho jiskodilmeinbasayahaimaine, tum hi ho jis se nazar takrayi hai meri" - "You are the one I have placed in my heart, and the one I have caught sight of."

"Mohabbat ki sazaa, yoon toh milti hai har kisiko, magar hum se lafzoon ki siyahi churayi gayi" - "Everyone receives the punishment of love, but my words were stolen from me." "Jab tum hasti ho, jahan me in kuch bhi nahi lagta, phir meri nazar se tum dekho, kitna khubsurat lagta hai" - "When you smile, the world seems to disappear, and when I look at you, you are so beautiful."

"Dil keharkone se teri tasveer nikalti hai, is tarah meri saans keh arraag se aati hai teri awaaz" - "Your image appears from every corner of my heart, and your voice comes with every breath I take."

These are just a few examples of the beautiful lines about love that can be found in Urdu poetry. The language is known for its rich imagery, depth of feeling, and passionate expressions of love.When it comes to urdu poetry there is no finish line …. The very famous line said by every poet in every event is….

Glimpses of Urdu Ghazals: Gazal ka matlab hi hai mehboob se guft-gukarna.So here is some lines of the best poetry on beauty. It is written by Jaun Eliya

1) KITNE AISH SE RAHTE HONGE KITNE ITRAATE HONGE

***Lecturer & HOD (Urdu) SK Govt. College, Sikar (Raj.) INDIA**

JAANE KAISE LOG VO HONGE JO USKO BHAATE HONGE
YAARON KUCH TO HAAL SUNAAO USKI QAYAMAT BAAHON KA
VO JO UNME SIMAT TE HONGE VO TO MAR JAATE HONGE.

2) SAU CHAAND BHI CHAMKENGE TO KYA BAAT BANEGI
TUM AAO TO ISH RAAT KI AUKAAT BANEGI
ISHQ KAREIN TO BHI BHALA EK SE KAREIN
AE ISHQ HUMAARI NA TERE SAATH BANEGI

3) USKI BAATEIN TO PHOOL HO JAISE
BAAKI BAATEIN BABOOL HO JAISE
AUR YUN NAJAR JHUKA K USKA IJHAAR KARNA
ISHQ MEIN SAB KUCH KABOOL HO JAISE
AND ONE OF THE MOST FAVOURITE
MERI AANKHON MEIN MOHABBAT KI CHAMAK AAJ BHI HAI
HAALAN KI USKO MERE PYAAR PAR SHAQ AAJ BHI HAI
NAAV MEIN BAITHKAR DHOYE THE USNE HAATH KABHI
POORE TAALAB MEIN MEHDI KI MEHEK AAJ BHI HAI

4) CHAAND BHI HAIRAAN DARIYA BHI PARESHAANI MEIN HAI
YE KISKA AKS GIRA HAI JO ITNI RAUSHANI PAANI MEIN HAI...
I HOPE YOU WILL GIVE ME CHANCE TO TELL MORE…
LOVE U SHYARI LOVERS

NOTE: I HAVE MORE URDU SHYARI TO TELL EVEN BETTER THAN THIS .
I WILL RECITE THEM IF I WILL GET GOOD RESPONSE FROM SHYARI LOVERS.

Examples of Good Urdu Poetry

1. Tu mohabbat se koi chaal to chal,haar jaane ka hausla hai mujhe.
2. Hontho ne sab baate chupa kar rakhi ,aankho me ye hunar ka bhiaya hi nahi.
3. Aukat nahi thi zamane me jo meri keemat laga sake, kambakht ishq me kya gire muft me neelam ho gaye.
4. Thora sukoon bhi dundi ye janaab ye zaruratein to kabhi khatm nahi hongi.
5. Koi sulah kara de zindagi ki uljhano se baritalablagi hai aaj muskurane ki.
6. Karne lage hi saab-e-zindagi to rob aithe, gintera hesaalon ko aur lamhe kho baithe.
7. Bari lambi guftgu karni hai, tum aanaek puri zindagi lekar.
8. Sochta huun dhoke se zeher de duun saari khwahishon ko dawat pebula kar.
9. Umar bhar ghalib yahi bhool kartara ha , dhool chehre pe thi aur aaina saaf kartara ha.
10. Kitna khauf hota hai shaam ki andhero me, puch un panchiyon se jinke ghar nhi hote.

Specific Urdu Words & Their Meaning in English

Some beautiful Urdu words to use in shayari with their meaning in English-

Urdu Words	English Meaning	Urdu Words	English Meaning
Aahista	Gently	Ayyaaar	Clever
Aarazoo	Desire	Aashiqi	Romance
Aks	Reflection	Aafreen	Alluring
Alfaaz	Set of words	Aatish	Fire/ Flame
Aashna	Companion	Afsoon	Magic
Aaftaab	The Sun	Arsh	Sky
Ashq	Tears	Alvida	Goodbye
Afsaana	Tale	Aagosh	Embrace
Alhada	To seperate	Bandegi	Devotion
Bahaar	Springtime	Bebas	Helpless
Bayhiss	Insensitive	Bayaan	Statement
Badan	Body	Ba-dastoor	unaltered
Bebaak	Bold	Baseerat	vision/ foresight
Bewafa	faithless, treacherous	Bayaabaan	wildness
Bekhudi	selflessness	Bohotaala	great
Chaahat	want	Chust	active
Darmiyan	Near	Ehmiyat	importance
Dilchaspi	Interest	Dastoor	rule
Dushawar	Unattainable	Daur	age
Diwaangi	madness	Daleel	evidence
Ehsaas	feeling	Fakhr	proud
Ehtiyaat	caution	Falsafa	philosophy
Eemaandar	honest	Fanaa	end
Farishta	angel	Firdous	paradise
Falaq	sky	Faqat	only
Faryaad	complaint	Fitoor	obsession
Garj	thunder	Gardish	bad time
Gehrai	depth	Gulshan Galatfehmi	garden misunderst -anding
Ghayrat	self-respect	Gunah	offence
Guzaarish	request	Gair	non related/ outsider/ stranger
Guftgu	chitchat	Itefaak	conincidence
Haiseeyat	importance	Ilm	knowledge
Hasi	laughter	Inaayat	blessing
Haseen	beautiful	Ikhlaaz	sincerity
Hassmuk	cheerful	Iltezaa	request
Hasrat	painful	Iqraar	to accept
Hayaa	modesty	Inkaar	to reject
Hayaat	life	Izhaar	to confess
Hayrat	shock	Iztiraab	restlessness
Hunar	skill	Ibrat	an incidence that teaches us a lesson
Hasrat	unfulfilled desire	Ikhtiyar	power / control
Humdum	intimate	Hareef	rival/ apponent

	companion		
Itefaak	conincidence	Jalaal	rage
Ilm	knowledge	Jang	war
Inaayat	blessing	Jannat	heaven
Ikhlaaz	sincerity	Jazba	passion
Iltezaa	request	Jazbaat	emotion
Iqraar	to accept	Jheel	lake
Inkaar	to reject	Jism	body
Izhaar	to confess	Justajoo	search
Iztiraab	restlessness	Junoon	obsession
Ibrat	an incidence that teaches us a lesson	Ikhtiyar	power / control

In addition to the above mentioned words of Urdu, the following words are also widely used in ghazals, shayris and poems.

Lafz- words	Lihaaz- respect	Labb- lips
Lehjaa- way of speaking	Laazmi- necessary Mayassar- available	Maasoom- innocent Muntazir- awaiting / expecting
Musavvir- artist	Maahataab-themoon	Mukammal- complete
Mukarrar-repeat	Masroof-busy	Mulakaat- meeting
Mukhtasar-short / brief	Mazboor-helpless Makaam- place	Manzeel- destination Mizaaz- mood
Moajaza-miracle	Musalsal- constant	Tabassum- smile
Tabahi-destruction	Takalluf-formality	Tanhaai-solitude
Takhayyal-imagination	Tasavvur-imagination	Taskin-satisfaction
Tamaam-whole	Taqdeer- fate	Tamanna- wish\
Taabir-interpretation	Mukhtalif- different	Meherbaan- kind
Mohataaz-dependent	Noor-light/radiance	Nawaazish-kindness
Nazaakat-delicate	Nayaab- unique Naaraaz-disappointed	Naaz- pride Nigahen- eyes
Nazar- sight	Nafrat- hatred	Neemgaram- warm
Paakija- pure	Purummeed-hopeful	Purjosh- excited
Paimana-scale	Quinaat- Universe	Qayaamat- end of the world
Qurbat-closeness	Qamar- moon Tavaqqo-expectation	Tadbeer- solution Takabbur-arrogance
Tawana-energetic	Tarannum- melody	Uns- love
Ulfat- love	Vasl- passion	Waabastaa-related to
Zaahir-apparent	Zalzalaa-earthquake	Qalb- heart
Qatra- drop	Qaasid- messenger	Rooh- soul
Rayshami-silky	Ruhaaniyat-soulfullness	Rafique- friend
Rashq-jealousy	Raqs- dance	Riwaayat- tradition
Raftaar- pace	Ranjish- anguish	Raabta- an unknown yet strong connection
Saahil- shore	Seher- dawn	Shahgird-student
Silah- reward	Sukoon- peace	Shiddat- intensity
Shabaab-youthfulness	Shafaq- twilight	Shaista- polite
Sargoshi-whisper	Shokhiyan-mischief	Surmai- gray
Zameer-conscience	Zia- light	Zulf- hair
Zubaan-language/ tongue	Zarra- atom/particle	Zeenat- decoration

Objectives of the Study

Related Literature & Its Review

'Poetry has always been soothing to one's content and when one talks about the language of Urdu and its poetry then it's a thought of glowing and rich forms of poetry that to this day is read with love and passion. There has been generous contribution by the Urdu poets, without whom the poetry would not have been so inspiring and versatile. This poetic divine has been extended in this era too via their poetic philosophy and even today the poetries have mesmerized its readers and they enjoy reading it over and over again with the same interest. As known that Urdu language had been derived from different languages, the Urdu poets have also excelled in languages such as Persian, Hindi and Arabic. Urdu has been and still has a heavy share to play in the Indo-Pak Sub-Continent and so does this share has been saved and continued through the writings of the poets, which are indeed a priceless gift for this generation and on.'[1]

'Early Urdu poetry, at the time called Re3htah, forms a remarkable example of the circulation of ideas in early modern India. Scholars trace its modern form to the reception in early eighteenth-century Delhi of a Southern literary idiom, usually called Dakhanî that is itself the result of repeated waves of migration from North India to the Deccan. While the historical origins of Urdu occupy an arena of lively scholarly debate, its later historical and literary importance is quite clear. By the start of the nineteenth century a highly literary and Persian-inflected form of Urdu would swiftly replace Persian in elite circles. Thus we have a historically significant moment at which the confluence of the vernacular and the cosmopolitan created a new cosmopolitan vernacular, however this process remains understudied'[2].

'The Urdu novelist and short story writer IntizarHussayn, in his story "IhsanManzil," describes the anxiety produced in a northern Indian Muslim community when a magazine arrives addressed to the daughter of a respectable household. Set in the early part of the 20th century, the story depicts how the Muslim woman's name on the envelope, exposed as it was to the whole world, became a metaphor for modernity, the public, and the outside penetrating Muslim moral boundaries and domestic ethos. Similar to Hussayn's incisive depiction of changes within

Indian Muslim households, Gail Minault gives us a sense of how religious reform, expanding opportunities for education for both genders, and colonial modernization in the first half of the 20th century undermined and challenged traditional aspects of middle-class Muslim life in northern India'[3].

'Muslim movements in the twentieth century have sought to develop new reading and listening publics attuned to the messages of reform and renewal. Across Asia and the Middle East, scholars, poets, and activists have created distinctive vernacular genres intended to make the words of scripture widely available. Newspaper columns, quickly printed tracts, and popular poetry have been shaped to the task of tafsîr, the interpretation of scripture. International networks of printers, booksellers, and, more recently, television producers have extended the reformist's reach far beyond older networks of scholarship and communication (Metcalf 1990; Eickelman 1992). Often modernist writers have signaled their break with past scholarly traditions by writing in vernaculars, sometimes developing new vernaculars. They wrote in Turkish, Urdu, Bengali, or Indonesian, rather than the traditional religious and literary languages of Arabic, Persian, and Javanese (Anderson 1990; Freitag 1988; Mardin 1989).'[4]

Hypothesis: The main hypothesis is that the Urdu poetry uses specific terms and words the knowledge of which facilitates the understanding of the Urdu poetry.

Methodology: The paper is designed as per the prescribed norms and process of research.

Findings, Suggestions & Conclusion: Urdu poetry, in various forms, was started, for the first time, in Persian and Arabic language. Currently an important part of Indian culture, Urdu poetry reached India during the British rule with five stalwarts of the Urdu Language. They are Mir Taqi Mir, MirzaGhalib, Mir Anees, AllamaIqbal and Josh Malihabadi.

The Urdu poetry is known for its themes of love, social justice, and political oppression, struggles of the working class and the poor, plight of oppressed groups such as women and minorities, rights of the oppressed and the marginalized in society. It is known for lyrical beauty, use of imagery, and powerful imagery.

Urdu poetry can be broadly classified into two categories: Ghazal and Nazm. Ghazal is a form of poetry that consists of rhyming couplets and a refrain, with each line sharing the same meter. Nazm, on the other hand, is a more structured form of poetry that follows a specific rhyme scheme and does not usually have a refrain. Within these two categories, there are several sub-genres of Urdu poetry, including Qasida, Rubai, Masnavi, and Marsiya, among others.

Without the knowledge of the Urdu words that are generally used in Urdu poetry, the Urdu poetry cannot be grasped in true sense and its spirit cannot be captured.

References:-

1. Hasan, Syed Akif and Subhani, Muhammad Imtiaz and Osman, Ms. Amber-Contribution of Ghalib in Urdu Literature, MPRA, 2012
2. DHAVAN, PURNIMA, and HEIDI PAUWELS. "Controversies Surrounding the Reception of Valî "Dakhanî" (1665?–1707?) in Early Taýkirahs of Urdu Poets." Journal of the Royal Asiatic Society 25, no. 4 (May 27, 2015): 625–46.
3. Ali, Kamran Asdar. "GAIL MINAULT, Secluded Scholars: Women's Education and Muslim Social Reform in Colonial India (Delhi: Oxford University Press, 1998). Pp. 373. International Journal of Middle East Studies 34, no. 1 (February 2002): 168–70.
4. Bowen, John R. "A Modernist Muslim Poetic: Irony and Social Critique in Gayo Islamic Verse." Journal of Asian Studies 52, no. 3 (August 1993): 629–46.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक-बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों का अध्ययन

डॉ. ओमपाल*

शोध सारांश – प्रस्तुत अध्ययन के आवश्यक तथ्यों, आंकडों एवं सूचनाओं के संकलन एवं उद्देश्यों माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक-बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों के मापन हेतु की पूर्ति के लिए नलिनी राय (बैंगलोर) द्वारा निर्मित एवं मानकीकृत परीक्षण अभिभावक-बालक सम्बन्ध मापनी का प्रयोग किया गया एवं शैक्षिक उपलब्धि- कक्षा-10 की वार्षिक परीक्षा के प्राप्तांकों का प्रतिशत लिया गया इसमें अभिभावक-बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयाम (सुरक्षा, अस्वीकृति, उद्देश्यपूर्ण दण्ड, माँग ,उदासीनता ,प्रतीकात्मक सराहना तथा उपेक्षा आदि।) तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध का अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन जनपद मेरठ के 200 विद्यार्थियों से प्राप्त प्रदत्तों पर आधारित है। अध्ययन से निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक-बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सम्बन्ध है।

प्रस्तावना – परिवार शिक्षा की एक अनौपचारिक संस्था है जिसे बालक की प्रथम पाठशाला का नाम भी दिया जाता है। इस संस्था में बालक जो पाठ सीखता है उसका प्रभाव उस पर जीवनभर देखा जा सकता है, परिवार में रहकर बालक अपना शारीरिक, सामाजिक, मानसिक, आर्थिक, नैतिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं आध्यात्मिक विकास करता है। कावरा (2005) वेल (1988) एवं सेमरोफ (1975) ने अपने अध्ययनोपरांत निष्कर्ष प्राप्त किया कि बालक के व्यवहार एवं उपलब्धियों पर बालक एवं माता-पिता के संबंधों का प्रभाव पडता है। पंवार सरिता एवं उनियाल (2008) ने एक अध्ययन उच्च प्राथमिक स्तर के बालक-बालिकाओं के समायोजन एवं माता पिता का उनके प्रति व्यवहार का एक तुलनात्मक अध्ययन किया। अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार रहे (1) माता-पिता बालक-बालिकाओं के प्रति प्रभुत्वपूर्ण एवं दण्डात्मक व्यवहार भिन्न-भिन्न है। (2) बालक एवं बालिकाओं के विद्यालयी समायोजन में पर्याप्त भिन्नता पाई गई। विद्या प्रतिभा (2006) ने पाया कि खिलाडियों में तनाव का 40 प्रतिशत कारण विद्यालय है।

अभिभावकों का अधिकाशत: इस सम्बन्ध में यह मानना होता है कि विद्यालय में अध्यापक उचित प्रकार से शिक्षण नहीं करते, शिक्षण उनके लिए सामाजिक उत्थान के अपेक्षा एक व्यवसाय अधिक है, वे उच्च वेतन के बावजूद, ट्यूशन पढाने, धन लेकर परीक्षा में अंक बढाने, नकल कराने इत्यादि कार्यो में लिप्त हैं। जिससे शिक्षा बालकों को एक बोझ के समान लगती है, तथा बालक इससे कुंण्ठित एवं तनावग्रस्त रहता है।

शोधकर्ता यही जानने का प्रयास करना चाहता है कि अभिभावक एवं बालक का सम्बन्ध किस प्रकार बालक के विभिन्न शैक्षिक पहलुओं को प्रभावित करता है तथा क्या इसका सम्बन्ध बालक की शैक्षिक उपलब्धि पर किसी न किसी रूप में पड़ता है अथवा नहीं।

समस्या कथन – माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक-बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों का अध्ययन करना।

शोध के उद्देश्य :

1. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक-बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों का अध्ययन करना।
2. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक-बालक सम्बन्धों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों के बीच अन्तर की सार्थकता का परीक्षण करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं :

1. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक-बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध नही है।
2. माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक -बालक सम्बन्धों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों के बीच कोई सार्थक अन्तर नही है।

अध्ययन का परिसीमाकंन – शोध केवल जनपद मेरठ के माध्यमिक स्तर खिलाडियों से प्राप्त आकड़ों पर आधारित है।

अध्ययन विधि – प्रस्तावित अध्ययन एक **वर्णनात्मक एवं 'सहसम्बन्धात्मक अध्ययन'** है।

प्रतिदर्श चयन

जनसंख्या – प्रस्तावित शोध की जनसंख्या जनपद बागपत के माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत कक्षा-10 के विद्यार्थी है।

न्यादर्श – प्रस्तावित शोध का न्यादर्श कक्षा-10 में अध्ययनरत 200 विद्यार्थी है।

न्यादर्शन – न्यादर्श के चयन के लिए बहुस्तरीय यादृच्छिक न्यादर्शन प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन के प्रमुख चर – अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि तथा अभिभावक-

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर (खेल विभाग) चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय,मेरठ (उ.प्र.) भारत

बालक सम्बन्ध तथा लैगिंक भिन्नता को चर के रूप में प्रयोग किया गया है।

शोध उपकरण – प्रस्तावित शोध में आकडों के एकत्रीकरण हेतु निम्न उपकरणों का प्रयोग किया गया है।

1. अभिभावक–बालक सम्बन्ध मापनी–नलिनी राय (बैंगलोर)
2. शैक्षिक उपलब्धि– कक्षा–10 की वार्षिक परीक्षा के प्राप्तांकों का प्रतिशत

सांख्यिकीय प्रविधियॉ – संकलित प्रदत्तों का विश्लेषण हेतु '**कार्ल पीयरसन सहसम्बन्ध गुणांक**' एवं '**टी–परीक्षण**' सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग किया जाएगा।

आंकडों का विश्लेषण –

महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक–बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध

महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक–बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों को निम्न तालिका–1 में प्रदर्शित किया है–

क्र.	अभिभावक–बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयाम	पुरूष	महिला
1	सुरक्षा D1	0.347*	0.379*
2	प्रतीकात्मक दण्ड D2	–0.87	–0.976*
3	अस्वीकृति D3	–0.708*	–0.79
4	उद्देश्यपूर्ण दंड D4	–0.791*	–0.78
5	मांग D5	–0.688*	–0.705*
6	उदासीनता D6	0.525*	0.555*
7	प्रतीकात्मक सराहना D7	0.571*	0.528*
8	प्रेम D8	0.617*	0.528*
9	उद्देश्यपूर्ण पुरस्कार D9	0.541*	0.521*
10	उपेक्षा D10	–0.596*	–0.489*
11	समग्र शैक्षिक उपलब्धि	0.132*	0.265*

Degrees of freedom (df)= 198, महिला = 100, पुरूष = 100,**:–0.05 स्तर पर सार्थक ,*0.01 स्तर पर सार्थक

प्रस्तुत अध्ययन के उद्देश्य एवं परिकल्पना को ध्यान में रखते हुए उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु महिला एवं पुरुष विद्यार्थियों के विभिन्न आयामों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक (r) की गणना की गई। जिससे 11 सहसम्बन्ध गुणांक प्राप्त हुए। जिन्हें तालिका 1 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 1 के निरीक्षण से परिलक्षित होता है कि पुरुष विद्यार्थियों के अभिभावक बालक सम्बन्धों के आयाम D1 सुरक्षा (r=0.347) D3 अस्वीकृति (r=–0.708) D4 उद्देश्यपूर्ण दण्ड (r=–0.791) D5 माँग (r=–0.688) D6 उदासीनता (r=0.525) D7 प्रतीकात्मक सराहना (r=0.571) D10 उपेक्षा (r=–0.596) तथा अभिभावक बालक सम्बन्धों के समग्र की शैक्षिक उपलब्धि 0.132 हैं। इनमें से D3D4D5D10 के मध्य ऋणात्मक सहसम्बन्ध है। परिणामों से स्पष्ट है कि पुरुष विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावक बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयामों का प्रभाव पड़ता है। अर्थात अभिभावकों का सुरक्षात्मक व्यवहार, उदासीनता, प्रतीकात्मक, सराहना, प्रेम, उद्देश्यपूर्ण पुरस्कार पुरुष विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि को धनात्मक रुप से प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त अभिभावकों की अस्वीकृति, उद्देश्यपूर्ण दण्ड, माँग एवं उपेक्षा का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों पर ऋणात्मक प्रभाव पड़ता है। तालिका 1 में प्रदर्शित सहसम्बन्ध दशति हैं कि महिला विद्यार्थियों के अभिभावक बालक सम्बन्धों के आयाम D1 सुरक्षा (r=0.379) D6 उदासीनता (r=–0.555)D7 प्रतीकात्मक सराहना (r=0.528) D9 उद्देश्यपूर्ण पुरस्कार (r=–0.521) एवं समग्र (r=0.265) के मध्य धनात्मक सहसम्बन्ध पाया गया इनके अतिरिक्त D2 उद्देश्यपूर्ण दण्ड (r=–0.976)D5 माँग (r=–0.705) D10 उपेक्षा (r=–0.489) के मध्य ऋणात्मक सहसम्बन्ध पाया गया।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि महिला खिलाडियों की शैक्षिक उपलब्धियों को अभिभावक बालक सम्बन्धों के विभिन्न आयाम धनात्मक एवं ऋणात्मक रुप से उपरोक्त वर्णित आधार पर प्रभावित करते हैं। तालिका 2 के निरीक्षण से स्पष्ट है कि महिला एवं पुरुष खिलाडियों के अभिभावक बालक सम्बन्धों एवं शैक्षिक उपलब्धि के सहसम्बन्ध गुणांक क्रमश: 0.132 एवं 0.265 के मध्य टी मान 0.3185 हैं। जिससे स्पष्ट है कि दोनों सहसम्बन्धों के मध्य सार्थक अन्तर है जिनमें दोनों पुरुष (r=0.132) महिला (r=0.265) घनिष्ठ रुप से सहसम्बन्धित है।

महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक–बालक सम्बन्धों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों के बीच अन्तर की सार्थकता का परीक्षण

महिला एवं पुरूष खिलाडियों के अभिभावक–बालक सम्बन्धों तथा शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्धों के बीच अन्तर की सार्थकता का परीक्षण हेतु टी–मान को निम्न तालिका–2 में प्रदर्शित किया है–

चर	विद्यार्थी	सहसम्बन्ध गुणांक (r)	'टी'
अभिभावक–बालक सम्बन्ध–शैक्षिक उपलब्धि	पुरूष (200)	.132*	. 318*
	महिला (200)	.265*	

Degrees of freedom (df) = 198

निष्कर्ष– उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत महिला एवं पुरुष खिलाडियों के अभिभावक बालक सम्बन्ध उनकी शैक्षिक उपलब्धियों को सार्थक रुप से प्रभावित करते हैं।

अध्ययन के परिणामों के आधार पर कहा जा सकता है कि बालकों को अभिभावक से मिलने वाला सुरक्षात्मक व्यवहार, उदासीनता, प्रतीकात्मक सराहना, प्रेम एवं उद्देश्यपूर्ण पुरस्कार सम्बन्धी आयाम बालकों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाते हैं। साथ ही अभिभावकों का अस्वीकृतिपूर्ण व्यवहार, उद्देश्यपूर्ण दण्ड, माँग एवं उपेक्षा बालकों की शैक्षिक उपलब्धि को बढ़ाने में अभिभावकों की उल्लेखनीय भूमिका है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. पंवार सरिता एवं उनियाल (2008) उच्च प्राथमिक स्तर के बालक–बालिकाओं के समायोजन एवं माता–पिता का उनके प्रति व्यवहार का एक तुलनात्मक अध्ययन, प्राथमिक शिक्षक, वर्ष 33 अंक–1 जनवरी 2008
2. कावरा रूपनारायण, 2005, बच्चों के विकास में अभिभावकों का योगदान, प्राथमिक शिक्षक एन0सी0ई0आर0टी0 पब्लिकेशन, वर्ष 30, अंक 2, अप्रैल–जुलाई।
3. श्री विद्या प्रतिभा सी0एस0 (2006) रोल ऑफव पेरेन्टस इन हेल्पिंग एडोलसेन्टस विद स्ट्रेस, एक्स पैरीमेन्ट एजुकशेन वाल्युम 34 नं0 8 पेज 165

प्राचीन भारत का विस्मृत गणराज्य: रामग्राम का कोलिय

डॉ. सोमेश कुमार सिंह *

प्रस्तावना – भारत के लिए लोकतंत्र की अवधारणा नई नहीं है। प्राचीन काल के अनेको साहित्यिक स्त्रोतो में हमें जनतांत्रिक व्यवस्था के चिन्ह दिखाई देते हैं। विश्व के प्राचीन धर्म ग्रंथ ऋग्वेद में हमें स्थानीय स्तर पर सभा समिति व विदथ जैसी संस्थाएं दिखाई देती हैं जो की जनता का प्रतिनिधित्व करती थी तथा राजा को मार्गदर्शन देती थी। भारत के लोकतंत्र की जड़े भारत के ग्रामों में निहित थी। ग्राम स्तर पर स्थित पंचायत स्थानीय स्वशासन का सबल माध्यम थी। ग्राम स्तर पर ग्रामणी वह अधिकारी था जो जनता का प्रतिनिधित्व करता था। संभवत: यही वह अधिकारी था जिसे बाद में रत्नी कहा गया। वैदिक ग्रन्थों में स्थानीय स्वशासन में कुल ग्राम विश व जन की परिषद का उल्लेख मिलता है जिनमें जनता के व्यापक समूह का प्रतिनिधित्व होता था। धीरे-धीरे भारत में लोकतांत्रिक राज्यों का स्वरूप विस्तृत होने लगा। 1903 में रिजडेविड ने यह स्वीकार किया कि प्राचीन काल में गणतंत्रिक व्यवस्था मौजूद थी। तत्पश्चात अनेको विद्धानों ने भारतीय सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था में मौजूद गणतांत्रिक मूल्यों की खोज की। अवदान शतक से पता चलता है कि मध्य प्रदेश से कुछ व्यापारिक दक्षिणी भारत गए थे। वहां के स्थानीय लोगों ने उनसे उत्तर की शासन व्यवस्था के बारे में पूछा था। अपने उत्तर में उन्होंने बताया था कि यहां के कुछ देश गणों के अधीन है तथा कुछ राजाओं के। अचारांग सूत्र नामक ग्रंथ जैन भिक्षु को चेतावनी देता है कि उसे उसे स्थान पर नहीं जाना चाहिए जहां गणतंत्र शासन हो। प्राचीन साहित्य में गण के साथ संघ शब्द भी आता है। गण संघ का ही पर्यायवाची होता था। पाणिनि ने संघ को स्वतंत्र राजतंत्र से बिल्कुल अलग माना है। कोटिल्य दो प्रकार के संघ राज्यों का उल्लेख करते है - वार्ताशास्त्रोंपजीवी तथा राजशब्दोंपजीवी वार्ताशास्त्रोंपजीवी के अंतर्गत सुराष्ट्र व कंबोज जैसे राज्य आते थे तथा राजशब्दोंपजीवी के अंतर्गत लिच्छिवी, मल्ल, कुकुर, पंचाल, वृज्जि, जैसे गणराज्य थे। संभवत राजशब्दोंपजीवी गणराज्य के प्रमुख राजा की उपाधि धारण करते थे। सिकंदर के आक्रमण के समय हमें ऐसे अनेकों गणराज्य का उल्लेख मिलता है जिनकी शासन व्यवस्था राजतंत्र से बिल्कुल अलग थी।

छठी शताब्दी पूर्व भारत के राजनीतिक रंगमंच पर कोलिय नाम का गणराज्य शासन करता था। इस गणराज्य के बारे में ऐतिहासिक ग्रन्थों में बहुत कम जानकारी मिलती है। यह गणराज्य शाक्यों के पूर्व में स्थित था। शाक्यों व कोलियों के बीच रोहिणी नदी बहती थी। जो कि दोनों राज्यों की सीमा भी थी। कहा जाता है कि महात्मा बुद्ध के साथ इस गणराज्य के पारिवारिक संबंध थे। रोहिणी नदी के बंटवारे को लेकर जब शाक्यों और कोलियों के मध्य विवाद हुआ तो उसमें मध्यस्थता करने हेतु स्वयं महात्मा बुद्ध आए थे। कोलिय गणराज्य ने शाक्यों के साथ अपने जल विवादों को सुलझाने में लोकतांत्रिक तरीकों को अपनाया था। इस जल विवाद को दोनों पक्षों के कृषकों ने अपने अधिकारियों व अपने-अपने राजाओं को बताया था। राजाओं ने इस विषय पर पर्याप्त वाद-विवाद तथा परामर्श के बाद युद्ध का निर्णय लिया था। महात्मा बुद्ध के साथ इस गणराज्य का इतना लगाव था कि महात्मा बुद्ध की मृत्यु के बाद उनकी अस्थियों को प्राप्त करने के लिए कोलिय गणराज्य के लोग भी कुशीनगर पहुंचे थे। बुद्ध की अस्थियों के अवशेषों पर उन्होंने विशाल स्तूप का भी निर्माण करवाया था।

तत्कालीन भारत के लोकतांत्रिक गणराज्य में कोलिय राज्य अत्यंत महत्वपूर्ण था। महात्मा बुद्ध के शाक्यों के साथ इनका रक्त संबंध होने के बाद भी तत्कालीन बौद्ध ग्रन्थों में इसका उल्लेख अत्यंत अल्प मात्रा में प्राप्त होना है।

रामगांमके कोलियों का विवरण हमें बहुत कम उपलब्ध हो पता है। सर्वत्र इस गण का नाम कोलिय ही मिलता है। कुणाल जातक[1] से पता चलता है कि यह नाम शाक्यों द्वारा दिया गया था। शाक्यों ने अपने विरोधियों का अपमान करने के लिए उन्हें जंगली पशुओं की भांति बेर के पेड़[2] के कोटड में निवास करने वाला कहा है। अधिकांश स्रोतों में कोलियों के लिए कोल, कोला शब्द आया है जो की बेर के वृक्ष का नाम माना जाता है। जातक[3] से पता चलता है कि कोलियों के मूल प्रदेश में वृक्ष संख्या में अधिक थे इस कारण इनको कोलिय कहा जाता है। परंतु जातक के इस मत को तार्किक दृष्टि से स्वीकार नहीं किया जा सकता शायद इस वंश का नाम ही कोलि रहा होगा।

इस जाति के बारे में एक अन्य बात यह भी महत्वपूर्ण है कि इस जाति के संबंध में हमारा ज्ञान बौद्ध साहित्य पर ही आधारित है। बौद्ध काल से पूर्व हमें इस जाति की कोई जानकारी नहीं मिल पाती। संभव है बौद्ध काल से पूर्व इस जाति को किसी अन्य नाम से पुकारा जाता हो।

बुद्ध के समय कोलिय गणराज्य था। राम गांम उनकी राजधानी थी। देवदह उनका दूसरा प्रधान केंद्र था।[4] व्रजयेन्द्र कुमार माथुर[5] रामगांम की भौगोलिक स्थिति के बारे में लिखते है कि रामगांम कपिलवस्तु के पूर्व में स्थित था। कुणाल जातक के भूमिका भाग से सूचित होता है कि रोहिणी या राप्ती नदी कपिलवस्तु या रामगांम जनपदों की सीमा रेखा बनाती थी। इस नदी पर एक ही बांध द्वारा दोनों जनपदों की सिंचाई होती थी। रामगांम की ठीक-ठाक स्थिति का सूचक कोई स्थान शायद इस समय नहीं है, किंतु यह निश्चित है कि कपिलवस्तु के पूर्व नेपाल की तराई, जिला बस्ती की

* व्याख्याता (इतिहास) राजकीय महाविद्यालय, देवली, टोंक (राज.) भारत

ओर यह स्थान रहा होगा।

कोलियों की राजधानी रामगांम[6] के संबंध में कनिंघम[7] का मत है कि यह स्थान वर्तमान देवकाली गांव है। यहां कोलियों ने बुद्ध के अवशेषों पर एक स्तूप का निर्माण करवाया था।[8] यह स्थान रोहिणी नदी से 8 से 9 मील पूर्व और गंगा से लगभग 80 मिल उत्तर में है।[9] किंतु महावंश के अनुसार रामगांम का स्तूप गंगा के किनारे था और वह उसकी धार के कारण नष्ट हुआ था।।

फाह्यान[10] तथा ह्वेनसांग[11] नें स्तूप के निकट एक तालाब का उल्लेख किया है जिस पर स्थानीय परंपरा के अनुसार नागों का अधिकार था।

रामगांम और देवदेह के अतिरिक्त कोलियों के अन्य नगर भी थे। जैसे :- उत्तर[12] सज्जनेल[13] सापूण[14] कक्कुरपत[15] होलिद्दवसन इत्यादि। इन सभी नगरों की भौगोलिक स्थिति का ठीक ठीक पता लगाना संभव नहीं है।

कोलियों के उत्तर-पश्चिम में शाक्यों का राज्य था और रोहिणी नदी दोनों को पृथक करती थी।[17] संभवत: इसके दक्षिणी-पश्चिमी में कोसल राज्य था। कोलियों का राज्य दक्षिण में सरयू से उत्तर की पहाड़ियों तक फैला था।[18] पश्चिम में रोहिणी से पूर्व में मोरियों के राज्य तक 20 मिल चौड़ा था।[19] जातकों के अनुसार कोलिय गण में शासन वहां के प्रमुखों की सभा के हाथ में था। यह खत्रीय, राजा[20] और महाराज[21] कहे जाते थे। पालि साहित्य में हमें किसी भी कोलिय राजा का नाम नहीं मिलता। कुणाल जातक में कोलिय सभा के सदस्यों को कभी-कभी राजा तथा कभी-कभी महाराज कहा गया है।[22] कोलियों के कुछ अधिकारियों का उल्लेख हमें जातकों में दिखाई देता है, जैसे भोजक, अमच्य और उपराजा। कोलियों की सभा में हमें ऐसे निम्न श्रेणी के कर्मचारी भी नजर आते हैं जो अपनी क्रूरता तथा खराब व्यवहार के लिए कुख्यात थे।

कोलिय तथा शाक्य दोनों ही क्षत्रिय थे जिनका की 'व्यगयपज्ज' गोत्र था।[23] दोनों में वैवाहिक संबंध भी होते थे। बुद्ध घोष के अनुसार बुद्ध की माता कोलियों के संबंध रखती थी।[24] निकट के संबंध होते हुए भी शाक्यों तथा कोलियों का रोहिणी नदी के जल के प्रश्न पर मतभेद रहता था।

बुद्ध के बाद हमें कोलियों का उल्लेख नहीं मिल पाता। संभवत: वे कोसल की साम्राज्यवादी नीति के शिकार हो गए होंगे। कोलियों ने भी बुद्ध के अस्थि अवशेषों में हिस्सा मांगा था तथा उनके अवशेषों पर स्तूप का निर्माण करवाया था।[25] यह भी संभव है। कि जिस प्रकार लिच्छवि मगध की साम्राज्यवादी लिप्सा के शिकार हुए थे। उसी प्रकार संभवत: कोलिय भी मगध साम्राज्य में विलय कर लिए गए हों।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. कुणाल जातक, पृष्ठ 413
2. अंग्रेजी शब्दकोश, लेखक मोनियर विलियम
3. जातक, वही
4. डी पी पी ने प्रथम, पृष्ठ 6-9
5. माथुर, वृजयेंद्र कुमार, ऐतिहासिक स्थानावली, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, भारत सरकार, दिल्ली 1969 पृष्ठ, 787 से 8
6. दीर्घ निकाय द्वितीय पृष्ठ 165
7. कनिंघम, एंशट जियोग्राफी ऑफ इंडिया, संपादक, मजूमदार शास्त्री, पृष्ठ 486
8. दीर्घ निकाय वही
9. कनिंघम वही पृष्ठ 483
10. बील एस ट्रैवल ऑफ फाह यान, हवेंगसांग एंड सुंग युग, अध्याय 23 पृष्ठ 98
11. वाट्स, आन, चौंग यौंग द्वितीय पृष्ठ 20
12. समसुट्ठा चतुर्थ, पृष्ठ 340
13. अंगूतर द्वितीय, पृष्ठ 62
14. वही, पृष्ठ 194
15. अंगुतर चतुर्थ, पृष्ठ 281
16. मज्झिम निकाय प्रथम, पृष्ठ 387
17. जातक पंचम, प्रश्न 412
18. शर्मा जगदीश प्रसाद पब्लिक इन एसेंट इंडिया लीडेन 1968 पृष्ठ 213
19. वही
20. जातक पंचक पृष्ठ 412
21. वही
22. वही पृष्ठ 414
23. अंगुतर निकाय द्वितीय पृष्ठ 194-6 सुमंगल विलासिनी प्रथम पृष्ठ 262
24. समसुद्ध चतुर्थ पृष्ठ 241-2
25. दीर्घ निकाय पृष्ठ 165

****

Review of MRDM

Rajesh Soni*

Abstract - Multi-relational data mining (MRDM) approaches look for patterns that involve multiple tables (relations) from a relational database. This paper review the MRDM methods As this based on various related tables.
Keywords: relational data mining, multi-relational data mining, inductive logic programming, relational association rules, relational distance-based methods.

Introduction - Everywhere is relational data base. Earlier used data mining methods are applicable only on single table . Data mining not suitable for relational tables . Multi Relational data mining (MRDM) is newer approach having multiple relational tables and to find pattern between various tables. Relational data base normally used in today's database scenario. Relational Data Mining (RDM) is often referred to as multirelational data mining (MRDM).[1] Relational patterns involve multiple relations from a relational database. The major types of relational patterns extend the types of propositional patterns considered in single table data mining.

Application of MRDM : The use of MRDM has enabled applications in areas rich with structured data and domain knowledge, which would be difficult to address with single table approaches. RDM has been used in different areas, ranging from analysis of business data, through environmental and traffic engineering to web mining, but has been especially successful in bioinformatics (including drug design and functional genomics)[2].

MRDM Methods: In MRDM methods used are inductive logic programming, relational association rules, relational decision trees, relational distance-based methods.

Inductive logic programming: From a KDD perspective, we can say that inductive logic programming (ILP) is concerned with the development of techniques and tools for relational data mining. Patterns discovered by ILP systems are typically expressed as logic programs, an important subset of first-order (predicate) logic, also called relational logic.[3]

Relational Association Rules: The discovery of frequent patterns and association rules is one of the most commonly studied tasks in data mining. we used frequent relational patterns (frequent Datalog patterns) and relational association rules (query extensions)[4].

Relational Decision Trees: Decision tree induction is one of the major approaches to data mining. Upgrading this approach to a relational Decision Tree [5] has thus been of great importance. Relational decision trees have much the same structure as propositional decision trees. Internal nodes contain tests, while leaves contain predictions for the class value. If the class variable is discrete/continuous, we talk about relational classi_cation/regression trees. For regression, linear equations may be allowed in the leaves instead of constant class-value predictions: in this case we talk about relational model trees. Relational decision trees can be easily transformed into first-order decision lists, which are ordered sets of clauses

Relational Distance Based Approaches: In their system RIBL, Emde and Wettschereck propose a relational distance measure. The basic idea behind the RIBL distance measure is as follows. To calculate the distance between two objects/examples, their properties are taken into account first (at depth 0). Next (at depth 1), objects immediately related to the two original objects are taken into account, or more precisely, the distances between the corresponding related objects. At depth 2, objects related to those at depth 1 are taken into account, and so on, until a user-specified depth limit is reached.

Summary: In summary, the issue provide an introduction to the important and exciting research field of multi-relational data mining.Various MRDM methods are discussed . New techniques and methods are developed rapidly.In this paper some of methods are discussed. Large numbers of applications of MRDM

References:-

1. S. D_zeroski and N. Lavra_c, editors. Relational Data Mining. Springer, Berlin, 2001.
2. S. D_zeroski. Relational Data Mining Applications: AnOverview. In [16], pages 339-364, 2001.
3. J. R. Quinlan. Learning logical de_nitions from relations. Machine Learning, 5(3): 239-266, 1990.
4. L. Dehaspe and H. Toivonen. Discovery of frequent datalog patterns. Data Mining and Knowledge

*Lecturer, B.N.P.G.Girls' College, Udaipur (Raj.) INDIA

Discovery, 3(1): 7-36, 1999.
5. S. Kramer. Structural regression trees. In Proceedings of the Thirteenth National Conference on Arti_cial Intelligence, pages 812-819. MIT Press, Cambridge, MA,1996.
6. W. Emde and D. Wettschereck. Relational instance based learning. In Proceedings of the Thirteenth International Conference on Machine Learning, pages 122-130. Morgan Kaufmann, San Mateo, CA, 1996.
7. S. Kramer and G. Widmer. Inducing Classi_cation and Regression Trees in First Order Logic. In , pages140-159, 2001.
8. S. Kramer, N. Lavra_c, and P. Flach. Propositionalization Approaches to Relational Data Mining. In ,pages 262-291, 2001.
9. N. Lavra_c, S. D_zeroski, and M. Grobelnik. Learning nonrecursive de_nitions of relations with LINUS. In Proceedings of the Fifth European Working Session on Learning, pages 265-281. Springer, Berlin, 1991.
10. N. Lavra_c and S. D_zeroski. Inductive Logic Programming: Techniques and Applications. Ellis Horwood, Chichester, 1994. Freely available at http://www-ai.ijs.si/SasoDzeroski/ILPBook/.
11. J. Lloyd. Foundations of Logic Programming, 2nd edition. Springer, Berlin, 1987.

****

विद्यार्थी जीवन में योग का महत्व एवं लाभ

गणेश कुमार शर्मा *

प्रस्तावना – योग प्राचीन भारतीय परंपरा का हिस्सा रहा है और आज के प्रतिस्पर्धात्मक युग में भी अत्यधिक प्रासंगिक है।विद्यार्थी जीवन किसी भी व्यक्ति के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण चरण होता है, जिसमें शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक विकास होता है। इस विकास को संतुलित और सशक्त बनाने में योग की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। योग केवल एक शारीरिक अभ्यास नहीं है, बल्कि यह एक जीवन शैली है, जो अनुशासन, एकाग्रता, और स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करता है।योग को शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक कल्याण के साधन के रूप में व्यापक रूप से अभ्यास किया जाता है, जबकि विभिन्न अध्ययनों ने स्वस्थ व्यक्तियों और बीमारी या दर्द का अनुभव करने वाले लोगों के लिए योग की प्रभावशीलता को भी अनुभव किया गया है। यहाँ पर विद्यार्थियों के व्यवहार में योग के अभ्यास के शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक प्रभावों को लक्षित करता हैं। योग अभ्यास के माध्यम से सक्रिय की जाने वाली शारीरिक प्रणालियों में मस्कुलोस्केलेटल (मांसपेशीय और कंकाल), कार्डियोपल्मोनरी (हृदय और फेफड़े), स्वायत्ता तंत्रिका तंत्र और अंत:स्रावी (एंडोक्राइन) कार्यप्रणाली शामिल हैं।

योग का अर्थ व परिचय – योग का अर्थ है 'जोड़' या 'संयोजन', जो शरीर, मन, और आत्मा के बीच संतुलन स्थापित करता है। यह न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है, बल्कि मानसिक शांति, एकाग्रता, और आत्म-नियंत्रण को भी प्रोत्साहित करता है। योग हिंदू, बौद्ध और जैन धर्मों में विविध अभ्यासों, स्कूलों और लक्ष्यों के रूप में विकसित हुआ है। पश्चिमी दुनिया में योग प्राय: हठ योग और शारीरिक आसनों (Postures) के रूप में लोकप्रिय है। इसकी उत्पत्ति प्राचीन भारतीय परंपराओं से जुड़ी मानी जाती है, जिसका उल्लेख ऋग्वेद में भी मिलता है। माना जाता है कि योग सिंधु घाटी सभ्यता (3000 ई.पू.) के समय से अस्तित्व में था और 5वीं-6वीं शताब्दी ई.पू. के दौरान तपस्वी और श्रमण आंदोलनों के साथ व्यवस्थित रूप में विकसित हुआ।पतंजलि के योग सूत्र, जिन्हें 2वीं शताब्दी ई.पू. का माना जाता है, योग के दार्शनिक आधार को स्थापित करते हैं। 9वीं-11वीं शताब्दी के बीच हठ योग के ग्रंथ उभरे, जिनकी जड़ें तांत्रिक परंपराओं में हैं। स्वामी विवेकानंद ने 19वीं शताब्दी के अंत में पश्चिम में योग का परिचय कराया, जिससे इसकी लोकप्रियता बढ़ी।हालांकि पश्चिम में योग मुख्यत: शारीरिक व्यायाम और तनाव-निवारण के रूप में देखा जाता है, भारतीय परंपराओं में यह ध्यान, आत्म-अनुशासन और आध्यात्मिक जागरूकता का मार्ग है। हिंदू धर्म के छह आस्तिक दर्शनों में से एक योग दर्शन है, जो सांख्य दर्शन से गहराई से जुड़ा हुआ है।

विद्यार्थी जीवन में योग का महत्त्व – किशोरावस्था एक महत्वपूर्ण और संवेदनशील अवधि होती है, जब विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के शैक्षणिक, सामाजिक और व्यक्तिगत दबावों के बीच संतुलन बनाने का प्रयास करते हैं। इस समय उन्हें स्कूल या कॉलेज के शैक्षणिक कार्यों को सफलतापूर्वक पूरा करना होता है, परीक्षाओं और टेस्ट की तैयारी में उत्कृष्टता हासिल करनी होती है, साथ ही अपने प्रदर्शन को लगातार सुधारने का दबाव भी बना रहता है। इसके अतिरिक्त, वे प्रतिस्पर्धात्मक माहौल, पारिवारिक अपेक्षाओं और व्यक्तिगत विकास से जुड़े तनावों का भी सामना करते हैं। ऐसे में योग एक प्रभावी साधन के रूप में उभरता है, जिसे दुनिया भर के कई स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य रूप से पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया गया है। योग शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक संतुलन स्थापित करने में सहायक होता है। इसके नियमित अभ्यास से शरीर में लचीलापन बढ़ता है, मन को शांति मिलती है, तनाव कम होता है और एकाग्रता शक्ति में सुधार होता है। विद्यार्थी योग के माध्यम से मानसिक स्पष्टता, भावनात्मक स्थिरता और आत्मविश्वास प्राप्त करते हैं, जो उन्हें न केवल शैक्षणिक सफलता बल्कि जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी उत्कृष्ट प्रदर्शन करने में मदद करता है। योग ध्यान, प्राणायाम और आसनों के माध्यम से विद्यार्थियों को आत्म-नियंत्रण, अनुशासन और सकारात्मक सोच विकसित करने में सहायक होता है, जिससे वे अपने कार्यों को बेहतर तरीके से पूरा कर पाते हैं और कक्षा में उच्च अंक प्राप्त करने में सफल होते हैं।

योग के लाभ – मानसिक एकाग्रता और तीक्ष्णता में वृद्धि रूयोग क्रिया से ध्यान और प्राणायाम अभ्यास से स्मृति शक्ति और एकाग्रता बढ़ती है। नियमित ध्यान अभ्यास से विद्यार्थियों की सीखने की क्षमता बेहतर होती है जिससे विद्यार्थीविभिन्न विषयों को अधिक स्पष्टता के साथ समझने में समर्थ हो पाते हैं।

शारीरिक स्वास्थ्य-नियमित योगाभ्यास से शरीर लचीला, मजबूत और सक्रिय रहता है। प्राणायाम और आसनों से रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, जिससे विद्यार्थी स्वस्थ रहते हैं और शारीरिक समस्याओं का सामना कम करना पड़ता है।

मानसिक तनाव और चिंता में कमी- परीक्षा और प्रतियोगिताओं के दबाव में विद्यार्थी तनावग्रस्त हो सकते हैं। योग के माध्यम से तनाव को नियंत्रित किया जा सकता है, जो परीक्षा के समय अत्यंत लाभकारी होता है।

आत्म-नियंत्रण और अनुशासन-योग आत्म-नियंत्रण और अनुशासन

*शोधार्थी (शारीरिक शिक्षा) कैलोरएक्स टीचर्स यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद (गुजरात) भारत

को विकसित करने में सहायक है, जो अध्ययन के लिए आवश्यक है। यह नियमित दिनचर्या और समय प्रबंधन को बेहतर बनाने में मदद करता है।

सकारात्मक सोच का विकास– योग अभ्यास विद्यार्थियों के भीतर आत्मविश्वास और सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास करता है। इससे वे कठिन परिस्थितियों का सामना धैर्य और समझदारी से कर सकते हैं।

स्मृति और शक्ति में वृद्धि – योग विद्यार्थियों के लिए एक शक्ति स्रोत (Power Source) है, जो उनकी स्मृति (Memory) को बेहतर बनाता है और उन्हें अधिक ऊर्जा (Energy) और शक्ति (Power) प्रदान करता है।

शैक्षणिक मस्तिष्क का विकास– नियमित योग अभ्यास मस्तिष्क की कार्यक्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है और विद्यार्थियों को उच्च अंक प्राप्त करने में मदद करता है। इस प्रकार, योग विद्यार्थियों को तनाव और शैक्षणिक दबाव से मुक्त रखने में मदद करता है, जो उनके शैक्षणिक विकास के लिए उपयोगी है।

वजन प्रबंधन और लचीलापन– योग का एक और महत्वपूर्ण लाभ शरीर की लचीलेपन (Flexibility) को बढ़ाना है। योगासन के अभ्यास से मांसपेशियाँ खिंचती हैं, जिससे शरीर का लचीलापन बढ़ता है। श्वसन संबंधी असुविधा और मोटापा उन समस्याओं में से हैं जो विद्यार्थियों में आम हैं। उच्च कैलोरी वाले पेय और खाद्य पदार्थो के अधिक सेवन के कारण विद्यार्थियों को इस प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। नियमित रूप से योग का अभ्यास करने से वे अपने वजन को नियंत्रित (Weight Management) कर सकते हैं।

शारीरिक शक्ति – दिनभर की गतिविधियों को उचित रूप से पूरा करने के लिए आपके शरीर को शक्ति की आवश्यकता होती है। विशेष रूप से, युवा विद्यार्थियों को अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है क्योंकि वे कई कार्यों से भरे होते हैं। इसलिए, योग शारीरिक शक्ति को बढ़ाने में मदद करता है और आपको ऊर्जा प्रदान करता है।

उपर्युक्त शारीरिक एवं मानसिक लाभों अतिरिक्त योगासन से व्यक्ति में सामाजिक कौशल का विकास होता है जिससे विद्यार्थियों में सहयोग, सहिष्णुता और टीमवर्क की भावना का विकास होता है। साथ ही नैतिक मूल्यों का संवर्धन भी होता है जिससे योग शांति, सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह जैसे नैतिक मूल्यों को सिखाता है, जो विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण में मदद करते हैं साथ ही नेतृत्व गुणों का विकास से विद्यार्थियों में नेतृत्व कौशल विकसित होता हैजिससे वे समाज निर्माण में सकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं।

विद्यार्थियों के लिए लाभकारी योगासन और प्राणायाम– विद्यार्थियों के लिए कुछ महत्वपूर्ण योगासन एवं प्राणायाम है जो उनके मानसिक, शारीरिक एवं नैतिक विकास में सहायक होते है जो निम्नानुसार है :–

सूर्य नमस्कार: संपूर्ण शरीर के लिए लाभकारी, ऊर्जा और स्फूर्ति प्रदान करता है। यह शरीर को सक्रिय और तनावमुक्त बनाता है।

वज्रासन: पाचन तंत्र को मजबूत बनाता है, विशेष रूप से भोजन के बाद लाभकारी। यह ध्यान के लिए भी एक उत्तम आसन है।

भुजंगासन: पीठ और रीढ़ की हड्डी को मजबूत करता है। यह शरीर के लचीलेपन को बढ़ाने में सहायक है।

अनुलोम–विलोम प्राणायाम: मानसिक शांति और एकाग्रता को बढ़ाता है। यह नर्वस सिस्टम को शांत करता है और मानसिक स्थिरता प्रदान करता है।

भ्रामरी प्राणायाम: तनाव और चिंता को कम करता है, मन को शांति प्रदान करता है। इससे विद्यार्थियों को ध्यान केंद्रित करने में मदद मिलती है।

त्राटक:आंखों के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी और एकाग्रता बढ़ाने में सहायक। यह ध्यान केंद्रित करने की क्षमता को मजबूत करता है।

योग अभ्यासके सिद्धांत: योग करने के लिए कुछ सिद्धांतों का पालन करना आवश्यक होता है जो इस प्रकार से है :–

नियमितता: योग का नियमित अभ्यास महत्वपूर्ण है। विद्यार्थियों को प्रतिदिन कम से कम 20–30 मिनट योग अभ्यास करना चाहिए।

उचित निर्देशन : योग को नियमित रूप से करने के साथ –साथ योग शिक्षक या निर्देशक के बताये नियमानुसार ही करना चाहिए।

संतुलित आहार: स्वस्थ आहार योग के प्रभाव को बढ़ाता है। पौष्टिक आहार और योग का संयोजन स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक लाभकारी है।

सकारात्मक सोच: योग सकारात्मक सोच और दृष्टिकोण को बढ़ावा देता है। इससे आत्मविश्वास में वृद्धि होती है।

धैर्य और संयम:योग अभ्यास के दौरान धैर्य और संयम बनाए रखना आवश्यक है। परिणामों के लिए अधीर न होकर निरंतर अभ्यास जरूरी है। शारीरिक और मानसिक संतुलनरूयोग शरीर और मन दोनों के बीच संतुलन बनाए रखने में मदद करता है। इससे मानसिक स्वास्थ्य में सुधार होता है।

निष्कर्ष – विद्यार्थी जीवन में योग को अपनाने से न केवल शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में सुधार होता है, बल्कि यह जीवन में अनुशासन, आत्म–नियंत्रण और सकारात्मक सोच को भी बढ़ावा देता है। वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में, जहां विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के मानसिक दबावों का सामना करते हैं, योग उन्हें शांति, संतुलन और सफलता की ओर मार्गदर्शित करता है। योग एक ऐसी साधना है जो विद्यार्थियों को न केवल परीक्षा में अच्छे अंक लाने में मदद करती है, बल्कि उन्हें एक बेहतर इंसान भी बनाती है।इस प्रकार, योग न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाता है बल्कि मानसिक मजबूती और शैक्षणिक सफलता के लिए भी अत्यंत लाभकारी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. कुमार कामाख्या – योग महाविज्ञान ।
2. निरजनानन्द (1994), योग दर्शन, श्री पंचदशनाम, परमहंस अलखवाड़ा, देवधर, विहार ।
3. पाण्डेय राजकुमारी (2008), भारतीय योग परम्परा के विविध आयाम, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली।
4. व्यास महर्षि (2003), भगवदगीता, गीता प्रेस गोरखपुर।
5. योगेन्द्र पुरूषार्थी (1999), वेदो में योग विद्या, यौगिक शोध संस्थान, हरिद्वार।
6. मिश्र चन्द्र जगदीश (2010), भारतीय दर्शन, चौखम्भा सुर भारती प्रकाशन, वाराणसी।
7. योगांक – गीता प्रेस गोरखपुर।
8. पाण्डेय राजकुमारी (2008), भारतीय योग परम्परा के विविध आयाम, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
9. Joshi LN, Joshi VD, Gokhale LV. Effect of short term pranayama practice on the breathing rate and the ventilatory functions of the lung. Indian J Physiol Pharmacol 1992; 36: 105-8.
10. Khumar SS, Kaur P, Kaur S. Effectiveness of shavasana on depression among university students. Indian J Clin Psychol1993;20:82-7.

भारतीय प्रागैतिहासिक शैल चित्रों में मानवाकृतियों का महत्व

डॉ. रेखा पंचोली*

प्रस्तावना – आदिम मानव का इतिहास अत्यंत प्राचीन है, और कुछ विद्धानों के अनुसार प्रथम मानव 18 लाख वर्ष पूर्व हुआ था। यदि हम कला के इतिहास की ओर नजर डालें तो चित्रकला के क्षेत्र में सबसे पहले 'मानवाकृतियों' की शुरूआत होती है। और यह मानव आकृतियाँ शैल चित्रों के माध्यम से ही प्रकाश में आई।

भारत में चित्रकला का जन्म कब और कैसे हुआ ? यह एक अत्यंत विवादास्पद प्रश्न है, किन्तु प्रागैतिहासिक मानव ने किस प्रकार अपनी संस्कृति, सभ्यता और अपने भाव एवं विचारों का विकास किया, सौभाग्यवश इसके बहुत से तथ्य आज प्रकाश में आ चुके हैं। मध्यप्रदेश में भी ऐसे अनेक क्षेत्र प्रकाश में आ चुके हैं जहाँ प्रागैतिहासिक चित्रों के दर्शन होते हैं ये दुलर्भ कलाकृतियाँ गुफाओं में चित्रित हैं और मध्यप्रदेश के आदमगढ़, रायगढ़,सिंहनपुर, होशंगाबाद और मिर्जापुर के लिखुनिया, कोहर आदि स्थान प्रमुख हैं, जहाँ पहुँचकर इन कलाकृतियों का आनंद उठाया जा सकता है। 'विद्धानों ने इसे 3000 ई. पूर्व के समय का निर्धारित किया। सन् 1880 ई. में पंख-पोशाकयुक्त अनेक चित्र खुदी चट्टानों पर मिले हैं, जो कि प्रागैतिहासिक महत्व की सिद्ध हो चुके हैं। इसके बाद मध्यप्रदेश के सिंहनपुर तथा सरगुजा रियासत के जोगीमारा आदि स्थानों से अनेक चट्टाने उपलब्ध हुईं। इन चट्टानों में लाल-पीले रंग से अंकित पशु-पक्षियों के साथ मानव आकृतियाँ एवं असुर आकृतियाँ प्राप्त हुई है।'

भारत में प्रागैतिहासिक चित्रों की खोज का सर्वप्रथम श्रेय एल्विन कार्यायल तथा जान काकबर्न को जाता है, जिन्होंने सन् 1861-62 के आस-पास भारतीय शिला चित्रों की खोज का कार्य प्रारम्भ किया।

आज चित्रकला आत्म अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम समझी जाती है। लेकिन पाषाण युग में भी मनुष्य आत्म-अभिव्यक्ति हेतु चित्रण करता था। आदिम मानव अपनी आत्म अभिव्यक्ति के लिए स्वयं को पत्थरों की दीवारों पर अंकित किया है। उनका उद्देश्य उस समय कला का विकास करना या फिर उसमें किसी प्रकार का सौंदर्य दिखाना नहीं था अपितु उनका उद्देश्य जंगली जानवरों के साथ स्वयं को दिखाकर यह बताना था कि किस तरह उस दिन के घटनाक्रम में जानवर का शिकार योजनानुसार उसके द्वारा किया गया। ''पाषाण युग के खंडहरों में चित्र आत्म-अभिव्यक्ति का कार्य करते हुए तो आज भी प्रतीत होते हैं, परन्तु उनके चित्रों में कोई दर्शन नहीं छिपा था।'' चित्रकला की उत्पत्ति का समय प्रागैतिहासिक काल को कह सकते हैं।एक बार प्रकट होकर चित्रकला ने फिर कभी मानव आकृतियों का साथ नहीं छोड़ा और चित्रकला में मानवाकृतियों का अंकन शुरू हुआ और उसमें धीरे-धीरे सुधार होना प्रारम्भ हो गया।

नव पाषाण युग में वह भयानक जीव-जंतु मित्र के रूप में चित्रित हैं। इन चित्रों में आदिमानव ने मानवाकृतियों के साथ पशुओं को चराते हुए, उनका दूध दुहते हुए, घुड़सवारी करते व कृषि कार्य करते चित्रित किया है। स्त्री, पुरूष, बच्चे सभी मानवाकृतियों को तीर-कमान, भाला, लाठी, त्रिशुल, कुल्हाड़ी आदि शस्त्रों के साथ दिखाया गया है। इस शैल चित्र में मानवाकृतियों को आमोद-प्रमोद के साथ भी चित्रित किया है, जो उनके रसिक जीवन की झाँकी प्रस्तुत करते हैं। 'भारतीय प्रागैतिहासिक चित्रकला का विकास पश्चिमी देशों की चित्रकला विकास से पृथक रहा है। यूरोप के देशों में प्रारंभिक चित्रांकन में केवल पशुओं का चित्रण मिलता है, जबकि भारतीय प्रागैतिहासिक चित्रण में पशुओं के साथ-साथ मानव आकृतियाँ भी चित्रित हैं। पश्चिम देशों के शैल चित्रों में पशुओं के सामने मानव को एक निरीह प्राणी की तरह प्रदर्शित किया गया है। जबकि भारत में ऐसी निरीहता का चित्रण नहीं देखा गया। मध्यप्रदेश के सभी शैलाश्रयों में मानव आकृतियाँ प्रारम्भ से ही चित्रित मिलती है। प्रागैतिहासिक काल में मानव की उदर पूर्ति का प्रमुख साधन आखेट ही रहा है। इसी कारण समस्त क्षेत्रों के शैलाश्रयों में मानव आकृतियों को आखेट दृश्य में बहुलता से अंकित किया गया है, यहाँ के शैल चित्रों में मुखौटा युक्त मानव आकृतियाँ मध्य भारत में अपेक्षाकृत अधिक संख्या में उपलब्ध हैं। मुखौटे का उपयोग नृत्य के संदर्भ में अथवा किन्हीं देवी-देवताओं को प्रसन्न करने तथा आखेट के संदर्भ में प्रयुक्त किया जाना प्रतीत होता है। शैलाश्रयों में हिरण, बंदर, भालू, बायसन, मगर आदि मुखौटायुक्त मानव आकृतियाँ चित्रित हैं।

इस प्रकार आदिमानव ने चित्रों में मानवाकृतियों को सरलतम रूपों और ज्यामितिय आकारों में संजोया है। यह आश्चर्य की बात है कि मनुष्य एवं पशु जैसे कठिन रूपों का सरलीकरण करने में आदिमानव पूर्ण रूप से सक्षम हुआ, लेकिन इन चित्रों में कहीं भी प्रकृति के दर्शन (बादल, आकाश, पेड़, पौधे, नदी, पर्वत) नहीं होते। कुल मिलाकर आदि मानव ने अपने युग में मानवाकृतियों के माध्यम से मनुष्य के संपूर्ण इतिहास की रचना की है।

उद्देश्य और विकास – आदिकाल में 'कला' जैसे शब्द की उत्पत्ति भी नहीं हुई थी, जिसे हम प्रागैतिहासिक काल के नाम से जानते हैं। मानवाकृतियों को बनाना आदिम मानव ने शुरू किया। जिसका उद्देश्य अपने दिनचर्या में घटित होने वाले घटनाक्रम को दिखाना तथा जंगली जानवरों से अपनी रक्षा करना था। ये चित्र कंदराओं और गुफाओं में बनाये जाते थे, जो इनका निवास स्थल हुआ करता था। कलाकार इन चित्रों द्वारा शैलाश्रयों पर एक ही सरल रेखा के माध्यम से बीते दिनचर्या का वृतांत व्यक्त कर देते थे। इन चित्रों को अंकित कर आदिम मानव यह दिखाना चाहते थे कि हमने जंगली पशु को अपने वश में कर लिया है या उन पर जीत हासिल कर ली है। गुफाओं में आदिम मनुष्य द्वारा की गई चित्र-रचना उनके एकांत को तोड़ने वाला कलात्मक अनुभव है।

''उसने अपने परिवेश को एक क्रमबद्ध सीरीज में उस समय चित्रित किया है, जब वह अपने हिलने-मिलने वाली क्रियात्मकता में अपने होने की सतत् अनुभूति में डूबने लगा। प्रारम्भ में वह अपने को ही चित्रित करता रहा। मानवाकृतियाँ ही अपनी सहज प्रतीकात्मकता में उभर कर इस दौर में प्रत्यक्ष होती है। मानवाकृतियों का रेखांकन बिंदुओं और रेखाओं के माध्यम से सीधी, लहरियादार, समकोणीय तथा विषमकोणीय ज्यामितियों से हुआ है। इन्हीं आधारों पर गुफा-चित्रण में आदिम मनुष्य के विकास की कथा को स्पष्टत: देखा जा सकता है।''

आदिम मानव द्वारा खींची सीधी रेखा भी आड़ी-तिरछी रेखा की तरह

* सह आचार्य (चित्रकला) सेठ मथुरा दास बिनानी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा, राजसमंद (राज.) भारत

दिखाई पड़ती थी, जब वह सीधी रेखा खींचने में अभ्यस्त हो गया, उसके पश्चात् उसने अपनी रचना प्रक्रिया में कोणों एवं वृतों को स्थान दिया, और इसी तरह उसने मानव आकृतियों के अंकन में सीधी रेखा, कोणों एवं वृतों का प्रयोग किया। आदिम मानव द्धारा बनाई गई मानवाकृतियों में यथार्थता की झलक नहीं दिखाई पड़ती, क्योंकि वह अपनी मानसिक क्षमता के आधार पर ही अभ्यस्त था, और एक सरल रेखा के माध्यम से ही अपनी भावनाओं को सांकेतिकता के आधार पर प्रदर्शित करता था। यदि इन मानवाकृतियों का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जाये तो पायेंगे कि एक रेखा के माध्यम से शरीर के मध्यभाग की रचना में रीढ़ का प्रतीक तथा इस खड़ी रेखा के नीचे छोर से निकलती हुई दो रेखायें दोनों पैरों का संकेत करते दिखाई पड़ती हैं। इन दो रेखाओं के अंतिम बिंदु पर कोण बनाती छोटी रेखा पंजों को प्रदर्शित करती है। रीढ़ को प्रतीक करती हुई रेखा के ऊपरी भाग से, दाँये एवं बाँये दोनों छोरों से निकलती रेखा दोनों हाथों को चित्रित करती है। कहीं-कहीं कुहनी के भाग से मुड़ी हुई रेखा भी दिखाई पड़ती है, और उसी रीढ़ को प्रतीक करती हुई मुख्य रेखा के ऊपरी बिंदु को छूती हुई एक गोले सी बनी आकृति सिर की संरचना को प्रदर्शित करती है, और आँख, नाक, कान आदि को दिखाने के लिए यथा स्थान बिंदु को आधार बनाया गया है। इस तरह इन सरल रेखाओं के माध्यम से आदिम युगीन मानवाकृतियों का निर्माण होता है।

आदिम कलाकारों द्धारा बनायी गयीं ये मानवाकृतियाँ विकसित होती गई और उन मानव आकृतियों में गति और भावों का समावेश दृष्टिगोचर होने लगा। धीरे-धीरे मानव का मानसिक विकास बढ़ता गया और मानवाकृतियाँ रेखा से होती हुई त्रिकोण, चतुष्कोण में परिवर्तित होने लगी। इस तरह आदिम मनुष्य ने अपनी कलाकृतियों में मानव के शारीरिक उभार को दिखाने के लिए त्रिकोण एवं चतुष्कोणों का प्रयोग करने लगा। घुटनों, पंजों, कुहनियों आदि के मोड़ को भिन्न-भिन्न प्रकार के कोणों के माध्यम से दर्शाया जाने लगा।

आदि मानव ने शिलाचित्रों में मानवाकृतियों को जो रूप प्रदान किया वह मानव कंकाल की भाँति प्रतीत होती थीं। उसने मानवाकृतियों के स्वरूप में हथेलियाँ एवं पंजों को एक छोटी लकीर के माध्यम से दिखाया है, लेकिन मानवाकृतियों में एक वृतनुमा सिर भी बनाया है, परन्तु उसमें कान, नाक, आँख, मुँह आदि को दिखाने में पीछे रहा। मानवाकृतियों की भाँति उसने उसके संपर्क में आने वाले पशुओं की आकृति भी बनाई है, क्योंकि पशुओं और आदि मनुष्य का सीधा संबंध था। वह उनका शिकार कर उसे अपना भोजन बनाता था, और खाली समय में अपने साथ उस दिन के घटनाक्रम को पत्थरों की दिवारों पर अंकित करता था। धीरे-धीरे उनका मानसिक विकास होना शुरू हुआ और साथ ही साथ चित्रकला में आकृति विधान का पूर्ण ज्ञान आदिम मनुष्य को होने लगा।

समय के साथ-साथ आदिम मनुष्य के मन में 'भय' जैसी अवधारणा पनपने लगी। जंगली-जानवरों का डर, कुछ अदृश्य शक्तियों का भय उसे सताने लगा, वह जादू-टोना तथा विभिन्न कर्मकाण्डों में विश्वास करने लगा। इससे बचाव के लिये उसने गुफाओं में ऐसी आकृतियों का निर्माण किया जिसके प्रति उसमें गहरी आस्था जागृत हुई। ये आकृतियाँ उस आदिम मनुष्य के लिए पूज्यनीय थी, जिसे बाद में देवी, देवताओं की संज्ञा दी जाने लगी। आदिम मनुष्य द्धारा मिश्रित शरीर की भी रचना की जाने लगी, जैसे मत्स्यरानी, नरसिंह, मनुष्यमुखी गाय आदि। ये एक नये तरह के विश्वास की कल्पना कथा थी, और यहीं से धार्मिक विश्वास ने जन्म लेना शुरू किया।किसी जानवर का शिकार करने के लिए योजना तैयार कर सामूहिक रूप से शिकार करना उसमें सामुदायिकता को दर्शाता है। समुदाय में रहकर दुख-सुख बांटना आदिम मनुष्य ने सीख लिया था। अपने खुशी के पल को नृत्य द्धारा जाहिर करना एवं दिवारों पर आखेट चित्रों के साथ-साथ, नृत्य चित्रों को भी आदिम कलाकारों ने दिखाना शुरू कर दिया। अपने चित्रों में नृत्य समूहों को दिखाना, निश्चित रूप से उसके बौद्धिक विकास को परिलक्षित करता है। शिकार करने के पश्चात् सामुदायिक नृत्य के रूप में खुशी जाहिर करना एवं उस खुशी को स्थाई रूप प्रदान करने के लिए गुफाओं में आदिमानव द्धारा नृत्य का चित्रांकन भी किया गया है जो निश्चित रुप से एक सशक्त अभिव्यक्ति को प्रदर्शित करता है। गुफाओं में अधिकांशत: मानव आकृतियों का अंकन अधिक हुआ है। इस तरह शायद आदिमानव इस समस्त जीवित सत्ता में अपने होने की तलाश करता रहा हो।

मध्यप्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में अंकित आदिकालीन मानवाकृतियों का अध्ययन करने पर पता लगता है कि ये निरंतर विकास की ओर अग्रसर थी अर्थात भारतीय चित्रकला के विकास का आधार स्तम्भ थी।

शिलाश्रय में नारी आकृतियाँ – अब तक प्राप्त प्रागैतिहासिक शिलाचित्रों में नारी आकृति के अनेक रूप प्रदर्शित है। इन आकृतियों को देखने से ऐसा प्रतीत होता है, मानों यह एक ही काल में निर्मित नहीं हुई है। इसमें शैलीगत विविधता दिखाई देती है।

इन शिलाचित्रों में अंकित नारी आकृतियाँ अधिकांशत: मानव समूह के साथ प्रदर्शित है, लेकिन इन नारी आकृतियों के रूप-विन्यास में सतत् विकास क्रम निर्मित होता है। तात्कालिक कलाकारों ने मानव आकृतियों की अपेक्षा पशुओं के अंकन में यथार्थता का आभास कराया है। वहीं मानव देह का अंकन हास्यापद एवं बचकाना प्रतीत होता है, अधिकांशत: मानव आकृतियाँ आयताकार देह वाली अंकित हैं। ये आयताकार देह वाली मानव आकृतियाँ आरम्भिक अवस्था की हैं। इन आरम्भिक नारी आकृतियों में लिंग-भेद स्पष्ट नहीं है। पुरूष एवं नारी के रूप को पहचानना अत्यंत कठिन है।

''शिलाचित्रों में नारी की स्थिति का बोध उनकी गतिविधि अथवा वेश-भूषा के द्धारा ही अनुमानित किया जा सकता है। किन्तु लाखाजोर, कठोतिया, जावरा, खरवई के शिलाचित्रों में कतिपय आयताकार आकृतियों की देह में दो छोटे-छोटे त्रिकोणों के आरोपण द्धारा उरोजों का प्रदर्शन हुआ है।''

इन आदिम शिलाचित्रों में विभिन्न स्थानों पर उत्साहवर्धन करती हुई नृत्य समूहों में मानव आकृतियाँ अंकित मिलती है, लेकिन नर-नारी गत भिन्नता दृष्टिगोचर नहीं होती। भीमबेठका, लाखाजोर आदि गुफाओं में मानव आकृतियाँ, अंग्रेजी के अक्षर 'ड' रूप में प्रदर्शित है। यद्यपि संभवत: इन समूह नृत्यों में पुरूष एवं नारी दोनों के होने की संभावना व्यक्त की जा सकती है।

''विभिन्न केन्द्रों के कलाकारों ने अपनी अभिरूचि एवं कुशलता के अनुरूप नारी देह को यथार्थवत बनाने का प्रयास किया है। यद्यपि उनमें स्थानीय वैभिन्नय दृष्टिगोचर होता है, तथापि विस्तृत रूप में उन्हें यथार्थवत् नारी रूप ही कहा जायेगा। इस क्रम में नारी को प्राय: वार्तालाप, पशुपालन, मधुसंचय एवं अन्य गृह कार्यों में व्यस्त दिखाया गया है। वे संगीत एवं नृत्य में भी रूचि रखती जान पड़ती हैं। जैसे - पचमढ़ी के एक चित्र में बंदर (अथवा पशु की खाल ओढ़े मनुष्य) को बीन सदृश्य वाद्य बजाते हुए दिखाया गया है, जबकि शैय्या पर लेटी हुई नारी ताली बजाती हुई अंकित है। इसी प्रकार महादेव पर्वत के एक शिलाश्रय में एक स्थल पर बंदरों के साथ नाचती हुई नारी प्रदर्शित है। अन्यतत्र श्यामला हिल के एक चित्र में नारी एक विशाल पक्षी के सम्मुख नृत्य करती हुई चित्रित है। इस क्रम में नारी-आकृतियों की वेशभूषा एवं केश सज्जा में भी पर्याप्त वैभिन्नय दिखाई देता हैं इस क्रम के कलाकारों ने नारी देह को प्रस्तुत करने के लिए प्राय: उरोज एवं स्थूल नितंब के प्रतीकों का अवलंबन किया है। इतिहासयुगीन भारतीय कलागत नारी रूपों के सदृश्य उरोजों का अतिश्योक्तिपूर्ण रूप में अंकन शिलाचित्रों में दिखाई देता है।''

आदिकाल की मानवाकृतियों में कला सौंदर्य – आदिमानव द्धारा चित्रित मानवाकृतियों में भले ही बाह्य सौंदर्य की कमी दिखाई देती है, लेकिन

आंतरिक सौंदर्य इन मानवाकृतियों में निश्चित रूप से विद्यमान हैं, सहजता, सरलता एवं प्रस्तुतीकरण का जो सौंदर्य -भाव परिलक्षित होता है, ऐसा सौंदर्य-भाव आज के कलाकारों के प्रदर्शन में नहीं झलकता।

विंध्य पहाड़ों से उपलब्ध मानव अस्थियाँ, मध्यप्रदेश के सिंघनपुर तथा सरगुजा रियासत में अवस्थित जोगीमारा से प्राप्त चित्र- खुदी चट्टानें आदि मानव की कलाप्रियता की व्यापक रूप से पुष्टि करते हैं। इसी प्रकार तमिलनाडू, आंध्रप्रदेश, छोटा नागपुर, उड़ीसा, होशंगाबाद, पंजाब, उत्तरप्रदेश और नर्मदा उपत्यका आदि विभिन्न स्थानों से उपलब्ध वस्त्रों, पाषाण चित्रों, मृत्तिका पात्रों, लाल-पीले रंगों चित्रित रेंगते हुए कीड़ों, पशुओं, पक्षियों, मनुष्यों आदि की आकृतियों का अध्ययन करके प्रागैतिहासिक भारत के कलाप्रेम का सहज ही में परिचय मिल जाता है। इस प्रागैतिहासिक अवशेषों की गवेषणा करके पुरातत्व विद्धानों का अभिमत है कि आज की ही भाँति आदि मानव भी सौंदर्योपासक था। इसी सौंदर्य प्रेम के कारण ही वह अपने अमूर्त भावों को मूर्त रूप देने की ओर प्रवृत्त हुआ।

इस समय के कलाकारों का ध्यान मानवाकृतियों में गतिभाव को दिखाने में अधिक था न कि सौंदर्य प्रदर्शन में। आदिकाल के आरंभिक चित्रों में सुगढ़ता एवं सुस्पष्टता का अभाव दिखाई पड़ता है, लेकिन जैसे-जैसे मानव का बौद्धिक विकास होता चला गया, वैसें-वैसे मानव आकृतियों में लय एवं गति की झलक दिखाई पड़ने लगी। आज सौंदर्यात्मक दृष्टि से ये मानवाकृतियाँ इतनी सरल एवं सहज बन पड़ी है कि आज के आधुनिक कलाकार ने इससे प्रेरणा पाकर अपनी कला को नई राह प्रदान की है। ये आकृतियाँ सौंदर्यात्मक दृष्टि से उच्च कोटि की है। एक पैनी नजर डालें तो हम देखते हैं कि साँची के समीपवर्ती नागोरी पहाड़ी के एक चित्रित शैलाश्रय में बनी मानवाकृतियाँ तथा दूसरे शैलाश्रय में बने राजदरबार के दृश्य में अजंता के समतुल्य कला की झलक मिलती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. वाचस्पति गैरोला- भारतीय चित्रकला, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, वर्ष 1990
2. प्रो0 रामचंद्र शुक्ल- आधुनिक चित्रकला, कला प्रकाशन, 17 नया बैरहना, इलाहाबाद - 1997
3. डॉ0 अजीत रायजादा-होशंगाबाद के शैलचित्र, आर0के0पब्लिशर्स, न्यू अशोक नगर, दिल्ली, 1997
4. डॉ0 श्यामसुंदर दुबे- लोक चित्रकला, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, 337, चौड़ा रास्ता, जयपुर, 2005
5. डॉ0 कमलेश दत्त पांडे-भारतीय चित्रकला में नारीरूप-विन्यास, ए0के0बुक कार्पोरेशन, नई दिल्ली, 2004

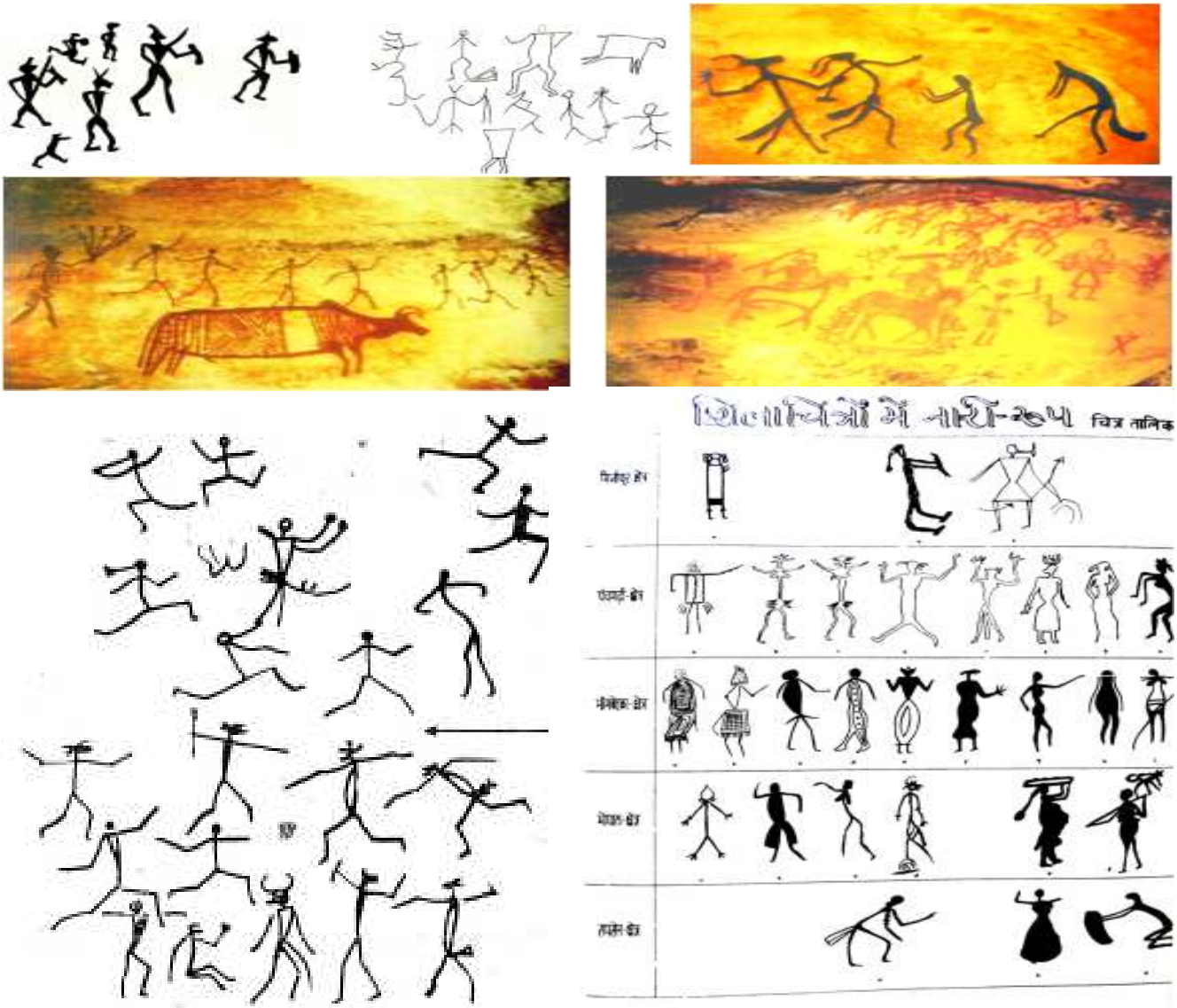

MyGov: From Citizen Grievance to Citizen Contribution

Dr. Hiren Joshi*

Abstract - This paper presents an institutional account of the conception and early design of MyGov, the Government of India's citizen-engagement platform launched on 26 July 2014. Existing systems allowed citizens to raise grievances, but there was no equally visible national route for people who wished to offer ideas, creativity, professional knowledge, time or voluntary effort. MyGov emerged from Prime Minister Narendra Modi's vision of bringing citizens closer to governance and giving constructive public participation a national platform. The original purpose was translated into architecture, interface and user-experience requirements and implemented by the National Informatics Centre. The platform was organised around simple actions: citizens could join theme-based forums under Discuss and undertake specified tasks under Do. By September 2014, about 2.5 lakh people had registered and about one lakh comments had been received. An early competition for the name and logo of the Pradhan Mantri Jan-Dhan Yojana showed that participation could produce a recognised public asset, not merely an opinion. The paper explains the problem MyGov sought to solve, the practical choices behind its design, the intended route from citizen contribution to government use, and the challenges of inclusion, moderation, departmental response and feedback. It argues that MyGov should be judged not simply as a website but as an effort to make participation part of everyday governance.
Keywords - MyGov, citizen participation, e-governance, co-creation, Surajya.

Introduction - Most e-governance systems begin with the question: how can government deliver a service faster or resolve a complaint better? MyGov began with another question: how can a citizen who is not making a complaint contribute to governance? The difference is small in language but large in meaning. A grievance system treats the citizen as a person seeking correction. A participation platform also sees the citizen as a source of ideas, knowledge, creativity, time and public spirit. MyGov was an attempt to give this constructive role a permanent and visible place within government.

This paper records the reasoning behind that shift and the first lessons from the platform's opening months. It is deliberately written as an institutional narrative rather than a technical description. Its concern is the public purpose of the platform, the choices that made participation simple, and the administrative habits needed to turn public contribution into useful government action.

Method and scope - The account draws on contemporan -eous observation of the early initiative and official public records available by September 2014. It focuses on the conception, launch design and opening months of MyGov. It does not claim to evaluate later growth or long-term impact. Registration and comment totals are used only as early indicators of public response, while the Jan-Dhan name and logo competition is examined as a concrete example of citizen co-creation.

The gap beyond grievance redressal - When Narendra Modi assumed office as Prime Minister in May 2014, the early thinking drew on the experience of SWAGAT in Gujarat, which had demonstrated the value of structured citizen-government interaction in grievance redressal. The national question was broader: could the same spirit of direct engagement create a route for constructive contribution, not only for complaints? Existing channels were essential when a service failed, an entitlement was denied or an office did not respond, but they were not designed for the citizen who approached government with an idea, skill or willingness to serve.

But many citizens wished to approach government for a different reason. Nothing had gone wrong for them; they simply wanted to help. A teacher might have an idea for improving a school. An engineer might suggest a practical solution for a public project. A designer might contribute a visual identity. A young person might offer time to a national campaign. A farmer, entrepreneur, doctor or student might possess experience that a department did not have. Such contributions did not fit naturally into a grievance portal, because they were not complaints and did not ask for personal relief.

This distinction led to a simple conceptual move: the citizen should not appear before government only as a beneficiary or a complainant. The citizen can also be a contributor. This role does not remove the responsibility of

***Associate Professor, M.L.V. Textile & Engineering College, Bhilwara (Raj.) INDIA on deputation to the Government of India. Views are personal.**

elected government or the authority of public institutions. It adds a way for government to draw upon the knowledge and energy present across society. The problem was therefore not merely how to collect suggestions. It was how to create an organised public interface through which contribution could become a normal part of governance.

From public expectation to an institution - The need was especially visible during the first weeks of the new Government. Expectations were high and many citizens wished to share ideas with the Prime Minister and participate in the country's development journey. Prime Minister Narendra Modi's vision was that this public energy should enter governance through an organised channel. At the launch of MyGov, he said that the "success of democracy is impossible without participation of the people." The task was therefore to turn public goodwill into a durable institution.

The answer had to be institutional rather than personal. Public enthusiasm for a leader needed a government-owned channel with a clear purpose, accessible entry points and a route to the departments capable of acting. The Prime Minister noted that many citizens wished to devote time and energy to the nation: "The only thing they required was an opportunity to shine and showcase their contribution." Under his direction, the idea of a national participatory-governance platform took shape. He instructed that it should be developed and brought out at the earliest. MyGov was launched on 26 July 2014, sixty days after the new Government assumed office.

The original purpose was translated into the initial architecture, interface and user-experience requirements and communicated to the National Informatics Centre during a short and intensive build period. The design question was simple: what would help an ordinary citizen understand, in a few moments, how to contribute? Technical depth remained important behind the service, but the public experience had to be direct, inviting and connected to a visible national purpose.

Designing for clarity - A national platform can easily become over-designed. Long menus, bureaucratic categories and technical language discourage participation. The first version therefore organised engagement around theme-based forums and two plain actions: Discuss and Do. The words were verbs rather than departmental labels. They told citizens what they could do on the platform and allowed ministries to place different kinds of public work within a common structure.

Discuss - Under Discuss, government could open theme-based forums and citizens could place ideas before other participants. An idea did not need to remain an isolated submission: others could comment, refine, question or support it. This allowed a forum to become a small exercise in collective thinking. The purpose was not to count comments as votes on policy, but to expose government to knowledge and experience dispersed across society.

Do - Under Do, citizens could go beyond opinion and contribute to a defined task. The launch design allowed participants to upload documents, case studies, photographs, videos, work plans and other material. Some tasks could be completed online, while others could connect with activity on the ground. Submissions could be reviewed by other members and experts. Approved work could be shared, and credit points offered a simple form of recognition. The purpose was to show that participation could involve effort and creation, not only discussion.

Theme-based groups - At launch, the official groups were Clean Ganga, Girl Child Education, Clean India, Skilled India, Digital India and Job Creation. By September 2014, the operating list used Swachh Bharat (Clean India) and also included Green India, Skill Development and NRIs for India's Growth. This chronology matters: Digital India had received Cabinet approval on 20 August; the skill movement and the intention to launch Swachh Bharat on 2 October had been announced in the Prime Minister's Independence Day address. These were current national directions by September, not later achievements projected backwards.

The groups also made the platform expandable. A new ministry or programme did not need to build an entirely separate public-participation system. It could open a group, forum or task within a common environment. Citizens would not have to learn a new website for every department. Over time, this common architecture could reduce duplication while giving different sectors enough room to frame their own forums and tasks.

Five practical principles - The initial design work suggested five principles. First, participation should be connected to real priorities, not opened only for appearance. Second, the request should be specific enough for citizens to understand the expected contribution. Third, participation should admit different forms of value: an idea, a design, local knowledge, professional advice or voluntary effort. Fourth, contributions should be visible where possible so that people can learn from one another. Fifth, government should explain what happens after submission.

The route behind the visible platform - A participation portal is judged by its public interface, but its real strength depends on the process behind the screen. The intended route had several steps. Government would open a forum, task or call for contribution. Citizens would respond in a defined format. Contributions would then need moderation, thematic organisation and review. Useful material should reach the ministry or authority responsible for the subject; particularly important suggestions could be brought to higher attention. The receiving institution would decide whether and how the contribution could be used.

The final step was feedback. A citizen should not be left permanently wondering whether a submission had entered a void. It may not be possible to answer every contribution individually, and participation cannot mean that every proposal will be accepted. But government can explain

what was received, what themes emerged, what was forwarded and what action followed. Even a reasoned explanation that a suggestion could not be adopted is better than silence. This closure loop is what separates a working governance process from a digital suggestion box.

In the early months, this route was still being formed. Departments differed in their ability to receive and use large quantities of citizen material. Some forums produced ideas that were easy to classify, while others required expert examination. The platform therefore had to develop at two levels at once: the public product through which citizens participated, and the administrative discipline through which government absorbed participation.

Early public response - The initial response indicated that the idea met a real demand. A Government review in September 2014 reported about 2.5 lakh registered users and approximately one lakh comments in group discussions. These numbers were reached within weeks of launch. They do not prove that participants represented the whole population or that every comment affected a decision. They do show that a substantial number of people were willing to spend time on a new governance platform without being compelled to do so. The public appetite for contribution was not theoretical.

A concrete example: Jan-Dhan - The Pradhan Mantri Jan-Dhan Yojana offered an early example of citizen co-creation. A competition on MyGov invited suggestions for the name, logo and tagline of the financial-inclusion programme. More than 6,000 entries were received. The logo was finalised on the basis of an entry by Ms Priya Sharma. The name 'Jan Dhan' had been suggested by Shri Sanjay Tiwari, Ms Sonia Chauhan and Shri Ajith Gurunathan. The selected contributors received awards and public acknowledgement at the launch of the scheme on 28 August 2014.

This case matters because participation produced a public asset, not merely an opinion. Government defined the requirement and retained the final decision, while citizens supplied creative possibilities and shared credit for the result. The process also demonstrated the importance of transparent recognition. When a contributor can see that an idea or design has been used, and the public can see who contributed it, participation gains credibility. Recognition becomes an incentive for others to offer serious work.

The example also shows why MyGov should not be treated simply as a consultation website. Consultation asks, 'What do you think?' Co-creation can ask, 'What can you help make?' Both are valuable, but they invite different forms of public energy. A national platform should allow a citizen to suggest, discuss, design, document, volunteer and contribute to a campaign according to ability and interest.

MyGov within the early reform agenda - The platform emerged alongside a wider emphasis on participation and national effort. In the Independence Day address of 15 August 2014, the Prime Minister called upon citizens to examine how their own actions contributed to the national interest. Digital infrastructure, financial inclusion, cleanliness, skills and institutional reform were presented not only as departmental programmes but as public missions. MyGov provided a practical channel through which this language of participation could move from speeches into organised activity.

This connection should be understood carefully. MyGov did not replace the formal and informal consultation channels already available through ministers, ministries, Parliament and elected representatives. It gave those institutions a common digital platform through which a wider group of citizens could join theme-based forums, respond to defined tasks and offer usable contributions. Nor did participation remove government's responsibility to decide, explain and remain accountable. It widened the route into deliberation while leaving constitutional and administrative responsibility where it belonged.

What the first months cannot establish - Early enthusiasm should not be confused with completed institutional change. Registration totals measure reach, not depth. Comment totals measure activity, not necessarily quality. Voting may indicate popularity, but a technically sound or socially important idea may not attract the most votes. A highly connected group may appear more prominent than citizens with weaker digital access. For these reasons, the platform must use public response as one input, not as an automatic substitute for evidence, expertise or lawful decision-making.

It is also too early to claim that MyGov has changed policy outcomes. Such a claim would require a traceable record: what citizens proposed, how submissions were grouped, who reviewed them, what recommendation was made and what decision followed. The platform creates the possibility of such a record because contributions are digital and time-stamped. Building that evidence trail should become an institutional objective. It would allow future research to examine not only how many people participated, but what participation changed.

The first test: a visible response loop - As MyGov moves beyond its first months, its most important test will be the route from contribution to response. Every forum and task should have a named government owner. Departments should state what kind of input is sought, when the activity closes, how submissions will be reviewed and when a public summary can be expected. Where an idea is adopted, the contribution should be acknowledged. Where a proposal cannot be used, a thematic explanation is often more realistic than an individual reply.

The second test: inclusion - Internet access in 2014 is expanding rapidly, but it remains uneven by geography, income, education, language and gender. A platform used mainly by the already connected can still be useful, but it cannot be assumed to represent the country as a whole. MyGov should therefore develop links with mobile channels, Common Service Centres and other assisted forms of

participation. Regional-language access is equally important. Online convenience must not create a new barrier between government and citizens who are not yet connected or comfortable with written digital communication.

The third test: administrative capacity - Large participation produces large volumes of material. Departments need practical methods to remove duplication, classify suggestions, identify useful evidence, refer issues to the correct office and record decisions. Expert review is essential where a contribution concerns engineering, finance, health, law or another specialised field. Moderation must be fair and understandable. The platform team can help organise the crowd, but the responsible ministry must remain accountable for the public decision.

The fourth test: public trust - Participation will continue only if citizens believe the invitation is genuine. Government should be clear about the purpose of each activity, the decision that remains open, the criteria by which contributions will be judged and the form of recognition available. It should avoid promising that every idea will influence policy. A truthful and limited promise - that a contribution will be received, organised and considered under stated rules - is more valuable than a broad promise that cannot be fulfilled.

Future reach: states and campuses - A national platform should gradually extend the participation model without making every public issue pass through Delhi. State instances—such as a future MyGov Rajasthan, MyGov Maharashtra or MyGov Tamil Nadu—could use shared technology and basic standards while allowing state governments to open local forums and tasks in their own languages. Universities and colleges offer another route. A Campus Connect programme could link students directly with MyGov, invite ideas and volunteering, and help young citizens understand participation as a continuing civic practice rather than an occasional online response. These are prospective directions from the September 2014 standpoint, not claims that such extensions already exist.

Contributor-led participation - Participation can grow when contributors and volunteers are able to initiate constructive activity, not only respond to a central invitation. MyGov could therefore allow registered contributors to organise suitable local events, publish the event details on the platform, invite others to participate and report what was accomplished. A teacher might convene a learning session, a professional group might offer a public-service workshop, or a local team might support a cleanliness activity. Clear moderation, safety and association rules would be necessary so that citizen initiative remains credible and is not mistaken for an official government commitment.

Administrative structure and contributor meetings - The early operating approach also included regular interactions and meetings with contributors. Such meetings helped the platform team hear directly about usability, participation barriers and the quality of tasks being offered. For this to become normal administration, departments also need a simple routine: name an owner before opening a forum or task; define the audience and expected output; plan moderation and review; record promising contributions; decide what can be acted upon; and publish a short account of outcomes. Technology can organise the flow, but responsibility must remain with identifiable officials and programme teams.

Lessons from the initial build - The first lesson is that a public institution can begin with a simple insight rather than a large technical design. MyGov's founding distinction between grievance and contribution gave the platform a clear identity. The second lesson is that user experience is part of governance. Terms such as Discuss and Do were not cosmetic labels; they told citizens what relationship the State was offering. The third lesson is that visible participation must be supported by invisible administrative work. Without classification, routing, ownership and feedback, even an attractive platform will eventually disappoint its users.

A fourth lesson concerns recognition. Citizens are more likely to contribute serious time and creativity when government acknowledges useful work. The Jan-Dhan example showed how attribution and a modest award could make participation tangible. A fifth lesson is that a common platform can serve many missions without losing coherence, provided that each group and task has a defined public objective. These lessons are organisational, not merely digital, and may be relevant to other public institutions seeking constructive citizen participation.

Conclusion - MyGov was created from a simple belief: many Indians wish to do more than receive services or report grievances; they wish to take part in building the country. The platform gives that belief an institutional form through discussion, tasks, public recognition and links with government programmes. Its early response and the Jan-Dhan co-creation exercise show genuine promise. They also reveal that the real work begins after a citizen presses the submit button.

The lasting measure of success will be whether contribution travels through a visible and credible path: invitation, participation, organisation, consideration, action where appropriate, recognition and feedback. If that path becomes a regular part of administration, MyGov can help make democracy a continuing public activity rather than an event limited to election day. The platform is still young, and its processes will need improvement. But the initial idea remains clear: government should not only hear citizens when they have a grievance; it should also create room for them when they come forward with something to give.

References:-

1. Press Information Bureau, Prime Minister's Office, 'Prime Minister launches MyGov: A platform for Citizen Engagement towards Surajya,' 26 July 2014.
2. Press Information Bureau, Ministry of Communications

& Information Technology, 'MyGov: A portal for Citizen Engagement towards governance launched,' 26 July 2014.
3. Press Information Bureau, 'Press Conference on 100 Days Performance of IT & Telecom,' September 2014.
4. Press Information Bureau, Prime Minister's Office, 'Prime Minister addresses the nation from the ramparts of the Red Fort on the 68th Independence Day,' 15 August 2014.
5. Press Information Bureau, Ministry of Finance, 'Pradhan Mantri Jan-Dhan Yojana Launched by the Prime Minister,' 28 August 2014.

****